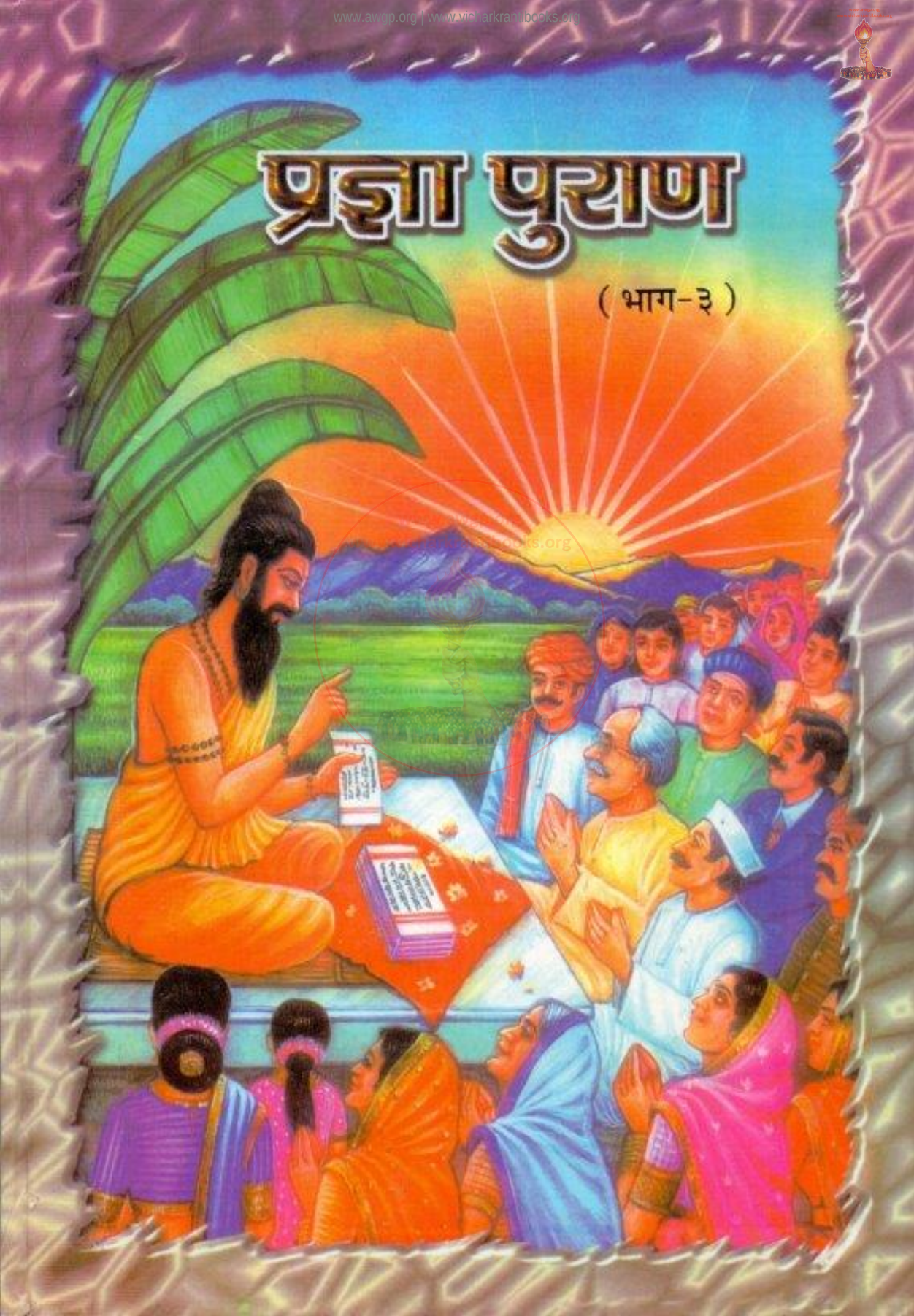
www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रज्ञा पुराण

(भाग-३)



: BOOK MADE AVAILABLE FOR DIGITIZATION BY :

VICHARKRANTI PUSTAKALAY

SURAT, INDIA

: OUR MAIN CENTERS :

Shantikunj, Haridwar,
Uttaranchal, India – 249411
Phone no : 91-1334- 260602,
Website : www.awgp.org
E-mail : shantikunj@awgp.org

Gayatri Tapobhumi,
Mathura, U.P., India – 281003
Phone no : 91-0565-2530128,
Website : www.awgp.org
E-mail : yugnirman@awgp.org

: BOOK DIGITIZED BY :

Vicharkranti Pustakalay, Thana-Faliya, Dindoligam, Surat-394210, Gujarat, India
E-mail: vicharkranti.awgp@gmail.com | Website : www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ।

ॐ

प्रज्ञा पुराण

तृतीय खंड

(परिवार खंड)

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

रचयिता :
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९
मो. ०९९२७०८६२८७, ०९९२७०८६२८९
फैक्स नं०- २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१४

मूल्य : १०० रुपये

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विषयानुक्रम

प्रज्ञा पुराण

तृतीय खंड

(परिवार खंड)

अनुक्रम	अध्याय	प्रकरण	पृष्ठांक
१-	प्राक्कथन.....		३-४
२-	प्रथम अध्याय.....	परिवार-व्यवस्था प्रकरण.....	५-४५
३-	द्वितीय अध्याय.....	गृहस्थ-जीवन प्रकरण.....	४६-८९
४-	तृतीय अध्याय.....	नारी-माहात्म्य प्रकरण.....	९०-१३९
५-	चतुर्थ अध्याय.....	शिशु-निर्माण प्रकरण.....	१४०-१७२
६-	पंचम अध्याय.....	वृद्धजन माहात्म्य प्रकरण.....	१७३-२०३
७-	षष्ठ अध्याय.....	सुसंस्कारिता-संवर्द्धन प्रकरण.....	२०४-२३८
८-	सप्तम अध्याय.....	विश्व-परिवार प्रकरण.....	२३९-२६४
९-	वंदना परिशिष्ट.....		२६५-२६८

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्राक्कथन

भारतीय इतिहास-पुराणों में ऐसे अगणित उपाख्यान हैं, जिनमें मनुष्य के सम्मुख आने वाली अगणित समस्याओं के समाधान विद्यमान हैं । उन्हीं में से सामयिक परिस्थिति एवं आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए कुछ का ऐसा चयन किया गया है, जो युग समस्याओं के समाधान में आज की स्थिति के अनुरूप योगदान दे सकें ।

सर्वविदित है कि दार्शनिक और विवेचनात्मक प्रवचन-प्रतिपादन उन्हीं के गले उतरते हैं, जिनकी सुविकसित मनोभूमि है, परन्तु कथानकों की यह विशेषता है कि बाल, वृद्ध, नर-नारी, शिक्षित-अशिक्षित सभी की समझ में आते हैं और उनके आधार पर ही किसी निष्कर्ष तक पहुँच सकना सम्भव होता है । लोकरंजन के साथ लोकमंगल का यह सर्वसुलभ लाभ है ।

कथा साहित्य की लोकप्रियता के संबंध में कुछ कहना व्यर्थ होगा । प्राचीन काल में १८ पुराण लिखे गए । उनसे भी काम न चला तो १८ उपपुराणों की रचना हुई । इन सब में कुल मिलाकर १०,०००,००० श्लोक हैं, जबकि चारों वेदों में मात्र बीस हजार मंत्र हैं । इसके अतिरिक्त भी संसार भर में इतना कथा साहित्य सृजा गया है कि उन सबको तराजू के एक पलड़े पर रखा जाय और अन्य साहित्य को दूसरे पर तो कथाऐं ही भारी पड़ेंगी । फिल्मों की लोकप्रियता का कारण भी उनके कथानक ही हैं ।

समय परिवर्तनशील है । उसकी परिस्थितियाँ, मान्यताऐं, प्रथाऐं, समस्याऐं एवं आवश्यकताऐं भी बदलती रहती हैं । तदनुरूप ही उनके समाधान खोजने पड़ते हैं । इस शाश्वत सृष्टिक्रम को ध्यान में रखते हुए ऐसे युग साहित्य की आवश्यकता पड़ती रही है जिसमें प्रस्तुत प्रसंगों से उपयुक्त प्रकाश एवं मार्गदर्शन उपलब्ध हो सके । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए अनेकानेक मन:स्थिति वालों के लिए उनकी परिस्थिति के अनुरूप समाधान ढूँढ़ निकालने में सुविधा दे सकने की दृष्टि से इस ग्रन्थ के सृजन का प्रयास किया गया है ।

प्रथम किस्त में प्रज्ञा पुराण के पाँच खण्ड प्रकाशित किए जा रहे हैं । प्रथम खण्ड का प्रथम संस्करण तो आज से चार वर्ष पूर्व प्रस्तुत किया गया था । तदुपरान्त उसकी अनेकों आवृत्तियाँ प्रकाशित हो चुकीं । अब चार खण्ड एक साथ प्रस्तुत किए जा रहे हैं । इतने सुविस्तृत सृजन के लिए इन दिनों की एकान्त साधना में अवकाश भी मिल गया था । भविष्य का हमारा कार्यक्रम एवं जीवन काल अनिश्चित है । लेखनी तो सतत क्रियाशील रहेगी, चिन्तन हमारा ही सक्रिय रहेगा, हाथ भले ही किन्हीं के भी हों । यदि अवसर मिल सका, तो और भी अनेकों खण्ड प्रकाशित होते चले जायेंगे ।

इन पाँच खण्ड में समग्र मानव धर्म के अन्तर्गत मान्यता प्राप्त इतिहास-पुराणों की कथाऐं हैं । इनमें अन्य धर्मावलम्बियों के क्षेत्र में प्रचलित कथाओं का भी समावेश है, पर वह नगण्य सा ही है । बन पड़ा तो अगले दिनों अन्य धर्मों में प्रचलित कथानकों के भी संकलन इसी दृष्टि से चयन किए जायेंगे जैसे कि इस पहली पाँच खण्ड़ों की प्रथम किस्त में किया गया है । कामना तो यह है कि युग पुराण के-प्रज्ञा पुराणों के-भी पुरातन १८ पुराणों की तरह १८ खण्डों का सृजन बन पड़े ।

संस्कृत श्लोकों तथा उसके अर्थों के उपनिषद् पक्ष के साथ उसकी व्याख्या एवं कथानकों के प्रयोजनों का स्पष्टीकरण करने का प्रयास इस पुराण में किया गया है । वस्तुत: इसमें युग दर्शन का मर्म निहित है । सिद्धांतों एवं तथ्यों को महत्व देने वालों के लिए यह अंग भी समाधानकारक होगा । जो संस्कृत नहीं जानते, उनके लिए अर्थ व उसकी व्याख्या पढ़ लेने से भी काम चल सकता है । इन श्लोकों की रचना नवीन

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है, पर जिन तथ्यों का समावेश किया गया है, वे शाश्वत हैं ।

प्रस्तुत ग्रन्थ का पठन निजी स्वाध्याय के रूप में भी किया जा सकता है और सामूहिक सत्संग के रूप में भी । रात्रि के समय पारिवारिक लोक शिक्षण की दृष्टि से भी इसका उपयोग हो सकता है । बच्चे कथाऐं सुनने को उत्सुक रहते हैं । बड़ों को धर्म परम्पराऐं समझने की इच्छा रहती है । इनकी पूर्ति भी घर में इस आधार पर कथा क्रम और समय निर्धारित करके की जा सकती है ।

कथा आयोजनों को एक सामूहिक धर्मानुष्ठान के रूप में भी सम्पन्न किए जाने की परम्परा है । उस आधार पर भी इस कथावाचन का प्रयोग हो सकता है । आरम्भ का एक दिन देव पूजन, व्रत धारण , माहात्म्य आदि के मंगलाचरण में लगाया जा सकता है । पाँच दिन पाँच खण्डों का सार संक्षेप, प्रात: और सायंकाल की दो बैठकों में सुनाया जा सकता है । अन्तिम दिन पूर्णाहुति का सामूहिक समारोह हो । बन पड़े तो अमृताशन (उबले धान्य, खीर, खिचड़ी आदि) की व्यवस्था की जा सकती है और विसर्जन शोभा यात्रा मिशन के बैनरों समेत निकाली जा सकती है । प्रीतिभोजों में प्रज्ञा मिशन की परम्परा अमृताशन की इसलिए रखी गयी है कि वह मात्र उबलने के कारण बनाने में सुगम, लागत में सस्ता तो है ही, साथ ही जाति-पाँति के आधार पर कच्ची-पक्की का जो भेदभाव चलता है, उसे भी निरस्त करते हुए मनुष्य मात्र को एक बिरादरी बनाने के लक्ष्य की ओर क्रमश: कदम बढ़ सकने का पथ-प्रशस्त होता है ।

लोक शिक्षण के लिए गोष्ठियों-समारोहों में प्रवचनों-वक्तृताओं की आवश्यकता पड़ती है । उन्हें दार्शनिक पृष्ठभूमि पर कहना ही नहीं, सुनना-समझना भी कठिन पड़ता है । फिर उनका भण्डार जल्दी ही चुक जाने पर वक्ता को पलायन करना पड़ता है । उनकी कठिनाई का समाधान इस ग्रन्थ से ही हो सकता है । विवेचनों, प्रसंगों के साथ कथानकों का समन्वय करते चलने पर वक्ता के पास इतनी बड़ी निधि हो जाती है कि उसे महीनों कहता रहे । न कहने वाले पर भार पड़े, न सुनने वाले ऊबें । इस दृष्टि से युग सृजेताओं के लिए लोक शिक्षण का एक उपयुक्त आधार उपलब्ध होता है । प्रज्ञा पीठों और प्रज्ञा संस्थानों में तो ऐसे कथा प्रसंग नियमित रूप से चलने ही चाहिए । ऐसे आयोजन एक स्थान पर या मुहल्लों में अदल-बदल के भी किए जा सकते हैं ताकि युग सन्देश को अधिकाधिक निकटवर्ती स्थान पर जाकर सरलतापूर्वक सुन सकें । ऐसे ही विचार इस सृजन के साथ-साथ मन में उठते रहे हैं, जिन्हें पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत कर दिया गया है ।

प्रज्ञा पुराण के इस तीसरे खंड में एक ऐसे प्रसंग को लिया गया है, जो हमारे दैनंदिन जीवन का अंग है, जिसकी उपेक्षा के कारण आज चारों ओर कलह-विग्रह खड़े दृष्टिगोचर होते हैं । गृहस्थ जीवन, सह जीवन, पारिवारिकता की धुरी पर ही इस विश्व परिवार का समग्र ढाँचा विनिर्मित है । मनुष्य जीवन की यह अवधि ऐसी है, जिस पर यदि सर्वाधिक ध्यान दिया जा सके, तो मानव में देवत्व एवं धरती पर स्वर्ग के अवतरण के द्विविध उद्देश्य भली-भाँति पूरे होते रह सकते हैं । सतयुग के मूल में यही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का दर्शन समाहित नजर आता है ।

परिवार संस्था के विभिन्न पक्षों यथा दांपत्य जीवन, गृहस्थ दायित्व, नारी, शिशु, वृद्धजन, सुसंस्कारिता संवर्द्धन एवं अंत में विश्व परिवार को इस खंड में कथा-उपाख्यानों एवं दृष्टांतों के माध्यम से सुग्राह्य ढंग से प्रतिपादित करने का प्रयास किया गया है । सभी परिवारों में पढ़ी-पढ़ाई जाने वाली गीता-उपनिषद् सार के रूप में इसे समझा जा सकता है ।

इस समग्र प्रतिपादन में जहाँ कहीं अनुपयुक्तता, लेखन या मुद्रण की भूल दृष्टिगोचर हो, उन्हें विज्ञजन सूचित करने का अनुग्रह करें, ताकि अगले संस्करणों में संशोधन किया जा सके ।

- श्रीराम शर्मा आचार्य

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रज्ञा पुराण

।। अथ प्रथमोऽध्यायः ।।

卐 परिवार-व्यवस्था प्रकरणम् 卐

एकदा तु हरिद्वारे कुम्भपर्वणि पुण्यदे ।
पर्वस्नानस्य सञ्जातः समारोहोऽत्र धार्मिकः ।। १ ।।
देशान्तरादसंख्यास्ते सद्गृहस्थाश्च संगताः ।
अवसरे च शुभे सर्वे पुण्यलाभाभिकाम्यया ।। २ ।।
सद्भिर्महात्मभिश्चाऽपि संगत्यात्र परस्परम् ।
सन्दर्भे समयोत्पन्नस्थितीनां विधयः शुभाः ।। ३ ।।
मृग्यास्तथा स्वसम्पर्कक्षेत्रजानां नृणामपि ।
समस्यास्ताः समाधातुं सत्प्रवृत्तेर्विवर्धने ।। ४ ।।
मार्गदर्शनमिष्टं च राष्ट्रकल्याणकारकम् ।
भागीरथीतटे तस्मात् सम्मर्दः सुमहानभूत् ।। ५ ।।
पुण्यारण्येषु गत्वा च सर्वे देवालयेष्वपि ।
प्रेरणाः प्राप्नुवन्त्युच्चा धार्मिकास्ते जनः समे ।। ६ ।।

भावार्थ—*एक बार पुण्यदायी कुम्भपर्व पर हरिद्वार क्षेत्र में विशाल पर्व-स्नान का धर्म समारोह हुआ । देश-देशांतरों से अगणित सद्गृहस्थ उस अवसर पर पुण्य-लाभ पाने के लिए एकत्र हुए । साधु-संतों को भी परस्पर मिल-जुलकर सामयिक परिस्थितियों के संदर्भ में उपाय खोजने थे, साथ ही अपने संपर्क क्षेत्र के लोगों की समस्यायें सुलझाने एवं सत्प्रवृत्तियाँ बढ़ाने के संदर्भ में राष्ट्र-कल्याणकारी मार्गदर्शन भी करना था । भागीरथी के तट पर अपार भीड़ थी, तीर्थ आरण्यकों और देवालयों में पहुँचकर धर्मप्रेमी उच्चस्तरीय प्रेरणाएँ प्राप्त कर रहे थे ।। ५-६ ।।*

व्याख्या—कुम्भ आदि पर्वों पर, तीर्थस्थानों पर भारी संख्या में संतों और गृहस्थों के संगम होते रहने के प्रमाण स्थान-स्थान पर मिलते रहते हैं । मोटी मान्यता यह है कि समय विशेष पर स्नान आदि का विशेष पुण्य प्राप्त करने के लिए ही लोग पहुँचते हैं । वह भी एक पुण्य हो सकता है; किन्तु प्रस्तुत संदर्भ में अनेक महत्वपूर्ण उद्देश्यों की चर्चा की गयी है ।

अनादिकाल से ऋषियों का, संतों का एक देशव्यापी तंत्र कार्य करता रहा है । अपनी-अपनी साधनाओं से उपलब्ध महत्वपूर्ण सूत्रों का एकीकरण, बदलती परिस्थितियों के अनुरूप धर्म-तंत्र के क्रियात्मक सूत्रों का निर्धारण, सामाजिक-राष्ट्रीय समस्याओं के संदर्भ में सर्वसम्मत हल तथा तदनुरूप मार्गदर्शन की व्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण पुण्यदायी कार्य ऐसे अवसरों पर किए जाते थे । इनका लाभ जनसामान्य भी उठाते थे और जन-जन तक पहुँचाने का क्रम भी चलाता रहता था ।

अस्मिन् पर्वणि धौम्यश्च महर्षिः स व्यधाच्छुभम् ।
सत्रं तत्र गृहस्थानां मार्गदर्शनहेतवे ।। ७ ।।
तस्या आयोजनस्येयं सूचना विहिताऽत्र च ।
शङ्खनादेन घण्टानां निनादेनाऽपि सर्वतः ।। ८ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भावार्थ–इस पर्व आयोजन के बीच महर्षि धौम्य ने सद्गृहस्थों के मार्गदर्शन हेतु एक विशेष सत्र का अयोजन किया । इस आयोजन की सूचना शंख बजाते हुए सभी को दे दी गयी ।। ७–८ ।।

व्याख्या–प्राचीनकाल के ऋषियों ने अपने समय की समस्याओं पर उसी समय की परिस्थितियों का ध्यान रखते हुए प्रकाश डाला था । आज की स्थिति उस समय से भिन्न है । आज वे समस्याएँ नहीं रहीं जो प्राचीनकाल में थीं । तब परिवार सीमित और सुसंस्कारी होते थे, साधन भी पर्याप्त थे । परंतु अब नयी समस्याएँ सामने हैं, उनके समाधान आज के हिसाब से ही ढूँढ़ने होंगे । यह काम युगद्रष्टाओं और काल पुरुषों का है । वे ही समय-समय पर युगानुरूप समस्याओं के समाधान प्रस्तुत करते रहे हैं । यहाँ महर्षि ने बदलती परिस्थितियों में समयानुकूल समाधान प्रस्तुत करने के लिए सद्गृहस्थों-सामान्यजनों को आमंत्रित किया है ।

सत्रसप्ताहमारब्धं विषयेष्वपि च सप्तसु ।
प्रथमे दिवसे चाभूदौत्सुक्यमधिकं नृणाम् ।। ९ ।।
जिज्ञासवो गृहस्थाश्च बहवस्तत्र संगताः ।
गृहिण्योऽपि विवेकिन्यो बह्वयस्तत्र समागताः ।। १० ।।
उपस्थितान् गृहस्थाँश्च संबोध्योवाच तत्र सः ।
ऋषिर्धौम्यो गृहस्थस्य गरिम्णो विषयेऽद्भुतम् ।। ११ ।।
पुण्यदं घोषितं तच्च गृहेऽपि वसतां नृणाम् ।
वातावृतेस्तपोभूमेः समानाया विनिर्मितेः ।। १२ ।।
गुरुकुलस्य विशालस्य संचालनविधेरिव ।
ओजस्विन्यां गभीरायां वाचि वक्तव्यमाह च ।। १३ ।।

भावार्थ–सत्र प्रारंभ हुआ । इसे सात दिन चलना था और सात विषयों पर प्रकाश डाला जाना था । प्रथम दिन उत्सुकता अधिक थी । बहुत से जिज्ञासु गृहस्थ उपस्थित हुए । विचारशील महिलायें भी उसमें बड़ी संख्या में उपस्थित थीं । उपस्थित सद्गृहस्थों को संबोधित करते हुए महर्षि धौम्य ने गृहस्थ–धर्म की अद्भुत गरिमा बताई । उसे घर में रहते हुए तपोवन का वातावरण बनाने और गुरुकुल चलाने के समान पुण्य–फलदायक बताया । गंभीर ओजस्वी वाणी में अपना प्रतिपादन प्रस्तुत करते हुए वे बोले– ।। ९–१३ ।।

व्याख्या–गृहस्थ धर्म जीवन का एक पुनीत, आवश्यक एवं उपयोगी अनुष्ठान है । आत्मोन्नति करने के लिए यह एक प्राकृतिक, स्वाभाविक और सर्वसुलभ योग है । गृहस्थ-धर्म के परिपालन से ही आत्मभाव की सीमा बढ़ती है, एक से अनेक तक आत्मीयता फैलती-विकसित होती है । इसमें मनुष्य अपनी दिन-दिन की खुदगर्जी के ऊपर अंकुश लगाता जाता है, आत्मसंयम सीखता और स्त्री, पुत्र, संबंधी, परिजन आदि में अपनी आत्मीयता बढ़ाता जाता है । यही उन्नति धीरे-धीरे आगे बढ़ती जाती है और मनुष्य संपूर्ण चर-अचर में, जड़-चेतन में आत्मसत्ता को ही समाया देखता है । उसे परमात्मा की दिव्य ज्योति जगमगाती दीखती है ।

गृहस्थाश्रम को ऐसा आश्रम कहा है, जिसकी परिधि में आज के विश्व की बहुसंख्य जनसंख्या समा जाती है । इस दृष्टि से इस आश्रम की मर्यादाओं में किसी भी भले-बुरे परिवर्तन का प्रभाव सर्वाधिक लोगों को प्रभावित करता है, जो कि समाज की एक इकाई है । समाज का एक स्वरूप ही मनुष्य का अपना परिवार है । परिवार संख्या को लौकिक तथा आध्यात्मिक उत्कर्ष के लिए अतीव उपयोगी माना गया है । परिवार जीवन की परिभाषा करते हुए ऋषि-मनीषियों ने कहा है–"परिवार परमात्मा की ओर से स्थापित एक ऐसा साधन है, जिसके द्वारा हम अपना आत्म-विकास सहज ही में कर सकते हैं और आत्मा में सतोगुण को परिपुष्ट कर सुखी, समृद्ध जीवन प्राप्त कर सकते हैं । मानव-जीवन की सर्वांगीण सुव्यवस्था के लिए पारिवारिक जीवन प्रथम सोपान है । मनुष्य केवल सेवा, कर्म और साधना में ही पूर्ण शांति प्राप्त कर सकता है ।

जिस प्रकार परमात्मा और आत्मा में सिवाय छोटे-बड़े स्वरूप के और कोई अंतर नहीं है, उसी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रकार समाज और परिवार में कोई अंतर नहीं है । परिवार को समुन्नत एवं सुसंस्कृत बनाना समाज के उत्थान करने की एक छोटी प्रक्रिया है । उसको क्रियात्मक रूप देने की प्रयोगशाला परिवार है । समाज सेवा का परिपूर्ण अवसर अपने परिवार के छोटे से क्षेत्र में प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त है और उतने का सुधार कर सकना सरल एवं साध्य भी है । यदि हम सब अपने कौशल, ज्ञान और क्षमता का पूरा-पूरा लाभ देकर परिवार के माध्यम से समाज सेवा का उत्तरदायित्व निभाते चलें, तो जल्दी ही वे परिस्थितियाँ आ सकती हैं, वह सुकाल आ सकता है जो कभी प्राचीन युग में रही हैं । शास्त्र का वचन है–

तथा तथैव कार्याऽत्र न कालस्य विधीयते ।
अभिन्नेव प्रयुञानो ह्यभिन्नेव प्रलीयते ॥

अर्थात इस संसार के साथ हमारा संयोग है, इसी संसार में हमारा लय हो जायेगा, तब हमें जिस समय जो कर्तव्य हो, वही करना अनिवार्य है । व्यक्तिगत सुविधा अथवा असुविधा को लेकर कर्तव्य के पुण्य पथ पर चलते रहना चाहिए । इसीलिए धर्म ने गृहस्थाश्रम को तपोभूमि कहकर उसकी महत्ता स्वीकार की है ।

गृहस्थ एव इज्यते गृहस्थस्तप्यते तपः ।
चुतुर्णामाश्रमाणान्तु गृहस्थस्तु विशिष्यते ॥

अर्थात् गृहस्थ ही वास्तव में यज्ञ करते हैं । गृहस्थ ही वास्तविक तपस्वी हैं । इसलिए चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम ही सबका सिरमौर है । गृहस्थ जीवन एक तप है, एक साधना है । इसका समुचित प्रयोग करके ही वास्तविक जीवन लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है ।

यहाँ ऋषि श्रेष्ठ ने गृहस्थाश्रम को तपोवन बताते हुए उसकी गरिमा बताने एवं इस आश्रम को एक समग्र गुरुकुल व्यवस्था के रूप में चलाने, विकसित करने की महत्ता दर्शाने का प्रयास आरंभ किया है । उन्होंने अपने उद्‌बोधन का शुभारंभ ही गृहस्थाश्रम के माहात्म्य से किया है । जो स्पष्टतः इस प्रकरण की गंभीरता जताता है ।

धन्यो गृहस्थाश्रमः गृहस्थाश्रम समाज को सुनागरिक देने की खान है । भक्त, ज्ञानी, संत, महात्मा, सुधारक, महापुरुष, विद्वान, पंडित गृहस्थाश्रम से ही निकलकर आते हैं । उनके जन्म से लेकर शिक्षा-दीक्षा, पालन-पोषण, ज्ञानवर्द्धन गृहस्थाश्रम के बीच ही होता है । परिवार के बीच ही मनुष्य की सर्वोपरि शिक्षा होती है । गृहस्थाश्रम ही समाज के संगठन, मानवीय मूल्यों की स्थापना, समाज निष्ठा, भौतिक विकास के साथ-साथ मनुष्य के आध्यात्मिक-मानसिक विकास का क्षेत्र है । गृहस्थाश्रम ही समाज के व्यवस्थित स्वरूप का मूलाधार है ।

गृहस्थ धर्म मानव जीवन का एक पवित्र, आवश्यक एवं उपयोगी अनुष्ठान है । आत्मोन्नति का अभ्यास करने के लिए सबसे अच्छा स्थान-आश्रम स्थल अपना घर-परिवार ही है । इसीलिए गृहस्थ धर्म अन्य सभी धर्मों से अधिक महत्वपूर्ण माना गया है । महर्षि व्यास के शब्दों में 'गार्हस्थ्येव हि धर्माणां सर्वेषां मूलमुच्यते ।' गृहस्थाश्रम ही सर्वधर्मों का आधार है । 'धन्यो गृहस्थाश्रमः' चारों आश्रमों में गृहस्थाश्रम धन्य है । जिस तरह समस्त प्राणी माता का आश्रय पाकर जीवित रहते हैं, उसी तरह सभी आश्रम गृहस्थाश्रम पर आधारित हैं ।

धौम्य उवाच–

गृहस्थाश्रमधर्मस्य परिपालनमप्यहो ।
योगभ्यास इवास्तीह संयमादात्मनः सदा ॥ १४॥
यथाकालं तु ये चैनं धर्मं सम्पादयन्त्यलम् ।
परलोकेऽथ लोकेऽपि सुखं सन्तोषमेव च ॥ १५॥
यशं श्रेयश्च विन्दन्ति मोदन्ते सर्वदा तथा ।
स्वप्रयासानुरूपं च लभन्ते पुण्यमुत्तमम् ॥ १६॥
सद्‌गतेरधिकारित्वं प्राप्यते यान्ति निश्चितम् ।
जीवनस्य परं लक्ष्यं पदं च योगिनो यथा ॥ १७॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भावार्थ–महर्षि धौम्य ने कहा–गृहस्थ धर्म का परिपालन भी एक प्रकार का योगाभ्यास है । चूँकि इसमें सदा आत्मसंयम का पालन करना पड़ता है । जो इसे यथा समय सही रूप से सम्पन्न करते हैं, वे लोक और परलोक में सुख, संतोष, यश एवं श्रेय को प्राप्त करते हैं तथा प्रसन्न रहते हैं । अपने प्रयास के अनुरूप वे पुण्यफल पाते और सद्गति के अधिकारी बनकर योगियों की तरह ही जीवन लक्ष्य तक पहुँचते और परमपद पाते हैं ।। १४–१७।।

व्याख्या–गृहस्थ धर्म का पालन करना एक प्रकार से योग की साधना करना है । अनेक प्रकार के योगों में एक 'गृहस्थ योग' भी है । इसमें परमार्थ, सेवा, प्रेम, सहायता, त्याग, उदारता और बदला पाने की इच्छा से विमुखता–यही दृष्टिकोण प्रधान है । यह योग महत्वपूर्ण, सर्वसुलभ तथा स्वल्प श्रम-साध्य है । योग के नाना रूपों का एक ही प्रयोजन है–आत्मभाव को विस्तृत करना, तुच्छता को महानता के साथ बाँध देना । भगवान मनु का कथन है कि गृहस्थाश्रम में पुरुष, उसकी पत्नी और संतान मिलकर ही एक पूर्ण 'मनुष्य' बनता है, उनकी आत्मीयता का दायरा क्रमशः बढ़ता ही जाता है । अकेले से पति-पत्नी दो में, फिर बालक के साथ तीन में, संबंधियों में, पड़ोसियों में, गाँव, प्रांत, प्रदेश, राष्ट्र और विश्व में यह आत्मीयता क्रमशः बढ़ती है । अंततः समस्त जड़ चेतन में आत्मभाव फैल जाता है और अंत में जीव पूर्णतया आत्मसंयमी हो जाता है । गृहस्थ योग की छोटी सी सर्वसुलभ साधना जब अपनी विकसित अवस्था तक पहुँचती है तो आत्मा परमात्मा बन जाता है और पूर्णता की प्राप्ति होती है ।

ऋषि श्रेष्ठ यहाँ यह समझा रहे हैं कि परिवार निर्माण एक विशिष्ट स्तर की साधना है, उसमें योगी जैसी प्रज्ञा और तपस्वी जैसी प्रखर प्रतिभा का परिचय देना पड़ता है । कलाकार अपने आपको साधता है, किन्तु परिवार निर्माता को एक समूचे समुदाय के, विभिन्न प्रकृति और स्थिति के लोगों का निर्माण करना पड़ता है । यह कार्य सघन आत्मीयता, समग्र दूरदर्शिता एवं समर्थ तत्परता से ही संभव हो सकता है । इसके लिए धरती जैसी सहनशीलता, पर्वत जैसा धैर्य धारण और सूर्य जैसी प्रखरता का समन्वय सँजोना पड़ता है । इन सद्गुणों के अभाव में सुसंस्कृत-सुसंस्कारी परिवार के निर्माण का संयोग संभव नहीं ।

पूरी निष्ठा और सही ढंग से साधा गया गृहस्थ धर्म किस प्रकार फलता है, यह प्रस्तुत उदाहरणों से स्पष्ट है ।

सद्गृहस्थ सुधन्वा की शक्ति

महाभारत में सुधन्वा और अर्जुन के बीच भयंकर द्वंद्व युद्ध छिड़ा । दोनों महाबली थे और युद्ध-विद्या में प्रवीण-पारंगत भी । घमासान लड़ाई चली । विकरालता बढ़ती जा रही थी । निर्णायक स्थिति आ नहीं रही थी ।

अंतिम बाजी इस बात पर अड़ी कि फैसला तीन बाणों में ही होगा । या तो इतने में ही किसी का वध होगा, अन्यथा युद्ध बंद करके दोनों पक्ष पराजय स्वीकार करेंगे ।

जीवन-मरण का प्रसंग सामने आ खड़ा होने पर कृष्ण को भी अर्जुन की सहायता करनी पड़ी । उनने हाथ में जल लेकर संकल्प किया कि गोवर्धन उठाने और व्रज की रक्षा करने के पुण्य मैं अर्जुन के बाण के साथ जोड़ता हूँ । आग्नेयास्त्र और भी प्रचंड हो गया ।

काटने का सामान्य उपचार हलका पड़ रहा था । सो सुधन्वा ने भी संकल्प किया कि एक पत्नीव्रत पालने का मेरा पुण्य भी इस अस्त्र के साथ जुड़े ।

दोनों अस्त्र आकाश मार्ग में चले । दोनों ने दोनों के अस्त्र बीच में काटने के प्रयत्न किए । अर्जुन का अस्त्र कट गया और सुधन्वा का बाण आगे बढ़ा किन्तु निशाना चूक गया ।

दूसरा अस्त्र फिर उठाया, अबकी बार कृष्ण ने अपना पुण्य उसके साथ जोड़ा और कहा–"ग्राह से गज को बचाने और द्रौपदी की लाज बचाने में मेरा पुण्य अर्जुन के बाण के साथ जुड़े ।" दूसरी ओर सुधन्वा ने भी वैसा ही किया और कहा–"मैंने नीतिपूर्वक ही उपार्जन किया है और चरित्र के किसी पक्ष में त्रुटि न आने दी हो तो पुण्य इस अस्त्र के साथ जुड़े ।"

इस बार भी दोनों अस्त्र आकाश में टकराये और सुधन्वा के बाण से अर्जुन का बाण आकाश में ही कटकर धराशायी हो गया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तीसरा अस्त्र और शेष था । इसी पर अंतिम निर्णय निर्भर था । कृष्ण ने कहा–"मेरे बार-बार अवतार लेकर धरती का भार उतारने का पुण्य अर्जुन के बाण के साथ जुड़े ।" दूसरी ओर सुधन्वा ने कहा–"यदि मैंने स्वार्थ का क्षण भर चिंतन किए बिना धन को निरंतर परमार्थ में निरत रखा हो तो मेरा पुण्य बाण के साथ जुड़े ।"

इस बार भी सुधन्वा का बाण ही विजयी हुआ । उसने अर्जुन का बाण काट दिया ।

दोनों पक्षों में से कौन अधिक समर्थ है, इसकी जानकारी देवलोक तक पहुँची, तो वे सुधन्वा पर आकाश से पुष्प बरसाने पहुँचे । युद्ध समाप्त कर दिया गया । भगवान कृष्ण ने सुधन्वा की पीठ ठोंकते हुए कहा–"नर श्रेष्ठ ! तुमने सिद्ध कर दिया कि नैष्ठिक गृहस्थ साधक किसी भी तपस्वी से कम नहीं होता ।"

शालीन परिवार

काफी वर्षों पूर्व जापान में एक मंत्री श्री ओ०पी० शाद्र हुए हैं । उनका परिवार सारे जापान में सबसे बड़ा परिवार था । इस भरे-पूरे परिवार में कुल सदस्यों की संख्या एक हजार से भी ज्यादा थी । इस विशाल परिवार में कभी भी किसी ने तू-तू, मैं-मैं तक नहीं सुनी थी ।

इस शालीन परिवार की ख्याति तत्कालीन जापानी सम्राट् यामातो तक पहुँची, तो उसने वास्तविकता की जाँच करनी चाही । इसके लिए सम्राट् ओ०पी० शाद्र के घर पहुँचे । वृद्ध मंत्री ने सम्राट् का यथोचित आदर-सत्कार किया । सम्राट् ने वृद्ध मंत्री से इतने बड़े परिवार की शालीनता एवं सज्जनता का कारण पूछा ।

वृद्ध मंत्री ने संयत वाणी में कहा–"हमारे परिवार का हर सदस्य संयम, सहनशीलता और पारस्परिक सहकार का महत्व समझता है । शालीनता को बनाए रखना सभी अपनी पवित्र साधना का एक महत्वपूर्ण अंग मानते हैं ।

सम्राट् ने परिवार संस्था में गुणों के समावेश एवं इस प्रकार संभव हुए विकास की महत्ता को समझा एवं अन्य नागरिकों के लिए इसे एक आचरण संहिता के रूप में अपनाने को कहा ।

सद्गृहस्थ की सिद्धि-साधना

एक सद्गृहस्थ था । संयम से रहता । परिवार को सुसंस्कारी बनाने में निरत रहता । नीतिपूर्वक आजीविका कमाता । बचा हुआ समय और धन परमार्थ में नियोजित किए रहता । वह तपोवन में बसा तो नहीं, पर घर में ही तपोवन बसा दिया ।

देवता इस धर्मात्मा विरक्त गृहस्थ की योग साधना से बहुत प्रसन्न हुए । इंद्र उसके सम्मुख प्रकट हुए और वर माँगने के लिए कहा ।

क्या माँगता ! जब असंतोष ही नहीं, तो अभाव किस बात का ? हाथ पसारने में हेठी भी तो होती है । स्वाभिमान गँवाकर ही किसी से कुछ पाया जा सकता है । सो उसने ऐसा उपाय खोजा, जिसमें ऋण भार भी न लदे और देवता बुरा भी न मानें ।

उसने वर माँगा । उसकी छाया जहाँ भी पड़े, वहाँ कल्याण बरसने लगें । वरदान मिल गया । पर अचंभित देवता ने पूछा–"हाथ रखने पर कल्याण होने पर तो आनंद भी आता, प्रशंसा भी होती और प्रत्युपकार की संभावना रहती । छाया से कल्याण होने पर इन लाभों से वंचित रहना पड़ेगा । फिर ऐसा विचित्र वर क्यों माँगा ?"

सद्गृहस्थ ने कहा–"देव ! सामने वाले का कल्याण होने पर तो अपना अहंकार पनपेगा और साधना में बिघ्न डालेगा । छाया किस पर पड़ी, कौन कितना लाभान्वित हुआ, इसका पाता न चलना ही मेरे जैसे विनम्रों के लिए श्रेयस्कर है ।

साधना का यही स्वरूप वरेण्य है । यही क्रमिक प्रगति के पथ पर चलते-चलते व्यक्ति को महामानव बना देता है ।

लघुराष्ट्रं समाजोऽल्पः परिवारस्तु वर्तते ।
सीमिताश्च जनास्तत्र परिवारे भवन्त्यपि ।। १८ ।।
अतएव विधातुं च गृहस्थं सुव्यवस्थितम् ।
विकासोपेतमप्यत्र सुविधा अधिका मताः ।। १९ ।।
वसतां परिवारे च सञ्चालनकृतामपि ।
दायित्वमुभयोरेतत्समुदायमिमं सदा ।। २० ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

समाजं राष्ट्रमेवाऽपि स्वादर्शं निर्मितुं समान् ।
सद्भावान् बुद्धिमत्तां च क्रियाकौशलमाश्रयेत् ।। २१ ।।

भावार्थ–परिवार एक छोटा राष्ट्र या समाज है । उसमें सीमित लोग रहते हैं । अस्तु, उसे सँभालने, विकसित करने का अभ्यास करते रहने की सुविधा भी अधिक है । जो परिवार में रहें या उसे चलायें, उन दोनों ही वर्गों का उत्तरदायित्व है कि इस समुदाय को एक आदर्श समाज, आदर्श राष्ट्र बनाने में अपनी समस्त सद्भावना, बुद्धिमत्ता एवं क्रिया–कौशल नियोजित करें ।। १८–२१ ।।

व्याख्या–महर्षि ने बड़ा महत्वपूर्ण सूत्र यहाँ दिया है । जो व्यक्ति की, समाज की, राष्ट्र की महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ सँभालना चाहते हैं, वे उसके अनुकूल अनुभव किसी परिवार को आदर्श ढंग से संचालित करके प्राप्त कर सकते हैं । अभ्यास का यह मार्ग सबके लिए खुला है ।

समाज को आदर्श बनाने के लिए कोई कुछ कर सके या न कर सके, पर उसकी एक इकाई अपने परिवार को उस आधार पर विकसित किया जा सकता है । पारिवारिक प्रवृत्तियाँ ही संयुक्त होकर सामाजिक स्तर पर प्रकट होती हैं । परिवार में रहने वाला हर छोटा-बड़ा व्यक्ति इस जिम्मेदारी को समझे और निबाहे, तो परिवार भी आदर्श बने और समाज भी ।

यह एक जाना-माना सिद्धांत है कि जैसा साँचा होगा वैसी ही मूर्तिकार की रचना ढलेगी । समाज एक ऐसी मूर्ति है, जिसका साँचा परिवार है । समाज निर्माण, समाज सुधार, सत्प्रवृत्ति विस्तार सबसे पहले परिवार संस्था से आरंभ होता है । आदर्श परिवार ही किसी सशक्त समाज की आधारशिला बनाते हैं । इसी कारण महामानवों का ध्यान परिवार पर सर्वाधिक रहा है ।

पुष्ट इकाइयों से बना समर्थ राष्ट्र

फ्रांस ने हालैंड पर हमला किया पर वह बहुत बड़ा और साधन संपन्न होते हुए भी उस छोटे से देश पर विजय प्राप्त न कर सका ।

इस पर खीज कर फ्रांस के राजा लुई चौदहवें ने मंत्री कालवर्ट को बुलाया और पूछा कि इतना बड़ा और समर्थ होते हुए भी फ्रांस क्यों जीत नहीं पा रहा है ?

कालवर्ट गंभीर हो गए । उनने नम्रतापूर्वक धीमे शब्दों में कहा–"महत्ता और समर्थता किसी देश के विस्तार या वैभव पर निर्भर नहीं करती, वह तो वहाँ के नागरिकों की देशभक्ति और बहादुरी पर निर्भर करती है ।"

हालैंड के घर-घर में, बच्चे-बच्चे को राष्ट्र की सशक्त इकाई के रूप में ढाला जाता है । यह साधना उन्हें दुर्धर्ष बनने की शक्ति देती है ।

हालैंड के नागरिकों की देशभक्ति का विस्तृत विवरण विदित होने पर फ्रांस ने अपनी सेना वापस बुला ली ।

जल्दबाजी का दुष्परिणाम

एक राजा था । संसार का सबसे धनवान बनने की लालसा रखता था । एक सिद्ध पुरुष उसके यहाँ पहुँच गए । स्वागत से प्रसन्न होकर वर माँगने को कहा । राजा ने जल्दबाजी में माँग लिया–"जो हाथ से छू लूँ, वह सोना हो जाय ।"

वरदान मिल गया । राजा प्रसन्न था कि जिस वस्तु को चाहूँ सोना बना लूँगा । पर उसके भोजन के पदार्थ, पानी आदि सभी हाथ में आते ही सोना बनने लगे । भूख से व्याकुल राजा सोचने लगा, धनवान बनने की जल्दबाजी में मैंने स्वयं अनर्थ मोल ले लिया ।

दुर्योधन का दर्प

दुर्योधन को अहंकार दिखाये बिना चैन नहीं पड़ता था । पांडव वनवास में थे । दुर्योधन को महलों में संतोष न हुआ, अपने वैभव का प्रदर्शन करने जंगल के उसी क्षेत्र में गया, जहाँ पांडव रहते थे । वहाँ अपने को सर्व समर्थ सिद्ध करने के लिए मनमाने ढंग से जश्न मनाने लगा । अहंकारी में शालीनता-सौजन्य नहीं रह जाता । अपने आगे किसी को कुछ समझता भी नहीं । उसी क्रम में कौरव गंधर्वों के सरोवर को गंदा करने लगे, रोकने पर भी न माने । क्रुद्ध होकर गंधर्वराज ने उन्हें बंदी बना लिया । पता पड़ने पर युधिष्ठिर ने अर्जुन को भेज कर अपने मित्र गंधर्वराज से उन्हें मुक्त कराया । दुर्योधन को शर्म से सिर झुकाना पड़ा ।

अहंकार का प्रदर्शन

राबिया बसरी कई संतों के संग बैठी बातें कर रही थी । तभी हसन बसरी वहाँ आ पहुँचे और बोले–"चलिए, झील के पानी पर बैठकर हम दोनों अध्यात्म चर्चा करें ।" हसन के बारे में प्रसिद्ध

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

था कि उन्हें पानी पर चलने की सिद्धि प्राप्त है ।

राबिया ताड़ गई कि हसन उसी का प्रदर्शन करना चाहते हैं । बोलीं–"भैया ! यदि दोनों आसमान में उड़ते-उड़ते बातें करें तो कैसा रहे ?" (राबिया के बारे में भी प्रसिद्ध था कि वे हवा में उड़ सकती हैं ।) फिर गंभीर होकर बोलीं–"भैया ! जो तुम कर सकते हो, वह हर एक मछली करती है और जो मैं कर सकती हूँ वह हर मक्खी करती है । सत्य करिश्मेबाजी से बहुत ऊपर है । उसे विनम्र होकर खोजना पड़ता है । अध्यात्मवादी को दर्प करके अपनी गुणवत्ता गँवानी नहीं चाहिए ।" हसन ने अध्यात्म का मर्म समझा और राबिया को अपना गुरु मानकर आत्म-परिशोधन में जुट गए ।

विदुर का भोजन और श्रीकृष्ण

विदुरजी ने जब देखा कि धृतराष्ट्र और दुर्योधन अनीति करना नहीं छोड़ते, तो सोचा कि इनका सान्निध्य और इनका अन्न मेरी वृत्तियों को भी प्रभावित करेगा । इसलिए वे नगर के बाहर वन में कुटी बनाकर पत्नी सुलभा सहित रहने लगे । जंगल से भाजी तोड़ लेते, उबालकर खा लेते तथा सत्कार्यों में, प्रभु-स्मरण में समय लगाते ।

श्रीकृष्ण जब संधि दूत बनकर गए और वार्ता असफल हो गयी तो वे धृतराष्ट्र, द्रोणाचार्य आदि सबका आमंत्रण अस्वीकार करके विदुर जी के यहाँ जा पहुँचे । वहाँ भोजन करने की इच्छा प्रकट की ।

विदुर जी को यह संकोच हुआ कि शाक प्रभु को परोसने पड़ेंगे ? पूछा–"आप भूखे भी थे, भोजन का समय भी था, और उनका आग्रह भी, फिर आपने वहाँ भोजन क्यों नहीं किया ?"

भगवान बोले–"चाचाजी ! जिस भोजन को करना आपने उचित नहीं समझा, जो आपके गले न उतरा, वह मुझे भी कैसे रुचता ? जिसमें आपने स्वाद पाया, उसमें मुझे स्वाद न मिलेगा, ऐसा आप कैसे सोचते हैं ?"

विदुर जी भाव विह्वल हो गए, प्रभु के स्मरण मात्र से हमें जब पदार्थ नहीं संस्कार प्रिय लगने लगते हैं, तो स्वयं प्रभु की भूख पदार्थों से कैसे बुझ सकती है । उन्हें तो भावना चाहिए । उसकी विदुर दंपत्ति के पास कहाँ कमी थी । भाजी के माध्यम से वही दिव्य आदान-प्रदान चला । दोनों धन्य हो गए ।

वस्तुतः परिवारस्तु संयुक्तं कथितं बुधैः ।
पुण्यं संघटनं यस्य सुव्यवस्था मता तु सा ।। २२।।
सद्भावस्य बाहुल्यात् सहकारस्य सन्ततम् ।
कर्तव्यपालने बुद्धिः कर्तव्या परिवारगैः ।। २३।।
अधिकारोपलब्धेश्च यावत्यः सुविधाश्च ताः ।
भवेयुः कर्म कर्तुं च तत्र यत्नो विधीयताम् ।। २४।।
स्वापेक्षया परेषां हि सुविधासु भवेद् यदि ।
ध्यानं तदैव कस्मिंश्चित् समुदाये तु मित्रता ।। २५।।
आत्मीयता तथा नूनं सहकारस्य भावना ।
विकसिता दृश्यते यैश्च विना शून्यं हि जीवनम् ।। २६।।

भावार्थ–*परिवार वस्तुतः एक पवित्र संयुक्त संगठन है । उसकी सुव्यवस्था पारस्परिक सद्भाव-सहकार की बहुलता से ही बन पड़ती है । सभी सदस्य कर्त्तव्यपालन पर अधिक ध्यान दें और अधिकार उपलब्ध करने की जितनी सुविधा मिले, उसी में से किसी प्रकार काम चलाने का प्रयत्न करें । अपनी अपेक्षा दूसरों की सुविधा का ध्यान अधिक रखने पर ही किसी समुदाय में मैत्री, आत्मीयता एवं सहकार के सद्भाव विकसित होते हैं, जिनके बिना जीवन शून्य प्रतीत होता है ।। २२-२६।।*

व्याख्या–परिवार क्या है ? इसका बड़ा सुंदर विवेचन यहाँ किया गया है । सामान्य रूप से एक कुटुंब के व्यक्ति परिवार में माने जाते हैं । परंतु ऋषि कहते हैं यह सद्भावना और सहकार के आधार की पृष्ठभूमि पर विनिर्मित पावन संगठन है । इस आधार पर यदि एक कुटुंब के व्यक्ति भी स्वार्थ भरी आपाधापी के बीच रहते हैं, सद्भाव सहकार उनमें नहीं है, तो वह भी परिवार नहीं;

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मजबूरी में एक बाड़े में बंद जानवर जैसे लोग हैं ।

दूसरी ओर कोई भी व्यक्ति यदि परस्पर उच्च उद्देश्यों को लक्ष्य करके सद्भाव-सहकारपूर्वक साथ-साथ रहते हैं, तो वह एक परिवार है । ऐसा परिवार सभी के लिए आवश्यक होता है । ऋषि, संत आदि आश्रमों में इसी आधार पर परिवार भाव बनाकर रहते हैं । जहाँ परिवार भाव है, वहाँ कोई भी समूह परिवार कहलाता है । इसीलिए पारिवारिकता को आदर्श सामाजिक व्यवस्था माना जाता है ।

व्यक्ति एकाकी रह तो सकता है, पर वह बड़ी कष्टकारी साधना है । भ्रूणावस्था से लेकर बड़े होकर स्वावलंबी बनने तक मानव के विकास में समाज का हर घटक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है । कोई चाहे कि वह बिना किसी के सहयोग के अपनी यात्रा चलाता रहे, तो ऐसे व्यक्ति को इक्कड़, संकीर्ण, स्वार्थी ही कहा जायेगा ।

परिवार की सार्वभौम नूतन परिभाषा में मैत्री के आधार पर बना वह संगठन भी आता है, जिसके हर सदस्य परस्पर अन्योन्याश्रित होते हैं, एक दूसरे के सद्भाव का अवलंबन लेकर आगे बढ़ते हैं । कोई जरूरी नहीं कि व्यक्ति विवाह करके, परिवार बसाकर ही गृहस्थ धर्म निभाएँ । यदि वह एक परिकर विशेष को पारिवारिकता का पोषण देता है, तो प्रकारांतर से परिवार धर्म की साधना ही करता है । महत्ता संगठन की, संरचना की नहीं, उस भावना की, निष्ठा की है, जो ऐसी प्रक्रिया अपनाने पर अंत में विकसित होती है ।

सहचरों की आवश्यकता

ब्रह्मा जी सृष्टि का निर्माण करने लगे तो इतना बड़ा कार्य उन अकेले से सँभलने में न आया । उन्हें साथियों की आवश्यकता हुई । उनने चिर कुमार चार मानस पुत्र उत्पन्न किए सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार । कार्य ठीक प्रकार चल निकला । सहचरों की आवश्यकता सर्वसमर्थों को भी होती है । पारिवारिकता की पृष्ठभूमि इसी आधार पर बनी है ।

पीला पत्ता क्यों गिरा ?

पत्ता पीला पड़ा और झड़कर नीचे गिर पड़ा । देखने वालों ने उसे पत्ते का दोष और दुर्भाग्य बताया । पर जानने वालों ने जाना कि इस पतन को पूरे वृक्ष का परोक्ष समर्थन प्राप्त था । यदि वृक्ष के रसवाही तंतु समर्थ रहे होते, तो पत्ते के जोड़ ढीले न पड़ते और वह असमय इस प्रकार अपने परिवार से विमुख होकर धूल न चाट रहा होता । पर पूरे पेड़ में घुसी विकृति को दोष कौन दे, पत्ते को ही कोस देना पर्याप्त मान लिया गया, यही जग की रीति है । पारिवारिकता में किसी के उत्थान-पतन के लिए सारा तंत्र श्रेय अथवा दोष का भागीदार होता है ।

कौन अधिक शौभाग्यशाली

राम और सीता वनवास जाने लगे तो लक्ष्मण की माता और पत्नी ने भी उनके साथ जाने पर प्रसन्नता व्यक्त की और कहा-"हम दोनों तुम्हें बिदा देते हैं ।" सुमित्रा कौशिल्या की, उर्मिला सीता की और लक्ष्मण राम की तुलना में अपने इसी त्याग के कारण संसार में अधिक आदर्शवादी समझे और अधिक सराहे गए । ऐसे सौभाग्य का लाभ तीनों में किसी ने भी नहीं त्यागा । जिस किसी को अवसर मिले उसे कभी भी अवसर नहीं चूकना चाहिए ।

दोनों साथ चलें

सुभद्रा कुमारी चौहान प्रयाग के एक राजपूत घराने में जन्मीं । पढ़ती भी रहीं, पर उस समय के प्रचलन के अनुसार उनका विवाह खंडवा के लक्ष्मण सिंह नामक लड़के से हो गया । सुभद्रा कुमारी आरंभ से ही विद्या प्रेमी थीं । विवाह के बाद भी पति से आगे पढ़ने की प्रार्थना की, तो उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर ली । उन्हें कॉलेज में भर्ती करा दिया गया । इस बीच पति ने भी वकालत पास कर ली ।

आगे क्या करना है ? दोनों ने निश्चय किया कि देश-सेवा करेंगे । उन्हीं दिनों कांग्रेस आंदोलन चल पड़ा । पति-पत्नी दोनों झंडा सत्याग्रह में सम्मिलित हुए और जेल गए ।

उनके पति ने खंडवा के 'कर्मवीर' साप्ताहिक में सहायक संपादक का काम कर लिया । माखनलाल चतुर्वेदी उसके संचालक थे । दोनों में से एक संपादक का कार्य करके घर चलाता और दूसरा जेल चला जाता । यह क्रम कई वर्षों तक चलता रहा । इस बीच सुभद्रा कुमारी की प्रतिभा भी विकसित हुई । उनने अनेकानेक उच्चकोटि की कविताएँ तथा कहानियाँ लिखीं, जो देशभर में बहुत प्रख्यात हुईं । 'खूब लड़ी मर्दानी वह तो झाँसी वाली रानी थी' कविता सुभद्राजी की ही है । दोनों ने मिलकर समाजसेवा के भी अनेक कार्य किए । पारिवारिक

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

धर्म निबाहते हुए भी राष्ट्र-सेवा का यह एक अनुपम उदाहरण है ।

संयुक्त रहने का लाभ

एक व्यक्ति के पास रेशम का थान था, धागे आपस में लड़ने लगे । अलग-अलग रहने की सबने ठानी । दर्जी ने उनके टुकड़े काट दिए ।

एक जगह खजूर की पत्तियाँ थीं । सूखी और बिखरी पड़ी थीं । उनने मिल-जुलकर रहने का निश्चय किया । माली ने इकट्ठी करके उनकी चटाई बुन दी ।

रेशम की धज्जियाँ दुकान-दुकान पर मारी-मारी फिरीं; किसी ने नजर उठाकर भी उन्हें नहीं देखा, जबकि चटाई का गट्ठा हाथों-हाथ बिक गया ।

अलग होने और शामिल रहने का अंतर दोनों ने समझा और भविष्य के लिए सही रास्ता अपनाया ।

चमत्कार ईसा का या सद्भाव का

महात्मा ईसा अपने शिष्यों सहित कहीं जा रहे थे । रात्रि में एक जगह ठहरे । देखा तो पास में केवल पाँच रोटियाँ थीं, इतने से सबका पेट कैसे भरेगा, यह प्रश्न सामने था । यह समस्या ईसा ने सुनी तो कहा-"सारी रोटियाँ एक पात्र में टुकड़े-टुकड़े करके डाल दो । सभी लोग एक-एक टुकड़ा निकाल-निकाल कर खाते जायें । सबको समान रूप से भोजन मिल जायेगा ।"

सबने श्रद्धापूर्वक गुरु आज्ञा मानी । सोचा जितना सबके पेट में समान रूप से अन्न पहुँचे, वही ठीक है ।

भोजन शुरू हुआ, तो सबका पेट भर गया, टुकड़े हाथ में आते गए । शिष्य बोले-"यह गुरुदेव का चमत्कार है ।" पर ईसा बोले-"यह तुम्हारे सद्भाव भरे सहकार का चमत्कार है । तुम स्वार्थ भरी छीना-झपटी करते, तो यह संभव न होता । जहाँ सद्भाव भरा पारिवारिक सहकार होता है, वहाँ प्रभु का अयाचित सहयोग मिलता है ।

श्रेष्ठ पहाड़ कौन सा ?

तीन पहाड़ थे पास ही पास । उनसे लगा हुआ एक लंबा गहरा खड्ड था । उसके कारण उस ओर किसी का आवागमन नहीं होने पाता था । एक बार देवता उधर से निकले, पहाड़ों से कहा-"इस क्षेत्र का नामकरण करना है । तुम तीनों में से किसी के नाम पर नामकरण किया जायगा । तुम तीनों अपनी एक-एक इच्छा पूरी करा सकते हो । एक वर्ष बाद जिसका जितना विकास होगा; उस आधार पर नामकरण किया जायगा ।"

पहले पहाड़ ने कहा-"मैं सबसे ऊँचा हो जाऊँ, ताकि सबसे दूर से दिखाई दूँ ।" दूसरे ने कहा-"मुझे खूब हरा-भरा प्राकृतिक संपदा से भरा-पूरा बना दें, ताकि सब मेरी ओर आकर्षित हों ।" तीसरे पहाड़ ने कहा-"मेरी ऊँचाई छीलकर इस खड्ड को समतल बना दें, ताकि यह सारा क्षेत्र उपजाऊ हो जाय और लोग यहाँ सुविधा से आ जा सकें ।" देवता तीनों की व्यवस्था बनाकर चले गए ।

एक वर्ष बाद परिणाम देखने देवता पुनः पहुँचे । पहला पहाड़ ऊँचा हो गया था दूर से दिखता था, पर वहाँ कोई जाता नहीं था । हवा, सर्दी, गर्मी की मार सबसे अधिक उसे ही सहनी पड़ती थी ।

दूसरा पहाड़ प्राकृतिक संपदा से भर गया था, पर बीहड़ इतना था कि किसी के जाने की हिम्मत न पड़ती थी । वन्य पशुओं का आतंक भी उससे खूब बढ़ गया था ।

तीसरा पहाड़ खड्ड पाटने से समतल हो गया था । पर सारे क्षेत्र में फसलें उगायी जा रही थीं । खड्ड पट जाने से लोग वहाँ जाने लगे, बसने लगे । उपजाऊ भूमि का लाभ सबको मिलने लगा ।

देवताओं ने उस क्षेत्र का नाम उसी तीसरे पहाड़ के नाम पर रखा; जिसने अपने निकटवर्ती क्षेत्र को भी उपयोगी बना दिया । लोगों के आने-जाने का मार्ग बना और उपजाऊ भी । इस प्रयास में उसने अपने अस्तित्व को ही दाँव पर लगा दिया था । देवताओं ने कहा-"इसी ने इस क्षेत्र को अपना बनाया है । यह क्षेत्र इसी के परिवार के रूप में विकसित हुआ है । इसी के नाम से जाना जायेगा ।"

सह अस्तित्व का महत्व

किसी स्थान पर विशाल भवन का निर्माण हो रहा था । निर्माण स्थल के समीप ही लगा हुआ था ईंटों का एक ढेर । ईंटों के ढेर में जमी ईंटों ने कहा-"गगनचुंबी अट्टालिकाओं का निर्माण हमारे अस्तित्व पर ही आधारित है । भवन जब बनकर तैयार हो जायेगा, निःसंदेह उसके निर्माण का श्रेय मुझे ही मिलेगा ।"

मिट्टी-गारे ने ईंटों की यह गर्व भरी बातें सुनीं, तो रहा न गया वह बोली-"तुम झूठ बोलती हो । क्या तुम नहीं जानती कि एक सूत्र में पिरोकर, ईंट से ईंट जोड़कर इस भवन को सुदृढ़ बनाने का श्रेय तो हमें ही है । मेरे अभाव में तो

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तुम्हारे ये ढेर एक ठोकर मारकर ही गिरा दिए जा सकते हैं ।''

किवाड़ और खिड़कियों ने इसका प्रतिवाद किया–''यह तो सभी जानते हैं कि तुम ईंटों को जोड़-जोड़कर दीवारें खड़ी करती हो, पर यदि उस मकान में खिड़की-दरवाजे न रहेंगे तो पूछेगा कौन ? उसमें रहने के लिए जायेगा कौन ?'' शिल्पी, जो इन सबकी बातों को चुपचाप सुन रहा था, अब बोला–''आप लोगों में भले ही कितना भी सहयोग क्यों न हो, परंतु जब तक मेरा हाथ न लगे, सब अपने-अपने स्थान पर ही पड़े रहेंगे ।''

अब भवन की बारी थी–''भवन ने जो कुछ कहा वह एक स्वीकार्य सत्य था । भवन बोला–''सबका महत्व है, परंतु उससे भी महत्वपूर्ण है सह-अस्तित्व । सह-अस्तित्व के अभाव में किसी का व्यक्तिगत कोई महत्व नहीं है, इसलिए आपको अपना झूठा अभिमान छोड़कर सहयोग का महत्व समझना चाहिए ।''

इस तथ्य को न समझने वाले यह भूलते हैं कि सारा मनुष्य समुदाय एक परिवार की तरह है, उसमें सबका समान अस्तित्व और महत्व है, परस्पर कल्याण का ध्यान रखने में ही भलाई है ।

इसी प्रकार एक बार हाथ, पाँव, नाक, मुख, आँखें सब अपने-अपने महत्व के लिए झगड़ने लगे । यह देखकर मनुष्य को बड़ा गुस्सा आया । उसने खाना बंद कर दिया । अब सबका एक ही ध्यान था, कहीं से खाना मिले तो जिंदा रहें । मनुष्य बोला–''अब समझ गए, तुम्हारा सबका महत्व तो मिलकर रहने में ही है ।''

सहयोगी ही पाते हैं

एक क्षेत्र में सूखा पड़ गया । एक सद्गृहस्थ ने सोचा जब तक वर्षा नहीं होती, यहाँ काम मिलेगा नहीं, चलो कहीं दूसरी जगह जाकर कुछ काम करें । सभी सदस्यों ने यह बात स्वीकार की और चल पड़े । थक गए तो एक पेड़ के नीचे सुस्ताने लगे । छोटा बच्चा बोला–''पिताजी ! भूख लगी है, कुछ खाकर आगे बढ़ें ।'' सबने कहा–ठीक है और तुरंत काम में जुट पड़े । माँ ने पत्थर इकट्ठे करके चूल्हा बनाना प्रारंभ कर दिया । पिता पानी लेने चल पड़ा । छोटे भाई-बहन लकड़ियाँ इकट्ठी करने लगे ।

ऊपर पक्षी रहते थे । उनका मुखिया बोला–''मूर्खो ! सारी तैयारी तो कर रहे हो, पकाने के लिए तो तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है, खाओगे क्या ?''

बड़ा लड़का इसी विचार में था, कहीं से कुछ कंदमूल ले आऊँ । पक्षियों के परिहास से उसे गुस्सा आया, बोला–''अभी सब मिलकर तुम्हारे परिवार को पकड़ कर पकायेंगे ।'' पक्षियों का मुखिया डर गया । सोचा यह पुरुषार्थी परस्पर सहयोग से कुछ भी कर सकते हैं । वह बोला–''हमारे परिवार को मत सताओ । मैं तुम्हें गड़े खजाने का ठिकाना बता देता हूँ । चैन से जीवन बिताना ।''

खजाना लेकर वे घर लौट आए । पड़ोस में एक आलसी, झगड़ालू परिवार रहता था । उसने सारा विवरण सुना, तो मुफ्त में धन पाने के लिए वे भी उसी पेड़ के नीचे पहुँचे । भोजन पकाने का नाटक करने लगे । परंतु जिससे जो काम कहा जाता, वह दूसरे पर टालता, देर तक चें-चें होती रही । पक्षी बोला–''भोजन बनाने की तैयारी में झगड़ तो रहे हो, पर पकाओगे क्या ?''

परिवार प्रमुख झट बोला–''तुम्हें पकड़कर पकायेंगे ।'' पक्षी हँसा और बोला–''हमें पकड़ने वाले और थे, वे धन ले गए । तुम तो एक दूसरे से लड़ते रहो, इसके अलावा तुम से कुछ न होगा ।'' और वह उड़ गया । कुसंस्कारी परिवार वाले एक दूसरे को कोसते, लड़ते-झगड़ते वापस लौट गए ।

एतत् कुटुम्बसंस्थायाः घटनं नैव केवलम् ।
कामकौतुकहेतोर्वा भोजनस्य कृते पुनः ।। २७।।
वस्तुसंग्रहरक्षार्थं नित्यकर्मव्यवस्थितेः ।
इयन्मात्राय दायित्वं बृहत्कश्चित्कथं वहेत् ।। २८।।
एतास्तु सुविधा द्रव्यात्पण्यशालासु चाञ्जसा ।
प्राप्तुं शक्या व्ययश्चाऽपि न्यूनस्त भवेत्तथा ।। २९।।
दायित्वेभ्योऽपरेभ्यश्च मुक्तास्तिष्ठन्ति मानवाः ।
इयत्यपि नरा बद्धा कुटुम्बस्यानुशासने ।। ३०।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भावार्थ–परिवार संस्था का गठन काम–कौतुक, भोजन–व्यवस्था, सामान की सुरक्षा एवं नित्य कर्मों की व्यवस्था मात्र के लिए नहीं होता । इतने भर के लिए कोई क्यों तैयार होगा ? ये सुविधाएँ तो सराय में पैसा चुकाते रहने पर और भी सरलतापूर्वक मिल सकती हैं । उनमें खर्च भी कम पड़ेगा और जिम्मेदारियों से भी मुक्त रहा जा सकेगा । इतने पर भी हर बुद्धिमान् व्यक्ति परिवारगत अनुशासन में ही बँधना चाहता है ।। २७–३०।।

व्याख्या–परिवार परंपरा को प्रोत्साहित करने में ऋषियों का मंतव्य केवल इतना ही नहीं रहा कि व्यक्ति एक से बहुत होकर रहें । दुःख-तकलीफ पड़ने पर उसका हाथ बँटाने वाला साथ हो । व्यक्ति व्यवस्थित रूप से स्थायी होकर रहे और परिजनों के साथ अधिक उल्लासपूर्ण जीवनयापन करे । इस असाधारण मंतव्य के साथ उनका एक इससे कहीं ऊँचा मंतव्य भी रहा है, वह यह कि परिवार के माध्यम से मनुष्य आत्म कल्याण की ओर भी अग्रसर हो । उसमें सामाजिकता, नागरिकता और सबसे बड़ी बात विश्व-मानवता का कल्याणकारी भाव जागे । वह अपने जैसे अन्य मनुष्यों के लिए त्याग, सहानुभूति, सौहार्द्र एवं आत्मीयता का अभ्यास कर सके । पारिवारिक जीवन में ही आध्यात्मिक गुणों को विकसित करने का पूरा-पूरा अवसर मिलता है ।

यहाँ एक ऐसा भ्रम दूर करने का प्रयास किया गया है, जिसमें अधिकांश लोग उलझकर रह जाते हैं । परिवार की आवश्यकता जीवन की सामान्य सुविधाओं के लिए होती है । यह आम मान्यता बन गई है । यदि यही सच होता, कामवासना की तुष्टि, भोजन व्यवस्था, सामान की सुरक्षा, नित्यकर्म की सुविधाएँ आदि के लिए तो धर्मशाला जैसी व्यवस्था ही काफी होती ।

परंतु ऐसा है नहीं । मनुष्य की एक बड़ी आवश्यकता है, सघन आत्मीयता की अनुभूति, अपनत्व का विस्तार, अंतरंग स्नेह का रसास्वादन । पाश्चात्य परंपरा में परिवार को स्थूल व्यवस्था के लिए बनाया गया एक ठेका मानकर प्रयोग किया गया । पहले तो कुछ समय यह व्यवस्था अच्छी लगी, पर फिर क्षोभ, असंतोष उभरने लगा । वहाँ साधन खूब हैं, एक दूसरे की स्वतंत्रता में कोई बाधक नहीं बनता, बल्कि पति-पत्नी, बच्चों और माँ-बाप के बीच यह सघन स्नेह नदारत हो गया, जिसे मानवीय अंतःकरण की खुराक माना जाता रहा है ।

अनेक सर्वेक्षणों के आधार पर यह पाया गया है कि अमेरिका जैसे संपन्न राष्ट्र, में ८० प्रतिशत व्यक्तियों को सोने के लिए नींद की गोली लेनी पड़ती है । उनमें से आधे से अधिक के मानसिक तनाव का कारण उनके पारिवारिक जीवन में स्नेह, सद्भाव, आत्मीयता का पूर्ण अभाव पाया जाना है ।

अंतःकरण की इस पवित्र स्नेह की भूख को शांत न कर पाने पर नशों से उसकी पूर्ति करने का प्रयास भी किया जाता है । पर यह भी कारगर नहीं हुआ । इसीलिए वहाँ के समाज विज्ञानी भारतीय पारिवारिक अनुशासनों के पक्षधर होते जा रहे हैं । जहाँ अंतरंग आत्मीयता के सहारे, अभावों में भी स्नेह, संतोष सतत् छलकता रहता है ।

बुद्धिमत्ता का तकाजा है कि व्यक्ति परिवार संस्था के दर्शन एवं माहात्म्य को समझे, उस अनुशासन से स्वयं को जोड़े, ताकि वह सब कुछ उसे अर्जित हो सके, जिसके लिए यह मानव योनि मिली है ।

भरत का सौजन्य

वस्तुतः सुविधा और संपदा ही सब कुछ नहीं है । आदर्शों को चरितार्थ करने में यदि उपलब्धियों का परित्याग करना पड़े, तो उसमें भी हानि नहीं । भरत को राजगद्दी मिल रही थी, पर उनने अनीति के आधार पर उसे स्वीकार करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया । इतना ही नहीं वे अपनी निस्पृहता को सिद्ध करने के लिए राम की तरह जटा–जूट धारण करके घर में ही वनवासी की तरह रहे । सिंहासन पर राम की ही चरण-पादुका प्रतिष्ठित कीं ।

इस प्रकार की आत्मीयता से ओत-प्रोत, त्याग और कर्तव्य की पारिवारिकता ने ही राम के परिवार को जन-जन का आराध्य बना दिया । राम का चरित्र अपनी जगह है एवं भरत का अपनी जगह । एक मर्यादा का पालन करने वाले मर्यादा पुरुषोत्तम के रूप में अवतार सत्ता के प्रतीक के रूप में पूजे जाते हैं, जबकि दूसरे उनके भाई अपनी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पारिवारिक निष्ठा, उत्कृष्टता से जुड़ी आत्मीयता एवं अपनी गुण निधि के कारण ।

सघन स्नेह का सहारा

वन प्रदेश में भयंकर आँधी आने पर वे वृक्ष उखड़ जाते हैं, जो एकाकी खड़े होते हैं । भले ही वे कितने ही विशाल क्यों न हों ? इसके विपरीत घने उगे हुए पेड़ एक दूसरे के साथ सट कर रहने के कारण उस दबाव को सहज ही सहन कर लेते हैं । अंधड़ उनका कुछ भी विगाड़ नहीं पाते ।

यह उदाहरण देते हुए भगवान बुद्ध ने अपने प्रवचन में कहा–''परस्पर स्नेह की सघनता मनुष्यों को इसी तरह नष्ट होने से बचाती और विकास का अवसर प्रदान करती है । संघारामों में सघन पारिवारिक स्नेह का अभ्यास इसीलिए कराया जाता है ।''

सहयोग से बढ़े रूजवेल्ट

अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट अपनी सफलता का रहस्य बताते हुए कहा करते थे–''मैंने अपने को सदा सौभाग्यशाली समझा है, समय-समय पर ऐसा ही दूसरों पर प्रकट भी किया है । इस दुनियाँ में सहयोग उन्हीं को मिलता है, जिन्हें समर्थ, सुयोग्य और सफलता तक पहुँचने वाला समझा जाता है । असमर्थों और अभागों को सस्ती सहानुभूति भर मिल सकती है, पर उन्हें कहीं से कोई कहने लायक सहायता नहीं मिलती ।''

संसार में जिनने भी महत्वपूर्ण सफलताएँ पायी हैं, उन सबने जन-सहयोग अर्जित करने का प्रयत्न किया है । एकाकी मनुष्य कितना ही सुयोग्य क्यों न हो, बड़े काम करने और बड़े उत्तरदायित्व वहन करने में सफल नहीं हो सकता ।

भाई भार नहीं होता

एक महात्मा पहाड़ी पर चढ़ रहे थे, उसी समय एक दस वर्षीय लड़की अपने दो वर्ष के भाई को गोदी में लिए पहाड़ी की चढ़ाई चढ़ रही थी । महात्मा ने कहा–''बच्ची, तू इतना भारी बोझ गोद में लिए कैसे चढ़ पायेगी ?''

लड़की ने तुरंत उत्तर दिया–''बाबा ! यह बोझ नहीं, भाई है ।'' जहाँ प्रेम व भावना होती है, वहाँ कोई काम भारी नहीं होता, अन्यथा भावना न हो, तो जीवन ही भारी लगने लगे । सच्ची पारिवारिकता वही है, जहाँ अंतः से उद्भूत भाव निष्ठा ही सर्वोपरि मानी जाती है ।

कागावा का विशाल परिवार

जापान के एक लड़के कागावा ने पढ़ाई के बाद पीड़ितों की सेवा करना अपना लक्ष्य बनाया और वे उसी में लग गए । पिछड़े, बुरी आदतों से ग्रसित बीमार लोगों के मोहल्लों में वे जाते और दिन भर उन्हीं की सेवा में लगे रहते । पेट भरने के लिए उनने दो घंटे का काम तलाश कर लिया । इस सेवा कार्य की चर्चा दूर-दूर तक होने लगी । एक विदुषी लड़की को उनका यह कार्य बहुत पसंद आया । वह भी उनके कंधे से कंधा मिलाकर कार्य करने को तैयार हो गयी । विवाह एक शर्त पर हुआ कि वे लोग वासनापूर्ति हेतु नहीं, समाज सेवा हेतु मैत्री की खातिर बँधेंगे । उस लड़की ने भी अपना पेट भरने के लिए दो घंटे रोज का काम तलाश लिया । दोनों के मिलकर काम करने से दूना काम होने लगा ।

उदार लोग उनके काम में सहायता देने लगे । फलतः कार्यक्षेत्र बहुत बढ़ गया । सरकार ने पूरे जापान में पिछड़े लोगों को सुधारने का काम उन लोगों को सौंपा । कागावा के प्रति जापान में इतनी श्रद्धा बढ़ी कि उन्हें उस देश का गाँधी कहा जाने लगा ।

परिवार का अर्थ मात्र विवाह का गठबंधन नहीं है, अपितु एक मित्र की तरह साथ चलकर काम करने वाले समूह का नाम है । कागावा को संयोगवश एक सुयोग्य पत्नी मिली एवं उन्होंने अपना परिवार परिकर अच्छा-खासा विशाल बनाकर अपने को सच्चे अर्थों में विश्वमानव प्रमाणित कर दिया ।

समाज को समर्पित कार्नेगी

एण्ड्रयू कार्नेगी के पिता एक स्कॉटिश जुलाहे थे । माता घर के काम से निपट कर एक धोबी और एक मोची की दुकान पर काम करने जाती थी । तब घर का खर्च चलता । माता जब नौकरी पर काम करने जाती, तब उसका पिता उसे इस प्रकार बिदा करता, मानो नई दुल्हन हो । दोनों में अगाध प्रेम था । एण्ड्रयू यह देखता तो उसके ऊपर गहरी छाप पड़ती । उसके पास एक ही कमीज थी । माता उसे रोज धोती और इस्त्री कर देती ।

पढ़ने का अधिक सुयोग न बना । किन्तु स्कूली संस्कार परिवार में रहते-रहते ही आत्मीयता के पड़ गए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तनिक बड़ा होते ही उसने तार घर में हरकारे की नौकरी कर ली । साथ ही तार देने और ग्रहण करने की विधि भी सीखता रहा । परीक्षा में पास हुआ और तार बाबू बन गया । उसके बाद उसने एक जमीन कृषि फार्म हेतु खरीदी । उसमें कृषि के अतिरिक्त एक तेल का कुँआ निकल आया और भी व्यवसायों में आमदनी बढ़ी । विवाह के कितने ही प्रस्ताव आये, पर उसने सभी यह कहकर अस्वीकार कर दिए कि अपनी माता के जीवित रहने तक मैं विवाह न कर उसकी सेवा करूँगा । विवाह में समय और मन दो ओर बँट जायेगा । माँ के मरने के बाद ५२ वर्ष की आयु में उसने शादी की । शादी देरी से करने पर लोगों के उलाहना देने पर कार्नेगी कहता कि "विवाह जिन उद्देश्यों के लिए किया जाता है, उन सभी की पूर्ति मैंने यथासंभव की है । मात्र सहजीवन और काम सेवन ही विवाह का अर्थ नहीं है ।"

विवाह के बाद भी एकाकी बच्चों के परिवार रूपी संगठनों के लिए एवं साधनहीनों को विद्याध्ययन हेतु वह सतत् दान देता रहा । उसने १५० करोड़ डालर की राशि इन्हीं कार्यों में खर्च की । मरते समय कर्जदारों के कागजात जलाकर सबको ऋणमुक्त कर दिया ।

स्थातुमिच्छन्ति तत्रास्ति योग आत्मपरिष्कृतेः ।
समाजाय सुयोग्यानां नागराणां समर्पितेः ।। ३१।।
वातावृतौ सुयोग्यायां व्यक्तिस्तिष्ठति सर्वदा ।
संतुष्टा च प्रसन्ना च निश्चिन्ता च कुटुम्बके ।। ३२।।
अतएव चिरादेष मनुष्यो वसति स्वयम् ।
कृत्वा परिवारनिर्माणं वैशिष्ट्यं मौलिकं त्विदम् ।। ३३।।
पारिवारिकताऽऽधारं समाश्रित्यैव जीवनम् ।
अभूद् विकसितं तस्य जीवनं पशुतां गतम् ।। ३४।।
सामूहिकस्य योगोऽभूदुत्कर्षस्यैवमेष तु ।
सृष्टेर्मुकुटरत्नं यन्मनुष्यः कथ्यतेऽधुना ।। ३५।।

भावार्थ–इसके साथ आत्म–परिष्कार और समाज को सुयोग्य नागरिक प्रदान करने का परमार्थ भी जुड़ा हुआ है । उपयुक्त वातावरण में रहकर व्यक्ति प्रसन्न, संतुष्ट और निश्चिंत रहता है । इसलिए मनुष्य चिरकाल से परिवार बनाकर रहता आ रहा है । यह उसकी मौलिक विशेषता है । पारिवारिकता के आधार पर ही उसका पशु–तुल्य निजी जीवन विकसित हुआ है और सामूहिक उत्कर्ष का ऐसा सुयोग बन सका है, जिसमें मनुष्य को सृष्टि का मुकुटमणि कहा जाता है ।। ३१–३५।।

व्याख्या–सभ्यता का जितना विकास वर्तमान समय में दिखलाई पड़ता है, उसका अधिकांश श्रेय परिवार प्रथा को ही दिया जा सकता है । जिस युग में मनुष्य बिना परिवार के एकाकी रहता था, तब उसमें और अन्य पशुओं में बहुत थोड़ा अंतर था । परिवार बनाकर रहने के पश्चात उस पर स्त्री और बच्चों की सुरक्षा तथा पालन का जो उत्तरदायित्व आया, उसी से उसमें सामूहिकता तथा सहयोग की वृत्तियाँ उत्पन्न हुईं । इसी के द्वारा उसे स्वार्थ, त्याग और समाज सेवा का पाठ पढ़ने को मिला, जिससे क्रमशः लोगों को संगठन और सहयोगपूर्वक काम करने का अभ्यास बढ़ता गया और मानव समाज अन्य प्राणियों से सशक्त स्थिति में पहुँच सका तथा स्रष्टा की उत्कृष्टतम कृति कहलाने का सौभाग्य प्राप्त कर सका ।

अध्यात्म क्षेत्र में सामान्यतया यह मान्यता बन गई है कि गृहस्थ एक बंधन है, उससे जान छुड़ाने का प्रयास किया जाय । इस मान्यता ने गृहस्थाश्रम की पवित्रता और उसकी व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर दिया है । यह बात ठीक है कि कुछ महापुरुष गृहस्थी बसाये बिना भी अपना कार्य करते रहे हैं; परंतु इससे गृहस्थाश्रम की श्रेष्ठता संदिग्ध नहीं हो जाती ।

प्राचीनकाल के इतिहास पर दृष्टि डालने से प्रतीत होता है कि कुछ थोड़े से अपवादों को छोड़कर प्रायः सभी गृहस्थ थे । योग-साधना एवं वनवास के समय भी उनकी पत्नियाँ साथ रहती थीं । सभी गृहस्थ मुनि सपत्नीक रहते थे । महर्षियों में प्रधान सप्त-ऋषियों की भी पत्नियाँ थीं, उनके बच्चे भी थे । देवताओं में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सभी गृहस्थ हैं । ईश्वर के अवतारों में भी अधिकांश ने अपना गृहस्थ बसाया है । भगवान् राम और कृष्ण जिनका नाम लेकर हम भवसागर से पार होते हैं, गृहस्थ ही तो थे । दांपत्य जीवन की आवश्यकता और उपयोगिता को स्वीकार करते हुए उन्होंने मर्यादापालन के लिए एक सद्गृहस्थ के रूप में ही अपना चरित्र प्रस्तुत किया है । जीवन की सुविधा तो गृहस्थ जीवन में बढ़ती है, साथ ही कितने जीवन लक्ष्यों की पूर्ति में भारी सहायता मिलती है ।

गृहस्थ में अधिक परमार्थ

एक संत मरने के बाद परलोक में पहुँचे । चित्रगुप्त ने उनसे कर्मों का लेखा-जोखा पूछा । संत ने बताया-"तीन चौथाई जीवन तो घर-गृहस्थी के काम-धामों में बीता और एक चौथाई एकांत जीवन के भजन-पूजन में लगा ।"

जितना समय परिश्रम और पुण्य-प्रयोजनों में लगा, उसी को परमार्थ माना गया और उस अनुपात में पुण्य मिला । भजन-पूजन वाले दिन तो अपने निज के लाभ भर के लिए माने गए और उतने दिन के श्रम परमार्थ से रहित होने के कारण सामान्य ही माने गए ।

संत की मान्यता से चित्रगुप्त का निष्कर्ष ठीक उल्टा निकला । जिस श्रम-साधना को, समय को वे प्रपंच मानते रहे, वही अनेक को सुविधा पहुँचाने और ऋण चुकाने के कारण परमार्थ गिना गया ।

संन्यासी से गृहस्थ विट्ठल पंडित

विट्ठल पंडित काशी जाकर संन्यास की दीक्षा लेकर वहीं रहने लगे । जब गुरु को पता लगा कि यह गृहस्थ के उत्तरदायित्वों को पूरा किए बिना ही संन्यासी हो गया है, तो उन्होंने संन्यास दीक्षा को रद्द कर दिया और गृहस्थ पालन की आज्ञा दी । उनसे कहा-"गृहस्थ को बंधन मानकर उससे भागो मत । उसके साथ जुड़ी आत्म-परिष्कार की ब्राह्मणोचित साधना करो तथा युग की आवश्यकता के अनुरूप श्रेष्ठ संतान समाज को देने का उत्तरदायित्व पूरा करो ।"

विट्ठल पंडित ने यही किया । जाति वालों ने पंडित जी को जाति बहिष्कृत कर दिया और उनके बच्चों को भी किसी काम में शामिल न होने देते । होना यह चाहिए था कि रास्ता भूला व्यक्ति यदि फिर रास्ते पर आ जाय, तो उसका स्वागत किया जाय, पर प्रतिगामियों को विवेक-बुद्धि से क्या संबंध ?

परंतु विट्ठल पंडित गुरुदेव द्वारा बतलाए गए गृहस्थाश्रम के आदर्शों के अनुरूप चलते रहे और बच्चों को श्रेष्ठ संस्कार देते रहे ।

संत ज्ञानेश्वर सहित उनके तीनों बेटे तथा बेटी मुक्ताबाई चारों धर्म प्रचारक की तरह परिभ्रमण करने लगे । एक बार काशी गए तो पंडितों से शास्त्रार्थ ठन गया । समतावादी ज्ञानेश्वर जी ने श्रेष्ठ कार्यों में सबका अधिकार साबित करने के लिए भैंसों के मुख से वेद मंत्र का उच्चारण कराया । प्रतिगामी पंडितों का शिर नीचा हो गया । संत ज्ञानेश्वर के चमत्कारी रूढ़ि विरोधी प्रयासों से देव संस्कृति के विस्तार, धर्मधारणा के प्रयासों में सहायता मिली ।

प्रेम, श्रद्धा और शांति का संगम 'अपना घर'

एक गृहस्थ को सर्वोत्तम सौंदर्य की खोज थी । सो वे एक तपस्वी के पास पहुँचे और अपनी जिज्ञासा प्रकट की । उनने उत्तर दिया-"श्रद्धा ! श्रद्धा मिट्टी के ढेले को गणेश बना सकती है ।" समाधान न हो पाने से एक भक्तजन के पास पहुँचे । उनने कहा-"प्रेम ही सुंदर है । काले कृष्ण गोपियों को प्राणप्रिय लगते थे ।" समाधान कुछ हुआ, कुछ न हुआ । सोच-विचार करते वे आगे चल पड़े । युद्धभूमि से लौटा, शस्त्रों से लदा एक सैनिक मिला । उससे पूछा-"सौंदर्य कहाँ हो सकता है ?" सैनिक का उत्तर था-"शांति में ।"

जितने मुँह उतनी बातें । निराश गृहस्थ अपने घर लौटा । दो दिन की प्रतीक्षा में सभी व्याकुल हो रहे थे । पहुँचा, तो सभी लिपट पड़े । पुत्री की आँखों से आँसू झर पड़े । आत्मीयता का, स्नेह का, गहन श्रद्धा का सागर सा उमड़ पड़ा । सभी को असाधारण शांति का अनुभव हुआ ।

गृहस्थ ने तीनों समाधानों का समन्वय अपने घर में देखा । उसके मुँह से निकल पड़ा, मैं कहाँ भटक रहा था । श्रद्धा, प्रेम और शांति इन तीनों के ही दर्शन तो अपने घर में हो रहे हैं । यही सबसे श्रेष्ठ एवं सर्वाधिक सौंदर्यपूर्ण कृति है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निस्पृह किन्तु कर्तव्यनिष्ठ

मिथिला के पंडित गंगाधर शास्त्री एक विद्यालय में पढ़ाते थे । उनका लड़का गोविंद भी वहीं पढ़ता था । गोविंद भी पिता की तरह बड़ा शिष्ट और अनुशासनप्रिय था । सहपाठी उसे बहुत स्नेह एवं सम्मान देते थे ।

एक दिन शास्त्री जी के साथ गोविंद विद्यालय नहीं पहुँचा । स्कूल बंद करके जब वे चलने लगे तो विद्यार्थियों ने पूछा–"महाशय ! गोविंद आज क्यों नहीं आया ?"

शास्त्री जी ने भारी मन से उत्तर दिया–"गोविंद को अचानक दौरा पड़ा और वह वहाँ चला गया, जहाँ से फिर कोई नहीं लौटता ।"

विद्यार्थी स्तब्ध रह गए । साथी के निधन का भारी दुःख हुआ । साथ ही इस बात का आश्चर्य भी कि ऐसी दुर्घटना होने पर भी शास्त्री जी पढ़ाने कैसे आ सके और बिना माथे पर शिकन लाए किस प्रकार रोज जैसी कक्षा चलाते रहे ? अपना असमंजस लड़कों ने शास्त्री जी के सामने व्यक्त भी किया ।

पंडित जी ने उत्तर दिया–"मेरा एक परिवार वह है और एक परिवार यह है । उस परिवार के बालक के विछोह का दुःख तो है, पर इस परिवार के बालकों का हक मारता तो एक दुःख और बढ़ जाता । उसके लिए जो कर सकता था किया, तुम्हारे लिए भी जो कर सकता हूँ, उसे कैसे न करूँ ?"

चर्चामिमां महर्षिः स धौम्योऽग्रे वर्धयन्पुनः ।
उवाच भद्राः शृणुत परिवारस्तु वर्तते ।। ३६ ।।
दिव्या प्रयोगशालेव सद्गुणोन्मेषकारिणी ।
तस्य सञ्चालनं सम्यङ् निर्धारणमथाऽपि च ।। ३७ ।।
यदि स्यान्निश्चितं तत्र सुयोग्याः शिक्षितास्तथा ।
नागराः संभावेष्यन्ति महापुरुषसंज्ञकाः ।। ३८ ।।
गुणं कर्म स्वभावं च कर्तुमुच्चस्तरं तथा ।
व्यक्तित्वं प्रखरं कर्तुं पाठशालेव च स्मृतः ।। ३९ ।।
अस्ति व्यायामशालेव परिवारस्तु निश्चितम् ।
जीवनस्योपयुक्तानि वैशिष्ट्यानि समभ्यसन् ।। ४० ।।
समर्थो जायते यत्र नरः सर्वत एव च ।
आत्मनः परिवारस्य हितं राष्ट्रस्य सिद्ध्यति ।। ४१ ।।

भावार्थ–ऋषि प्रवर धौम्य अपनी चर्चा आगे बढ़ाते हुए पुनः बोले–हे भद्रजनो ! परिवार तो सद्गुणों को विकसित करने की एक प्रयोगशाला है । उसका सही निर्धारण एवं सुसंचालन किया जा सके, तो निश्चय ही उस परिकर में से सुयोग्य–शिक्षित नागरिक एवं महामानव निकलेंगे । गुण–कर्म–स्वभाव को उच्चस्तरीय बनाने एवं व्यक्तित्व को गौरवशाली बनाने का पाठ इसी पाठशाला में पढ़ा जाता है । यही वह व्यायामशाला है, जिसमें जीवन भर काम आने वाली विशिष्टताओं का अभ्यास करते हुए हर दृष्टि से समर्थ बना जा सकता है, जिससे अपने परिवार का, राष्ट्र का हित सिद्ध होता है ।। ३६–४१ ।।

व्याख्या–परिवार को यहाँ एक प्रयोगशाला, पाठशाला एवं व्यायामशाला की उपमा देते हुए एक ऐसी टकसाल बताया गया है, जहाँ समर्थ राष्ट्र के लिए अभीष्ट महामानवों की ढलाई होती है ।

मनुष्य का सारा जीवन भाँति-भाँति की परीक्षाओं से निपटते हुए कटता है । परिवार रूपी प्रयोगशाला में गुण, कर्म, स्वभाव की अच्छी-खासी परीक्षा हो जाती है । जहाँ पारिवारिक वातावरण श्रेष्ठ कोटि का होगा, वहाँ के प्रयोग निष्कर्ष भी अनुपम होंगे । महामानवों के जीवन ऐसे ही प्रयोगों की कड़ी कसौटी पर खरे उतरकर श्रेष्ठ बन सकने में समर्थ हुए हैं ।

पाठशाला सुसंस्कारिता संवर्द्धन के साथ-साथ व्यक्ति के कर्तृत्व को लक्ष्य के साथ जोड़ देने हेतु विनिर्मित एक परिकर है । मात्र स्कूली पढ़ाई पर्याप्त नहीं । जब तक जीवन के विभिन्न पहलुओं का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्यावहारिक अध्ययन-अध्यापन यहाँ नहीं होगा, यह पठन-पाठन व्यर्थ है । व्यक्तित्व को श्रेष्ठ बनाने का काम पारिवारिक पाठशाला करती है ।

व्यायामशाला में शरीर को बलिष्ठ बनाने, अपनी सामर्थ्य को विकसित करने का प्रयास किया जाता है । भाँति-भाँति के संयम-अनुशासन पालने पड़ते हैं । व्यक्ति जब तक पूरी वर्जिस नहीं कर लेता, उसका एक बार किया हुआ व्यायाम पर्याप्त नहीं माना जाता । जागरूकता, कर्मठता के विकास हेतु जरूरी है कि परिवार को एक व्यायामशाला मानते हुए अपने विकारों पर नियंत्रण की एवं समर्थता-विशिष्टता बढ़ाने की साधना भली प्रकार की जाय, ताकि परिवार की, समाज की, राष्ट्र की सर्वांगपूर्ण इकाई के रूप में मनुष्य विकसित हो सके ।

अधिसंख्य महापुरुषों का जीवन इस तथ्य का साक्षी है कि उन्होंने पारिवारिक वातावरण में ही महानता का पाठ सीखा ।

ईश्वरचंद्र विद्यासागर की नम्रता, सादगी एवं परदुःखकातरता को कौन नहीं जानता ? यह शिक्षण उन्होंने पारिवार में ही पाया एवं स्वयं पर कम से कम खर्च कर जरूरतमंदों की अधिकतम सहायता की । अपनी माँ से यह गुण उन्होंने सीखा था ।

श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर विश्व कवि ने सामान्य स्कूली पढ़ाई ही स्कूल में प्राप्त की । कॉलेजों में प्रवेश ही नहीं लिया । उनका भाषा-ज्ञान, साधनात्मक अभिरुचि, काव्य प्रतिभा सब उनके पिता जी तथा भाइयों की देख-रेख में, उनके सान्निध्य-संरक्षण में ही विकसित हुई थी ।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के पिताजी के घर में साहित्यिक गोष्ठियाँ, चर्चाएँ हुआ करती थीं । सारा परिवार साहित्य-प्रेमी था । उसी पाठशाला में भारतेन्दु बचपन से ही काव्य सृजन करने लगे और संपन्न होते हुए भी निस्पृह जीवन जीने की साधना करते रहे ।

बिनोवा जी कहा करते थे उनकी माँ जिस भावना से अपने-पराये का भेद किए बिना सबसे नेक व्यवहार करती थीं । उपासना में जिस प्रकार तन्मय हुआ करती थीं, पिताजी जिस तरह विवेकपूर्ण परामर्श दिया करते थे, इसी सबके प्रभाव से वे तीनों भाई आदर्श लोकसेवी बन सके ।

समझ की परीक्षा

एक किसान के चार बेटे थे । उनकी बुद्धिमत्ता जाँचने के लिए बेटों को बुलाकर किसान ने एक-एक मुट्ठी धान दिए और कहा–इनका जो मर्जी हो सो करो ।

एक ने उसे छोटी वस्तु समझा और चिड़ियों को फेंक दिया । दूसरा उन्हें उबालकर खा गया । तीसरे ने सँभालकर डिब्बे में रख दिया, ताकि कभी पिताजी माँगेंगे तो दिखा सकूँ । चौथे ने उन्हें खेत में बो दिया और टोकरा भर धान पिता के सामने लाकर रख दिया ।

पिता ने बोने वाले को अधिक समझदार पाया और बड़ी जिम्मेदारियों के काम उसी को सुपुर्द किए । कहा–"परिवार में ऐसे ही गुण विकसित करने पड़ते हैं । ऐसी जिम्मेदारी निभा सकने वालों को ही परिवार का भार सौंपा जा सकता है । भगवान भी ऐसा ही करता है ।"

शारदा माँ ने नरेन्द्र को सीख दी

विवेकानंद विदेश जा रहे थे । वे माता शारदामणि के पास आशीर्वाद लेने पहुँचे ।

माताजी ने कहा–"पहले मेरा काम कर । बाद में आशीर्वाद दूँगी ।" सामने खुली तलवार पड़ी थी इशारा करते हुए कहा–"उसे उठा कर ला ।"

विवेकानंद ने माता के हाथ में मूँठ थमा दी और धार वाली नोंक उसने अपने हाथ में रखी ।

माता ने आशीर्वाद देते हुए कहा–"जो दूसरों की कठिनाई को समझता है और मुसीबत अपने हिस्से में लेता है, उसी पर भगवान का अशीर्वाद बरसता है । तुम्हें भगवान का अनुग्रह सदा मिलता रहेगा ।"

विवेकानंद जी कहते थे महानता के ढेरों गुण मुझे परमहंस जी के पारिवारिक वातावरण में सीखने-विकसित करने का लाभ मिला । अन्यथा वे दुर्लभ ही रहते ।

मूलधन से क्या किया ?

एक बूढ़ा तीर्थयात्रा पर तीन वर्ष के लिए निकला । चारों बेटों को बुलाकर अपनी जमा पूँजी उनके हाथों सौंप दी । कहा–"लौटने पर ले लूँगा । न लौटूँ तो तुम्हारी ।" चारों को सौ-सौ रुपये सौंपे गए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एक ने उन्हें सुरक्षित रख लिया । दूसरे से उसे ब्याज पर उठा दिया । तीसरे ने रुपयों को शौक-मौज में उड़ाया । चौथे ने उनसे व्यवसाय करना आरंभ कर दिया ।

तीन साल बाद बूढ़ा लौटा और धरोहर वापस माँगी । एक ने ज्यों की त्यों लौटा दी । दूसरे ने थोड़ी ब्याज भी सम्मिलित कर दी । तीसरे ने खर्च कर देने की कथा सुनाई और मजबूरी बताई । चौथे ने व्यवसाय किया मूलधन चौगुना करके लौटाया ।

बाप ने चौथे की सबसे अधिक प्रशंसा की और उसे अपना उत्तराधिकारी बनाया । इसके बाद उसकी बुद्धिमानी सराही गई जिसने कम से कम ब्याज तो कमाया ।

वृद्ध ने सबको समझाते हुए कहा–"रुपये को ब्याज पर चलाने या व्यवसाय में लगाने से वह बढ़ सकता है, यह सबको पता है । परंतु उसके लिए प्रयास-पुरुषार्थ वही कर सकता है, जो अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर पारिवारिक उत्तरदायित्वों का पालन सीखता है । परिवार में रहकर भी यह भाव विकसित न कर सकने से बुद्धि के उपयोग की उमंग भी नहीं उभरती । तुम्हारी यही परीक्षा लेने के लिए मेरी तीर्थयात्रा नियोजित थी ।"

गांधी जी व उनकी माँ

गाँधी जी छोटे थे । बड़े भाई ने उन्हें मार दिया । वे रोते हुए माँ के पास शिकायत करने गए । माँ ने कहा–"तू भी उसे मार ।"

गाँधी जी माँ पर बिगड़े और कहा–"जो गलती करता है, उसे तो रोकती नहीं । उल्टे मुझे भी वही गलती करना सिखाती हैं ।"

माँ ने कहा–"बेटा ! मैं तो तेरी परीक्षा ले रही थी । यदि परिवार के सदस्यों के प्रति मेरी भावना का इसी तरह विकास होता रहा, तो आगे चलकर तेरे मन में समग्र विश्व समुदाय के प्रति यही भावना पनपेगी । यह शिक्षण इसी पाठशाला में तो मिल सकता है ।"

गाँधी जी इसी कारण महान बने एवं विश्व-वंद्य बापू कहलाए ।

शास्त्री जी का परिवार शिक्षण

सन् १९४९ की बात है । उन दिनों स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री उत्तरप्रदेश सरकार के गृहमंत्री थे । एक दिन लोक निर्माण विभाग के कुछ कर्मचारी उनके निवास स्थान पर कूलर लगाने आये । बच्चों को बड़ी प्रसन्नता हुई कि अब की बार गर्मियाँ अच्छी तरह गुजर जायेंगी ।

जब शाम को शास्त्री जी घर आये, तो उन्हें पता चला कि कूलर लगाया जा रहा है, उन्होंने तुरंत विभागीय कर्मचारियों को टेलीफोन पर मना कर दिया । पत्नी ने कहा–"जो सुविधा बिना माँगे मिल रही है, उसके लिए मना करने की क्या आवश्यकता है ?"

"यह आवश्यक नहीं कि मैं मंत्री पद पर सदा बना रहूँगा, फिर इससे आदत बिगड़ जायेगी । कल लड़कियों की शादी करनी है, मानलो विवाहोपरांत इस तरह की सुविधाएँ न मिलीं, तो उन्हें कष्ट ही होगा । जाने किस स्थिति में उन्हें रहना पड़े"–शास्त्री जी ने कहा ।

शास्त्री जी ने सारी शिक्षा अपनी माँ से ग्रहण की थी एवं वही पोषण अपने परिवार में भी दिया, ताकि बच्चे सद्गुणी बन सकें, पिता के पद का लाभ उठाकर सुविधाओं के अभ्यस्त न हो जाएँ । हर परिस्थिति में अपने को ढाल सकें ।

यही कारण था कि वे स्वयं राष्ट्र के सर्वोच्च पद पर पहुँच सकने में सफल हुए एवं अपने बच्चों को भी संस्कार दे सके ।

दूरदर्शित्वभावस्य तथैव सुव्यवस्थितेः ।
श्रेष्ठोऽभ्यासो गृहे कर्तुं शक्यो मर्त्येन चाञ्जसा ।। ४२ ।।
न तथा शक्यते प्राप्तुमन्यत्राऽनुभवो न च ।
प्रशिक्षणं लभेताऽपि व्यवहारानुकूलगम् ।। ४३ ।।
आदिकालात् समाश्रित्याऽऽधारं तं पारिवारिकम् ।
चलतीह तु विश्वस्य व्यवस्था स्वर्गसौख्यदा ।। ४४ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

दिनेषु तेषु चाऽभूत् सा वातावृतिरतः शुभाः ।
सत्यस्यात्र युगस्येव मर्त्यकल्याणकारिका ।। ४५ ।।
परम्पराऽवहेलैव कारणं प्रमुखं तु तत् ।
नरो येन महान् स्वार्थी क्षुद्रो जातो निरन्तरम् ।। ४६ ।।
समस्याभिरनेकाभिस्तथाऽन्ते च विपत्तिभिः ।
वृतः परं भविष्यत्तु वर्तते प्रोज्ज्वलं ध्रुवम् ।। ४७ ।।

भावार्थ–सुव्यवस्था और दूरदर्शिता का जितनी अच्छी तरह अभ्यास घर–परिवार के बीच किया जा सकता है, उतना व्यावहारिक प्रशिक्षण एवं अनुभव अर्जित कर सकना अन्यत्र कहीं भी संभव नहीं हो सकता । स्वर्ग के समान सुखदायी विश्व–व्यवस्था आदिकाल से पारिवारिकता के आधार पर चलती रही है । सतयुगी वातावरण उन दिनों इसी कारण बना भी रहा, जो मनुष्य मात्र के कल्याण का कारण था । उस महान् परंपरा की अवहेलना ही मुख्य कारण है, जिससे मनुष्य स्वार्थी व क्षुद्र बनता चला गया और अंत में अनेकानेक समस्याओं एवं विपत्तियों से घिर गया, लेकिन उसका भविष्य निश्चित ही उज्ज्वल है ।। ४२–४७ ।।

व्याख्या–परिवार एक पूरा समाज, एक पूरा राष्ट्र है । भले ही उसका आकार छोटा हो, पर समस्याएँ वे सभी मौजूद हैं जो किसी राष्ट्र या समाज के सामने प्रस्तुत रहती हैं । प्रधानमंत्री या राष्ट्रपति को जो बात अपने देश को समुन्नत बनाने के लिए सोचनी-करनी चाहिए, वही सब कुछ व्यवस्था एवं दूरदर्शिता किसी सद्गृहस्थ को परिवार निर्माण के लिए अपनानी पड़ती है । परिवार को एक सहयोग-समिति, एक गुरुकुल के रूप में विकसित करना पड़ता है, जिससे परिवार का वातावरण अच्छा बने, परिजनों को सुसंस्कृत स्तर तक पहुँचाया जा सके ।

भारत में या विश्व में कहीं भी जब कभी भी आदर्श सामाजिक व्यवस्था, स्वर्गीय परिस्थितियाँ बनी हैं, उसका आधार पारिवारिकता की भावना ही रही है । उस भावना के उदय से परिस्थितियाँ सुधरीं और उसके विलय से बिगड़ीं । देश-विदेश के अगणित उदाहरण इसके साक्षी हैं ।

गुरुकुलों की पारिवारिकता

बृहत्तर भारत में बच्चों का शिक्षण गुरुकुलों में किया जाता था । वहाँ गरीब, अमीर, विद्वान्, मजदूर के बच्चों का भेद किए बिना उन्हें एक ही परिवार के रूप में रहने का अभ्यास कराया जाता था । उस अभ्यास का प्रभाव उनके जीवन में बना रहता था और वे जहाँ रहते थे, जो भी कार्य सँभालते थे, अपने संपर्क वालों के बीच परिवार भाव पैदा किए रहते थे । इसी कारण समाज–देव समाज बना रहा । राम, कृष्ण, भरत, लवकुश सब इसी प्रकार विकसित हुए ।

प्राचीनकाल में छोटों के लिए गुरुकुल और बड़ों के लिए आरण्यक बनाये और ऋषि–ऋषिकाओं द्वारा चलाये जाते थे । गाँधी, बुद्ध, टैगोर आदि आश्रम बनाकर रहे थे । यह विशुद्ध रूप से पारिवारिकता का प्रयोग है । संतों की जमातें, सैनिकों की छावनियाँ वस्तुतः पारिवारिकता की प्रयोगशालाएँ हैं, जो सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन और कुरीतियों का उन्मूलन करने तथा सामाजिक एवं राष्ट्रीय व्यवस्था को बनाए रखने का कार्य करते हैं ।

राम राज्य : एक आदर्श वृहत् परिवार

राम राज्य श्रेष्ठ सामाजिक व्यवस्था का एक आदर्श माना जाता है । उसका आधार भी यही पारिवारिक भाव था । श्रीराम–लक्ष्मण वन को गए, तो भाई भरत उनके ट्रस्टी रूप में नंदि ग्राम में रहे । सारी अयोध्या इसे परिवार की ही घटना मानती रही तथा नागरिक गण अपनी जप, तप, साधना में उसी मनोयोग से लगे रहे, जिस भाव से भरत जी लगे थे । उस पृष्ठभूमि पर ही रामराज्य का भवन खड़ा किया गया था ।

श्रीराम वन में भीलों, वानर–भालुओं के साथ रहे । उन्होंने उन सबके साथ परिवार का ही भाव बनाए रखा । सीताजी को जब लंका से मुक्त करके लाया गया, तो विभीषण उन्हें राजकीय ढंग से डोली में पर्दे में ला रहे थे । तब भगवान श्रीराम ने कहा–"यह सब बालक अपनी माँ के दर्शन करने को आतुर हैं । सीताजी को पैदल इनके बीच से लाया जाय, ताकि इनके स्नेहभाव का पोषण हो सके ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जब श्रीराम अयोध्या लौटे तो साथ आए वानरों का परिचय उन्होंने अपने परिजनों के ही ढंग से दिया । उन्हें 'भरतहुँ ते मोहि अधिक पियारे' कहकर पारिवारिकता का बोध सबको कराया ।

राज्य सिंहासन पर बैठते ही उन्होंने मंत्रियों, ऋषियों, विचारकों तथा नागरिकों के बीच पहली घोषणा पारिवारिक स्तर पर ही की । उन्हें पारिवारिक अधिकार देते हुए कहा–

'जो कछु अनुचित भाखहुँ भाई । तौ बरजेहु मोहि भय बिसराई ॥

ऐसे स्नेहसिक्त पारिवारिक भाव ने ही समाज व्यवस्था को उसके स्तर तक पहुँचा दिया था कि आज तक विश्व भर में राम-राज्य श्रेष्ठतम व्यवस्था का पर्याय बना हुआ है । विश्व में और भी जहाँ आदर्श स्थापित हुए हैं, वहाँ पारिवारिक भावना ही मूल में कार्य करती रही है ।

खलीफा उमर की संवेदना

खलीफा उमर अपने गुलाम के साथ एक देहात में जा रहे थे कि एक बुढ़िया को जोर-जोर से रोते देखा ।

खलीफा ने बुढ़िया से रोने का कारण पूछा । उसने बताया–"मेरा जवान बेटा लड़ाई में मारा गया । मैं भूखी मरती हूँ । पर खलीफा को मेरा दु:ख-दर्द तक मालूम नहीं ।"

खलीफा गुलाम को लेकर वापस लौट गए और एक बोरी गेहूँ पीठ पर लादकर बुढ़िया के यहाँ चलने लगे । रास्ते में गुलाम ने कहा–"आप बोझ मत उठाइए । बोरी मैं ले चलूँगा ।" खलीफा ने कहा–"मेरे पापों का बोझ तो खुदा के घर मुझे ही ले चलना पड़ेगा । वहाँ तू थोड़े ही मेरे साथ जाएगा ।"

बोरी बुढ़िया के घर पहुँचाने पर बुढ़िया ने उसका नाम पूछा तो बताया–"मेरा ही नाम खलीफा उमर है ।" बुढ़िया ने कहा–"अपनी प्रजा के दु:ख-दर्दों को अपने निजी परिवार के दु:ख-दर्द मानकर चलने की यह भावना तुझे खलीफाओं का आदर्श बना देगी । लाखों दुआएं तेरे लिए उठेंगी, तू अमर हो जाएगा ।"

हैरियट स्टो की पारिवारिक संवेदना

अमर लेखिका हैरियट एलिजावेथ स्टो ने अपनी विश्व विख्यात पुस्तक 'टाम काका की कुटिया' किन जटिल परिस्थितियों के बीच रहते हुए लिखी यह बहुत कम लोग जानते हैं । आम जानकारी तो इतनी ही है कि इस क्रांतिकारी ग्रंथ ने अमेरिका से दासत्व की प्रथा उठा देने में अनुपम भूमिका का निर्वाह किया ।

उन्होंने अपनी भाभी के पत्र का उत्तर देते हुए लिखा था–"चूल्हा, चौका, कपड़े धोना, सिलाई, जूते गाँठना आदि की व्यवस्था बनी ही रहती है । बच्चों के लिए तैयारी, दिन भर सिपाही की तरह ड्यूटी देनी पड़ती है । छोटा बच्चा मेरे पास ही सोता है, वह जब तक सो नहीं जाता कुछ भी लिख नहीं सकती । गरीबी और काम का दबाव बहुत है, फिर भी पुस्तक लिखने का समय निकालती हूँ । क्योंकि मुझे लगता है कि गुलाम प्रथा में सताये जाने वाले व्यक्ति भी अपने ही परिवार के अंग हैं । इस परिवार के लिए १०-१२ घंटे लगाती हूँ, तो उस परिवार के लिए भी १-२ घंटे तो निकालने ही चाहिए ।

हैरियट स्टो की यह पारिवारिक संवेदना ही उपन्यास के पृष्ठों पर छा गयी । जिसने पढ़ा उसने भी अपने आपको एक बड़े परिवार का अंग अनुभव किया और इसी जागृत परिवार भाव ने समाज से उस कलंक को धो ही डाला ।

सच्ची पारिवारिकता

तीन दिन से पत्नी और बच्चों को भोजन न मिला था । गृह-स्वामी प्रयत्न करने पर भी एक समय का भोजन न जुटा सका । अंतत: वह निराश हो गया, उसे अपना जीवन बेकार लगने लगा । वह अपने घर से चला आया और आत्महत्या करने की तैयारी पर विचार करने लगा । कुछ क्षण बाद वह व्यक्ति संसार से विदा होने को था ।

पीछे से किसी ने कंधे पर हाथ रखते हुए कहा–"मित्र ! इस मूल्यवान जीवन को खोकर तुम्हें क्या मिलेगा ? निराश होने से तो कोई लाभ नहीं । मैं मानता हूँ कि तुम्हारे जीवन में आई हुई विपत्तियाँ ऐसा करने के लिए विवश कर रही हैं, पर क्या तुम इन विपत्तियों को हँसते-हँसते पीछे नहीं ढकेल सकते ?"

आत्मीयता से परिपूर्ण शब्दों को सुनकर वह युवक रो पड़ा । सिसकियाँ भरकर अपनी मजबूरी की सारी कहानी सुना दी । अब तो सुनने वाले व्यक्ति की आँखों में भी आँसू थे । यह सहृदय व्यक्ति जापान का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रसिद्ध कवि शिनीची ईंगुची था ।

उस युवक की परेशानियों ने भावुक कवि शिनीची को प्रभावित किया । उसने वहीं यह संकल्प किया कि मैं अपनी कमाई का अधिक से अधिक भाग उन व्यक्तियों की सेवाओं में लगाया करूँगा, जो अभावग्रस्त हैं । उस समय कवि शिनीची ने युवक के परिवार की भोजन व्यवस्था हेतु कुछ धनराशि दे दी, पर घर लौटकर उसने गुप्त दान पेटी बनाई और मुख्य चौराहे पर लगवा दी ।

उस पेटी के ऊपर लिखा गया–'जिन सज्जनों को सचमुच धन की आवश्यकता हो, वह इस पेटी से निकाल कर अपना काम चला सकते हैं । यह धन यदि कतिपय अभावग्रस्त व्यक्तियों की सहायता में लग सका, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी । धन्यवाद !' उस पेटी पर नाम किसी व्यक्ति का न था । क्योंकि शिनीची की कर्म और सेवा में आस्था थी । वह लोकेषणा से बहुत दूर थे । विश्व बंधुत्व जिनका लक्ष्य हो, वे कभी नाम कमाने की इच्छा नहीं रखते । परदु:खकातरता का यह गुण ही उन्हें महामानव का पद दिलाता है ।

लक्ष्मी जी का पलायन और अनुग्रह

एक सेठ का पूर्व पुण्य समाप्त हो गया । नया उसने अर्जित नहीं किया । लक्ष्मी जी पुण्य के फल से आती हैं और उसके समाप्त होने पर चली जाती हैं । सो उनने अपने चले जाने की बात स्वप्न में बता दी । सेठ के अनुनय-विनय करने पर भी वे रुकीं नहीं । हाँ, इतना भर कह दिया कि मुझे रोको तो मत, पर कोई और वर माँग लो । सेठजी ने माँगा–मेरा परिवार सहयोगपूर्वक रहे, पराक्रमी और संयमी बना रहे, इतना और देती जाइये । लक्ष्मी जी ने प्रसन्नतापूर्वक वर दे दिया । वे लोग गरीबी में भी अधिक सद्भाव और अधिक परिश्रम अपनाकर रहने लगे ।

कुछ समय बाद लक्ष्मी जी फिर लौट आईं । सेठ ने कारण पूछा तो उनने कहा–"पारस्परिक सद्भाव और पराक्रम, पुरुषार्थ भी पुण्य में ही गिना जाता है । वह जहाँ रहेगा, वहाँ मुझे विवश होकर आना पड़ेगा । लक्ष्मी जी को पाकर वह परिवार बहुत प्रसन्न हुआ और वे फिर जाने न पावें–ऐसा आचरण प्रयत्नपूर्वक बनाकर रखने लगा ।

यह तथ्य हर परिवार पर लागू होता है । जहाँ भी आत्मीयता के संबंध प्रगाढ़ होंगे, सुव्यवस्था एवं विवेकशीलता संव्याप्त होगी, वहाँ अभाव कभी रह नहीं सकता ।

सतयुगी समाज इसी कारण समृद्ध संपन्न था ।

प्रस्तोतव्यः स आदर्शः पुरुषैरग्रजैः सदा ।
अनुकुर्वन्तु तं सर्वे तथैवाऽन्येनुयायिनः ।। ४८ ।।
कुतोऽप्येताः समायान्ति दुष्प्रवृत्तय उद्धताः ।
परं प्रभावितान् कर्तुं सदस्यान् परिवारगान् ।। ४९ ।।
सत्प्रवृत्तिभिराभिश्चेदिष्टं तत्पुरुषैर्वरैः ।
सदाचारैर्निजैरेवादर्शाः स्थाप्याः स्वयं शुभाः ।। ५० ।।
शिक्षा वास्तविकी चैवं दीयते नोपदेशजः ।
प्रभावः प्रभवत्यत्र यथाऽऽचारसमुद्भवः ।। ५१ ।।

भावार्थ–परिवार के बड़े लोग छोटों के सामने अपना आदर्श रखें, ताकि वे उनका अनुकरण कर सकें । दुष्प्रवृत्तियाँ तो कहीं से भी दौड़ती हैं । पर सत्प्रवृत्तियों से पारिवारिक सदस्यों को प्रभावित करना हो, तो उसके लिए बड़ों को भी अपना उदाहरण प्रस्तुत करना होगा । वास्तविक शिक्षा इसी प्रकार दी जाती है । प्रभाव उपदेशों का नहीं, सामने प्रस्तुत होते रहने वाले आचरण का पड़ता है ॥ ४८–५१ ।।

व्याख्या–पतन सरल है, उत्थान कठिन है । पानी का प्रवाह नीचे की ओर ही बहता है । उसे ऊँचा उठाना हो, तो काफी पुरुषार्थ करना पड़ता है । मनुष्य का स्वभाव भी कुछ इसी प्रकार का है कि उसे पतन-पराभव के गर्त में जाते तनिक भी देर नहीं लगती । चिंतन को ऊर्ध्वगामी बनाने हेतु सत्प्रवृत्तियों के उदाहरण ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । दुष्प्रवृत्तियों के लिए किसी को आमंत्रित नहीं करना पड़ता । वे जहाँ कमजोरी देखती हैं, आ धमकती हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ऊँचा उठने की प्रवृत्ति तभी अंदर से उमगती है, जब वैसा ही आचरण बड़े भी करें । पारिवारिक जन अनुकरण हेतु अपने से बड़ों को ही देखते हैं । यदि घर के सभी वरिष्ठजन स्वयं निष्ठापूर्वक उस दिशा में प्रवृत्त हुए हों तो सहज ही सबको वह मार्ग अपनाने की प्रेरणा मिलती है । वरिष्ठों से तात्पर्य है वे जिन्हें अग्रणी-आदर्शपुंज माना जाता है । चाहे परिवार छोटा हो अथवा बड़ा, समाज हो या संस्था, राज्य हो अथवा राष्ट्र सभी पर यह एक ही तथ्य समान रूप से लागू होता है । शिक्षा देने की व्यावहारिक एवं आदर्श विधि यही है कि स्वयं भी वैसा ही आचरण किया जाय । कथनी व करनी में अंतर न हो । वाणी से भले ही कितना ही आदर्श शिक्षण क्यों न दिया जा रहा हो, स्वयं आचरण में न उतारा गया, तो वह थोथा ही सिद्ध होता है ।

संघाराम का कुलपति कौन ?

एक बड़े बौद्ध संघाराम के लिए कुलपति की नियुक्ति की जानी थी । उपयुक्त विद्या और विवेक वाले आचार्य की छाँट का ऊहापोह चल रहा था । तीन सत्पात्र सामने थे, उनमें से किसे प्रमुखता दी जाय यह प्रश्न सामने था । चुनाव का काम महाप्राज्ञ मौद्गल्यायन को सौंपा गया ।

तीनों को प्रवास पर जाने का निर्देश हुआ । कुछ दूर पर उस मार्ग पर काँटे बिछा दिए गए थे ।

संध्या होने तक तीनों उस क्षेत्र में पहुँचे । काँटे देखकर रुके । क्या किया जाय, इस प्रश्न के समाधान में एक ने रास्ता बदल लिया । दूसरे ने छलाँगें लगाकर पार पाई । तीसरा रुक कर बैठ गया और काँटे बुहार कर रास्ता साफ करने लगा, ताकि पीछे आने वालों के लिए वह मार्ग निष्कंटक रहे । भले ही अपने को देर लगे ।

परीक्षक मौद्गल्यायन समीप की झाड़ी में छिपे बैठे थे । उनने तीनों के कृत्य देखे और परीक्षाफल घोषित कर दिया । दूसरों के लिए रास्ता साफ करने की विधा सार्थक मानी गई और अधिष्ठाता की जिम्मेदारी उसी के कंधे पर गई । मौद्गल्यायन ने कहा–"संघाराम में सत्प्रवृत्तियों की परंपरा वही डाल सकेगा, जो स्वयं सबका ध्यान रखे और अपने आचरण से प्रेरणा उभारने की क्षमता रखता हो ।

रघुवंश की परंपरा

रघुवंश के राजा सदैव अनीति के दमन के लिए सत्पुरुषों का साथ देते रहे । समय-समय पर देवताओं के समर्थन में वे असुरों को परास्त करने के लिए हर कठिनाई उठाकर भी जाते रहे । जब विश्वामित्र जी ने आकर राक्षसों द्वारा यज्ञों में बिघ्न डालने की बात कही तो राजा दशरथ ने स्वयं चलने का प्रस्ताव रखा । इसी परंपरा का प्रभाव था कि किशोरवय के राम, लक्ष्मण सहज भाव से ऋषि के साथ राक्षसों से लोहा लेने चल पड़े ।

युधिष्ठिर की प्रेरणा

युधिष्ठिर पांडवों में सबसे बड़े थे । वे सदा अपने से बड़ों का भरपूर सम्मान करते थे । यहाँ तक कि महाभारत युद्ध प्रारंभ होने से पूर्व भी वे युद्ध स्थल में भीष्म पितामह और गुरुद्रोण को प्रणाम करने, आज्ञा लेने गए । उनके आचरण का प्रभाव पांडवों पर यह पड़ा कि उन्होंने कभी स्वप्न में भी अपने अग्रज युधिष्ठिर की आज्ञा भंग नहीं की । इसी सामंजस्य के कारण वे एक रह सके और अजेय बने रहे ।

नैपोलियन– श्रमिक का सम्मान

नैपोलियन अपने साथियों समेत एक राह जा रहा था । वे लोग पूरा रास्ता घेर कर चल रहे थे, सामने से बोझा लिए एक मजदूर आ रहा था । नैपोलियन ने साथियों को हाथ पकड़कर खींचा और कहा–"श्रम का सम्मान करो और मजदूर के लिए रास्ता दो ।"

बाद में उसने साथियों को समझाया कि जिन सत्प्रवृत्तियों को राज्य में बढ़ावा देना है, उनका सम्मान हम स्वयं करेंगे, तो ही उनके प्रति जन उत्साह उभरेगा ।

रानी को भिखारियों में रहना पड़ा

काशी नरेश की धर्मपत्नी बड़ी प्रतिभावान् और सुंदरी थी । एक दिन दासियों समेत प्रातःकाल गंगा स्नान को गईं । अभ्यास न होने के कारण ठंड से काँपने लगीं । सो उन्होंने गंगा तट पर बनी झोंपड़ियों को जलाकर ठंड छुड़ाने का प्रयत्न किया ।

यह सूचना काशी नरेश तक पहुँची । उन्होंने रानी को दरबार में अपराधी की तरह बुलाया और कहा कि वे सारे कीमती कपड़े उतार कर भिखारियों जैसे वस्त्र पहनें । आगे उन्होंने कहा–"अज्ञात रूप में भिखरियों के साथ रहकर उसी तरह भिक्षा माँगे और उपलब्ध धन से जली हुई झोंपड़ियों को नई बनवायें ।" रानी अपनी सजा पूरी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

करके लौटीं तो काशी नरेश ने उनका सम्मान किया और कहा–''देवि ! राज्य हमारा परिवार है । हम इस परिवार के प्रमुख हैं । हम जिन आदर्शों का स्वयं पालन करेंगे, वही राज्य में पनपेंगी । तुम से भूल हुई, उसका प्रायश्चित्त सहर्ष करके तुमने प्रजा का विश्वास ही नहीं जीता, श्रेष्ठ परंपराओं को भी पोषण दिया है ।

फसल का रहस्य

इटली के क्रेसिन किसान की फसल अन्य किसानों की तुलना में कई गुनी पैदा होती थी । शत्रुता मानने वालों ने अदालत में मुकदमा चलाया कि या तो वह जादू जानता है या चोरी करता है ।

क्रेसिन अदालत में अपना हल, बैल, लड़के, लड़की समेत पहुँचा और कहा–''मैं स्वयं भरपूर श्रम करता हूँ, इस नाते मेरे यह सहयोगी भी जी तोड़ मेहनत करते हैं । यही एक जादू है, जिससे फसल चमत्कारी ढंग से पैदा होती है ।''

अदालत में उपस्थित सभी लोगों ने उसे सराहा और सम्मान दिया ।

घायल लेनिन लगे रहे

साम्यवादी दल की ही एक सिरफिरी लड़की ने लेनिन पर पिस्तौल चला दी । गोली तो निकल गई पर छर्रे गले और गर्दन में फँसे रह गए ।

उसी बीच एक पुल टूट गया । आपात स्थिति घोषित करके उसे युद्ध स्तर पर सुधारा गया । राष्ट्रनिष्ठ नागरिक बड़ी संख्या में जुट पड़े । काम समाप्त होने को आया । तब पता चला कि लेनिन भी उसमें लगे थे । गले में गोली होते हुए भी मजदूरों के साथ भारी शहतीर उठावाने का काम नित्य बीस-बीस घंटे तक करते रहे । पूछने पर उन्होंने संक्षिप्त सा उत्तर दिया, कहा–''हम अग्रणी कहलाने वाले पीछे रहें, तो जन उत्साह में वह प्रखरता नहीं आ सकती जो आनी चाहिए ।

स्वयं अपनी चादर ओढ़ा दी

लखनऊ स्टेशन पर तब एक अंग्रेज स्टेशन मास्टर था । उसके कमरे के आगे जलती अँगीठी पर एक वृद्धा अत्यधिक ठंड के कारण हाथ सेंकने जा पहुँची ।

स्टेशन मास्टर इसमें अपनी तौहीनी समझकर आपे से बाहर हो गए और इतने जोर से उसे धमकाने लगे कि यात्रियों की भीड़ जमा हो गई ।

भीड़ में से एक व्यक्ति निकला, बोला–''आप तो ईसाई हैं न ? बाइबिल पढ़ते या सुनते हैं न ? फिर उनके संकेतों को ध्यानपूर्वक क्यों नहीं समझ पाते ? यदि आप जैसे समाज के वरिष्ठ लोग भी ऐसा आचरण करेंगे, तो पारस्परिक व्यवहार के सारे मापदंड नष्ट हो जायेंगे ।'' भीड़ के उस व्यक्ति ने अपनी ऊनी चादर बुढ़िया को उढ़ा दी और भीड़ के साथ आगे बढ़ गया । वह यात्री था–पादरी सी०एफ० ऐंड्रूज, जो जीवन भर पीड़ित मानवता की सेवा में संलग्न रहे ।

बापू महान् क्यों ?

काका कालेलकर गाँधी जी के अधिकतम घनिष्ठ थे । उनसे किसी विदेशी ने पूछा–''गाँधी जी का देश के हर वर्ग पर इतना प्रभाव किन कारणों से पड़ा ?''

काका ने कहा–''वे अपने साथ संयम की कड़ाई बरतते हैं । जो मन में है, वही वाणी से कहते हैं और अपने क्रिया-कलापों को सार्वजनिक हित में लगाए रहते हैं । वे वही कहते हैं, जो करते हैं, इसीलिए वे विश्व भर में असंख्यों के लिए अनुकरणीय हैं ।''

महान् बनने का यह प्रख्यात सिद्धांत है, जिन्हें गाँधी जी ने अपनाया ।

सच्चे धर्मोपदेशक की परिभाषा

रामकृष्ण परमहंस ने धर्मोपदेशकों की एक मंडली को उद्‌बोधन करते हुए कहा–''जिनके पास अपनी पूँजी नहीं, वह दूसरों को क्या बाँटेगा ? तुम लोग धर्म के अनुशासन में अपने को बाँधो, ताकि कथनी और करनी के समन्वय से ऐसे प्रवचन कर सको, जिसे लोग सुनें ही नहीं, अपनाएँ भी ।''

बड़ों की जिम्मेदारियाँ

एक शराबी दलदल के किनारे खड़ा था । मदहोशी उसके भीतर और घुसती जा रही थी । हसन ने कहा–''बेअकल, सँभल । नहीं तो ऐसा फँसेगा, जो कभी निकल न सकेगा ।''

शराबी हँसा और बोला–''अपनी गलती की सजा तो मैं अकेला ही भुगतूँगा । पर अगर आपने गलतियाँ कीं तो स्वयं ही नहीं, शागिर्दों को भी ले डूबेंगे ।'' समझदारों की जिम्मेदारियाँ भी बड़ी होती हैं । लोग उनसे अधिक अपेक्षा रखते हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

राजा की बीमारी का कारण

एक था राजा । एक बार वह बीमार पड़ गया । उसे भोजन पचना बंद हो गया । जब भी कुछ खाता, पेट में पीड़ा होने लगती । राजवैद्यों ने बहुत इलाज किए । कई औषधियाँ आजमाईं, परंतु कोई लाभ न हुआ । उस राजा की रानियाँ घबरा गईं । मंत्रीगण सोच में पड़ गए । लोगों से कहा गया–"वे अपने राजा के स्वास्थ्य के लिए भगवान् से प्रार्थना करें ।" सब किया, फिर भी कोई लाभ न हुआ । राजा के पेट की पीड़ा बढ़ती गई ।

उन दिनों बसोहली राज्य के वैद्यों की ख्याति थी । तुरंत एक मंत्री बसोहली राज्य रवाना किया गया कि वह वहाँ के राजा से आज्ञा लेकर वहाँ से बड़े-बड़े वैद्यों को अपने साथ ले आयें ।

बसोहली नरेश ने अपने वैद्यों को मंत्री के साथ भेज दिया ।

बसोहली के वैद्य वहाँ आये । राजा के रोग को जानने के बहुत प्रयत्न किए । परंतु किसी निर्णय पर न पहुँच सके कि आखिर कौन से रोग से राजा पीड़ित हैं । वैद्य भी घबराए । यदि वे राजा को ठीक न कर सके, रोग का निदान भी न कर सके, तो उनकी ख्याति को बट्टा लग जायेगा और वापस अपने राज्य में जाने पर हो सकता है कि उनका राजा भी उन्हें राजवैद्य न रहने दे ।

सब कुछ करके भी वे कुछ न कर पाए ।

आखिर उन्होंने निश्चय किया कि यह देखना चाहिए, राजा सारा दिन करता क्या है ? हो सकता है दिन में वह कोई ऐसी बात करता हो, जिसके कारण उसे भोजन न पचता हो । उन्होंने राजा की दिनचर्या का सूक्ष्मता से निरीक्षण करना चाहा ।

वे सयाने थे । राजा की एक ही बात को देखकर वह सब समझ गए । उन्होंने देखा कि व्यस्तता के कारण राजा दरबार में ही भोजन करता है । तब उन्होंने राजा से कहा–"राजन् ! आप दरबार में भोजन करना छोड़ दीजिए । जिस समय आप खाना खा रहे होते हैं, तब दरबार में अन्य सभी भूखे होते हैं । वह आपकी ओर भूखी नजरों से ताकते रहते हैं । आप पहले उन्हें खाना दीजिए, फिर स्वयं खाइए । ऐसा करके देखिए, आपके पेट में पीड़ा नहीं रहेगी ।

राजा ने ऐसा ही किया । पहले अन्य लोग खाना खा लेते, फिर वह खाता । पेट ठीक होने से वह स्वस्थ हो गया । रानियाँ प्रसन्न हो गयीं । मंत्री निश्चिंत हो गए ।

बाद में राजगुरु एवं राजवैद्य ने सभी मंत्रीगणों एवं वरिष्ठ दरबारियों को बताया कि जैसा वरिष्ठों का आचरण होता है, वैसी ही उनके प्रति मान्यता छोटों की बनती है । उसकी प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक है । वह सूक्ष्म मनोभावों के रूप में शरीर की संरचना व क्रिया को भी प्रभावित रखती है ।

शिष्टाचारं तथा सर्वे सदस्याः परिवारगाः ।
व्यवहरन्तु ससम्मानं मधुरं प्रवदन्तु च ।।५२।।
वार्तालापं कटुं नैव नाऽपमानयुतं तथा ।
प्रकुर्वन्तु प्रणामस्य स्वीकुर्बन्तु परम्पराम् ।।५३।।
अपशब्दोपयोगोऽथ भूत्वा क्रोधवशस्तथा ।
केशाकेशि न कर्त्तव्यं बाहूबाहवि वा पुनः ।।५४।।

भावार्थ–परिवार का हर सदस्य एक दूसरे के साथ शिष्टाचार बरते । सम्मान करे । मधुर शब्द बोले । कटु और अपमानसूचक वार्तालाप कोई न करे । परस्पर अभिवादन की परंपरा का निर्वाह होता रहे । अपशब्द कह बैठना, आवेश में आकर मारपीट करना सभ्यजनों को शोभा नहीं देता ।। ५२–५४।।

व्याख्या–परिवार का संतुलन बहुत कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि परिजनों में सभी शिष्टाचार का पालन करते और एक-दूसरे के सम्मान का ध्यान रखते हैं अथवा नहीं । किसी के प्रति सम्मान प्रकट करने या प्रणाम करने से मनुष्य छोटा नहीं हो जाता, वरन् इससे श्रेष्ठत्व की प्रतिष्ठा ही होती है और उस उच्च भावना का लाभ भी बिना मिले रहता नहीं । शुद्ध अंतःकरण से किया हुआ नमन आंतरिक

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

शक्तियों को जगाता है । इसलिए श्रेष्ठ पुरुषों ने सदैव ही इस मर्यादा का पालन किया है । सम्मान से प्रत्येक मनुष्य को एक प्रकार की आध्यात्मिक तृप्ति मिलती है, उसे प्रत्येक व्यक्ति चाहता है, इसलिए विपरीत परिस्थितियों में भी इस नैतिक मर्यादा का पालन करना चाहिए ।

शिष्टाचार-भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि

भारतीय समाज में, शिष्टाचार में बड़ों के प्रति श्रद्धा-सम्मान की भावना, छोटों के प्रति स्नेह की भावना तथा व्यवहार में विनय एवं माधुर्य के समावेश पर विशेष बल दिया जाता रहा है । इस संदर्भ में अथर्ववेद में प्रदत्त वैदिक ऋषि का यह आदेश माननीय है-

अनुव्रतः पितुः पुत्रो, माता भवतु समनाः । जाया पत्ये मधुमतीं, वाचं वदतु शान्तिवाम् ।।

-अथर्ववेद ३/३०/२

अर्थात् "पुत्र पिता के व्रतों का यानी श्रेष्ठ कर्मों और संकल्पों का अनुसरण करे और माँ जैसे (पवित्र, कोमल) मन वाला बने । पति पत्नी के लिए ,पत्नी पति के लिए माधुर्ययुक्त तथा शांतिप्रद वाणी का व्यवहार करे ।"

जो ऐसा नहीं करता, उसे नीच प्रकृति का उच्छृंखल व्यक्ति माना जाता है ।

वाल्मीकि रामायण में बताया गया है-

मातरं पितरं विप्रमाचार्यं चावमन्यते । स पश्यति फलं तस्य प्रेतराज वशं गतः ।।

अर्थात् जो माता-पिता, ब्राह्मण और गुरुदेव का सम्मान नहीं करता, वह यमराज के वश में पड़कर पाप का फल भोगता है ।

सैद्धांतिक मतभेद के बावजूद भी व्यावहारिक जीवन में बड़ों को सम्मान देने का उच्च आदर्श भारतीय संस्कृति की अपनी निजी विशेषता है ।

भगवान राम और आचार्य रावण में पारस्परिक प्रतिद्वन्द्विता थी । राम रावण की कुटिलता को जानते थे, किन्तु पांडित्य और श्रेष्ठता के प्रति उनके हृदय में जो श्रद्धा-भावना थी, उसके वशीभूत होकर ही उन्होंने विपरीत परिस्थिति में भी इस मर्यादा का पालन किया था । रामायण में लिखा है-

अस कहि रथ रघुनाथ चलावा । विप्र चरन पंकज सिरु नावा ।।

इस प्रकार रणोद्यत राम ने अपना रथ आगे बढ़ाया और रावण के सम्मुख पहुंचकर उसके चरण-कमलों में अपना शीश झुकाया ।

इतना ही नहीं, तुलसीदास जी ने तो यहाँ तक कह दिया है-

सिया राम मय सब जग जानी । करहुँ प्रनाम जोरि जुग पानी ।।

यों तो देश, काल की भिन्नता से संसार में शिष्टाचार के असंख्यों तौर तरीके प्रचलित हैं, पर भारतीय शिष्टाचार के जो मूलभूत नियम शास्त्रों में बतलाये गए हैं, वे लगभग सार्वदेशिक एवं सार्वकालिक ही हैं । स्वागत-सत्कार करने के विषय में 'दक्ष-स्मृति' का कथन है-

सुधा वस्तूनि वक्ष्यामि विशिष्टे गृहमागते । मनश्चक्षुर्मुखंवाचं सौम्यं दत्वा चतुष्टयम् ।।
अभ्युत्थानं ततो गच्छेत् पृच्छालाप प्रियान्वितः । उपासनमनुव्रज्या कार्याण्येतानि नित्यशः ।।

"गृहस्थों का कल्याणकारी नियम यह है कि वे किसी महानुभाव के पधारने पर मन, वचन, मुख और नेत्रों को प्रसन्न रखें । अभ्यागत को देखते ही खड़े होकर आने का हेतु पूछें । प्रेमपूर्वक वार्तालाप करें, यथोचित एवं यथासाध्य सेवा करें और चलते समय कुछ दूर पहुँचाने जाँय ।"

शास्त्रकारों ने कहा है-

शीलेन सर्वं वशम् शीलं परं भूषणम् ।।

अर्थात शील-शिष्टाचार से ही सबको वशवर्ती बनाया जा सकता है । शील ही परमभूषण है । सम्मान सबको भाता है, पर असम्मान किसी को नहीं सुहाता । वाणी और व्यवहार से जहाँ एक-दूसरे का सम्मान प्रकट करने का स्वभाव बन जाता है, वहाँ स्नेह और सहयोग निरंतर बढ़ता ही रहता है । जहाँ अपने-अपने सम्मान का तो बहुत ध्यान रखा जाता है, पर दूसरों को महत्व नहीं दिया जाता, वहाँ शेखी, अहंकार भरी उक्तियाँ, अपशब्द, मारपीट आदि अशोभनीय कृत्यों को प्रश्रय मिलता है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इससे बचना ही बुद्धिमानी है । यहाँ इस समस्या से बचने का उपाय सुझाते हुए ऋषि कहते हैं कि आपसी सम्मान-शिष्टाचार बनाये रखें । मधुर शब्दों का आदान-प्रदान करें तथा एक-दूसरे का भाव-भरा अभिवादन करने का अभ्यास करें । इससे स्नेह बढ़ता है, पारिवारिकता और स्वस्थ सामाजिकता पनपती है । यह एक जाना-माना सिद्धांत है कि दूसरों के साथ वह व्यवहार न करें, जो अपने लिए पसंद नहीं । जो इस तथ्य को समझते हैं, वे अपना व्यवहार संतुलित, शिष्ट ही रखते हैं ।

बालि-सुग्रीव में अनबन क्यों हुई ?

बालि और सुग्रीव में परस्पर अत्यधिक स्नेह था । एक के बिना दूसरे को चैन नहीं पड़ता । बालि जब राक्षस से लड़ने लगा, तो स्नेहवश सुग्रीव भी सहायतार्थ साथ गए । बालि वध का भ्रम होने पर सुग्रीव वापस लौट आये और राज-काज संभालने लगे । बालि ने वापस आकर सुग्रीव को राजसिंहासन पर देखा, तो उत्तेजित हो उठा और उससे राजसिंहासन छीन लिया और सुग्रीव को अपमानित करके भगा दिया ।

यदि बालि ने सुग्रीव की समस्याओं को सुन लिया होता, उसके सम्मान का ध्यान रखते हुए पूछताछ की होती, तो समस्या खड़ी ही नहीं होती । परंतु वह आवेशग्रस्त असभ्यों जैसे व्यवहार पर उतर आया । फलस्वरूप द्वेष बढ़ता गया और स्नेह तो टूटा ही, बालि को प्राण भी गँवाने पड़े ।

अयोध्या का संतलन बिगड़ा

कैकेयी मंथरा के बहकावे में आ गयी । भरत को राज्य तथा राम को वनवास माँग बैठी । राम वनवास पर दशरथ जी ने शरीर त्याग किया । भरत जी को वैराग्य हो गया । कौशल्या पर तो दुख का पहाड़ ही टूट पड़ा । परंतु ऐसी स्थिति में भी किसी ने किसी के सम्मान पर चोट नहीं की । कौशल्या राम को छोड़ना नहीं चाहती थीं, परंतु अन्य माताओं के सम्मान का उन्हें पूरा ध्यान था । अतः उन्होंने राम को वन जाने की अनुमति दे दी ।

जनक ने सुना, जानकी भी साथ गई हैं । उन्होंने दूतों द्वारा सही स्थिति का पता लगाया और तदनुसार भरत का समर्थन करने चित्रकूट पहुँच गए । भरत के कारण राम-सीता को वनवास हुआ । इस नाते उनको अपमानित करने का भूलकर भी प्रयास नहीं किया ।

ऐसे एक-दूसरे के सम्मान के भाव ने विकट परिस्थितियों में भी अयोध्या का संतुलन बनाए रखा । भूल सिर्फ भूल रह गई, उससे परस्पर के स्नेह में कोई फर्क नहीं पड़ा । राम की अनुपस्थिति में भी और राम के आने पर भी पारिवारिक सद्भाव स्वर्गीय सुख देता रहा ।

प्रणाम की परिपाटी

श्रेष्ठ परिवारों में, सज्जनों में बड़ों को प्रणाम करने, छोटों को स्नेह-आशीर्वाद देने की परिपाटी भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण एवं अभिन्न अंग रही है ।

भगवान राम के संबंध में मानसकार ने लिखा है-

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा । मात पिता गुरु नावहिं माथा ॥

ऋषि विश्वामित्र के साथ दोनों भाई गए, तो वहाँ भी उनका प्रणाम का क्रम सतत् चलता रहा । राम वनवास प्रसंग में भगवान राम ऋषियों को वयोवृद्ध मानकर सम्मान देते हैं और महर्षि उन्हें अवतारी मानकर प्रणाम करते हैं ।

मुनि रघुवीर परस्पर नवहीं ।

अपने से श्रेष्ठ को प्रणाम करने की ऐसी उमंग सत्पुरुषों में ही देखने को मिलती है । शास्त्र वचन है-

अभिवादनशीलस्य, नित्यं वृद्धोपसेविनः । चत्वारि तस्य वर्धन्ते, आयुर्विद्या यशो बलम् ॥

अर्थात्, जो अभिवादनशील है, बड़ों का सम्मान एवं आज्ञापालन करते हैं, उनकी आयु, विद्या, यश और बल चारों की वृद्धि होती रहती है ।

अभिवादन जब भावनापूर्वक किया जाता है, तो सामने वाले के हृदय से भी सद्भाव-आशीर्वाद निकलता है । उसका लाभ अभिवादनशील को मिलता है ।

सीताजी के संबंध में ऐसे ही प्रसंग मिलते हैं- **तब जानकी सासु पद लागीं ॥**

वनवास काल में सीताजी अत्रि आश्रम में जाती हैं और सती अनुसुइया को प्रणाम करती हैं अनुसुइया जी उन्हें स्नेह-आशीर्वाद देतीं और उपदेश करती हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

यह सत्परंपरा जिन परिवारों में रहती है, वहां स्नेह-सद्भाव बढ़ता रहता है । कभी विसंगति आती है, तो भी वह टिक नहीं पाती, क्योंकि वे सामयिक होती हैं । परिवार संस्था की पृष्ठभूमि ही स्नेह-शिष्टाचार-सद्भाव पर टिकी है । इन गुणों का परिपालन जहाँ भी होगा, वे परिवार फूलें-फलेंगे ।

आवेश बनाम पिशाच

वन-विहार के लिए वासुदेव, बलदेव और सात्यकि अपने घोड़ों पर चढ़कर निकले । रास्ता भटक जाने से वे एक ऐसे सघन वन में जा फँसे, कि न पीछे लौटना संभव था, न आगे बढ़ना । निदान रात्रि एक पेड़ के नीचे बिताने का संकल्प किया । घोड़े बाँध दिए गए । तीनों ने एक-एक प्रहर पहरा देने का निश्चय किया, ताकि सुरक्षा होती रहे और दो साथी सोते रह सकें ।

पहली पारी सात्यकि की थी । वे जगे, दो सो गए । इतने में पेड़ पर से पिशाच उतरा और मल्लयुद्ध के लिए ललकारने लगा । सात्यकि ने उसके कटु वचनों का वैसा ही उत्तर दिया और घूँसे का जवाब लात से देते रहे । पूरे प्रहर मल्ल-युद्ध होता रहा । सात्यकि को कई जगह चोट लगी, पर उस समय साथियों से उस प्रसंग की चर्चा न कर, सो जाना ही उचित समझा ।

अब बलदेव के जागने की बारी थी । पिशाच ने उन्हें भी चुनौती दी, जवाब में वैसे ही गरमागरम उत्तर मिले । प्रेत का आकार और बल पहले की तरह ही बढ़ता रहा और बलदेव की बुरी तरह दुर्गति हुई । दूसरा पहर इसी तरह बीत गया ।

तीसरी पारी वासुदेव की आई । उन्हें भी चुनौती मिली । वे हँसते हुए लड़ते रहे और कहते रहे-"बड़े मजेदार आदमी हो तुम ! नींद और आलस्य से बचने के लिए मित्र जैसी मखौल कर रहे हो ।"

पिशाच का बल घटता गया और आकार भी छोटा होने लगा । अंत में वह झींगुर जैसा छोटा रह गया । तब वासुदेव ने उसे दुपट्टे के एक छोर से बाँध लिया ।

प्रातः नित्य कर्म से निपट कर, जब चलने की तैयारी होने लगी, तो सात्यकि और बलदेव ने पिशाच से मल्लयुद्ध होने की घटना सुनाई और चोटों के निशान दिखाए । वासुदेव हँसे और पिशाच को दुपट्टे के छोर में से खोलकर हथेली पर रख लिया ।

आश्चर्यचकित साथियों को देखकर वासुदेव ने बताया कि वह पिशाच और कोई नहीं कुसंस्कार रूपी क्रोध था, जो वैसा ही प्रत्युत्तर पाने पर बढ़ता और दूना होता है, पर जब उपेक्षा की जाती है, तो दुर्बल और छोटा हो जाता है ।

शब्द की महिमा

स्वामी विवेकानंद एक सत्संग में भगवान् के नाम की महत्ता बता रहे थे, एक तार्किक ने कहा-"शब्दों में क्या रखा है, उन्हें रटने से क्या लाभ ?"

विवेकानंद ने उत्तर में उन्हें अपशब्द कहे-"मूर्ख, जाहिल आदि कहा । इस पर वह तार्किक आग-बबूला हो गया और भन्नाते हुए कहा-"आप संन्यासी के मुँह से ऐसे शब्द शोभा नहीं देते । उन्हें सुनकर मुझे बहुत चोट लगी है ।"

स्वामी जी ने हँसते हुए कहा-"भाई, वे तो शब्द मात्र थे । शब्दों में क्या रखा है । मैंने कोई पत्थर तो नहीं मारा ?"

सुनने वालों तक का समाधान हो गया । शब्द जब किसी को क्रोध उत्पन्न कर सकते हैं, तो जिसके लिए प्रिय शब्द भावपूर्वक कहे जायेंगे, उसका अनुग्रह वे क्यों आकर्षित न करेंगे ?

कटुता वर्द्धतेऽनेन द्वेषो मालिन्यमेव च ।
मानसं समुदेत्यत्र नैव भद्रा अशिष्टताम् ।। ५५ ।।
व्यवहारे प्रगृह्णन्तु बुद्धिरत्र विधीयताम् ।
यत्नः हस्तावलम्बेन सहयोगे विधीयताम् ।। ५६ ।।
औदासीन्येन वोपेक्षाभावेनाऽपि शनैः शनैः ।
घनत्वं हीयते प्रेम्णः सहकारेण वर्द्धते ।। ५७ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आत्मन्येव मनो येषां स्वार्थबुद्ध्या प्रवर्तते ।
सधीचामवहेलां च ये कुर्वन्ति नरास्तु ते ।।५८।।
तिरस्कारं लभन्ते च हानिं विन्दन्त्यपि भृशम् ।
लाभो मानवदेहस्य प्राप्यतेऽनेन नो क्वचित् ।।५९।।

भावार्थ–इससे कटुता बढ़ती है, द्वेष और मनोमालिन्य पनपता है । अतः हे भद्रपुरुषो ! अशिष्टता को परिवार व्यवहार में कहीं कोई स्थान न मिले, इसका समुचित ध्यान रखा जाय । हर सदस्य एक दूसरे का हाथ बँटाने–सहयोग देने का प्रयास करे । उपेक्षा और उदासी बरतने से घनिष्ठता घट जाती है । प्रेम और सहकार से सद्भाव बढ़ता है । मात्र अपना ही ध्यान रखने वाले और साथियों की अवहेलना करने वाले स्वार्थीजन बदले में तिरस्कार पाते और घाटे में रहते हैं, उन्हें मानव शरीर के कोई लाभ हस्तगत नहीं होते ।। ५५–५९।।

व्याख्या–परिवार भाव का विकास करने के इच्छुक साधकों को ऋषि सूत्र बतलाते हैं कि–

(१) सहकार से सद्भाव बढ़ता है ।

(२) उपेक्षा, उदासी से घनिष्ठता घटती है ।

उपेक्षा, उदासी, स्वार्थ-संकीर्णतावश ही होती है । उदार परमार्थी इस भाव के शिकार नहीं हो पाते । संकीर्ण स्वार्थपरता तिरस्कार का, घाटे का कारण बनती है ।

इसीलिए ऋषि चाहते हैं कि मतभेद होने पर भी अथवा परिहास में भी अशिष्टता को परिवार में स्थान न मिले । वैचारिक मतभेदों को सहज शिष्टाचारपूर्वक, बिना किसी को अपमानित किए सुलझाया जा सकता है । किन्तु जब पारस्परिक वाद-विवाद तक नौबत आ जाती है, तो मनोमालिन्य गहरी जड़ें जमा लेता है ।

यदि हल्का-फुल्का जीवन जीने का, एक-दूसरे को सहयोग देने का मार्ग अपनाया जाय तो प्रतिक्रिया स्वरूप जन सहयोग एवं लोक सम्मान स्वतः मिलने लगेगा । सद्भाव पाने का एक ही मार्ग है, शिष्टाचार की पृष्ठभूमि पर टिका पारस्परिक सहकार ।

शील टूटा महाभारत ठना

महाभारत एक दूसरे को सम्मान न दे पाने की ही भीषण प्रतिक्रिया के रूप में उभरा था । बचपन में दुर्योधन राजमद में पांडवों को सम्मान न दे सका । भीम सहज प्रतिक्रिया के रूप में अपने बल का उपयोग करके उन्हें अपमानित–तिरस्कृत करने लगे ।

द्रौपदी सहज परिहास में भूल गयीं कि दुर्योधन को 'अंधों के अंधे' संबोधन से अपमान का अनुभव हो सकता है । दुर्योधन द्वेषवश नारी के शील का ही महत्व भूल गया तथा द्रौपदी को भरी सभा में अपमानित करने पर उतारू हो गया ।

यही सब कारण जुड़ते गए तथा छोटी-छोटी शिष्टाचार की त्रुटियों की चिनगारियाँ भीषण ज्वाला बन गयीं । यदि परस्पर सम्मान का ध्यान रखा जा सका होता, अशिष्टता पर अंकुश रखा जा सका होता, तो स्नेह बनाए रखने में कोई कठिनाई न होती । भीष्म पितामह और वासुदेव जैसे युग पुरुषों के प्रभाव का लाभ मिल जाता ।

शल्य कौरव पक्ष में गए

महाभारत के निमंत्रण पर दूर-दूर से राजा, महाराजा, योद्धा अपने-अपने स्नेहियों के पक्ष में लड़ने के लिए चल पड़े । शल्य पांडवों के मामा थे । पांडवों ने सोचा वह तो हमारे पक्ष में आयेंगे ही, उनकी अगवानी के लिए विशेष व्यवस्था करने की क्या आवश्यकता ?

इस सहज उपेक्षा का दंड उनको मिला । दुर्योधन ने शल्य के मार्ग में जगह-जगह सुविधाएँ जुटा दीं । शल्य उन्हें पांडवों द्वारा प्रदत्त मानकर उपयोग करते रहे । बाद में जब यथार्थता का पता चला, तो जिसके साधनों का शल्य उपयोग करते आ रहे थे, उसके ही पक्ष में खड़ा होना पड़ा । यदि पांडव उपेक्षा न बरतते, तो यह हानि न उठानी पड़ती ।

आवेश नियंत्रित न रहा

कभी-कभी आवेश में उठाया गया कदम ऐसा हानिकारक सिद्ध होता है, जिसकी पूर्ति नहीं हो पाती । अब से कोई दो हजार पूर्व सिसली में जन्मा आर्किमिडीज अपने समय का अद्वितीय विद्वान् और वैज्ञानिक था । उसके प्रतिपादनों और आविष्कारों से उस समय का विज्ञ समुदाय चमत्कृत था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एक दिन सिसली के सेनापति को उससे मिलने की इच्छा हुई । सो एक सिपाही भेजकर उन्हें बुलवाया । उस समय आर्किमिडीज रेखागणित का हल निकालने में व्यस्त थे, सो चलने में आना-कानी करने लगे ।

इस पर संदेशवाहक सिपाही आग-बबूला हो गया और तलवार निकालकर उसका सिर काट दिया । फलतः एक ऐसी ज्योति बुझ गयी, जो कि कभी-कभी ही संसार में उदय होती और चमकती है ।

पुनः सद्भाव बढ़ गया

संत पुंडरीक को पता लगा कि किसी कारण पाटलिपुत्र के दो श्रेष्ठियों में कुछ आपसी मनोमालिन्य पैदा हो गया है । दोनों उनके शिष्य थे । लोगों ने कहा-उन्हें समझाकर पुनः एकता स्थापित करा दें । संत बोले, समझाने से काम न चलेगा, उनमें सद्भाव पैदा करना पड़ेगा ।

संत ने किसी से कुछ न कहा । दोनों आते, उनके पास बैठे रहते । कभी-कभी संत दोनों को एक साथ काम बतला देते । दोनों करते । आश्रम की स्वच्छता में, आगंतुकों को भोजन कराने में, पूजन की व्यवस्था करने में वे ऐसी स्थिति पैदा करते कि दोनों श्रेष्ठियों को सहयोगपूर्वक काम करना पड़ता । गुरु के प्रति श्रद्धाभाव के कारण दोनों पूरे मनोयोग से कार्य करते । सहयोग लेते-देते, एक दूसरे के कार्य के प्रति सम्मान का भाव पैदा हुआ, सद्भाव बढ़ा और बिना किसी के कुछ कहे उनका मनोमालिन्य दूर हो गया । संत बोले-"सहकार से सद्भाव बढ़ाने का सूत्र यहाँ भी फल गया ।"

उद्दंडता बनाम सौजन्य

समर्थ गुरु रामदास के साथ एक उद्दंड व्यक्ति चल पड़ा और रास्ते भर खरी-खोटी सुनाता रहा । समर्थ उन अपशब्दों को चुपचाप सुनते रहे ।

जब सुनसान समाप्त हुआ और बड़ा गाँव नजदीक आया तो समर्थ खड़े हो गए और उस उद्दंड व्यक्ति से कहने लगे । अभी और जो भला-बुरा कहना हो, उसे कहकर समाप्त कर लो । अन्यथा अगले गाँव के लोग मेरे परिचित हैं, सुनेंगे तो तुम्हारे साथ दुर्व्यवहार करेंगे । तब जो सुना गया है, उससे कहीं अधिक कष्ट मुझे होगा ।

वह व्यक्ति पैरों में गिरकर समर्थ से क्षमा माँगने लगा । समर्थ ने उसे अपना आचरण सुधारने एवं परिवार में भी उन्हीं प्रवृत्तियों को फैलाने का आशीर्वाद दिया । ताकि उसकी उद्दंडता के परिणामस्वरूप परिवार में दुष्प्रवृत्तियाँ न पनपें । संत के इस व्यवहार ने उसके जीवन को तो बदला ही, उसे बदले में जहाँ तिरस्कार, गालियाँ मिला करती थीं, सम्मान मिलने लगा ।

शालीनता बरती-परिवर्तन आया

दार्शनिक हिक्री उन दिनों तंवा में रहते थे । कई लोग उनसे उलझी गुत्थियाँ सुलझाने संबंधी परामर्श करने आते ।

एक दिन एक व्यक्ति अपनी पत्नी समेत उनके पास पहुँचा और उसकी आलस्य तथा कंजूसी की बुराई करने लगा । सचमुच यह दोनों बुराइयाँ उसमें थीं भी ।

हिक्री ने उस औरत को स्नेहपूर्वक पास बुलाया । एक हाथ की मुट्ठी बाँधकर उसके सामने की और पूछा, यदि यह ऐसे ही सदा रहे, तो क्या परिणाम होगा, बताओ तो लड़की ।

औरत सिटपिटाई तो, पर हिम्मत समेट कर बोली-"यदि सदा यह मुट्ठी ऐसी ही बँधी रही, हाथ अकड़ कर निकम्मा हो जायेगा ।"

हिक्री इस उत्तर को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और दूसरे हाथ की हथेली बिल्कुल खुली रखकर फिर पूछा-"यदि यह हाथ ऐसे ही खुला रहे, तो फिर इस हाथ का क्या हस्र होगा, जरा बताओ तो ।" औरत ने कहा-"ऐसी हालत में यह भी अकड़ कर बेकार ही जायेगा ।"

हिक्री ने उस औरत की भरपूर प्रशंसा की और कहा-"यह तो बुद्धिमान भी है और दूरदर्शी भी । मुट्ठी बँधी रहने और हाथ सीधा रहने के नुकसान को यह अच्छी तरह जानती है । बेटी, इस विवेक का उपयोग अपने जीवन में भी करना, इससे तुम्हारे जीवन में सुख-सौभाग्य बढ़ेगा ।"

पति-पत्नी प्रणाम करके चल दिए । युवती ने संत की बात पर गौर किया । समझ में आया कि मैं एक ही स्थिति में रही और आलस्य बरतती रही, तो हाथ की तरह अकड़ जाऊँगी । उसने सक्रियता अपनायी । पति का साथ देकर आय बढ़ाई, बचत की, और सदुद्देश्यों के निमित्त उदारतापूर्वक खर्च किया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सूर्य अशिष्टता से प्रभावित

सूर्य परिभ्रमण में निरत था । उसने प्रवास काल में कइयों से कई प्रकार की निंदाएँ सुनीं । एक बोला–"अभागे को कभी छुट्टी नहीं मिलती ।" दूसरे ने कहा–"बेचारा, रोज जन्मता और रोज मरता है ।" तीसरे ने कहा–"निर्जीव होते हुए भी आग उगलता है ।" चौथे ने कहा–"किसी बड़े अपराध का दंड भुगत रहा है ।"

सूर्य को इस कृतघ्नता पर क्रोध आया और दूसरे दिन उगने से इन्कार कर दिया ।

सविता की पत्नी ने रूठने का कारण जाना, तो हँस पड़ी, बोली–"ढेले की चोट से घड़े फूटते हैं, किन्तु समुद्र में गिरकर गर्त में विलीन हो जाते हैं । आप घड़े नहीं, समुद्र हैं, फिर ढेले की आदत और परिणति क्यों नहीं समझते ?"

अपनी भूल स्वीकार करते हुए सूर्यनारायण ने यथाक्रम अपना रथ आगे बढ़ा दिया । सत्पुरुष न अशिष्टता बरतते हैं और न अशिष्टों के व्यवहार को महत्व देते हैं । तभी लक्ष्य पर बढ़ पाते हैं ।

सम्मान के सच्चे अधिकारी

हजरत उमर ने एक युद्ध जीता । वहाँ की व्यवस्था सही करने के लिए उनका पहुँचना आवश्यक था । सो वे कुछ साथियों सहित उस यात्रा पर निकल पड़े । तीन आदमियों के पीछे एक ऊँट भी साथ था । दो पीठ पर सवार होते, तीसरा नकेल पकड़ कर आगे चलता ।

सिलसिला बराबर चलता रहा और वह नगर आ गया, जहाँ उन्हें पहुँचना था । प्रजाजन स्वागत की तैयारी किए बैठे थे । एक सवार ने खुद उतर पड़ने और हजरत को सवार होने के लिए कहा ।

जवाब था–"हम सबकी हैसियत एक है । नियत अनुशासन के निबाहने में ही हमारी शान है ।" हजरत ऊँट की नकेल पकड़े हुए ही शहर में घुसे । उनके इस शिष्ट व्यवहार पर सभी प्रजाजन पुलकित हो उठे । उन्हें मिलने वाले अपरिमित सम्मान का यही कारण था । दूसरों के प्रति सद्भाव-सम्मान की प्रतिक्रिया अनेक गुनी फलित होकर मिलती है ।

सीमितः परिवारः स्यात् संख्या स्वल्पैव सन्ततेः ।
सुखदा हानयोऽसंख्या बहुप्रजननोद्भवाः ।। ६०।।
जनन्या हीयते तत्रारोग्यमायुष्यमेव च ।
परिवारसदस्यानां क्षीयन्ते सुविधास्तथा ।। ६१।।
प्रत्येकेन सदस्येन हानिरेव च लभ्यते ।
अभिवृद्ध्याऽनया दूनं नवया चिन्त्यतामिदम् ।। ६२।।
सञ्चालकः कुटुम्बस्य तैलयन्त्रवृषो यथा ।
तथा भ्रमति चार्थस्य भारवाहितया ततः ।। ६३।।
उद्विग्नश्च भवत्येष विवेकं परिहाय च ।
नीत्यनीती परित्यज्य यततेऽधिकमर्जितुम् ।। ६४।।

भावार्थ–परिवार छोटा है । बच्चों की संख्या अधिक न बढ़े । बहुप्रजनन की असंख्यों हानियाँ हैं । जननी का आयुष्य और आरोग्य घटता है । परिवारगत सुविधाओं में नए सदस्य बढ़ने से कटौती होती है । हर सदस्य को इस नयी अभिवृद्धि से घाटा उठाना पड़ता है, यह बात बहुत चिंताजनक है । परिवार संचालक को अर्थ भार वहन करने के लिए कोल्हू के बैल की तरह जुतना पड़ता है, उद्विग्न होना पड़ता है । उसे विवेक खोकर नीति–अनीति का ध्यान रहे बिना अधिक कमाने का प्रयास करना पड़ता है ।। ६२–६४।।

व्याख्या–किसी भी प्रकार के उत्तरदायित्व को भली प्रकार निभाने के दो सूत्र हैं–(१) उत्तरदायित्व निभाने की अपनी क्षमता-योग्यता का विकास, (२) उत्तरदायित्वों को अनावश्यक रूप से बढ़ने न देना ।

परिवार के सदंर्भ में भी ऋषि इन दोनों सूत्रों पर ध्यान दिलाते हैं । पिछले श्लोकों में वे सूत्र बतलाये गए, जिनसे पारिवारिक आत्मीयता, सद्भाव का विकास हो । यह भाव जितने विकसित, पुष्ट होंगे परिवार उतने ही श्रेष्ठ बनेंगे ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

दूसरा सूत्र है–उत्तरदायित्व बढ़ने न देने का । इसमें दो बातें ध्यान देने योग्य हैं । पहली बात है– बच्चों की संख्या न बढ़ने देना । दूसरी है– व्यय न बढ़ने देना । यहाँ बच्चों की संख्या बढ़ने से होने वाली हानियों पर ध्यान दिलाया गया है । (१) जननी का स्वास्थ्य, (२) सदस्यों की सुविधाओं में कटौती, (३) संचालक पर दबाव और अनीति करने की मजबूरी ।

रघुवंश की परम्परा

भारतीय संस्कृति में श्रेष्ठ व्यक्तियों ने सीमित संतान का ही क्रम बनाकर रखा है । रघुवंश में एक से एक तेजस्वी राजा हुए, पर उन्होंने संतान की सीमा बराबर बनाए रखी ।

राजा दिलीप के रघु, रघु के अज, अज के दशरथ कहीं भी अधिक का क्रम नहीं रहा । दशरथ जी से भी कौशल्या और कैकेयी के एक-एक तथा सुमित्रा के दो पुत्र उत्पन्न हुए । श्रीराम के भी दो पुत्र थे । मानस में आया है–

दुइ सुत सुंदर सीता जाये । लवकुश वेद पुरानन्ह गाये ॥

राम ही नहीं सभी भाइयों ने भी यह मर्यादा बनाकर रखी–

दुइ दुइ सुत सब भ्रातन्ह केरे । भए रूप गुण शील घनेरे ॥

माँ के स्वास्थ्य पर कुठाराघात

अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के स्वास्थ्य पर अनेक सर्वेक्षण किए गए हैं । उनमें यह बात स्पष्टतः स्वीकार की गई है कि बच्चे अधिक पैदा करने से माँ के स्वास्थ्य पर सबसे अधिक दबाव पड़ता है । जिन महिलाओं के स्वास्थ्य ठीक नहीं होते, उन्हें चिकित्सक बच्चे पैदा करने से रोक देते हैं ।

रामचरित मानस में भी बच्चों को–'**जननी यौवनरूप कुठारू ।**'

अर्थात माँ के यौवन रूपी वृक्ष पर बच्चों का पैदा होना कुल्हाड़े के समान आघात करने वाला कहा गया है । समाज को, राष्ट्र को श्रेष्ठ उत्तराधिकारी देने के लिए कर्तव्य के नाते सीमित प्रजनन ही विवेकसंगत माना गया है ।

घटते साधन–बढ़ते लोग

आज जनसंख्या वृद्धि परिवार से लेकर विश्व स्तर तक चिंता का विषय बनी हुई है । एक सर्वेक्षण के अनुसार परिवारों में ८० प्रतिशत ऐसे हैं, जिनके पास साधन कम हैं और सदस्यों के उत्तरदायित्व अधिक हैं । उनकी आवश्यकताएँ उतने साधनों से पूरी नहीं की जा सकतीं । जब एक नया बालक पैदा होता है, तो औसतन परिवार पर डेढ़ व्यक्ति का भार बढ़ता है । प्रजनन के समय जितने व्यक्तियों का समय लगता है, लालन-पालन में जितना समय और शक्ति का व्यय होता है, उसका औसत बालक के वयस्क होने तक डेढ़ व्यक्ति से कम का नहीं बैठता ।

सामाजिक स्तर पर यह सिद्ध हो गया है कि साधन बढ़ाने की गति कितनी भी तेज क्यों न की जाय, यदि प्रजनन न घटा तो संतुलन बिगड़ ही जायेगा । मानवीय सुख-सुविधाओं के विकास के लिए सोचना और करना इसीलिए बेकार सिद्ध होता है कि बढ़ती जनसंख्या की आवश्यकताएँ पूरी करने में ही सारी शक्ति खर्च हो जाती है ।

संचालक की विडंबना

एक मनोवैज्ञानिक सर्वेक्षण के अनुसार ८३ प्रतिशत व्यक्तियों के अंदर हीनता की ग्रंथियाँ पनप रही हैं । वे इस कारण कि बड़े परिवार का पोषण उचित माध्यम से हुई आय से संभव नहीं हो पाता, इसलिए गलत रास्ते अपनाने पड़ते हैं । गलत रास्ते अपनाने पर समाज में अनीति को बढ़ावा देने वालों में उसकी गणना होती है । परिवार के पोषण का कर्तव्य पूरा करें, तो नैतिक कर्तव्य टूटते हैं । नैतिक कर्तव्य संभाले तो पारिवारिक निर्वाह का प्रश्न खड़ा होता है । इस द्वंद्व में ८३ प्रतिशत नागरिक हीनता की ग्रंथि से पीड़ित हैं ।

समस्या लोकसेवियों की

समाज के विकास में लोक सेवियों की भूमिका प्रधान रहती है । अंतर्राष्ट्रीय अध्ययन का निष्कर्ष है कि कुल जनसंख्या के ५ प्रतिशत व्यक्ति यदि थोड़ी बहुत लोक सेवा की प्रवृत्तियाँ चलाते हैं, तो वह समाज संतुलित बना रह सकता है । आजकल सही अर्थों में लोकसेवी न दिखने के प्रश्न को लेकर सर्वेक्षण किए गए तो पाया गया कि लगभग ९.६ प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं, जिनके मनों में वास्तव में लोक सेवा की गहरी भावना है और वे कुछ न कुछ करने के लिए लालायित भी रहते हैं । परंतु उनमें से ९० प्रतिशत इसलिए कुछ नहीं कर पाते कि उनके बढ़े हुए पारिवारिक उत्तरदायित्वों को पूरा करने में ही सारे साधन, सारी शक्ति और सारा समय खप जाता है । ६७ प्रतिशत व्यक्तियों को सेवा निवृत्ति के बाद भी कोई अतिरिक्त काम

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निर्वाह के लिए तलाशना पड़ता है । यदि परिवार की संख्या और आवश्यकताएँ सीमित रखी जा सकें, तो लोक सेवियों की आवश्यकताएँ सहज ही पूरी हो सकती हैं । इसी कारण लोक सेवा के क्षेत्र में उतरने की इच्छा रखने वालों के लिए तो यह अनिवार्य माना ही गया है कि वे यदि गृहस्थ हैं, तो प्रजनन के क्षेत्र में विवेक बरतें ।

सत्पुरुषों के परिवार

विभिन्न क्षेत्रों में उल्लेखनीय कार्य करने वाले मूर्धन्य व्यक्तियों का राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर अध्ययन किया गया, तो पाया गया कि लगभग अग्रणी लोग या तो पारिवारिक उत्तरदायित्वों से मुक्त रहे अथवा उन्होंने उसे सीमित रखा ।

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में अग्रणी नेता जो गृहस्थ थे, उन्होंने संतानें या तो पैदा ही नहीं कीं अथवा संख्या बहुत ही सीमित रखी । महामना मालवीय जी, लोकमान्य तिलक, मोती लाल नेहरू, जवाहर लाल नेहरू, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य, लोकनायक जयप्रकाश नारायण, आचार्य कृपलानी, सरदार पटेल जैसों की लंबी सूची बनायी जा सकती है । जिन्होंने परिकर सीमित रखकर अथवा आवश्यकताओं पर नियंत्रण लगाकर आत्म संतोष तथा लोक मंगल की दृष्टि से कुछ कर सकने में सफलता पायी ।

गुरु और शिष्य

एक साधक गुरुदेव के निकट रहकर ही उनकी सेवा किया करता था । एक बार उनसे आज्ञा लेकर वह कुछ दिनों के लिए अपने गाँव चला आया । जब वह लौटकर पहुँचा, तो उसने अपने गुरु से कहा–"गुरुदेव ! मेरी सगाई हो गई है ।"

"तब तो तुम मुझसे दूर हो गए ।"–इतना कहकर वह मौन हो गए ।

दूसरी बार जब उस साधक को घर जाने का अवसर मिला तो शुभ मुहूर्त में उसका विवाह कर दिया गया । विवाह की सूचना जब गुरु को मिली तो उन्होंने कहा–"अब तो तू अपने माता-पिता से भी गया ।"

अब उस व्यक्ति ने गुरु के साथ रहना छोड़ दिया था । क्योंकि उस पर पहले की अपेक्षा उत्तरदायित्व बढ़ गए थे । लगभग १ वर्ष बाद गुरु के दर्शन करने का अवसर मिला, तो उसने शुभ संदेश सुनाते हुए कहा–"मुझे एक पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई है ।"

"तब तो तू अपने से भी गया"–कहकर गुरुजी मौन हो गए ।

कथा का आशय यह है कि लोकसेवा के क्षेत्र में उतरने वाले व्यक्ति के लिए निर्धारित वर्जनाओं का पालन, दायित्वों का निर्वाह अत्यंत जरूरी है, शेष सभी बातें गौण हैं ।

श्रमण एवं राजकर्मचारी

मगध नरेश एक दिन भगवान् बुद्ध के सत्संग में गए और पंक्तिबद्ध बैठे । श्रमणों को प्रमुदित स्थिति में देखा, जबकि उन्हें शरीर यात्रा तथा धर्म प्रचार की प्रव्रज्या में अधिक कष्ट उठाने पड़ते थे । दूसरी ओर राजपरिवार के सदस्य और शासकीय कर्मचारी हैं, जो निरंतर अभाव और अधिक काम की शिकायत करते रहते हैं । इस विसंगति का कारण सत्संग समाप्त होने पर तथागत से पूछा ।

बुद्ध ने कहा–"राजन् ! यह आश्रमवासी वर्तमान में जीते हैं । जो उपलब्ध है, उसे संतान सीमित होने के कारण उन पर पूरा ध्यान देते हैं । अनाप-शनाप खर्च नहीं करते । कर्तव्य पालन के आनंद को अधिकाधिक मात्रा में प्राप्त करने के लिए उत्सुक रहते हैं ।

शांति का यही मार्ग है । धर्म विहार हो या हाट बाजार या राजमहल । सर्वत्र सुख-शांति का यही एक मार्ग है । जिसे गृहस्थ हो या विरक्त, सभी को अपनाना चाहिए ।

पुत्र रूप में धुंधकारी जन्मा

संतान लाभ की कामना हेतु आतुर व्यक्ति विवेक खो बैठता है । अंततः वह अपने पैरों में कुल्हाड़ी ही मारता है ।

ब्रह्म संध्या कर आचार्य त्रिपाद उठे ही थे कि आत्मदेव ने उनके चरण पकड़ लिए । वह दीन शब्दों में बोला–"आचार्य प्रवर ! एक संतान की इच्छा से आपके पास आया हूँ ।"

आचार्य ने कहा–"आत्मदेव संतान से सुख की आशा करना व्यर्थ है । मनुष्य अपने कर्मों के अनुसार सुख-दुःख पाता है । पूर्व जन्म की कृपणता का पाप ही तुम्हारे लिए सौभाग्य विमुख बना है । आत्मदेव की समझ में नहीं आया, उसने कहा–"महात्मन् ! या तो आज आपसे पुत्र लेकर लौटूँगा या आत्मदाह करूँगा ।"

ज्योतिपाद ने हँसकर कहा–"तुम्हारे लिए किसी और का पुण्य छीनना पड़ेगा । पुत्र तो तुम्हारे भाग्य में है

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

नहीं । परंतु तुम्हारी इच्छा परमात्मा पूर्ण करें, लो यह फल अपनी भार्या को खिला देना । वह एक वर्ष तक नितांत पवित्र रहकर नित्य कुछ दान करे ।''

आत्मदेव महर्षि के रहस्यमय वचन सुनकर कुछ समझ न सका तथा वह फल अपनी पत्नी धुंधली को देकर सारी बातें समझा दीं । धुंधली ने सोचा–पवित्रता मुझसे बन न पड़ेगी, अपनी संपत्ति और को क्यों दान करूँ ? उसने वह फल गाय को खिला दिया और समय पर अपनी बहन का पुत्र गोद लेकर घोषण कर दी कि उसके पुत्र रत्न हुआ है । पुत्र का नाम धुंधकारी रखा गया । कालांतर में वह बहुत दुराचारी निकला । धुंधकारी ने अपने पिता की सारी संपत्ति, मांस, मदिरा, जुआ और वेश्यावृत्ति में नष्ट कर दी । माता–पिता कुढ़ कर मर गए । धुंधकारी भी असमय ही काल-कवलित हो गया ।

इससे तो अच्छा है कि समस्त विश्व को अपना परिवार मानकर उसके समग्र विकास में स्वयं को नियोजित कर दिया जाय ।

लिटिल मदर– जो जीवन भर माता रही

सान जुआन की डोना फेरिसा तब तेरह वर्ष की थी । आठ भाई-बहनों में सबसे बड़ी माता का स्वर्गवास हो गया, तो सारे भाई-बहनों को उसी ने पाला । इतने बच्चों की साज-संभाल करने के कारण बच्चे उसे 'लिटिल मदर' कहते थे । माँ का हृदय और उत्तरदायित्व कैसे होना चाहिए, यह उसे परिस्थितियों ने सिखा दिया । सब भाई-बहनों को स्वावलंबी बनाकर निश्चित हुई तब उसकी उम्र ३२ वर्ष की हो चुकी थी । किसी ने विवाह की बात सुझाई, तो उसने कहा–''मेरा मन 'माता' के ढाँचे में ढल गया है, अब उसमें दंपत्ति विलासों के लिए कोई गुंजाइश नहीं रहीं ।''

डोना फेरिसा ने अपने नगर के विद्यालयों की ओर ध्यान दिया और बिना पैसों की नौकरी की । उसने हजारों बच्चों को सद्गुणों से अभ्यस्त-संपन्न बना दिया ।

सान जुआन की नगरपालिका सदस्या बनीं और बाद में अध्यक्ष । वह ६९ वर्ष तक जीवित रहीं । तब तक निरंतर नगरपालिका अध्यक्ष चुनी जाती रहीं । उनने अपने कार्यक्षेत्र के सभी परिवारों को शालीनता से ओत-प्रोत कर दिया था ।

शिशवोऽपि भवन्त्यस्मात्स्नेहसौख्यप्रशिक्षणैः ।
वञ्चिताः फलतस्तेषां विकासस्त्ववरुद्ध्यते ।। ६५ ।।
अन्धकारमयं चैव भविष्यज्जायते ध्रुवम् ।
यत्र राष्ट्रे समाजे वा जनसंख्या विवर्द्धते ।। ६६ ।।
अभावसंकटग्रस्ता जायन्ते तत्र पूरुशाः ।
बहुप्रजननं तस्मात्त्यक्तव्यं भूतिमिच्छता ।। ६७ ।।
प्रसङ्गेऽस्मिंश्च यः कश्चिद् यावतीं न्यूनतां भजेत् ।
बुद्धिमान् स तथैवात्र महान् वक्तुं भविष्यति ।। ६८ ।।

भावार्थ–ऐसी स्थिति में बच्चे भी समुचित दुलार, प्रशिक्षण एवं सुविधा–साधनों से वंचित रहते हैं । फलतः उनका विकास रुकता है और भविष्य अंधकारमय बनता है । जिस समुदाय अथवा राष्ट्र में जनसंख्या बढ़ती है, वे अभावग्रस्त होते और संकटों से घिरे रहते हैं । अतः सुख चाहने वालों को बहु प्रजनन से बचना ही चाहिए । जो इस संदर्भ में जितना अधिक कटौती कर सके, उसे उतना ही बुद्धिमान कहा जायेगा ।। ६५–६८ ।।

व्याख्या-बच्चे अधिक पैदा करने से माता-पिता तथा परिजनों को, समाज को होने वाली हानि पर पिछले प्रतिपादन में ध्यान दिलाया गया था । यहाँ स्वयं बच्चों पर, नई पीढ़ी पर होने वाले कुप्रभावों की ओर ध्यान आकर्षित किया जा रहा है ।

संतति को जन्म देने का उद्देश्य है परिवार को, समाज को श्रेष्ठ उत्तराधिकारी प्रदान करना । स्पष्ट है कि जो हों, वे श्रेष्ठ समर्थ और योग्य हों । इसीलिए देव संस्कृति ने संतान की संख्या की अपेक्षा उनके स्तर को बढ़ाने का समर्थन किया है । कहा गया है–

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वरमेको गुणी पुत्रो, न च मूर्खशतान्यपि । एकश्चन्द्रः तमो हन्ति, न च तारा गणरपि ॥

अर्थात एक गुणी पुत्र पाना उचित है न कि सैकड़ों मूर्ख । एक चंद्रमा रात्रि का अंधकार दूर कर देता है । ढेरों तारे मिलकर भी वैसा नहीं कर पाते ।

यह केवल उक्ति नहीं है । उदाहरणों से भी यह सिद्ध होता है कि जिन्होंने सीमित संतानें रखीं, वे ही उन्हें श्रेष्ठ सुसंस्कारी बना सके । संख्या वृद्धि करने वाले संस्कार देने में असफल ही हुए ।

राजा सगर की भ्रांति

पिछले उदाहरणों में रघुवंशियों की परंपरा दिखलाई गई थी । उनके पूर्वज राजा सगर ने बड़ी संख्या में पुत्र पैदा किए थे । उनका विचार था कि इनके बल से वे अश्वमेध यज्ञ करके चक्रवर्ती सम्राट् बन सकेंगे । परंतु वैसा न हो सका । शक्ति संपन्न राजपुत्रों के संस्कारों पर ध्यान न दिया जा सका और उनके कुसंस्कारों ने ऋषि शाप को आमंत्रित किया तथा नष्ट हुए । जब उसी वंश में एक श्रेष्ठ पुत्र भगीरथ पैदा हुए, तब उस विडंबना से मुक्ति मिली ।

इसके विपरीत रघु और अज जैसे श्रेष्ठ पुत्रों ने अपने पिताओं के अश्वमेध संपन्न कराने में सफलता पायी थी ।

कौरव-पांडवों का अंतर

वंश परंपरा बनाए रखने के लिए व्यास जी ने गांधारी तथा कुंती दोनों को वर माँगने के लिए कहा । गाँधारी ने १०० पराक्रमी पुत्र माँगे, किन्तु कुंती ने ५ वीर और सुसंस्कारी पुत्र माँगे । इतिहास साक्षी है कि १०० पुत्रों का पालन करने में समर्थ गाँधारी उनकी सुसंस्कारिता का क्रम न बिठा सकीं । निर्वाह के लिए परेशान रहकर भी कुंती ५ पुत्रों को सुसंस्कार देने में सफल रहीं । गांधारी के १०० पुत्र नष्ट हुए, किन्तु कुंती के ५ पुत्रों का इतिहास स्वर्ण अक्षरों में लिखा गया ।

कद्रू के हजार विनिता के दो

महर्षि कश्यप की दो पत्नियाँ थीं, कद्रू और विनिता । उन्होंने अपने-अपने उत्तराधिकारियों के निमित्त वर माँगने को कहा । कद्रू ने १००० शक्तिशाली पुत्र माँगे । उसका विचार था कि बड़ी संख्या में शक्तिशाली पुत्र उसे विनिता से अधिक सम्मान और यश दिला सकेंगे । विनिता ने तेजस्वी, सुसंस्कारी मात्र दो पुत्र माँगे ।

कद्रू के नाग हुए एक हजार । थोड़े समय के लिए उसका दबदबा बन भी गया । पर जब विनिता के अरुण और गरुड़ का पराक्रम प्रकट हुआ, तो संख्या के ऊपर श्रेष्ठता का महत्व स्पष्ट हो गया । अरुण बने सूर्य भगवान के सारथी और गरुड़ बने भगवान विष्णु के वाहन । उन्होंने चंद्रलोक से अमृत कलश लाकर कद्रू के बंधनों से माँ विनिता को मुक्त कराया । नाग उनके भय से थर-थर काँपते रहे ।

प्राचीन उदाहरण

दुष्यंत के भरत अकेले पुत्र थे, जिनके प्रभाव से इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा ।

महर्षि लोमशने अपने इकलौते पुत्र शृंगी को इतना तेजस्वी बनाया था कि वशिष्ठ जी राजा दशरथ के पुत्रेष्टि-यज्ञ के लिए उन्हें ससम्मान बुलाने आये ।

व्यास जी के एकमात्र पुत्र शुकदेव संस्कारों और ज्ञान की दृष्टि से अपने पिता से भी श्रेष्ठ माने गए ।

ऋषि जरत्कारु ने एक ही संतान आस्तीक मुनि को ऐसा प्रखर बनाया कि जनमेजय के नाग यज्ञ को वे ही जाकर रोक सके थे ।

उत्तरदायित्व को सीमित रखते हुए शक्ति-सामर्थ्य से उत्कृष्टता पैदा करने का यह क्रम ही अपनाने योग्य है ।

इस सदी के महामानव

समाज को समर्पित सेवाभावी महामानवों ने हमेशा इसी सिद्धांत को अपनाया है कि परिवार का बोझ बढ़ाया न जाय । वंश पुत्र के कारण चलने की एक मूढ़ मान्यता लोगों के दिमागों में समाई हुई है । इस मान्यता के कारण ही अनेक कन्याओं का बोझ लादते असंख्यों गृहस्थ देखे जा सकते हैं । जो पुत्र की कामना में प्रजनन में निरत रहते हैं । ऐसे कई व्यक्ति इस शताब्दी में भी हुए हैं । जिन्होंने संतान से अधिक समाज में सत्प्रवृत्ति विस्तार को अधिक महत्व दिया है ।

अपंग बच्चों को समर्थ बनाया

जान एट्रिन के घर एक बच्ची आयी । दो वर्ष की हुई तब मालूम हुआ कि वह दिमागी पक्षाघात से पीड़ित है । न वह ठीक तरह से चल सकती थी, न बोल सकती थी, न दैनिक जीवन का कोई काम सही तरीके से चला सकती थी । माँ-बाप ने निश्चय किया कि वे माँ-बाप का कर्तव्य निबाहने और उसे शिक्षित करने के लिए पूरा-पूरा परिश्रम करेंगे । नए बच्चे पैदा करने की अपेक्षा इस इकलौती

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बच्ची को ही काम की बनाने का निश्चय किया । जबकि डाक्टर लोग कहते थे कि दिमागी पक्षाघात पीड़ित बच्चों में से कदाचित् ही कोई अच्छा हो पाता है ।

रोटी कमाने के बाद माँ-बाप बच्ची को सिखाने में ही लगे रहे । फलतः उसकी स्थिति में सुधार होता गया और वह एम०ए० तक पढ़ सकी तथा दैनिक जीवन के काम भी बिना किसी की सहायता के करने लगी । उसका जीवन-धन्य हो गया ।

इसमें माता-पिता के श्रम को श्रेय तो था ही, किन्तु यदि वे इस बच्ची की देख-रेख के साथ और बच्चों की संख्या बढ़ाते तो चाहकर भी जी तोड़ परिश्रम करके वे बच्चों के साथ न्याय नहीं कर सकते थे । जितना कि उनने किया ।

मितव्ययत्वमेवाऽथ प्रत्येकस्मिंस्तु कर्मणि ।
वर्तिव्यं महत्वं च द्रव्यस्याऽन्ये समेऽपि ते ।। ६९ ।।
सदस्या अधिगच्छन्तु तथा बोध्याः पुनः पुनः ।
नाश्यं नैव धनं व्यर्थं विलासस्य प्रदर्शने ।। ७० ।।
अहं त्वस्याऽपि वा माता लक्ष्मीरित्युपयुज्यताम् ।
हेयमित्यवमत्याऽसत् कार्येषु नोपयुज्यताम् ।। ७१ ।।
शृङ्गारे नैव कर्तव्यो व्ययोऽलंकरणेऽथवा ।
सौजन्यं निहितं नूनं तत्र संस्कारिताऽपि च ।। ७२ ।।
स्वाभाविके तथा सौम्ये सरले जीवने द्वयम् ।
नियुज्यन्तां हि वित्तानि सत्कर्मष्वेव सर्वदा ।। ७३ ।।

भावार्थ—*हर कार्य में मितव्ययिता बरती जाय । हर सदस्य को पैसे का महत्व समझाया जाय । विलास, अहंता प्रदर्शित करने वाले कामों में धन को बर्बाद न होने दिया जाय । लक्ष्मी को माता मानकर उसका सदुपयोग किया जाय, हेय मानकर उसका दुरुपयोग न होने दें । शृंगार-अलंकरण पर कुछ भी खर्च न किया जाय । सादगी में ही सज्जनता और सुसंस्कारिता सन्निहित है । सत्कर्मों में ही विवेकपूर्वक धन को नियोजित किया जाय ।। ६९-७३ ।।*

व्याख्या—परिवार के सदस्यों की संख्या बढ़ाकर अनावश्यक बोझ अपने कंधे पर लादना, जहाँ परिवार के मुखिया के लिए अनीति से अथवा किसी भी उपाय से साधन जुटाने को विवश करता है, वहीं दूसरी ओर मितव्ययिता की वृत्ति का अभाव, प्रदर्शन ठाठ-बाट में ही अपना बड़प्पन मानने की प्रवृत्ति व्यक्ति को आदर्शों से विमुख कर देती है । मितव्ययिता एवं कृपणता दोनों नितांत भिन्न बातें हैं । हर साधन का सोच-समझकर सदुपयोग, परमार्थ कार्यों में उसका सुनियोजन मितव्ययिता कहलाता है, जबकि अनावश्यक संचय से जुड़ी संकीर्ण स्वार्थपरता, कृपणता का पर्याय है ।

परिवार व्यवस्था भली-भाँति चल सके, किसी भी सदस्य को अभाव न अनुभव हो, सभी उपलब्ध साधनों में ही विकास करते रह सकें, इसके लिए अपव्यय के छिद्रों को रोका जाना अत्यंत आवश्यक है । किसी भी परिवार जन को स्वस्थ मनोरंजन, स्वाध्याय, सत्संग, साधना जैसे पुण्य प्रयोजनों के लिए पर्याप्त समय मिलना चाहिए । हर समय उन्हें उपार्जन, प्रयोजन के निमित्त बैल की तरह न जुतना पड़े । इसके लिए अनिवार्य है कि हर सदस्य धन का महत्व समझे । बहुधा कमाते समय, धन पाने के समय तो उसे सर्वस्व मान लिया जाता है तथा ईमान, मनुष्यता की कीमत पर भी उसे प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है । ऐसे अवसर पर धन की सीमा का ध्यान रखा जाना उचित है ।

इसके विपरीत खर्च करते समय पागलपन जैसी हरकतें की जाती हैं । समय, श्रम, योग्यता की इतनी कीमत चुकाकर प्राप्त धन को बेदर्दी से बेकार के कामों में खर्च कर दिया जाता है । धन का महत्व समझकर उसे महत्वपूर्ण कार्यों में ही खर्च करने का संस्कार डालें ।

लक्ष्मी को माता मानने का अर्थ है उसकी पवित्रता का ध्यान रखा जाय । उपयोग तक उसकी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पवित्रता है, उपभोग में वह समाप्त हो जाती है । माँ के उपयोग की बात सोची जाती है, उसे उपभोग का विषय नहीं बनाया जाय । विलास और अहंता के प्रदर्शन में, फैशन-शृंगार में धन खर्च करना लक्ष्मी माँ का उपभोग करना है । इस प्रवृत्ति को परिजनों में न होने देना आवश्यक है ।

धन कितना भी एकत्रित हो, उसका कोई लाभ नहीं, वह तो एक भार और हो जाता है । उसके उपयोग से उसका लाभ मिलता है । जैसा उपयोग होगा, वैसा लाभ मिलेगा । असत् कार्यों में लगने से असत् परिणाम और सत् कार्यों में लगने से सत्परिणाम सामने आते हैं । यदि उपार्जन के बाद, आवश्यक प्रयोजनों में नियोजित होने के बाद धन शेष रह जाता है तो उसे परमार्थ कार्यों में व्यय करना चाहिए । समाज एक बृहत् परिवार है, हम भी उसके एक अंग सरीखे हैं । इस नाते सत्प्रवृत्तियाँ फैलाने तथा वातावरण को उत्कृष्टता का पक्षधर बनाने के निमित्त जितने धन का सदुपयोग हो सकेगा, उतना ही लाभकारी होगा ।

अपने पैर सिकोड़िये

अकबर ने दरबारियों की बुद्धि परखने के लिए एक चादर मँगायी, जो उनकी लंबाई से छोटी थी । सभी से ऐसा प्रश्न पूछा जा रहा था कि बिना चादर को घटाए-बढ़ाए उनका शरीर कैसे ढँक जाय ? औरों से उत्तर न बन पड़ा तो वीरबल ने कहा-"हुजूर ! अपने पैर सिकोड़ें, मजे में उसी चादर में तन ढँक कर सोयें ।"

बुद्धिमानी की बात सभी को पसंद आई । साधनों को बढ़ाए बिना भी आवश्यकताएँ कम करके भी गुजर हो सकती है ।

वह तो देख रहा है

मंगोलिया वासी चांगशेन नामक न्यायाधीश अफसर के पास उनका एक मित्र पहुँचा और अशर्फियों की थैली भेंट करते हुए बोला-"आप मेरा काम कर दें । इस लेन-देन की बात आपके और मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं जानेगा ।"

चांगशेन कभी किसी से रिश्वत नहीं लेते थे । भले ही अपनी इस आदर्शवादिता के कारण उन्हें अभावग्रस्त जीवन जीना पड़ता था । उन्होंने अपने धनी मित्र को इस बात का उत्तर दिया-"मित्र ! ऐसा न कहो कि कोई नहीं देखता । कोई मनुष्य नहीं देखता तो क्या ? सर्वव्यापी परमेश्वर तो सब कुछ देखता है, उसकी नजरों से मेरा यह अनैतिक कर्म कहाँ छिपा रहेगा ?"

अनीति का उपार्जन महामानवों को कभी स्वीकार्य नहीं होता । यही परंपरा वे अपने परिवारों में भी डालते हैं ।

किसका धन सार्थक ?

एक संत प्रजा को धार्मिक उपदेश देते तथा टोपियाँ सीकर जीवन निर्वाह करते थे । नित्य उन्हें एक पैसे की बचत हो जाती, उसे भी दान कर दिया करते । एक सेठ को उनके क्रियाकलापों का पता चल गया । उसे प्रेरणा मिली तथा संत के पास जाकर बोला-"मेरे पास धर्म खाते में पाँच सौ रुपये हैं, उनका क्या करूँ ?" संत ने सहज स्वभाव से कहा-"जिसे तुम दीन-हीन समझते हो उसे दान कर दो ।"

सेठ जी ने देखा एक दुबला-पतला अंधा, भूखा मनुष्य जा रहा है । उन्होंने उसे सौ रुपये देकर कहा-"सूरदास जी आप इन रुपयों से भोजन, वस्त्र तथा आवश्यक वस्तुएँ ले लें । अंधा आशीर्वाद देता हुआ चला गया । सेठ जी को न जाने क्या सूझा उसके पीछे चले, आगे चलकर उन्होंने देखा कि उस अंधे ने उन पैसों से खूब मांस खाया, शराब पी तथा जुए के अड्डे पर जाकर वे रुपये दाँव पर लगा दिए । वह सब रुपये हार गया । सेठ जी को ग्लानि हुई । एक क्षण के लिए दान, धर्म से विश्वास हट गया । परंतु वे साधु के पास गए । उन्होंने सारी घटना सुनाई ।

संत जी मन ही मन मुस्कराये तथा उसे अपना बचाया हुआ पैसा देते हुए कहा-"आज इसे किसी आवश्यकता वाले को दे देना । सेठ जी ने आगे जाकर एक दीन, दरिद्र, भिखारी को वह पैसा दिया । छिपकर सेठ उसके पीछे हो लिया । कुछ आगे चलकर उसने अपनी झोली में से निकाल कर मरी हुई एक चिड़िया फेंक दी, जिसे वह भूनकर खाता । एक पैसे के चने खरीद कर खाये ।" सेठ जी ने यह घटना संत जी को सुनाई । संत बोले-"वत्स ! तुम्हारा अनीतिपूर्वक कमाया बिना श्रम का धन था एवं मेरा परिश्रम से कमाया धन । नीति और अनीतिपूर्वक कमाए हुए धन में यही अंतर होता है । अब आया न समझ में कमाई का अंतर ?"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

राजेन्द्र बाबू ने जूते लौटाए

स्वर्गीय राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद एक बार कई राज्यों का दौरा करने के बाद राँची पहुँचे । वहाँ उनके पैर में दर्द होने लगा । पता चला कि उनके जूतों के तल्ले घिस गए तथा कीलें ऊपर उभर आयी हैं । राजेन्द्र बाबू अहिंसक जूतों का ही प्रयोग करते थे । उनके शिविर में १० मील दूर ही अहिंसक चर्मालय केन्द्र था । वहाँ सचिव को भेजकर नया जोड़ा मँगवाया । जूते पाँव में डालकर उन्होंने कीमत पूछी, तो उत्तर मिला–"उन्नीस रुपये ।"

"गत वर्ष तो ऐसे जूते ग्यारह रुपये में लिए थे ।"

"ग्यारह रुपये वाले जूते इनसे कमजोर तथा कठोर हैं ।"–सचिव ने उत्तर दिया ।

राजेन्द्र बाबू को संतोष नहीं हुआ । उन्होंने कहा कि जब ग्यारह रुपये के जूते से काम चल सकता है, तब उन्नीस रुपये क्यों खर्च किये जाँय ? अत: इसे लौटाकर ग्यारह रुपये वाला जोड़ा मँगवाओ ।

राष्ट्रपति जी वहाँ तीन दिन ठहरे । उन्होंने किसी आने-जाने वाले से जूता बदलवाया । सचिव को मोटर द्वारा जूता बदलने नहीं भेजा । उन्होंने कहा–"जितने रुपये जूते में बचाएँगें, उतने पेट्रोल में लग जायेंगे ।"

यद्यपि बात छोटी सी थी । परंतु राष्ट्र की संपत्ति की एक-एक पाई का ध्यान रखने वाले राजेन्द्र बाबू के लिए तो छोटी सी बात भी बहुत गंभीर थी । ये छोटी-छोटी बातें ही तो व्यक्ति को बड़ा बनाती हैं ।

उद्योगपति श्रीराम का विवेक

दिल्ली के प्रख्यात उद्योगपति लाला श्रीराम का जीवन २५ रुपये मासिक की नौकरी से आरंभ हुआ । उपार्जनशीलता और प्रामाणिकता के सहारे वे उन्नति करते गए और कई मिलों के स्वामी बन गए । करोड़पति होते हुए भी उन्होंने अपनी आवश्यकताएँ सीमित रखीं तथा कमाया हुआ धन सार्वजनिक संस्थाएँ चलाने में खर्च किया । इतने कुशल और उदार व्यक्ति कदाचित् ही कहीं देखने को मिलते हैं ।

द्विवेदी जी की सुनियोजित मितव्ययिता

सरस्वती के संपाादक पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी ने उस पद पर २५ रुपये मासिक से काम आरंभ किया था । बढ़ते-बढ़ते अंतिम समय उन्हें १५० रुपये तक वेतन मिलने लगा था । इस रकम को उनने इतनी मितव्ययिता से खर्च किया कि बचत के रुपयों को कितने ही जरूरतमंदों की सहायता में लगाते रहे । उनका निजी खर्च बहुत सीमित था । एक पैसा भी निरर्थक कामों में खर्च न करते थे ।

नोबेल की कमाई कई गुनी फली

अलफ्रेड नोबेल ने डाइनामाइट जैसे कितने ही आविष्कार करके अपार धनराशि कमाई । बचपन की गरीबी उनके पीछे बहुत दिन न रही । अपनी संपत्ति में से दो भतीजों को पाँच-पाँच हजार पौंड देकर शेष सारी संपदा ८५ लाख डालर का एक ट्रस्ट बना दिया जो बढ़कर करोड़ों की हो गई है और जिसके ब्याज से हर वर्ष छ: विषयों में–मानवता की सेवा करने वाले मूर्धन्य व्यक्तियों को प्राय: एक-एक लाख रुपयों का पुरस्कार दिया जाता है । कायिकी या चिकित्साशास्त्र, भौतिक, रसायन शास्त्र, साहित्य, विश्व शांति और अर्थशास्त्र इन छ: विषयों पर हर वर्ष पुरस्कार दिए जाते हैं । नोबेल से जब पूछा गया कि डाइनामाइट तो हानिकर वस्तु है, उससे आपने पैसा क्यों कमाया ? तब उनने उत्तर दिया–किसी वस्तु का सदुपयोग करने पर वह लाभदायक होती है, दुरुपयोग होने पर हानिकारक । डाइनामाइट से चट्टान तोड़ने जैसे काम लाभदायक होंगे ।

विपत्कालस्य हेतोः स उन्नतेश्च प्रयोजनात् ।
वित्तस्य संग्रहः कार्यो दक्ष आये व्यये भवेत ।। ७४ ।।
प्रदर्शनेषु चाऽयोग्यजनानां परितोषणे ।
व्यसनेषु कुरीतीनां पालने वित्तनाशनम् ।। ७५ ।।
नैव क्वाऽपि विधातव्यं बुद्धिमत्वमिदं स्मृतम् ।
एतत्तथ्यविदः सन्ति सुखिनः संस्कृता अपि ।। ७६ ।।

भावार्थ–कुसमय के लिए तथा उत्थान प्रयोजनों के लिए धन की बचत की जाय । आय-व्यय में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सावधानी रखें । दुर्व्यसनों में, उद्धत प्रदर्शनों में, अनुपयुक्त लोगों की आवभगत में, कुरीतियों के परिपालन में पैसों का दुरुपयोग न होने देना ही बुद्धिमत्ता है । जो इस तथ्य को समझते और अपनाते हैं, वे परिवार सुखी रहते, सुसंस्कृत कहलाते हैं ॥ ७४–७६॥

व्याख्या–परिवार की सुख-शांति के मूल में एक ही बीज मंत्र काम करता है–सुव्यवस्था, आर्थिक सुनियोजन एवं उपलब्ध साधनों का बुद्धिमानीपूर्वक सदुपयोग । आड़े समय में आने वाली विवशताओं से बचने के लिए जहाँ अपव्यय रोक कर धन संग्रह जरूरी है, वहाँ उसका उचित कार्यों में उपयोग भी । अहंता प्रदर्शन वृत्ति पर रोकथाम लगा कर जहाँ पैसे का दुरुपयोग रोकना जरूरी है, वहाँ उसे श्रम-नीति की कमाई से एकत्र करना भी अनिवार्य है । यह सब सुनियोजित विधि-व्यवस्था के बलबूते संभव है, जो हर गृहपति को अपनाना अभीष्ट है ।

भगतसिंह की विवेकशीलता

क्रांतिकारी सरदार भगतसिंह को उन दिनों निर्वाह में कठिनाई अनुभव हो रही थी । भाई शार्दूलसिंह अमृतसर कांग्रेस के प्रमुख थे । उन्होंने कांग्रेस दफ्तर में ही १५० रुपये मासिक की नौकरी दिला दी ।

भगतसिंह ने मात्र ३० रुपये मासिक ही स्वीकार किए और कहा–"पैसा न बटोरना है, न उड़ाना । औसत भारतीय निर्वाह की दृष्टि से हमें इतने में ही काम चलाना चाहिए ।"

सारी विश्व वसुधा को एक परिवार मानने वाले महापुरुषों का दृष्टिकोण ऐसा ही उच्चस्तरीय होता है ।

सौभाग्य लक्ष्मी क्यों गईं ?

धन लक्ष्मी वहीं विराजती हैं, जहाँ दुरुपयोग न होता हो, जहाँ सदैव पुरुषार्थ में निरत रहने वाले व्यक्ति बसते हों ।

बलि अपने समय के धर्मात्मा राजा थे । उनके राज्य में सतयुग विराजता था ।

सौभाग्य लक्ष्मी बहुत समय तो उस क्षेत्र में रहीं, पर पीछे अनमनी होकर किसी अन्य लोक को चली गईं । इन्द्र को असमंजस हुआ और इस स्थान-परिवर्तन का कारण पूछ ही बैठे ।

सौभाग्य लक्ष्मी ने कहा–"मैं उद्योग लक्ष्मी से भिन्न हूँ । मात्र पराक्रमियों के यहाँ ही उसकी तरह नहीं रहती । मेरे निवास में चार आधार अपेक्षित होते हैं–(१) परिश्रम में रस, (२) दूरदर्शी निर्धारण, (३) धैर्य और साहस, (४) उदार सहकार ।"

बलि के राज्य में जब तक यह चारों आधार बने रहे, तब तक वहाँ रहने में मुझे प्रसन्नता थी । पर अब जब सुसंपन्नों द्वारा उन गुणों की उपेक्षा होने लगी, तो मेरे लिए अन्यत्र चले जाने के अतिरिक्त और कोई चारा न था ।

कमाई का दर्द

एक सद्गृहस्थ लुहार था । श्रम और कुशलता से परिवार का पालन-पोषण भली प्रकार कर लेता था । उसके लड़के को अधिक खर्च करने की आदत पड़ने लगी । पिता ने पुत्र पर प्रतिबंध लगाया, कहा–"तुम अपने श्रम से चार चवन्नियाँ भी कमा कर ले आओ, तो तुम्हें खर्च दूँगा अन्यथा नहीं ।"

लड़के ने प्रयास किया, असफल रहा तो अपनी बचत की चार चवन्नियाँ लेकर पहुँचा । पिता भट्टी के पास बैठा था । उसने हाथ में लेकर चवन्नियाँ देखीं तथा कहा–"यह तेरी कमाई हुई नहीं हैं ।" यह कहकर उन्हें भट्टी में फेंक दिया । लड़का शर्मिंदा होकर चला गया ।

दूसरे दिन फिर कमाई की हिम्मत न पड़ी, तो माँ से चुपके से माँग कर ले गया । उस दिन भी वही हुआ । तीसरे दिन कहीं से चुरा लाया । परंतु पिता को धोखा न दिया जा सका । वह हर बार 'मेहनत की कमाई नहीं' कहकर उन्हें भट्टी में फेंकता रहा ।

लड़के ने समझ लिया बिना कमाए बात नहीं बनेगी । दो दिन मेहनत करके वह किसी प्रकार चार चवन्नियाँ कमा लाया । पिता ने उन्हें देखकर भी वही बात दोहरायी तथा भट्टी में फेंकने लगा । लड़के ने चीखकर पिता का हाथ पकड़ लिया । बोला–"क्या करते हैं पिताजी, मेरी मेहनत की कमाई इस बेदर्दी से भट्टी में मत फेंकिए ।"

पिता मुस्कराया बोला–"बेटा ! अब समझे मेहनत की कमाई का दर्द । जब तुम निरर्थक कामों में मेरी कमाई खर्च कर देते हो, तब मुझे भी ऐसी ही छटपटाहट होती है ।

पुत्र की समझ में बात आ गयी, उसने दुरुपयोग न करने की कसम खायी और पिता का सहयोग करने लगा ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कुसमय का ध्यान क्यों न रखा ?

मधुमक्खी और तितली एक ही पेड़ पर रहती थी । अक्सर वाटिका में फूलों के पास ही मिल जातीं । एक दूसरे की कुशल पूछतीं और अपने काम पर लग जातीं ।

बरसात आ गयी । लगातार झड़ी लगी थी । तितली उदास बैठी थी । मधुमक्खी ने पूछा–"बहन ! क्या बात है ? ऐसे सुंदर मौसम में उदासी कैसी ?"

तितली बोली–"मौसम की सुंदरता से पेट की भूख अधिक प्रभावित कर रही है । कहीं भोजन लेने जा नहीं सकती, इसीलिए परेशान हूँ ।"

मधुमक्खी बोली–"बहन ! ऐसे समय के लिए कुछ बचत क्यों नहीं की ? कल की बात न सोचने वाले यूँ ही परेशान होते हैं ।" ऐसा समझाकर मधुमक्खी ने संचित कोश में से तितली की भी भूख शांत की ।

सुव्यवस्थाविधौ ध्यानं स्वच्छतायां तथैव च ।
प्रत्येकस्य सदस्यस्य भवेदेव निरन्तरम् ।। ७७।।
अस्तव्यस्तत्वभावोऽयं मालिन्यमपि नो क्वचित् ।
उद्भवेदव्यवस्थायां मालिन्यं च कुरूपता ।। ७८।।
तिष्ठतो येन व्यक्तित्वं हीयते कथितं त्विदम् ।
कुसंस्कारयुतो भावस्तस्मादेनं परित्यजेत् ।। ७९।।
कलाकारितया ख्याते स्वच्छता च सुसज्जता ।
सुरुचेर्दर्शनं तत्र शरीरं पुरुषा यथा ।। ८०।।
स्वच्छसुन्दरमेवाऽपि कुर्वन्त्येव निरन्तरम् ।
तथोपकरणान्यत्र बस्त्रपात्रगृहानपि ।। ८१।।

भावार्थ–स्वच्छता और सुव्यवस्था की ओर घर के हर सदस्य का ध्यान रहे । सादगी अस्त–व्यस्तता कहीं भी पनपने न पाये । अव्यवस्था में ही गंदगी और कुरूपता है । इसी को कुसंस्कारिता कहा गया है, इससे व्यक्तित्व घटिया बनता है । स्वच्छता और सुसज्जा को ही कलाकारिता कहते हैं । इसमें सुरुचि का दर्शन होता है । शरीर को स्वच्छ, सुंदर रखने की तरह ही वस्त्र, उपकरण, पात्र, मकान आदि सभी परिवार प्रयोग की वस्तुओं की सफाई पर पूरा ध्यान दिया जाय ।। ७७–८१ ।।

व्याख्या-गृह की स्वच्छता और आंतरिक व्यवस्था एक कला है । अपनी स्वयं की स्वच्छता, अपने जीवन में सादगी तथा घर की सफाई, मरम्मत, सादगीपूर्ण सज्जा और सुव्यवस्था पर ध्यान रखना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है । इस कर्तव्य की उपेक्षा से क्लेश ही भोगना पड़ता है और इसे पूरा करने वाले को प्रसन्नता, प्रफुल्लता एवं प्रगति का पुरस्कार प्राप्त होता रहता है । स्वच्छता से भगवान् की समीपता बतलाई गई है । जो शुचि और स्वच्छ है, वह एक प्रकार से ईश्वर के सन्निकट ही रहता है । भगवान् को शुचिता, स्वच्छता एवं पवित्रता परम प्रिय है । रोम के प्रसिद्ध महात्मा एपिक्टेरस युवकों को सदा यही उपदेश दिया करते थे कि स्वच्छतापूर्वक रहो और सुंदर बनो । वे बाह्य वस्तुओं की सुंदरता और स्वच्छता पर विशेष ध्यान देते थे और कहा करते थे कि जो युवक स्वच्छ रहता है, साफ-सुधरे कपड़े पहनता है, अपने व्यवहार की वस्तुओं को शुद्ध, स्वच्छ और सुव्यवस्थित रखता है, वह अस्वच्छ एवं अस्त-व्यस्त-अव्यवस्थित रहने वाले युवकों की अपेक्षा तत्वज्ञान शीघ्र ही प्राप्त कर लेगा और दीर्घजीवी होगा ।

सज्जनता की पहली निशानी है स्वच्छता तथा योग्यता एवं प्रतिभा की प्रथम शर्त है–सुव्यवस्था । परिवार को सज्जन और प्रतिभावान बनाना चाहें, तो उनमें स्वच्छता और व्यवस्था की वृद्धि और क्षमता पैदा की जानी चाहिए ।

सफाई एक ललित कला

महात्मा गाँधी भंगी के काम को शानदार काम कहते । स्वच्छता का उससे सीधा संबंध होता है । स्वच्छ वस्तु में ही कलात्मकता दिखती है । वे कहते थे–कीमती मकान, कीमती कपड़ा और सुंदर पुरुष यदि गंदा है, तो उससे सभी को अरुचि होती है । इसके विपरीत कच्चा मकान, सादा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कपड़ा और सामान्य व्यक्ति भी साफ-सुथरा हो, तो आकर्षक लगता है उससे कलात्मकता दिखने लगती है ।

पांडवों की परीक्षा

अर्जुन ने लक्ष्यवेध करके द्रौपदी का स्वयंवर जीत लिया । सभी भाई वेश बदले हुए थे । द्रुपद तथा उनके मंत्रियों ने सोचा, लक्ष्य वेध कर लेने से शर्त तो पूरी हुई, पर ये सुसंस्कारी-कुलीन व्यक्ति हैं या नहीं, यह कैसे पता लगे ।

उन्होंने उनके निवास की व्यवस्था की । उसमें सभी आवश्यक वस्तुएँ थीं, किन्तु उन्हें बेतरतीब रख दिया गया । पांडव उस निवास में ठहर गए । दूसरे दिन देखा गया कि सारी वस्तुएँ यथास्थान हैं, उनकी स्वच्छता बढ़ गई है । यह देखकर मंत्रियों ने निर्णय कर लिया कि निश्चित ही किसी सम्भ्रांत-सुसंस्कृत परिवार के व्यक्ति हैं ।

पहले सफाई सीखी

एक अस्त-व्यस्त युवक सुकरात के पास पहुँचा, बोला-"मुझे अध्यात्म के विषय में शिक्षा दीजिए ।" सुकरात ने कहा-"पहला पाठ है-सफाई सीखो । नहा-धोकर आओ । बाल या तो कटवाओ और यदि रखे हो तो साफ करके तेल डालकर कंघी से सँभालकर आओ । अध्यात्म सुसंस्कारिता को कहते हैं । पहले अस्वच्छता का प्रत्यक्ष कुसंस्कार हटाओ, तब अन्य कुसंस्कार हटाने की बात सोची जा सकेगी ।"

सुसज्जितानि स्वच्छानि कर्तुमन्यान्यपि स्वयम् ।
वस्तूनि पततां नित्यं व्यक्तित्वोदयहेतवे ।। ८२ ।।
कृमिकीटादयो नैव तिष्ठेयुरिति यत्यताम् ।
पवनस्यातपस्याऽपि प्रवेशो भवने भवेत् ।। ८३ ।।
वस्त्राणां स्वच्छताऽऽवासगृहस्याऽपि च स्वच्छता ।
सुव्यवस्था विधिर्नूनं परिवारगतान् नरान् ।। ८४ ।।
सत्प्रवृत्तिपरान् पक्वप्रकृतींश्च समानपि ।
विधत्तः सद्गुणश्चायं महत्वमहितो भुवि ।। ८५ ।।
लाभः सर्वैर्नरैरेष कर्त्तुं स्वर्गं गृहान् स्वकान् ।
सदस्याश्च गृहस्थास्ते देवत्वं यान्तु सत्वरम् ।। ८६ ।।

भावार्थ-अन्य वस्तुओं को स्वच्छ और सुसज्जित रखने से व्यक्तित्व में वृद्धि होती है । कृमि-कीटकों को जमने न दिया जाय । धूप और हवा का हर जगह प्रवेश हो । वस्त्रों की सफाई, निवास गृह की स्वच्छता, सुव्यवस्था करते रहने से परिवार के सदस्यों के स्वभाव में सत्प्रवृत्ति की परिपक्वता बनती-बढ़ती है । यह एक महत्वपूर्ण सद्गुण है । अपने घर को स्वर्ग बनाने के लिए यह गुण सभी को प्राप्त करना चाहिए, ताकि उस घर में रहने वाले सदस्य शीघ्र देवत्व को प्राप्त हो जाँय ।। ८२-८६ ।।

व्याख्या-स्वच्छता परमात्मा का सान्निध्य है तथा निर्मलता आत्मा का प्रकाश है । आंतरिक स्वच्छता का आधार भी शारीरिक और बाह्य स्वच्छता ही है । आंतरिक शुचिता एवं स्वच्छता का अभ्यास बाह्य पवित्रता, सुसज्ञा और स्वच्छता अपनाकर ही सिद्ध किया जा सकता है, क्योंकि बाह्य स्वच्छता ही आंतरिक स्वच्छता का हेतु है । यदि परिवार के हर सदस्य अपनी तथा अपने पास-पड़ोस की गंदगी दूर करके उसके स्थान पर स्वच्छता एवं पवित्रता को पूरी तरह स्थापित कर लें, तो काल्पनिक स्वर्ग के स्थान पर जीवन के यथार्थ स्वर्ग को धरती पर और अपने घर पर ही देख सकते हैं । सुसज्ञा, स्वच्छता एवं पवित्रता की पराकाष्ठा ही वह मनुष्यता है, जिसकी परिणति देवत्व में होना असंदिग्ध है ।

देवत्व का प्रधान गुण है-स्वच्छता । मंदिर तथा पूजन सामग्री स्वच्छ न हो, तो देवता स्वीकार नहीं करते । स्पष्ट है कि देवत्व के विकास के लिए स्वच्छता और सुव्यवस्था कितनी आवश्यक है । व्यक्तित्व के विकास का यह अमोघ साधन है ।

महात्मा बनने का सूत्र

गाँधी जी के आश्रम में सफाई और व्यवस्था के कार्य हर व्यक्ति को अनिवार्य रूप से करने पड़ते थे । एक समाज को समर्पित श्रद्धावान् बालक उनके आश्रम में आकर रहा । स्वच्छता-

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्यवस्था के काम उसे भी दिए गए । उन्हें वह निष्ठापूर्वक पूरा करता भी रहा । जो बतलाया गया, उसे जीवन का अंग बना लिया ।

जब आश्रम निवास की अवधि पूरी हुई, तो गाँधी जी से भेंट की और कहा–"बापू ! मैं महात्मा बनने के गुण सीखने आया था, पर यहाँ तो सफाई व्यवस्था के सामान्य कार्य ही करने को मिले । महात्मा बनने के सूत्र न तो बतलाये गए, न उनका अभ्यास कराया गया ।"

बापू ने सिर पर हाथ फेरा, समझाया, कहा–"बेटे ! तुम्हें यहाँ जो संस्कार मिले हैं, वे सब महात्मा बनने के सोपान हैं । जिस तन्मयता से सफाई तथा छोटी-छोटी बातों में व्यवस्था बुद्धि का विकास कराया गया, यही वृद्धि मनुष्य को महामानव बनाती है ।"

गाँधी जी ने इसी प्रकार छोटे-छोटे सद्गुणों के माहात्म्य समझाते हुए अनेक लोकसेवियों के जीवन-क्रम को ढाला, उन्हें सच्चे निरहंकारी स्वयंसेवक के रूप में विकसित किया ।

वैज्ञानिक की परीक्षा

एडीसन महान् वैज्ञानिक हुए हैं । गरीब माँ के बेटे थे, पर बचपन से ही वैज्ञानिक बनने की बात किया करते थे । माँ ने सोचा इसे किसी वैज्ञानिक के पास रख दूँ, तो शायद इसका समाधान हो जाय । विज्ञान पढ़ाने की क्षमता तो उसमें थी नहीं ।

एक वैज्ञानिक के पास वे एडीसन को ले गयीं । वैज्ञानिक ने एडीसन को एक झाड़ू देकर अपनी प्रयोगशाला की सफाई करने को कहा । एडीसन ने हर काम बड़े करीने से किया । कहीं किसी भी कोने में भी गंदगी न छोड़ी और हर सामान सफाई के बाद यथास्थान जमा दिया ।

वैज्ञानिक ने यह सब देखकर कहा–"इस बालक में वैज्ञानिक बनने के गुण हैं । आप इसे मेरे पास छोड़ दें । यह वैज्ञानिक जरूर बन जायेगा । सफाई और व्यवस्था से मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास की क्षमता बढ़ती है और उसी से उसके स्तर का पता भी लग जाता है ।"

आगामिषु दिनेष्वेव समाजस्य नवास्थितिः ।
प्रज्ञायुगे समाश्रित्याधारं वै पारिवारिकम् ।। ८७।।
भविता यत्र नीतिस्तु वसुधैव कुटुम्बकम् ।
स्वीकृता स्यात्तथा सर्वे ज्ञास्यन्त्यात्मानमुत्तमम् ।। ८८।।
सदस्यं सन्ततं विश्वपरिवारगतं स्वतः ।
सुसंस्कृते समाजे स्याद् ब्रह्मविम्बोदयास्थितिः ।। ८९।।
एतदर्थं नरैः सर्वैर्विधेयोऽभ्यास उत्तमः ।
महतः परिवारस्य सञ्चालनविधौ तथा ।। ९०।।
सदस्यतां सुमान्या च ग्रहीतुमपि सर्वथा ।
विनाऽनेन समृद्धिर्नो भवेत् सर्वसुखवहा ।। ९१।।

भावार्थ–अगले दिनों प्रज्ञायुग में समाज का अभिनव निर्माण पारिवारिकता के आधार पर ही होगा । 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की नीति अपनाई जायेगी । सभी अपने को विश्व परिवार का सदस्य मानेंगे । मानो विराट् ब्रह्म की ही सुसंस्कृत समाज में झाँकी परिलक्षित होने लगेगी । इसके लिए हर किसी को विशाल परिवार का संचालन कर सकने तथा उसका सम्मानित सदस्य बनने का अभ्यास करना चाहिए । बिना इसके विश्व में वैसी समृद्धि संभव नहीं, जो प्रत्येक को सुख दे सके ।। ८७–९१ ।।

व्याख्या–प्रथम दिन के समागम के समापन पर सत्राध्यक्ष एक महत्वपूर्ण घोषणा करते हुए, उज्ज्वल भविष्य की सम्यक् तैयारी का सूत्र भी बतला रहे हैं । यह युग संधिकाल है, एक युग समाप्त होकर दूसरा प्रारंभ होगा । नया युग-प्रज्ञा युग कहलायेगा, जिसमें मानवीय उत्कर्ष के नए कीर्तिमान् बनेंगे ।

उस महान् युग का आधार भी श्रेष्ठ पारिवारिक अनुशासन ही होगा । उसके अनुरूप जिनके मानस, जिनके अभ्यास नहीं बन पाएँगे, वे उस प्रवाह में ठीक से खप न पाने के कारण दुःख, कठिनाई,

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अनुभव करेंगे जो पहले से वैसा विकास-अभ्यास पा लेंगे वे श्रेय पायेंगे, सुखी रहेंगे ।

सामान्य रूप से लोग छोटी इकाइयों में रह लेते हैं । विशाल परिवारों में मानवीय गुणों, आत्मीयता आदि का अधिक विकसित होना आवश्यक हो जाता है । दो संगीतज्ञ एक साथ मजे में गा-बजा सकते हैं, किसी विशेष अभ्यास की जरूरत नहीं पड़ती । पर बड़े आर्केस्ट्रा में बजाने के लिए सधे हुए कलाकारों को भी पर्याप्त अभ्यास करना पड़ता है ।

प्रज्ञा युग में वसुधा पर रहने वाले एक कुटुम्ब का भाव रखेंगे, यही नहीं उससे भी ऊपर समाज में विराट् ब्रह्म की झाँकी स्पष्ट होगी । इस स्तर के परिवार के योग्य विकसित पारिवारिक भावों का अभ्यास अचानक सहज ही नहीं हो जायेगा । उसके लिए लंबा साधनात्मक अभ्यास चाहिए । महर्षि उसी अभ्यास को पहले से बना लेने का आग्रह करते हैं । पिछला इतिहास बतलाता है कि जब-जब कोई बड़ा परिवर्तन हुआ है, श्रेष्ठ जन पहले से उसके अनुरूप अभ्यास बनकर अग्रणी रहते रहे हैं ।

मत्स्यावतार के पूर्व महाराज मनु ने अपनी संवेदनाएँ उस स्तर की बना ली थी कि उन्हें सृष्टि बीज सम्भालने की जिम्मेदारी सौंपी जा सकी ।

रामावतार के पूर्व ही ऋषि तथा देवावतार वानर अपने साधना क्रम तथा अभ्यास उन परिस्थिति के अनुरूप बनाने लगे थे ।

महाभारत विशाल भारत के लिए पांडवों को परस्पर सहयोग तथा तप तितीक्षामय जीवन का अभ्यास लंबे समय तक कराया गया था । यदुवंशी उस पारिवारिक शालीनता के अनुरूप स्वभाव न ढाल सके, तो उन्हें नष्ट ही होना पड़ा ।

पारिवारिक सूत्र के माध्यम से सतयुगी समाज बनाने का जो तत्वदर्शन यहाँ बतलाया गया, वह सभी के लिए अपनाये जाने योग्य है । पारिवारिकता को एवं इससे जुड़े गुण समुच्चय को अपनाए बिना न आत्म विकास संभव है, न विश्व कल्याण ही ।

समाप्तिं समयोऽगात्स जयघोष पुरस्सरम् ।
सहैव शान्तिपाठेन तत्र नीराजनेन च ।। ९२।।
प्रथमस्य दिनस्याऽयं समाप्तिं प्रययौ ततः ।
उपदेशो जनाः सर्वेऽप्यनयाऽमृतवर्षया ।। ९३।।
आत्मनः कृतकृत्यांश्च मन्यमाना मुहुर्मुहुः ।
उत्साहिता स्ववासाश्च ययुस्ते दृढपौरुषाः ।। ९४।।

भावार्थ–समय समापन की ओर था । शांतिपाठ, आरती और जयघोष के साथ प्रथम दिन का प्रवचन समाप्त हुआ । विदा होते समय अमृत वर्षा से श्रवणकर्त्ता गृहस्थगण अपने को कृतकृत्य अनुभव कर रहे थे तथा अत्यंत उत्साहित प्रतीत हो रहे थे, उनके पुरुषार्थ में दृढ़ता आ गयी थी ।। ९२–९४।।

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्रीधौम्यऋषिप्रतिपादिते "परिवारसंस्थे," ति
प्रकरणो नाम प्रथमोऽध्यायः ।। १।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

।। अथ द्वितीयोऽध्यायः ।।

卐 गहस्थ-जीवन प्रकरणम् 卐

गङ्गाद्वारे तु कुम्भस्य पर्वणः समये शुभे ।
गङ्गातटे सुसम्मर्दो नृणां धर्मात्मनां महान् ।। १ ।।
वर्द्धते स्म तथा श्रद्धा तीर्थयात्रिनृणां शुभा ।
गङ्गेव गतिशीला च प्रोच्छन्तीव ददृशे ।। २ ।।
सम्बोध्योपस्थितान् धौम्यो महर्षिः स उवाच च ।
जगन्मङ्गलबोधिन्यां वाचि शान्ते तपोवने ।। ३ ।।

भावार्थ–गंगा तट पर हरिद्वार क्षेत्र में संपन्न हो रहे कुम्भ पर्व के आयोजन में धर्मप्रेमियों की भीड़ बढ़ती ही जा रही थी । गंगा की तरह तीर्थ–यात्रियों की श्रद्धा भी उमँगती और प्रगतिशील दृष्टिगोचर हो रही थी । शांत तपोवन के समान उस स्थान पर महर्षि धौम्य ने उपस्थित जनों को उद्‌बोधित करते हुए कहा, उनकी वाणी में जगत् की कल्याण कामना टपक रही थी ।। १–३ ।।

व्याख्या–कुम्भ पर्व पर आयोजित इस विशेष सत्र में श्रोताओं की भीड़ का विस्तार बढ़ना उतने महत्व की बात नहीं, जितनी कि श्रद्धा में प्रगति होना । भीड़ तो हाट-बाजारों में बाजीगर एवं नट भी खूब इकट्ठी कर लेते हैं । हल्के मनोरंजन-कौतुक के नाम पर नित्य भीड़ें एकत्र होती देखी जा सकती हैं, पर इनसे लोकहित का प्रयोजन सधता नहीं । कुम्भ पर्वों के आयोजन सूत-शौनक परंपरा में होते ही इसीलिए थे कि जनमानस में श्रद्धा उभार कर सत्प्रवृत्तियों का पोषण उन्हें दिया जाय । यह सत्र तो गृहस्थों का होने के नाते और भी महत्वपूर्ण था ।

विशेष बात यहाँ पर यह देखी जा सकती है कि श्रद्धा उपस्थित समुदाय में है भी एवं वह प्रगतिशील है । आदर्शों पर दृढ़ रहना भर पर्याप्त नहीं है । जब अंतः से उद्‌भूत भावनाएँ काल-परिवर्तन के साथ लोकोपयोगी संशोधनों को भी सहज भाव से स्वीकार करने लगें, तो श्रद्धा को प्रगतिशील माना जा सकता है । ऐसी श्रद्धा उमँगने का माहात्म्य प्रतिपाद्य विषय की श्रेष्ठता एवं वक्ता की विद्वता से भी बढ़कर है । जहाँ जनसाधारण को जनहित की कामना से किए जा रहे आयोजन का महत्व समझ में आ जाता है, वहाँ सुपात्र श्रोता स्वतः ही फूल पर मधुमक्खी की तरह रमने लगते हैं ।

धौम्य उवाच–

भद्रा ! सद्‌गृहस्थास्तु भवन्तः सर्व एव हि ।
नात्मानमाश्रमाद्धीनं कस्माच्चिदपि मन्यताम् ।। ४ ।।
लोभमोहविलासानां गृह्यन्ते दुष्प्रवृत्तयः ।
पतनस्य महागर्ते तर्हि पातो नृणां ध्रुवम् ।। ५ ।।
ईदृशाऽवसरा नूनं गृहस्थे सम्भवन्त्यलम् ।
परं विवेकशीलास्तु रक्षन्त्यात्मानमात्मना ।। ६ ।।
दुर्बलाया मनोभूमेः प्रवाहे प्रवहन्ति ये ।
ईदृशीमधिगच्छन्ति प्रायस्ते पुरुषा गतिम् ।। ७ ।।
कर्त्तव्यधर्मं जानन्ति नरा ये ते गृहस्थजाम् ।
मर्यादां परिजानन्तः पालयन्ति सदा च ताम् ।। ८ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ईदृशानां नृणामेव कृते सञ्जायते ध्रुवम् ।
गृहस्थाचरणं स्वस्य विश्वस्याऽपि तथैव च ।। ९।।
कल्याणकारको हेतुरुभयोरपि पूरकः ।
श्रूयतां सावधानैश्च भवद्भिः समुपस्थितैः ।। १०।।

भावार्थ–महर्षि धौम्य ने कहा–हे भद्रजनो ! आप लोग सद्गृहस्थ हैं । किसी आश्रम से अपने को हीन न समझें । लोभ, मोह और विलास की दुष्प्रवृत्तियाँ अपनाने पर कोई भी निश्चित रूप से पतन के गर्त में गिर सकता है । ऐसे अवसर गृहस्थाश्रम में अपेक्षाकृत अधिक रहते हैं, लेकिन विवेकशील स्वयं को इनसे बचाए रखते हैं । दुर्बल मनोभूमि के प्रचलन–प्रवाह में बहने वाले ही प्रायः ऐसी दुर्गति प्राप्त करते देखे जाते हैं । जिन्हें कर्तव्यधर्म का ज्ञान है, वे गृहस्थ की मर्यादा को समझते तथा उसका पालन करते हैं । ऐसों के लिए गृहस्थ का आचरण आत्म–कल्याण और विश्व–कल्याण के दोनों ही प्रयोजन पूरे करने का निमित्त कारण बनता है । हे उपस्थितजनो ! तुम सब सावधान होकर सुनो ।। ४–१०।।

अर्थ-सामान्यतया सभी आश्रमों में गृहस्थ जीवन को सर्वाधिक माया, प्रपंचमय मानकर अन्य आश्रमों से छोटा माना जाता है । इस मान्यता को भ्रांतिपूर्ण बतलाते हुए, सत्राध्यक्ष महर्षि धौम्य उपस्थित श्रोताओं को एक मनोवैज्ञानिक ग्रंथि से मुक्त होने का उद्बोधन देते दृष्टिगोचर हो रहे हैं ।

दो अतिवाद इस आश्रम में देखने को मिलते हैं । अत्यधिक मोह-ममता के मायाजाल में फँसकर कइयों को और भी अधिक उलझते-पतित होते देखा जा सकता है । दूसरी ओर कुछ व्यक्ति भ्रांतिवश अथवा कायरतावश इसे त्यागकर वैराग्य की बात करने लगते हैं, जबकि वह मार्ग इस आश्रम की कसौटी पर खरा उतरने वाले साधकों के लिए है एवं इससे भी अधिक दुष्कर है ।

ऋषिश्रेष्ठ यहाँ कहते हैं कि मनुष्य के पतन का कारण, गृहस्थ जीवन नहीं, अपितु उसके निर्धारित अनुशासनों से भटक जाना है । लोभ, मोह, व्यसन आदि दुष्प्रवृत्तियाँ, चाहे गृहस्थ हों, चाहे विरक्त, किसी को नहीं छोड़तीं । इनसे जूझने के लिए तो विवेक का अवलंबन अनिवार्य है ही । गृहस्थ को उसका निमित्त कारण मानते हुए अन्य कहीं बिना मन लगे, समय काटने की अपेक्षा तो इस आश्रम को भली प्रकार निबाहते हुए विवेक का उपयोग कर दुष्प्रवृत्तियों से बचना चाहिए एवं आत्म परिष्कार की लक्ष्य सिद्धि की ओर बढ़ चलना चाहिए ।

त्याग घर का नहीं, विकारों का

एक व्यक्ति अपने चार बच्चों को अनाथ छोड़कर ही एक रात्रि घर से भाग निकला, आत्म-कल्याण के लिए । किसी संत के पास जाकर वह भगवत् प्राप्ति का उपाय पूछने लगा । उस व्यक्ति ने अपने त्याग की कहानी सुनाते हुए यों कहा–

"मेरी पत्नी उस समय सो रही थी, एकाएक बच्चा चीखा तो मुझे लगा अब पत्नी जाग पड़ेगी और मेरा घर से निकलना कठिन हो जायेगा, पर पत्नी ने बच्चे को छाती से लगाया और बच्चा चुप हो गया । मैं चुपचाप निकल आया । महात्मन् ! अब संसार की मोह-माया में फँसना नहीं चाहता ।"

साधु बोले–"मूर्ख ! भगवान तो तेरे घर में ही बैठे हैं, जिन्हें तू छोड़ आया था । जा, जब तक तू उनकी सेवा नहीं करेगा, तब तक तेरा उद्धार नहीं होगा । पहले परिवार को संभाल, अपने कर्तव्यों को पूरा कर, फिर सोचना कि पारिवारिक दायित्वों को निबाहते हुए तेरा आत्म-कल्याण का लक्ष्य पूरा हुआ या नहीं ? अध्यात्म भगोड़ों का नहीं, शूरवीरों का साथ देता है । परिवार में रहते हुए भी तेरी साधना पूरी होती रह सकती है । त्याग करना ही है, तो अंतः के विकारों एवं भ्रम-जंजालों का कर ।" व्यक्ति ने वास्तविकता समझी एवं लौट पड़ा अपने घर को, अपनी व्यावहारिक साधना की पूर्ति हेतु ।

इसी तरह शिखिध्वज को यथार्थता का बोध हुआ ।

यथार्थता का बोध

शिखिध्वज ब्रह्मज्ञानी बनना चाहते थे । उनने सुन रखा था, त्याग और वैराग्य के द्वारा ब्रह्मज्ञानी बना जा सकता है । सो उनने घर-गृहस्थी, खेती-बाड़ी आदि सभी जिम्मेदारियों को छोड़कर वन में पलायन किया और वहीं कुटी बनाकर रहने लगे ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उस वन में तपस्वी शतमन्यु रहते थे । इस नवागंतुक को एक गृहस्थी छोड़कर दूसरी बसाने के प्रयत्न में संलग्न देखकर खिन्न हुए और समझाने के लिए उनके पास पहुँचे ।

गाँव की गृहस्थी उजाड़कर वन में वही सरंजाम जुटाने से क्या लाभ ? वस्तुओं से, व्यक्तियों से तो पाला पड़ेगा ही । वैराग्य तो अहंता और लिप्सा से होना चाहिए और बन पड़े तो घर भी तपोवन बन सकता है ।

शिखिध्वज को यथार्थता का बोध हुआ, वे घर वापस लौट गए और परिवार के बीच रहते हुए सेवा-साधना में निरत रहे । एकाकी मुक्ति पाने के स्थान पर उनने समूचे परिवार को ऋषि बनाया । उनके वंशज बाल्यखिल्य ऋषियों के नाम से प्रख्यात हुए और देव संस्कृति को, समूचे जम्बू द्वीप को देवभूमि बनाने में सफल रहे ।

स्वर्ग की झाँकी

शिष्यगण गुरुदेव से स्वर्ग-नरक का विवरण पूछते रहते । गुरुदेव ने कहा-"वे दोनों इसी धरती पर हैं । कर्मों के अनुसार इसी जीवन में मिलते रहते हैं ।"

शिष्यों का समाधान नहीं हुआ तो उन्हें साथ लेकर गुरु कई परिवारों में गए और उनको कर्म तथा प्रतिफल का प्रत्यक्ष दर्शन कराया ।

नरक का दर्शन कराने वे एक बहेलिए के घर गए, जो जीव हत्या करके पेट पालता, किन्तु था सर्वथा निर्धन । बच्चे सबके सब कुकर्मी, विग्रही और दुर्गुणी । घर में प्रत्यक्ष नरक था ।

दूसरा घर वेश्या का था । युवावस्था में उसने कमाया भी खूब और गिराया भी बहुतों को; पर इस वृद्धावस्था में वह अनेक रोगों से ग्रसित हो गयी थी । तिरस्कार सहती और भिक्षा से पेट भरती थी ।

तीसरा घर एक सद्गृहस्थ का था । संयमी, परिश्रमी, उदार और सद्गुणी । पूरा परिवार सुखी-समृद्ध था । घर में स्नेह-सौजन्य बिखरा फिरता था ।

चौथा प्रवेश एक संत की कुटी में हुआ । मस्ती देखते बनती थी । शिक्षा और प्रेरणा पाने के लिए अनेक श्रेयार्थी श्रद्धपूर्वक उनके चरणों में बैठे थे ।

गुरु ने दो नरक और दो स्वर्ग के रूप दिखाए और शिष्यों से कहा-"कर्मफल के अनुरूप इन दोनों ही परिस्थितियों को कहीं भी प्रत्यक्ष देखा जा सकता है ।

गृहस्थ एक प्रत्यक्ष स्वर्ग है, इसी धरती पर है । घर में सत्प्रवृत्तियों की फसल बोकर, उससे सब कुछ पाया जा सकता है, जिसकी कि स्वर्ग में होने की अलंकारिक गाथाएँ कही जाती हैं ।

सत्प्रवृत्तियाँ विकसित करें

आत्म-कल्याण, मोक्ष, परमतत्व की प्राप्ति संबंधी बहुत सी भ्रांतियाँ व्यक्तियों में पाई जाती हैं । सत्प्रवृत्तियों का अभ्यास कहीं भी करते हुए, व्यक्ति अपना व दूसरों का हित साधन कैसे कर सकता है, इसका बड़ा सुंदर उदाहरण स्कंद पुराण की एक कथा में मिलता है ।

एक बार कात्यायन ने देवर्षि नारद से पूछा-"भगवन् ! आत्म-कल्याण के लिए विभिन्न शास्त्रों में विभिन्न उपाय-उपचार बताए हैं । गुरुजन भी अपनी-अपनी मति के अनुसार कितने ही साधन-विधानों के माहात्म्य बतलाते हैं । जप, तप, त्याग, वैराग्य, योग, ज्ञान, स्वाध्याय, तीर्थ, व्रत, ध्यान-धारणा, समाधि आदि के अनेक उपायों में से सभी को कर सकना एक के लिए संभव नहीं । फिर सामान्यजन यह भी निर्णय नहीं कर सकते, इनमें से किसे चुना जाय ? कृपया आप ही मेरा समाधान करें कि सर्व सुलभ और सुनिश्चित मार्ग क्या है ? अनेक मार्गों के भटकाव से निकालकर मुझे सरल अवलंबन का निर्देश दीजिए ।"

उत्तर देते हुए नारद ने कात्यायन से कहा-"हे मुनि श्रेष्ठ ! सद्ज्ञान और भक्ति का एक ही लक्ष्य है कि मनुष्य सत्कर्मों में प्रवृत्त हो । स्वयं संयमी रहे और अपनी सामर्थ्यों को, इन गिरों को उठाने और उठों को उछालने में नियोजित करे । सत्प्रवृत्तियाँ ही सच्ची देवियाँ हैं । जिन्हें जो जितनी श्रद्धा से सींचता है, वह उतनी ही विभूतियाँ अर्जित करता है । आत्म-कल्याण और विश्व-कल्याण की समन्वित साधना करने के लिए परोपकाररत रहना ही सर्वश्रेष्ठ है, चाहे व्यक्ति किसी भी आश्रम में हो ।"

स्कंद पुराण के इस वार्ता प्रसंग में कात्यायन की तरह अन्यान्य जिज्ञासुजनों का भी समाधान विद्यमान है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आश्रम नहीं, स्वभाव बदलो

एक युवक बड़े उद्धत स्वभाव का था । बात-बात पर आग-बबूला होता और कहने, समझाने पर संन्यासी हो जाने की धमकी देता । परिवार वालों ने आए दिन की खिच-खिच से तंग आकर उसे संन्यास की छूट दे दी ।

समीप ही नदी किनारे एक संन्यासाश्रम था । उसकी जानकारी भी युवक को थी, सो वह सीधा वहीं पहुँचा । उसके संचालक ने पहले ही उसकी उद्दंडता सुन रखी थी । पहुँचा तो रास्ते पर लाने का विचार करते हुए, और भी अधिक स्नेह दिखाते हुए पास बिठाया । संन्यास दीक्षा का प्रस्ताव किया, तो उसे दूसरे दिन देने की अनुमति मिल गयी ।

दीक्षा के विधान में पहला कर्म था, समीपवर्ती नदी में दिन निकलने के पूर्व स्नान करके लौटना । आलसी प्रवृत्ति और ठंड से डरने वाले स्वभाव में यह निर्धारण उसे अखरा तो बहुत, पर करता क्या, नियम पाले बिना कोई चारा भी न था ।

जिन कपड़ों को खूँटी पर टाँग कर युवक नहाने गया था । आश्रम के संचालक ने उन्हें फाड़ कर चिथड़े-चिथड़े कर दिया । काँपता-थरथराता वापस लौटा तो कपड़े फटे पाए । गुस्सा उसका और बढ़ रहा था ।

दीक्षा का मुहूर्त शाम का निकला । तब तक कुछ फलाहार करना उपयुक्त समझा गया, तो उसकी थाली में नमक मिले करेले रख दिए गए । कड़ुवे बहुत थे, सो गले से नीचे न उतरे ।

जल्दी उठने, ठंडक में नहाने, कपड़े फट जाने और करेले खाने के कारण वह बहुत खिन्न-उद्विग्न हो रहा था । संचालक ने उसे फिर बुलाया और कहा-"संन्यास में कोई बारात की सी दावत नहीं होती । इसमें प्रवेश करने वालों को पग-पग पर मन को मारना पड़ता है । परिस्थितियों से तालमेल बिठाना, संयम बरतना और अनुशासन पालना पड़ता है । इसी अभ्यास के लिए तो संन्यास लिया जाता है ।"

मुहूर्त आने तक युवक अपने प्रस्ताव पर पुनिर्विचार करता रहा । तीसरे प्रहर वह यह कहते हुए घर वापस लौट गया कि यदि संयम-साधना और मनोनिग्रह का नाम ही संन्यास है, तो उसे घर रहकर सुविधापूर्वक क्यों न पालूँ ?

युवक बदली हुई मनःस्थिति लेकर घर वापस लौटा । स्वभाव बदला, तो वातावरण बदलते देर न लगी । परिवार में ही उसने तपोवन जैसा वातावरण बना लिया । भ्रांतियाँ दूर हुईं तो सही राह भी मिली ।

संग्राम से जूझो, भागो मत

महर्षि अंगिरा ने गोपमाल को तिलक किया और कहा-"तात् ! मैं जानता हूँ कि तुम्हारे अंतःकरण में मुक्ति की आकांक्षा अत्यंत प्रबल है, तुम जाओ और वर्णाश्रम धर्म की मर्यादानुसार गृहस्थ धर्म का अनुशीलन करो ।"

"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है गुरुदेव ! पर यह संसार तो बंधन है, वहाँ जाकर मुक्ति जैसे जीवन लक्ष्य को भूल गया तो ?" "भूलोगे नहीं तात् ! यदि तुमने कर्म के फल में आसक्ति नहीं रखी, तो गृहस्थी जैसे कठोर उत्तरदायित्व का पालन करते हुए भी, तुम उसी लक्ष्य की ओर अपने आपको अग्रसर पाओगे । श्रावस्ती के एक ग्रामीण की कन्या हेममालिनि के साथ विवाह करो एवं सुख से जीवन बिताओ । गृहस्थ में रहकर ही व्यावहारिक जीवन की साधना करो ।"

गृहस्थी के कार्य बड़े बेढंगे होते हैं । एक बार धन के अभाव में गोपमाल को गायें बेचनी पड़ीं । गोपमाल को पता चला कि उन गायों का वध हो गया । वह स्वयं को इस पाप का कारण मानकर ग्लानि से भर गया, उसका मन छटपटाने लगा एवं गृहस्थी का परित्याग करने का निश्चय कर लिया । हेममालिनि ने भी उनके मन की बात जान ली, उसने निश्चय कर लिया कि मैं भी पति के साथ ही गृह त्याग दूँगी ।

रात्रि के निविड अंधकार में गोपमाल चुपचाप उठा । पत्नी हेममालिनि भी साथ हो ली । ज्यों ही दोनों आगे बढ़े, एक आकृति सामने आयी, गोपमाल ने पहचाना कि यह तो महर्षि अंगिरा खड़े हैं । उन्होंने दोनों को आशीर्वाद देते हुए कहा-"तुम दोनों आत्म-कल्याण के इच्छुक हो । परंतु जो सामाजिक जीवन की परिस्थितियों से ही नहीं लड़ सका, तप-तितीक्षाओं को कैसे सहन करेगा । मनुष्य कर्म करे, सफलता या विफलता, सुख-दुःख, मान-अपमान में स्थिर रहकर फल से प्रभावित न हो । अपने आपको भगवान् का प्रतिनिधि मानकर लोक-सेवा में स्वयं को नियोजित रखे । फलश्रुतियाँ तो स्वयं ही मिल जाती हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गोपमाल ने तत्वदर्शन को समझा और लौट पड़ा अपने गृहस्थ रूपी तपोवन में पत्नी के साथ-पुनः समर में जूझने हेतु । उसे अब आध्यात्मिकता की सही परिभाषा जो समझ में आ गयी थी ।

तथ्यानि स्पष्टयन्नग्रेऽगादीद् धौम्यो महामुनिः ।
महत्वपूर्णोऽयं धर्मो गृहस्थाश्रमजो ध्रुवम् ।। ११।।
तस्मिन्नुपार्जितायास्तु क्षमताया भवत्यलम् ।
उपयोगस्य सच्छिक्षा ह्यनुभूतिश्च सा नृणाम् ।। १२।।
कैशोर्ये स्वास्थ्यसंवृद्धि शिक्षार्जनमथाऽपि च ।
संयमोऽनुभवावाप्तिरनुशासनसंश्रयः ।। १३।।
ईदृश्यः क्षमता बह्व्यो लभ्यन्तेऽहर्निशं नरैः ।
नियोज्यश्च विकासस्य क्रमश्चाऽपि सुनिश्चितः ।। १४।।
जायते परिपक्वश्च यौवनारम्भ एव तु ।
प्रायोनरो दिशांकाङ्क्षिद् गृह्णात्यपि निजां स्वयम् ।। १५।।
विधिना केन कर्त्तव्य उपयोगोऽस्य सन्ततम् ।
परिपक्वत्वभावस्य समावेशोऽत्र विद्यते ।। १६।।
धर्मे गृहस्थजे यत्र प्रविष्टे तु बहून्यपि ।
दायित्वानि समायान्ति सर्वेष्वेव नरेष्वलम् ।। १७।।
अभिभावकवर्गैश्च भरणादौ व्ययस्तु यः ।
कृतस्तस्मादृणान्मुक्तौ सहयोगस्तु तैः सह ।। १८।।
कर्त्तव्यः प्रथमं चैतत्कर्त्तव्यं जायते नृणाम् ।
वयस्कैः सहयोगस्तु यत्नश्चोत्थापने सदा ।। १९।।
अनुजानां विधातव्यो भवत्येव विवेकिनाम् ।
यौवने समनुप्राप्ते समेषामेव वै नृणाम् ।। २०।।

भावार्थ–*तथ्यों को और भी स्पष्ट करते हुए महामुनि धौम्य आगे बोले–गृहस्थ धर्म अपने स्थान पर अत्यंत महत्वपूर्ण है । उसमें उपार्जित क्षमता के सदुपयोग का प्रशिक्षण एवं अनुभव प्राप्त होता है । उठती आयु में स्वास्थ्य संवर्द्धन, शिक्षा अर्जन, अनुभव संपादन, अनुशासन, अवलंबन, संयम जैसी अनेक क्षमताएँ उपलब्ध की जाती हैं । विकासक्रम सुनियोजित किया जाता है । यौवन काल में प्रवेश करने तक मनुष्य बहुत कुछ परिपक्व हो जाता है तथा स्वयं किसी दिशा की ओर बढ़ना चाहता है । इस परिपक्वता का सदुपयोग किस प्रकार हो, इस विधि–व्यवस्था का गृहस्थ धर्म में समावेश है । उसमें प्रवेश करने पर कई उत्तरदायित्व कंधे पर आते हैं । अभिभावकों द्वारा किए गए भरण–पोषण में जो ऋण चढ़ा है, उसे उनका हाथ बँटाते हुए उतारना प्रथम कर्तव्य है । समान आयु वालों का प्रयत्न–सहयोग, छोटों को ऊँचा उठाने–आगे बढ़ाने के लिए सामर्थ्य भर प्रयत्न–यह उत्तरदायित्व यौवन काल में प्रवेश करते ही हर विचारशील को निभाना होता है ।। ११–२०।।*

व्याख्या–गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने से पूर्व जिन सोपानों से मनुष्य को गुजरना पड़ता है, वे उसे शारीरिक दृष्टि से सुदृढ़ एवं वैचारिक दृष्टि से परिपक्व बनाते हैं । किसी भी परीक्षा को पास करने के बाद एक प्रशिक्षण अवधि होती है । जिसे पूरा किए बिना सीधे नौकरी नहीं दे दी जाती । एप्रेन्टीसशिप, इन्टर्नशिप का अभ्यास किए बिना मैकेनिक, इंजीनियर या डॉक्टर की भूमिका निभाना संभव नहीं । अर्जित ज्ञान संपदा एवं प्राप्त सामर्थ्य क्षमता का उच्चस्तरीय व्यावहारिक शिक्षण कहाँ हो, ताकि मानवी व्यक्तित्व कसौटी पर कसने योग्य बन सके ? इसके लिए ऋषिगणों ने गृहस्थाश्रम का प्रावधान किया है । यह मनुष्य के भावी विकास के सुनियोजन की अवधि है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचर्य की अवधि में, उठती आयु में जब मानसिक विकास अतितीव्र होता है, अनेक अनुभव जीवन संबंधी उपलब्ध होते हैं । मनुष्य स्वयं के संबंध में, अपने परिकर के बारे में नूतन जानकारियाँ अर्जित करता है । इस ज्ञान भंडार को बढ़ाने की शिक्षा गृहस्थ धर्म निबाहते समय विधिपूर्वक दी जा सकती है । यह जिम्मेदारियों के निर्वाह की अवधि है । जन्म से विवाह होने तक जिन माता-पिता ने सारे कष्ट उठाते हुए उत्तरदायित्वों को निबाहा और प्रगति पथ पर आगे बढ़ाया, उनके ऋण से मुक्त होने के लिए उनके सहयोगी-सहायक के रूप में स्वयं को विकसित करना पड़ता है । अर्थ, प्रतिभा, शारीरिक श्रम, सद्भाव जिस भी माध्यम से बन पड़े इस पितृ ऋण को चुकाना गृहस्थ का प्रथम कर्तव्य है ।

बचपन एवं यौवनावस्था की इस पूरी अवधि में सम आयु वाले जिन सखा-सहयोगियों का विकास क्रम में हाथ रहा है, उनकी ओर अपनी ओर से भी हाथ बढ़ाना युवा गृहस्थ का एक महत्वपूर्ण कर्तव्य है । अपने से छोटी आयु के किशोरों, बालकों के प्रति भी जिम्मेदारियाँ शेष रह जाती हैं, क्योंकि मनुष्य परिवार संस्था की एक इकाई होने के नाते उसके समग्र विकास के लिए भी उत्तरदायी है । अपने अनुभवों से छोटों को भी लाभान्वित किया जाना चाहिए, ताकि वे भी अर्जित ज्ञान संपदा की फलश्रुतियाँ जीवन में उतार सकें ।

हर दृष्टि से गृहस्थाश्रम तक पहुँचने वाला व्यक्ति अर्जित उपलब्धियों के नाते अपने से छोटों के लिए प्रेरणाका स्रोत होना चाहिए । न केवल अनुकरणीय आचरण करने वाला, अपितु अपनी उपलब्धियों से छोटों को आगे बढ़ाने का मनोबल जागृत कर उन्हें सही दिशा देने योग्य सक्षम होना चाहिए ।

प्रस्तुत प्रतिपादन में गृहस्थ जीवन की जिन तीन महती जिम्मेदारियों का विवरण प्रस्तुत हुआ है, वह बड़ा ही हृदयग्राही, प्रेरक एवं वरेण्य है ।

कर्तव्य परायण तोता

एक जमींदार के पास बहुत जमीन थी । उसमें धान बोया । रखवाली के लिए उसने चार कोनों पर रखवाले नियुक्त कर दिए । तो भी तोते आ जाते और पेट भर कर भाग जाते । पर एक तोता ऐसा था, जो खाने के बाद कई बालें चोंच में दबाकर साथ ले जाता ।

चौकीदारों ने उस तोते को पकड़कर मालिक के पास ले जाने का निश्चय किया । वह सुंदर भी बहुत था । जाल फैलाया, सो वह उसमें फँस गया । पकड़कर मालिक के पास पहुँचाया ।

जमींदार ने तोते से पूछा–"बालें कहाँ ले जाते हो ?" उसने कहा–"दो कर्ज चुकाने के लिए, दो कर्ज देने के लिए और दो परमार्थ के लिए ।" कुल छः बालें पेट भरने के बाद साथ ले जाता हूँ ।" जमींदार ने पूछा–"भला कर्ज चुकाना, देना और बाँटना कैसा ?" तोते ने कहा–"वृद्ध माँ-बाप हैं, उन्हें दिखता भी नहीं, सो दो उन्हें देता हूँ । दो, बच्चे बहुत छोटे हैं उनके लिए और पड़ोसी बीमार है दो उनके लिए देता हूँ । इसे कर्तव्य समझकर चौकीदारों के प्रतिशोध का जोखिम भी उठाता हूँ ।"

जमींदार ने उस भावनाशील तोते को प्यार किया और प्रसन्नतापूर्वक छोड़ दिया ।

पहले ऋण चुकाओ, फिर संन्यास लो

मगध का एक धनी व्यापारी भगवान बुद्ध के पास संन्यास की दीक्षा लेने गया । बुद्ध ने उसका कारण और वृतांत सुना । कहा–"पहले अपने को उदार और सज्जन बनाओ । फिर उस सद्व्यवहार से परिवार के दुर्गुणों का निराकरण करो । परिवार का जो तुम पर ऋण है, उसे चुकाओ, सबको स्वावलंबी बनाओ । जब इतना कर सको, तब धर्म की सेवा और जन कल्याण की दीक्षा लेने यहाँ आना ।"

धनी लौट गया और संत की जीवनचर्या परिवार में रहते हुए अपनाने लगा । इसमें सफल होने के उपरांत बुद्ध के पास पहुँचा, तो उसे संघाराम में प्रवेश मिल गया ।

पत्नी की सेवा एवं निष्ठा को वरीयता

गृहस्थ जीवन एक ऐसी पाठशाला है जिसमें आत्मसंयम, पारस्परिक सद्भाव जैसी सत्प्रवृत्ति का अभ्यास किया जाना संभव है । यदि एक पक्ष भी इसके लिए कदम उठाता है, तो किसी तरह के मनोमालिन्य का प्रश्न ही नहीं उठता ।

एक बार एक आदमी हजरत उमर से मिलने उनके घर गया । उसने सुना उमर की पत्नी काफी बड़बड़ा रही हैं, पर हजरत उमर कुछ भी जवाब न देकर मौन हैं । उस आदमी ने पूछा–"वह इतना बोले चली जा रही

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हैं और आप हैं कि बिल्कुल चुप्पी साधे हुए हैं ।''

हजरत उमर गंभीरता से बोले–''भाई ! वह मेरे गंदे कपड़े धोती हैं, मेरे लिए खाना पकाती, मेरी सेवा करती है और सबसे बढ़कर वह मुझे पाप से बचाती है, तो क्या अब उसका इतना भी हक नहीं कि कुछ बोले ?''

सेठ जी की चिंता

गृहस्थ जीवन में अनेक जिम्मेदारियाँ कंधे पर आती हैं, कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है पर इनसे घबराने से क्या लाभ ? कभी-कभी जीवन साथी से भी इसका समाधान मिल जाता है ।

सेठजी जब घर में आते तो भविष्य की संभावित कठिनाइयों की कल्पना करके तिल का ताड़ बनाते । घर के सभी लोगों को विशेषतया पत्नी को असमंजस में डाल देते । यह एक प्रकार से उनकी आदती बन गई थी ।

पत्नी ने उनका चिंतन सुधारने के लिए एक नाटक रचा । चारपाई पर रोनी सूरत बनाकर पड़ गई । घर का कोई काम न किया । दुकान पर से सेठजी आये, वे भी चिंतित हुए और कारण पूछा । पत्नी ने कहा–''आज एक पहुँचे हुए ज्योतिषी आये थे । हाथ देखकर बता गए हैं कि तू साठ वर्ष तक जियेगी और आठ बच्चे होंगे । सोच रही हूँ कि साठ साल में कितना अनाज खा जाऊँगी । बच्चों के प्रसव की कितनी पीड़ा सहनी पड़ेगी और उनको समर्थ बनाने में कितना धन लगेगा । इस सबका बोझ उठाते-उठाते मेरा तो दम ही निकल जायेगा ।''

सेठजी ने झिड़का और कहा–''इतना सब एक दिन में थोड़ा ही होगा । समय के साथ आने और खर्च होने का काम चलता रहेगा । तू व्यर्थ चिंता करती है ।''

अब स्त्री की बन आई, उसने कहा–''तुम भी तो रोज भविष्य की चिंता ही मुझसे कहते हो । इतनी जिम्मेदारियाँ निभाने को पड़ी हैं, उन्हें पूरा करना तो दूर, तुम प्रयास भी नहीं करते । यह क्यों नहीं कहते कि समयानुसार समस्याओं के हल भी निकलते रहेंगे ।

व्यावहारिक समाधान पर सेठजी ने अपनी आदत सुधार ली ।

विवाहित जीवन की तीन परिस्थितियाँ

एक चित्रकार ने तीन तस्वीरें बनाईं । एक सोच में पड़ा था । एक हाथ मल रहा था । तीसरा सिर धुन रहा था ।

पूछने पर चित्रकार ने बताया कि यह तीनों एक ही आदमी की तीन स्थितियों के चित्र हैं । विवाह से पूर्व वह कल्पना लोक में उड़ता है और कहाँ से वैसी सुंदर पत्नी हाथ लगे इस सोच में बैठा रहता है । दूसरा चित्र विवाहित का है । गृहस्थ जीवन में जो जिम्मेदारियाँ आती हैं और जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है, उस जंजाल को देखकर हाथ मलता है कि इतना झंझट मोल ले लिया । तीसरा चित्र उस स्थिति का है, जिसमें स्त्री का वियोग और विरोध त्रास देता है तथा संतान दुःख देती है, तब आदमी सिर पीटता है और सोचता है कि हमारे भाग्य ऐसे फूटे हैं कि अपने पैरों अपने हाथ कुल्हाड़ी मारी । काश, जीवन को सही दिशा मिली होती ।

यदि जीवन जीने की रीति-नीति की कुंजी हाथ लग सके, तो गृहस्थ धर्म में रहते हुए हर दृष्टि से आदर्श जीवन जिया जा सकना संभव है । ऐसा उत्कृष्ट एवं अनुकरणीय बनो, जो स्वयं को तो श्रेय पथ पर ले जाने वाला हो ही, सारे सहयोगियों का हित साधन भी कर सके ।

जो भी बनो, आदर्श बनो

एक जिज्ञासु कबीर के पास पहुँचा, बोला–''दो बातें सामने हैं, संन्यासी बनूँ या गृहस्थ ।''

कबीर ने कहा–''जो भी बनो, आदर्श बनो ।''

उदाहरण समझाने के लिए उन्होंने दो घटनाएँ प्रस्तुत कीं ।

अपनी पत्नी को बुलाया । दोपहर को प्रकाश तो था, पर उन्होंने दीपक जला लाने के लिए कहा, ताकि वे कपड़ा अच्छी तरह बुन सकें । पत्नी दीपक जला लायी और बिना कुछ बहस किए रखकर चली गई ।

कबीर ने कहा–''गृहस्थ बनना हो तो परस्पर ऐसे विश्वासी बनना कि दूसरे की इच्छा ही अपनी बने ।''

दूसरा उदाहरण संत का देना था । वे जिज्ञासु को लेकर एक टीले पर गए, जहाँ वयोवृद्ध महात्मा रहते थे । वे कबीर को जानते न थे । नमाज के उपरांत उनसे पूछा–''आपकी आयु कितनी है ।'' बोले–''अस्सी बरस ।''

इधर-उधर की बातों के बाद कबीर ने कहा–''बाबाजी ! आयु क्यों नहीं बताते ?'' संत ने कहा था–''बेटे ! अभी तो बताया था, अस्सी बरस ! तुम भूल गए हो ।'' टीले से आधी चढ़ाई उतर लेने पर कबीर ने संत को पुनः पुकारा और नीचे आने के लिए कहा । वे हाँफते-हाँफते आये । कारण पूछा, तो फिर वही प्रश्न किया–''आपकी आयु

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कितनी है ?'' संत को तनिक भी क्रोध नहीं आया । वे उसे पूछने वाले की विस्मृति मात्र समझे और कहा–''अस्सी बरस है ।'' हँसते हुए वापस लौट गए ।

कबीर ने कहा–''संत बनना हो तो ऐसा बनना, जिसे क्रोध ही न आये ।''

गृहस्थ जीवन की मर्यादाएँ

ऋषि कर्दम के तप से भगवान प्रसन्न हुए । उन्हें आशीर्वाद दिया ।

नारद जी के परामर्श पर स्वायंभुव मनु अपनी दूसरी पुत्री देवहूति कर्दम ऋषि को अर्पित करने के लिए पहुँचे । कर्दम बोले–''मेरी शर्त सुन लें । मुझे काम पत्नी नहीं, धर्मपत्नी चाहिए । दाम्पत्य काम विकार के लिए नहीं, काम को मर्यादित करने के लिए होता है । मैं एक सत्पुत्र की प्राप्ति के बाद संन्यास धर्म का पालन करूँगा । आपकी पुत्री को यह स्वीकार हो तो ही संबंध होगा ।''

मनु जी ने कहा–''बेटी ! यह तो विवाह के पूर्व ही संन्यास की बात करने लगे ।'' किन्तु देवहूति भी कम न थी । बोली–''कामांध होकर संसार सागर में डूबने के लिए गृहस्थाश्रम नहीं है । मैं भी कोई संयमी–जितेन्द्रिय पति ही चाहती हूँ ।''

विवाह हो गया । दोनों के तपस्वी जीवन के प्रतिफल के रूप में 'कपिल' जी उत्पन्न हुए जो २४ अवतारों में से एक माने गए ।

मन पर अंकुश आवश्यक

भौतिक हो या आध्यात्मिक जीवन, सबसे बड़ी जरूरत है, आंतरिक परिपक्वता की । उसके अभाव में सिर धुनने वाली असफलता ही हाथ लगती है ।

एक सेठ के यहाँ गुण सुंदरी नामक कन्या थी । वह अपना जीवन साधना–स्वाध्याय में लगाना चाहती थी, किन्तु मानसिक धरातल पर वह अपरिपक्व ही थी । वयस्क होने पर भी वह विवाह के लिए तैयार न होती थी । पिता के बहुत आग्रह पर उसने एक विद्वान् वयोवृद्ध से विवाह की स्वीकृति दे दी । ताकि उसका व्रत भी निभता रहे और लोकापवाद भी न रहे । वयोवृद्ध पति की सेवा करते और उनसे ज्ञान–अनुदान को पाते बहुत समय बीत गया ।

एक रात घर में चोर घुस आया । वह बड़ा रूपवान् था । गुण सुंदरी का मन विचलित हुआ और उस पर आसक्त होकर अतिथि रूप में घर रख लिया और सहगमन करने लगी । विचार आया कि पति को मार क्यों न दिया जाय, ताकि कोई कंटक ही न रहे । दोनों ने मिलकर बूढ़े का गला दबाकर मार डाला । चोर प्रातः होते ही नित्य की भाँति घर जाने लगा, तो ऊपर से दरवाजा टूट पड़ा और उसकी भी वहीं मृत्यु हो गई ।

गुण सुंदरी को मन की चंचलता पर बड़ा दुःख हुआ और उसने दोनों पतियों के साथ चिता में शरीर को जला देने का निश्चय किया । वह मन की दुष्टता पर बार-बार पछताती और अपने कुकृत्य का विवरण सभी को बताती हुई प्राण त्याग गई ।

सभी लोग कहने लगे, मन की उच्चता और निकृष्टता का कोई ठिकाना नहीं । उसे तनिक भी ढील नहीं मिलनी चाहिए । हर समय कड़ा अंकुश रखने से ही काम चलता है ।

गृहस्थ का निर्वाह ऐसे ही कठिन उत्तरदायित्वों से बँधा है, जिसमें अनुबंध, अनुशासन, आत्म नियंत्रण को सर्वोपरि महत्व दिया जाना चाहिए ।

आनंद भरा दाम्पत्य जीवन

जहाँ कहीं ऐसा सुयोग बैठता है कि पति-पत्नी दोनों ही अपनी जिम्मेदारियों को समझते हैं व परस्पर ताल-मेल बिठा लेते हैं, वहाँ आनंद ही आनंद व्यापता है ।

महान् वैज्ञानिक माइकेल फैराडे उन्नीसवीं सदी में पैदा हुए । उन्हें दिन भर व्यस्त रहना पड़ता था, पर शाम को घर आते ही पत्नी के मनोरंजन और बच्चों को दुलारने में लग जाते । एक बार उनकी पत्नी बीमार पड़ीं, तो लगातार तीन हफ्ते रात को जागकर उनकी तीमारदारी करते रहे ।

उनकी पत्नी ने उनके संबंध में संस्मरण लिखते हुए कहा है–''उनके साथ हर दिन सुहाग रात जैसा बीता । वृद्धावस्था आने पर हम लोगों ने जाना कि दाम्पत्य जीवन की सफलता के सूत्र क्या हैं ? उन सूत्रों को अपनाकर ही हमनें संघर्षमय जीवन जीते हुए भी स्वर्गीय आनंद के दिन काटे और जाना कि दाम्पत्य जीवन की उपलब्धियाँ कितनी सुखद और उमंग भरी होती हैं ।''

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

स्वावलंबी दाम्पत्य जीवन

विवाह बंधन एक साधना है, गुड्डे-गुड़िया का खेल नहीं ।

एक बार एक अमीर के लड़के ने समीपवर्ती गाँव के एक गरीब आदमी की सुंदर लड़की से ब्याह करने का प्रस्ताव भेजा । गरीब ने पूछा-"लड़का क्या करता है ?" उत्तर मिला-"बाप की प्रचुर संपदा को बैठा-बैठा खाता है ।" बेटी वाले ने विवाह से इन्कार कर दिया । जो हाथ से कमाई नहीं कर सकता, उसे बेटी नहीं दूँगा । उसका भविष्य अंधकारमय है ।

लड़के को बात चुभ गई । उसने दूसरे दिन से ही कृषि-व्यापार करना और अपने हाथ से सँभालना आरंभ कर दिया, तो उसकी स्वस्थता और बुद्धिमत्ता बढ़ गई ।

बेटी वाले ने आग्रहपूर्वक विवाह का प्रस्ताव भेजा और शादी हो गई । बेटी भी श्रमजीवी परिवार से आई थी, सो उसने भी पति के कार्यों में कंधा लगाया और वे लोग स्वावलंबनपूर्वक सम्पन्नता प्राप्त करने का यश और सुख कमाने लगे ।

ऋणान्यन्यानि विद्यन्ते दैवान्येवं विधानि तु ।
कुटुम्बक्षेत्रबाह्यानि यान्यानृण्यवहानि च ।। २१।।
देशधर्मसमाजानां संस्कृतेर्बहुभिस्तु तैः ।
अनुदानैर्विकासस्य प्राप्तस्त्ववसरः शुभः ।। २२।।
कुटुम्बस्यैव ते लोका व्यवस्थाः समुपार्जितुम् ।
न समर्था भवन्त्यत्र सर्वतश्चिन्त्यतां यतः ।। २३।।
जीविकोपार्जनं पाणिग्रहणं शिक्षणं तथा ।
अनेकानि हि कार्याणि बहूनामिह सद्गृणाम् ।। २४।।
अनुदानैस्तु जायन्त ऋणां दैवं समाजगम् ।
महत्वपूर्णं चैतद्धि नरैः प्रोक्तमृणं वरैः ।। २५।।
तस्मान्मुक्तिश्च सर्वेषां कर्त्तव्यं विद्यते नृणाम् ।
समाजस्य समृद्धिश्च विकासो भवतोऽभितः ।। २६।।
यौवनारम्भकाले च नरः सर्वो हि विद्यते ।
समर्थोऽपि च सम्पन्नो वैभवं पुरुषैरिदम् ।। २७।।
उपयोक्तव्यमत्रैव दातुं सामाजिकं सदा ।
ऋणमेषु दिनेषु स्युः यानि कार्याणि तद् वरम् ।। २८।।

भावार्थ-परिवार क्षेत्र से बाहर भी चुकाने योग्य अनेकानेक देवऋण हैं । देश, धर्म, समाज, संस्कृति के अनेकानेक अनुदानों के सहारे ही मनुष्य को सुविकसित होने का अवसर मिला है । मात्र परिवार के लोग ही जीवन निर्वाह की सारी व्यवस्थाएँ नहीं जुटा देते । चारों ओर दृष्टि डालकर विचारें; चूँकि आजीविका उपार्जन और सहचर का पाणिग्रहण, शिक्षा अभिवर्द्धन जैसे अनेकानेक सुयोग असंख्यों लोगों के अनुदान से ही हस्तगत होते हैं । यह सब देवऋण अर्थात समाज ऋण कहलाता है । श्रेष्ठ पुरुषों ने इसे महत्वपूर्ण ऋण कहा है । इस ऋण को चुकाना, समाज को, हर दृष्टि से समृद्ध-सुविकसित बनाना, हर विचारशील का आवश्यक कर्तव्य है । यौवन में प्रविष्ट होते समय मनुष्य समर्थता और सम्पन्नता की स्थिति में होता है । इस वैभव का उपयोग समाज ऋण चुकाने हेतु किया जाना चाहिए । इन दिनों जितने लोकोपयोगी कार्य बन सकें, उतना ही उत्तम है ।। २१-२८।।

व्याख्या-परिवार तो समाज की एक इकाई है । मनुष्य को विकसित स्थिति तक पहुँचाने में समाज के हर घटक की भूमिका है । अपने आप तक अथवा परिवार तक ही सीमित होकर रह जाने वाले व्यक्ति संकीर्ण कहलाते हैं । मुसीबतें आने पर भी उन्हें कोई सहयोगी नहीं मिलता, क्योंकि वे स्वयं किसी के कभी काम न आए । शरीर बल संवर्द्धन, साधन-उपार्जन, बहिरंग शिक्षा सभ्यता के माध्यम से व्यक्तित्व संवर्द्धन जैसे महत्वपूर्ण अनुदान माता-पिता से लेकर समाज के विभिन्न अंगों द्वारा किए गए सहयोग के

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

परिणामस्वरूप हस्तगत होते हैं ।

जिस समाज-राष्ट्र में हमने जन्म लिया है, उसने प्रकारांतर से हमें संरक्षण एवं साधन देकर उपकृत किया है । उसके प्रति उऋण हुए बिना हम कृतघ्न कहे जाएँगे, चाहे हमारी व्यक्तिगत उपलब्धियाँ, श्रेय, सम्पदा कुछ भी क्यों न हो ? इसके लिए सबसे उत्तम काल वही है, जब मनुष्य स्वास्थ्य की दृष्टि से भी, मनःस्थिति एवं साधनों की दृष्टि से भी समर्थ-संतुलित होता है । पारिवारिक जीवन आरंभ करते समय यौवन की पराकाष्ठा होती है । ऐसे में मद में चूर होकर अपने कर्तव्य में जुट जाना ही मनुष्य की श्रेष्ठता का सूचक है । जहाँ तक हो सके जन कल्याण की योजनाओं में स्वयं को नियोजित कर अपनी प्रतिभा का लाभ समाज को देना चाहिए ।

यह बात सदैव स्मरण रखी जानी चाहिए कि संसार से हमने बहुत कुछ पाया है । अधिकांश जीवनोपयोगी वस्तुएँ लोगों के परिश्रम से बनी हैं । उनके बुद्धि-कौशल का अनुग्रह-लाभ उठाकर ही हम उस स्थिति में पहुँचे हैं, जहाँ कि आज हैं । यदि किसी का सहयोग न मिला होता, तो सुसम्पन्न होना तो दूर, कदाचित् हम जीवित भी न रह पाते । ऐसी दशा में आवश्यक है कि उस बगीचे को सींचें, जिसकी छाया में बैठकर हम फलों से गुजारा करते हैं । ऋणमुक्ति का सही तरीका इस विश्ववसुधा को सुखी-समुन्नत बनाना ही है । ऋणग्रस्त को मोक्ष कैसे मिले ?

आदर्शवादी डॉक्टर दम्पत्ति

दक्षिण भारत में जन्मे डॉ० कौस्तुभ परीक्षा पास करने के उपरांत सरकारी क्षय चिकित्सालय में नियुक्त हुए । उनने जार्ज वनार्ड शॉ की वह उक्ति अपने कमरे में टाँग रखी थी कि रोगी को दवा की अपेक्षा डाक्टर की सहानुभूति की जरूरत होती है । उनने रोगियों से ममता भरा व्यवहार किया और इतने अनुपात में रोगी अच्छे किए, जितने पहले कभी भी न हुए थे ।

उनने अपने अस्पताल की एक नर्स से इस शर्त पर विवाह किया कि वह संतानोत्पादन के फेर में न पड़ेगी और रोगियों को ही अपना बालक मानेगी । सेवाधर्म में संलग्न रहकर वे पति-पत्नी अत्यंत सुखी-संतुष्ट रहे ।

वृद्धावस्था में वे मंसूरी (उ.प्र.) आए । वहाँ के अस्पताल में ४ घंटा निःशुल्क सेवा करते रहे । असहायों की वे आर्थिक सहायता भी करते रहते थे । एक पगली उन्हें अपना बेटा कहती थी । वे भी उसे माताजी कहने लगे और वह रोग मुक्त हो गई ।

डॉ० कौस्तुभ दंपत्ति का शरीर अब नहीं है, पर उनका आदर्श डॉक्टरों को कुछ नए ढंग से सोचने के लिए अभी भी जीवित है । चिकित्सा व्यवसाय तो कई लोग अपनाते हैं । पर सेवाधर्म के रूप में अपनाकर समाज देवता की आराधना गिने-चुने ही करते हैं । ऐसे प्रकाशस्तंभ युगों-युगों तक प्रेरणा पुंज बने रहते हैं ।

पिछड़ों को उठाने वाला पादरी

पादरी लार्ड बेकर भारत आए तो धर्म परिवर्तन कराने का उद्देश्य लेकर आये थे । पर यहाँ की स्थिति को देखकर वे पिछड़े लोगों का जीवन स्तर ऊँचा उठाने में लग गए । धोती-कुर्ता पहनना शुरू किया । चर्च ने सहायता देनी बंद कर दी, तो उनने खेती करके गुजारे का इंताजम कर लिया । मुफ्त दवा बाँटने के स्थान पर लागत मूल्य पर वे दवा देते । जो पैसा नहीं दे सकता था, उससे उतने मूल्य की मजूरी करा लेते । ऐसा आदर्श पादरी देखकर एक भारतीय लड़की ने उनसे विवाह कर लिया । दोनों मिलकर दूना काम करने लगे । दोनों एक-एक मिलकर ग्यारह हो गए । पिछड़ों और गिरों को ऊँचा उठाने में दोनों आजीवन लगे रहे । उनकी कार्य पद्धति अनेक को प्रेरणादायक बनी ।

दाम्पत्य जीवन के साथ आजीवन सेवाधर्म

युद्ध के बाद ज्यूरिख में भयंकर अकाल पड़ा । साथ ही महामारियाँ भी फूट पड़ीं । इस आग से जूझने के लिए स्वयंसेवकों की जरूरत पड़ी ।

ज्यूरिख के एक समाज सेवी संगठन ने पीड़ितों की सहायता के लिए एक सेवा-समिति गठित की । स्वयंसेवकों के लिए मार्मिक अपील छपी ।

इस पुकार को सुनकर एक नव विवाहित दम्पत्ति सामने आए । पति का नाम था सूसो, पत्नी का सेरलाओ । वे सेवा का आवेदन लेकर आए थे ।

संगठनकर्त्ताओं ने कहा-"यदि सच्चे अर्थों में सेवा करनी है, तो आप लोग संतानोत्पादन न करने का व्रत

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लें । अन्यथा उस झंझट के कारण आप सच्चे मन और समय तक लगनपूर्वक काम न कर सकेंगे । विचार कर दूसरे दिन आने के लिए उन्हें कहा गया ।

पति-पत्नी दूसरे दिन नियत समय पर सेवाधिकारी के पास पहुँचे । उनने बाइबिल हाथ में लेकर आजीवन बच्चे न जनने की और सदा सेवा धर्म में लगे रहने की प्रतिज्ञा की ।

संगठनकर्त्ताओं की आँखों में आँसू छलक आए । उन्होंने उस सच्चे सेवाव्रती दम्पत्ति को हृदय खोलकर आशीर्वाद दिया और काम में जुटा दिया । उनके आदर्शों ने अनेक को प्रेरणा दी और वैसे ही व्रतधारी स्वयंसेवक एक हजार की संख्या में भर्ती हो गए ।

विपत्ति से जूझने में इन सबने मोर्चा सम्हाला और लाखों के प्राण बचाए । सूसो दम्पत्ति के अग्रिम कदम उस क्षेत्र में अभी भी भावनापूर्वक स्मरण किए जाते हैं । उन दिनों भी उन्हें धर्म प्राणों से बढ़कर आदर मिला था । समाज को समर्पित ऐसे अग्रदूत बिरले ही होते हैं, पर इतिहास में वे अमर बन जाते हैं ।

कर्ज लेने से इन्कार

बगदाद के खलीफा ने अपना दैनिक वेतन तीन रुपया रोज रखा था । कोई त्यौहार आया तो बेगम ने कहा-"वेतन नहीं बढ़ा सकते, तो राज्य कोष से दस रुपया उधार ले लो । उसे धीरे-धीरे चुकाते रहेंगे ।"

खलीफा ने कहा-"मौत का क्या ठिकाना ? कल ही आ गई तो लिया हुआ कर्ज कौन चुकाएगा । अभी समाज में जी रहे हैं, कर्ज तो चढ़ा ही है, पहले उससे तो मुक्त हों । कर्ज लेने से उन्होंने स्पष्ट इन्कार कर दिया, तो बेगम ने दैनिक वेतन में से ही कुछ बचाकर त्यौहार मनाया ।

धन का उपभोग मत करो, बाँट दो

हजरत मौहम्मद साहब एक बार अपनी लड़की के यहाँ गए । देखा कि दरवाजे पर रेशमी पर्दे पड़े हैं । ठाठ-बाट का माहौल है और लड़की सोने-चाँदी के जेवर पहने हैं । हजरत यह देखकर उलटे पैर लौट आये ।

बेटी दुःखी हुई और उनके इस प्रकार लौटाने का कारण पूछा । उनने कहा-"हम लोगों को गरीबों की तरह रहना चाहिए और जो पास में है, भलाई के कामों में खर्च करना चाहिए । बेटी ने अपना जेवर और दौलत उनके सुपुर्द कर दी । हजरत ने संतोष व्यक्त किया और धन जरूरतमंदों को बाँट दिया ।

महानता इसी को कहते हैं । जहाँ समाज के सदस्यों के प्रति करुणा, दर्द है, वहाँ से देवत्व मिटता नहीं । परिवार के सदस्यों को समाज ऋण चुकाने की प्रेरणा मिले, इसके लिए अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करने वाले ऐसे महामानव समय-समय पर विश्व में जन्मते रहते हैं ।

दूसरों का दुःख-अपना दुःख

एक बार एक वृद्ध ने कोठी से निकलते हुए किसी भद्रपुरुष से पूछा-"क्या आप मुझे इस कोठी के स्वामी से मिला देंगे ।"

"क्या काम है उनसे, मुझसे कहिए ?" भद्र पुरुष ने कहा ।

"मेरी बेटी का विवाह है । तीन सौ रुपये चाहिए हुजूर ! यदि रुपये मिल गए, तो मैं अपनी बेटी का विवाह कर सकूँगा"-गरीब वृद्ध ने कहा ।

"आओ मेरे साथ ।" और भद्रपुरुष वृद्ध को कार में अपने साथ बैठाकर ले गया । थोड़ी दूर जाकर कार रुकी । भद्रपुरुष उतरे और सामने खड़ी बिल्डिंग में प्रवेश कर गए । जाते-जाते वह वृद्ध को भी पास के एक बरामदे में बैठने को कह गए ।

थोड़ी देर बाद में एक चपरासी बरामदे में आया और वृद्ध को पाँच सौ रुपये सँभलवाते हुए बोला-"भाई ! यह पाँच सौ रुपये हैं । तीन सौ में अपनी बेटी का विवाह करना और बाकी दो सौ से विवाह के बाद कोई धंधा कर लेना, जिससे आगे की आजीविका चलती रहे ।"

वृद्ध ने रुपये तो ले लिए, किन्तु बोला-"भाई ! मुझे उस कोठी के स्वामी तो मिले ही नहीं ।"

"अभी-अभी जिनके साथ बैठकर आप इस दफ्तर में आए हैं, वे ही हैं उस कोठी के स्वामी बाबू चितरंजन दास"-चपरासी ने कहा ।

सारा समाज जिनके लिए एक परिवार है, उन्हें दूसरों की पीड़ा भी अपनी पीड़ा लगती है । वे दुःखी पीड़ितों

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

को न केवल साधन देकर अभाव की पूर्ति करते हैं, अपितु ऐसी प्रेरणा भी देते हैं कि वे स्वावलंबन भरा जीवन जी सकें । यही सरलता, व्यवहार की सदाशयता उन्हें महामानव पद से विभूषित करती है ।

राष्ट्र के सच्चे आराधक रामानंद चटर्जी

एक लड़के ने निश्चय किया कि वह बी०ए० करते ही देश सेवा के कार्यों में लगेगा । पर जब उसके बहुत अच्छे नंबर आए और विलायत जाने की छात्रवृत्ति मिली तो घर वाले उसे संकल्प छोड़ने के लिए दबाने लगे । लड़के को अपने वचन का स्मरण रहा, उसने मार्डन रिव्यू अखबार निकाला और रवीन्द्र बाबूका सारा साहित्य प्रकाशित करके देश की महत्वपूर्ण सेवा की । इस लड़के का नाम था रामानंद चटर्जी । अपने परिवार के इस हीरे से प्रेरणा लेकर उनके पिता व बड़े भाई ने भी स्वयं को देश सेवा के लिए न्यौछाबर कर दिया । यह सच है कि जलते दीपक से अनेक दीपक जल उठते हैं और अंधेरी अमावस को उजाले में बदल देते हैं ।

नौकरी नहीं, सेवा

स्वामी रामतीर्थ फर्स्ट डिवीजन में एम०ए० पास हुए । उन दिनों यह बहुत बड़ी बात थी । प्रिन्सीपल ने अपने कालेज में प्राध्यापक का स्थान देने या कहीं अन्यत्र बड़ी पोस्ट दिलाने की बात उनसे कही ।

रामतीर्थ ने कहा–"मैंने विद्या बंधनों से बँधने के लिए नहीं पढ़ी, उस श्रम का उद्देश्य असंख्यों को व्यमोह से छुटकारा दिलाना है ।" नौकरी करने से उनने स्पष्ट इन्कार कर दिया और विश्व कल्याण तथा परमार्थ में जीवन बिताया । वे विवाह बंधन में नहीं बँधे, किन्तु अल्पायु में ही अपनी प्रतिभा एवं सामर्थ्य का लाभ संसार को दे गए ।

सारी सम्पत्ति राष्ट्र को समर्पित

सेठ जमनालाल बजाज करोड़पति बच्छराम जी की गोद आए । उन्हें जो धन मिला उसका अधिकांश भाग गाँधी जी की राष्ट्रीय आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लगा दिया । इसे कहते हैं–उत्तराधिकार का सुनियोजन ।

धन बच्चों को देकर उपभोग की अपेक्षा यही श्रेष्ठ है कि उसे किसी अच्छे काम में लगा दिया जाय । यह एक प्रकार से देव ऋण चुकाना ही है ।

सुयोग्य की परीक्षा

एक राजा ने बड़े पुत्र को युवराज बनाने की अपेक्षा अधिक शीलवान् को नियुक्त करने की प्रथा आरंभ की और उसके लिए परीक्षा रखी ।

पाँच राजकुमारों के लिए भोजन परोसे गए । जैसे ही वे थाली पर हाथ डालने वाले थे कि चार शिकारी कुत्ते उन पर छोड़े गए । चार राजकुमार तो घबरा कर भाग खड़े हुए, पर सबसे छोटा यथास्थान बैठा रहा । उसने चार भगोड़े राजकुमारों के थाल कुत्तों के सामने सरका दिए । वे भी खाते रहे और छोटे राजकुमार ने पेट भर लिया ।

निरीक्षक सबकी कार्य विधि देखते रहे । छोटे ने कहा–"कुत्ते उसे काटते हैं जो अकेले खाता है । बाँटकर खाने वाले को कोई जोखिम नहीं उठाना पड़ता ।

इस बुद्धिमानी पर सभी प्रसन्न हुए ओर उसे ही उत्तराधिकारी चुना ।

शासक हो चाहे नागरिक आदर्श व्यक्ति वही है, जो दूसरों को बाँटना जानता हो ।

आत्मा एवं काया की मैत्री टूटी

सब कुछ दूसरों के सहयोग से अर्जित कर, सामर्थ्य-सम्पदा अर्जित करने के बाद मनुष्य अनायास ही यह भूल जाता है कि किस उद्देश्य के लिए उसे यह वैभव मिला था । कहाँ व किस प्रकार इसका सुनियोजन करना है, वैभव के मद में चूर होकर यह विस्मृत कर पतन के गर्त में गिरने वाले बहुसंख्य व्यक्ति समाज में देखे जा सकते हैं । इस संबंध में श्री रामकृष्ण परमहंस ने अपने शिष्यों को एक बार एक कथा सुनाई ।

दो मित्र थे । एक ही गाँव में पड़ौसी बनकर रहते थे । एक का नाम था आत्मा, दूसरे का काया । दोनों ने निश्चय किया, हम सदा मित्र बनकर रहेंगे । एक दूसरे को ऊँचा उठाने में सहायक रहेंगे ।

काया परदेश चला गया । वहाँ उसने व्यापार में बहुत धन कमाया और अमीरों की तरह रहने लगा ।

आत्मा को समाचार मिला तो वह बहुत प्रसन्न हुआ । मैत्री का ध्यान आया और साथ ही पुरानी शपथ का भी । सो वह उसका पता पूछ कर चल पड़ा और काया के महल में जा पहुँचा ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गाँव के मित्र को उसने पहचान तो लिया, किन्तु साथ ही यह विचार उठा कि इसके लिए भी कुछ करना पड़ेगा । यह सोचकर उसने अपरिचित की सी मुद्रा बना ली और कहा–"मैं तुम्हें नहीं पहचानता तुम कौन हो ? किसलिए आए हो ?"

आत्मा ने सोचा यह मद में अंधा हो गया है, सो उसने इतना ही कहा–"मैंने सुना था कि तुम अंधे हो गए हो । अब मैंने प्रत्यक्ष स्थिति आँखों से देख व समझ ली । सो उल्टे पैर वापस लौट रहा हूँ ।"

काया को असमंजस भर हुआ ।

कथा सुनाने के बाद परमहंस बोले आज समाज में अधिकांश व्यक्ति ऐसे ही हैं ।

कामेच्छाऽपि नरान् सर्वान् विह्वलान् विदधाति सा ।
प्रकृतिप्रेरणा चैवं भावना वेगवत्यलम् ।। २९।।
पुंसोरत्रोभयोरेव समुदेति यथा वयः ।
शक्तिप्रवाहमेनं च नियम्यैव विवेकिनः ।। ३०।।
प्रयोजनेषु दिव्येषु योजयन्ते परं नहि ।
आत्मनिग्रहहीनैस्तु सामान्यैः शक्यते नृभिः ।। ३१।।
अस्मिन्नायुषि लोकास्तदद्यत्वेऽनुभवन्त्यलम् ।
विवाहस्याऽनिवार्यत्वं प्रवर्तन्ते च तत्र ते ।। ३२।।
परं विवाहः कर्त्तव्यः शरीरे पक्वतां गते ।
उपार्जने समारब्धे दायित्वं गृह्यतामिदम् ।। ३३।।
अवयस्कैर्वृत्तिहीनैर्विवाहस्याऽस्य बन्धनम् ।
न स्वीकार्यं तथा नैव दम्पत्योर्द्वन्द्वनिश्चये ।। ३४।।
रूपमात्रं न द्रष्टव्यं गुणः कर्म तथैव च ।
स्वभावः प्रमुखत्वेन विवेच्याः सुखमिच्छता ।। ३५।।

भावार्थ–कामेच्छा भी प्रचलन प्रवाह के कारण मनुष्य को बेचैन करती रहती है । प्रकृति–प्रेरणा से इस प्रकार की उत्तेजना नर–मादा दोनों में ही अवस्थानुसार उत्पन्न होती है । विचारशील तो इस शक्ति प्रवाह को रोककर महान् प्रयोजनों में भी लगा देते हैं, पर साधारण जनों से, आत्म निग्रह के अभाव में ऐसा कुछ बन नहीं पड़ता । इसलिए आम लोग इस आयु में विवाह की आवश्यकता अनुभव करते और उसमें प्रवृत्त भी होते हैं । विवाह शरीर के परिपक्व होने पर ही करना चाहिए । उपार्जन आरंभ होने पर ही यह जिम्मेदारी उठानी चाहिए । न कमाने वाले और कम आयु वाले विवाह न करें । जोड़ी निश्चित करने में रूप–सौंदर्य को नहीं, गुण, कर्म, स्वभाव को महत्व देना चाहिए ।। २९–३५।।

व्याख्या–यौन उल्लास एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जो गृहस्थाश्रम के प्रारंभ में प्रकृति की सहज अभिव्यक्ति के रूप में, उमंगों के रूप में उठने लगती है । इसका सुनियोजन महत्वपूर्ण है, अस्वाभाविक रूप से नियंत्रण लगाने से तो अनेक विकृतियाँ जन्म ले सकती हैं । कुछ बिरले व्यक्ति ऐसे होते हैं, जो इस उल्लास को सृजनात्मक प्रयोजनों से जोड़कर आजीवन अविवाहित बने रहते हैं । सारा समाज उनका कार्यक्षेत्र होता है, परिवार होता है, अतः उन्हें कोई अभाव भी अनुभव नहीं होता ।

बहुसंख्य व्यक्ति उपरोक्त श्रेणी में नहीं आते । कामेच्छा एक सहज प्रवृत्ति के रूप में उन्हें व्यग्र बनाती एवं विवाह-बंधन में बंधने की दिशा देती है । कामोल्लास के सुनियोजन हेतु जरूरी है कि व्यक्ति मर्यादा से बँधकर रहे । खेत में मेड़ न बाँधी जाय, तो सारा पानी बहकर निकल जाता है, फसल को कोई लाभ नहीं मिल पाता । आत्म संयम का एक रूप यह भी है कि व्यक्ति अपने को एक जीवन साथी के साथ जोड़कर अपना कर्तव्यपालन करता रहे । मानसिक चिंतन काम-वासना से भरा हो एवं व्यक्ति अविवाहित हो, तो इसे किसी प्रकार का त्याग या अध्यात्म मार्ग का सोपान नहीं कहा जा सकता । इसी कारण ऋषियों

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ने विवाह-बंधन का प्रावधान किया है, ताकि व्यक्ति वर्जनाओं में बँधा रहे ।

विवाह कच्ची आयु में न हो, न ही आयु बीत जाने पर । शरीर एवं मन की दृष्टि से जब व्यक्ति परिपक्व है, अपने पैरों पर खड़ा है एवं अपने परिवार की जिम्मेदारियाँ उठा सकने में समर्थ है, तो वही विवाह की सही उम्र है । परावलंबी-कच्ची मनःस्थिति के, असंयमी व्यक्ति तो ऐसा करके अपने पैरों कुल्हाड़ी मारते हैं, जीवन साथी के साथ भी विश्वासघात करते हैं ।

विवाह करते समय दोनों ही पक्षों के चिंतन एवं चरित्र को महत्ता मिलनी चाहिए । वही मूल संपदा है, जो जीवन रूपी नैया पार लगाती है । रूप को महत्व देने वाले ऐसे अनेक मूर्ख समाज में देखे जा सकते हैं जो इसी कारण अनेक संबंध ठुकरा देते व फिर स्वयं दर-दर की ठोकरें खाते फिरते हैं । जहाँ स्वभाव मिले, दोनों के आदर्श मिलें, वही सच्चा गठबंधन है, पाणिग्रहण है ।

नर और नारी की एकता

कवि अरिस्टोफेन्स ने मनुष्य की उत्पत्ति पर एक प्रख्यात काव्य लिखा है । उसमें वे कहते हैं-मनुष्य पहले एक गोले जैसा था । विधाता ने इस रचना में बेतुकापन देखा, तो गोले को बीच से चीर कर दो कर दिया । एक का नाम रखा नर, दूसरे का नारी ।

वे पहले की तरह एक बनने के लिए निरंतर छटपटाते रहते हैं । दोनों को अपना बिछुड़ा भाग अधिक आकर्षक लगता है । दोनों के बीच जितनी दूरी रहती है, उतने ही वे दुःखी रहते हैं ।

इस काव्य को वे जगह-जगह सुनाते थे और उन दिनों नारी के प्रति अवमानना की प्रथा को पूरी तरह समाप्त करना चाहते थे ।

वासना का विष

कामेच्छा का सुनियोजन न होने के कारण वासना ही मन-मस्तिष्क पर हावी हो जाती है एवं व्यक्ति को अंततः पतन के गर्त में ले जाती है ।

महाराज ययाति वैसे तो बड़े ही विद्वान् और ज्ञानवान् राजा थे, किन्तु दुर्भाग्यवश उन्हें वासनाओं का रोग लग गया और वे उसकी तृप्ति में निमग्न हो गए । स्वाभाविक था कि ज्यों-ज्यों वे इस अग्नि में आहुति देते गए, त्यों-त्यों वह और भी प्रचंड होती गई और शीघ्र ही वह समय आ गया, जब उनका शरीर खोखला और शक्तियाँ बूढ़ी हो गईं । सारे सुकृत खोए, बेटे के प्रति अत्याचारी प्रसिद्ध हुए, परमार्थ का अवसर खोया और मृत्यु के बाद युग-युग के लिए गिरगिट की योनि पाई, किन्तु वासना की पूर्ति न हो सकी । पांडु जैसे बुद्धिमान् राजा पीलिया रोग के साथ वासना के कारण अकाल मृत्यु को प्राप्त हुए । शांतनु जैसे राजा ने बुढ़ापे में वासना के वशीभूत होकर अपने देवव्रत-भीष्म जैसे महान् पुत्र को गृहस्थ सुख से वंचित कर दिया । विश्वामित्र जैसे तपस्वी और इंद्र जैसे देवता वासना के कारण ही व्यभिचारी और तप-भ्रष्ट होने के पातकी बने । वासना का विष निःसंदेह बड़ा भयंकर होता है, जिनके शरीर का पोषण पाता है, उसका लोक-परलोक पराकाष्ठा तक बिगाड़ देता है । इस विष से बचे रहने में ही मनुष्य का मंगल है ।

दीनबंधु और उनकी विराट् की साधना

बात सन् १९१४ की है । एक दिन गुरुदेव टैगोर ने सी० एफ० एण्ड्रूज से कहा-"विवाह जीवन की पूर्णता है, प्रगति के मार्ग में पत्नी से पूरी-पूरी सहायता मिलती है और दोनों के सहयोग से विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं । सच्चा जीवन जीने के लिए मनुष्य को विवाह अवश्य करना चाहिए और आपने विवाह न करके बड़ी भारी भूल की है ।"

दीनबंधु एण्ड्रूज ने सहज भाव से उत्तर दिया-"हाँ ! आपकी बात बिल्कुल सत्य है । मैं भी अनुभव करता हूँ कि विवाह के बिना पवित्र प्रेम तथा पिता और पति के मोहक कर्तव्यों से मैं वंचित रहूँगा और मेरे जीवन का विकास भी अवरुद्ध हो जायेगा । पर दाम्पत्य जीवन के सुख की जब मैं कल्पना करता हूँ, तो मेरा मन मुझे एक अन्य दिशा की ओर ही ले जाना चाहता है ।"

वह कहता है-"तुम अपनी सेवाएँ राष्ट्रीय आंदोलन को समर्पित कर चुके हो । जब तक देश स्वतंत्र नहीं हो जाता, तब तक तुम्हारा कुछ नहीं, सब कुछ राष्ट्र का ही होगा । तुम मिशन में सर्विस करते हो, उसका क्या भरोसा ? फिर नौकरी छूट जाने पर घर-गृहस्थी के बोझ को सम्हालने के लिए नौकरी की तलाश करोगे या राष्ट्रीय आंदोलनों में भाग लोगे और मेरे मन में उठने वाले यही विचार दाम्पत्य जीवन के रेशमी सूत्र में नहीं बँधने देते ।" दीनबंधु एण्ड्रूज आजीवन अविवाहित रहकर भारतवासियों को देश भक्ति का संदेश देते रहे ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पशु-पक्षियों की साथी चयन में बुद्धिमत्ता

डॉ० जे० बी० हक्सले चिड़ियों के जीवन के अध्ययन में बड़ी रुचि रखते थे । एक विलायती पक्षी क्रमटी का विवरण देते हुए उन्होंने लिखा-"यह चिड़िया वसंत आगमन पर विवाह की तैयारी करती है । नर एक स्थान पर बैठकर गाना गाता है । वह पेड़ों की टहनियाँ आदि एकत्रित करके रखता है और यह दिखाने का प्रयत्न करता है, मानों उसे उपार्जन, संरक्षण एवं गृहस्थ निर्माण की कला की समुचित सामर्थ्य उपलब्ध है । मनुष्य को भी तो विवाह से पूर्व अपनी क्षमता की ऐसी ही परीक्षा कर लेनी चाहिए, यदि उसमें उतनी योग्यता न हो, तो विवाह की जिम्मेदारी वहन करने का दुस्साहस नहीं ही करना चाहिए ।

मादा क्रमटी नर के पास से गुजरती है और उसकी योग्यता परख लेती है, तभी उसका प्रणय स्वीकार करती है । कई दिन मादा परखती रहती है, कहीं उसे झूठे प्रलोभन तो नहीं दिए जा रहे हैं । जब पूरा विश्वास हो जाता है, तभी नर-मादा दोनों मिलकर घोंसला बनाने की तैयारी करते हैं । अंडे सेने का काम भी दोनों मिल-जुलकर बारी-बारी से करते हैं ।

मनुष्य इन उदाहरणों से भली-भाँति प्रेरणा ग्रहण कर सकता है ।

कुशल वर एवं पराक्रमी संतान

अंजना में बाल सुलभ चंचलता देखकर उनके पिता उसे वानरी कहते थे । विवाह योग्य हुई तो उसने पिता से एक ही बात कही-"मैं साधारण गृहणियों की तरह चौके-चूल्हे तक सीमित नहीं रहना चाहती । मैं महापराक्रमियों की सहचरी बनकर रहूँगी । पिता उपयुक्त वर तलाशने लगे । एक बार जंगली हाथियों का झुंड ऋषियों की झोपड़ियाँ तोड़ने लगा । उनको भगाने का काम युवक केशरी ने अपने जिम्मे लिया और सभी को मार कर भगा दिया । पिता ने उसे अंजना के उपयुक्त वर समझा और विवाह कर दिया ।

संतान के संबंध में भी अंजना की ऐसी ही महत्वाकांक्षा थी । उसने वायु देवता की आराधना की और उससे पवनपुत्र हनुमान का जन्म लिया । वे बजरंगी थे । बचपन में ही वे बड़ी से बड़ी शिलाओं को कूदकर तोड़ देते थे । बड़े होकर उन्होंने राम काज में जीवन लगाया । लंका दहन और राम राज्य स्थापना में अग्रणी रहकर भाग लिया ।

रेवती एवं बलराम

रेवती राजा रेवतनय की पुत्री थी । उनने प्रण कर रखा था कि उच्च व्यक्तित्व वाले के साथ ही विवाह करेंगी । उपयुक्त वर न मिलने तक वे कुमारी ही बनी रहीं । अंत में अपने से कद और उम्र में छोटे बलराम से विवाह किया । देखने में यह जोड़ा समान नहीं था, फिर भी भावना और संस्कारों की समानता के कारण वह विवाह पूर्ण सफल रहा ।

गैरी बाल्डी को सहयोगिनी मिली

इटली में स्वतंत्रता संग्राम के सूत्रधार गैरी वाल्डी जेल में से किसी प्रकार छिपकर निकले और नाव द्वारा एक देहात में पहुँचकर स्वतंत्रता संग्राम का संचालन करने लगे ।

उनकी अद्भुत देश भक्ति और बहादुरी में साथ देने के लिए एबीटा ने उनका हाथ सहधर्मिणी के रूप में बटाने का निश्चय किया । उपयुक्त साथी को पाकर गैरी बाल्डी भी धन्य हो गये ।

बहुत दिन यह साथ चला । एक दिन शत्रुओं की गोली से एबीटा घायल हुई और मारी गई । गैरी बाल्डी ने अवसर पाकर उसकी कब्र वहाँ जंगल में ही बना दी । आज वह कब्र संसार भर की देश भक्त महिलाओं की प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है ।

विवाह-बंधन का सात्विक प्रयोजन

गोद वलेकर महाराज का परिवार उन पर विवाह करने के लिए बहुत जोर डाल रहा था । इन्कारी से पीछा न छूटा । तो उनने कहा-"लड़की अपने मन की चुनूँगा । घर वाले सहमत हो गए । महाराज ने पड़ौस के गाँव से एक अंधी और अपाहिज लड़की चुनी । उससे स्वेच्छापूर्वक विवाह करके ले आए और आजीवन उसकी भाव-भरी सेवा करते रहे ।

मसाई कबीले की विवाह परम्परा

अफ्रीका की मसाई जाति में वे ही युवक विवाह करने के अधिकारी माने जाते हैं, जो मात्र भाला और ढाल लेकर शेर का शिकार कर सकें । यह प्रथा इसलिए है कि उस समुदाय में बहादुर पीढ़ियाँ ही जन्में और जो दुर्बल हैं, उन्हें अपने जैसी असमर्थ संतानें जनने की छूट न मिले ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

दाम्पत्य जीवन का सुख-संतोष

वनवास काल में पांडव काम्यक वन में थे । श्रीकृष्ण सत्यभामा समेत उनसे मिलने गए । सत्यभामा ने द्रौपदी के प्रति पांडवों की अत्यधिक संतुष्टि और प्रसन्नता देखकर उन्हें एकांत में ले जाकर कारण पूछा और कहा–"हम इतनी पत्नियाँ होते हुए भी कृष्ण का मन जीत नहीं पातीं ?" द्रौपदी ने कहा–"तुम लोग हास-विलासिता को प्रसन्नता का माध्यम मानती हो, जबकि मैं व्यवस्था और परामर्श देकर उनके अनेक समाधान करती रहती हूँ । उनसे कम नहीं अधिक परिश्रम करती हूँ । इसीलिए काले वर्ण की होने पर भी एक नहीं पाँचों पतियों और छठी सास की प्राण-प्रिय हूँ । तुम लोग आलस्य और विलास अपनाकर उपयोगिता की दृष्टि से घटिया हो गई हो ।"

सत्यभामा ने बात गाँठ बाँध ली और वापस लौटने पर यह रहस्य अपनी अन्य सहेलियों को भी बता दिया । असंतोष दूर हो गया ।

कुरूपता एवं सौंदर्य

आँख और कान की विशेषता और गरिमा बताने के लिए किसी जिज्ञासु ने विचारक से पूछा । मनीषी ने उत्तर दिया–"आँख केवल सामने का देखती है, जबकि कान विगत-आगत और वर्तमान को सुनने-समझने में सहायता करते हैं ।"

सुंदर दीखने वाली आँखों की तुलना में कुरूप कानों की महिमा अधिक है । जो लोग सौंदर्य को, बहिरंग की सज्जा को ही महत्व देते हैं, उनके लिए यह जानना जरूरी है कि महत्ता कर्तृत्व की है । विवाह संबंधों पर भी यही बात लागू होती है ।

देयानां वस्तुजातानां चाकचक्यस्य वा पुनः ।
आभूषणादिकानां च सम्मर्दस्य प्रदर्शनम् ।। ३६ ।।
पाणिग्रहणसंस्कारे यदि सम्मिलितं भवेत् ।
कालुष्यं भजते दिव्यमात्मबन्धनमादितः ।। ३७ ।।
अपव्ययानुगाश्चैते धनमुख्या भवन्ति ये ।
पाणिग्रहणसंस्कारा आसुरास्ते ह्यवाञ्छिताः ।। ३८ ।।
कारणैरेभिरेवात्र पक्षयोरुभयोरपि ।
अयथाबलमारम्भैरविवेकतया भृशम् ।। ३९ ।।
आजीवनं भवेन्नूनं मनोमालिन्यमन्ततः ।
जीवनं स्वर्गतुल्यं च गार्हस्थ्यं नरकायते ।। ४० ।।

भावार्थ–दहेज, आभूषण, प्रदर्शन, भीड़-भाड़, धूम-धाम जैसे अपव्यय विवाह-संस्कार के साथ सम्मिलित करने पर वह परम पवित्र आत्मबंधन प्रारंभ में ही कलुषित हो जाता है । ऐसे धन-प्रधान विवाहों को असुर-विवाह कहते हैं, ये अवांछनीय है । इन कारणों से दोनों पक्षों के बीच आजीवन मन-मुटाव बना रहता है । चूँकि दोनों अपनी शक्ति से अधिक व्यय करते हैं, विवेक से काम नहीं लेते । इससे स्वर्गतुल्य गृहस्थ जीवन नरक तुल्य बन जाता है ।। ३६-४० ।।

व्याख्या–विवाह एक पवित्र बंधन है, जिसमें दो आत्माओं का उच्चस्तरीय प्रयोजनों हेतु मिलन-संयोग होता है । इस परंपरा में विकृतियों का समावेश मनुष्य की कुटिल बुद्धि की उपज है । कन्यादान के साथ धन-संपदा, विलास के साधनों का आदान-प्रदान एक शर्त के रूप में जोड़ देना, स्वार्थ बुद्धि की पराकाष्ठा तो है ही, मनुष्य की शोषक, क्रूर प्रवृत्ति का परिचायक भी है ।

दुर्भाग्यवश इस पवित्र मिलन के साथ मध्यकाल के अंधकारयुग में ऐसे कुप्रचलनों का समावेश हो गया, जिन्होंने न केवल विवाह संस्था को कलुषित किया, अपितु अनेक निरपराध मासूम कन्याओं को दहेज की बलिवेदी पर चढ़ने को विवश कर दिया । जहाँ गुण, कर्म, स्वभाव का परस्पर मिलकर परिष्कार होना चाहिए था, वहाँ इसके विपरीत व्यावसायिक वणिक वृत्ति ने पारस्परिक संबंधों के मध्य एक गहरी दरार पैदा कर दी है । इससे आपस में दो व्यक्तियों के मिलकर एक होने की बात तो दूर, संदेह-घृणा-अपमान एवं

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अशिष्ट कृत्यों ने नारकीय परिस्थितियाँ उत्पन्न कर दी हैं ।

अपव्यय से युक्त विवाहों के लिए दोनों ही पक्ष दोषी हैं । धूमधाम का प्रदर्शन जिस अहंता की वृत्ति के कारण किया जाता है, उसे त्यागा जाना चाहिए । खर्चीले विवाह निश्चित ही व्यक्ति को दरिद्र एवं बेईमान बनाते हैं । गरीबों या सामान्य व्यक्तियों द्वारा अमीरों का स्वाँग बनाया जाना, एक बुरी किस्म का फूहड़पन है । दहेज का रिवाज जब भी कभी था, तब वह विशुद्ध स्त्री धन के रूप में स्वेच्छा से दिया जाता था । पिता, भाई, कुटुंबी, संबंधी अपनी सामर्थ्यानुसार कुछ धन लड़की को देते थे, ताकि वह संकट के समय काम आ सके । अब जब वरपक्ष कन्या के साथ जबर्दस्ती दहेज की रकम भी दिए जाने की शर्त ठहराता है, तो वह विवाह पुण्य कृत्य न होकर आसुरी कृत्य हो जाता है । दहेज कम मिलने पर वधू को जलाकर मार देने या गला घोंट देने जैसे पैशाचिक कृत्य, नित्य इन दिनों प्रकाश में आ रहे हैं । राज्य दंड तो इन्हें मिलना ही चाहिए, ऐसे कृत्य करने वालों को सामाजिक दंड भी मिलना चाहिए, ताकि उन्हें व अन्यों को सीख मिले ।

पतिः पत्नी च प्राणैस्तु गच्छेतामेकतां सदा ।
शरीरेण द्वयं स्यातां स्नेहसम्मानमेव च ।। ४१ ।।
सहयोगं सदापूर्णं विश्वासं च परस्परम् ।
अर्पयेतामुभौ नैव गूहेतां किमपि क्वचित् ।। ४२ ।।
त्रुटयश्च सदा शोध्या हेया प्रतिशोधभावना ।
न ग्राह्या मतभेदाश्च विचारैस्ते परस्परम् ।। ४३ ।।
समाधेयाः स्वपक्षे च हठं नैव समाश्रयेत् ।
कोऽपि तत्र विपक्षं च भावयन् स्वं, विचारयेत् ।। ४४ ।।
काठिन्यं विवशं भावमन्यपक्षगतं सदा ।
आक्रोशं नाधिगच्छेच्च भग्ने स्वीये मनोरथे ।। ४५ ।।

भावार्थ–पति–पत्नी एक प्राण दो देह बनकर रहें । एक–दूसरे को परिपूर्ण स्नेह–सम्मान–सहयोग एवं विश्वास प्रदान करें । परस्पर दुराव न रखें । भूलों को सुधारते और भुलाते रहें, प्रतिशोध की भावना न रखें । मतभेदों को विचार–विनिमय से सुलझा लिया करें । कोई पक्ष आग्रहशील–हठवादी न बने । दूसरे की कठिनाई और लाचारी पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करे । अपनी मर्जी पूरी न होने पर आक्रोश से न भरें ।। ४१–४५ ।।

व्याख्या–सुखी, सफल दाम्पत्य जीवन तभी संभव है, जब नर व नारी दोनों एक-दूसरे के पूरक होकर जिएँ । पति-पत्नी में आपस में कोई दुराव-छिपाव न हो । गल्तियाँ दोनों में से किन्हीं की भी हो सकती हैं । उन्हें विनम्रता से इंगित कर उनका समाधान निकाला जा सकता है । सौजन्य एवं सहकार पर ही परिवार रूपी रथ की धुरी टिकी हुई है । इसमें दुराग्रह, पूर्वाग्रह या प्रतिशोध की भावना पनपने का अर्थ है, विग्रह का जन्म लेना, ऐसे संदेहों का जन्म होना, जो घुन की तरह धीरे-धीरे उस शहतीर को नष्ट कर डालते हैं, जिस पर भवन टिका हुआ है ।

आदर्श गृहस्थ मेरी व टॉमस

जब पति व पत्नी आपस में घुल–मिलकर रहते हैं, तो घर स्वर्ग नजर आता है, चारों ओर आनंद ही आनंद संव्यापत होता है. परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही विषम क्यों न हों ।

मेरी और टॉमस का दाम्पत्य जीवन अनंत प्रेम से भरा–पूरा था । हर वर्ष विवाहोत्सव मनाते और छोटा–मोटा उपहार उस दिन एक दूसरे को भेंट करते, गरीबी में जो दिन काटते थे ।

उस वर्ष का विवाह का दिन फिर आया । दोनों एक दूसरे के लिए उपहार देने की योजना बनाने लगे; पर जेबें बिल्कुल खाली थीं ।

टॉमस ने पत्नी के सुनहरे बालों में लगाने के लिए एक सुनहरी क्लिप खरीदने की बात सोची । मेरी सोचने लगी, पति की हाथ घड़ी के लिए सुनहरी चेन खरीदी जाय । दोनों के मनोरथ मन में थे । साधन जुट नहीं रहा था । दिन निकट आ गया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

टॉमस पुरानी घड़ी खरीदने वाले की दुकान पर गया और घड़ी बेचकर बदले में सुनहरी क्लिप खरीद लाया । मन में बहुत प्रसन्नता थी ।

मेरी क्या करती; वह सुनहरे बाल खरीदने वाले की दुकान पर गयी और अपने घुँघराले बाल कटाकर मिले पैसे से घड़ी की चेन खरीद लायी । सिर पर टोपा लगा लिया ।

दिन आया, उपहार देने के लिए । एक ने दूसरे की ओर हाथ बढ़ाया । क्लिप कहाँ लगे बाल नदारद । चेन कहाँ बँधे, घड़ी गायब । पूछने पर तथ्य खुला । शोभित न हो सकने पर भी, इन उपहारों ने एक-दूसरे का दिल सदा-सदा के लिए जीत लिया । दोनों की आँखों में प्रेम के आँसू भरे थे । इस तरह मना वह विवाह दिवसोत्सव ।

मुरली का समर्पण

राधा ने मुरली से ईर्ष्या करते हुए पूछा-"तुम्हें भगवान के होठों से लगे रहने का सौभाग्य क्यों कर मिला ?"

मुरली ने कहा-"मेरी साधना तो कुछ नहीं; पर अपने को खोखली पूरी तरह कर दिया है और वादक को इच्छानुरूप उपयोग करने का अधिकार दिया है ।

इसी समर्पण भावना से ईंधन आग बनता है, नाला नदी और पानी दूध । यही समर्पण भाव दाम्पत्य जीवन में हो, तो गृहस्थ जीवन सार्थक बनाया एवं कर्तव्यों को भली-भाँति निभाया जा सकता है ।

घनिष्ठता हो तो ऐसी

दाम्पत्य जीवन की पवित्रता एवं घनिष्ठता सारस आदि पक्षियों में देखी जाती है; पर चकवा-चकवी का उदाहरण अनुपम है । दोनों साथ-साथ रहते हैं । दोनों में से किसी की मृत्यु हो जाय, तो दूसरा विलख-विलख कर प्राण छोड़ देता है । दूसरा साथी फिर नहीं ढूंढ़ता ।

जीव जगत् के दाम्पत्य धर्म के उदाहरण

ह्वेल मछली अपने बच्चों को साथ लिए फिरती है और संकट आने पर पहले बच्चों को सुरक्षित स्थान पर छोड़ती है, पीछे उलटकर आक्रमणकारी का मुकाबला करती है । ऐसे अवसर पर नर ह्वेल भी पूरी तरह मादा का साथ देता है । संकट के समय भाग खड़ा होने की अपेक्षा उसे अपनी प्रियतमा के साथ मरना पसंद होता है ।

कबूतर, पंडुक, सारस आदि पक्षी पतिव्रत और पत्नीव्रत पालन करते हैं, वे एक बार संबंध स्थापित कर लेने क बाद उसे वफादारी के साथ आजीवन निबाहते हैं ।

घोंसला बनाने, अंडे सेने से लेकर बच्चों के पालन-पोषण तक का सारा काम नर-मादा पेंगुइन मिल-जुलकर पूरा करते हैं, प्रणय की परिणति दाम्पत्य सहयोग और शिशु पालन में भागीदार रहने तक के उत्तरदायित्व को नर भली प्रकार समझता है और उसे भली प्रकार निबाहता भी है । बच्चे पानी में तैरने से डरते हैं-इस भय से छुटकारा दिलाने के लिए पेंगुइन उन्हें बलपूर्वक पानी में धकेलती है और तैरने की कला सिखाती है, प्राय: दो-तीन महीने में बच्चे तैरने की ट्रेनिंग पूरी कर पाते हैं ।

विवाह से पूर्व नर और मादा रैवेन एक वर्ष तक लगातार साथ-साथ रहते हैं । मादा अपने लिए ऐसे नर का चुनाव करती है, जिसमें नेतृत्व के गुण हों, जो साहसी हो, निर्भय हो । आलसी, दुर्बल, मूर्ख आदमियों की कौन पूछ करे, वह प्रकृति से उद्योगी, साहसी और हिम्मतवालों का वरण करती है, मादा रैवेन इस मामले में पूरी छानबीन करके अपना फैसला देती है । यदि वह देखती है कि नर में नरोचित गुणों का अभाव है, तो उसे छोड़कर किसी अन्य का वरण करती है ।

घुल-मिल कर रहो

एक गृहस्थ एक बार परेशान होकर गुरुदेव के पास आया और बोला-"मैंने कई प्रयास कर लिए, पर मेरी पत्नी से मेरी पटरी नहीं बैठ पाई । वह तो अपनी ओर से कुछ कहती नहीं, पर जैसा मैं चाहता हूँ, वैसा वह अपनी क्रियाओं में नहीं ला पाती । बताइए, मैं क्या करूँ ?"

गुरुदेव ने बिना कुछ कहे, दो बाल्टी जल मँगवाया । एक बाल्टी में एक बूँद तेल डाल दिया एवं एक बाल्टी में एक अंजलि दूध । तेल की परत पानी पर फैल गयी, जबकि दूध पानी के साथ एकाकार हो गया । अपना परीक्षण समझाते हुए उन्होंने कहा-"तुम्हें पारिवारिक जीवन में दूध की तरह घुल-मिल जाना चाहिए, तेल की तरह हावी होने का प्रयास नहीं करना चाहिए ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गृहस्थ जीवन का मर्म उसकी समझ में आ गया एवं वह उत्साह से भर कर घुल-मिलकर जीवन निभाने पुनः घर लौट आया ।

आदर्श दाम्पत्य प्रेम

ब्रेनरे एक बुनाई की मशीन पर काम करने वाला मजदूर था । दोपहर की छुट्टी में उसकी स्त्री गरम खाना बनाकर नियमित रूप से फैक्ट्री में पहुँचाती । पच्चीस वर्षों में एक ही अवसर ऐसा हुआ कि वह नहीं पहुँची । ब्रेनरे ने समझा, कोई जरूर विशेष बात है । भागकर वह घर पहुँचा, देखा तो पत्नी बीमार थी । दवा-दारू का इंतजाम करके वह वापस फैक्ट्री पहुँचा । इस बीच वह मशीन बंद करना भूल गया । इन्सपैक्टर ने आकर उसे बंद किया । वापस आने पर मालिक ने उसकी गल्ती पर तीन महीने की तनख्वाह काट ली; किन्तु आदर्श दाम्पत्य प्रेम के लिए एक हजार रुपये का पुरस्कार भी दिया । यह चर्चा बहुत दिन तक सारी फैक्ट्री में चलती रही ।

आयु का नहीं, गुण का महत्व

इंग्लैंड के इतिहास में प्रख्यात प्रधानमंत्री डिजरायली जीवन के आरंभिक दिनों में गरीबी में दिन गुजारते थे और पत्रिकाओं में छुट-पुट लेख लिखकर काम चलाते थे । उनने अपने से १२ वर्ष बड़ी महिला से विवाह किया । वह रूपसी नहीं, गुणवती थी । आयु के साथ उनकी बुद्धि में भी दूरदर्शिता और परिपक्वता की मात्रा बढ़ गयी थी ।

प्रचलन न होने से मित्र हँसी उड़ाते थे; पर वे यही उत्तर देते-कम उम्र की नादान छोकरियाँ अपनी लुभावनी चंचलता के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे सकतीं । बुद्धिमान साथी की सलाह से मुझे प्रगति के पथ पर तेजी के साथ बढ़ने और प्रधानमंत्री पद तक पहुँचने में सफलता मिली ।

इस जोड़े की घनिष्ठ मित्रता और तुष्टि उस जमाने में आदर्श मानी जाती थी । उनका अनुसरण करते हुए, उन दिनों युवक बड़ी आयु की पत्नियाँ खोजने लगे थे ।

सावित्री-सत्यवान्

राजकुमारी सावित्री विद्वान्, गुणवान्, रूपवान्, धनवान् थी । विवाह का वय आने पर उसने किसी आदर्शवादी को साथी बनाने का निश्चय किया, जो स्वयं भी आगे बढ़े और उसे भी ऊँचा उठाये । राजकुमारी ने सभी आए हुए प्रस्ताव अस्वीकार कर दिए । मंत्रियों और रक्षकों के साथ उपयुक्त साथी की तलाश में स्वयं निकल पड़ी ।

खोजते-खोजते उसे रास्ते में एक युवा लकड़हारा मिला । चाल-ढाल से किसी सभ्य परिवार का दीखता था । रथ रोककर, राजकुमारी ने पूछा, तो उसने बताया-"पिता-माता वानप्रस्थ लेकर इसी वन में साधना कर रहे हैं । घर में राजपाट है, उसे भाइयों को सौंप कर मैं माता-पिता की सेवा के लिए साथ आ गया हूँ । गुजारे के लिए लकड़ी काटने-बेचने का भी काम करता हूँ । शिक्षा मेरी पूरी हो चुकी है ।

राजकुमारी ने उसे अपने उपयुक्त माना, रथ रोका, विवाह का प्रस्ताव रखा । इसके लिए युवक के माता-पिता को सहमत किया । साथी के साथ ऐसा कष्ट साध्य जीवन अपनाने का निश्चय सुनाया । निदान विवाह हो गया । राजकुमारी सावित्री लकड़हारे सत्यवान् की पत्नी बनकर वनवास में रहने लगी । लंबी अवधि इसी प्रकार बीत गयी ।

राजकुमार का मरण काल आ पहुँचा । यम लेने आये; पर ऐसे आदर्शवादी जोड़े पर हाथ डालने का उनका भी मन न हुआ । निकाले हुए प्राण उन्होंने वापस लौटा दिये । सावित्री की आदर्शवादिता ने यम जैसे कठोर को पिघला दिया और इतिहास को धन्य कर दिया ।

एक दूसरे के पूरक

इटावा जिले के एक देहात में लालताप्रसाद नामक एक ब्राह्मण रहता था । बिजली के तारों से खेलते समय वह नीचे गिरा, फलतः कंधे पर से उसके दोनों हाथ काटने पड़े ।

विवाह थोड़े दिन पहले ही हुआ था । पिता अपनी लड़की का दूसरा विवाह करना चाहते थे; पर स्त्री ने उस बिना हाथ वाले पति की सेवा करने को ही ठीक माना ।

लालताप्रसाद कंधों पर दूध के डिब्बे लादकर बेचने जाता । पत्नी ने दो भैंस, दो गाय पाल रखी हैं । दोनों मिलकर दूध का व्यवसाय चलाते हैं और पंद्रह-बीस रुपया रोज कमा लेते हैं । इनके तीन बच्चे भी हैं । हाथ की जरूरत के सारे काम पत्नी के हाथों से निकल जाते हैं । लोग इन पति-पत्नी के पुरुषार्थ को देखकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पारस्परिक सहयोग की फलश्रुतियाँ

अवंतिका बाई के पति बंबई में मशीनों की दुकान करते थे । गुजारा ठीक चलता था, पर उनके हाथ की एक उँगली मशीन में कट गयी थी । उनने प्रेरणा देकर पत्नी को नर्स की ट्रेनिंग करायी और स्वावलंबी तथा सुसंस्कारी बनाने में कोई कमी न रखी । नर्स की नौकरी करने के उपरांत भी अवंतिका बाई ने देश सेवा के कार्यों में भाग लेना शुरू किया और वे बंबई में अनेक महिला कार्यकर्त्री उत्पन्न करने में सफल रहीं ।

वे गाँधी जी के स्वतंत्रता आंदोलन में सम्मिलित हुईं और नौ महीने की जेल काटी । गाँधी जी ने चम्पारन सत्याग्रह में महिला सम्पर्क के लिए उन्हें विशेष रूप से बुलाया था ।

बंबई जाकर उन्होंने 'भारतीय महिला समाज' की स्थापना की और प्रौढ़ महिला शिक्षा तथा कुरीति उन्मूलन के लिए विशेष प्रयत्न किया एवं बंबई कारपोरेशन की सदस्या चुनी गईं । उनकी सार्वजनिक सेवाओं से बंबई का बच्चा-बच्चा परिचित और प्रभावित था ।

यह सब काम उन्होंने गृहस्थ के उत्तरदायित्व निभाते हुए पूरे किए और उदाहरण प्रस्तुत किया कि गृहस्थ में रहते हुए भी नारी बहुत कुछ कर सकती है । यह उनके पति के सहयोग से ही संभव हुआ ।

नारी उत्कर्ष के लिए समर्पित पति-पत्नी

कुमारी धनवती हुगली में जन्मीं, मद्रास विश्वविद्यालय से एम०ए० किया और क्वीन मेरी कॉलेज में अध्यापिका हो गईं ।

उनका विवाह एक उच्च पदाधिकारी रामाराय से हुआ । विवाह होते ही दोनों के बीच विचार-विमर्श हुआ कि एक आजीविका चलाये, दूसरा समाज सेवा करे । परामर्श का निष्कर्ष यह निकला कि पति नौकरी करे और पत्नी समाजसेवा । धनवती देवी ने दूसरे दिन ही इस्तीफा दे दिया और नारी उत्थान के योजनाबद्ध कार्यक्रम में जुट गईं ।

उनने नारी समाज को ऊँचा उठाने के लिए अनेक उपयोगी संस्थाएँ बनाईं और चलाईं । 'इंडियन वीमन एसोसियेशन', 'बाल-विवाह और पर्दा विरोधी समिति', परिवार नियोजन संस्था' आदि अनेक संस्थाओं के माध्यम से उन्होंने बड़े महत्वपूर्ण कार्य किए । बंगाल दुर्भिक्ष के लिए उनने धन संग्रह किया ।

उन्हें भारत सरकार ने पद्मभूषण अलंकार दिया । 'केसरे हिन्द' कहलाईं और अंतर्राष्ट्रीय अल्बर्ट एवार्ड उनने जीता । भारत के नारी उत्कर्ष अभियान में उनका नाम सदा अमर रहेगा ।

क्रांतिकारिणी दुर्गादेवी

भगवतीचरण बोहरा की बम बनाते समय लाहौर में ही मृत्यु हो गयी । उनने जीवित रहते पत्नी को पढ़ा कर अध्यापिका बना दिया था और दोनों ने प्रण किया था कि जो भी पीछे रहेगा, क्रांतिकारी दल का काम करेगा ।

बोहरा जी की धर्मपत्नी दुर्गादेवी ने अपने कर्तव्य को भली प्रकार निबाहा । भूमिगत क्रांतिकारी इनके यहाँ आश्रय पाते थे और सूचनाओं तथा अस्त्रों के आवागमन का उनके घर को केन्द्र मानते थे । नारी होते हुए भी उनने नर से अधिक साहस और सूझबूझ का परिचय दिया ।

पत्नी गुलाम नहीं, सहचर है मंदोदरी

आवश्यकता पड़ने पर नारी को पति के लिए एक शिक्षक की भूमिका भी निभानी पड़ती है । अनीति से समझौता न करना, पति को सही रास्ते पर लाने का प्रयास करना, उसका एक ऐसा गुण है, जो कहीं और भी देखा जाना दुर्लभ है ।

मंदोदरी रावण की पत्नी तो थी; पर उसकी गुलाम बनकर नहीं रही और न अपनी स्वतंत्र विवेक-बुद्धि से हाथ धोया । सीताहरण के वह अंत तक विरुद्ध रही ।

रावण के मरने पर उसने प्रजाहित को प्रधानता दी और विभीषण की पत्नी बनकर लंका के पुनर्निर्माण में जुट गई ।

सच्ची क्षत्राणी-येशुबाई

शिवाजी का बड़ा लड़का शंभाजी अपने पिता से सर्वथा लम्पट, धूर्त और दुश्चरित्र था । शिवाजी ने उसे कैद में बंद करवा दिया था; पर उसकी पत्नी येशुबाई को शिवाजी ने ऐसा प्रशिक्षित किया कि शंभाजी को ठोंक-पीट कर रास्ते पर ला सके । शिवाजी की मृत्यु के बाद शंभाजी ने पिता का स्थान ग्रहण किया; पर उन पर पूरी तरह नियंत्रण येशुबाई का था । इस नियंत्रण ने उसमें

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आश्चर्यजनक परिवर्तन किया । वह मराठा गौरव के अनुसार औरंगजेब से टक्कर लेता रहा ।

इस बीच येशुबाई ने मराठाओं की उस जागृति और वीरता को घटने नहीं दिया, जो उनके ससुर शिवाजी ने उत्पन्न की थी ।

शंभाजी घायल हुए और येशुबाई बंदी बनाई गई । इस पर भी वे गुप्त सूत्रों से, अपने समूचे क्षेत्र का गुप्त मार्गदर्शन करती रहीं । जब वे बंदी थीं, तो उन्होंने औरंगजेब की पत्नी जहाँआरा और पुत्री रोशनआरा को अपने पक्ष में कर लिया था । ऐसी थी आकर्षण व्यक्तित्ववाली प्रतिभा संपन्न येशुबाई । सत्रह वर्ष बंदी रहने के उपरांत ७० वर्ष की आयु में जब वे छूटीं, तो मराठों में उनने नया जीवन भर दिया ।

विद्योत्तमा ने पति को विद्वान् बनाया

पत्नी के सहयोग से विद्वान् बने साहित्यकारों में कालिदास का नाम चिरस्थायी रहेगा । वे आरंभ में अशिक्षित थे । विदुषी विद्योत्तमा शास्त्रार्थ करके अपने समतुल्य विद्वान् वरण करना चाहती थी । धूर्त पंडितों ने षड़यंत्र करके उनका विवाह कालिदास से करा दिया । वास्तविकता प्रतीत हुई, तो उन्हें दुःख तो हुआ, पर स्वयं उन्हें पढ़ाने में लग गईं । कहा, असली पति तुम्हें तब मानूँगी, जब विद्वान् बन सकोगे । कालिदास पूरी लगन से पढ़ने में लग गए और वे देश के माने हुए विद्वान् और राजकवि बने । उनकी संस्कृत रचनाएँ अत्यंत भावपूर्ण हैं ।

पत्नियाँ भी पति को सुयोग्य बना सकती हैं । इसका कालिदास चरित्र जीता-जागता उदाहरण है ।

सहिष्णुतां समाश्रित्य मैत्री निर्वाह्यते सदा ।
संसारे द्वौ नरौ नैव प्रकृत्या साम्यतां गतौ ।। ४६ ।।
स्वेच्छया न बलात्तत्र बाध्यं कर्तुं कमप्यहो ।
शक्यते संकटोऽभ्येति महाँस्तत्र बलाद्यदि ।। ४७ ।।
कार्यते कार्यमेषोऽत्र संकटश्च तथाविधः ।
उदेत्युग्रो व्यथादायी कार्यानुत्पत्तितोऽपि यः ।। ४८ ।।
अवसरो नैव दातव्यो मतभेदोदयाय च ।
आगतायां स्थितावेवं सहमानैर्विधीयताम् ।। ४९ ।।
कार्यं नारीव्रतं तत्र पातिव्रत्यं नरोऽपि च ।
कुर्यात् पत्नी व्रतं दिव्यं निष्ठातो जीवनं निजम् ।। ५० ।।

भावार्थ–सहिष्णुता के सहारे ही मैत्री का निर्वाह होता है । संसार में कोई भी दो मनुष्य एक जैसी प्रकृति के नहीं होते, फिर भी बलपूर्वक किसी को अपनी मर्जी पर चलने के लिए बाधित भी तो नहीं किया जा सकता । इस तरह काम करा लेने पर काम न होने से भी अधिक व्यथित करने वाला बड़ा संकट उत्पन्न होता है । अस्तु, मतभेदों को पनपने का अवसर ही न दिया जाय । यदि ऐसी स्थिति आए भी तो उन्हें सहन करते हुए काम चलाया जाय । नारी पतिव्रत धर्म का एवं नर पत्नीव्रत धर्म का निष्ठापूर्वक निर्वाह करे–यही दैवी जीवन है ।। ४६–५० ।।

व्याख्या–पारस्परिक सौजन्य के सहारे ही दो साथियों की मैत्री निभती है । जिन्हें जीवन भर के लिए एक गठबंधन में बाँध दिया गया है, उन्हें तो सहनशीलता का अभ्यास और भी अच्छी तरह करना चाहिए । स्वभाव दो व्यक्तियों के एक जैसे होते तो नहीं, पर समझा-बुझाकर, तालमेल बिठाकर ऐसी रीति-नीति बनाई जा सकती है, जिससे दो व्यक्तियों के आपस में टकराने की स्थिति न आए । पारस्परिक मतभेद पनपने एवं कोई एक पक्ष भी यदि सामयिक रूप से उन्हें अधिक न बढ़ने देने के लिए संकल्पित है, तो कालांतर में वे स्वयमेव तिरोहित हो जाते हैं । जब वस्तुस्थिति का पता चलता है तब लगता है, उस समय की मनःस्थिति एवं तद्जन्य आवेश कितना निरर्थक एवं तिल को ताड़ रूप में बनाया गया है ।

एक दूसरे के लिए एकनिष्ठ भाव से समर्पित होकर यदि संभव हो सके, तो गृहस्थ जीवन स्वर्ग से भी बढ़कर है । मात्र पत्नी के लिए पति परायण होना ही नहीं, पति के लिए पत्नी के प्रति उतनी ही कर्त्तव्यनिष्ठा चिंतन एवं व्यवहार में होना जरूरी है, तभी दोनों का गठबंधन सार्थक है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हर स्थिति में प्रसन्न

पत्नी भिन्न स्वभाव की हो तो क्या ? रीति-नीति अपनाकर जीवन सुखपूर्वक जिया जा सकता है, इसकी साक्षी तीन संतों के जीवन से मिलती है ।

संत एकनाथ जी श्री विट्ठल जी के मंदिर में दर्शनार्थ गए । उनकी धर्मपत्नी बड़ी सुलक्षिणी सुयोग्य और सत्कार्यों में सहयोग देने वाली थी । उन्होंने भगवान् का आभार मानते हुए कहा-"हे कृपानिधान ! आपने मुझे स्त्री संग के नाम पर सत्संग प्रदान किया । आपका बड़ा उपकार है मुझ पर ।"

संत तुकाराम की पत्नी बड़ी कर्कश थी । किसी भी सत्कार्य में उनकी रुचि नहीं थी । आए दिन तुकाराम को परेशान किया करती थी । उन्होंने भगवान् से प्रार्थना की-"हे कृपानिधान ! आपने मुझे घर की आसक्ति से बचाने के लिए स्थायी व्यवस्था कर दी । पत्नी के रूप में अंकुश लगा दिया, ताकि मेरा मन राग में, मोह में न उलझ जाये । आपकी बड़ी कृपा ।"

नरसी मेहता की पत्नी अल्पायु में ही चल बसीं । उन्होंने कहा-"भलुथयुं भांगी जंजाल, सुखे भजी शुं श्री गोपाल ।" अर्थात अच्छा हुआ कुटुंब का झंझट अपने आप ही घट गया, पूरे मन से श्री गोपाल का भजन कर सकूँगा ।

सत्पुरुष हर परिस्थिति को अपने हित में प्रयुक्त करने में समर्थ होते हैं ।

दोनों के अपने-अपने पूर्वाग्रह

एक बार विनोबा जी पदयात्रा करते हुए एक छोटे से कस्बे में पहुँचे । कस्बे का एक युवक आकर उनसे मिला और बोला-"विनोबा जी ! मेरी पत्नी मुझसे प्रेम नहीं करती, आप इसका हृदय परिवर्तन कर दीजिए ।" विनोबा जी ने युवक के पास खड़ी हुई पत्नी से पूछा-"क्यों बिटिया, तुम अपने पति से प्रेम नहीं करतीं ?" पत्नी छूटते ही बोली-"क्यों करूँ ? मेरा पति मेरे लिए आखिर करता क्या है ?"

विनोबा जी चुप हो गए । कुछ सोचकर युवक से बोले-"घर जाओ और तुम स्वयं पत्नी से प्रेम करना शुरू करो ।" यह सुनकर युवक भड़क उठा-"लोगों ने झूठमूठ ही आपके बारे में फैला रखा है कि आप हृदय-परिवर्तन कराने में माहिर है । अब देख ली आप की असलियत ।"

विनोबा जी चुप हो गए । युवक चला गया तो उनके एक शिष्य ने विनोबा जी से कहा-"अब तो वह आप की बड़ी बदनामी करेगा । आपको उसकी पत्नी को कुछ समझाना-बुझाना चाहिए था ।

विनोबा जी ने कहा-"उससे कोई लाभ न होता । पत्नी कुछ सुनना ही नहीं चाहती थी । दूसरे उसे सुनने की आवश्यकता भी नहीं थी । युवक भी कुछ सुनना नहीं चाहता था, हालांकि उसे सुनने की आवश्यकता थी ।"

समझदार आदमी का काम यह है कि वह अपनी बात कहने से पहले परामर्श देने वाले, मित्र एवं जीवन साथी की बात को पूरी तरह समझने का प्रयास करे । आवेश में ही अपनी अभिव्यक्ति न कर दे ।

सही अर्थों में एक दूसरे को समर्पित

श्रीनगर कश्मीर में जन्मी उर्मिला एक धनी ठेकेदार की बेटी थी । वे पढ़ती और पढ़ाती रहीं । किशोरावस्था में भी उनने महिला समाज की बड़ी सेवा की ।

बड़ी होने पर उनका विवाह मेरठ के धर्मेन्द्रनाथ शास्त्री से हुआ । उर्मिला भी शास्त्री थीं । वे एक स्कूल में अध्यापिका हो गयीं । पति प्रोफेसर के गृह कार्यों के अतिरिक्त वे पति समेत सार्वजनिक सेवा में विशेषकर महिला उत्थान में लगी रहतीं ।

सन् ३० का स्वतंत्रता संग्राम आरंभ हुआ । उसे आगे बढ़ाने में उर्मिला जी प्राणपण से लग गयीं । उनकी संगठन और आंदोलनों की क्षमता अद्‌भुत थी । मेरठ शहर को ही नहीं, पूरे जिले को उन्होंने जगा दिया । सत्याग्रह आंदोलन में वह क्षेत्र अग्रणी हो गया । महिला संगठन उनने अलग ही खड़ा किया, जिसकी पाँच हजार सदस्या थीं ।

उर्मिला जी को दो बार जेल जाना पड़ा । फिर भी वे पूरे उत्साह के साथ आजादी की लड़ाई रानी लक्ष्मीबाई की तरह लड़ती रहीं । उनके द्वारा स्थापित 'उर्मिला शिशु विद्यालय' अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है । वे अब नहीं रहीं, किन्तु दाम्पत्य द्वारा स्थापित आदर्श अभी भी जिंदा है ।

परस्पर सहयोग की फलदायी परिणति

विश्वविख्यात संगीतज्ञ पाठलोकासाल कहा करते थे-"दुनिया को मरने से बचाने के लिए संगीत ही सबसे बड़ा संरक्षक हो सकता है । मार्टिन लूथर का यह कथन भी प्रख्यात है कि मनुष्य जाति को भगवान द्वारा दिए गए सबसे भव्य वरदानों में से एक संगीत भी है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ऐसे ही अनेक कथनों को जापान के एक संगीत विद्यार्थी शिनीची सुजुकी ने अपना जीवन दर्शन बनाया और वह उसी के लिए समर्पित हो गया । उनने न केवल संगीत विद्यालय खोलकर इस महाविद्यालय के जीवन उत्कर्षकारी पक्ष को विकसित किया, वरन् जन साधारण को संगीत की आत्मा से परिचित कराने के लिए द्वार-द्वार पर अलख भी जगाया ।

सुजुकी ने अपनी पत्नी ऐसी ढूँढ़ी, जो उसके मिशन में कंधे से कंधा लगाकर और कदम से कदम मिलाकर चल सके । पियानो वादन की मर्मज्ञ बाल्ट्राइड के साथ विवाह की बात इसी शर्त पर पक्की हुई कि दोनों मिलकर संगीत की सेवा करेंगे । विवाह के बाद ही टैलेंट एजुकेशन इन्स्टीट्यूट की स्थापना हुई और बाल्ट्राइड उसी में प्राणपण से निमग्न हो गयी । इस संस्था की ७० शाखाएँ सारे जापान में चलती हैं । इन विद्यालयों ने अब तक कोई डेढ़ हजार प्रख्यात संगीतकारों को विनिर्मित किया है ।

सुजुकी कहते हैं-"शुद्ध संगीत मनुष्य में भाव-संवेदना जगाता है; अनुशासन, सहिष्णुता और कोमलता जगाता है । हृदय को सुंदर बनाने में संगीत की अपनी भूमिका है । उनकी पत्नी कहती थीं-"हम लोग चाहते हैं कि जापान का बच्चा-बच्चा सहृदय और आदर्शवादी भावनाओं से सुसंपन्न बने । इसी लक्ष्य के लिए हम लोगों ने अपने को एक सदुद्देश्य के लिए समर्पित किया है ।"

दोनों पति-पत्नी जिस लक्ष्य को लेकर एक दूसरे के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चले, उसने अनेक को प्रेरणा एवं नया जीवन दिया । सहयोग की परिणति हमेशा महान् होती है ।

जो है, उस पर संतोष

छोटी-छोटी बातों से गृहस्थी में व्यवधान नहीं आना चाहिए । समझ-बूझ से काम लिया जाय, तो पता चलता है कि पहले उठाया कदम कितना गलत था ।

एक व्यक्ति का नाम ठंठनपाल था । उसकी स्त्री को यह नाम पसंद नहीं आया और अपना अपमान समझकर पिता के घर चलती बनी ।

रास्ते में एक स्त्री घास खोदते मिली । नाम पूछा, तो 'लक्ष्मी' बताया । आगे एक फटेहाल किसान मिला । उसने अपना नाम 'धनपाल' बताया । उससे आगे एक मुर्दा मिला उसे ले जाने वालों से मृतक का नाम पूछा, तो उनने 'अमरसिंह' नाम बताया ।

काम और गुण में असंगति देखकर स्त्री वापस लौट गयी और मन ही मन गुनगुनाती चली-

'घास खोदे लक्ष्मी, हल जोते धनपाल । अमरसिंह मुर्दा बने, सबसे भले ठंठनपाल ॥'

उपलब्ध की स्थिति पर संतोष करना इस कथा का प्रयोजन है ।

मैं उसकी आत्मा को रुलाऊँगा नहीं

संत च्योगत्सू उच्चकोटि के दार्शनिक भी थे और साथ ही साथ आदर्श सद्गृहस्थ भी । उनके आनंदित दाम्पत्य जीवन की सभी प्रशंसा करते थे ।

च्योगत्सू की पत्नी का देहावसान हो गया । शोक-संवेदना प्रकट करने के लिए देश भर के बड़े लोग आए । यहाँ तक कि चीन का राजा भी पहुँचा ।

राजा ने देखा च्योगत्सू पत्नी की कब्र के समीप सितार बजाते हुए गीत गाने में निमग्न हैं ।

चकित होकर राजा ने शोक के अवसर पर ऐसा हर्ष मनाने का कारण पूछा, तो संत ने एक ही उत्तर दिया-"जिस सहचरी को मैंने जीवन भर प्रसन्नता के संवाद सुनाए और अवसर दिए, उसके चले जाने के बाद अपनी व्यथा सुनाकर रुलाने का तनिक भी मन नहीं होता ।" यही है पति-पत्नी के बीच सच्चा प्रेम, दिव्य समर्पण ।

जब होश आए तभी सही

प्रसिद्ध उपन्यासकार डॉ० क्रोनिन बड़े गरीब थे । डॉक्टर बनकर वे धनवान् हो गए । किन्तु उनका मन पैसे में पड़ गया । उनकी पत्नी ने कहा-"हम गरीब ही ठीक थे, कम से कम दिल में दया तो थी, अब उसे खोकर कंगाल हो गये ।" डॉ० क्रोनिन ने कहा-"सच है, धनी धन से नहीं होते, धनी तो मन से होते हैं । तुमने मुझे सही राह दिखाई, नहीं तो हम ऐसी स्थिति में पहुँच जाते, जहाँ परस्पर स्नेह के सूत्र भी कमजोर पड़ने लगते ।"

जब समझ आ जाए तभी सही, परंतु पारस्परिक विचार-विमर्श में पूर्वाग्रह मिटाकर यदि एक दूसरे की सुन ली जाय, तो उससे अंततः हित ही होता है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तपस्विनी गांधारी एवं उनकी संयम साधना

गांधारी राजा धृतराष्ट्र की पत्नी थी । धृतराष्ट्र अंधे थे, वृद्ध भी । रानी ने अपनी आँखों पर पट्टी बाँधकर पति की तरह ही नेत्रविहीन स्थिति में रहना आरंभ किया, ताकि उनका मन किसी रूपवान् को देखकर विचलित न हो ।

उनकी यह संयम-साधना तपश्चर्या जैसी ही फलवती हुई । एक बार उनने नेत्र उघार कर दुर्योधन को देखा, तो उनका शरीर लौहवत् हो गया । अंत में उनने श्रीकृष्ण को भी शाप दिया था कि तू चाहता तो महाभारत टल सकता था । तुम्हारी उपेक्षा से जिस प्रकार मेरा वंश नाश हुआ, उसी प्रकार तुम्हारा वंश भी परस्पर लड़-भिड़ कर समाप्त होगा । यदुवंशी गांधारी के शाप से लड़-भिड़ कर समाप्त हुए थे ।

घर रहकर भी संयम-साधना द्वारा कोई व्यक्ति तपस्वी हो सकता है ।

धर्म परायण-शैव्या

राजा हरिश्चन्द्र की पत्नी शैव्या समय-समय पर राजकाज एवं गृह-व्यवस्था में अपने मतभेद प्रकट कर देती थीं, पर उनने कभी धर्म-कर्म में रोड़ा नहीं अटकाया । महर्षि विश्वामित्र को नई सृष्टि संरचना के लिए धन की आवश्यकता पड़ी । उनने राज्य उन्हें सौंप दिया, तो भी कमी रही, तो राजा ने अपने को, पत्नी शैव्या को तथा पुत्र रोहिताश्व को बेच देने का निश्चय किया । रानी ने इस कार्य में बाधा नहीं डाली, वरन् पूरा-पूरा सहयोग दिया । जहाँ एक दूसरे के प्रति पूर्ण समर्पण है, वहाँ अपना निजी मत कैसा ?

रुष्ट नहीं हुए, पुनः काम में खोए

इंग्लैंड के प्रसिद्ध विद्वान् टामस कूपर अंग्रेजी भाषा का शब्दकोश तैयार करने में लगे थे । काम में वे इतने खोए रहते थे कि घर की बातों का ध्यान ही नहीं रहता था ।

उनकी पत्नी इस व्यस्तता से बहुत चिढ़ती थीं । एक दिन उसने लिखे हुए सारे कागज जलाकर राख कर दिए ।

कूपर जब घर लौटे और अपना साठ साल का परिश्रम इस तरह नष्ट हुए देखा, तो उनने केवल इतना ही कहा-"तुमने आठ साल का काम मेरे लिए और बढ़ा दिया ।"

इसके बाद वे शब्दकोश को नए सिरे से लिखने में फिर निमग्न हो गए ।

उतावली में हुई भूल

प्रख्यात दार्शनिक और वैज्ञानिक वरट्रेण्ड रसेल ने अपनी जीवन गाथा में लिखा है कि सत्य के जुनून ने किस प्रकार दो जिंदगियाँ तबाह कर दीं ।

वे लिखते हैं कि मेरी पहली पत्नी इतनी भली थी कि उसकी स्मृति कभी मस्तिष्क पर से उतरी ही नहीं । दोनों के बीच अगाध प्रेम था; पर एक दिन किसी बात पर अनबन हो गयी । नाराजी में दफ्तर गया । रास्ते में जो विचार बने, उन्हें पत्नी को बता देने में सचाई समझी । वापस लौट आया । पत्नी ने कारण पूछा, तो कहा-"तुम्हें बिना छिपाए वस्तुस्थिति बताने आया हूँ कि अब तुम्हारे लिए मेरे मन में तनिक भी प्रेम नहीं रहा ।"

पत्नी उस समय तो कुछ नहीं बोली; पर उसके कान में यह बात घर कर गयी, कि मैं कपटी हूँ । अब तक व्यर्थ ही प्रेम की दुहाई देता रहा ।

खाई दिन-दिन चौड़ी होती गयी । बिना टकराव के भी उदासी बढ़ती गयी । मेरे सफाई देने का भी कुछ असर न हुआ और परिणति तलाक के रूप में सामने आयी ।

अब मैं महसस करता हूँ कि जीवन में बन पड़ी अनेक भूलों में से यह एक बहुत बड़ी भूल थी, जिसमें मन की बात तत्काल उगलने की उतावली अपनायी गयी । उस सत्य को छिपाये रहता, तो शायद वह असत्य भाषण की तुलना में हल्का पाप होता ।

कभी-कभी अपवाद रूप में ऐसा भी हो जाता है; पर यहाँ वह उक्ति याद रखी जानी चाहिए, जिसमें अप्रिय सत्य की तुलना में प्रिय सत्य को वरीयता दी गयी है । यह व्यावहारिक शिष्टाचार है कि जो बात जीवन साथी के मन में चुभती हो, उसे कहने से बचा जाय ।

देवतुल्यं विधातुं तद् विवाहात्पूर्वजं तथा ।
व्यतिरेकश्च विस्मर्यः कार्यं न संशयादिकम् ।।५१।।
विवाहस्य दिनादेव प्रारब्धा व्रतशीलता ।
जायते भाव्यमेतैश्च नियमैरुभयोः कृते ।।५२।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

समानैर्विधवानां ते विधुराणामुताऽपि च ।
कारणेऽपरिहार्ये च बन्धनान्मुक्तिरिष्यते ।।५३।।
नियमं मन्यतां नैतदपवादं तु केवलम् ।
प्रसंगाश्चेदृशा न्यूना एवायान्तु कदाचन ।।५४।।
अर्धाङ्गिनी न त्यक्तव्या नरेणाऽनीतिपूर्वकम् ।
दृष्टिं दद्याज्जागरूकां तस्यां देहे निजे यथा ।।५५।।

भावार्थ–विवाह से पूर्व के व्यतिरेकों को भुला दिया जाय । इस कारण कोई किसी पर अविश्वास या संदेह न करें । व्रतशीलता तो विवाह के दिन से आरंभ होती है । विधवा और विधुर दोनों के लिए एक जैसे अनुशासन होने चाहिए । बंधन–मुक्त होने का प्रयत्न अनिवार्य कारण होने पर ही किया जाय । उसे नियम नहीं अपवाद माना जाय । ऐसे प्रसंग कम ही आएँ । कोई पति अपनी पत्नी का अनीतिपूर्वक परित्याग न करे । इस पर अपने शरीर की देखभाल की तरह ही कड़ी दृष्टि रखनी चाहिए ।। ५१–५५ ।।

व्याख्या–पाणिग्रहण संस्कार व्रतों को निभाने हेतु दृढ़-निश्चयी दो व्यक्तियों का संयुक्तीकरण है । ऐसे पुण्य-प्रयोजन में निरत साथियों को आपसी संबंधों में संदेह को आड़े न आने देना चाहिए । यदि पूर्व के कोई ऐसे प्रसंग हों, जिनसे अविश्वास को पोषण मिलता हो, तो उनसे विमुख होकर उनमें न उलझना ही श्रेयस्कर है । इसी में पारिवारिक गठबंधन की मर्यादा निभती है ।

यदि किसी कारणवश दोनों को अलग होना पड़े, तो ऐसे अवसर कम से कम आने दें । इन दिनों छोटी-छोटी बातों पर आवेशग्रस्त होकर संबंध टूटते देखे जाते हैं । तलाक के प्रसंग आम हो गए हैं । पाश्चात्य सभ्यता देव संस्कृति पर हावी होती जा रही है एवं आधुनिकता की दौड़ में मदहोश व्यक्ति विवेक खोकर गृहस्थ-जीवन रूपी हाथ आए सुयोग को गँवा बैठता है । इसमें एक बात विशेष रूप से ध्यान रखने योग्य यहाँ बताई गई है कि कोई भी व्यक्ति अपनी पत्नी को, जो उसकी अर्धांगिनी है, अनीतिपूर्वक न छोड़े । यह एक ऐसा अपवित्र कृत्य है, जो मनुष्यता के नाम पर कलंक है ।

परस्पर विश्वास पर निर्भर संबंध

द्रुपद पुत्री द्रौपदी का मन गृहस्थ बनाने मात्र का इच्छुक न था । वह किसी बड़े काम में अपना श्रम और समय लगाना चाहती थीं । अंततः इसके लिए पांडव उपयुक्त लगे और उनके साथ विवाह कर लिया । वे पांचों भाइयों की संयुक्त पत्नी होकर रहीं । आरंभ में उचित-अनुचित का झंझट सामने आया, तो व्यासजी ने निपटारा किया, कि इसमें कुछ भी अनुचित नहीं है । जबएक पुरुष कई नारियाँ रख सकता है, तो स्त्री को भी वैसी व्यवस्था बनाने में कोई अनौचित्य नहीं है ।

जहाँ द्रौपदी के कारण पाँचों भाइयों की आत्मीयता घनिष्ठ होती रही एवं उनके सहयोग से महान् भूमिका निभा सके, वहाँ यह भी सही है कि द्रौपदी के स्वयं के सौजन्य एवं सहकार की वृत्ति से उनका पारिवारिक जीवन अनुकरणीय भी बना । पाँचों पतियों में कभी भी एक दूसरे के प्रति संदेह या अविश्वास के बीज को पनपने का अवसर न मिला ।

लिंकन की सहनशीलता

अब्राहम लिंकन की पत्नी कठोर स्वभाव की कर्कशा स्त्री थीं । इस कारण से लिंकन का घरेलू जीवन दुःखी हो गया था । कितनी ही बार सब लोगों के सो जाने पर, वे काफी रात गए, मकान के पिछले दरवाजे से घुसकर चुपचाप सो जाते और दिन निकलने से पहले ही उठकर अपने ऑफिस चले जाते थे । दिन भर हँसते और हँसाते थे ।

एक बार एक नौकर को लिंकन की पत्नी ने खूब फटकारा । उसे यह बात बहुत बुरी लगी । इसलिए उसने लिंकन से इसकी शिकायत की । अब्राहम लिंकन ने हँसकर कहा–"अरे भले आदमी ! मैं पंद्रह वर्षों से इस परिस्थिति का सामना कर रहा हूँ और सब कुछ शांतिपूर्वक सह रहा हूँ । तुम से एक दिन की फटकार भी सहन नहीं होती ।"

फिर भी संतुलन न खोया

संत तुकाराम की पत्नी बड़े कर्कश स्वभाव की थीं । एक बार उनके लिए किसी किसान ने गन्नों का एक गट्ठा भेजा । रास्ते में जो परिचित बच्चे मिले, उनने एक-एक करके सभी गन्ने माँग लिए । घर के लिए एक बचा, सो उनने पत्नी को थमा दिया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पत्नी गट्ठे की प्रतीक्षा में थी । एक मिला, तो कारण पूछा । बताने पर बहुत क्रुद्ध हुईं । उस गन्ने को संत की पीठ पर इतनी जोर से मारा कि टूट कर दो टुकड़े हो गए । चोट जोर से लगी ।

इतने पर भी संत ने संतुलन नहीं खोया । उल्टे मारने वाले हाथों की प्रशंसा करने लगे । कैसे सधे हुए हाथ हैं वे कि गन्ना ठीक बीच से टूटा । मुलायम वाला भाग पत्नी को थमाते हुए, कड़ा वाला स्वयं ले लिया, न क्रोध किया, न उलाहना दिया ।

माता शारदामणि वैसी बनीं, जैसा पति ने चाहा

रामकृष्ण परमहंस की पत्नी शारदामणि जब युवा हो गयीं, तब अपने पति के पास दक्षिणेश्वर मंदिर आयीं । परमहंस जी ने उन्हें पूरे स्नेह और सम्मान के साथ रखा । साथ ही अपना लक्ष्य भी उनके सामने रखा कि वे ब्रह्मचर्यपूर्वक आध्यात्मिक क्रिया-कलापों में संलग्न रहना चाहते हैं । यदि वे आज्ञा दें, तो इस व्रत को न तोड़ें ।

शारदामणि ने सहर्ष स्वीकृति दे दी और वे पति के साथ रहते हुए भी आजीवन ब्रह्मचारिणी रहीं । जितने पति के शिष्य-भक्त आते थे, उन्हें वे अपनी संतान की तरह स्नेह देती थीं ।

उन दिनों बंगाल में सती प्रथा का प्रचलन था । वे भी सती होना चाहती थीं । पर मरते समय परमहंस जी ने आदेश दिया-"आत्महत्या से कोई लाभ नहीं । तुम मेरा छोड़ा काम पूरा करो ।" उनने आदेश पाला और जब तक जीवित रहीं, भक्तजनों को ज्ञान तथा वरदान का अभाव नहीं खटकने दिया ।

झंझट निपटने का एक तरीका-टालना भी

यदि परस्पर कभी विवाद का अवसर आये तो अनदेखी करना भी एक तरीका है । एक सरपंच थे । दूर-दूर गाँवों के लोग उनके पास अपने झगड़े तय कराने आया करते थे । एक बार बहुत दूर से अपरिचित लोग फैसला कराने आये । सरपंच का घर मालूम न था । सो खेत जोतते चार हलवाहों से उनके बारे में पूछा । घर की ओर इशारा करते हुए, उनने कहा-"जाना व्यर्थ है । वे कुछ सुनते-समझते तो हैं नहीं ।" यह एक अचंभे की बात थी । पर वे घर की ओर तो चले ही । गाँव के निकट कुएँ पर चार पनहारिन पानी भर रही थीं । सरपंच के बारे में पूछा, तो उनने कहा-"वे रहते तो अगले मोहल्ले में हैं, पर उन्हें कुछ दीखता नहीं ।" यह और भी आश्चर्य की बात थी । घर के दरवाजे के बार एक बुढ़िया बैठी थी, उससे सरपंच के बारे में पूछा, तो वह बोली-"वे तो मर गए । जाना व्यर्थ है ।" फिर भी उन लोगों ने दरवाजे पर से लौटना उचित न समझा और भीतर घुस गए । देखा तो सरपंच स्वस्थ और प्रसन्नमुख बैठे, आगंतुकों की बातें सुनते और फैसला निपटा रहे हैं ।

नव आगंतुकों ने अपनी बात कहने से पहले जो सुना था, उसे बताया और कारण पूछा । सरपंच ने कहा-"हलवाहे मेरे चार लड़के थे । रोज कुछ न कुछ समस्या लेकर आते हैं । कभी बँटवारे की, तो कभी कुछ ? उनकी बात अनसुनी कर देता हूँ । पानी भरने वाली मेरी पतोहू थीं । वे कभी जेवरों के लिए, कभी काम के लिए झगड़ती रहती हैं । उनकी शिकायतें अनदेखी कर देता हूँ । दरवाजे पर बैठी बुढ़िया मेरी पत्नी है । वह बहू-बेटों से लड़ती रहती है और मुझे उनसे लड़ाना चाहती है; किन्तु मैं टालता रहता हूँ । सो वह मुझे मरा समझती है ।"

कथन का तात्पर्य यह है कि झंझटों को निपटाने का तरीका अनदेखी, अनसुनी करना और टाल देना भी है ।

दोनों मिलकर एक रूप

संबंधों की प्रगाढ़ता ऐसी हो जैसी राम-सीता के मध्य थी ।

सीता ने त्रिजटा से कहा-"मैं जब श्रीराम का ध्यान करती हूँ, तो लगता है मैं नारी नहीं रही, मैं भी राम हो गई ।" त्रिजटा बोली-"हाँ देवी ! उपासना से इष्ट रूप की प्राप्ति हो जाती है । यह ध्यान की उत्कृष्टता का लक्षण है ।"

सीता बोलीं-"पर मुझे भय लगता है कि मैं राम हो जाऊँगी तो राम की सेवा कौन करेगा ?" त्रिजटा ने कहा-"देवी ! आप इसकी चिंता न करें । जिस गहराई से आप श्रीराम का ध्यान करेंगी, उसी गहराई से वे आपका ध्यान करेंगे । जब ध्यान के प्रभाव से आप राम बनेंगीं, तब तक राम ध्यान की तन्मयता से सीता बन जायेंगे । सेवक-सेव्य भाव का निर्वाह हर दिशा में होता रहेगा ।"

यौवने पुरुषैः सर्वैरर्थोपार्जनमिष्यते ।
उचितं चेदमाभाति तथैवाऽऽवश्यकं नृणाम् ।। ५६ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

श्रमस्याऽऽजीविका ग्राह्या सर्वैरेव नरैरिह ।
ग्राह्या पवित्रता चेव तत्रोपार्जनकर्मणि ।। ५७।।
नेदृशं व्यवसायं च कञ्चिदेव समाश्रयेत् ।
पतनस्य पराभूतेर्गर्ते येन पतेत् स्वयम् ।। ५८।।
अनावश्यके च शृङ्गारे सज्जयामपि वा पुनः ।
अपव्ययायुतं नैव प्रदर्शनमथाऽऽचरेत् ।। ५९।।
व्यसनेषु प्रपञ्चेषु गौरवं नैव मन्यताम् ।
नैव तस्मिन् व्ययः कार्यः पणकस्याऽपि कुत्रचित् ।। ६०।।
सामान्यया च पद्धत्या जीवनस्य तया सह ।
उत्कृष्टं जीवनं बद्धमहंकारि नरास्तु ये ।। ६१।।
प्रदर्शनरतास्ते तु सदैवाऽऽधमर्णताम् ।
घृणास्पदस्थितिं चैव प्राप्नुवन्ति निरन्तरम् ।। ६२।।

भावार्थ–युवावस्था में सभी को अर्थोपार्जन करना पड़ता है । प्रत्येक मनुष्य के लिए यह उचित भी है और आवश्यक भी । सभी को श्रम की आजीविका उपार्जित करनी चाहिए । उपार्जन में ईमानदारी बरती जाय । कोई ऐसा व्यवसाय नहीं करें, जिससे किसी को पतन–पराभव के गर्त में गिरना पड़ता हो । अनावश्यक शृंगार–सज्जा, अपव्यय भरा प्रदर्शन, आडंबर एवं दुर्व्यसनों में न तो बड़प्पन मानना चाहिए और न उनमें एक पैसा खर्च करना चाहिए । सादगी के साथ ही उत्कृष्ट जीवन जुड़ा हुआ है । प्रदर्शन प्रिय अहंकारी आर्थिक तंगी भुगतते, ऋणी रहते और घृणास्पद बनते हैं ।। ५६–६२ ।।

सबसे पहले स्वावलंबन

पुत्र के युवा होते ही माता–पिता का दायित्व संभाल लेना सबसे बड़ा पुण्यकार्य है । महामानव पारिवारिक उत्तरदायित्व को भी परमार्थिक कार्यों की भाँति ही निबाहते हैं ।

एण्ड्रू कार्नेगी उस मजदूर का नाम है, जो दिन भर मजूरी करके १५) रु. मासिक कमाता और उसकी स्त्री रईसों के कपड़े धोकर कुछ कमा लाती । इस स्थिति में भी परिवार में भारी प्रेम था । इकलौता बेटा अपनी माँ को आश्वासन देता रहता कि मैं थोड़ा बड़ा हो जाऊँगा, तो ज्यादा कमाऊँगा और तुम लोगों की यह स्थिति न रहने दूँगा । परिश्रम और सूझ–बूझ के सहारे उन सबने मिलकर घोर परिश्रम किया और मासिक आमदनी पंद्रह हजार तक हो गई ।

लड़के के विवाह का प्रश्न आया, तो उसने स्पष्ट इन्कार किया कि जो वचन मैंने माँ को दिए थे, वे पूरे न हो सकेंगे । प्यार बँट जायेगा । ५२ वर्ष की उम्र तक माता जीवित रहीं, तब तक उसने विवाह नहीं किया । पैसे की तंगी दूर हो गयी थी, पर माँ को असीम प्यार करने वाला बेटा उसके जीवित रहते किसी भी शर्त पर विवाह करने को तैयार न हुआ । माँ के देहावसान पर ही उसने ५२ वर्ष की आयु में विवाह किया ।

प्रलोभन ने डिगाया नहीं

ईमानदारी के परिणाम हमेशा सुखद होते हैं । तात्कालिक हानि कालांतर में यश–गौरव के रूप में फलती है । एक होटल में किसी मुसाफिर के २००० डालर छूट गए थे । होटल के नौकर ने देख लिए और जहाँ गिरे थे, वहीं घास–पात से ढँक दिए । मुसाफिर एक सप्ताह बाद लौटा, तो होटल वालों से भी पूछा । उस लड़के ने घास–पात से ढंके पैसे वहाँ दिखा दिए, जहाँ वे गिरे थे ।

मुसाफिर इस ईमानदारी पर बहुत प्रसन्न हुआ । उसे अपने व्यापार में एक ईमानदार मुनीम की जरूरत थी, सो उसे साथ ले लिया । वेतन बढ़ते–बढ़ते वह भी मालदार हो गया । इज्जत बढ़ाकर उसने जो लाभ पाया, वह असाधारण था । वही व्यक्ति आगे चलकर प्रसिद्ध होटल व्यवसायी पी० हिल्टन बना ।

गलती हुई है, तो दंड भी भुगतूँगा

स्विट्जरलैंड का एक १२ वर्षीय लड़का सड़क पर गेंद उछाल रहा था । गेंद दुकानदार के शीशे में लगी और वह टूट गया । भागने का अवसर था, पर लड़का भागा नहीं । जब शीशा तोड़ने वाले की तलाश हुई तो उसने अपना दोष बताया । शीशे का मूल्य चुकाने का प्रश्न आया, तो

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लड़के ने चार दिन तक उसके यहाँ मजूरी करने की बात कही । लड़के ने चार दिन तक इतनी मेहनत और मुस्तैदी से काम किया कि दुकान मालिक प्रसन्न हो गया । उसे अपने यहाँ स्थायी नौकर रख लिया । लड़का पढ़ता रहा, नौकरी करता रहा । अपने सद्गुणों से मालिक का मन इतना मोह लिया कि उस दुकान का पार्टनर बन गया और कुछ ही दिनों में संपन्नों में उसकी गणना होने लगी ।

इसका श्रेय वह सदैव अपनी माँ को देता रहा, जिसने उसे सिखाया था–"हमेशा अंत:करण की आवाज पर, विवेक की पुकार पर काम करना, नीति की कमाई खाना ।"

नीति-निष्ठा का फिर क्या होगा ?

सराय के एक ही कोठे में तीन मुसाफिर टिके । एक था भिखारी, दूसरा किसान, तीसरा चोर । रात्रि में तीनों ने अपनी-अपनी गठरी ऊपर खूँटी पर टाँग दी और सो गए । स्तब्धता देखकर पोटलियों की सम्पदा आपस में वार्तालाप करने और घुल-मिल जाने की इच्छा प्रकट करने लगीं ।

किसान की पोटली ने कहा–"मिलने में कोई आपत्ति नहीं, पर फिर ईमानदारी, नीति-निष्ठा और श्रमशीलता का भविष्य क्या होगा ?"

दोनों ने अपनी हीनता समझी और मौन हो गईं ।

तृष्णा अंतत: अहितकर

एक कुत्ता मुँह में रोटी दबाए नदी के किनारे-किनारे जा रहा था । उसे अपनी परछाई दिखाई दी । मन आया कि इस पानी में चल रहे कुत्ते की रोटी भी क्यों न छीन ली जाय ? वह आक्रमण के लिए पानी में कूद पड़ा और परछाई को काटने के लिए जैसे ही मुँह खोला, वैसे ही मुँह की रोटी भी बह गई । इसे कहते हैं तृष्णा, जो पास है उसे भूलकर और पाने की इच्छा रखने वाले का विपत्ति में फँसना ।

जीवन जीने का सही शिक्षण

एक बूढ़ा घास खोदने में सबेरे से लगा हुआ था । दिन ढलने तक वह इतनी खोद सका था, जिसे शिर पर लादकर घोड़े वालोंकी हाट में बेचने ले जा सके ।

एक सुशिक्षित देर से उस बुड्ढे के प्रयास को देख रहा था । सो उसने पूछा–"क्यों जी ! दिन भर परिश्रम से जो कमा सकोगे उससे किस प्रकार तुम्हारा खर्च चलेगा ? घर में तुम अकेले ही हो क्या ?"

बूढ़े ने मुस्कराते हुए कहा–"कई व्यक्तियों का मेरा परिवार है । जितने की घास बिकती है, उतने से ही हम लोग व्यवस्था बनाते और काम चला लेते हैं ।"

युवक को आश्चर्यचकित देखकर बूढ़े ने पूछा–"मालूम पड़ता है, तुमने अपनी कमाई से बढ़-चढ़कर महत्वाकांक्षाएँ सँजो रखी हैं । इसी से तुम्हें गरीबी में गुजारे का आश्चर्य होता है ।"

युवक से और तो कुछ कहते न बन पड़ा पर अपनी झेंप मिटाने के लिए कहने लगा–"गुजारा ही तो सब कुछ नहीं है । दान-पुण्य के लिए भी तो पैसा चाहिए ।"

बुड्ढा हँस पड़ा । उसने कहा–"मेरी घास में तो बच्चों का पेट ही भर पाता है, पर मैंने पड़ौसियों से माँग-माँग कर एक कुआँ बनवा दिया है, जिससे सारा गाँव लाभ उठाता है । क्या दान-पुण्य के लिए अपने पास कुछ न होने पर दूसरे समर्थों से सहयोग माँगकर कुछ भलाई का काम कर सकना बुरा है ।"

युवक चला गया । रात भर सोचता रहा कि महत्वाकांक्षाएँ सँजोने और उन्हीं की पूर्ति में जीवन लगा देना ही क्या एकमात्र तरीका जीवन जीने का है ?

युवक ने अविवाहित रहने का निश्चय किया और वह बिहार क्षेत्र में रामायण कथा कहकर संतोष और परिश्रम के समन्वय की आजीवन शिक्षा देता रहा ।

महामानवों की सादगी

जो अपव्यय से बचते व धन के एक-एक अंश का सदुपयोग करते हैं, वे अपनी इसी वृत्ति के कारण महामानव बनते हैं । देखने में तो यह एक छोटी सी बात लगती है, पर इस छोटे से बीज की परिणतियाँ कालांतर में अनंत होती हैं । कुछ उदाहरण जो इस सदी के महामानवों से संबंधित हैं, इसी तथ्य की साक्षी देते हैं ।

सरकंडे की कलम

गाँधी जी के पास एक फाउंटेन पेन था । उसे किसी ने उठा लिया । दूसरा मँगाने की अपेक्षा उनने दावात और होल्डर से लिखना शुरू किया । एक दिन निब टूट गयी । मनु बेन बाहर से लेने गईं और

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लाने में समय लग गया । समय का महत्व समझते हुए गाँधी जी ने होल्डर की पूँछ को चाकू से छीलकर उसकी पुराने समय जैसी कलम बना ली । फिर सदा वे सरकंडे की कलम से ही पत्र लिखते रहे । वायसराय माउंटबेटन को पहला पत्र उन्होंने होल्डर की पूँछ से बनाई कलम से ही लिखा था । अक्षर भी सुंदर आए थे ।

शास्त्री जी का कोट

राष्ट्र मंडलीय प्रधानमंत्रियों के सम्मेलन में भाग लेने के लिए प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री को लंदन जाना था । उनके पास कोट दो ही थे । उनमें से एक में काफी बड़ा छेद हो गया था । शास्त्री जी के निजी सचिव श्री वेंकटरमण ने नया कोट सिला लेने का आग्रह किया, पर शास्त्री जी ने इन्कार कर दिया । फिर भी वेंकटरमण कपड़ा खरीद लाए और दर्जी को बुलवा लिया । जब कोट का नाप लिया जाने लगा तो शास्त्री जी हँसे और बोले–"इस समय तो इसी पुराने कोट को पलटवा लो । नहीं ठीक जमा तो दूसरा सिलवा लूँगा ।" जब कोट दर्जी के यहाँ से आया, तो कोट की मरम्मत का पता तक नहीं चला । तब शास्त्री जी ने कहा–"जब कोट की मरम्मत का पता हमें ही नहीं चल पा रहा है, तो सम्मेलन में भाग लेने वाले भला क्या पहचानेंगे ?"

और वे उसी कोट को पहनकर लंदन राष्ट्र मंडलीय सम्मेलन में भाग लेने के लिए गए । ऐसी थी शास्त्री जी की सादगी । यह वृत्ति राष्ट्र को अपना एक परिवार मानने व स्वयं को उसका एक अभिन्न अंग मानने के कारण विकसित होती है । क्षुद्र व्यक्ति इसे कृपणता समझ सकते हैं, पर सत्य यही है कि इस सादगी में, अपव्यय की रोकथाम में ही महानता के बीज छिपे पड़े हैं ।

गांधी जी व अखबार की कतरनें

गाँधी के सामने डाक का ढेर लगा था । वह आए हुए प्रत्येक पत्र को ध्यान से पढ़ते जाते और जो हिस्सा कोरा होता उसे कैंची से काटकर अलग रख लेते । एक सज्जन वहीं पास में बैठे थे और बहुत देर से गाँधी जी की कतरनी देख रहे थे । उन्होंने बहुत आश्चर्य से पूछा–"मैं यह जानना चाहता हूँ कि आप इन कतरनों को एक ओर एकत्रित कर क्यों रखते जा रहे हैं ? इनका क्या उपयोग है ।"

गाँधी जी ने कहा–"मुझे जब पत्रों के उत्तर देने होते हैं, तब मैं इन्हीं कतरनों का उपयोग करता हूँ । यदि ऐसा न करूँ तो यह कागज बेकार हो जायेंगे और इससे दो प्रकार की हानियाँ होंगीं, एक तो अनावश्यक खर्च में वृद्धि हो जाएगी और दूसरे राष्ट्रीय सम्पत्ति नष्ट होगी । किसी देश में जितनी वस्तुएँ होती हैं, वह सब उस देश की सम्पत्ति मानी जानी चाहिए । हमारा देश निर्धन है । ऐसी स्थिति में हमें धन का दुरुपयोग न करना चाहिए ।"

सादगी का सुख

हेनरी फोर्ड अमेरिका के मूर्धन्य धनाड्य थे । तो भी वे बहुत सादगी से रहते थे ।

फोर्ड का एक सूट पुराना हो गया था । फटने भी लगा था । सचिव ने कहा–"नया सिला लेना चाहिए । लोग क्या कहेंगे ?"

फोर्ड मुस्कराये । बोले–"अभी इसकी मरम्मत करा लेने से काम चल सकता है । मिलने वाले सभी जानते हैं कि मैं फोर्ड हूँ । सूट बदलने या न बदलने से मेरी स्थिति में क्या अंतर पड़ता है ।"

बात गई-गुजरी हो गई । मरम्मत किए पैंट-कोट से काम चलता रहा । बहुत दिनों बाद फोर्ड को इंग्लैंड जाना था । सो सेक्रेटरी ने फिर उनसे सूट बदलने की आवश्यकता बताई और कहा–"नए देश वालों के सामने तो पोशाक बढ़िया ही होनी चाहिए ।"

फोर्ड गंभीर हो गए और बोले–"उस देश में मुझे जानता ही कौन है, जो मैं उन पर रौब गाँठने के लिए बढ़िया पोशाक सिलाऊँ । अजनवी के कपड़ों पर कौन ध्यान देता है ?"

सचिव निरुत्तर हो गए । फोर्ड मरम्मत किए वस्त्र को धुलाकर ही इंग्लैंड की यात्रा पर चले गए ।

यह है महापुरुषों की सादगी, जो उनके इस गुण के कारण ही उन्हें श्रद्धास्पद एवं वैभववान् बनाती है ।

दुरुपयोग किसी भी वस्तु का नहीं

यरवदा जेल में गाँधी जी भी थे और सरदार पटेल भी । पटेल नीम का दातून लाने लगे । गाँधी जी ने कहा–"रोज लाने की जरूरत नहीं है । इस्तेमाल किया हुआ भाग काटते रहने से एक ही दातुन कई दिन चल जायेगी ।"

पटेल ने कहा–"यहाँ नीम पर टहनियाँ बहुत हैं । गाँधी जी ने कहा–"लेकिन हम उनका या किसी वस्तुका दुरुपयोग तो नहीं कर सकते ?"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

टॉलस्टाय की सज्जनता

एक बार टॉलस्टाय देहातियों के जैसी पोशाक पहनकर गाड़ी की प्रतीक्षा में स्टेशन पर खड़े थे । इतने में एक अमीर परिवार की महिला ने उन्हें एक साधारण किसान समझकर कहा–"देख, मेरे पतिदेव सामने वाले होटल में हैं । तू उन्हें यह चिट्ठी दे आ । इस काम के लिए मैं तुझे दो आने दूँगी ।"

टॉल्स्टाय ने यह काम तुरंत कर दिया और मजदूरी के दो आने भी ले लिए ।

थोड़ी देर बाद एक अमीर आकर टॉल्स्टाय के साथ बातें करने लगा । वह उनसे बहुत ही नम्रतापूर्वक बातें कर रहा था और बीच-बीच में उन्हें 'काउंट' के आदर सूचक संबोधन से भी संबोधित करता था ।

उस महिला ने यह सब देखा । पूछताछ करने पर पता चला कि देहाती जैसा दिखाई देने वाला वह आदमी तो काउंट लियो टॉल्स्टाय हैं ।

वह बहन बहुत शर्मिन्दा हुईं और टॉल्स्टाय के पास जाकर क्षमा माँगने लगीं । उसने मेहनताना के रूप में दिए हुए दो आने उनसे वापस माँगे । तब टॉल्स्टाय ने हँसकर जबाव दिया–"बहन जी ! ये तो मेरी मजदूरी के पैसे हैं । उन्हें मैं कैसे वापस कर सकता हूँ ?"

बाहुबलि जमीन पर चलो

वस्तुतः सारी समस्याओं की जड़, चाहे वह आध्यात्मिक जगत् की हों अथवा भौतिक जगत् की; अहंता, बढ़ी-चढ़ी महत्वाकांक्षा ही है । उस पर अंकुश यदि लगाया जा सके तो प्रगति का राजमार्ग सबके लिए खुला है ।

जैन पुराणों में तपस्वी बाहुवलि के चरित्र का वर्णन है । इतनी कठोर तपस्या की थी, पर अहंता नहीं छूटी, तो उस साधना से भी उन्हें शांति न मिली । महत्वाकांक्षाओं का उन्माद उन पर तब भी चढ़ा रहता था ।

उदास बाहुबलि को उनकी बहन ने देखा तो असफलता का कारण ताड़ लिया । उसने आते ही कहा–"हाथी की पालकी से नीचे उतरो और समझदारों की तरह जमीन पर चलो ।"

कथन का मर्म बहन ने समझाया कि अहंता को छोड़ो-आकांक्षाओं से छुटकारा पाओ, इसके बिना साधना की सफलता मिल नहीं सकेगी ।

बाहुबलि ने वैसा ही किया और वे देखते-देखते सिद्ध पुरुष हो गए ।

लालच छोड़कर सत्य का आँचल पकड़ा

एक बार विद्यार्थी कपिल संदेह में चोरी के अपराध में पकड़े गए । उन्हें राजा के सामने लाया गया । राजा को जब वास्तविकता मालूम हुई कि कपिल सिर्फ संदेह में ही पकड़े गए थे; क्योंकि कपिल सिर्फ दो मासा स्वर्ण पाने के लालच में राजा को आशीर्वाद देने ही आए थे और यह बात आरक्षकों को मालूम नहीं थी ।

राजा ने कपिल से मुँह माँगा इनाम माँगने को कहा । कपिल ने सोचा धन माँग लूँ तो अच्छा है; किन्तु धन बिना सत्ता के सुरक्षित नहीं रह सकता । अस्तु, साथ में सत्ता भी होनी चाहिए । अस्तु, कम से कम एक चौथाई राज्य तो राजा से माँगना ही चाहिए ।

किन्तु चिंतन चलता रहा । कपिल ने सोचा–हिस्से के रूप में राज्य प्राप्त करने पर राजा के बेटों और मुझमें प्रतिस्पर्धा की भावना जागृत हो सकती है । आपस में लड़ाई-झगड़े की पूर्ण संभावना है, तो फिर पूरा राज्य हासिल कर लूँ ?"

तब कोई झगड़े की संभावना न रहेगी । किन्तु चिंतन अबाध गति से चलता रहा और कपिल अपने आप में तृप्त न हो सके ।

तभी राजा ने उनसे पुनः कहा–"कपिल ! बोलो तुम्हें क्या चाहिए । जो चाहो माँग लो । राज्य का खजाना तुम्हारे लिए खुला है ।"

कपिल कुछ क्षण मौन रहे और बोले–"राजन् ! मैंने निर्णय लिया है कि मैं इस अर्थ संग्रह को त्याग कर आज से अपरिग्रही जीवन बिताऊँगा ।"

विद्यार्थी कपिल जीवन और धन एवं वैभव का मोह छोड़कर दुनियाँ के एक सत्य की आँच में तपने चले गए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

स्वावलंबन एवं स्वयं की आजीविका उपार्जन से घर-गृहस्थी की निर्वाह व्यवस्था जुटाना उस युवा के लिए अनिवार्य है, जिसने गृहस्थाश्रम में प्रवेश कर लिया है । जब तक अपने पैरों खड़े होने की स्थिति न आ जाए, तब तक विवाह न करना ही श्रेयस्कर है । विवाह धर्म में बँधकर परावलंबी बने रहना तो अपना ही नहीं, कई व्यक्तियों का भार दूसरों पर डाल देना है । उपार्जन जो भी हो नीतियुक्त हो । समाज में अनीति की कमाई के ढेरों रास्ते खुले पड़े हैं । उनका 'शार्टकट' वाला मार्ग सहज लुभाता भी है । उससे बचना एवं परिश्रम की, ईमान की कमाई खाना ही सद्गृहस्थ का धर्म होना चाहिए ।

समाज में किसी भी व्यक्ति का गौरव उसके आदर्श भरे कृत्यों के कारण माना जाता है, न कि बहिरंग की सज्जा, आडंबर से भरे प्रदर्शन एवं झूँठी शान-शौकत के कारण । समझदार व्यक्ति ऐसी ओछी हरकतों से बचते व परिवार को बचाते हैं । वस्तुतः ब्राह्मणोचित निर्वाह में बिताया गया जीवन ही सच्चा जीवन है, शेष धन अपव्यय के स्थान पर सत्प्रवृत्तियों में नियोजित कर देना चाहिए ।

अपनी नासमझी के कारण जो व्यक्ति स्वयं के दिखावे, ऊपरी सज्जा, अहंकारी उन्माद में लिप्त रहते हैं, सामयिक रूप से भले ही चाटुकारों की वाह-वाही पालें, धन खोने पर अंततः सिर धुनते एवं औरों के निंदाभाजन होते देखे जाते हैं । उन्हें कभी सच्चा सम्मान नहीं मिलता, उल्टे अपने कृत्य का प्रतिफल सामूहिक तिरस्कार के रूप में मिलता है । व्यक्तिगत जीवन में तो अर्थ की अवमानना के कारण वे असमय गरीबी एवं कर्ज ओढ़ते हुए त्रास भुगतते ही हैं । ऐसे व्यक्ति उनके लिए जीते-जागते उदाहरण के समान हैं, जो प्रदर्शन द्वारा अपनी अहंता का पोषण कर चाटुकारों की भीड़ एकत्र करना चाहते हैं । उन्हें अपने किए का फल तुरंत ही मिल जाता है । उनके कृत्यों का प्रतिफल परिवार को भी भुगतना पड़ता है ।

कुरीत्याक्रमणं प्रायो गृहस्थे जीवनेऽधिकम् ।
जायते पुरुषा सन्ति तत्र येऽपक्वबुद्धयः ।। ६३ ।।
मन्यन्ते ते च सर्वस्वं यत्तत्प्रचलनोद्भवम् ।
त्यक्तुं तन्न समर्थास्ते मन्यन्ते स्वकुबुद्धयः ।। ६४ ।।
दृष्ट्वाऽन्योऽन्यं प्रथास्ताश्च गृह्णन्त्येव निरन्तरम् ।
सर्वथाऽनुपयोगित्वं वर्तमाने गतास्तु याः ।। ६५ ।।

भावार्थ–कुरीतियों का आक्रमण प्रायः गृहस्थ जीवन के दिनों में ही होता है । अविकसित मस्तिष्क प्रचलनों को ही सब कुछ मानते हैं तथा दुराग्रह बुद्धि के कारण वे उन्हें छोड़ नहीं पाते और देखा-देखी उन प्रथाओं को भी अपनाते हैं, जो वर्तमान परिस्थितियों में सर्वथा अनुपयुक्त हो गयी हैं ।। ६३-६५ ।।

विवाहेषूपजातीनां सीमाबन्धनमद्य तु ।
समाप्यं यत आसंस्ते वर्णाश्चत्वार एव तु ।। ६६ ।।
उपजातिवितानं तु मध्यकालस्य विद्यते ।
अन्धकारयुगस्येयमुत्पत्तिर्भेदवाहिनी ।। ६७ ।।
प्रदर्शनपराणां तु विवाहप्रीतिभोजयोः ।
अद्यत्वेऽपव्ययानां हि नैवोचित्यं तु वर्तते ।। ६८ ।।
त्यक्तव्याः सर्व एवैते श्रद्धाहीनास्तथैव च ।
प्रदर्शनपरा भोजव्यवस्था मृतकोद्भवा ।। ६९ ।।
भिक्षाया व्यवसायः स जातिमान्या च मान्यता ।
अवगुण्ठनादिकाः सर्वा रीतयो हानिदा अलम् ।। ७० ।।

भावार्थ–विवाहों में उपजातियों का सीमा-बंधन समाप्त होना चाहिए । पुरातनकाल में चार वर्ण ही थे, उपजातियों का जंजाल तो मध्यकाल के अंधकारयुग की भेद-प्रभेदमय देन है । अपव्यय, धूमधाम भरे प्रीतिभोजों, विवाहों का वर्तमान परिस्थितियों में तुक नहीं । इन्हें बंद किया ही जाना चाहिए । इसी प्रकार

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

श्रद्धाविहीन बड़े मृतक भोज, भिक्षा–व्यवसाय, जाति–पाँति के आधार पर बरती जाने वाली ऊँच–नीच की मान्यता, पर्दा प्रथा जैसी कुरीतियों में असीम हानि ही है ।। ६६–७०।।

व्याख्या–गृहस्थाश्रम के जहाँ अनेक लाभ हैं, वहाँ एक हानि यह भी है कि प्रगतिशीलता के अभाव में, चिरपुरातन समय से चली आ रही परंपराएँ-प्रचलन, पारिवारिक सदस्यों के दैनिक जीवन का एक नियमित अंग बन जाती हैं । बड़े-बूढ़े कह गए हैं, इसलिए कुछ करना एवं उसे तर्क की कसौटी पर न कसना, सौजन्य एवं मर्यादापालन नहीं कहलाता । आने वाली पीढ़ियाँ व अन्य पारिवारिक सदस्य भी इन मूढ़-मान्यताओं को, जो समय के प्रवाह के साथ-साथ अब उपयुक्त नहीं रहीं, शाश्वत मानकर चलते एवं उनका परिपालन करते हैं । इससे अंततः समाज की प्रगति में अवरोध ही आते हैं ।

विवाहों से जुड़ी कुरीतियों में–उपजातियों का बंधन, अहंता के प्रदर्शन से भरे खर्चीले विवाह आदि आते हैं । अब समय आ गया है कि देव-संस्कृति के पुरातन स्वरूप को उसके शाश्वत प्रखर रूप में प्रस्तुत किया जाय एवं हर वर्ण में बने उपजाति के बंधन तोड़े जाँय । वर्णों का विभाजन कर्मों के आधार पर माना जाय, न कि जन्म के आधार पर । ऐसे में श्रेष्ठ आचरण वाले उपयुक्त वर-वधू समाज में से चयन कर श्रेष्ठ नागरिक समाज को दिए जा सकते हैं । धूम-धड़ाके से भरी शादियाँ व्यक्तियों को अनीति की कमाई की ओर तो प्रवृत्त करती ही हैं, अन्य अनेक के मन में ईर्ष्या-डाह भर देती हैं । ऐसे अवसर पर आयोजित प्रीतिभोज संक्षिप्त, सादगी से भरे एवं वास्तविक अर्थों में सौजन्य बढ़ाने वाले सम्मेलन के रूप में होने चाहिए ।

बड़ों की मृत्यु के बाद भोज देने की परंपरा अभी भी समाज में विद्यमान है । इसके स्थान पर श्राद्ध रूप में परमार्थ कार्य को लेना चाहिए । इससे पितरों के प्रति सही अर्थों में श्रद्धा व्यक्त होती है । ऊंच-नीच, भिक्षा-व्यवसाय, नारी को पर्दे में बाँध रखने की प्रवृत्तियाँ भी ऐसी ही हैं, जो गृहस्थाश्रम में रहकर कार्य करने वालों के मार्ग में बाधक बनती हैं । इनसे जूझने, इनके विरुद्ध माहौल बनाने का सही समय यही है । आज की परिस्थितियों में वह अभीष्ट है, वही किया भी जाना चाहिए ।

बिल्ली को खूँटे से बाँधा

साधु की कुटिया में एक बिल्ली रहने लगी और पल गई । थी बड़े चंचल स्वभाव की । इधर-उधर खट-पट करती और भजन से ध्यान उचटाती ।

साधु ने दयावश बिल्ली को भगाया तो नहीं, पर एक मध्यवर्ती उपाय निकाल लिया । जब तक भजन-ध्यान करते, बिल्ली को खूँटे से बाँध देते । इस प्रकार अड़चन दूर हो गई । भजन-भाव ठीक प्रकार चलने लगा ।

शिष्यगणों ने यह देखा, तो अनुमान लगाया, पास में बिल्ली बाँध रखने से साधना की सिद्धि होती है । बूढ़े साधु के मरते ही उनके समस्त शिष्यों ने बिल्ली पकड़ कर खूँटे से बाँधने की प्रथा भजन के साथ जोड़ ली ।

अंध परंपराएँ ऐसे ही अविवेकियों द्वारा अपनायी और चलाई गयी हैं ।

पितरों का श्राद्ध

संत एकनाथ उन दिनों गृहस्थ थे । परंपरा के अनुसार पितरों का श्राद्ध करना आवश्यक था । पितृ पक्ष में उन्हें भी वह व्यवस्था करनी थी । परिवार का दबाव भी था ।

ब्राह्मण दरिद्र के घर घटिया भोजन करने के लिए जाने में आनाकानी करने लगे । उनहें दक्षिणा मिलने की भी आशा न थी ।

एकनाथ के अनुनय-विनय पर भी जब ब्राह्मण न पसीजे, तो उन्होंने अछूत बालकों को बुलाकर ब्रह्मभोज करा दिया ।

इस पर सब ओर चर्चा होने लगी । पितरों ने स्वप्न दिया–"हम अछूत बालकों के द्वारा भोजन मिलने पर बहुत संतुष्ट हैं ।" विरोधियों का समाधान हो गया ।

विधवा विवाह-वीर हम्मीर द्वारा

हठी हमीर का राजस्थान के इतिहास में अपना स्थान है । वे जिसे उचित समझते, बिना दूसरों की निंदा-प्रशंसा की परवाह किए पूरा करके दिखाते थे ।

उन दिनों उनके विवाह की चर्चा चल रही थी । हमीर विधवा-विवाह के पक्ष में थे । उनने किसी बाल-विधवा को जीवन-संगिनी बनाने का निश्चय किया ।

चर्चा फैली तो परिवार के लोग क्रुद्ध होने लगे । उससे उन्हें राजवंश की हेठी दीख रही थी । पंडितों से

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कहलवाया । विधवा अमंगल सूचक होती है । उससे जो विवाह करेगा, उसका अमंगल होगा ।

हमीर ने किसी की परवाह न की । अपने निश्चय पर अटल रहे । पंडितों और कुटुंबियों की उपेक्षा करके कुछ साथी-सैनिकों के साथ बरात ले पहुँचे और विवाह कर लाये । विरोध-असहयोग तब भी बोलता ही रहा ।

हमीर जब मेवाड़ के शासक बने, तो विरोधी सहयोगी और निंदक प्रशंसक बन गए । तब पंडितों ने भी घोषणा की-"विधवा नास्ति अमंगलम्" अर्थात विधवा विवाह में कोई दोष नहीं है । इस अग्रगामी उत्साह का अन्य अनेक ने भी अनुसरण किया ।

महर्षि कर्वे ने स्वयं कदम बढ़ाया

महर्षि कर्वे नारी उत्थान की अनेक योजनाएँ बनाया करते थे, पर बात कुछ बन नहीं पाती । कर्वे विधुर थे । उनने सोचा, विधवा के साथ विवाह कर लेने पर हलचल मचेगी, विरोध उभरेगा और जहाँ से सहयोग की आशा है, वहाँ से वह मिलेगा । वैसा ही हुआ भी । विधवा विवाह कर लेने पर उन्हें जाति बहिष्कृत होना पड़ा । बुरी-भली कहने वालों के साथ उन्हें अपना पक्ष प्रस्तुत करना पड़ा । इस प्रकार लोक चर्चा का अवसर मिला । रूढ़िवादियों के मुँह बंद हुए और प्रगतिशील लोग बढ़ कर आगे आए ।

महर्षि कर्वे ने नारी शिक्षा विद्यालय चलाया, उसमें सुधार-समर्थकों ने अपने घरों की लड़कियाँ भेजीं ।

समाज सुधार की मोहल्ले-मोहल्ले में सभाएँ बनीं और वह आरंभ हुआ चर्चा का विषय नीति और न्याय की कसौटी पर कसे जाने से खरे सोने की तरह विचारशील क्षेत्रों में ग्राह्य हुआ ।

यदि विचार मंथन का ऐसा प्रसंग खड़ा न किया जाता, तो सुधार कार्य मनों में ही घूमता रहता । प्रत्यक्ष प्रकट न हो पाता ।

कुरीतियों से जूझीं, स्वावलंबी बनीं

कमलादेवी चट्टोपाध्याय जिस बंगाली परिवार में जन्मीं थीं, उसमें बाल-विवाह का प्रचलन था । कमला जी का विवाह हुआ और उसके कुछ महीने बाद ही उनके पति का स्वर्गवास हो गया । परिवार वाले बहुत शोक करते थे और सहानुभूति दिखाते थे । उनने कहा-"यदि आप लोगों की सहानुभूति सच्ची है, तो मुझे पढ़ने दीजिए और स्वावलंबी बनने दीजिए ।" आनाकानी की परवाह न करके वे पढ़ने जाने लगीं । ग्रेजुएट बनीं और अध्यापिका की नौकरी करके स्वावलंबी हो गयीं ।

इसी बीच उनका परिचय प्रख्यात नेता सरोजिनी नायडू से हुआ । वे भी उनके प्रभाव में कांग्रेस का कार्य करने लगीं । महिला जागृति में जुटीं और जेल गईं । सरोजिनी के भाई हरीन्द्र चट्टोपाध्याय भी राष्ट्र-कर्मी थे । सरोजिनी ने दोनों का विवाह पक्का कर दिया । कमला जी के परिवार ने विरोध किया, तो भी उनने स्वेच्छापूर्वक विवाह कर लिया । कमाने की जिम्मेदारी से निश्चिंत होकर कमला जी देश सेवा के कार्यों में जुट गईं और वे देश प्रख्यात महिला नेताओं में गिनी गईं ।

रणचण्डी दुर्गावती

दुर्गावती का विवाह गढ़ा मंडला के राजा दलपति सिंह से हुआ । विवाह हुए दो वर्ष भी न बीतने पाए थे कि वे विधवा हो गईं । खानदान वाले रियासत पर कब्जा करना चाहते थे और रानी को सती होने की प्रेरणा दे रहे थे । रानी ने इस प्रकार आत्महत्या करने से स्पष्ट इन्कार कर दिया और राज-काज को बुद्धिमत्तापूर्वक सँभाला । पड़ोसी उस छोटे-से राज्य को हड़पना चाहते थे, इसलिए आए दिन हमले करते थे । रानी ने उन सभी को ऐसे कठोर उत्तर दिए कि उल्टे पैर वापस लौटना पड़ा ।

एक विश्वासघाती सरदार दिल्ली बादशाह से जा मिला । उसने बहुत बड़ी सेना के साथ चढ़ाई की । रानी स्वयं मोर्चे पर पहुँची और दस गुनी सेना के पैर उखाड़ दिए । इसी बीच शत्रु का एक तीर रानी की आँख में, दूसरा गर्दन में लगा । बचने की आशा न रही, तो रानी ने दुश्मनों के हाथ पड़ने की अपेक्षा पेट में कटारी भोंक कर अपना अंत कर लिया । उनके सती होनेका यही तरीका सही माना गया ।

रूढ़िवादिता का विरोध

शंकर देव आसाम के नौगाँव जिले में जनमे । जन्म से वे कायस्थ थे, फिर भी उनकी विचारधारा संत और ब्राह्मण जैसी थी । उन्होंने संस्कृत का अभ्यास किया और मनोयोगपूर्वक भागवत पढ़ी । धर्म प्रचार के लिए वे युवावस्था में ही पदयात्रा पर निकल पड़े । भागवत-कथा सुनाते और लोगों में धर्मधारणा बढ़ा, सेवा-भावना उभारते ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उन दिनों धर्म के नाम पर आडंबरों की भरमार थी और कुरीतियों से समाज जर्जर हो रहा था । शंकरदेव की भागवत कथा में इन विकृतियों पर करारा प्रहार होता । फलत: उन्हें रूढ़िवादियों का विरोध भी बहुत सहना पड़ा । अन्यों की भागवत कथा जहाँ दक्षिणा बटोरने के लिए होती थी, वहाँ शंकरदेव उसे नि:स्वार्थ भावना से गाँव-गाँव जाकर सुनाते । आरंभ में कायस्थ का भागवत पढ़ना विरोध का विषय रहा, पर उनकी नि:स्वार्थ संत-वृत्ति के आगे वह टिका नहीं । भक्ति को कोठरी और गोमुखी की थैली तक सीमित न रखकर जन-जन तक पहुँचाने वाले संतों में उन्हें आदरपूर्वक याद किया जाता रहेगा ।

जिन्होंने स्त्री-शूद्रों की डट कर वकालत की

मलयालम के क्रांतिदूत कुमारन आशान ने अनेक ग्रंथ नहीं, केवल दो ही भाव ग्रंथ लिखे हैं । एक 'विचारमग्न सीता' दूसरा 'चांडाल भिक्षुणी' । इन दोनों ग्रंथों में भारत की दोनों प्रमुख समस्याओं पर तर्क, न्याय, व्यवहार, परिणाम, निराकरण आदि सभी पक्ष लिए गए हैं । आधी जनसंख्या नारी जाति और चौथाई अछूतों का नागरिक न्यायोचित अधिकारों से वंचित करके देश किस प्रकार पक्षाघात पीड़ित की तरह निष्प्रभ होता जा रहा है । इन तथ्यों पर बड़ा ही मार्मिक प्रकाश डाला है और सिद्ध किया है कि इनके रहते न भारत धार्मिक कहला सकता है, न आध्यात्मिक, न न्यायनिष्ठ और न प्रगतिशील ।

कुमारन आशान की इन पुस्तकों ने अपने समय में मलयालम समाज में एक प्रकार की उथल-पुथल पैदा कर दी थी और अनेकों विचारशील इनका संशोधन करने के लिए आगे आए थे ।

अछूतों के उद्धारक : भीमराव अंबेडकर

डॉ० भीमराव अम्बेडकर इन्दौर डिवीजन के मरुस्थान में जन्मे । विदेश जाकर उनने डॉक्टरेट की । बैरिस्टर बनकर भारत लौटे । उनकी अध्ययनशीलता गजब की थी । उनकी निजी स्वाध्याय लाइब्रेरी की विशालता देखकर लोग दंग रह जाते थे ।

वे जाति के महार (अछूत) थे । सवर्णों का अछूतों के प्रति जो दुर्व्यवहार था, वह उन्हें बहुत अखरता था । मंदिर प्रवेश और जलाशय से पानी भरने के प्रसंग पर उनने सत्याग्रह भी किए । एक बार रोष में अपने को बौद्ध भी घोषित किया । पर उनकी पृथकतावादी मनोवृत्ति न थी । प्रचलित कुरीति का उन्मूलन भर वे चाहते थे ।

भारतीय संविधान का उन्हें सृजेता कहा जाता है । अर्थशास्त्र के वे महान् पंडित थे । पौण्ड, डालर और रुपये के विनिमय से भारत जो मार खा रहा था, उसका रहस्योद्घाटन उनने किया और देश को उस गोरखधंधे से निकालकर सही अर्थनीति अपनाने का मार्गदर्शन किया । अम्बेडकर की देशभक्ति में कभी किसी ने संदेह नहीं किया ।

जन्म से चांडाल, कर्म से ब्राह्मण

जैन धर्म उत्तराध्यन ग्रंथ में हरिकेशी मुनि की कथा आती है । वे जन्म से चांडाल थे, पर उन्होंने तप-साधन और आचार-व्यवहार का उच्चस्तरीय पालन करने से महामुनि की पदवी प्राप्त की । आरंभिक परिवर्तन के समय सवर्णों और असवर्णों से उन्हें तिरस्कार ही मिला, पर निरंतर अपने प्रयास में संलग्न रहने और किसी की भी परवाह न करने के कारण वे सबके लिए सम्मान योग्य बने । इसी प्रकार वाल्मीकि की कथा भी प्रसिद्ध है ।

कुत्ते की सीख

संत वायजीद कहीं नहाने जा रहे थे । उनने कुत्ते को पास आते देखकर अपना पायजामा घुटनों से ऊपर कर लिया, ताकि उसके छू जाने से अपवित्र न हो ।

कुत्ते ने कहा-"संत, मेरे छू जाने पर तुम कपड़े को पानी से धो सकते थे, पर जो नफरत तुम्हारे मन में उपजी है, वह तो सात नदियों में नहाने पर भी न धुल सकेगी ।"

वायजीद पछताये कि मैं इस कुत्ते तक को मोहब्बत न कर सका, तो अल्लाह की इनायत किस तरह पा सकूँगा ।

भेदबुद्धि के कारण अमृत से वंचित

अमृतपान की अभिलाषा में उत्तंग मुनि कठोर तप करने लगे । समयानुसार इंद्र प्रकट हुए और वर माँगने के लिए कहने लगे । उत्तंग ने अपना मनोरथ कह सुनाया ।

इंद्र यह कहकर अंतर्धान हो गए कि-"जल्द ही आपका मनोरथ पूर्ण होगा । जो कमी है, उसे तब तक और पूरा कर लें ।"

बहुत दिन बीत गए । उत्तंग तीर्थ प्रव्रज्या पर निकले । मरुभूमि का लंबा क्षेत्र मार्ग में आ गया । पानी का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कोई प्रबंध ही नहीं था । गला सूखने लगा । उद्विग्न होकर उत्तंग एक पेड़ की छाया में लेट गए ।

इतने में एक चांडाल सामने से आया । साथ में जल पात्र था, बोला–"लीजिए, अपनी प्यास बुझा लीजिए ।"

उत्तंग चांडाल का जल पीने को सहमत न हुए । अनुरोध स्वीकृत होते न देखकर वह वापस चला गया ।

किसी प्रकार उत्तंग उस क्षेत्र से प्राण बचाकर निकले और त्रिवेणी तट पर पहुँच कर प्यास बुझा सके ।

रात्रि को उन्होंने स्वप्न में इंद्र को देखा । वे बोले–"उस दिन मैं चांडाल वेश में अमृत लाया था । आपने वापस कर दिया । अब यदि उसे पुनः प्राप्त करने की इच्छा हो, तो मनुष्य मनुष्य के बीच भेदबुद्धि दूर करने के लिए दूसरा तप करें ।

सती प्रथा के कट्टर विरोधी राजा राममोहन राय

राजा राममोहन राय ने अपनी भाभी को सती होते देखा था । उन्हें पता था कि विधवा के भरण-पोषण की जिम्मेदारी से बचने तथा उसकी सम्पत्ति हड़पने के लिए परिवारों ने उस दुखिया को किस प्रकार सती होने के लिए उकसाया और चिता पर चढ़ने की भयभीत स्थिति में उसे धकेल कर जलाया था ।

बालक राममोहन राय ने प्रतिज्ञा की थी कि वे इस कुप्रथा को मिटाकर रहेंगे । बड़े होने पर उन्होंने इस प्रतिज्ञा को पूरी करने में अथक प्रयास किया । इस कुप्रथा के विरुद्ध वातावरण बनाने और कानून पास कराने में उनने अपनी सारी चतुरता झोंक दी और अंततः सफल होकर रहे ।

सही अर्थों में संन्यासी बने

शेखवाटी (राजस्थान) में जन्मे एक युवक को भरी जवानी में संन्यास लेने की उमंग उठी । परिवार में वह नितांत एकाकी था, इसलिए कुछ कठिनाई भी नहीं हुई । तीर्थों में भ्रमण करते रहे और पंडों तथा बाबाओं की करतूतों को ध्यानपूर्वक देखते रहे । उन्हें यह समुदाय तनिक भी न सुहाया और लौटकर अपनी मातृभूमि चले आये ।

उनने हर घर में एक अन्न घट रखा, जिसमें एक मुट्ठी अन्न डालने का नियम था । इतने भर से गाँव में प्राथमिक पाठशाला चल पड़ी । यह प्रयास उनने अन्य गाँवों में भी आरंभ किया और प्रायः १०० स्कूल खुल गए । अब हाईस्कूलों और कॉलेजों के लिए भी उनने चंदा इकट्ठा किया और साथ ही उनका सुसंचालन भी । वे सभी दिनों-दिन प्रगति करते गए । सँगरिया को केन्द्र बनाकर उनने विभिन्न विषयों के सात कॉलेजों की स्थापना भी की ।

स्वामी जी लगातार तीन बार लोक सभा के सदस्य चुने गए । अपने प्रभाव का उपयोग वे शिक्षण विस्तार तथा कुरीति निवारण में करते रहे । यह सक्रिय संन्यास सब प्रकार सार्थक बना और सहकर्मियों के लिए आदर्श बना । मरण पर्यंत उनका उत्साह युवकों जैसा रहा ।

मालवीयजी की ब्राह्मण परमार्थ वृत्ति

परमार्थ कार्यों में दान देने की वृत्ति भारतवर्ष में सदा से जीवित रही है । इसी आधार पर वानप्रस्थ परिव्राजकों की ब्राह्मणोचित आजीविका भी चलती थी । कालांतर में दान के नाम पर वेशधारी बाबाओं ने इस परंपरा को कलंकित कर दिया ।

पंडित मदनमोहन मालवीय जी ने इसमें छाई विकृतियों को मिटाने का प्रयास किया एवं इस सदी के प्रारंभ में कई धनाध्यक्षों के मन में सत्प्रवृत्तियों के लिए उदारता जगाई ।

रक्षाबंधन का पुनीत पर्व था । बीकानेर नरेश का दरबार लगा हुआ था । राजद्वार पर ब्राह्मणों के मध्य मालवीय जी भी नारियल लिए खड़े थे । शनैः शनैः कतार छोटी होती जा रही थी । प्रत्येक ब्राह्मण नरेश के पास जाकर राखी बाँधता और दक्षिणा के रूप में एक रुपया प्राप्त कर खुशी-खुशी घर लौटता जा रहा था ।

मालवीय जी का नंबर आया, तो वे भी नरेश के समक्ष पहुँचे, राखी बाँधी, नारियल भेंट किया और संस्कृत में स्वरचित आशीर्वाद दिया । नरेश के मन में इस विद्वान् ब्राह्मण का परिचय जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई । जब उन्हें मालूम हुआ कि यह तो मालवीय जी हैं, तो वह बहुत प्रसन्न हुए और अपने भाग्य की मन ही मन सराहना करने लगे । मालवीय जी ने विश्वविद्यालय की रसीद बही उनके सामने रख दी । उन्होंने भी तत्काल एक सहस्र मुद्रा लिखकर हस्ताक्षर कर दिए । नरेश अच्छी तरह जानते थे कि मालवीय जी द्वारा संचित किया हुआ सारा द्रव्य विश्वविद्यालय के निर्माण कार्यों में ही व्यय होने वाला है ।

मालवीय जी ने विश्वविद्यालय की समूची रूपरेखा नरेश के सम्मुख रखी । उस पर सम्भावित व्यय तथा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

समाज को होने वाला लाभ भी बताया, तो नरेश मुग्ध हो गए और सोचने लगे, इतने बड़े कार्य में एक सहस्र मुद्राओं से क्या होने वाला है, उन्होंने पूर्व लिखित राशि पर दो शून्य और बढ़ा दिए, साथ ही अपने कोषध्यक्ष को एक लाख मुद्राएँ देने का आदेश प्रदान किया ।

हितं नैव तु कस्यापि सिद्ध्येदेभिः क्वचिन्मनाक् ।
असंख्या हानयो मात्रं भवन्त्येव निरन्तरम् ।। ७१ ।।
अन्धविश्वासबाहुल्यं दिवसेष्वेषु विद्यते ।
यदाश्रित्य च धूर्तास्तु जनान् लुण्ठन्ति नित्यशः ।। ७२ ।।
आत्मानं हि भ्रमादस्माद्रक्षेदन्यानपि स्वकान् ।
भाग्यवादे किंवदन्ती श्रितेष्वेतेषु वा पुनः ।। ७३ ।।
देवेषु पुरुषेष्वेवं भविष्यद्वक्तृषु क्वचित् ।
मूहूर्तस्यातिवादे न भ्रान्तैर्भाव्यं विवेकिभिः ।। ७४ ।।

भावार्थ–अंधविश्वासों की इन दिनों भरमार है । उनकी आड़ में धूर्त लोग भोले–भावुकों को ठगते रहते हैं । इस भ्रम–जंजाल से स्वयं बचना और दूसरों को बचाना चाहिए । भाग्यवाद चित्र–विचित्र किंवदन्ती, आश्रित देवी–देवताओं का प्रचलन, भविष्य कथन, मुहूर्तवाद जैसी भ्रांतियों में विज्ञजनों को नहीं ही फँसना चाहिए ।। ७१–७४ ।।

व्याख्या–परिवार में रहते हुए मूढ़ मान्यताओं, अंधविश्वासों के कुचक्र से बचना हर गृहस्थ के लिए अनिवार्य है । जनमानस इतना लचीला होता है कि वह जिधर मोड़ा जाय, उधर ही मुड़ जाता है । विवेक से काम लेने वाले कम ही देखे जाते हैं । धर्म के नाम पर अनेक विकृतियाँ समाज में फैली हैं । धर्म का वस्तुतः सही स्वरूप ही जन साधारण को नहीं मालूम है ।

धर्म का सही स्वरूप

श्रावस्ती सम्राट् चन्द्रचूड़ को विभिन्न धर्मों और उनके प्रवक्ताओं से बड़ा लगाव था । राज–काज से बचा हुआ समय वे उन्हें ही पढ़ने और सुनने में लगाते थे । यह क्रम चलते बहुत दिन बीते थे कि राजा असमंजस में पड़ गए, जब धर्म शाश्वत है, तो उनके बीच मतभेद और विग्रह क्यों ?

समाधान के लिए वे भगवान् बुद्ध के पास गए और उनसे अपना असमंजस कह सुनाया । बुद्ध हँसे । उन्हें सत्कारपूर्वक ठहराया और दूसरे दिन प्रातःकाल उनके समाधान का वचन दिया ।

दिन भर के प्रयास से एक हाथी और पाँच जन्मांध जुटा लिए गए । प्रातःकाल तथागत सम्राट् को लेकर उस स्थान पर पहुँचे । किसी जन्मांध का इससे पूर्व कभी हाथी से संपर्क नहीं हुआ था । उनसे कहा गया कि वह सामने खड़ा है, उसे छुओ और उसका स्वरूप बतलाओ । अंधों ने उसे टटोला और जितना जिसने स्पर्श किया, उसी के अनुरूप उसे खम्भे जैसा, रस्सी जैसा, सूप जैसा, टीले जैसा आदि बताया ।

तथागत ने कहा–"राजन् ! सम्प्रदाय अपनी सीमित क्षमता के अनुरूप ही धर्म की एकांगी व्याख्या करते हैं और अपनी मान्यता के प्रति हठी होकर झगड़ने लगते हैं ।"

जिस प्रकार हाथी एक है और उसका अंध विवेचन भिन्नतायुक्त । धर्म तो समता, सहिष्णुता, एकता, उदारता और सज्जनता में है । यही हाथी का समग्र रूप है । व्याख्या कोई कुछ भी करता रहे ।

राजा का समाधान हो गया और वे प्रसन्नतापूर्वक कृतज्ञता व्यक्त करते हुए घर लौट गए ।

नाइजीरिया का पादरी

अंधविश्वासों की मृगमरीचिका में लोग कैसे फँसते हैं, इसकी भी विचित्र विडंबना है । एक बार नाइजीरिया के एक पादरी जंगली लोगों के बची फँस गए । वे उसे मार डालना चाहते थे ।

पादरी ने इन लोगों से कहा–"वह जादूगर है । उसके पास बहुत भूत हैं । वह चाहे जिससे उसकी मुलाकात करा सकते हैं ।"

पादरी के पास एक बड़ा सा दर्पण था । उन्हें उसमें भूत देखने के लिए बुलाया गया । जो आता, अपना चेहरा उसमें देखता और भूत के साक्षात् दर्शन करके डर जाता ।

अबकी बार पादरी ने अंतिम चमत्कार दिखाया । उसके मुँह में नकली दाँत थे । उसने वे

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निकालकर दिखाए और दुबारा मुँह में डाल लिये ।

दर्पण में भूत देखना और मुँह से दाँत निकाल कर फिर मुँह में डाल लेना–ये दो चमत्कार इन जंगली लोगों को डराने के लिए काफी थे । वे डर गए और पादरी को अपना गुरु मान लिया । धीरे-धीरे पादरी ने उन्हें ईसाई धर्म में दीक्षित कर लिया ।

अंध परंपराएँ वस्तुतः भेड़चाल की तरह होती हैं । लोग बिना विवेक का उपयोग किए उनमें उलझते चले जाते हैं ।

युक्ति से पशु बलि रोकी

देवी-देवताओं के नाम पर प्रचलित अंधविश्वासों में प्रमुख है–पशु बलि । इस जंजाल में अनेक फँसते देखे जा सकते हैं ।

राजा कुमारपाल प्रजाप्रिय राजा थे । उनके गुरु हेमचन्द्राचार्य सदा उच्चकोटि के परामर्श दिया करते थे ।

उस राज्य में विजयदशमी के दिन देवी पर पशु बलि बड़े धूमधाम से मनाई जाती थी । उस दिन सैकड़ों पशु काटे जाते थे ।

गुरु ने राजा को इस कुप्रथा को बंद करने के लिए कहा । राजा ने कहा–"प्रजा इसके लिए तैयार न होगी । उसे मैं कैसे रुष्ट करूँ ?" गुरु ने प्रजा को समझाने का काम अपने ऊपर लिया ।

सजधज कर बलि के निमित्त प्रजाजन पशुओं को लाए । गुरुदेव ने उन सब को एकत्रित करके पूछा–"देवी तो सबकी माता है । पशुओं की बलि लेकर तो वह रुष्ट होगी ।"

प्रजाजन ने एक स्वर में कहा–"देवी बलि चाहती है और बलि से प्रसन्न भी होती है । यदि ऐसा न होता, तो हम लोग इस प्रथा को क्यों चलाते ?"

गुरुदेव ने कहा–"आप लोगों के कथन की सच्चाई की वास्तविकता अभी परखे लेते हैं ।" देवी के मंदिर में सभी बलि चढ़ने वाले पशु बंद कर दिए गए । सबेरा होते ही दरवाजा खोला गया और देखा गया कि कितने पशु देवी ने भक्षण किए हैं ।

दरवाजा खुलने पर सभी पशु गिने गए । एक भी कम न हुआ । गुरुदेव ने उपस्थित लोगों को संबोधित करते हुए कहा–"देखा आप लोगों ने । देवी ने एक भी पशु नहीं खाया । उन्हें प्यारा पुत्र समझकर छोड़ दिया । फिर आप लोग ही प्राणि-हत्या का पाप क्यों ओढ़ते हैं ?"

गुरुजी की उक्ति से सभी प्रजाजन संतुष्ट हुए । पशु बलि रुक गई और प्रजाजन रुष्ट भी न होने पाए ।

ज्योतिषी का भविष्य

भाग्यवाद, शकुन, फलित ज्योतिष जैसे अनेक प्रकरण हैं जो जनसमुदाय को जंजाल में समेटकर शोषण का मार्ग धूर्तों के लिए खोल देते हैं ।

एक ज्योतिषी आए दिन भविष्यवाणियाँ करता और जन्म-मरण की बातें बताता । एक राजा को उसने बता दिया कि एक वर्ष में आपकी मृत्यु हो जायेगी ।

राजा ने विश्वास कर लिया और चिंता से सूख कर काँटा होने लगा । शत्रुओं को पता चला तो वे आक्रमण की तैयारी करने लगे । मंत्री को बहुत चिंता हुई । राजा को समझाने-बुझाने की तरकीब कामयाब न हुई, तो उन्होंने एक नई तरकीब निकाली ।

ज्योतिषी जी को फिर दरबार में बुलाया गया । जन्म-मरण की बात शुरू हुई । कई दरबारियों के भविष्य भी उनने बताए । इस पर मंत्री ने पंडित जी का मरण काल पूछा । उन्होंने विश्वासपूर्वक तीस वर्ष बाद बताया ।

इस पर मंत्री जी ने तलवार निकाली और ज्योतिषी का सिर काटकर अलग कर दिया और राजा से कहा जब इस ज्योतिषी को अपने निज का मरण काल मालूम नहीं, तो यह आपकी बात भी कैसे जान और बता सकता है ।

राजा ने मिथ्याभ्रम छोड़ दिया और सामान्य रीति से राज-काज चलाने लगा ।

राजा की समझ वापस लौटी

राज ज्योतिषी ने सम्राट् वसुसेन की श्रद्धा ज्योतिष पर बहुत ज्यादा जमा दी थी । वे बिना मुहूर्त पूछे कोई काम न करते । शत्रुओं को पता चला, तो वे ऐसी घात लगाने लगे कि किसी ऐसे मुहूर्त में हमला करें, जिसमें प्रतिकार का मुहूर्त न बने और उसे सहज ही परास्त किया जा सके । प्रजाजन और सभासद सभी को राजा के इस कुचक्र में फँस जाने पर बड़ी चिंता होने लगी ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संयोगवश राजा एक बार देश पर्यवेक्षण के लिए दौरे पर निकले । साथ में राज ज्योतिषी भी थे । रास्ते में एक किसान मिला । जो हल-बैल लेकर समीप के गाँव में खेत जोतने जा रहा था ।

राज ज्योतिषी ने उसे रोककर कहा-"मूर्ख ! जानता नहीं, आज जिस दिशा में दिक्शूल है, उसी में चला जा रहा है । ऐसा करने से भयंकर हानि उठानी पड़ेगी ।"

किसान दिशा शूल के बारे में कुछ भी जानता न था । उसने नम्रतापूर्वक कहा-"मैं तो तीसों दिन इसी दिशा में जाता हूँ । उसमें दिशा शूल वाले दिन भी होते होंगे । यदि आपकी बात सच होती, तो मेरा कब का सर्वनाश हो गया होता ।"

ज्योतिषी सिटपिटा गए । झेंप मिटाने के लिए बोले-"लगता है तेरी हस्तरेखा बहुत प्रबल है । दिखा तो अपना हाथ ?"

किसान ने हाथ तो बढ़ा दिया किन्तु हथेली नीचे की ओर रखी । ज्योतिषी इस पर और भी अधिक चिढ़े । बोले-"इतना भी नहीं जानता कि हस्तरेखा दिखाने के लिए हथेली ऊपर की ओर रखनी होती है ।"

किसान मुस्कराया, बोला-"हथेली वह फैलाए जिसे किसी से कुछ माँगना हो । जिन हाथों की कमाई से अपना गुजारा करता हूँ, उन्हें क्यों किसी के आगे फैलाऊँ ?"

प्रसंग समाप्त हो गया, राजा ने नए सिरे से विचार किया और ज्योतिषी के भ्रम-जंजाल से पीछा छुड़ा लिया ।

गृहस्थजीवने चाऽत्र सम्बद्धातिथिसत्कृतिः ।
वर्तितव्यो नातिवादस्तथाप्यत्र कदाचन् ।। ७५ ।।
सख्यव्याजेन येष्वत्र गृहेषु मित्रमण्डली ।
संतिष्ठते सदा सत्वहीनता तेषु जृम्भते ।। ७६ ।।
समयो नश्यति द्रव्यं नश्यत्येतेन सन्ततम् ।
विकृतीनां प्रवेशश्च कुटुम्बे जायतेऽञ्जसा ।। ७७ ।।
आवश्यकेन कार्येण बिना नैव कदाचन ।
आतिथ्यमाचरेदत्र निष्क्रियाणां नृणां बुधः ।। ७८ ।।
गृहेषु नैव चाऽन्येषां गच्छेद् व्यर्थं निरन्तरम् ।
समयस्य विनाशस्तु मित्रैः सह न युज्यते ।। ७९ ।।
हानयो विपुलाः सन्ति दिनेष्वेतेशु सर्वथा ।
जीविका कष्टयुक्तेषु विधिनाऽनेन निश्चितम् ।। ८० ।।
सन्मित्राणामभावस्तु प्रायोऽद्यत्वे विलोक्यते ।
भावुकाश्च दिशाहीना वर्धन्ते चाऽन्यसंगताः ।। ८१ ।।

भावार्थ-*गृहस्थ जीवन के साथ अतिथि सत्कार जुड़ा हुआ है, पर उसमें अतिवाद नहीं बरता जाना चाहिए । जिन घरों में दोस्ती के नाम पर निरर्थक व्यक्तियों की मंडली जमा रहती है, उनका दिवाला निकल जाता है, समय नष्ट होता है, पैसों की बर्बादी होती है । इस अवांछनीय घुसपैठ से परिवार में अनेक विकृतियाँ अनायास घुस पड़ती हैं । इसलिए बिना आवश्यक काम के निठल्ले लोगों का आतिथ्य नहीं करना चाहिए, न ही दूसरों के घरों में बिना कारण बार-बार जाना चाहिए । मित्रों के साथ अनावश्यक समय बर्बाद करना किसी भी प्रकार उचित नहीं । दिशाहीन भावुक पुरुषों की संख्या बढ़ रही है, जो औरों को भी बहा ले जाते हैं ।। ७५-८१ ।।*

व्याख्या-अतिथि धर्म का निर्वाह हर व्यक्ति के लिए अनिवार्य माना जाता है । पर यहाँ ऋषि इस दिशा में अतिवाद बरते जाने से संभावित परिणामों का संकेत करते हुए कहते हैं कि जहाँ मित्रता के नाम पर अनावश्यक लोगों का जमघट रहता है, वहाँ सत्प्रवृत्तियाँ पनपने, परस्पर मैत्री बढ़ने के स्थान पर विकृतियाँ जन्म लेने लगती हैं । मित्रता जरूरी है, उसके बिना जीवन व्यापार में प्रगति संभव नहीं, पर उस दिशा में विवेक बरता जाना जरूरी है । सच्चे मित्र बड़ी कठिनाई से मिलते हैं । लोक प्रचलन के प्रवाह में तो धूर्तों अथवा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अतिभावुकों की ही भीड़ है, जो किसी काम में सहायक तो बनते नहीं, हानिकारक और सिद्ध होते हैं ।

आतिथ्य की मर्यादाएँ

एक सज्जन कुछ महत्वपूर्ण कार्यों में लगे रहते थे । पर ख्याति सुनकर उनके मित्रों-आगंतुकों की संख्या बढ़ने लगी । वे इनसे पीछा छुड़ाना चाहते थे । पर कोई उपाय सूझता न था ।

एक व्यवहार कुशल से इसका उपाय पूछा तो कहा–"मित्रों में से जो सम्पन्न हों, उनसे माँगना शुरू करो और जो गरीब हैं, उन्हें थोड़ा-थोड़ा दे दो । फिर अंततः स्वतः ही बंद हो जायेगा । ऐसा ही किया गया और आगंतुकों की संख्या सीमित रह गई जो वस्तुतः मित्र थे ।

मित्र की आवश्यकता

एक बहुत बड़ा सरोवर था । उसके उत्तर तट पर मोर रहता था, दक्षिण सिरे पर मोरनी । एक दिन मोर ने प्रस्ताव रखा कि हम-तुम विवाह कर लें, तो कैसा अच्छा रहे ? मोरनी ने पूछा–"तुम्हारे मित्र कितने हैं ?" उसने 'नहीं' में उत्तर दिया तो मोरनी ने विवाह से इन्कार कर दिया ।

मोर सोचने लगा । सुखपूर्वक रहने के लिए मित्र बनाना भी आवश्यक है । उसने पूर्व तट पर रहने वाले सिंह से, पश्चिम तट पर रहने वाले कछुए से और बगल में रहने वाली सिंहनी के लिए शिकार का पता लगाने वाली टिटहरी से दोस्ती कर ली । समाचार मोरनी को सुनाया, तो वह तुरंत विवाह के लिए तैयार हो गई । पेड़ पर घोंसला बनाया और उसमें अंडे दिए । और भी कितने ही पक्षी उस पेड़ पर रहते थे ।

एक दिन शिकारी आए । दिन भर कहीं शिकार न मिला तो, वे उसी पेड़ की छाया में ठहर गए और सोचने लगे, पेड़ पर चढ़कर अंडे-बच्चों से भूख मिटाई जाय । मोर दम्पत्ति को भारी चिंता हुई, मोर मित्रों के पास सहायता के लिए दौड़ा । टिटहरी ने जोर-जोर से चिल्लाना शुरू किया । सिंह समझ गया, कोई शिकार है । वह उसी पेड़ के नीचे चला जहाँ शिकारी बैठे थे । इतने में कछुआ भी पानी से निकल कर बाहर आ गया । सिंह से डरकर भागते हुए शिकारियों ने कछुए को ले चलने की बात सोची । जैसे ही हाथ बढ़ाया कछुआ पानी में खिसक गया । शिकारियों के पैर दलदल में फँस गए । इतने में सिंह आ पहुँचा और उन्हें ठिकाने लगा दिया ।

मोरनी ने कहा–"मैंने विवाह से पूर्व मित्रों की संख्या पूछी थी, सो बात काम की निकली न, यदि मित्र न होते तो आज हम सबकी खैर न थी ।

मित्र किसी काम न आए

एक खरगोश बहुत भला था । उसने बहुत से जानवरों से मित्रता की और आशा की कि वक्त पड़ने पर मेरे काम आवेंगे । एक दिन शिकारी कुत्तों ने उसका पीछा किया । वह दौड़ा हुआ गाय के पास पहुँचा और कहा–"आप हमारी मित्र हैं, कृपा कर अपने पैने सींगों से इन कुत्तों को मार दीजिए ।" गाय ने उपेक्षा से कहा–"मेरा घर जाने का समय हो गया । बच्चे इंतजार कर रहे होंगे, अब मैं ठहर नहीं सकती ।" तब वह घोड़े के पास पहुँचा और कहा–"मित्र घोड़े ! मुझे अपनी पीठ पर बिठाकर इन कुत्तों से बचा लो ।" घोड़े ने कहा–"मैं बैठना भूल गया हूँ, तुम मेरी ऊँची पीठ पर चढ़ कैसे पाओगे ?" अब वह गधे के पास पहुँचा और कहा–"भाई ! मैं मुसीबत में हूँ, तुम दुलत्ती झाड़ने में प्रसिद्ध हो, इन कुत्तों को लातें मारकर भगा दो ।" गधे ने कहा–"घर पहुँचने में देरी हो जाने से मेरा मालिक मुझे मारेगा । अब तो घर जा रहा हूँ । यह काम किसी फुरसत के वक्त करा लेना ।" अब वह बकरी के पास पहुँचा और उससे भी प्रार्थना की । बकरी ने कहा–"जल्दी भाग यहाँ से, मैं भी मुसीबत में फँस जाऊँगी ।" तब खरगोश ने समझा कि दूसरों का आसरा तकने से नहीं, अपने बलबूते से ही अपनी मुसीबत पार होती है, तब वह पूरी तेजी से दौड़ा और एक घनी झाड़ी में छिपकर अपने प्राण बचाए ।

अक्सर झूठे मित्र कुसमय आने पर साथ छोड़ बैठते हैं । दूसरों पर निर्भर रहने में खतरा है । अपने बलबूते ही अपनी समस्याओं का सामना किया जाना चाहिए ।

कौए और लोमड़ी की मैत्री

कौआ किसी दावत में से एक बड़ा सा पुआ उठा लाया । लोमड़ी अक्ल दौड़ाने लगी कि किसी प्रकार पुआ हाथ लगे ।

उसने कोए के गाने की बड़ी प्रशंसा की और कहा–"एक गीत इस समय सुना दें, तो बड़ी कृपा हो ।"

मूर्ख कौए ने गाने के लिए जैसे ही मुँह खोला, पुआ नीचे गिरा और लोमड़ी उसे लेकर चंपत हो गई ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पहले स्तर परख लो

लोमड़ी ने बैल से दोस्ती जमाई कि साथ-साथ खेत चरने चला करेंगे । लोमड़ी छोटी थी जल्दी-जल्दी पेट भर लेती । बैल ने कहा-"मैं भी पेट भर लूँ, तुम खेत की मेड़ पर बैठकर चौकीदारी करो ।"

लोमड़ी आना-कानी करने लगी । किसान आ गया और बैल की बुरी तरह पिटाई हुई ।

स्वार्थ से युक्त सम्मतियाँ

एक बालक की मृत्यु हो गई । अभिभावक उसे नदी तट वाले श्मशान में ले पहुँचे । वर्षा हो रही थी । विचार चल रहा था कि इस स्थिति में संस्कार कैसे किया जाय ।

उनकी पारस्परिक वार्ता में निकट उपस्थित प्राणियों ने हस्तक्षेप किया और बिना पूछे ही अपनी-अपनी सम्मति भी बता दी ।

सियार ने कहा-"भूमि में दबा देने का बहुत माहात्म्य है । धरती माता की गोद में समर्पित करना श्रेष्ठ है ।" कछुए ने कहा-"गंगा से बढ़कर और कोई तरण-तारणी नहीं । आप लोग शव को प्रवाहित क्यों नहीं कर देते ?" गिद्ध की सम्मति थी-"सूर्य और पवन के सम्मुख उसे खुला छोड़ देना उत्तम है । पानी और मिट्टी में अपने स्नेही की काया को क्यों सड़ाया-गलाया जाय ?"

अभिभावकों को समझने में देर न लगी कि तीनों के परामर्श सद्भाव जैसे दीखते हुए भी कितनी स्वार्थपरता से सने हुए हैं । उनने तीनों परामर्शदाताओं को धन्यवाद देकर बिदा कर दिया । बादल खुलते ही चिता में अग्नि संस्कार किया ।

सही अर्थों में स्वामिभक्त कौन ?

एक राजा के चार मंत्री थे । उनमें से तीन तो थे चापलूस । चौथा था दूरदर्शी और स्पष्टवक्ता । राजा मरा तो पहले मंत्री ने बहुमूल्य पत्थरों का स्मारक बनवाया । दूसरे ने उसमें मणि-मुक्ता जड़वाए । तीसरे ने सोने के दीपक जलवाये । सभी ने उनकी स्वामिभक्ति को सराहा । चौथे मंत्री ने उस स्मारक के आस-पास घना बगीचा लगवा दिया ।

तीनों की राशि बेकार चली गई । चोर चुरा ले गए, पर चौथे का बगीचा फल देता रहा, मालियों के कुटुंब पलते रहे और राहगीरों को विश्राम करने तथा बनाने वाले का इतिहास पूछने का अवसर मिलता रहा ।

सिकंदर का मित्र पर विश्वास

सिकंदर को एक असाध्य बीमारी हुई । उसका मरण निश्चित मानकर कोई चिकित्सक बदनामी के भय से दवा देने का साहस नहीं कर रहा था ।

इस असमंजस भरी परिस्थिति में सिकंदर के एक स्वामिभक्त नौकर 'फिलिप' ने दवा बनाई और उसे अच्छा हो जाने का आश्वासन दिया ।

चुगलखोरों ने सिकंदर को पत्र लिखकर सूचना दी कि फारस के राजा ने फिलिप को विष देकर मार डालने का षड़यंत्र किया है और बदले में विशाल सम्पदा देने का लालच भी ।

सिकंदर ने पत्र तकिए के सिरहाने रख लिया और फिलिप की दवा लेता रहा । उससे वह अच्छा भी हो गया । बाद में गुप्त सूचना से विष दिए जाने की बात प्रकट हुई, तो सिकंदर ने कहा-"विश्वास का सर्वथा त्याग करके भी मनुष्य नहीं जी सकता ।"

मैत्री : परस्पर विश्वास पर निर्भर

दूध ने पानी से कहा-"बंधु ! किसी मित्र के अभाव में मुझे सूना-सूना अनुभव होता है । आओ, तुम्हीं को हृदय से लगाकर मित्र बनाऊँ ।"

पानी ने उत्तर दिया-"भाई ! तुम्हारी बात तो मुझे बहुत अच्छी लगी, पर यह विश्वास कैसे हो कि अग्नि परीक्षा के समय भी तुम मेरे साथ रहोगे ।"

दूध ने कहा-"विश्वास रखो । ऐसा ही होगा ।"

और दोनों की मित्रता हो गई । ऐसी मित्रता कि दोनों के स्वरूप को अलग करना कठिन हो गया ।

अग्नि नित्य परीक्षा लेकर पानी को जला देती है, पर दूध है कि हर बार मित्र की रक्षा के लिए अपने अस्तित्व की भी चिंता न करते हुए जलने को प्रस्तुत हो जाता है ।

संयुक्तस्य कुटुम्बस्य रीतिर्योग्यैव सर्वथा ।
कर्त्तव्यानि विभक्तानि दायित्वानि नृणां सदा ।।८२।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भवेयुः स्वस्वदायित्वं मर्यादाञ्चापि वै स्वतः ।
निर्वहेयुः समे नो चेन्मनोमालिन्यमत्र तत् ।। ८३।।
पृथगभावोऽपि सद्यस्तु समुदेति भवेत्ततः ।
कलहापेक्षया चाल्पकुटुम्बस्थिति बाध्यता ।। ८४।।

भावार्थ–संयुक्त परिवार प्रथा हर दृष्टि से उपयोगी है, पर उसमें कर्तव्य और उत्तरदायित्व बँटे रहना चाहिए और हर सदस्य को अपनी–अपनी जिम्मेदारियों तथा मर्यादाओं का पालन करना चाहिए । इसके बिना मनोमालिन्य और बिखराव पैदा होता है । ऐसी स्थिति में निरंतर के कलह की अपेक्षा छोटे–छोटे अलग परिवार बसाने की विवशता अपनानी पड़ती है ।। ८२–८४।।

संयुक्तस्य कुटुम्बस्य लाभश्चात्र तदैव तु ।
प्राप्यते यदि कर्त्तव्यमर्यादानां विनिर्मिता ।। ८५।।
आचारसंहिता सा स्यात्पाल्येताऽपि जनैः स्वयम् ।
वयोऽधिकाश्च मान्याः स्युः परिवारे सदैव ते ।। ८६।।
सौविध्यस्य सहायस्य चिन्ता तेषां विशेषतः ।
कर्तव्या लाभ आप्तव्यसतेषामनुभवैः सदा ।। ८७।।
परामर्शं निदेशं तमौचित्यनिकषे स्वयम् ।
पालयेत्संपरीक्ष्यैव यतो वृद्धजनेष्वपि ।। ८८।।
बहूनां मान्यता इच्छा स्वभावश्च समान्यपि ।
विवेकनिकषोत्तीर्णान्यत्र नैव भवन्ति तु ।। ८९।।
ईदृश्यां च दशायां तु निदेशान् कलहं बिना ।
शक्यते चाऽञ्जसा कर्तुंमश्रुतान् वाप्युपेक्षितानम् ।। ९०।।
सम्मानं च सुरक्षा च सेवा भावोऽन्यदेव तु ।
विद्यते चाऽविचार्यैव निदेशपरिपालनम् ।। ९१।।
भिन्न एव महत्त्वं च विवेकौचित्यबोस्तु तत् ।
श्रेष्ठमेव परामर्शाद् वृद्धानामतिरिच्यते ।। ९२।।

भावार्थ–संयुक्त परिवारों का लाभ तभी मिलता है, जब कर्तव्यों एवं मर्यादाओं की आचार संहिता बने और उसका विधिवत् पालन हो । परिवार संस्था में वृद्धजनों को समुचित सम्मान मिलना चाहिए । उनकी सुविधा और सहायता का भी ध्यान रखना चाहिए । उनके अनुभवों से लाभ उठाना चाहिए, किन्तु परामर्श या निर्देश को औचित्य की कसौटी पर कसने के उपरांत ही पालन करना चाहिए, वृद्धों में से कितनों की ही मान्यताएँ, आदतें, इच्छाएँ ऐसी होती हैं, जिन्हें विवेक की कसौटी पर कसने पर खरा नहीं पाया जाता । ऐसी दशा में निर्देशों को बिना विग्रह खड़ा किए हुए, उन्हें अनसुना या उपेक्षित भी किया जा सकता है । सम्मान रक्षा, सुरक्षा, सेवा एक बात है और आँखें मूँद कर निर्देश मानने के लिए बाधित होना सर्वथा दूसरी । विवेक एवं औचित्य का महत्व सर्वोपरि है । उसका स्थान वृद्धजनों के परामर्श से भी अधिक है ।। ८५–९२।।

व्याख्या–आज परिस्थितियाँ बदली हुई हैं । पुरातन विश्व की तुलना में आज परिवार संस्था का रूप बदला हुआ सा है । पहले बड़े परिवारों में सभी एक साथ रहते थे, एक साथ उपार्जन कर उसका मिल-बाँटकर उपभोग करते थे । तब समाज छोटे-छोटे हिस्सों में बँटा था, शहर अधिक नहीं थे एवं कृषि तथा ग्राम्य प्रधान संस्कृति होने के कारण संयुक्त परिवार का प्रचलन अधिक था । उसके अपने लाभ भी थे । सहकारिता, औदार्य, एक दूसरे के प्रति सौजन्य, बड़ों को सम्मान–ये सभी उस परंपरा की ही देन हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आज स्थिति अलग है । उपार्जन के स्थान सुदूर क्षेत्रों में होने के कारण परिवार बँटते चले जा रहे हैं । यदि यह संरचनात्मक विघटन ही होता, तो एक बात थी, किन्तु जब उत्तरदायित्वों को भुलाकर भावनात्मक विघटन भी हो जाता है, तो आधुनिकता की इस देन को बुद्धिमान लोग हेय ही ठहराते हैं । दूसरा पक्ष यह भी है कि पीढ़ियों के अंतर व मानसिकता में भिन्नता होने के कारण परस्पर कलह बना रहता है एवं यही संयुक्त परिवार के विघटन का कारण बनता हो, तो ऐसे में बड़ों के प्रति दायित्व निभाते हुए यदि अलग छोटे परिवार बनाने पड़ें, तो इसे आज की आवश्यकता मानकर चलना चाहिए ।

यदि सौभाग्यवश संयुक्त परिवार में रहने का अवसर मिल सके, तो निर्वाह तभी हो पाता है, जब सभी परिवारी जन अपने उत्तरदायित्वों को निबाहें । बड़ों ने कष्ट उठाकर परिवार संस्था को समुन्नत किया है । वे सम्मान के योग्य हैं । किन्तु यदि उनके परामर्श सामयिक न हों एवं तर्क, तथ्य की कसौटी पर अनुचित ठहरें, तो ऐसे में उन्हें अनसुना करना अकर्त्तव्य नहीं है । ऋषि कहते हैं कि आँख बंद करके, बड़े कह रहे हैं, मात्र इसलिए मान लेना समझदारी की बात नहीं है । जो तथ्य कुरीतियों, मूढ़ मान्यताओं पर लागू होते हैं, वे ही उन सुझावों-परामर्शों पर भी समान रूप से लागू होते हैं, जो समय के प्रवाह से विपरीत हैं अथवा अनुचित हैं ।

आधा महाभारत तो जीत लिया

महाभारत युद्ध के पहले दिन दोनों सेनाएँ संग्राम के लिए आमने-सामने आ डटीं । युद्ध शुरू होने को ही था कि युधिष्ठिर रथ से उतर कर कौरवों की सेना में घुस गए और जाकर गुरु द्रोणाचार्य, पितामह भीष्म आदि को प्रणाम किया और उनका आशीर्वाद लिया । इधर चिंतित अर्जुन ने पूछा-"भगवन् ! महाराज यह क्या कर रहे हैं ?" इस पर कृष्ण भगवान बोले-"अर्जुन ! महाराज युधिष्ठिर ने गुरुजनों के प्रति हार्दिक सम्मान व्यक्त करके आधा महाभारत जीत लिया, इससे विपक्ष के श्रेष्ठजनों की हार्दिक सद्भावना हमारे पक्ष में आ गई, उस ओर केवल उनका शारीरिक पुरुषार्थ रह गया है । आधा शेष रहा, उसे जीतने के लिए अब तुम सब युद्ध प्रारंभ करो ।"

परस्पर विग्रह के बावजूद बड़ों का सम्मान

युद्ध कौरव और पांडवों के मध्य हुआ । वे लड़े और नियति के अनुसार उनमें से जिन्हें मरना था, वे उस गति को प्राप्त कर गए ।

धृतराष्ट्र और गांधारी थे तो कौरवों के माता-पिता, पर उनने सदा नीति, औचित्य को ही सराहा । अपनों के औचित्य का कभी पक्ष लिया नहीं ।

कुंती की मन:स्थिति भी वैसी ही थी । वह युद्ध को रोक तो न सकीं, पर अपने-पराए जैसा पक्षपात उनके मन में भी नहीं था । फलत: वह सदा धृतराष्ट्र-गांधारी को जेठ-जेठानी के रूप में श्रद्धास्पद ही मानती रहीं ।

महाभारत समाप्ति के बाद कुंती आग्रहपूर्वक उन्हें घर ले आईं और वैसा ही मान देती रहीं जैसा कि बड़ों को दिया जाता है । अंत में जब वे वनवास-वानप्रस्थ का आग्रह करने लगे, तो कुंती भी उनकी सेवा करने के लिए साथ ही वनवास चली गईं ।

पुत्र को सत्परामर्श

अमेरिका के राष्ट्रपति एण्ड्रू जैक्सन की माता को एक जहाज पर नर्स के रूप में विदेश जाना पड़ा । तब जैक्सन चौदह वर्ष के थे । माता ने अपने पुत्र को एक बहुमूल्य संदेश भेजा, जिसमें लिखा था-एण्ड्रू, यदि मैं जीवित वापस न लौटूँ, तो जिंदगी भर मेरी एक बात याद रखना-"इस संसार में हर मनुष्य को अपना रास्ता आप बनाना पड़ता है । आगे बढ़ने के लिए सच्चे दोस्तों की जरूरत पड़ती है और वे उन्हें ही मिल सकते हैं, जो स्वयं ईमानदार हैं ।"

उन्होंने जीवन भर अपनी माता के इस अंतिम उपेश को याद रखा एवं यही उनकी सफलता का मूल मंत्र बन गया ।

प्रतिभा का निखार संयुक्त रहने में

संयुक्त रहने की फलश्रुतियाँ अनेक हैं । एकाकी तो प्रखर-प्रतिभा को भी जंग लग जाती है । ऋषि अंगिरा के शिष्य उदयन बड़े प्रतिभाशाली थे, पर अपनी प्रतिभा के स्वतंत्र प्रदर्शन की उमंग उनमें रहती थी । साथी-सहयोगियों से अलग अपना प्रभाव दिखाने का प्रयास यदा-कदा किया

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

करते थे । ऋषि ने सोचा, यह वृत्ति इसे ले डूबेगी । समय रहते समझाना होगा ।

सर्दी का दिन था । बीच में रखी अँगीठी में कोयले दहक रहे थे । सत्संग चल रहा था । ऋषि बोले–"कैसी सुंदर अँगीठी दहक रही है । इसका श्रेय इसमें दहक रहे कोयलों को है न ?" सभी ने स्वीकार किया ।

ऋषि पुनः बोले–"देखो, अमुक कोयला सबसे बड़ा, सबसे तेजस्वी है । इसे निकालकर मेरे पास रख दो । ऐसे तेजस्वी का लाभ अधिक निकट से लूँगा ।"

चिमटे से पकड़कर वह बड़ा तेजस्वी अंगार ऋषि के समीप रख दिया । पर यह क्या अंगार मुरझा सा गया । उस पर राख की पर्त आ गई और वह तेजस्वी अंगार काला कोयला भर रह गया ।

ऋषि बोले–"बच्चो ! देखो, तुम चाहे जितने तेजस्वी हो, पर इस कोयले जैसी भूल मत कर बैठना । अँगीठी में सबके साथ रहता, तो अंत तक तेजस्वी रहता और सबके बाद तक गर्मी देता । पर अब न इसका श्रेय रहा और न इसकी प्रतिभा का लाभ हम उठा सके ।"

शिष्यों को समझाया गया–"परिवार वह अँगीठी है, जिसमें प्रतिभाएँ संयुक्त रूप से तपती हैं । व्यक्तिगत प्रतिभा का अहंकार न टिकता है, न फलित होता है । परिवार के सहकार-सहयोग में वास्तविक बल है ।"

मानें तभी जब उचित हो

बड़ों का कहना मानना वहीं तक उचित है, जहाँ तक वह न्यायानुकूल और दूरदर्शितायुक्त हो । मोहग्रस्त मनःस्थिति में वे जो भी कहें, उसे शिरोधार्य करना आवश्यक नहीं । औचित्य की गरिमा बड़ों के निर्देश से भी अधिक है ।

प्रह्लाद ने पिता का आदेश मानने से इन्कार कर दिया । भरत जी ने माता का कहना नहीं माना । बलि ने गुरु शुक्राचार्य के परामर्श की स्पष्ट अवहेलना की । विभीषण का बड़ा भाई रावण जो कराना चाहता था, वह उसने स्वीकार न किया ।

मीरा का परिवार, उन्हें घर में ही कैद रखना चाहता था, पर वे धर्मसेवा के निमत्त परिभ्रमण पर चली गईं । कुटुंब का प्रतिबंध उनने नहीं माना ।

वसुधा की पुलकन का कारण

प्रचंड अंतर्दाह से एक विराट् पिंड खंड-खंड होकर आकाश से टूट पड़ा और क्षितिज में घूमने लगा । एक खंड विधाता के सम्मुख भी जा गिरा ।

उन्होंने सोचा, इससे क्रीड़ा की जाए । किन्तु ओह ! यह तो अंगार की तरह गरम था । विधाता ने जल में विहार करने के लिए छोड़ दिया । जब निकाला तो पता चला कि उसमें स्पंदन है ।

विधाता ने पूछा–"क्या तुममें स्पंदन है ?" "हाँ" का उत्तर पाकर विधाता ने फिर पूछा–"तुम्हारा नाम क्या है ?" अनाम पिंड ने कहा–"मेरा नाम कुछ भी नहीं है ।" विनोदी विधाता ने उसका नाम 'वसुधा' रख कर कहा–"लो, तुम्हारा नाम रख दिया । अब प्रसन्न होकर हँसो, खेलो और मंगल मनाओ ।"

वसुधा ने एक गर्म उच्छ्वास छोड़कर कहा–"निर्माता ! मेरे अंतर में अनंत दाह भरा है, मैं किस प्रकार हँस सकती हूँ ।"

विधाता ने उसे हरी-भरी वनस्पति से भर दिया और कहा–"अब तो हँसोगी ?" वसुधा ने फिर उच्छ्वास छोड़ा, वह भी गर्म था । अब विधाता ने उसे एक शिशु प्राणी प्रदान करके कहा–"ले, यह मानव शरीर तेरी प्रसन्नता का हेतु बनेगा ।"

मनुष्य वसुधा की गोद में बड़ा हुआ, उसने अपने परिश्रम से माँ वसुधा को सजा दिया । वसुधा का शृंगार देखकर विधाता ने एक दिन पूछा–"वसुधे, अब तो तुम्हारी प्रसन्नता का पारावार न होगा । वसुधा ने पुनः उच्छ्वास छोड़ा । वह भी गर्म था । विधाता ने झुँझलाकर कहा–"तू कभी सुखी नहीं हो सकती और वे नाराज होकर चले गए ।"

एक दिन मधुर संगीत से विधाता की नींद टूटी । उन्होंने उठकर देखा, वसुंधरा गा रही थी । विधाता ने उसकी प्रसन्नता का हेतु पूछा । प्रसन्न मन से वसुधा बोल उठी–"स्रष्टा ! जब मेरे पुत्र निःस्वार्थ भाव से एक-दूसरे से प्रेम करते हैं, मिल-जुलकर मेरे वैभव का आनंद उठाते हैं, तो उनके इस सहकार को देखकर मेरा रोम-रोम पुलकित हो उठता है ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गृहस्थजीवनस्यातो महिमा स मतः स्वतः ।
आश्रमाणामिव श्लाघ्यः शोभनः सुप्रशंसितः ।। ९३।।
उच्चादर्शं तु गृह्णन्ति लोकसेवा विधेस्तु ये ।
जनास्तेषां कृते नैवानिवार्यं विद्यते परम् ।। ९४।।
सर्वसाधारणानां तु कृतेऽस्त्येव जनुर्यतः ।
विकासश्च कुटुम्बस्थः सर्वेषामेव जायते ।। ९५।।
गृहस्थेन ततः सर्वे सम्बद्धाः सन्ति निश्चितम् ।
अतस्तत्सूत्रसम्बद्धकर्तव्यपरिपालनम् ।। ९६।।

भावार्थ–गृहस्थ जीवन की महिमा भी अन्य आश्रमों की तरह ही सुंदर, प्रशंसनीय एवं श्लाघ्य मानी गई है । लोकसेवा का उच्च आदर्श अपनाने वालों के लिए वह अनिवार्य नहीं तो भी सर्वसाधारण के लिए वही उपयुक्त है । हर किसी का जन्म और विकास तो परिवार के अंतर्गत ही होता है, इसलिए उसके साथ हर कोई जुड़ता है । अतएव उस संबंध सूत्र के साथ जुड़े हुए कर्तव्यों का परिपालन ही श्रेष्ठ माना जाता है ।। ९३–९६।।

व्याख्या–गृहस्थ जीवन प्रकरण का समापन करते हुए ऋषिश्रेष्ठ सर्वसाधारण के लिए परिवार-बंधन में जुड़ने का माहात्म्य बताते हुए कहते हैं कि चूँकि मनुष्य परिवार की, समाज की एक इकाई है, उसे अपवादों को छोड़कर यथा संभव अपने दायित्व परिवार संस्था से जुड़कर ही निभाने चाहिए । माता-पिता, भाई-बहन, पत्नी-पुत्री, मित्रगण इन सभी के प्रति उनके कर्तव्य हैं । उन्हें गृहस्थ धर्म में रहकर ही पूरा किया जा सकता है । मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही है कि वह स्वयं को इस बंधन से जोड़कर सबको साथ लेकर चले एवं अपने धरती पर अवतरण को सफल बनाए ।

उद्बोधनं प्रियं जातं श्रोतृणामद्य यच्छ्रुतम् ।
शान्तिपाठनमस्कारजयशब्दैरथाऽपि च ।। ९७।।
नीराजनेन सार्धं च समाप्तं सत्रमुत्तमम् ।
यथाकालं परं गन्तुमुत्थातुं चाऽपि नो मनः ।। ९८।।
कस्याऽपि कुरुते तत्र साहसं नित्यकर्मणः ।
व्यवस्था च व्यधात् सर्वान्विवशान् गन्तुमत्र च ।। ९९।।

भावार्थ–आज का उद्बोधन उपस्थित जनों को और भी प्रिय लगा । शांतिपाठ, आरती, जयकार, अभिवंदन के उपरांत नियत समय पर सत्र समाप्त हुआ, पर उठने व जाने के लिए किसी का मन नहीं कर रहा था । नित्य नियम की व्यवस्था ने ही उन्हें बिदा होने के लिए विवश किया ।। ९७–९९।।

**इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्रीधौम्यऋषिप्रतिपादिते "गृहस्थजीवने," ति
प्रकरणो नाम द्वितीयोऽध्यायः ।। २।।**

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

।। अथ तृतीयोऽध्यायः ।।

卐 नारी-माहात्म्य प्रकरणम् 卐

सत्रप्रवचने तत्र तृतीयस्य दिनस्य तु ।
अभूदुपस्थितिः सा च श्रोतृणां महती नृणाम् ।। १।।
संख्या प्रतिदिनं विज्ञजनानां वर्द्धते यतः ।
अन्वभूवन्निदं सर्वे प्रथमं यद् गृहस्थजः ।। २।।
धर्मोऽपि समतुल्यः स योगसाधनया ध्रुवम् ।
निर्वहिण च तस्यैव सीमितानामिह स्वयम् ।। ३।।
मर्यादानामुदाराणामनुरूपतया नरः ।
पुण्यस्य परमार्थस्य योग्यतामेति सत्वरम् ।। ४।।
स हैवावधिकालेऽस्मिन्नभ्यसंश्च पराक्रमम् ।
प्रतिभोपार्जनेनैव परार्थं प्रचुरं सह ।। ५।।
कर्तुं क्षमो भवेदत्र श्रोतुं च वचनामृतम् ।
औत्सुक्यं सन्नृणां वीक्ष्य धौम्यः सन्तोषमागतः ।। ६।।
यच्छ्रुतं सावधानैस्तु नरैर्मे प्रतिपादनम् ।
सार्थक्यं स्वप्रयासस्य अन्वभूत्स प्रहर्षितः ।। ७।।

भावार्थ–तीसरे दिन के सत्र प्रवचन में श्रोताओं की और भी अधिक उपस्थिति थी । विज्ञजनों की संख्या प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी । लोगों ने प्रथम बार यह अनुभव किया कि गृहस्थ धर्म भी योग–साधन के समतुल्य है और उसका निर्वाह निर्धारित उदार मर्यादाओं के अनुरूप करने से मनुष्य पुण्य–परमार्थ का भागी बन सकता है । साथ ही इस अवधि में पराक्रम का अभ्यास करते हुए, प्रतिभा अर्जन के साथ–साथ प्रचुर परमार्थ भी कर सकता है । अमृतवचन सुनने के लिए आतुर जन समुदाय की उत्सुकता देखकर महर्षि धौम्य को संतोष हो रहा था कि उनका कथन–प्रतिपादन ध्यानपूर्वक सुना गया । वे अपने प्रयास की सार्थकता अनुभव कर रहे थे ।। १–७।।

व्याख्या–गृहस्थ धर्म को सामान्यतया उपभोग प्रधान माना जाता है एवं यह समझा जाता है कि अध्यात्म की लक्ष्य-सिद्धि इसमें संभव नहीं । किन्तु प्रस्तुत सत्र में, जो विशेष रूप से गृहस्थ जीवन को लक्ष्य करके ही आयोजित किया गया, सत्राध्यक्ष द्वारा स्थान-स्थान पर इसे एक योग साधन, जीवन देवता की साधना-आराधना की उपमा देते हुए, उसके माहात्म्य पक्ष पर ही जोर दिया जाता रहा है । विभूतियों को अर्जित करने के लिए परिवार संस्था विशुद्धतः एक प्रयोगशाला-पाठशाला है, जहाँ मानवी पराक्रम की परीक्षा होती है, तदनुसार उसे उपलब्धियाँ मिलती हैं । कौन उन्हें कितना, किस प्रकार पुण्य प्रयोजन के निमित्त खर्च करता है, यह उसके आंतरिक स्तर एवं सुसंस्कारिता पर निर्भर है । ऐसे हृदयग्राही प्रतिपादनों को सुनकर श्रोताओं को, स्वयं को धन्य अनुभव करना सहज ही संभाव्य है ।

धौम्य उवाच –

भद्रजनाः ! गृहिण्याश्च महत्वं वर्णितं परम् ।
वस्तुतस्तु, यतो धुर्या गृहिणी परिवारगा ।। ८।।
उत्कृष्टत्वे निकृष्टत्वे तस्या एव गृहस्थजम् ।
उत्थानं पतनं नूनमाश्रितं नात्र संशयः ।। ९।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तस्याः सहायकस्त्वेष पुरुषः केवलं सदा ।
साधनान्यर्जयन्नस्या साहाय्यं विदधाति तु ।। १०।।
शय्यात्यागात्समारभ्य यावद्रात्रौ समेऽपि च ।
शेरते तावदेवेयं गृहेऽभिरमतेऽभितः ।। ११।।
तथा निरन्तरं तस्य परिवारस्य मध्यगा ।
छायेव बद्धमूला सा प्रशस्तैवाऽधिका हि सा ।। १२।।
गृहिणी विद्यते तेन गृहलक्ष्मीरसंशयान् ।
मन्दिरस्थेव देवी सा गेहे मान्या समैरपि ।। १३।।
सम्मानमनुदानं च तथैवास्यै विधीयताम् ।
प्रत्येकस्य गृहस्थस्य कर्त्तव्यं प्रथमं त्विदम् ।। १४।।
मातुः पत्न्या भगिन्या वा कन्याया वाऽपि संस्थिता ।
रूपे नारी यदा यत्र तत्र तां स्वावलम्बिनीम् ।। १५।।
स्वस्थां प्रसन्नां संस्कारयुतां च प्रतिभामयीम् ।
शिक्षितां मानवः कर्तुं न्यूनतां न समाश्रयेत् ।। १६।।
प्रयासाः सर्वदा कार्या नरैरेवंविधास्तथा ।
ग्राह्या चाल्पाऽपि नोपेक्षा तेषु हानेर्भयादिह ।। १७।।

भावार्थ–*महर्षि धौम्य ने कहा – हे भद्रजनो ! शास्त्रों में नारी की बड़ी महत्ता वर्णित की गई है । नारी परिवार की धुरी है, उसी की उत्कृष्टता–निकृष्टता पर गृहस्थ का उत्थान–पतन निर्भर रहता है, इसमें जरा भी संदेह नहीं है । पुरुष तो उसका सहायक मात्र है । वह साधन जुटाता और सहयोग देता है । प्रातः शैय्या त्याग से लेकर जब तक रात्रि में घर के सदस्य सोते हैं, तब तक होने वाले घर के प्रत्येक कार्य में प्रतिक्षण इसी में व्यस्त देखी जाती है । निरंतर उस परिकर पर छाई रहने के कारण उसी की प्रशंसा अधिक है । नारी गृहलक्ष्मी है । उसे घर के देवालय में अवस्थित प्रत्यक्ष देवी माना जाना चाहिए । वैसा ही सम्मान एवं अनुदान भी उसे प्रस्तुत किया जाना चाहिए । प्रत्येक सद्गृहस्थ का प्रथम कर्तव्य है कि माता, भगिनी, पत्नी और कन्या के जिस भी रूप में नारी रहे, उसे स्वस्थ, प्रसन्न, शिक्षित, स्वावलम्बी एवं सुसंस्कृत, प्रतिभावान बनाने में कुछ कमी न रखें । इस प्रकार के प्रयत्न निरंतर जारी रहें । उन प्रयासों की तनिक भी उपेक्षा न करें, अन्यथा महान हानि का भय बना रहेगा ।। ८–१७।।*

व्याख्या–शास्त्रों में नारी की महत्ता और उसकी गरिमा का वर्णन करते हुए कहा गया है कि नारी ब्रह्मविद्या है, श्रद्धा है, शक्ति है, पवित्रता है, कला है और वह सब कुछ है, जो इस संसार में सर्वश्रेष्ठ के रूप में दृष्टिगोचर होता है । नारी मूर्तिमान कामधेनु है, अन्नपूर्णा है, सिद्धि है और वह सब कुछ है, जो मानव प्राणी के समस्त अभावों, कष्टों और संकटों के निवारण करने में समर्थ है । यदि उसे श्रद्धासिक्त सद्भावना से सींचा जाय, तो यह सोमलता विश्व के कण-कण को स्वर्गीय परिस्थितियों से ओत-प्रोत कर सकती है ।

नारी को परिवार का हृदय और प्राण कहा गया है । परिवार का सम्पूर्ण अस्तित्व तथा वातावरण नारी पर, सुगृहिणी पर निर्भर करता है । नारी अपनी कोमलता, सुशीलता, संवेदना, करुणा, स्नेह और ममता आदि हार्दिक विशेषताओं के कारण परिवार के निर्माण में महत्वपूर्ण स्थान रखती है और इन विशेषताओं के कारण ही घर-परिवार के सदस्यों के अधिक निकट रहती है और उन्हें प्रभावित करती है । बृहत्संहिता में कहा गया है–

"पुरुषाणां सहस्रं च सती नारी समुद्धरेत् ।"

अर्थात् सती स्त्री अपने पति का ही नहीं, अपने उत्कृष्ट आचरण की प्रत्यक्ष प्रेरणा से सहस्रों पुरुषों का उद्धार यानी श्रेष्ठता की दिशा का मार्गदर्शन करती है ।

नारी स्वभावतः गृहलक्ष्मी है । घर की अंदरूनी व्यवस्था से लेकर परिवार में सुख, शांति और

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सौमनस्यता के वातावरण का दायित्व प्रायः नारी को ही निभाना पड़ता है । उसमें परिवार को स्वर्ग बनाने की प्रकृति प्रदत्त क्षमता विद्यमान है । इसीलिए उसे गृहिणी, सुगृहणी, गृहलक्ष्मी जैसे सम्मानजनक विशेषणों से संबोधित किया जाता है और जीवन संगिनी के रूप में जन्म-जन्मांतरों का साथी समझा जाता है ।

मनुस्मृति में कहा गया है–**"पूजा हि गृहदीप्तयः । स्त्रियः श्रियश्च लोकेषु न विशेषोऽस्ति कश्चन ।।"** (९/२६) गृहस्वामिनी स्त्री पूजा के योग्य है । इनमें और लक्ष्मी में कुछ भी भेद नहीं है ।

नारी का देवत्व

नारी देवत्व की मूर्तिमान प्रतिमा है । देवी भागवत में कहा गया है –

'विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु ।।'

अर्थात, समस्त स्त्रियाँ और समस्त विद्याएँ देवी रूप ही हैं । नारी के अंत:करण में कोमलता, करुणा, ममता, सहृदयता एवं उदारता की पाँच देव-प्रवृत्तियाँ सहज स्वाभाविक रूप से अधिक हैं । इसलिए उसे 'देवी' शब्द से अलंकृत-सम्मानित किया जाता है । यदि यह बहुलता न होती, तो वह पत्नी का समर्पणपरक, माता की जान जोखिम में डालने जैसी बलिदानी प्रक्रिया, बहन और पुत्री की अंतरात्मा को गुदगुदा देने वाली विशेषता कैसे संभव होती । उसके इन दैवी गुणों ने ही उसे इस प्रकार का परमार्थपरायण तपस्वी-जीवन जी सकने की क्षमता प्रदान की है ।

ऐसा अनायास ही नहीं हुआ । इस प्रतिष्ठा को प्राप्त करने के लिए नारियों ने चिरकाल से गहन तपश्चर्या की है । **'पुण्या कापि पुरन्ध्री', नारि कुलैकशिखामणिः'** अर्थात उसने अपनी सम्पूर्ण शक्तियों के चरम विकास द्वारा ही यह गौरव प्राप्त किया है ।

लोक कल्याण की विधायिका, पथ प्रदर्शिका और संरक्षिका शक्ति का नाम ही देवी है । अपने इस रूप में भारतीय नारी आज भी उन प्राचीन गुणों को धारण किए हुए है, जिनके द्वारा अतीत काल में उसने समाज के समग्र विकास में योगदान दिया था । यद्यपि वह तेजस्विता आज धूमिल पड़ गई है, तथापि यदि उस पर पड़े मल आवरण के विक्षेप को हटा दिया जाये, तो नारी सत्ता अपनी पूर्ण महत्ता को फिर से ज्यों की त्यों चरितार्थ कर सकती है ।

ब्रह्म पुराण में व्यास-जाबालि संवाद के रूप में एक आख्यायिका आती है । व्यास जी जाबालि को बताते हैं–**"पितुरप्यधिका माता गर्भ-धारणपोषणात् । अतो हि त्रिषु लोकेषु नास्ति मातृ समो गुरुः ।"** हे जाबालि ! पुत्र के लिए माता का स्थान पिता से बढ़कर है, क्योंकि वही उसे गर्भ में धारण करती है, अपने रस, रक्त और शरीर से ही नहीं, भावनाओं और संस्कारों से भी पालन-पोषण करती है । इसलिए वह सर्वोपरि मार्गदर्शक और कल्याणकारक गुरु के रूप में प्रतिष्ठा की पात्र है । **"नास्ति पुत्र सम प्रियः ।"** उसे पुत्र से बढ़कर और कोई प्रिय नहीं । अतएव मनुष्य मात्र का यह कर्तव्य हो जाता है कि वह परम आध्यात्मिक शक्ति के रूप में 'माँ' को प्रतिष्ठा प्रदान करे, प्रत्येक नारी में भाववत्सला नारी का रूप देखें ।

'नास्ति भार्या समं मित्रम्'–माँ के बाद नारी का दूसरा रूप 'पत्नी' का, 'सहधर्मिणी' का है । इस रूप में उसे सबसे बड़े विश्वासपात्र मित्र की संज्ञा दी गई है । जीवन की कठिन परिस्थितियों में जब संसार के अन्य सभी लोग साथ छोड़ जाते हैं, धन-सम्पत्ति का विनाश हो जाता है, शरीर रोगी और निर्बल हो जाता है, उस स्थिति में भी सहनशीला पत्नी ही पुरुष का साथ देती है और उसकी हर कठिनाई में और कोई योगदान भले ही न बन पड़े, किन्तु पुरुष के मनोबल, उसकी आशा और संवेदनशीलता को बल प्रदान करती रहती है ।

'नास्ति स्वसा समा मान्या' बहिन के समान सम्मानीय और कोई नहीं । इस रूप में नारी ने पुरुष को जो स्नेह प्रदान किया है उससे हमारे सामाजिक संबंध और जातीय बंधन सुदृढ़ हुए हैं । भारतीय वीरों को बुराइयों से लड़ने की प्रेरणा देने वाली, उनके गौरवपूर्ण मस्तक पर तिलक करने वाली बहिन का संबंध आज भी कितना मधुर है, इस बात को रक्षा बंधन पर्व पर हर भारतीय अनुभव किया करता है ।

'गृहेषु तनया भूषा'–अर्थात कन्या के रूप में नारी घर की शोभा है । वह अपने आमोद-प्रमोद से गृहस्थ जीवन में जो सरसता लाती है, वह अपेक्षाकृत पुत्र नहीं ला पाते । कन्या पुत्र की अपेक्षा कहीं अधिक भावनाशील होती है, अतएव उससे मिलने वाली स्नेहधारा का मूल्य और महत्व बहुत अधिक है ।

अपने इन चारों रूपों में अतीतकालीन भारतीय नारी ने पुरुष वर्ग के साथ जो उपकार किए हैं, उनकी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तुलना किसी भी दैवी सत्ता के साथ सहर्ष की जा सकती है । उसमें उसका पलड़ा भारी ही बैठेगा । अतएव उसका 'देवी' कहलाना प्रत्येक दृष्टि से उचित और न्यायपूर्ण है । उसकी इस गरिमा को पूरी-पूरी प्रतिष्ठा मिलनी ही चाहिए ।

नारी–स्त्रष्टा की जीवंत कलाकृति

नारी इस सृष्टि का सौंदर्य है । उसे जीवंत कलाकृति के रूप में देखा जा सकता है । स्नेह उसकी प्रवृत्ति है और अनुदान उसका स्वभाव । उसमें जीवन-संचार के सभी तत्वों को स्रष्टा ने कूट-कूट कर भरा है और सृजन की अनगढ़ कुरूपता को सुगढ़ता के रूप में परिणत कर सकने की क्षमता से नारी को सँजोया है ।

मनुष्य के पास अपना कहलाने योग्य जो कुछ है, वह नारी का अनुदान है । जीवन उसी की उदरदरी से उपजता है । हरीतिमा उपजाने वाली धरित्री की अपनी गरिमा है; पर मानुषी-सत्ता की सृजनकर्त्री तो जननी है । खनिजों और वनस्पतियों से मनुष्य श्रेष्ठ है, इसलिए धरित्री से जन्मदात्री जननी की महिमा असंख्य गुनी अधिक मानी जायेगी । पृथ्वी पर हम निर्वाह करते हैं, पर नारी तो समूची मानवी-सृष्टि का ही सृजन और परिपोषण करती है ।

मानवी-अंड माता के गर्भ में पकता है । शिशु का आरंभिक आहार ममतामयी माँ के वक्षस्थल से टपकता है । दुलार पीकर अंतरात्मा हुलसती और विकसित होती है । उससे बढ़कर पोषण, अभिवर्द्धन और संरक्षण और कोई कर नहीं सकता । न केवल शरीर, वरन् अंत:करण का अधिकतर निर्माण माता के अंचल की छाया में ही होता है । वयस्क पुरुष नारी का समर्पण भरा अनुराग पाकर अलौकिक आनंद से भरता और तृप्ति अनुभव करता है । सृजन की देवी जिस घर में पहुँचती, निवास करती है, वहाँ गृहलक्ष्मी की भूमिका सम्पन्न करती है और मिट्टी के घरौंदे में स्वर्ग का अवतरण किस प्रकार संभव हो सकता है, उसे सिद्धांत और व्यवहार में प्रत्यक्ष कर दिखाती है ।

नारी की महानता

गायत्री मंत्र का छठा अक्षर 'व' नारी जाति की महानता और उसके विकास की शिक्षा देता है–

वद नारी बिना कोऽन्यो निर्माता मनुसन्ततेः । महत्वं रचना शक्तेः स्वस्याः नार्या हि ज्ञायताम् ।।

अर्थात, मनुष्य की निर्मात्री नारी ही है । नारी को अपनी शक्ति का महत्व समझना चाहिए ।

नारी की गरिमा उसके जननी पद में सन्निहित है । सचमुच साधारण प्राणियों से भरी इस धरती पर माता का हृदय एक दैवी विभूति ही है ।

''माता धरित्री, जननी दयार्द्रहृदया शिवा । देवी त्रिभुवनश्रेष्ठा निर्दोषा सर्व दुःखहा ।।
आराधनीया परमा दया शान्तिः क्षमाः धृतिः । स्वाहा स्वधा च गौरी च पद्मा च विजया जया ।।''

भगवान वेदव्यास जी ने नारी को उक्त इक्कीस नामों से सम्बोधित करते हुए गुणगान किया है और फिर आगे कहा है–

''नास्ति गंगा समं तीर्थं नास्ति विष्णु समः प्रभुः । नास्ति शम्भु समः पूज्यो नास्ति मातृ समो गुरुः ।।''

''गंगा के समान कोई तीर्थ नहीं, विष्णु के समान कोई प्रभु नहीं और शिव के समान कोई पूजनीय नहीं तथा वात्सल्य स्रोतस्विनी मातृ हृदय नारी के बराबर कोई गुरु नहीं, जो इस लोक और परलोक में कल्याण का मार्ग प्रशस्त करे ।''

ब्रह्मा इस संसार की रचना करते हैं और विष्णु इसका भरण-पोषण, संवर्धन करते हैं । इस सूक्ष्म आध्यात्मिक रहस्य को यदि स्थूल रूप में कहीं देखना हो तो उसकी झाँकी माता को देखकर की जा सकती है । ब्रह्मा और विष्णु की दैवी शक्तियाँ इस धरा पर नारी के मातृ रूप में अपना कार्य कर रही हैं । इसी की अनुभूति के आधार पर शास्त्रकार ने कहा है–

''या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ।''

संसार की रचना उसका भरण-पोषण करने वाली दैवी शक्ति इस स्थूल संसार में नारी के मातृ रूप में ही स्थित हो अपना कार्य कर रही है । इसलिए इस मातृ रूपा नारी को हम बार-बार नमन करते हैं ।

इसी तथ्य के द्रष्टा एक मनीषी ने कहा है–''ईश्वर के पश्चात हम सर्वाधिक ऋणी नारी के हैं । प्रथम तो जीवन के लिए, पुनश्च इसे जीने योग्य बनाने के लिए ।'' तात्पर्य यह है कि मनुष्य जीवन की सभी संभावनाओं के मूल में माँ का असीम प्यार, उसका त्याग, उसकी महान सेवायें ही निहित हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जुड़े होने के कारण महत्ता

वन में खड़े एक पौधे के साथ लिपटी हुई एक लता भी धीरे-धीरे बढ़कर पौधे के बराबर हो गई । पौधे का आश्रय लेकर उसने फलना-फूलना आरंभ कर दिया ।

बेल को फलते-फूलते देखकर वृक्ष को अहंकार हो गया कि मैं न होता, तो लता कब की नष्ट हो गई होती । उसने धमकाते हुए कहा-"ओ री बेल ! मैं जो कुछ कहूँ, तू उसका पालन किया कर, नहीं तो तुझे मार भगा दूँगा ।"

अभी वह लता को डाँट ही रहा था कि दो पथिक उधर से निकले । एक बोला-"बंधु ! देखिए, यह वृक्ष कैसा शीतल और सुंदर है । इस पर कैसी अच्छी लता पुष्पित हो रही है आओ, यहाँ कुछ देर बैठकर विश्राम करें ।"

अपना सारा महत्व लता के साथ है, यह सुनकर वृक्ष का सारा अभिमान नष्ट हो गया, उस दिन से उसने लता को धमकाना बंद कर दिया ।

कथा का मर्म समझाते हुए संत बोले-"भक्तो ! नारी के साथ जुड़ा होने से ही नर का महत्व है । दोनों एक दूसरे के सहयोगी-सहचर हैं । ऐसे में किसी एक को कनिष्ठ-वरिष्ठ नहीं माना जाना चाहिए ।"

प्रेम में अलगाव कहाँ

भिक्षुणी उद्यान में से सुवासित फूल चुनकर लाई थी । अधमुँदे नेत्रों से अपने आराध्य को खोजती हुई एक दिशा विशेष में वह चली जा रही थी । पैर अविकल गति से उठ रहे थे । राह में जहाँ भी अंगुलि के फूल खिसक पड़ते, वहाँ दिशाएं महक जातीं, सूखे पत्ते मुस्कराने लगते ।

जिसे खोज रही थी, वह मिल गया । भिक्षुणी ने ध्यानमग्न भिक्षु के चरणों पर सारे फूल उँड़ेल दिए । मस्तक भी उसी श्रद्धा से नत हो गया ।

भिक्षु ने आँखें खोलीं और सकुचाते हुए कहा-"यह क्या किया ?"

भिक्षुणी ने स्थिर वाणी से कहा-"अपने भगवान के लिए जो लाई थी, सो उसे सौंप दिया ।"

भिक्षु की चेतना तीखी हुई और उससे कहा-"तो क्या तुम मेरे मार्ग का अवरोध बनोगी ?"

भिक्षुणी बोली-"नहीं, आप अपनी राह चलें । मैंने अपने भगवान बदल लिए हैं और दोनों रास्ते एक कर रही हूँ । प्रेम में अलगाव होता ही नहीं ।"

यह समझना भूल है कि नारी प्रगति के मार्ग का रोड़ा है । इसके विपरीत सत्य यह है कि आत्मिक प्रगति उसके सहयोग से और भी सरल हो जाती है ।

आदर्श दंपत्तियों के उदाहरण

शास्त्रों में व इतिहास में हम जितने भी आदर्श दम्पत्तियों के जीवन क्रम को देखें, तो यही निष्कर्ष निकलता है कि परस्पर एक-दूसरे को सम्मान-सहयोग देकर ही वे सफल-अनुकरणीय जीवन जी सके ।

बंगाल के निर्धन विद्वान **प्रताप चंद्र राय** ने अपनी सारी शक्ति और सम्पत्ति को बाजी पर लगाकर महाभारत के अनुवाद का कार्य हाथ में लिया । वे उसे अपने जीवन में पूरा न कर सके, तो उनकी पत्नी ने अपना संस्कृत ज्ञान पूरा करके उस अधूरे काम को पूर्ण करके दिखा दिया, ऐसी साहसिकता वहाँ दिखाई पड़ती है, जहाँ उच्चस्तरीय आदर्शों का समावेश हो ।

साम्यवाद के प्रवर्त्तक **कार्लमार्क्स** भी कुछ कमा नहीं पाते थे । यह कार्य उनकी पत्नी **जैनी** करती थी । वे पुराने कपड़े खरीद कर उनमें से बच्चों के छोटे कपड़े बनातीं और फेरी लगातार बेचती थीं । आदर्शों के लिए पतियों को इस प्रकार प्रोत्साहित करने और सहयोग देने में उनका उच्चस्तरीय संकल्प-बल ही कार्य करता था ।

मैत्रेयी याज्ञवल्क्य के साथ पत्नी नहीं, धर्मपत्नी बनकर रहीं । **रामकृष्ण परमहंस** की सहचरी **शारदामणि** का उदाहरण भी ऐसा ही है । **सुकन्या** ने **च्यवन** के साथ रहना किसी विलास-वासना के लिए नहीं, उनके महान लक्ष्य को पूरा करने में साथी बनने के लिए किया था । जापान के गांधी **कागाबा** की पत्नी भी दीन-दुखियों की सेवा का उद्देश्य लेकर के ही उनके साथ दाम्पत्य सूत्र में बँधी थीं ।

समान लक्ष्य के पति-पत्नी

महाराष्ट्र के जमींदार भाऊ रघुनाथ ठाकुर जब १३ वर्ष के थे, तब उनका विवाह ढाई वर्ष की पत्नी से हुआ था । बड़े होने पर वे समाज सुधारक बने और बाल विवाह के कट्टर विरोधी थे ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उनने अपनी पुत्री सरला को एम०ए० तक पढ़ाया । लड़की ने महिला जागृति का काम करने का निश्चय कर लिया था । उपयुक्त वर न मिलने पर वे सभी रिश्ते अस्वीकार करती रहीं और महर्षि कर्वे के महिला विद्यालय में अध्यापिका हो गईं । उसकी शर्त थी कि जो साथी महिला शिक्षा के उसके लक्ष्य में सहायक हो, उसी से विवाह करेंगी । संयोग से इन्दौर के प्रेमनायक इसी प्रवृत्ति के मिल गए । दोनों ने मिलकर उस लक्ष्य को पूरा करने में समूची क्षमता नियोजित की ।

इस प्रयास से ३० कन्या विद्यालय खुले, जिनमें बाईस हजार लड़कियाँ पढ़ने लगी थीं । इनके अतिरिक्त इस दम्पत्ति ने मालवा और महाराष्ट्र में नारी उत्थान के और भी अनेक कार्य किए । इसे कहते हैं एक और एक मिलकर ग्यारह होना ।

दासप्पा दम्पत्ति

मैसूर की यशोधरा दासप्पा पति-पत्नी दोनों ही स्वराज्य आंदोलन में अग्रणी रहे । रचनात्मक कार्यों में भी उनकी भारी लगन थी । यशोधरा जी की शिक्षा वकालत की हुई थी । पर वकालत उन्होंने कभी की नहीं । उन्हें आग्रहपूर्वक विधानसभा का सदस्य और मंत्री बनाया गया । पर सरकार के साथ नशाबंदी पर मतभेद होने के कारण उनने इस्तीफा दे दिया । इसके बाद भी पहले की तरह गांधी जी के रचनात्मक कार्यों में दोनों लगे रहे ।

उन्हें कई बार जेल जाना पड़ा । परखे हुए गांधीवादियों में दासप्पा को उस क्षेत्र का चमकता हीरा माना जाता है । सरकार ने यशोधरा जी को पद्मभूषण की उपाधि से अलंकृत किया ।

आजीवन सच्चे सहयोगी

कस्तूरबा के निधन पर गांधी जी ने कहा था-"मेरा सबसे गहरा साथी चला गया ।" कस्तूरबा ने सचमुच आजीवन बापू की सबसे गहरा सहयोगी बनने का प्रयत्न किया और वे उस प्रयास में पूरी तरह सफल हुईं । दक्षिण अफ्रीका का फिनिक्स आश्रम, अहमदाबाद का साबरमती आश्रम जिस सुचारू रूप से चले, उसे देखकर यह कहा जा सकता है, उनने बापू की इच्छाओं के अनुरूप अपने शरीर, मन और स्वभाव को पूरी तरह ढाल लिया था । व्यक्तित्व की दृष्टि से वे कोई बड़ी प्रतिभाशाली न थीं; पर भारतीय नारी के समर्पण आदर्श को उन्होंने पूरी तरह निभाया । इसलिए वे राष्ट्रपिता के अनुरूप राष्ट्रमाता कहलाईं और गांधी जी की काया के लिए छाया बन कर रहीं ।

समर्पित पत्नी

ब्रिटिश सरकार ने चाल खेली और कहा यदि जवाहरलाल नेहरू राजनीति में भाग लेना छोड़ दें, तो उन्हें श्रीमती कमला नहेरू की देखरेख के लिए हमेशा के लिए जेल मुक्त किया जा सकता है ।

कमला नेहरू को क्षय हो गया था । उन दिनों स्वतंत्रता आंदोलन तीव्र गति से चल रहा था । नेहरू जी तब बनारस जेल में थे । उक्त आशय का एक सूचना-पत्र जवाहरलाल जी को भी भेज दिया गया था । उन्हें उस पर निर्णय करने के लिए समय दिया गया था । जवाहरलाल जी के सामने विकट समस्या थी । एक ओर धर्मपत्नी के प्रति कर्तव्य-भाव और दूसरी ओर देशप्रेम । आखिर उन्होंने परामर्श के लिए कमला नेहरू को एक दिन जेल आकर मिलने का आग्रह किया ।

कमला जी समय पर वहाँ पहुँच गईं । अपने एक निकट संबंधी से उन्होंने पूछा-"पंडितजी को जेल में क्या काम दिया गया है ?" "वे यहाँ रस्सी बँटते हैं" उन्होंने उत्तर दिया और उसकी कल्पना करते ही कमला की आँखों से टपटप आँसू झरने लगे । अगाध प्रेम था, पति के लिए उनके हृदय में ।

थोड़ी देर में जेल का फाटक खुला । वे उनसे भीतर मिलने गईं, इससे पूर्व कि जवाहरलाल जी उनसे कुछ पूछें, उन्होंने अत्यंत विनीत भाव से उत्तर दिया-"आप राजनीति में सहर्ष बने रहें, मेरे हित के लिए राष्ट्रहित की भावना का आप परित्याग न करें ।" कमला जी के देहांत का कारण क्षय तो था; पर यह मानसिक दबाव भी था, तो भी उन्होंने राष्ट्रीय हित को ही सर्वोपरि माना ।

नाम ग्रंथ के कारण अमर

वाचस्पति मिश्र भारतीय दर्शन के प्रसिद्ध भाष्यकार हुए हैं । उन्होंने पूर्व मीमांसा को छोड़कर शेष सभी दर्शनों का भाष्य किया है । वे अपने इस पुण्य-प्रयास में जुटे थे । इसी बीच उनकी पत्नी ने एक दिन संतान उत्पन्न करने की इच्छा प्रकट की ।

वाचस्पति गृहस्थ तो थे; पर दाम्पत्य जीवन उन्होंने वासना के लिए नहीं, दो सहयोगियों के सहारे चलने वाले

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रगतिशील जीवन-क्रम के लिए अपनाया था । उन्होंने पत्नी से पूछा-''संतान उत्पन्न क्यों करना चाहती हो ?''

पत्नी ने संकोचपूर्वक कहा-''इसलिए कि पीछे नाम रहे ।''

वाचस्पति मिश्र उन दिनों वेदांत दर्शन का भाष्य कर रहे थे । उन्होंने तुरंत उस भाष्य का नाम 'भामती' रख दिया । यही नाम उनकी पत्नी का था । उन्होंने पत्नी से कहा-''लो तुम्हारा नाम तो अमर हो गया, अब व्यर्थ प्रसव वेदना और संतान पालन का झंझट सिर पर लेकर क्या करोगी ? यह नाम हमेशा तुम्हारी सम्पर्क भावना का परिचय देता रहेगा ।''

आत्मा की अभिन्नता-एकता

भक्तराज जयदेव की धर्मपत्नी का राजभवन में बड़ा सम्मान था । एक बार उन्होंने रानी से कहा कि पति के मरने पर उसकी देह के साथ सती होना निम्न श्रेणी का पतिव्रत धर्म है । सच्ची पतिव्रता तो वे हैं, जो पति का मृत्यु संवाद मिलते ही प्राण त्याग देती हैं ।

रानी को शंका हुई । एक दिन राजा के साथ जयदेव भी आखेट स्थल पर गए थे । अवसर पाकर रानी ने कहा कि पंडितजी को वन में एक शेर खा गया । जयदेव की स्त्री 'श्रीकृष्ण, श्रीकृष्ण' कहती हुई धड़ाम से भूमिगत हो गईं । उनके मरने का रानी को बड़ा दु:ख हुआ । बहुत देर तक वे अपने झूठ बोलने पर पछताती रहीं ।

राजा के साथ जयदेव लौटे तो उन्हें पूर्ण समाचार दिया गया । जयदेव ने कहा-''रानी माँ से कहो कि वे घबराएँ नहीं, मेरे मृत्यु संवाद से उनके प्राण गए हैं, जो मेरे जीवित लौटने पर लौट भी आयेंगे ।'' भक्तराज अपनी पत्नी की मृत देह के पास हरिकीर्तन में विह्वल हो गए । एक क्षण तक उन्हें अपनी पत्नी की मृत्यु का भी ध्यान नहीं रहा । धीरे-धीरे मृत पत्नी की देह में चेतना लौट आई ।

ऐसा होता है पति-पत्नी का प्रेम । एक दूसरे से कभी अलग वे रह नहीं सकते ।

सुकन्या का प्रायश्चित

सुकन्या अपने पिता की इकलौती कन्या थी । राजमहल में पली थी । गुणों की दृष्टि से वह साक्षात् सरस्वती जैसी थी । एक दिन राजा वन विहार को गए, तो पुत्री को भी साथ लेते गए । लड़की ने एक टीले में दो चमकदार चीजें देखीं । उसने लकड़ी के सहारे उन्हें कुरेदा, तो रक्त की धार बह निकली । कन्या ने पिता को यह समाचार सुनाया, तो उनने कहा-''अनर्थ हुआ । यहाँ तपस्वी च्यवन तप करते थे, उन्हीं के नेत्र फूट गए, मालूम पड़ते हैं ।'' वस्तुत: ऐसा ही हो गया था ।

सुकन्या सोचने लगी नेत्रों के अभाव में ऋषि का जीवन इस निविड़ वन में कैसे कटेगा । उसने तत्काल निश्चय किया कि प्रायश्चित स्वरूप सदा उनके पास रहूँगी ।

राजा के मना करने पर भी सुकन्या ऋषि के पास रह गई और सच्चे मन से उनकी सेवा करने लगी । देवताओं ने प्रसन्न होकर च्यवन की गई नेत्र ज्योति वापस लौटा दी एवं उन्हें युवा-चिरायु बना दिया ।

स्वामी श्रद्धानंद की धर्मपत्नी

समय-समय पर पत्नी के रूप में नारी ने पति को सचेत कर अपना कर्तव्य निभाया है । भारतीय नारी सहिष्णुता की प्रतिमूर्ति है ।

आर्य समाज के प्रख्यात नेता स्वामी श्रद्धानंद जब नवयुवक थे, तब उनका नाम मुंशीराम था, उन्हें मद्यपान, व्यभिचार, अपव्यय जैसी बुरी आदतें लग गई थीं ।

उनकी पत्नी शिवदेवी, अपने पक्ष के कर्तव्य-उत्तरदायित्व पर सुदृढ़ रहीं । वे पति के दोषों पर क्रुद्ध होने की अपेक्षा धैर्य और प्रेमपूर्वक उन्हें समझाती और प्रभावित करती रहीं । फलत: उनके जीवन में कायाकल्प हो गया । वे उच्चकोटि के लोकसेवी और संत बन सके, इसमें बहुत कुछ श्रेय उनकी धर्मपत्नी का था ।

शिवदेवी के सुसंस्कार लेकर जन्मीं उनकी संतानें भी उच्च स्तर की हुईं । इन्द्र विद्यवाचस्पति की प्रतिभा और देव सेवा से सभी परिचित हैं ।

संयोगिता की फटकार

पृथ्वीराज चौहान संयोगिता को कन्नौज से अपहरण करके लाए थे, उसके रूप सौंदर्य पर इतने मुग्ध थे कि राजमहल छोड़कर शासन कार्य संभालने भी न जाते थे । इस स्थिति का लाभ उठाकर मुहम्मद गोरी ने दिल्ली पर चढ़ाई कर दी और नेतृत्व के अभाव में पराजय निकट दीखने लगी ।

स्थिति को देखते हुए चन्द्र वरदाई ने सारा विवरण संयोगिता को लिख भेजा, उसने पृथ्वीराज को लताड़ा और मोर्चा सँभालने के लिए विवश किया । प्रेम से कर्तव्य को उनने श्रेष्ठ बताया और दिग्भ्रांत पति को नीति मार्ग पर चलाया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

असली पुण्य कुशी नगर का राजा लोगों के पुण्य खरीदने के लिए प्रसिद्ध था । उसने तराजू लगा रखी थी पुण्य बेचने वाले अपनी ईमानदारी की कमाई का विवरण लिखकर एक पलड़े में रखते । उस कागज के अनुरूप तराजू स्वयं स्वर्ण मुद्राएँ देने की व्यवस्था कर देती ।

जय नगर पर शत्रुओं का आक्रमण हुआ और वहाँ के राजा को स्त्री-बच्चे समेत रात्रि के अंधेरे में भागना पड़ा । पास में कुछ न था । वे मार्ग व्यय तक के लिए कुछ साथ लेकर न चल सके ।

दूर पहुँचने पर एक वृक्ष की छाया में बैठकर राजा-रानी विचार करने लगे कि अगले दिनों उदरपूर्ति किस प्रकार होगी ? रानी ने सुझाया आपने जीवन भर बहुत दान-पुण्य किया था, उसी में से थोड़े से कुशी नगर नरेश को बेचकर धन प्राप्त कर लिया जाय ।

राजा सहमत हो गए; पर भूखे पेट कुशीनगर तक पहुँचा कैसे जाय ? रानी को एक उपाय सूझा, बोली-"ग्रामीणों के घरों में जाकर आटा पीसेंगी और नित्य के खाने में से जो बचेगा उसे जमा करती जाऊँगी । राजा रोटी बनायेंगे ।"

राजा उस दिन रोटी सेंक रहे थे । कई जगह से अपने हाथ जला भी चुके थे । भोजन के पूर्व ही एक भिखारी वहाँ आ पहुँचा । उसने जब क्षुधित मुद्रा में रोटी माँगी, तो राजा हतप्रभ रह गए । अगर यह भी दे दिया, तो खाएँगे क्या ? खाएँगे नहीं, तो दूसरे राज्य कैसे पहुँचेंगे ?

रानी मदद को सामने आईं । बोलीं-"हम एक दिन और भूखा रह लेंगे; पहली वरीयता इसकी है ।" रानी की सलाह पर राजा ने सारी रोटियाँ उसे दे दीं व पूरा परिवार आगे चल पड़ा भूखे पेट ।

मार्ग व्यय के लायक आटा हो गया; तो उसे लेकर राजा बनाते-खाते दस दिन में कुशीनगर पहुँचे । राजा को अपना अभिप्राय सुनाया । उत्तर मिला-"धर्मकांटे पर चले जाइये, जो ईमानदारी का कमाया हो, उसे एक पलड़े में रख दीजिए । कांटा आपको उसी आधार पर स्वर्ण मुद्राएँ दे देगा ।"

जयनगर के राजा ने अपने पुराने पुण्य स्मरण किए और उनमें से कई का विवरण कांटे के पलड़े में रखा; पर उससे कुछ भी न मिला । उपस्थित पुरोहित ने कहा-"आपने परिश्रमपूर्वक जो कमाया और दान किया हो उसी का विवरण लिखें ।"

राजा को पिछले दिनों भिखारी को दी हुई रोटियाँ याद आईं । उनने उसका ब्यौरा लिखकर तराजू में रखा । दूसरे पलड़े में उसके बदले में सौ स्वर्ण मुद्राएँ गिन दीं ।

पुरोहित ने कहा-"उसी दान का पुण्य फल होता है, जो ईमानदारी और परिश्रमपूर्वक कमाया गया हो ।"

राजा ने रानी की तरह उस दिन की सलाह को, परोपकार वृत्ति को धन्यवाद दिया, जिसके फलस्वरूप उन्हें पुण्य का सही अर्थ ज्ञात हो सका व प्रतिफल मिल सका ।

पत्नी के अलावा दूसरा रूप नारी का बहिन के रूप में है, जिसे परम पवित्र संबंध माना गया है ।

भगिनी रूप में नारी बिजली चमकी और पथिक को एक वृक्ष के नीचे खड़ी तरुणी दिखाई दी । लगा विपदा की मारी है, तो यात्री ने पास जाकर पूछा-"देवि ! मैं तुम्हारी कोई सेवा कर सकता हूँ ।"

"नहीं राही"-स्त्री ने कहा-"सेवा के नाम पर पुरुषों ने मुझे छला ही है, अब पुरुष मात्र से मुझे विरक्ति है ।"

"आर्ये ! मैं वचन देता हूँ"-पथिक ने कहा ।

"कैसा वचन ?"

"मैं तुम्हें अपनी माँ के समान आदर और सम्मान दूँगा"-राही ने आश्वासन दिया ।

"घर में बैठी माँ के प्रति वयस्क पुत्र एक अजीब तिरस्कार का भाव रखते हैं । जबकि माँ अपने शिशु के लिए शरीर का सारा सत्व निचोड़ती है ।"-स्त्री बोली ।

"तो चलो तुम्हें अपनी पुत्री मानूँगा ।"

"पिता-पुत्री को भी पराया धन समझकर एक दिन उसे अनजान हाथों में सौंप देते हैं । पुरुष यहाँ भी अपनी गुरुता से उसे परास्त कर देता है ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

''तो फिर पत्नी बनकर रहना । यदि तुम्हें इसमें कोई शंका न हो तो ।''

''शंका''-स्त्री हँसी-''पत्नी को भी अपनी प्रभुता के चंगुल में फँसाने से पुरुष क्या बाज आते हैं ? रोटी और कपड़े के बदले उसका सब कुछ तो छीन लेते हैं ।''

अब राही को कुछ समझ में न आ रहा था । और स्त्री कहे जा रही थी-''इन सब संबंधों का मैंने कटु अनुभव किया है । आर्य ! तुम अपना समय न गँवाओ और गंतव्य की ओर बढ़ते चलो.....।'' राही जैसे यह सब सुन ही रहा था, अपने विचारों में खोए ही उसने यकायक गंभीरता को तोड़कर कहा-''यदि तुम मेरे निःस्वार्थ भ्रातृप्रेम को स्वीकार कर सको, तो भगिनी बनकर ही मेरी सेवा ग्रहण करो ।''

स्त्री के चेहरे पर एक चमक भरी प्रफुल्लता फैल गई और वह फिलहाल तो पथिक के साथ जाने के लिए तैयार हो गई । कहते हैं यह कथा उतनी ही पुरानी है, जितनी कि प्राचीन राखी का पर्व ।

तीसरा रूप नारी का माँ का है । वह माँ जो नौ माह कष्ट सहती एवं संतान को जन्म देकर स्वावलंबी जीवन जीने योग्य बनाती है । वह माँ, जो बच्चे के मन में संस्कारों के प्राण फूँकती है । वह माँ, जो किसी भी देश के लिए नर-रत्नों की खदान बनकर सच्चे नागरिक प्रदान करती है । वह माँ, जो सारे उलाहने-उपहास सहकर भी अभाव भरा जीवन जीती है, ताकि उसकी संतान सुखी जीवन जी सके ।

माता की वेदना

आंधी का तेज झोंका आया और वृक्ष को जड़ से उखाड़ कर नीचे गिरा गया । वृक्ष को धरती पर बड़ा गुस्सा आया । बड़बड़ाते हुए बोला-''आज जो मेरी दुर्गति हुई, उसके लिए तू ही उत्तरदायी है । तूने मेरी खुराक बंद कर दी । एक-दो दिन की बात होती, तो मैं सहन भी कर लेता । मैं भूख और प्यास से तड़प-तड़प कर सूख गया और तूने मेरे साथ यह निर्दयता दिखाई । अब भूमि पर पड़ा देखकर तेरा कलेजा ठंडा गया ।''

वृक्ष की यह जली-कटी बातें सुनकर धरती बड़ी दुःखी हुई, वह कैफियत देते हुए बोली-''भला माँ अपने बच्चे की दुर्गति देखकर कभी खुश हो सकती है । मैं तो तुम सभी के लिए अपने अंतर में जल तथा अन्य पौष्टिक तत्वों को समेट-समेट कर रखती हूँ । जिस प्रकार तुम जैसे वृक्ष-फलों का उपयोग अपने लिए न कर दूसरों को बाँटते रहते हो, वैसे ही एकत्रित खुराक को मैं भी तुम सबके लिए ही रखती हूँ और आवश्यकतानुसार देती रहती हूँ । पर तुम्हारी जड़ें ही खोखली हो गईं थी, इसके लिए मैं क्या करती ?''

बच्चे-नारियाँ ही बनाती हैं

मैडम च्यांगकाई शेक कहती थीं-''गर्भ में प्रवेश करने से लेकर पांच वर्ष की आयु तक बच्चों के स्वभाव का महत्वपूर्ण अंश पूरा होता है, इसलिए नए समाज निर्माण की जिम्मेदारी विशेषतया नारियों के कंधे पर ही आती है; क्योंकि बालकों की यह अवधि माता तथा घर में रहने वाली अभिभाविकाओं के सम्पर्क-सान्निध्य में ही व्यतीत होती है ।''

माँ को छोड़ कर सिद्धि कैसी ?

वैधव्य का भार सहते हुए भी माँ ने पुत्र का पालन कर उसे बड़ा किया; किन्तु पुत्र तो अपनी वृद्धा माता को निराश्रित छोड़ तांत्रिक साधना करके शक्ति पाने घर से निकल पड़ा । देव शर्मा नामक इस युवक ने अपनी तांत्रिक सिद्धियों के बल से अपना चीवर लेकर उड़ते दो कौओं को भस्म होते देख, अभिमान से भर उठा ।

एक सद्गृहिणी के द्वार पर वह भिक्षा देने में देर होते देख वह क्रोध से भर उठा, तो गृहिणी बोली-''महात्मा जी ! आप शाप देना जानते हैं, पर मैं कोई कौआ नहीं हूँ, जो भस्म हो जाऊँ । जिस माँ ने तुम्हें जीवन भर पाला उसे त्याग कर मुक्ति के लिए भटकते आप मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते ।''

''यह सुन देव शर्मा को बड़ा आश्चर्य हुआ । उसने पूछा-''आप कौन सी साधना करती हैं ?'' ''कर्तव्य साधना'' । देव शर्मा भी तांत्रिक साधना छोड़ अपनी माँ की सेवा करने चल पड़ा ।

माँ की शिक्षा मैं कैसे भूल गया ?

दक्षिण भारत की यात्रा करते समय एक बार गांधी जी, महादेव भाई और काका कालेलकर जी को एक साथ काम करने का अवसर पड़ा । एक दिन सभाओं और विचार गोष्ठियों का कुछ ऐसा तांता बँधा कि उन्हें दिन भर एक क्षण का भी विश्राम करने का अवसर नहीं मिला । लौटे भी काफी रात गए । थकावट के मारे उनके शरीर बुरी तरह शिथिल हो चुके थे । वहाँ से आते

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ही तीनों चारपाइयों पर पड़ गए और पड़ते ही सो गए ।

चार बजे नींद टूटी । गांधी जी का नियम था कि वह सायंकाल सोने के पूर्व और प्रातःकाल जगते ही प्रार्थना किया करते थे । उनके सभी साथी और अनुयायी भी इस नियम का पालन किया करते थे । प्रातःकालीन प्रार्थना के लिए एकत्रित हुए, काका कालेलकर से गांधी जी ने बड़े दुःख भरे स्वर में पूछा–"शाम की प्रार्थना का क्या हुआ ?" काका जी ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया–"बापू जी ! मैं तो थकावट के मारे आते ही सो गया, प्रार्थना करना बिल्कुल भूल गया ।"

महादेव भाई ने भी डरते-डरते कहा–"बापू जी ! थकावट के कारण मैं भी सो गया । मेरी बीच में नींद टूटी, तब मैंने चारपाई में बैठकर मन ही मन प्रार्थना कर ली, भगवान से क्षमा माँगकर फिर सो गया ।"

गांधी का दुःख बहुत गहरा था । उन्होंने कहा–"मेरा मन तो आज बहुत ही अस्वस्थ है । मैं कल की प्रार्थना क्यों नहीं कर सका ? क्या सोना इतना आवश्यक था कि भगवान का स्मरण तक न किया जाता ?" इसके बाद प्रातः कालीन प्रार्थना सम्पन्न की गई । सब लोग प्रसन्न हो गए, पर उस दिन बापू का चेहरा उदास ही बना रहा । काका साहब ने उन्हें समझाते हुए कहा–"बापू जी आप ही तो कहते हैं कि भगवान के नाम से उनका काम बड़ा है । आप उनका काम करते हुए सो गए, इसमें बुरा क्या हो गया ? माँ की इस सिखावन को कि भगवान का नाम लेना कभी न भूलना, मैं कैसे भूल गया, इसी बात का मुझे विशेष दुःख है । दूसरा दुःख इस बात का है कि आलस्य और प्रमाद, जिससे मेरी माँ ने मुझे सदैव दूर रहने की शिक्षा दी थी, में डूबकर मैं भगवान का नाम और काम कहीं दोनों न भूल जाऊँ ।" उस दिन सभी उपस्थित लोगों ने एक शिक्षा ग्रहण की । संस्कारों की जीवन साधना में महत्ता की व छोटी सी बात समझकर कभी किसी की भी शिक्षा की उपेक्षा न करने की ।

जस्टिस नहीं, माँ के बेटे

कलकत्ता के जस्टिस गुरुदास चट्टोपाध्याय का पालन-पोषण उनकी विधवा माता ने बड़ी कठिनाइयों के बीच किया था; पर उन्होंने इस बच्चे में प्रयत्नपूर्वक कर्मनिष्ठा भर दी । छात्रवृत्ति से ही वे पढ़ाई का खर्च चला लेते और अपनी योग्यता एवं सज्जनता के बल पर जस्टिस एवं वायसचांसलर बने । माता जी अपने धर्मकृत्यों की सुविधा के कारण पुराने घर में ही रहती थीं ।

एक दिन उनकी माता कलकत्ता आईं । जल स्नान करके भीगे कपड़ों से ही जस्टिस के कोर्ट में सीधी चली आईं । पहचाना तो उनकी खुशी का ठिकाना न रहा । कचहरी छोड़कर वे उठे और माताजी को साष्टांग दंडवत् किया, साथ ही उपस्थित लोगों को अपनी माता का परिचय कराते हुए कहा–"वे आज जो कुछ हैं, इन्हीं माताजी के प्रयत्नों का प्रतिफल है ।"

कौशल्या और जनक का संतान शिक्षण

राजा दशरथ राज-काज में व्यस्त रहते थे । उन्हें घर आकर अपनी ही सुविधा का ध्यान रहता था । उनकी धर्मपत्नी कौशल्या ने परिवार को सँभाला और सभी बहिनों को आदर्शवादी तथा प्रतिभावान बनाया । उनकी सहेली सुमित्रा उन्हीं के समान गुणवती थीं । उनके पुत्र लक्ष्मण और शत्रुघ्न उन्हीं जैसे सुशील और आदर्शवादी निकले । यहाँ तक कि उनकी पुत्र वधुएँ भी अपने पतियों की कर्तव्यपरायणता में सदा सहायक रहीं । कैकेयी मंथरा के सिखावन में आकर कुछ समय स्वार्थपरता की अनुचित बातें सोचने लगी थी, पर पीछे वे भी कौशल्या के प्रभाव में आकर फिर पहले जैसी श्रेष्ठ हो गईं । भरत और उनकी पत्नी पर भी परिवार निर्मात्री कौशल्या का ही प्रभाव था ।

राजा जनक की चार पुत्रियाँ थीं । सीता, उर्मिला, मांडवी और श्रुतिकीर्ति । पिता के सद्गुणों वाले वातावरण में पली भी और अयोध्या में चारों दशरथ पुत्रों को विवाही गईं । जनक के प्रभाव को माता कौशल्या के संरक्षण में और भी अधिक बल मिला और वे सभी आदर्श नारियाँ मानी गईं ।

चंद्रशेखर आजाद व बुढ़िया की कैद

क्रांतिकारी दल उन दिनों डकैतियाँ डालकर पैसा इकट्ठा करता था । एक बार रामप्रसाद बिस्मिल के नेतृत्व में पार्टी एक गाँव में डाका डालने गई । दल के लोगों को जहाँ जो मिला समेट लिया; पर चन्द्रशेखर आजाद का पाला बुढ़िया से पड़ा । उसने अपने जेवर व नकदी वाले बक्से पर बैठकर आसन जमा लिया ।

क्रांतिकारी पार्टी का अनुशासन था कि न किसी महिला को हाथ लगाया जाय और न उनका जेवर

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लिया जाय । आजाद बुढ़िया को समझाने में लगे थे कि माताजी आप बक्से पर से हट जाइए । हम सिर्फ नकदी लेंगे, आपके जेवर नहीं । डाकू को ऐसी नम्रता की बातें करते देखकर बुढ़िया की हिम्मत बढ़ी और उसने आजाद का हाथ कसकर पकड़ लिया । वे हाथ छुड़ाने के लिए धक्का-मुक्की भी नहीं कर सके ।

इतने में काम समाप्त होने की नेता ने सीटी बजाई । सब इकट्ठे हो गए; पर आजाद नहीं थे । उन्हें क्या हुआ ? देखने पार्टी के दूसरे लोग गए । देखा तो वे बुढ़िया की कैद में कसे पड़े हैं । कारण पूछा, तो सुनकर सब हँस पड़े । कैद से छुड़ाने जैसे ही दूसरे आगे आए, आजाद ने कहा-"माँ का पूरा धन लौटा दो, हाथ न लगाओ ।" भावुक बुढ़िया ने हाथ छोड़ दिए । आजाद की माँ द्वारा कैद का जिक्र कई दिनों तक क्रांतिकारियों में होता रहा । इससे उन्होंने सीखा कि उन सबको भी नारी का सम्मान करना चाहिए ।

नारी को सम्मान दो

महापुरुष सदैव नारी शक्ति को सम्मान देते आए हैं । यही उनकी महानता का कारण रहा है । ये संस्कार जो बीज रूप में जन्म से बोए जाते हैं, उन्हें उन ऊँचाइयों पर पहुँचाते हैं, जिससे वे इतिहास में अमर हो जाते हैं ।

नेपोलियन बोनापार्ट ने टुई लेरिस नामक अपने महल के स्नानागार की मरम्मत कराई । महल के अधिकारियों ने फ्रांस के अच्छे चित्रकारों द्वारा वहाँ सुंदर चित्र बनवाये । स्नानागार की सजावट पूरी हो जाने पर नेपोलियन स्नान करने गया । वह क्या देखता है कि स्नानागार की दीवारों पर नारियों के चित्र टँगे हैं । वह स्नान किए बिना ही लौट आया और महल के अधिकारियों को आज्ञा दी-"नारी का सम्मान करना सीखो । स्नानागार में नारियों के विलासपूर्ण चित्र बनवाकर नारी का अपमान मत करो । जिस देश में नारी को विलास का साधन माना जाता है, उस देश का विनाश हो जाता है ।"

झरने का दर्प-सहचर का परामर्श

"झरने को अपने वैभव पर गर्व था । वह सूखे रेगिस्तान को अपना दर्प दिखाने के लिए उसकी ओर एकाकी चल पड़ा ।

कुछ ही दूर चलने पर झरना कीचड़ मात्र बनकर रह गया । आगे बढ़ने की उसकी गति ही रुक गई ।

सहचर दूसरे झरने ने उसे पुकारा-"वापस लौट और सरिता के साथ आत्मसात् हो । महान के साथ जुड़ कर ही कोई महानता के लक्ष्य तक पहुँचा है ।"

झरने ने भूल अनुभव की । दर्प छोड़ा और नदी की गोद में बैठकर सागर की महानता का भागीदार बना ।"

मनुष्य को नारी पर हेकड़ी जमाने का जो दर्प छाया रहता है, उसकी ओर इंगित करते हुए यहाँ ऋषि कहते हैं, नर व नारी दोनों मिलकर ही महानता के श्रेयाधिकारी बनते हैं ।

गृहिणी समुन्नतैवाऽत्र परिवारं तु स्वर्गिणम् ।
विधातुं हि समर्थास्ति ततोऽस्याः क्षमतोदये ।। १८ ।।
यः श्रमो यो मनोयोगो धनं तु विनियोगताम् ।
आश्रयन्ति समायाति तदिहाऽसंख्यतां गतम् ।। १९ ।।
श्रेयो मानं च ये मर्त्या गृहिण्यै ददति स्वयम् ।
अपेक्षयाऽनुदानस्याऽसंख्यं प्रतिफलं तु ते ।। २० ।।
प्राप्नुवन्ति कुटुम्बं तद् यतः प्रतिफलं द्वयोः ।
नार्या नरस्य संयुक्ताऽनुदानानां हि निश्चितम् ।। २१ ।।
गृहिण्या भूमिका श्रेष्ठा कनिष्ठा च नरस्य तु ।
खनिर्नारी नराः सर्वे खनिजा इति मन्यताम् ।। २२ ।।
जायन्ते धातवः सर्वे खनितुल्याः खनेर्ध्रुवम् ।
कृष्णाङ्गाराश्च लौहाश्च ताम्र चन्द्रो हिरण्मयम् ।। २३ ।।
खनेः स्वस्वानुकूलाया उद्भवन्ति यथा तथा ।
श्रेष्ठा नार्यः सुतान् श्रेष्ठाञ्जनयन्ति गुणान्वितान् ।। २४ ।।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कर्मशीलान् सुशीलाश्च प्रतिविम्बानिव स्वकान् ।
मलयाचलभूमिः सा यत्रस्था गन्धिनः समे ।। २५।।

भावार्थ–समुन्नत नारी ही परिवार को स्वर्ग बना पाती है । उसकी क्षमता विकसित करने में लगाया गया श्रम, मनोयोग एवं धन असंख्यों गुना होकर लौटता है । नारी को श्रेय–सम्मान देने वाले अपने अनुदान की तुलना में असंख्य गुना प्रतिफल प्राप्त करते हैं । परिवार नर और नारी के संयुक्त अनुदानों का प्रतिफल है । इसमें नारी की भूमिका वरिष्ठ और नर की कनिष्ठ है । नारी खदान है, नर उसमें से निकलने वाला खनिज । खदान जैसी होती है, धातुएँ उसी स्तर की उसमें से निकलती हैं । कोयला, लोहा, ताँबा, चाँदी, सोना आदि अपने–अपने ढंग की खदानों में से ही निकलते हैं । श्रेष्ठ स्तर की नारियाँ अपने जैसे गुण–कर्म–स्वभाव की संतानें जनती हैं । वे (चंदन वृक्ष) मलयाचल भूमि की तरह हैं । उनके सान्निध्य में बड़े–छोटे उसी प्रकार की सुगंध से महकने लगते हैं ।। १८–२५।।

व्याख्या–समुन्नत-सुसंस्कृत नारी अपने पारिवारिक राज्य में स्वर्गीय परिस्थितियाँ उत्पन्न करने में पूरी समर्थ है । घर के सामान की सुव्यवस्था रखकर उस छोटे से घरौंदे को सुरुचि, शोभा, सौंदर्य से भरा-पूरा बना देना सुगृहणी के बायें हाथ का खेल है । नीरस और ओछे स्तर के लोगों को भी अपनी परिष्कृत प्रवृत्ति में जकड़कर शालीनता के ढाँचे में ढलने-बदलने के लिए विवश कर देना, भाव सम्पत्ति की धनी नारी के लिए अतीव सरल है । नारी का अंतःकरण कुछ विशेष तत्वों के बाहुल्य से भरा-पूरा बनाया गया है । उसमें आत्मीयता और उदारता की, करुणा और कोमलता की मात्रा पुरुषों की तुलना में कहीं अधिक होती है । अपनी इस विशेषता के कारण वह रूखी और कर्कश प्रकृति के लोगों को भी नरम बना सकती है, उनमें सरस-सहृदयता का संचार कर सकती है । यदि घर के लोगों में सामान्य शालीनता मौजूद हो, तब तो कहना ही क्या, सुसंस्कृत नारी की भूमिका उस स्थिति में सोना और सुगंध की कहावत चरितार्थ करती है ।

बच्चे आसमान से नहीं उतरते । वे माता के शरीर के ही एक अंग है । उनमें विद्यमान चेतना का सिंचन परिपोषण, संस्कारों का अभिवर्धन माता के द्वारा ही होता है । नर रत्नों का उत्पादन किसी भी समाज-राष्ट्र में तभी बढ़ सकता है, जब नारी की सुसंस्कारिता पर समुचित ध्यान दिया जाय । बौद्धिक ज्ञान तो पाठशालाओं में भी दिया जा सकता है, किन्तु व्यक्तित्व को उत्कृष्टता के ढाँचे में ढालने का पुनीत कार्य परिवार की प्रयोगशाला में ही संभव हो पाता है । इसमें नर से भी बड़ी नारी की भूमिका है ।

ऊसर, बंजर, रेतीली, नमकवाली, कंकड़-पत्थर वाली जमीन में फसल उगाना संभव नहीं हो पाता । अच्छी फसल पानी है, तो खाद-पानी के अतिरिक्त उर्वर भूमि भी चाहिए । श्रेष्ठ स्तर की धातुएँ उसी स्तर की खदानों से उपलब्ध होती हैं । नारी को नर रत्नों को जन्म देने वाली खदान माना गया है । अगली प्रखर पीढ़ी के निर्माण की भूमिका सुविकसित नारी के माध्यम से ही संभव हो सकती है । इसीलिए नारी को नर से अधिक महत्व दिया जाता है । वही परिवार को श्रेष्ठता से अभिपूरित धरती का स्वर्ग बनाती है । नारी को जितने अनुदान दिए जाते हैं, चाहे वे स्नेह, सुसंस्कारिता, समर्थता, स्वावलंबन के रूप में हों अथवा सहयोग, सम्मान, संरक्षण एवं क्षमता के सुनियोजन रूप में, वे खाली नहीं जाते । इसका परिणाम पूरे परिवार, समाज, राष्ट्र को मिलता है । अतः श्रेष्ठता के पक्षधर हर व्यक्ति का यह प्रयास होना चाहिए कि वह नारी को समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने हेतु किए जा रहे पुण्य पुरुषार्थ को हर संभव सहयोग दें ।

नारी का सबसे बड़ा महत्व उसके जननी पद में निहित है । यदि जननी न होती, तो कहाँ से सृष्टि का सम्पादन होता और कहाँ से समाज तथा राष्ट्रों की रचना होती । यदि माँ न हो तो वह कौन सी शक्ति होती, जो संसार से अनीति एवं अत्याचार मिटाने के लिए शूरमाओं को धरती पर उतारती । यदि माता न होती, तो यह बड़े-बड़े वैज्ञानिक, प्रकांड पंडित, कलाकार, अप्रतिम साहित्यकार, दार्शनिक, मनीषी, महात्मा एवं महापुरुष किसकी गोद में खेल-खेलकर धरती पर पदार्पण करते । नारी व्यक्ति, समाज तथा राष्ट्र की जननी ही नहीं, वह जगज्जननी है । मानवता के नाते, सहधर्मिणी के नाते, राष्ट्र व समाज की उन्नति के नाते, उसे उसका उचित सम्मान और स्थान दिया ही जाना चाहिए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

महान् माताओं के महान् पुत्र

"माता निर्माता भवति" के सिद्धांतानुसार माता को ही संतान की निर्मात्री-शक्तिदात्री कहा गया है । भारत का इतिहास महापुरुषों, संतों, विद्वानों और वीरों से भरा पड़ा है । यहाँ पुत्र ने अपने पिता से भी अधिक उन्नति की, यहाँ तक कि कायर और दब्बू पिता की संतान भी वीर और विद्वान निकली । इसका एकमात्र कारण है, यहाँ नारियों का जागरूक और संतति निर्माण में दक्ष होना ।

यह सच है कि कोई व्यक्ति जन्मजात महान नहीं होता । यद्यपि पूर्व जन्म के संस्कार उसे ऊँचा उठाने में सहयोग अवश्य करते हैं । परंतु वह भी तब, जबकि उन्हें व्यक्त और प्रकट होने का अवसर मिले । भारत की नारी उन संस्कारों को सँवारने में ही नहीं, नए संस्कार डालकर इसी जीवन में ऊँचा उठाने में भी कुशल रहीं है ।

अभिमन्यु, बुद्ध, महावीर आदि महापुरुषों का निर्माण तो गर्भ काल में ही हो गया था । उस समय के विचार, संकल्प और मन संतान को अनिवार्य रूप से प्रभावित करते हैं । अभिमन्यु की माता सुभद्रा ने गर्भवती होने के समय अपने विचारों और क्रियाओं दोनों को ही साधा । अर्जुन और कृष्ण के युद्ध के समय में सुभद्रा अपने पति की सारथी बनी थीं । ऐसी वीर माता की संतान भी चक्रव्यूह तोड़ने वाली न निकले, यह कैसे हो सकता है ।

बुद्ध की माता यद्यपि बच्चे को जन्म देकर ही चल बसी थीं । फिर भी उससे पूर्व उनकी आध्यात्मिक आत्म-साधना का प्रभाव गर्भस्थ शिशु पर तो पड़ा ही । ऋषि-मुनियों के आश्रम में निवास, वहाँ के पवित्र वातावरण में रहने का प्रभाव पाकर ही जन्म लेने वाला बालक आगे चलकर संसार का कल्याण करने वाला मसीहा बन गया ।

लिच्छवी वंश की क्षात्र-परंपरा में **महावीर** जैसे अहिंसा के अनुयायी और उपदेष्टा का जन्म सचमुच ही आश्चर्यजनक लगता है । परंतु इसका श्रेय भी उनकी माता को ही जाता है । मांस भक्षण से विरत, सौम्य और सात्विक जीवन से लगाव आदि प्रवृत्तियों का प्रभाव-परिणाम ही उनके पुत्र को महावीर बना गया ।

शिशु जनम के बाद उनके पालन-पोषण में आदर्शों और अध्यात्म सिद्धांतों के प्रति दृढ़ निष्ठा ने ही सदैव बच्चों को महानता के वरण की प्रेरणा दी । **चंद्रगुप्त मौर्य, राणा साँगा, महाराणा प्रताप, वीर शिवाजी, महात्मा गांधी, सुभाषचंद्र बोस, राजर्षि डंडन, बाबू राजेन्द्र प्रसाद, महामना मालवीय, विनोबा भावे, महर्षि कर्वे, स्वामी दयानंद, स्वामी विवेकानंद और जवाहरलाल नेहरू** जैसी सैकड़ों विभूतियाँ मातृभूमि का ही वरदान थीं । यदि इनकी माताएँ अपने पुत्रों को राष्ट्रसेवा और समाज निर्माण की दिशा में अग्रसर न करतीं, तो शायद ये महामानव भी अन्य लोगों की तरह पेट और प्रजनन के सामान्य स्तर का जीवन जीते रहते ।

मेवाड़ के राजपूत इतिहास में **राणा साँगा** का नाम विशेष उल्लेखनीय है । भगवान् कृष्ण की भक्ति में तन्मय रहने वाली मीरा उनके पूर्वजों में से थी । राजा कुम्भा के उत्तराधिकारियों में महाराणा संग्राम सिंह ही तेजस्वी और प्रभावशाली सर्वाधिक वीर पुरुष माने जाते हैं । राणा साँगा की माता ने राजस्थान की तत्कालीन दुर्दशा को अच्छी तरह देखा-समझा था । संग्राम सिंह के गर्भ में आने के बाद उन्होंने निश्चय किया कि ऐसी संतान को जन्म देना है, जो इस तिरोभूत अंधकार के वातावरण में प्रकाश का काम दे सके । सात्विक योजना, वीरोचित वेष-भूषा और साहसी विचारों की मन में बारंबार प्रतिष्ठा कर उन्होंने सचमुच ही ऐसी तेजस्वी संतान को जन्म दिया ।

बाद में संग्राम सिंह को ऐतिहासिक घटनाएँ और कथा-कहानियाँ सुना-सुनाकर निर्धारित दिशा में प्रेरित किया जाता रहा । इसी प्रेरणा के फलस्वरूप आगे चलकर राणा साँगा इतिहास में स्वतंत्रता के अमर पुजारी सिद्ध हुए ।

महाराणा प्रताप के पिता अपनी कुल-परंपरा के अनुसार वीर और साहसी नहीं थे । चित्तौड़ का किला हारकर उन्हें अरावली की पहाड़ियों में चला जाना पड़ा था । यहीं पर उनकी पत्नी ने प्रताप सिंह को जन्म दिया । प्रयत्नपूर्वक अपने पुत्र को उन्होंने ऐसा वातावरण दिया, जिसमें साहस, शौर्य, स्वाभिमान और देशभक्ति की भावनाएँ पनप सकें । इसका उन्होंने बड़ा ध्यान रखा और अपने पुत्र के समक्ष कभी किसी के सामने नहीं झुकीं, ताकि कहीं प्रताप सिंह को झुकने और समझौता करने की आदत न पड़ जाये ।

इतने सावधान पालन-पोषण का ही परिणाम था कि महाराणा प्रताप ने घास की रोटियाँ और पत्तलों पर खाकर भी अकबर की आधीनता स्वीकार नहीं की ।

शौर्य और धर्मनिष्ठा के प्रतीक **छत्रपति वीर शिवाजी** के पिता आदिल शाह के मनसबदार थे । उनकी माता ने अपने बेटे को इसी कारण पिता के पास नहीं भेजा कि कहीं पुत्र पर गुलामी के संस्कार न पड़ जाएँ । वे स्वभाव से

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वीर और हृदय से धर्मनिष्ठ महिला थीं । अपने पुत्र से भी उन्हें यही अपेक्षा थी कि वह वीर, साहसी और धर्मनिष्ठ बने । इसलिए लोरियों में वीर रस के गीत और कहानियों में इतिहास-पुराणों की कथाएँ सुनाना आरंभ कर दिया । शिवाजी को हिन्दू राज्य का स्वप्न उन्होंने ही दिया और उसे साकार करने के लिए समुचित शिक्षा-दीक्षा भी । इसी कारण जीजाबाई जैसी विदुषी और धर्म परायण सन्नारी का पुत्र भी धीर, वीर और धर्म रक्षक बन गया । शिवाजी की निर्विकार मनोभूमि में बोए गए बीज जीवन भर पल्लवित-पुष्पित होते रहे ।

महापुरुषों के उद्‌भव और विकास में माताओं की महत्वपूर्ण भूमिका भारत की शाश्वत परंपरा रही है । अन्य परंपराओं में भले ही सुधार और क्षीणता आती रही हो, परंतु यह कभी नहीं टूटी ।

आधुनिक काल में भी भारत की नारी ने सैकड़ों विभूतियाँ देकर देश और समाज का मस्तक ऊँचा किया है । काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक धर्मप्राण **पं. महामना मदनमोहन मालवीय** को शिक्षा का महत्व तब समझ में आया था, जबकि उनकी माँ उन्हें पढ़ाने के लिए अपने जेवरों और कपड़ों को गिरवी रख दिया करती थीं । धर्म प्रचार की प्रेरणा भी मालवीय जी को अपनी माता से ही प्राप्त हुई थी ।

राजर्षि टंडन के राष्ट्र प्रेम और तदनुकूल क्रियाकलाप तथा निर्वाह की शिक्षा का श्रेय भी उनकी माँ को ही जाता है । अंग्रेज लड़कों द्वारा उनसे छेड़छाड़ करने पर बुरी तरह पिटाई करने वाले दस वर्ष के टंडन की पीठ उनकी माँ ने ही थपथपाई थी । माँ की प्रेरणा और प्रोत्साहन पाकर टंडन आजीवन निर्भीकता के उपासक बन गए । आध्यात्मिकता की ओर झुककर संन्यास ग्रहण करने के लिए कृत संकल्प **सुभाषचंद्र बोस** को उनकी माता ने ही देशभक्ति और समाज सेवा की दीक्षा दी थी ।

महात्मा गांधी के निर्माण में उनकी माँ का योगदान उल्लेखनीय रहा है । बचपन से ही धर्म, पुराण और उपनिषद् की कथाएँ सुनाकर उन्होंने अपने लाड़ले मोहन की धार्मिक आस्थाओं को परिपक्व कर दिया था । विदेश में मांस न खाने, मद्यपान और व्यभिचार से बचने की प्रतिज्ञा करवाकर गाँधी जी के व्यक्तित्व का गठन उनकी माँ के सिवा और किसने किया ? स्वयं उन्होंने भी कई स्थलों पर अपनी माँ से प्रभावित होने का उल्लेख किया है ।

धर्मपरायण **माता रुक्मिणी बाई** ने तो देश को एक नहीं तीन-तीन रत्न दिए । **विनोबा, बालकोबा** और एक और छोटे भाई समाज सेवा के क्षेत्र में सदा अग्रणी रहे । अपनी माँ की धार्मिक शिक्षा ने ही बचपन में ही विनोबा के मुँह से यह कहलवाया कि 'डोम, महार और चमार नीच नहीं हैं ।' भगवान् को सर्वव्यापी मानकर पूजा करने वाली माता रुक्मिणी ने विनोबा भावे को 'ईशावास्यमिदं सर्वम्' का उपासक बना दिया ।

आदिकाल से अद्यकाल तक भारत की नारियों ने देश को अमूल्य रत्न दिए हैं । हमारी संस्कृति में मातृशक्ति को इतना महत्वपूर्ण स्थान शायद इसीलिए दिया गया है कि वही हमारे गौरव का आधार रहीं । सांस्कृतिक इतिहास साक्षी है कि नारी श्रेष्ठ नागरिकों को जन्म देने वाली खदान है । उसे नर से श्रेष्ठ मानकर उससे भी अधिक सम्मान दिया जाना चाहिए ।

माँ की महत्ता

एक बार विश्व विजेता **नेपोलियन बोनापार्ट** से किसी ने पूछा था-"किसी राष्ट्र को ऊंचा उठाने में सबसे अधिक योगदान किसका होता है ?"

नेपोलियन ने तुरंत उत्तर दिया-"माँ का" । किसी व्यक्ति के जीवन पर उसकी माँ का लालन-पालन, शिक्षा-दीक्षा की छाप स्थायी रूप से अवश्य ही पड़ती है । सिंहों से खेलने वाला **भरत** शकुंतला की देख-रेख में वनों में पला था ।

राजा गोपीचंद्र की माता ने उन्हें विलास-वैभव छोड़कर योगी बनने का परामर्श दिया और आग्रहपूर्वक भर्तृहरि का शिष्य बनाकर पुण्य प्रयोजन में नियोजित किया ।

मदालसा ने अपने तीनों पुत्रों को आदर्शवादी निवृत्तिमार्गी साधक बनाया । आरंभ से ही वैसे संस्कार दिए और चिंतन उभारे । पति महाराज ऋतध्वज की इच्छा के कारण चौथे पुत्र अलर्क को राजा बनाया वैसा ही चिंतन विकसित कर गर्भावस्था से ही संस्कार दिए ।

अलर्क ने एक बार पूछा-"माँ ! तीनों भाइयों ने आत्म कल्याण के लिए वनवासी, कम सुविधा का जीवन क्यों चुना ? साधना तो नगर के सुविधा भरे जीवन में भी हो सकती थी ?"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मदालसा बोली–''बेटे, बतलाओ, जिसका उद्देश्य नदी पार करना हो, वह सुविधा सामग्री युक्त विशाल किन्तु छिद्र वाली नौका चुनेगा या सामान्य सी छिद्रहीन नौका ? अलर्क ने कहा–''निश्चित रूप से छिद्रहीन नौका चुने जाने योग्य है ।''

माँ ने समझाया–''वत्स ! सांसारिक सुख-सुविधाओं के बीच मनुष्य के व्यक्तित्व में दोषों के छिद्र पैदा होने लगते हैं । साधना युक्त तपस्वी जीवन जीने से व्यक्तित्व का विकास होता है और प्रखरता आती है । इसीलिए साधक सुविधा भरा जीवन छोड़कर तपस्वी जीवन चुनते हैं, ताकि व्यक्तित्व निर्दोष और निर्मल बने । बेटे, सुख-संपदा और सत्ता का उपयोग जनहित में करते हुए अपने व्यक्तित्व को छिद्रहीन बनाना । साधनों को जरूरत से ज्यादा महत्व मत देना ।

श्रेष्ठ माता: श्रेष्ठ संतान

रामकृष्ण परमहंस की माता एक बार कलकत्ता आईं और कुछ समय स्नेहवश पुत्र के पास रहीं । दक्षिणेश्वर मंदिर की स्वामिनी रासमणि ने उन्हें गरीब और सम्मानास्पद समझ कर तरह-तरह से कीमती उपहार भेंट किए । वृद्धा ने उन सभी को अस्वीकार कर दिया और मान रखने के लिए एक इलाइची भर स्वीकार की ।

उपस्थित लोगों ने कहा–''ऐसी निस्पृह माताएँ ही परमहंस जैसे पुत्र को जन्म दे सकती हैं ।''

वीर प्रसविनी

चित्तौड़ के राजकुमार एक चीते का पीछा कर रहे थे । वह चोट खाकर झाड़ियों में जा छिपा था । राजकुमार घोड़े को झाड़ी के इर्द-गिर्द घुमा रहे थे, पर छिपे चीते को बाहर निकालने में वे सफल न हो पा रहे थे ।

किसान की लड़की यह दृश्य देख रही थी । उसने राजकुमार से कहा–''घोड़ा दौड़ाने से हमारा खेत खराब होता है । आप पेड़ की छाया में बैठें । चीते को मारकर मैं लाए देती हूँ ।'' वह एक मोटा डंडा लेकर झाड़ी में घुस गई और मल्ल-युद्ध से चीते को पछाड़ दिया । उसे घसीटते हुए बाहर ले आई और राजकुमार के सामने पटक दिया ।

इस पराक्रम पर राजकुमार दंग रह गए । उनने किसान से विनय करके उस लड़की से विवाह कर लिया । प्रख्यात योद्धा हमीर उसी लड़की की कोख से पैदा हुआ था । माताओं के अनुरूप संतान का निर्माण होता है ।

सुभद्रा की कोख से अभिमन्यु जन्मे थे । अंजनी ने हनुमान को जन्म दिया था । श्रेष्ठस्तर की माताएं अपने गुण, कर्म, स्वभाव के अनुरूप ही श्रेष्ठ संतानों को जन्म देती हैं । हिरण्यकश्यपु के घर प्रह्लाद जैसा भक्त होना नारी की उनकी धर्मप्राण माता कयाधू की योग्यता का प्रमाण है ।

नारी शक्ति का पराक्रम-पुरुषार्थ

कुंती भी सामान्य रानियों की तरह एक महिला थीं । जन्मजात रूप से तो सभी एक जैसे उत्पन्न होते हैं । प्रगति तो मनुष्य अपने पराक्रम-पुरुषार्थ के बल पर करता है । कुंती ने देवत्व जगाया, आकाशवासी देवताओं को अपना सहचर बनाया और पांच देव पुत्रों को जन्म दे सकने में सफल बन सकीं । सुकन्या ने अश्विनीकुमारों को और सावित्री ने यम को सहायता करने के लिए विवश कर दिया था । उच्चस्तरीय निष्ठा का परिचय देने वाले, देवताओं की, ईश्वरीय सत्ता की सहायता प्राप्त कर सकने में भी सफल होते हैं ।

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता'–का आदर्श मनुस्मृति का ही है । वैदिक काल में अनेकों विदुषी स्त्रियाँ हुई हैं, जिन्होंने वैदिक मंत्रों की रचना की और उनका साक्षात्कार किया । वैदिक ही नहीं पौराणिक काल में भी जो कार्य देवताओं के लिए असाध्य रहे, तब उन्होंने मातृशक्ति की अभ्यर्थना की और उसी सहायता से या उसी के द्वारा अभीष्ट कार्य पूरा किया-कराया ।

वैदिक और पौराणिक साहित्य में इस तरह के ढेरों उदाहरण भरे पड़े हैं । मनु को जब अपने यज्ञ के लिए कोई पुरोहित नहीं मिला, जो उस विशेष यज्ञ को संपन्न करा सके, तो उन्होंने अपनी पुत्री इला को ही यज्ञाचार्य नियुक्त किया । इला अपने समय की प्रख्यात विदुषी और धर्मवेत्ता थी, उससे अनेक विद्वान प्रभावित थे ।

महर्षि वशिष्ठ के आश्रम में रहकर **शची** ज्ञान-विज्ञान में इतना प्रवीण हो गईं कि उससे अधिक तो क्या उसकी बराबरी का पति खोज पाना भी मुश्किल हो गया । स्वयं इंद्र ने इस कन्या को राजमहिषी बनाने की पहल की और शची के पिता महर्षि पुलोम ने इंद्र में अपनी कन्या के उपयुक्त सभी गुण पाकर दोनों के विवाह की

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अनुमति दे दी । यही महर्षि कन्या आगे चलकर इंद्राणी बनीं ।

भारतवर्ष में जब अकाल पड़ा, तो दुर्भिक्ष निवारण के लिए महर्षियों ने यह खोजा कि कोई ऐसा व्यक्ति तप साधना करे, जो एक साथ ब्रह्मज्ञानी, कर्मकांडी, शास्त्रज्ञ और मेधा संपन्न हो । ये सभी विशेषताएं महर्षि कन्या घोषा में पाई गईं और उसी के द्वारा संपन्न की गई तपश्चर्या से दुर्भिक्ष निवारण हो सका ।

ऋषि शाण्डिल्य की पुत्री **श्रीवंती** अपने समय की अद्वितीय तपस्विनी साध्वी थी । सुलभा नाम की एक विदुषी ऋषि कन्या ने राजा जनक जैसे ब्रह्मज्ञानी को भी शास्त्रार्थ में चकित कर दिया । इस शास्त्रार्थ का उल्लेख महाभारत के शांतिपर्व में आता है । इसी प्रकार राजा जनक के दरबार में गार्गी और याज्ञवल्क्य में भी जोरदार शास्त्रार्थ हुआ था । गार्गी के तर्क और प्रत्युत्पन्नमति से याज्ञवल्क्य हक्के-बक्के ही नहीं रह गए, वरन खिसिया कर क्रोधित भी हो उठे थे तथा शाप देने लगे थे ।

देवी उशना को असमय ही विधवा हो जाना पड़ा और उन्होंने अपने पुत्र कांक्षीवान को अपनी ही देखरेख में पढ़ाया, योग सिखाया । स्मरणीय है कि कांक्षीवान की कन्या घोषा ने ही तपस्या कर दुर्भिक्ष का निवारण किया, जिसका कि उल्लेख ऊपर हो चुका है । इसी प्रकार सुलभा नामक विदुषी ने भी अपने पुत्र पंचशिखको पढ़ाया, जिन्होंने सांख्यशास्त्र पर कई एक ग्रंथ लिखे । उनके लिखे ग्रंथों में ही यह उल्लेख आता है कि उन्होंने यह ज्ञान अपनी माता सुलभा से प्राप्त किया था ।

शंकराचार्य और मंडन मिश्र जैसे दिग्गज विद्वानों के शास्त्रार्थ को निर्णायक बनने योग्य कोई दिखाई ही नहीं दे रहा था । एकमात्र मंडन मिश्र की पत्नी भारती ही थीं, जो कि इस योग्य थीं । पर देवी भारत के संबंध में यह आशंका व्यक्त की जा रही थी कि चूँकि उनका स्वयं का पति शास्त्रार्थ कर रहा है, सो वे पक्षपात करेंगी । लेकिन सच्चे विद्वान का चरित्र भी ऊँचा होता है । शंकराचार्य ने भारती को निर्णायक बनाया और उनके निष्पक्ष निर्णय को सभी ने मान्य किया ।

स्त्रियों की प्राचीन समाज में यह स्थिति तो रही ही है कि वे अपनी प्रतिभाओं से समाज को लाभान्वित कर सकें । साथ ही कई ऐसी विदुषी महिलाएँ भी हुई हैं, जिन्होंने कि अपनी योग्यता और प्रतिभा से अपने पतिको भी ऊँचा उठाया । **विदुषी विद्योत्तमा** और कालिदास को ही लें । सभी जानते हैं कि उन दोनों का विवाह होने से पूर्व कालिदास निरक्षर भट्टाचार्य थे । विद्योत्तमा ही थी, जिसने अपने पति में योग्यता बढ़ाने की भूख जगाई और उसी के फलस्वरूप कालिदास निरक्षर-गँवार से महाकवि बन सके ।

इसी प्रकार **रत्नावली** ने भी अपनी सुख-सुविधाओं को जीर्ण मानकर अपने पति की कामुकता को ईश्वर भक्ति की दिशा दी । कैयट को व्याकरण लेखन के लिए न केवल उनकी धर्मपत्नी ने प्रेरणा दी, वरन इस कार्य को जारी रहते समय तक घर-परिवार का दायित्व भी स्वयं निबाहा । मूँज की रस्सी बटकर, मेहनत-मजदूरी कर उन्होंने उपार्जन किया और 'कैयट' को निश्चिंत लेखन कार्य करने दिया ।

नीति मार्ग पर आरूढ़ करने के लिए भारतीय पत्नियाँ जहाँ इतनी कठोरता का परिचय देती थीं, वहीं नीति की रक्षा के लिए उन्होंने अपने पति का प्राणपण से साथ भी दिया । इस रूप में उनका शौर्य और पराक्रम भी पर्याप्त उभर कर आया । 'कृष्णार्जुनीयम्' नामक ग्रंथ में उल्लेख मिलता है कि नीति के प्रश्न पर ही कृष्ण और अर्जुन में युद्ध के समय **सुभद्रा** ने अर्जुन के सारथी का काम बड़ी वीरता के साथ किया था ।

देवासुर संग्राम में इंद्र की सहायता के लिए जब दशरथ रणक्षेत्र में कूद पड़े, तो **कैकेयी** भी उनके साथ गईं । घमासान युद्ध में दशरथ के रथ के पहिए की कील निकलती देखकर कैकेयी ने वहाँ अँगुली ही लगा दी और रथ गिरने से बचाकर अपने पति का प्राण संकट टाल दिया ।

सीता ने बचपन में शिव धनुष को उठाकर अपने पिता जनक को चकित कर दिया । इतनी शक्तिशाली कन्या का विवाह शक्तिशाली वर से करने के लिए जनक ने स्वयंवर में शिव धनुष को तोड़ने की शर्त रखी । बाद में सीता को कर्तव्य मार्ग पर पति का साथ देते हुए वन और गिरि कंदराओं में तमाम कष्ट झेलते हुए देखा जा सकता है ।

एक नहीं, अगणित प्रसंग हैं जिनसे भारत में प्राचीन नारी की स्थिति का उनके शौर्य-पराक्रम-पुरुषार्थ का परिचय पाया जा सकता है । विद्वत्ता, प्रतिभा, कर्तव्यनिष्ठा, समाज सेवा, धर्म सेवा आदि कार्यों में भारतीय महिलाओं ने

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बढ़ कर अपनी क्षमताओं को उजागर किया है । जब भी समय आया और जब भी अवसर मिला है, भारतीय नारी ने अपना गौरवमय रूप दर्शाया । बूँदी की हाड़ारानी, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, शिवाजी की माता जीजाबाई, रानी दुर्गावती, ताराबाई, कर्मावती, कमला, कर्णवती, अहिल्याबाई, भीकाजी कामा, सरोजनी नायडू, मीरा, कमलाबाई हास्पेट, डॉ० पूनम, कस्तूरबा आदि कितनी महान महिलाएँ हैं, जो पराधीनता काल में जन्मीं और शौर्य, पराक्रम के साथ-साथ सेवा साधना के क्षेत्र में अपना स्थान सुरक्षित कर गईं ।

अंधे गायक के०सी० डे एवं उनकी स्वावलंबी माता

कलकत्ता में जन्मे के० सी० डे की आँखें डेढ़ वर्ष की उम्र में चली गई । पाँच वर्ष के थे तब पिता मर गए । विधवा माता ने उन्हें थोड़ा बहुत स्वयं ही पढ़ाया । वे मजूरी करने जातीं, तो डे को साथ ले जातीं । बच्चे के भविष्य के बारे में चिंतित तो रहतीं, पर धैर्य नहीं खोया । उन्हें स्कूली शिक्षा के स्थान पर सुसंस्कारिता, स्वावलंबन का पाठ पढ़ाया । संगीत में पुत्र की अभिरुचि को देखकर उन्होंने उसे वैसा ही शिक्षण देने की सुविधा जुटा दी । स्वयं मेहनत करके पुत्र के लिए साधन जुटातीं । अपने लिए वे सदैव 'डे' से कहा करतीं–"मेरे लिए चिंता न करो । अपने पैरों स्वयं ही खड़ा होने का प्रयास करो ।" डे ने कई संगीतकारों से उनकी सेवा करते हुए शिक्षा पाई । युवा होने से पहले ही उन्होंने संगीत में प्रवीणता प्राप्त कर ली । टूटे-फूटे वाद्य यंत्रों के सहारे घर पर अभ्यास करते रहते ।

कुछ दिनों में उनकी ख्याति सर्वत्र फैली । छोटे-मोटे संगीत सम्मेलनों के बाद उन्हें फिल्म कंपनियों ने बुलाया । अनवरत अभ्यास ने उनका कंठ भी निखार दिया था । एक-एक करके उनने प्रायः एक दर्जन फिल्मों में पार्श्व गायक के रूप में गीत गाए । कभी अभिनय करना पड़ा, तो अपनी सादी पोशाक में ही कैमरे के सामने आए थे । बनावट से उन्हें चिढ़ थी ।

भारत के गायकों में फिल्म जगत पर अपना आधिपत्य जमाने वाले एक ही थे–के० सी० डे । जिन फिल्मों के साथ उनका नाम जुड़ा होता, उसे देखने दर्शकों की भीड़ टूट पड़ती । वे सदैव इस यश का श्रेय अपनी माँ को देते रहे । अंतिम समय तक उनकी सेवा भी खूब की ।

पुत्र की खातिर जहर पी लिया

जापानियों को रूस की लड़ाई में एक नदी आड़े आई । पुल बनाना कठिन था । सेना को पार करने के लिए एक हजार नागरिकों की लाश का पुल बनना था, जिस पर होकर सैनिक पार जा सकें । इसके लिए नागरिकों की भर्ती की गई । एक हजार की जगह चार हजार नाम आ गए । इन नामों में एक लड़का भी था, जो भर्ती होने के लिए उतावला था, पर उसकी माँ बीमार थी । अकेला था, इसलिए उसे मंजूरी न मिली । माँ ने अपने को आड़े आया देखकर विष पी लिया और लड़के को भेजते हुए कहा–"शरीर की माँ की अपेक्षा राष्ट्र माता की सेवा अधिक आवश्यक है, तुम प्रसन्नतापूर्वक जाओ ।"

स्वाभिमानी माता

अमीनिया के सर्वोच्च सेनापति सीरोज ग्रिथ का व्यक्तित्व उनकी माता ने बनाया था । विधवा नार्विन ग्रीड कपड़े सीकर किसी तरह अपने बच्चों का पेट पालती थी । बड़े बेटे ग्रिथ ने अपनी मर्जी से गरीबी के कारण स्कूल में फीस माफ कराने की अर्जी दे दी, जो परिस्थिति से पूर्णतः जानकार अध्यापक की सिफारिस पर मंजूर भी हो गई ।

ग्रिथ की माता को जब पता चला, तो उन्होंने उस सुविधा को अस्वीकार कर दिया । उनने लिखा–"हम लोग मेहनत करके गुजारा करते हैं, तो फीस क्यों नहीं दे सकेंगे । गरीबों में अपनी गणना कराना हमें मंजूर नहीं हमारा स्वाभिमान कहता है कि हम गरीब नहीं हैं, स्वावलंबन से इन परिस्थितियों से भी जूझ लेंगे ।"

स्वाभिमानी माता ने अपने बच्चों को ऐसा ही चरित्रवान बनाया । ग्रिथ को सर्वोच्च सेनापति का पद उनकी संस्कारजन्य प्रामाणिकता के आधार से ही मिल सका ।

गुरजिएफ को माँ की सीख

दार्शनिक गुरजिएफ ने अपनी आत्मकथा में माता द्वारा दी गई एक बहुमूल्य संपदा का उल्लेख किया है, जिसके कारण वे अनेक भटकावों से बचे और आनंद भरे अनेक अवसर पा सके । लिखा है कि मेरी माता ने मरते समय कहा–"किसी पर क्रोध आए, तो उसकी अभिव्यक्ति चौबीस घंटे से पूर्व न करना ।" मैंने वह बात गाँठ बाँध ली और आजीवन उसको निबाहा भी ।

"ऐसे अनेक प्रसंग आए, जिनमें मुझे बहुत क्रोध आया था, पर बाद में पता चला था कि तथ्य कम और भ्रम

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अधिक था । क्रोध के परिणामों का विचार करने का अवसर मिलते रहने से उसे कार्यान्वित करने की नौबत न आई और जो शत्रु लगते थे, वे आजीवन मित्र बने रहे । माता की यह सीख ही मुझे इस स्थिति तक पहुँचा पाई, यह कहना अतिशयोक्ति न होगी ।''

बच्चे का व्यावहारिक शिक्षण

माँ हर स्थिति में माँ है । बच्चे को संकट में डालकर भी शिक्षण देना उसका प्रथम कर्तव्य है । घोंसले में बैठे नन्हेंसे परिंदे ने पर फड़फड़ाए और सहम कर जहाँ था, चिपक कर बैठ गया । बच्चे को भयभीत देख माँ ने उसे घोंसले से धकेलते हुए कहा–''जब तक तू भय नहीं छोड़ेगा, उड़ना कहाँ से आएगा ?''

दूसरे क्षण परिंदा हवा में उड़ रहा था ।

संकल्प शक्ति से महान् उपलब्धि

गणेश एवं कार्तिकेय जैसे अजेय देवपुरुषों, अवतार शक्तियों को जन्म देने वाली माता पार्वती अपनी निष्ठा के बल पर संकल्पशक्ति के कारण ही शिवजी को पा सकीं । यह उनके धैर्य एवं तपश्चर्या की शक्ति है, जो असंभव को संभव कर दिखा सकीं ।

पार्वती जी ने शिव-विवाह के लिए कठोर तप किया । शिवजी का मन तो पसीजा पर अपने उपयुक्त साथी होने, न होने की बात जाँचने के लिए सप्त ऋषियों को परीक्षक के रूप में भेजा ।

परीक्षकों ने शिव की अनेक निंदा की और हजार वर्ष में समाधि खुलने की बात भी कही । इसके अतिरिक्त अन्य देवताओं के सौंदर्य तथा विपुल साधनों का वर्णन करते हुए कहा–''तुम उनमें से किसी को भी पसंद करो, तो हम सरलतापूर्वक विवाह करा देंगे ।''

पार्वती जी ने अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहने की बात कहते हुए, यह भी कहा कि

कोटि जनम लगि लगन हमारी । वरहुँ शंभु न त रहहुँ कुमारी ॥

ऐसी दृढ़प्रतिज्ञ और लंबे समय तक प्रतीक्षा करने के धैर्य को सुनकर शिवजी ने स्वीकृति दे दी और उनका विवाह पार्वती के साथ हो गया । इस संकल्प-पुरुषार्थ की परिणति स्वरूप ही शिव-पंचायतन के रूप में एक श्रेष्ठ परिवार उभर कर आया ।

स्नेहसौजन्ययोर्नार्यां बाहुल्यं प्राकृतं स्वतः ।
व्यक्तिनिर्माणसामर्थ्यं द्वयमेतन्निगद्यते ॥ २६ ॥
यन्त्ररेखाश्रिता नूनं भूषणादिविनिर्मितिः ।
कुम्भकारो यथा चक्रं स्वाङ्गुलीकौशलेन सः ॥ २७ ॥
अर्हति पात्रतां नेतुं मृदं क्लिन्नां शनैः शनैः ।
तथा कुटुम्बगान् नारी सर्वान् संस्कर्तुमर्हति ॥ २८ ॥
देव्या सोपमिता नारी प्राधान्याद् यत एव ते ।
देवा अनुचरास्तस्या देव्या अत्राऽपि सा स्थितिः ॥ २९ ॥
महत्वपूर्णकर्मैतत् यो नार्या प्रतिभोदयः ।
कल्याणं निहितं सृष्टे समायाः कर्मणीह तु ॥ ३० ॥
अभ्यर्थना च देवीनामाख्याता या मतं बहु ।
तस्या माहात्म्यमत्रैषु शास्त्रेषु वस्तुबोधकम् ॥ ३१ ॥
तुष्यन्ति शीघ्रं ताः सर्वा वरदानं ददत्यलम् ।
प्रत्यक्षं देवता नार्यो द्रष्टुमेतच्च सम्भवम् ॥ ३२ ॥

भावार्थ–नारी में स्नेह-सौजन्य की प्रकृति प्रदत्त बहुलता है । इसे व्यक्तियों के निर्माण की प्रमुख क्षमता कहा गया है । जैसा सांचा होता है, वैसे ही उपकरण-आभूषण ढलते हैं । कुम्हार अपने चाक पर उंगलियों के कौशल से गीली मिट्टी को किसी भी प्रकार के बर्तन में बदल सकता है, उसी प्रकार नारी अपने पिता और परिवार के छोटे-बड़े सभी सदस्यों को इच्छानुरूप ढालने-बदलने में समर्थ है । उसे देवी की उपमा और प्रधानता

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

दी गई है । देवता उनके अनुचर होते हैं, वही स्थिति यहाँ भी समझनी चाहिए । नारी की प्रतिभा को निखारना बहुत बड़ा काम है । इसमें समस्त सृष्टि का कल्याण सन्निहित है । देवियों की अभ्यर्थना का शास्त्र में बहुत माहात्म्य बताया गया है, जो वस्तुतः यथार्थ है । वे शीघ्र संतुष्ट होतीं और अधिक वरदान देती हैं । प्रत्यक्ष देवियों के रूप में नारी समुदाय को देखा जा सकता है ॥ २६–३२ ॥

व्याख्या–नारी को शक्ति कहा गया है । शक्ति अर्थात देवताओं को जन्म देने वाली, देवत्व को संस्कार प्रदान करने वाली, स्रष्टा की विशेष कृति है । वह अपनी कतिपय सहज ही विद्यमान विशेषताओं के कारण जहाँ भी रहती है, वहाँ के वातावरण को देवत्व से अभिपूरित कर देती है । नारी चाहे माँ के रूप में हो, भगिनी अथवा भार्या के रूप में, ममत्व की दृष्टि से संपन्न है । सहनशीलता, शिष्टाचार, करुणा एवं सौजन्य उसकी अमूल्य निधियाँ हैं । इन्हीं विशेषताओं के कारण वह स्वयं अपने आचरण में भी सुसंस्कारिता का समावेश करती व परिवार के अन्य सदस्यों को भी उन विभूतियों से कृतार्थ करती है ।

न केवल बच्चों को, नारी कुम्हार की तरह, मूर्तिकार की तरह अपने अभिभावक, सहचर, पति अन्य पारिवारिक सदस्यों को भी श्रेष्ठता के साँचे में ढालने-गढ़ने, आमूलचूल बदलने में समर्थ है । संभवतः यही कारण है कि नारी को देवी की उपमा देकर अध्यात्म दर्शन में उसकी उपासना का प्रावधान किया गया है, ताकि उसके अनुदानों से सभी का कल्याण हो सके । ऐसी देवी-स्वरूपा नारी को पददलित करना, परावलंबी बनाना निकृष्टतम कार्य है । संतान के निर्माण में ही नहीं, परिवार के समूचे निर्माण में भी पुरुष की अपेक्षा नारी की भूमिका हजार गुनी अधिक महत्वपूर्ण और अधिक प्रभावशाली है । अतः समाज को ऊँचा उठाना है, तो नारी को देवी का दर्जा देते हुए, उसके प्रति सम्मान की भावना सबके मन में जगाई जानी चाहिए ।

घृणा को कोई स्थान नहीं

एक संत महिला थी । नाम था राबिया और काम था ईश्वर भक्ति । भ्रमण करते हुए, कितने ही संत, सत्संग प्राप्ति की इच्छा से उसके पास आकर ठहरा करते थे । एक साधु ने राबिया के धर्मग्रंथ को उठाया और पढ़ने लगा । उसमें एक पंक्ति कटी हुई थी । उसने पाठ वहीं छोड़ दिया और कहा–"तुम्हारा यह धर्मग्रंथ तो अपवित्र हो गया, किसी ने इसे नष्ट कर दिया है, अब दूसरा लेना होगा । आखिर यह तो बताइए कि यह शैतानी का कार्य किसने किया ।"

"मैंने"–छोटा सा उत्तर था राबिया का ।

अब तो साधु की हैरानी और भी बढ़ गई, वह समझ ही नहीं पाया कि ईश्वर भक्त महिला अपने धर्मग्रंथ को नष्ट करने का कार्य कैसे कर सकती है । राबिया ने कहा–"पंक्ति को पढ़ा भी है ।"

"हाँ, हाँ !! उसमें लिखा है–शैतान से घृणा करो ।"–साधु का कहना था ।

"मैंने जब से ईश्वर से प्रेम किया है, तब से मेरे हृदय में घृणा बची ही नहीं है । ईश्वर प्रेम ने मेरे संकुचित दृष्टिकोण को विशाल सहृदयता में बदल दिया है । यदि शैतान भी आकर खड़ा हो जाय, तो उसे भी मैं प्रेम ही करूँगी ।"

सामान्य नारी भी प्रेम की साकार मूर्ति है । उसके अंदर न किसी के प्रति द्वेष रहता है, न ही बदले की भावना अथवा घृणा । उसका हृदय इतना उदार है कि वह पापी को भी क्षमा कर नया जीवन जीने का अवसर देती है । यह बात भिन्न है कि मनुष्य का स्वयं का व्यवहार उसके प्रति प्रतिकूल होते देखा जाता है ।

चिड़िया के अंडे लौटाए

दीनबंधु एंड्रूज में विश्व मानवता के प्रति प्रेमभावना, माँ की प्राणिमात्र के प्रति करुणा के कारण विकसित हुई थी ।

"माँ देखना, मैं कितनी अच्छी चीज लाया हूँ ।"

"अरे, यह क्या ले आया । यह तो किसी चिड़िया के अंडे हैं । मुझे ऐसा लगता है कि तू चिड़िया के तीनों अंडे उठा लाया है । जब वह अपने घर लौटेगी, तो बहुत रोएगी बेटा !"

"अच्छा माँ ! यह चिड़िया के अंडे हैं । मुझे क्या मालूम था ?" वह बालक लँगड़ाते-लँगड़ाते उस पेड़ तक गया, क्योंकि चोट के कारण उसके पैर में दर्द हो रहा था । वह पेड़ पर चढ़ा और उसने सब अंडे उसी घोंसले में रख दिए और पेड़ के नीचे बैठा तब तक रोता रहा, जब तक कि वह चिड़िया पेड़ पर न आ गई । चिड़िया को देखकर,

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उसका सारा दर्द जाने कहाँ चला गया और हँसता-कूदता अपनी माँ के पास लौट आया । यह बालक और कोई नहीं, वरन दीनबंधु एंड्रूज थे, जो जीवन भर दीनों को अपना भाई समझकर प्यार करते रहे । माँ के दिए यह संस्कार जीवन भर उनकी अमूल्य थाती बनकर रहे ।

बच्चे अधिक प्रिय

सिग्रिड अनसेट प्रख्यात नार्वेजियन लेखिका को जब १९२८ में नोबुल पुरस्कार मिला, तो कई पत्र संवाददाता उन्हें बधाई देने के लिए उनके निवास स्थान पर पहुँचे । उस समय वे अपने बच्चों को सुला रही थीं । उन्होंने पत्र-प्रतिनिधियों से कुछ देर रुकने के लिए कहा ।

बच्चे जब सो गए, तो वे प्रतिनिधियों के पास आईं । प्रतिनिधियों ने उन्हें बधाई दी, साथ ही उनके व्यवहार पर आश्चर्य भी व्यक्त किया कि ऐसे सौभाग्यशाली अवसर पर भी वे बच्चों को भुला न सकीं । तो सिग्रिड अनसेट ने कहा-''मुझे इस वर्ष नोबुल पुरस्कार मिला, यह मेरे लिए सौभाग्य व प्रसन्नता की बात है । आप इतना कष्ट उठाकर बधाई देने के लिए आए, मैं आपकी आभारी हूं । साथ ही क्षमा माँगती हूँ, क्योंकि नोबुल पुरस्कार से भी अधिक प्रसन्नता मुझे अपने बच्चों के साथ रहने और उनका काम करने से मिलती है ।

पांचाली का विशाल हृदय

द्रौपदी के पाँच पुत्रों को सोते समय द्रोण पुत्र अश्वत्थामा ने मार डाला । पांडवों के क्रोध का ठिकाना न रहा, वे उसे पकड़ कर लाए और द्रौपदी के सामने ही उसका शिर काटना चाहते थे । द्रौपदी का विवेक तब तक जागृत हो गया । बोलीं-''पुत्र के मरने का माता को कितना दुख होता है । यह मैं जानती हूँ । उतना ही दुख तुम्हारे गुरु द्रोणाचार्य की पत्नी को होगा । गुरु ऋण को, गुरु माता के ऋण को समझो और उसे छोड़ दो ।'' अश्वत्थामा छोड़ दिया गया । करुणा की बदले की भावना पर विजय हुई । द्रौपदी की विशालता का परिचय यह मार्मिक प्रसंग महाभारत के कुछ महत्वपूर्ण सूत्रों में से एक है ।

पड़ोस का बच्चा, भगवान का बच्चा

विनोबा की माता को एक पड़ोसिन अपना बच्चा सुपुर्द करके, तीर्थयात्रा पर चली गयी । विनोबा की माँ पड़ोसिन के बच्चे को घी से चुपड़कर रोटी देती थीं और विनोबा को बिना चुपड़ी रोटी देती थीं ।

विनोबा ने माता से इस भेदभाव का कारण पूछा, तो उनने कहा-''पड़ोसिन का बेटा भगवान का बेटा है और तू मेरा । तेरी अपेक्षा उसका दर्जा बड़ा है ।''

वैभव नहीं, सुसंस्कार

बालक ध्रुव को विमाता सुरुचि ने अपने पिता की गोद में नहीं बैठने दिया । कहा-''पिता की गोद में बैठने का मन है, तो भगवान से प्रार्थना करके मेरे गर्भ में जन्म लेने की बात सोच ।''

अपमानित बालक माता सुनीति के पास गया । बालक के मन में द्वेष का संस्कार न पड़े । इसलिए मन का दुख दबाकर माँ बोली-''बेटे ! माँ ने कुछ भी गलत नहीं कहा । उन्होंने तुझे सलाह तो उचित ही दी है । असली पिता तो भगवान ही है । वे चाहती हैं कि तू तप करके भगवान को प्रसन्न करे और इच्छित वर प्राप्त करे ।''

माँ की प्रेरणा पाकर बालक ने तप करने का निश्चय किया । सुनीति ने पुनः सोचा कि बालक के मन में यदि विमाता के प्रति थोड़ा भी द्वेष शेष रह गया, तो ईश्वर ध्यान में मन नहीं लगेगा । इसलिए कहा-''बेटा, जाने से पहले बड़ों को प्रणाम करके उनका आशीर्वाद ले लेना चाहिए । भगवान से वरदान पाने की बात जिस माँ ने सुझाई है, उसे तो अवश्य प्रणाम करना, मेरा तो आशीर्वाद है ही, उनका भी आशीर्वाद होगा, तो दोहरा लाभ तुझे मिलेगा ।''

ध्रुव ने सुरुचि को साष्टांग प्रणाम किया, कहा-''माँ ! तप के लिए आपका आशीर्वाद चाहिए ।'' हृदय काँप गया, अपमानित बालक भी प्रणाम करके आशीर्वाद माँग रहा है ? स्वार्थ बुद्धि ने उसे गले लगाने की स्वीकृति तो नहीं दी, पर मुख से निकल गया-''मेरा आशीर्वाद ।''

सद्भावों से भरा ध्रुव तप करने को चला । माँ के आशीर्वाद से नारद जी मार्ग में मिल गए । उन्होंने मंत्र दीक्षा दी, विधि समझाई और अशीर्वाद दिया । माँ सुनीति का प्रयास ''बालक को वैभव चाहे न मिले, सुसंस्कार अवश्य मिलें'' सफल हुआ । ध्रुव पद पाकर ध्रुव सपरिवार कृतकृत्य हुआ ।

शिक्षक, सुधारक, नारी

जब भी परिवार के वातावरण में वांछित वातावरण की आवश्यकता पड़ती है, नारी एक माँ के रूप में प्रशिक्षक की भूमिका निभाती है । उसके स्वयं के अर्जित संस्कार उसे इतना प्रखर-प्रतिभावान बना देते हैं कि उसकी वाणी एवं व्यवहार अमोघ अस्त्र का काम करते हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मातृभूमि के लिए बलि होने की प्रेरणा

बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला से उनकी माँ पूछ रही थीं-"बेटा ! यदि तुम्हारा कोई शत्रु तलवार लेकर मेरी ही गर्दन काटने को आ जाए, तो तुम क्या करोगे ?" "माँ आज ऐसी अनहोनी बात क्यों पूछ रही हो ? भले ही मेरा अंग्रेजों से युद्ध चल रहा हो, पर आपने तो किसी का कुछ नहीं बिगाड़ा है"-सिराज ने उत्तर दिया ।

"पर यह भी तो संभव है कि वह कुछ न बिगाड़ने पर मेरा जीना हराम करने लगे ।"

"नहीं ऐसी बात नहीं । मैं समझ नहीं पा रहा हूँ कि आज आपको मेरी शक्ति पर अविश्वास क्यों हो रहा है ? मुझे आपत्तिग्रस्त देखकर, जाफर ने अवश्य मेरे विरुद्ध षड़यंत्र कर दिया है और मुझे परास्त करना चाहता है, पर मैं पारिवारिक जीवन में कर्तव्यों से उदासीन नहीं हूँ । विश्वास रखो माँ ! मुझसे कितना ही शक्तिशाली शत्रु क्यों न हो, पर मैं अंतिम समय तक मौत के घाट उतारने में लगा रहूँगा । यह मेरा दृढ़ संकल्प है ।"

सिराज की बात सुनकर माँ को संतोष हुआ । उसे अपना काम बनता दिखाई दिया । उसने कहा-"बेटा सिराज ! मैं तुममें कई दिन से निराशा की भावना देखती आ रही हूँ । मीर जाफर के षड़यंत्र से तुम्हारे हौसले पस्त हो गए हैं और आत्म समर्पण की बात सोच रहे हो । तुम्हारी मातृभूमि पर शत्रु हथियार उठाए खड़ा है । वह मातृभूमि अकेले तुम्हारी ही नहीं, मुझ जैसी अनेक माताओं की भी है ।"

माँ की बात बेटे को चुभ गई । वह माँ का आशय समझ चुका था । शत्रुओं को पछाड़ने के लिए आतुर हो उठा ।

अब एक क्षण की भी वह देर न करना चाहता था । वह उठा और तुरंत बाहर चला गया, एक दिन उसका कवच ही उसके शव का आवरण बना ।

विजेता भारवि को नम्रता की शिक्षा

देश-विदेश के पंडितों का एक शास्त्रार्थ हुआ । राजा ज्ञानसेन इसी बहाने विद्वानों का सत्कार करते थे । धन और मान सभी को मिलता था । पर शास्त्रार्थ में जो विजयी होता था, उसके मार्गदर्शन में अन्यान्यों को चलना पड़ता था । उन दिनों अपनी-अपनी हाँकने और मत-मतांतर खड़े करने की एक प्रकार से प्रथा भी चल पड़ी थी ।

उस शास्त्रार्थ समारोह में विद्वान भारवि विजेता घोषित किए गए । उपस्थित विद्वानों ने उनका नेतृत्व स्वीकार किया ।

विजेता का सम्मान प्रदर्शित करने के लिए, राजा ने उन्हें हाथी पर बिठाया और स्वयं चँवर डुलाते हुए उनके घर तक ले गए । भारवि जब इस सम्मान के साथ घर पहुँचे, तो उनके माता-पिता की खुशी का ठिकाना न रहा । घर लौटकर सर्वप्रथम उनने अपनी माता को प्रणाम किया । पिता की ओर उपेक्षा भरा अभिवादन भर कर दिया ।

माता को यह अखरा । झिड़क कर साष्टांग दंडवत् के लिए संकेत किया, सो उनने उसका भी निर्वाह कर दिया । पिता ने सूखे मुँह से 'चिरंजीव' भर कह दिया ।

बात समाप्त हो गई, पर माता और पिता दोनों ही खिन्न थे । उन्हें वैसी प्रसन्नता न थी, जैसी कि होनी चाहिए थी । गुरुकुल से लौटे हुए छात्र जिस शिष्टाचार से गुरु का अभिवादन करते थे और गुरु जिस प्रकार छाती से लगाकर शिष्य के प्रति आत्मीयता भरा आशीर्वाद प्रदान करते थे, उसका सर्वथा अभाव था । राजा द्वारा हाथी पर बिठाकर चँवर डुलाते हुए घर तक लाने का अहंकार जो था भारवि को । इसमें उसने शिष्टाचार को, विनम्रता को भुला दिया था । मात्र चिह्न पूजा भर की ।

पिता की मुख मुद्रा पर खिन्नता देखकर भारवि माता के पास कारण पूछने गए ।

माता ने बताया । विजयी होने पर लौटने के पीछे, तुम्हारे पिता की कितनी साधना थी, यह तो तुम भूल ही गए । शास्त्रार्थ के दसों दिन उन्होंने जल लेकर सफलता के लिए उपवास किया और इससे पूर्व पढ़ाने में कितना श्रम किया । इसका तो तुम्हें स्मरण ही नहीं रहा । विजय की अहंता तुम्हारे चेहरे पर झलकती है और अभिवादन में चिह्न पूजा भर का शिष्टाचार था ।

भारवि को अपनी भूल प्रतीत हुई । विद्वता का अहंकार गल गया और एक शिष्य एवं पुत्र का जो विनय होना चाहिए, वह उदय हुआ ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

माता की आँखों में आँसू आ गए । उनने कहा–"वत्स ! तुम्हारी विजय के पीछे पिता की साधना है । उसे विस्मरण मत करो । विद्वता की विजय के पीछे शिष्य की विनयशीलता का विस्मरण नहीं होना चाहिए ।

गोपीचंद का जीवन परिवर्तन

बंगाल के राजा गोपीचंद युवावस्था में अनेक व्यसनों में फँस गए थे । उनने अनेक विवाह किए और मद्यपान जैसी आदतों से अपने को अभ्यस्त कर लिया ।

उनकी माता निरंतर एक ही बात सोचती रहतीं कि लड़के को किसी प्रकार कुमार्ग से हटा कर सन्मार्ग पर लगाया जाय । उसकी क्षमता को इस प्रकार बर्बाद न होने दिया जाय । उसके व्यक्तित्व को परमार्थ प्रयोजनों के लिए नियोजित किया जाय । वे चाहती थीं कि वह तपस्वी बने और जन कल्याण के लिए कोई महत्वपूर्ण कार्य संपन्न करे । इसके लिए उनने स्वयं शिक्षा देना और जीवन का महान उद्देश्य समझाना प्रारंभ किया । इस कार्य में उनके मामा ने भी महत्वपूर्ण परामर्श दिए । मामा भर्तृहरि थे और वे पहले ही तपस्वी बन चुके थे । माता और मामा की शिक्षा का प्रभाव पड़ा । साथ ही योगी जालंधर नाथ के संपर्क में आकर वे उनके शिष्य भी हो गए ।

गोपीचंद के जीवन में आमूल परिवर्तन हो गया । वे संयम-साधना से पिछले दुर्गुणों से मुक्ति पा गए । राज प्रबंध उनकी माता और साथियों ने सँभाला । गोपीचंद, भर्तृहरि और जालंधर नाथ का त्रिगुट सुदूर क्षेत्रों में परिभ्रमण करता रहा और धर्म-धारणा का प्रशंसनीय वातावरण निर्मित किया ।

नौकर का स्वभाव बदला

एक सेठ जी का नौकर लापरवाह और कामचोर था । घर के लोगों ने कहा–"इसे निकाल दिया जाय ।" सेठ जी की पत्नी ने कहा–"इसे निकालेंगे नहीं, सुधारेंगे ।"

दूसरे दिन गरम पानी और तौलिया लेकर ठीक समय पर उपस्थित हुईं और जगाते हुए नौकर से बोलीं–"स्नान कीजिए, जब तक मैं चाय बनाकर लाती हूँ ।" नौकर पानी-पानी हो गया । मालकिन की इस सज्जनता को देखकर वह दूसरे दिन से सब काम समय पर करने लगा । उसे निकालना नहीं पड़ा, बाद में वह घर के अपने सदस्य के समान हो गया ।

ब्रह्मावर्त की संत, विशाखा

नगर सेठ अनंगपाल जितने मृदुल स्वभाव के थे, उनकी पत्नी बिंदुमती उतनी ही कर्कशा । इस कर्कशता का परिणाम यह होता कि नौकरानी उनके पास टिकती नहीं थी । इतने बड़े घर की साज-सँभाल उनसे अकेले होती नहीं थी । तब उनका क्रोध पति पर बरसता ।

संयोगवश एक सेविका ऐसी मिली, जिसने कर्कशता के बीच जीवन गुजारा, घबराई नहीं, वरन् सुधार के बाद तक भी दृढ़तापूर्वक रुकी ही रही । सब कुछ ठीक होने पर ही वह अन्य ऐसे ही घर को सुधारने के लिए नया आश्रय ढूँढ़ने निकली, नाम था–विशाखा ।

विशाखा आश्रय ढूँढ़ते-ढूँढ़ते नगर सेठ के यहाँ पहुँची । आवश्यकता थी ही, सो तुरंत नियुक्ति मिल गयी । सेविका की श्रमशीलता और मृदुलता ने गृहस्वामिनी का मन जीत लिया और न केवल व्यवस्था ही बनाई, वरन् स्वभाव भी बदल दिया ।

काम पूरा हुआ, तो विशाखा अन्यत्र किसी कर्कशा गृहिणी के परिवार में आश्रय पाने के लिए निकली । गृहस्वामी और सेठ उसे सभी सुविधा और साधन देते थे । फिर भी विशाखा मानी नहीं, उसने दूसरा वैसा ही घर तलाशा, जहाँ कलह और दारिद्र्य का बोलवाला हो ।

इस अद्भुत प्रकृति के बारे में पूछने वालों को विशाखा एक ही उत्तर देती–"प्रवचन द्वारा धर्मोपदेश करने की अपेक्षा विपन्न लोगों के साथ रहकर उन्हें अपनी सदाशयता के सहारे सुधार लेना अधिक उपयुक्त है ।

विशाखा के गुणों और उपदेशों की सर्वत्र चर्चा हुई । अंततः वह ब्रह्मावर्त क्षेत्र में प्रसिद्ध संत के रूप में प्रख्यात और सम्मानित हुई ।

पत्नी का उलाहना भरा प्रोत्साहन

जोधपुर के महाराजा यशवंत सिंह की रानी उनसे भी अधिक वीर थीं । राजा किसी युद्ध में गए थे, पर पराजित होकर लौट आए । रानी ने किले के फाटक बंद करवा दिए और कहा–"मेरा पति भगोड़ा नहीं हो सकता । भगोड़े के लिए इस किले में कोई स्थान नहीं ।"

यशवंत सिंह रानी की इस भर्त्सना पर उलटे पैरों रणक्षेत्र में गए । दूने साहस से लड़े और विजयी हुए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विल्वमंगल से सूरदास

बिल्वमंगल वेश्या चिंतामणि पर अत्यंत मुग्ध थे । वे पिता की अंत्येष्टि के बीच में से ही लोगों से आँखें चुराकर वेश्या के यहाँ चल दिए । रास्ते में नदी पड़ती थी । पार कैसे जायँ । पानी में बहते एक मुर्दे पर सवारी गाँठी और पार हो गए ।

गई रात्रि वेश्या के घर पहुँचे । वेश्या ने उन्हें भरपेट धिक्कारा । सारे धर्म-कर्म छोड़ बैठने के कुकृत्य पर लताड़ा और कहा–"जैसी सड़ी लाश पर बैठकर अभी आए हो, वैसी यह सड़ी लाश ही सामने पड़ी है । इस मल-मूत्र की गठरी से मोह छोड़ो और सही मार्ग अपनाओ ।"

वेश्या के सदुपदेशों से प्रभावित होकर ही निंदनीय बिल्वमंगल महात्मा सूरदास बने थे ।

एक मैं, शेष आप ढूँढ़ लें

स्वामी विवेकानंद जब इंग्लैंड प्रवास पर थे, तब उनने अपने एक प्रवचन में कहा–"मुझे १०० समर्पित व्यक्तियों की आवश्यकता है । जिनके साँचे से मैं कई प्रतिभाएँ ढाल सकूँ ।"

१९ वर्षीय नोबुल ने विवेकानंद साहित्य पहले भी पढ़ा था, भारत की सेवा करने की कल्पनाएँ उनने अनेक बार की थीं । यह भाषण उन्हें ऐसा लगा, मानो सीधा उन्हीं के लिए कहा गया हो ।

कु० नोबुल ने कहा–"एक मैं अपने को समर्पित करती हूँ । ९९ और आप ढूँढ़ लें । वे भारत चली आईं । स्वामी जी ने उन्हें संन्यास दिया और निवेदिता नामकरण कर दिया । वे आजीवन स्वामी जी के मार्गदर्शन में भारत की सेवा करती रहीं ।

मूर्तिमान देवी जेन एडम्स

जेन एडम्स के पिता सिनेटर और मिल मालिक थे । एक मात्र पुत्री के लिए उनने यह अपार संपदा सँजोकर रखी थी; पर उनने वह समय श्रेष्ठ पुस्तकों के अध्ययन में लगाया और पिता के मरते ही सारी संपत्ति बेचकर अमेरिका में एक डल हाउस मानव सेवा संस्थान बनाया । यों सस्ता भोजन, सस्ता निवास उसका प्रत्यक्ष कार्यक्रम था । पर इस बहाने जो हजारों व्यक्ति वहाँ आते, उन्हें लोकोपयोगी जीवन जीने की प्रेरणा देती । कार्य की महत्ता देखते हुए उनके लाखों सहयोगी बन गए ।

उन्होंने महिलाओं, बच्चों, विकलांगों, रोगियों की सेवा-सहायता के लिए अनेक संस्थाएँ चलाईं । 'अंतर्राष्ट्रीय महिला लीग' भी उन्हीं की स्थापना है । नोबुल पुरस्कार उन्हें मिला । वह राशि उन्होंने लीग को ही दान कर दी । एडम्स आजीवन ब्रह्मचारिणी रहीं । उन्हें करुणा की मूर्ति, देहधारी देवी माना जाता था ।

सेवाभावी नर्स कुमारियाँ

युद्ध के दिनों प्रशिक्षित नर्सों की जरूरत पड़ी । कुमारिकाओं को इस क्षेत्र में प्रवेश के लिए प्रोत्साहित किया गया । इंग्लैंड के पास पर्याप्त संख्या में प्रशिक्षित नर्सें हो गईं । युद्ध बंद हो गया, तो डॉक्टरों की सहायिका मात्र बनकर रहना पड़ रहा था । वे अपनी स्वतंत्र प्रतिभा का विकास नहीं कर पा रही थीं ।

दुस्साहसी बेनिट ने कुशल नर्सों की एक टीम बनाई और इंग्लैंड के आसपास के छोटे टापुओं में रहने वाले आदिवासियों की सेवा करने की प्रतिज्ञा ली । वे उन क्षेत्रों में जाकर जहाँ प्रसूति संकट से अनेक अशिक्षित महिलाओं के प्राण बचाती थीं, वहीं बच्चों के रोगों और पुरुषों की सेवा भी करती थीं । इस प्रकार ३० टापुओं की प्रतिकूल परिस्थिति में रहकर वहाँ के पिछड़े लोगों की सेवा में 'बेनिट यूनिट' की संख्या तीस थी । वह उस पुण्य कार्य का निरीक्षण करने के उपरांत कुछ ही दिनों में ३०० हो गई । उनने अनुभव किया कि विलासी जीवन बिताने की तुलना में उनका यह कदम कितना करुणायुक्त है । बेनिट ८० वर्षों तक जीवित रहीं । वे इन पिछड़े क्षेत्रों में दौरे करने में आजीवन संलग्न रहीं ।

अरविंद आश्रम की माताजी

पेरिस के एक समृद्धतम परिवार में जन्मी 'मीरा' के कुछ पूर्व संचित संस्कार ऐसे थे, जिनके कारण उनका मन विलास की ओर तनिक भी न लगा । उनके अध्ययन का विषय प्रारंभ से ही अध्यात्म था । वयस्क होने पर उनका विवाह फ्रांस के प्रख्यात दार्शनिक रिचर्ड के साथ हुआ । वे भी तत्त्वज्ञान संबंधी गुत्थियों को सुलझाने में निमग्न रहते थे । सन् १९१४ ई० में दोनों भारत आए । पांडिचेरी ठहरे । वे लोग निकट से अरविंद के जीवन का अध्ययन करने और उनके सत्संग का लाभ उठाने जाया करते थे । इसके बाद वे लोग वापस लौट गए ।

रिचर्ड अपनी पत्नी मीरा के मनोभावों को समझते थे । वे उन्हें अरविंद आश्रम स्वतः छोड़ने आए, ताकि

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अपनी प्रगति के साथ अध्यात्म क्षेत्र की कारगर सेवा कर सकें ।

मीरा पांडिचेरी सदा के लिए रह गईं । अरबिंद एकांत साधना में तल्लीन थे । मीरा उनका संदेश साधकों तक पहुँचातीं और साथ ही आश्रम व्यवस्था भी चलातीं । उनके संरक्षण में असाधारण प्रगति हुई । मीरा माता जी के नाम से प्रख्यात हुईं । वे सच्चे अर्थों में अरविंद का प्रतिनिधित्व करती थीं ।

प्रभु कहाँ हैं ? एक भक्त भाव विभोर होकर प्रार्थना कर रहे थे–"मेरे प्रभु ! द्वार खोलो, ताकि मैं तुम तक पहुँच सकूँ ।"

उधर से निकलने वाले दूसरे संत ने कहा–"जरा गहरे उतर कर देखो तो, ईश्वर का द्वार क्या कभी किसी के लिए बंद रहा है । अपनी माँ की, परिवार जनों की सेवा करके देखो । भगवान तुम्हें माँ के आँचल में बैठा मिलेगा ।"

भक्त को सही दिशा मिली । उपवन छोड़कर वह परिवार के तपोवन में चला गया ।

वस्तुतः स्रष्टा की कलाकारिता और सौंदर्य-सज्जा का अद्‌भुत सम्मिश्रण नारी की काया में ही हुआ है । उसकी चरणरज से लेकर भृकुटि भंगिमा तक से, ऐसी दिव्य लहरें उठती हैं, जिनमें उच्चस्तरीय अनुदानों के भंडार झाँकते देखे जा सकते हैं । उसकी पवित्र कोमलता में पारिजात पुष्पों का सार तत्व भरा है । श्रद्धा, करुणा, ममता, क्षमा, तुष्टि, तृप्ति, शांति की सप्त मातृकाएँ यों पृथक-पृथक देवियाँ गिनी जाती हैं । पर उन सातों का समन्वय देखना हो तो भाव नेत्रों के खुलते ही प्रत्येक नारी में इनका प्रत्यक्ष प्रकटीकरण दृष्टिगोचर हो सकता है ।

मणयोऽपि च पंके चेन्मग्नास्तर्हि तिरस्क्रियाम् ।
उपेक्षां च लभन्तेऽत्र तथा तासु सतीष्वपि ॥ ३३॥
विशेषतासु नार्यश्चेत्कृताः स्युर्नहि संस्कृताः ।
प्रतीयन्ते ह्ययोग्यास्ता अविकासस्थिताः सदा ॥ ३४॥
मलीनोऽसंस्कृतो हीरः काच एव हि दृश्यते ।
टंकनादेव सौन्दर्यं भ्राजते मूल्यमाव्रजेत् ॥ ३५॥
सम्मुखे दर्पणस्यैष यथारागस्तथैव तु ।
छाया सा दृश्यते तस्मिंस्तथा स्थितिगता सदा ॥ ३६॥
उत्तमा मध्यमा हेया नारी सा दृश्यते क्रमात् ।
मौलिकं तु स्वरूपं तत्तस्याः स्वच्छं न संशयः ॥ ३७॥
बुधैः प्रोक्ताविवार्यैव नारीह भावनामयी ।
बाधिता स्यान्न तस्यास्तु भावनैषा कदाचन ॥ ३८॥
स्नेहं सम्मानमुत्साहदानं प्रशिक्षणं तथा ।
सहयोगं च नारी चेत्प्राप्नुयात्तर्हि निश्चितम् ॥ ३९॥
उच्चतां स्तर आगच्छेत्तस्या सोऽप्यञ्जसैव तु ।
कल्पवृक्षोऽस्ति नारी तु तां यो यत्नेन सिञ्च ॥ ४०॥
पुष्पाणि तस्याश्छायायां स्थितः स्वान् स मनोरथान् ।
इच्छितान् वरदाने वै प्राप्नोत्येव सुखावहान् ॥ ४१॥

भावार्थ–मणि भी कीचड़ में फँसी रहने पर उपेक्षित और तिरस्कृत रहती है । मौलिक विशेषताएँ होते हुए भी यदि नारी को निखारा–उभारा न जाय, तो वह भी पिछड़ी स्थिति में पड़ी रहती है व अयोग्य प्रतीत होती है । मैला और अनगढ़ हीरा भी काँच जैसा प्रतीत होता है । खरादने पर ही उसका सौंदर्य चमकता और मूल्यांकन होता है । दर्पण के सम्मुख जैसा भी रंग होता है, वही उसमें छाया दीखती है । परिस्थितियों के अनुरूप ही नारी उत्कृष्ट, मध्यम और हेय स्तर जैसी दीखती है । उसका स्वरूप स्फटिक मणि की तरह स्वच्छ है । यह एक सुविचारित तथ्य है कि नारी भावना प्रधान है । उसकी भावना को चोट न लगने पाए । उसे समुचित स्नेह, सम्मान, प्रोत्साहन, प्रशिक्षण और सहयोग दिया जाय, तो उसका स्तर ऊँचा उठाना तनिक भी कठिन नहीं । नारी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कल्पवृक्ष है, जो उसे लगनपूर्वक सींचता–पालता है, वह उसकी छाया में बैठकर मनोरथ पूरा करता और इच्छित प्रतिफल वरदान रूप में प्राप्त करता है ॥ ३३–४१ ॥

व्याख्या–नारी को देवमानवों, नररत्नों को जन्म देने वाली खदान की उपमा ऋषि ने दी है, किन्तु इस स्थिति को भी स्पष्ट कर दिया है कि पिछड़ेपन का कारण समाज का उपेक्षा भरा रूप है । वह उस हीरे के समान है, जिसे खराद पर चढ़ाया व तराशा नहीं गया है । उसका मूलभूत रूप अत्यंत उज्ज्वल, स्वच्छ एवं श्रेष्ठता से युक्त है । अंगारे पर चढ़ी राख की परत उसके ज्वलनशील, ताप प्रदान करने वाले गुण को उजागर नहीं होने देती । नारी भी एक प्रकार से ऐसे ही उपेक्षित पड़े अंगारे, कोयले के ढेर में पड़े हीरे की तरह अनगढ़ स्थिति में होती है । जहाँ समाज जागृत होता है, वहाँ या तो स्वयं नारी की ओर से या अथवा प्रगतिशील नागरिकों द्वारा ऐसे प्रयास होते हैं, जिससे कठिनाइयों के बीच से उसका रूप और भी अधिक निखर कर आता है । वह प्रखरता की मूर्ति के रूप में उभर कर आती है और समाज को नवीन चेतना प्रदान करती है, नई दिशा धारा दे जाती है ।

मूलतः नारी की मानसिक बनावट भावनात्मक है । वह तर्कों से नहीं, भाव संवेदनाओं से अभिप्रेरित होकर अपनी जीवन दिशा बनाती है । भावुक हृदय होने के कारण अनंत वत्सला नारी को उसकी करुणा सहज ही उसे उच्च स्थान पर प्रतिष्ठित कर विराट् विश्व का एक अभिन्न अंग बना देती है । इसलिए कवि रस्किन ने कहा है–"माता का हृदय एक स्नेहपूर्ण निर्झर है, जो सृष्टि के आदि से अनवरत झरता हुआ मानवता का सिंचन कर रहा है ।" नारी की भाव संवेदनाओं को यदि समुचित पोषण मिलता रहे, तो उसका अभ्युदय संभव है, सुलभ है । यह भी अनिवार्य है कि उसकी भावुक मानसिकता का दोहन न हो, ऐसी स्थिति में वह अंदर से टूट जाती है ।

नारी को परिवार तथा समाज के अन्यान्य सदस्यों का स्नेह, श्रद्धा और सम्मान भरा सहयोग भी चाहिए । उसके बहुमुखी स्तर को ऊँचा उठाने के लिए समुचित प्रशिक्षण-प्रोत्साहन की व्यवस्था अनिवार्य रूप से की जानी चाहिए । शास्त्रकारों ने नारी के साथ कदम-कदम पर सहयोग और सम्मान करने का निर्देश दिया है तथा उसी आधार पर परिवार में सुख-शांति व सुव्यवस्था की स्थापना को संभव बताया है ।

यदि कुलोन्नयने सरसं मनो, यदि विलासकलासु कूतूहलम् ।
यदि निजत्वमभीप्सितनेकदा, कुरु सतां श्रुतशीलवतीं तदा ॥

यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारे कुल की उन्नति हो । यदि तुम अपना और अपनी संतान का कल्याण करना चाहते हो, तो अपनी कन्या को विद्या, धन और शील से युक्त करो ।

पितृभिर्भ्रातृभिश्चैताः पतिभिर्देवरैस्तथा । पूज्या भूषयितव्याश्च बहुकल्याणमीप्सुभिः ॥
यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः । यत्रतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्राऽफला क्रियाः ॥

(मनु० ३/५५-५६)

पिता, भाई, पति और देवर जो भी कोई परिवार में हों, यदि वे अपना कल्याण चाहते हों, तो उन्हें चाहिए कि वे स्त्रियों का सम्मान करें और उन्हें प्रसन्न रखें । जहाँ स्त्रियों का सत्कार होता है, वहाँ देवता निवास करते हैं और जहाँ उनका सत्कार नहीं होता, वहाँ सारी क्रियाएँ निष्फल हो जाती हैं । नारी की उपमा ऋषि ने उस कल्पवृक्ष के रूप में दी है, जिसके सान्निध्य से सब कुछ पाया जा सकता है । यदि उसे समुचित सम्मान मिलता रहे, उसे ऊँचा उठाने के प्रयास चलते रहें, तो प्रत्युत्तर में वह अनुदानों की वर्षा कर सारे समाज को उपकृत करती, धन्य बनाती है । वह मानव के समस्त मनोरथों को पूर्ण करने में समर्थ है ।

जैसा बोया–वैसा काटा

किसी को कुछ, किसी को कुछ देने के लिए लोग भगवान् की निंदा कर रहे थे और उसे पक्षपाती ठहरा रहे थे । सुन रहे थे कोई दार्शनिक । वे लोगों को साथ लेकर खेतों पर गए । एक में गुलाब बोया था, दूसरे में तंबाकू । एक से सुगंध उठ रही थी, दूसरे से बदबू । दार्शनिक ने कहा–"जमीन बहुत बुरी है । किसी को क्या, किसी को क्या देती है । उसका पक्षपात देखा ।" लोग बोले–"नहीं, यह धरती का पक्षपात नहीं, बोने वालों के कृत्यों का फल है ।" हँसते हुए ज्ञानवान् ने कहा–"भगवान् की यह सृष्टि एक प्रकार का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

खेत है । उसमें परिस्थितियों का जो जैसा बीज बोता है, वह वैसा ही काटता है ।''

नारी को हेय स्थिति में रखने का दोष भी समाज को जाता है । समाज रूपी खेत में जैसी परिस्थितियाँ बनती हैं, वैसे ही मनुष्य जन्म लेते हैं । नारी की अनगढ़ता, उचित स्तर के प्रयासों के प्रति मूर्धन्यों की निरुत्साहिता का ही परिणाम है ।

रत्न गँवाने का दुःख

एक गोताखोर बहुत दिन से असफल रह रहा था । घोर परिश्रम करने पर भी कुछ हाथ न लगा । पेट भरने के लाले पड़ गए । कोई रास्ता सूझता न था । सो एक दिन उसने किनारे पर बैठकर देवता की बहुत प्रार्थना की–''आप सहारा न देंगे, तो मैं जीवित कैसे रहूँगा ?'' देवता पसीजे । इस बार डुबकी में उसे एक पोटली हाथ लगी । खोल कर देखा उसमें छोटे-छोटे पत्थर भर बँधे थे । दुर्भाग्य को उसने कोसा देवता को निष्ठुर बताया और पत्थर के टुकड़ों को पानी में फेंकना आरंभ किया । सोचने लगा–''अब वह गोताखोर का धंधा छोड़ेगा । कल से मछली पकड़ेगा, उसमें हाथों-हाथ लाभ भी है और जोखिम भी नहीं । इन्हीं विचारों के बीच एक-एक करके पत्थर के टुकड़ों को भी फेंकता चला गया । अंतिम टुकड़े को ध्यान से देखा तो वह बहुमूल्य नीलम था । देवता के अनुग्रह से मिली इतनी राशि उसने अपने हाथों गँवाई, इस पर भारी रोष प्रकट कर रहा था । देवता प्रकट हुए और बोले–''अकेले तुम्हीं इस दुनियाँ में प्रमादी नहीं हो और लोग भी रत्न राशि से बढ़ कर जीवन संपदा को इसी प्रकार बर्बाद करते हैं । जाओ जो बचा है, उसे बेचकर आज का काम चलाओ । समझ बढ़ाओ, ताकि धन पाने का ही नहीं, उसके उपयोग का भी बोध हो सके ।

नारी भी समाज का एक ऐसा ही उपेक्षित रत्न है, जिसे हम कौड़ियों के मोल गँवाते और फिर सिर धुनते पछताते हैं ।

अनमोल हीरा

किसी किसान को जमीन खोदते समय एक चमकीला काँच मिला । खेलने के लिए बच्चों को दे दिया । बच्चे को उसकी चमक बहुत सुहाई । पड़ौस में एक सेठ रहते थे । दोनों के बच्चे साथ-साथ खेलते । सेठ के बच्चे को भी हीरा सुहाया । वह भी बाप से वैसा ही मँगा देने का हठ करने लगा । सेठ हीरे की कीमत जानते थे, किसान नहीं । इसलिए उन्होंने फुसलाकर सौ रुपये में खरीद लिया । सेठ के बच्चे के स्कूल में जौहरी का बच्चा पढ़ता था । उसने अपने बाप से उस हीरे की चर्चा की और लेने का हठ किया । जौहरी ने उसे देखा और कम समझ सेठ से हजार रुपये में खरीद लिया । जौहरी की राजपरिवार तक पहुँच थी । हीरा वहाँ तक पहुँचा । राजकुमार उसके लिए हठ करने लगा । सौदा लाख रुपये में पक्का हुआ और अंततः वह राजमुकुट की शोभा बढ़ाने लगा । कम दाम में बेचने वाले अनजान थे । मोल हीरे का ही नहीं जानकारी का भी मिला ।

नारी, समाज की एक बहुमूल्य हीरा है । उसकी कीमत बहुत कम लोग जानते हैं । जो उसका मूल्य जानते और उसे उपयुक्त दिशा में सुनियोजित कर देते हैं, वे निहाल हो जाते हैं ।

आंतरिक सौंदर्य की अनुभूति

संगीतकार गाल्फर्ड के पास उसकी एक शिष्या अपने मन की व्यथा कहने गई कि वह कुरूप होने के कारण संगीत मंच पर जाते ही यह सोचने लगती है कि दूसरी आकर्षक लड़कियों की तुलना में उसे दर्शक नापसंद करेंगे और हँसी उड़ाएंगे । यह विचार आते ही वह सकपका जाती है और गाने की जो तैयारी घर से करके ले जाती है, वह सब गड़बड़ा जाती है । घर पर वह मधुर गाती है, इतना मधुर जिसकी हर कोई प्रशंसा करे, पर मंच पर जाते ही न जाने उसे क्या हो जाता है कि हक्का-बक्का होकर वह अपनी सारी प्रतिभा गँवा बैठती है । गाल्फर्ड ने उसे एक बड़े शीशे के सामने खड़े होकर अपनी छबि देखते हुए गाने की सलाह दी और कहा–''वस्तुतः वह कुरूप नहीं, जैसी कि उसकी मान्यता है । फिर स्वर की मधुरता और कुरूपता का कोई विशेष संबंध नहीं है । जब वह भाव-विभोर होकर गाती है, तब उसका आकर्षण बहुत बढ़ जाता है और उसमें कुरूपता की बात कोई सोच भी नहीं सकता । वह अपने मन में से हीनता की भावना निकाले । सुंदरता के अभाव को ही न सोचती रहे, वरन स्वर की मधुरता और भाव-विभोर होने की मुद्रा से उत्पन्न आकर्षण पर विचार करे और अपना आत्मविश्वास जगाए ।''

लड़की ने यही किया और आरंभिक दिनों में जो सदा सकपकाई हुई रहती थी और कुछ आयोजनों में जाने के बाद एक प्रकार से हताश ही हो गई थी, नया साहस और उत्साह इकट्ठा करने पर उसने बहुत प्रगति की और फ्रांस

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

की प्रख्यात गायिका 'मेरी बुडनाल्ड' के नाम से विख्यात हुई ।

आदत सुधारी महामानव बनाया

एक बालक बहुत जिद्दी था । वस्तुएँ इधर-उधर बिखेर देता था, बोलने में हकलाता था, पर जब उसे उपयुक्त अध्यापक मिले, तो लड़के की सभी बुरी आदतें छुड़ा दीं । इतना ही नहीं, देश का महापुरुष बनाया, जिसका नाम था बाल गंगाधर तिलक । यदि यह प्रयास करने के लिए अध्यापक उद्यत न हुए होते, तो एक प्रतिभा समाज के समक्ष न आ पाती । लगभग यही बात नारी समुदाय पर भी लागू होती है । उसकी वर्तमान परिस्थितियों का कारण है, अनगढ़ से सुगढ़ बनाने हेतु अभीष्ट पुरुषार्थ का अभाव ।

जस्टिस रानाडे ने पत्नी को सुयोग्य बनाया

पूना के जस्टिस महादेव गोविंद रानाडे अपने समय के प्रसिद्ध कांग्रेस नेता भी थे । उनका विवाह छोटी आयु में ही हो गया था । धर्मपत्नी रमाबाई सर्वथा अनपढ़ थीं । तो भी परिवार व्यवस्था में बड़ी कुशल और सज्जनता की मूर्ति थीं । रानाडे ने अपनी पत्नी को पढ़ाना आरंभ किया । वे उच्चकोटि की विदुषी बन गईं । पति के साथ सार्वजनिक कामों में भी भाग लेने लगीं । मराठी, अंग्रेजी और बंगाली तीनों भाषाओं में उनने अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली । विधवा होने पर रमाबाई ने अपनी सारी संपत्ति महिलाओं की सेवा के लिए मातृ सदन स्थापित करके उसमें लगा दी । वे हर दृष्टि से एक आदर्श गृहस्थ रहीं ।

अवसर मिला तो चरम पराक्रम कर दिखाया

बंगाल के वर्धमान जिले में शारदा-सुंदरी का जन्म एक देहाती झोंपड़ी में हुआ । वहीं वे माता-पिता से कुछ पढ़ीं । उनसे विवाह एक बड़े जमींदार पुत्र ने कन्या के रूप-गुण देखकर अपनी पसंदगी से किया । रियासत कोर्ट ऑफ वार्ड में थी । लड़का अंग्रेजी ठाट-बाट में सारे दुर्गुण छोटी ही आयु में सीख गया और कुसंग में उसने आत्महत्या कर ली । शारदा सुंदरी, जिनका नाम ससुराल में स्वर्णमयी रखा गया था, अठारह वर्ष की आयु में ही विधवा हो गईं । इंग्लैंड सरकार ने मात्र पंद्रह सौ रुपया वार्षिक पेंशन बाँधी और जमींदारी जप्त कर ली । इस पर वे सुप्रीम कोर्ट तक लड़ीं और अपनी रियासत उपलब्ध कर ली । परिवार वाले भी उन्हें फूटी आँख से न देखते थे, पर उन्होंने अपने निजी बल पर राजकाज चलाया । पति लाखों रुपया कर्ज छोड़ गए थे, उसे चुकाया और आमदनी का बड़ा हिस्सा उस क्षेत्र के निर्धन बालकों की उन्नति में लगाया । वे प्रायः साठ लाख रुपया रियासत का पिछड़ापन दूर करने में लगाती रहीं । अपना निजी रहन-सहन बड़ा सादा था । उनकी व्यवस्था से प्रसन्न होकर अंग्रेज सरकार ने उन्हें महारानी की उपाधि दी । उनका कौशल अभी भी सराहा जाता है । अवसर मिले तो स्त्रियाँ क्या नहीं कर सकती हैं ।

निखरी हुई प्रतिभा- दुर्गाबाई देशमुख

दुर्गाबाई आंध्रप्रदेश के एक जमींदार, किन्तु रूढ़िवादी परिवार में जन्मीं । उनकी इच्छा विद्या पढ़ने की थी । जल्दी विवाह करने में उनकी तनिक भी रुचि नहीं थी । घर रहकर ही उन्होंने मैट्रिक उत्तीर्ण कर ली और विशाखापट्टम विश्वविद्यालय में पढ़ने का आवेदन किया । छात्रावास न होने पर उनका आवेदन स्वीकृत न हुआ । उनने अपनी जैसी इच्छा वाली १२ छात्राएँ तलाश कर लीं । छात्रावास बन गया, वे ग्रेजुएट बनीं और वकालत पास कर ली ।

सत्याग्रह आंदोलन चला, तो वे उसमें कूद पड़ीं । श्रीनिवास उस प्रांत के कांग्रेस संचालक थे । वे जेल गए, तो अपने स्थान पर दुर्गाबाई को इंचार्ज बना गए । उनके पीछे भी उनने आंदोलन का इतनी अच्छी तरह संचालन किया कि प्रगति पहले से भी अधिक हुई । उन्हें भी जेल जाना पड़ा । उनने प्रांत भर में हिंदी का प्रचार किया । काकिनाड़ा कांग्रेस अधिवेशन में वे आंध्र में ५०० स्वयंसेविकाएँ लेकर पहुँचीं । महिला सुधार के लिए उनने उस प्रांत में घूम-घूम कर बहुत काम किया । भारतीय संविधान बनाने वाली समिति में भी वे सदस्य रहीं । आयु ढल जाने पर उनने भारत के वित्तमंत्री सी० डी० देशमुख से विवाह किया । इसके बाद भी वे राष्ट्र कल्याण के कार्यों में आजीवन दिन-रात जुटी रहीं ।

विकलांगता बाधक नहीं

ग्रिम्स्वे इंग्लैंड की एक महिला है- इलेन डेल । इसके दोनों हाथ नहीं हैं, किन्तु इसके बावजूद उसने परिस्थितियों के आगे घुटने नहीं टेके और आज विकलांगों के लिए प्रेरणा स्रोत बनी हुई हैं । हाथ के अभाव में भी इलेन ने अपना मनोबल नहीं टूटने दिया और इसके बिना ही सफल जिंदगी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जीने का संकल्प लिया तथा हौसला हर वक्त बुलंद रखा । जब वह युवावस्था को प्राप्त हुई, तो विवाह कर लिया एवं पत्नीत्व व मातृत्व का उभयपक्षीय सुख प्राप्त किया तथा एक पुत्र और पुत्री की माँ कहलाने का गौरव प्राप्त हुआ । वह एक सफल गृहिणी भी साबित हुई । बच्चों को स्कूल के लिए तैयार करना, सफाई करना, भोजन बनाना, कपड़े धोना, सिलाई करना आदि सारा का सारा काम वह अपने पैरों, उँगलियों व पंजों के बल पर ही कर लेती और अच्छे-अच्छों के कान काटती ।

पर वह इतने से ही संतुष्ट नहीं थी । कार चलाने में भी उसने निपुणता अर्जित कर ली । इससे भी उसे चैन नहीं मिला, तो एक वस्त्र-विक्रेता के यहाँ सेल्समैन की नौकरी कर ली और तीन महीने की अल्पावधि में ही अपने कार्य में इतना दक्ष हो गई कि वहाँ के पुराने सेल्समैनों की निरीक्षक बन बैठी । बाद में यह नौकरी भी छोड़ दी और अब वह खुद का वस्त्र उद्योग चला रही है ।

लाखों के लिए आशा की किरण-हेलन कीलर

हेलन कीलर के साथ प्रकृति ने बदी करने में कोई कमी नहीं रहने दी । वह अंधी, बहरी और गूंगी तीनों ही व्यथाओं से पीड़ित थी । पर अपनी सूझबूझ और संकल्प बल के सहारे शिक्षा प्राप्ति का कोई न कोई तरीका निकालती रही और बुद्धि कौशल के सहारे सफल होती रही । उसने अंग्रेजी में एम०ए० किया और साथ ही लैटिन, जर्मन आदि में प्रवीण बनी । घरेलू काम रोटी बनाने से लेकर कपड़े धोने तक के वह भली-भाँति कर लेती थी । उसने कुशलता का अपने लिए ही उपयोग नहीं किया, वरन् अपंगों की शिक्षा तथा स्वावलंबन के लिए सारे संसार में भ्रमण करके करोड़ों रुपया एकत्रित किया । उसकी विद्या से प्रभावित होकर कितने ही विश्वविद्यालयों ने उसे मानद डॉक्टरेट की उपाधि दी । लोग उसे देखकर संसार का आठवां आश्चर्य कहते थे ।

कलम से आग उगली

हेरियट स्टो अमेरिका की उस महिला का नाम है, जिसने अपनी कलम से आग उगली और दक्षिण अफ्रीका में प्रचलित नीग्रो समुदाय के विरुद्ध चल रहे अत्याचारों को उधेड़ कर रख दिया । उन दिनों नीग्रो अफ्रीका से जानवरों की तरह पकड़ कर लाए और बेचे जाते थे । उन्हें पशुओं से भी बुरी स्थिति में रखा जाता था । पर उनका हिमायती कोई न था । हेरियट स्टो ने एक किताब लिखी 'टाम काका की कुटिया' इसमें अत्याचारों को ऐसी मार्मिक भाषा में व्यक्त किया गया था, कि जो पढ़ता वही तिलमिला जाता । फलतः इसी समस्या को लेकर उत्तर अमेरिका और दक्षिण अमेरिका में गृह युद्ध छिड़ गया । दास प्रथा के विरुद्ध कानून बनाने में इस किताब का बहुत बड़ा हाथ था । तत्कालीन राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन ने उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की थी ।

यह उनकी सहज भावशीलता मानसिकता का ही परिणाम था कि तत्कालीन परिस्थितियों का इतना सुंदर चित्रण कर रंगभेद जैसी समस्या को वे विश्व मंच पर लाने में सफल हुईं ।

सर्जन जनरल मेरी

डॉ० मेरी नौकरी के आरंभिक दिनों में एक छोटे देहात में भेजी गईं । वैसे तो वहाँ १५० प्रसूति बैड थे, पर भर्ती वहाँ मुश्किल से १५ होती थीं । दाइयाँ लोगों के घर जाकर प्रजनन कराती थीं और ऊपरी आमदनी करती थीं । मेरी ने जन संपर्क साधा और दाइयों को सहमत कराया, तो १५० के स्थान पर ३०० पलंग भरे रहने लगे । मेरी की लगन के साथ उनकी पदोन्नति भी होती गई । अंततः वे 'सर्जन जनरल' के पद से रिटायर हुईं । उनके समय में अस्पताल ने असाधारण उन्नति की ।

वीरबाला ताराबाई

शिवाजी वंश की एक रानी ताराबाई की देशभक्ति और वीरता का असाधारण इतिहास है । पति के यवन पक्ष में जा मिलने पर उनने राजसत्ता स्वयं संभाली और शिवाजी परंपरा को जीवित रखने के लिए न केवल उनने राजकाज संभाला, वरन् विपक्षियों और विश्वासघातियों के साथ बड़ी हिम्मत और सूझबूझ के साथ लड़ाइयाँ लड़ती रहीं । सत्तर वर्ष की आयु में भी उनका जोश और कौशल नवयुवकों जैसा बना रहा । यह कौशल उन्होंने अपनी लगन और कुशलता के आधार पर स्वयं सीखा था । न वे गुड़िया बनी रहीं और न सती हुईं ।

नर्सिंग आंदोलन की जन्मदात्री-नाइटिंगेल

फ्लोरेंस नाइटिंगेल का मन आरंभ से ही दीन-दुखियों की सेवा में जीवन लगाने का था, सो उसने नर्स की शिक्षा प्राप्त करने की कोशिश की । पिता को यह अच्छा नहीं लगा और विवाह के लिए जोर देते रहे । अंत में आग्रह नाइटिंगेल का ही माना गया । ३३ वर्ष की आयु में उसे आज्ञा मिली । वह क्रीमिया के युद्ध में घायल सैनिकों की सेवा करने युद्ध मोर्चे पर चली गई ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उसके आगे बढ़ने पर अन्य महिलाएँ भी नर्स सेवा में सम्मिलित हुईं । उसके पहुँचते ही अस्पताल में आशातीत सुधार हुआ । पहले जहाँ घायलों में से १०० पीछे ८० मर जाते थे, अब वहाँ हजार पीछे २५ की मृत्यु दर रह गई । डॉक्टर उससे बहुत कुढ़ते थे, पर उसने किसी की परवाह न की । युद्ध समाप्त होने पर उसने नर्सों की शिक्षा का एक विद्यालय खोला और सारा जीवन पीड़ितों की सेवा में लगाया ।

तिरंगा झंडा एवं मैडम कामा

बंबई के सोरावजी पटेल ने अपनी पुत्री भीकाजी कामा को एलेक्जेण्ड्रिया कन्या विद्यालय में पढ़ने भेजा । इन्हीं दिनों जर्मनी में विश्व समाजवादी सम्मेलन हुआ । उसमें स्वतंत्र देश ही भाग ले रहे थे । भारत को पराधीन होने के कारण प्रवेश न मिला । इसका कामा को बड़ा दुख हुआ और वे स्वेच्छा प्रतिनिधि बनकर उस सम्मेलन में दहाड़ीं । साड़ी का एक हिस्सा फाड़कर तिरंगा झंडा बनाया और उसे लगाया । उपस्थित देशों ने भारत की जय-जयकार की । जब वे भारत लौटीं, तो उनका विवाह रुस्तम जी से कर दिया गया । वे बंबई क्रांतिदल के संपादक थे । उनने पत्नी की आकांक्षा में कोई प्रतिरोध न डाला । वे भारत में राष्ट्रीय आंदोलन तथा आए दिन पड़ने वाले अकालों में राहत कार्य करती रहीं । इसके बाद इंग्लैंड गईं । वहाँ से 'वंदेमातरम्' पत्र निकाला । अंग्रेज सरकार के चिढ़ने पर वे फ्रांस, जर्मनी, रूस आदि में अपना अड्डा जमाकर भारत के पक्ष में वातावरण बनाती रहीं । ७४ वर्ष की आयु में वे भारत लौटीं । तिरंगे झंडे की जन्मदात्री भीकाजी कामा ही थीं । बाद में उसमें थोड़ा सुधार कर लिया गया ।

पति के छोड़े काम में खपने वाली तलाश कुमारी

सन् १८५७ के विद्रोह में जिन तेजस्वी महिलाओं ने बढ़-चढ़कर भाग लिया, उन्हें इतिहासकार कभी भूल न सकेंगे । जिनका भ्रम है कि नारी रोने, बच्चे जनने, पूजा-पत्री करने और पति के साथ सती हो जाने के लिए बनी है, उनकी मान्यताओं को इन देवियों ने पूरी तरह गलत सिद्ध कर दिया और समुचित शिक्षण के अभाव में भी उनने विदेशी शासन को उखाड़ने में बढ़-चढ़ कर पराक्रम दिखाया । भारत के नारी-रत्नों में रानी लक्ष्मीबाई, दुर्गावती, चाँदबीवी, चेणाम्मा, गुडलू जैसी प्रख्यात रणबाँकुरी देवियों की तरह अमोढ़ा रियासत की रानी तलाश कुमारी भी थीं । उनके पति इस विद्रोह में अंग्रेजों द्वारा मारे गए थे । इसके बाद रानी के कमान सँभाली और थोड़े से साधनों में इतनी लंबी लड़ाई लड़ी कि अंग्रेजों को मोर्चा छोड़कर अपनी सेना हटानी पड़ी । रानी ने हथियारों और बारूद से भरा एक जहाज उड़ा दिया था । उनसे लड़ने जो सेनाएँ सामने आती रहीं, उन्हें ऐसा छकाया कि वे लौटकर वापस ही न जा सकीं । अवसर की घात में रहने वाले पड़ोसी सामंतों की भी अक्ल ठिकाने लगाती रहीं । पति के छोड़े काम में जीवन खपा देने वाली सच्ची पतिव्रताएँ ऐसे ही पराक्रम दिखाती हैं ।

ब्रिटेन की पहली महिला डॉक्टर

उन दिनों घायलों की सेवा एक घृणित कार्य समझा जाता था । मर्द भी डॉक्टर कम बनते थे, फिर महिला तो बने ही कौन ? संसार भर में एक महिला डॉक्टर अमेरिका में रजिस्टर्ड हुई थी । इंग्लैंड के शाही परिवार की लाडली एलिजाबेथ नोरथ ने डॉक्टर बनने की हठ ठानी और उसे सभी संबंधियों का विरोध सहते हुए पूरा किया । घर में पैसे की कमी न थी । वह डॉक्टर बनकर व्यवसाय नहीं करना चाहती थी । उद्देश्य मात्र पीड़ितों की सेवा करना था । जब उसका निश्चय न बदला, तो प्रधान सर्जन ने उसे पहले नर्स कोर्स कर लेने की शर्त रखी । यह और भी छोटा पद था, पर उसने उसे सहर्ष स्वीकार किया और बड़ी आयु में डॉक्टर बन सकी ।

एलिजाबेथ ब्रिटेन की पहली मान्यता प्राप्त डॉक्टर थी । उनके आगे बढ़ने से इस दिशा में बढ़ सकना अन्य लड़कियों के लिए भी संभव हुआ ।

कोढ़ियों के लिए सेवा समर्पित-मेरी रीड

मेरी रीड़ अमेरिका से ईसाई मिशन के अंतर्गत भारत में सेवारत रहने के लिए आई थीं । उन्हें महिला शिक्षा का काम सौंपा गया, पर पिथौरागढ़ प्रवास के समय उनने देखा कि भारत में कोढ़ियों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है । न कोई उनसे संपर्क रखता है, न चिकित्सा पर ध्यान देता है । रीड ने अपनी रुचि कोढ़ी सेवा में व्यक्त की । मिशन ने वैसा ही प्रबंध कर दिया । वे उत्तरप्रदेश के पहाड़ी क्षेत्रों का दौरा करके कोढ़ियों को एकत्रित करने और उनकी चिकित्सा के साथ उन्हें अध्यापन तथा स्वावलंबन भी सिखाने लगीं । रोगियों को भारी राहत मिली । लोगों ने अनुभव भी किया कि

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हम अपने देशवासियों के लिए कुछ नहीं कर सकते और विदेशी दया-धर्म का मूल समझ कर कितना सेवा धर्म निबाहते हैं ।

मेरी रीड को कुष्ठ प्रधान वातावरण में रहते स्वयं को भी वह व्याधि लग गई । उन्हें अमेरिका वापस बुलाया गया, पर उनने यह कहकर इन्कार कर दिया कि मैंने सारा जीवन उद्देश्यों के लिए सौंपा है । उससे पीछे कदम नहीं हटा सकती । वह स्वयं पीड़ित हो गईं, पर उस रोग के रोगियों के कल्याण के लिए जो संभव था, आजीवन करती रहीं ।

उड़ीसा की साहसी प्रतिभाएँ

उत्कल में उन दिनों नारी वर्ग बहुत पिछड़ी दशा में था । शिक्षा नाम को भी न थी । घर के पिछड़ों में कैद रहते हुए त्रास सहते-सहते उनका व्यक्तित्व ही गया-बीता हो गया था । किसी नारी को स्वतंत्र जीवन जीने की सुविधा ही न थी । ऐसे विषम समय में भगवान् की भक्ति को माध्यम बनाकर कई नारियाँ प्रकाश में आईं और अपना वर्चस्व तथा अन्यों का स्तर ऊँचा उठाने में समर्थ हुईं ।

उड़ीसा की प्रतिभावान प्रख्यात नारियों में गुडिया देवी, गौरी देवी, रत्नमणि देवी, अन्नपूर्णा देवी के प्रकाश में आते ही पिछड़े नारी समाज में जागृति की लहर दौड़ गई और रूढ़िवादियों की चें-चें भी कुछ दिन बाद बंद हो गई । उन दिनों महिला शिक्षा की दिशा में बहुत काम हुआ ।

नगर वधू से भिक्षुणी

श्रावस्ती की नगर वधू दुबलया भी आम्ब्रपाली की तरह अपनी कला के लिए उस क्षेत्र में प्रख्यात थी । उसकी एक मुस्कान के लिए संपन्न लोग सब कुछ निछावर करते थे । एक दिन वह भगवान् बुद्ध का दर्शन करने जैतवन गई । वहाँ उनका तप-तेज देखकर इतनी प्रभावित हुई कि केश मुड़ाकर भिक्षुणी बन गई । इस परिवर्तित जीवन से उसने दूर-दूर तक धर्म प्रचार करके असंख्यों का कल्याण किया । वैदिक इतिहास बताता है कि नारी अपने उज्ज्वल प्रखर रूप में नर से भी बढ़कर अनुदान प्रस्तुत करती रही है । भौतिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्रों में उसने वरीयता प्राप्त कर यह प्रमाणित कर दिया है कि अवसर मिलने पर वह क्या नहीं कर सकती ।

ब्रह्मचारिणी विवाहिता-रोमशा

वृहस्पति की पुत्री रोमशा ने इस शर्त पर देवता से दिव्य-भाव से विवाह किया था कि वे कहने भर की पत्नी रहेंगी, पर उनके गृहस्थ कार्यों एवं दांपत्य प्रयोजनों में अपना उपयोग न होने देंगी । वे नारी समुदाय की ज्ञान वृद्धि में अपना जीवन लगाती थीं । उनके पति ने उन्हें पूरा सहयोग दिया एवं वे आजीवन अध्यात्म क्षेत्र में अग्रणी भूमिका निबाहती रहीं ।

ब्रह्मवादिनी-गार्गी

राजा जनक ने एक बार सुदूर देशों के विद्वानों को आमंत्रित करके यह जानने का प्रयत्न किया कि वर्तमान काल में सबसे बड़ा ब्रह्मवेत्ता कौन है ? सर्वोच्च को १००० गौयें पुरस्कार में मिलनी थीं । पुरस्कार याज्ञवल्क्य जी लें, इसमें किसी को आपत्ति न थी, पर शास्त्रार्थ में ब्रह्मवादिनी गार्गी ने सभी को ललकारा और सभी प्रश्नकर्त्ताओं का समाधान किया । उनकी विद्वता और अनुभव की सभी ने छाप मानी । बृहदारण्यक उपनिषद् में इस शास्त्रार्थ की चर्चा है ।

विवेकिनां हि दायित्वमिदं यन्न्यूनता नहि ।
नारीशिक्षाविधौ स्याच्च दायित्वं प्रतिबोधिता ॥ ४२॥
निर्वाहाय तथैषां च मार्गदर्शनमिष्यते ।
सहयोगश्च दातव्यः शिक्षा योग्याऽप्यपेक्षते ॥ ४३॥
नार्याः शिक्षणमेतस्या बौद्धिकं व्यवहारगम् ।
भवेदीदृशमेवान्न यदाश्रित्य परिस्थितीः ॥ ४४॥
प्रतिकर्तुं समर्था सा भवेदिह तथा निजम् ।
परिवारं विधातुं च प्रोन्नतं प्रभवेदपि ॥ ४५॥
शिक्षां निरर्थकां दत्त्वा भाररूपां नहि श्रमम् ।
समयं चाऽपि तस्यास्तु नाशितुं युज्यते क्वचित् ॥ ४६॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भवेन्नारी स्वावलम्बं श्रिता शीलयुता भवेत् ।
न संकोचं गता चैवं भवेद् यच्छोचितुं तथा ॥ ४७॥
वक्तुं न क्षमता तिष्ठेद्दासीभावं व्रजेन्न च ।
गृहलक्ष्म्याः स्वरूपे सा स्वतो विकसिता भवेत् ॥ ४८॥
कौशलं चेदृशं तस्या भवेद् यद् यद्यपेक्ष्यते ।
अर्थोपार्जनमेषा तत्कर्तुं च प्रभवेदपि ॥ ४९॥
नराश्रयं विनैवैषा स्वयं दद्यादपि स्वकान् ।
आश्रयं सहयोगं च सर्वानन्यानपि क्वचित् ॥ ५०॥

भावार्थ–विचारशीलों का यह दायित्व है कि नारी शिक्षा में कमी न रहने दी जाय । उसे अपने महान उत्तरदायित्वों का ज्ञान कराया जाय । उसके निर्वाह के लिए मार्ग दिखाया जाय और सहयोग दिया जाय । उसके अनुरूप प्रशिक्षण व्यवस्था की नितांत आवश्यकता है । नारी का बौद्धिक एवं व्यावहारिक शिक्षण ऐसा हो, जिसके आधार पर उसे प्रस्तुत परिस्थितियों का सामना करते हुए, अपने संपर्क परिकर को समुन्नत कर सकना संभव हो सके । निरर्थक शिक्षा का भार लाद कर, उसका श्रम बर्बाद न किया जाय । नारी को स्वावलंबी बनने दिया जाय । वह शीलवती बनी रहे, किन्तु इतनी संकोची भी न बने जिससे सोचने, बोलने और करने की क्षमता ही चली जाय । उसे दासी न बनाया जाय । गृहलक्ष्मी के रूप में विकसित किया जाय । उसका कौशल ऐसा रहना चाहिए कि आवश्यकतानुसार उपार्जन भी कर सके । पराश्रित न रहकर वह समयानुसार दूसरों को आश्रय एवं सहयोग भी प्रदान कर सके ॥ ४२–५०॥

व्याख्या–नारी जो राष्ट्र की जननी और निर्मात्री है, वह अविकसित स्थिति में अंधेरे में भटक रही है । यदि समाज की प्रगति हमें अभीष्ट है, तो नारी को परावलंबन के गर्त से निकालकर उसे स्वावलंबी, सुसंस्कारी बनाना होगा । यह कार्य सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक शिक्षण द्वारा ही संभव है एवं इस दिशा में सभी अनिवार्य कदम उत्साहपूर्वक उठाए जाने चाहिए । यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि जहाँ भी, जिस भी समुदाय में स्वाभिमानी, सुसंस्कृत, श्रमशील नारी विद्यमान होती है, वह समाज निश्चित ही प्रगति करता है । ऐसे ही परिकर में देवत्व का अभिवर्धन संभव हो पाता है । यह सामूहिक दायित्व हम सबका है कि नारी का शील सुरक्षित बनाए रखें, उसे स्वावलंबी बनाएँ, ताकि वह अपनी विभूतियों का लाभ समाज को दे सके ।

नारी के शिक्षण हेतु स्तर के अनुरूप भिन्न-भिन्न उपाय अपनाने पड़ सकते हैं । इसका निर्धारण समाज की परिस्थिति एवं नारी की मनःस्थिति को देखकर ही किया जा सकता है ।

सुभाषचंद्र बोस की क्रांतिकारी महिला सेना

नेताजी सुभाषचंद्र बोस महिलाओं की उन्नति के लिए सदैव प्रयत्नशील रहे । उन्होंने स्त्रियों की क्रांतिकारी सेना तैयार की थी । वे कहते थे– "समाज के अंदर स्त्रियों का स्थान उच्च होना चाहिए और सार्वजनिक कार्यों में वे भी अधिक से अधिक होशियारी के साथ भाग ले सकें, इसके लिए उन्हें शिक्षा दी जानी चाहिए ।

समाज के पहिए

इस्राइल में विमान चालक तथा चीन में इंजन व ट्रेन ड्राइवर प्रायः महिलाएँ ही हुआ करती हैं । ब्रिटेन एवं अमेरिका में अनेक औद्योगिक फर्मों में पुरुषों के साथ-साथ स्त्रियाँ भी काम करती हैं । धीरे-धीरे अनेक देशों में उन्हें पुरुषों के समकक्ष कर्तव्य तथा अधिकार प्रदान किए जा रहे हैं । इसमें वहाँ की सरकार जनता व सामाजिक संगठनों का सहयोग उन्हें मिल रहा है । यह आवश्यक भी है, क्योंकि नर-नारी समाज रूपी गाड़ी के दो पहिए के समान हैं । एक के बिना दूसरे की तथा समाज की समग्र प्रगति संभव नहीं ।

फूलों से भी कोमल और वज्र से भी कठोर

येरुशलम का एक व्यक्ति शाम को अपने घर पहुँचा, तो देखा कि गृहस्वामिनी वहाँ नहीं थी । किन्तु उसके अनुपस्थित होने से उसे कोई विशेष असुविधा नहीं हुई । मेज पर खाना रखा हुआ था । साथ ही एक छोटा सा पत्र भी, जिसमें उसकी पत्नी ने अपना प्यार और दायित्व भाव भर दिया था । लिखा था– "प्रिय ! मैं सेना में बुला ली गई हूँ, भोजन कर लेना ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वह भोजन करके बैठा ही था, कि मोर्चे से उसकी पत्नी का फोन आया– "नए मोजे पहनना न भूलना, जो मैंने तुम्हारे लिए बुनकर रख छोड़े हैं । युद्ध के बाद मुलाकात होगी ।"

यह कोई कहानी नहीं, एक सत्य है जो इस्राइल में प्रचलित है । वहाँ के हर युवा पति को इस प्रकार के अकेलेपन का सामना करना पड़ सकता है । युद्ध काल में वहाँ की युवा स्त्रियाँ स्वेच्छा से राष्ट्र रक्षा में भाग लेती हैं, सैनिक बनकर । अन्य देशों में युद्धकाल में युवकों की अनिवार्य रूप से भर्ती की जाती है, पर इस्राइल ही एक ऐसा देश है, जहाँ की नवयुवतियों को भी अनिवार्य रूप से सेना में भर्ती किया जाता है । इससे नारी का एक और रूप उजागर हुआ है कि वह मात्र भावुक और कोमल ही नहीं, कठोर और राष्ट्र रक्षा में भी समर्थ है । यों तो सभी देशों में, सभी समय में, कुछ ऐसे नारी-रत्नी हुए हैं, जिन्होंने वीरता और युद्ध कौशल में पुरुषों का-सा ही जौहर दिखाया है, पर जहाँ तक समस्त नारी जाति का प्रश्न है, वह तो इस क्षेत्र में पुरुष से पीछे रही है । रणक्षेत्र के मामले में अब तक पुरुष वर्ग का लगभग एकाधिकार रहा है । किन्तु इस्राइल की नारी ने इस एकाधिकार को तोड़कर रख दिया है । पिछले बीस वर्षों में वहाँ की नवयुवतियाँ इस्राइली सेना की प्रधान अंग बन चुकी हैं । इस दृष्टि से वे विश्व की श्रेष्ठ महिला सैनिक कही जा सकती हैं ।

आज तक नारी को कोमलता और दया-ममता की मूर्ति ही माना जाता रहा है । पर क्या नारी मात्र कोमल और भावनाशील ही है । नहीं, समय पड़ने पर वह अपने नारी सुलभ गुणों की रक्षा करते हुए भी निर्भय, कठोर और भावुकतारहित होकर, युद्ध जैसे कार्य में भी अनिवार्य सहयोग दे सकती है । नारी का यह पक्ष उजागर होने में कोई बुराई नहीं है । क्योंकि वह कोमलांगी और पुरुष के संरक्षण में सुरक्षित रहने वाली छुई-मुई गुड़िया बनी रहे ? उसमें भी शारीरिक, समर्थता और बौद्धिक परिपक्वता आनी चाहिए । जहाँ प्रेम, दया, करुणा और ममता लुटाने की बात हो अवश्य लुटाए, पर यदि वह अपने में बौद्धिकता, कठोरता और निर्भयता जैसे गुणों को, जो आज तक पुरुषों की बपौती रहे हैं, का विकास कर सके, तो वे देश और समाज का तो अधिक काम कर ही सकती है । उन्हें अपनी आत्मरक्षा के लिए भी परमुखापेक्षी नहीं बनना पड़ेगा ।

विवेकशीलों का यह विशिष्ट और अनिवार्य कर्तव्य है कि वह नारी को उसके विकसित स्वरूप तक पहुँचाए, स्वावलंबी और आत्म निर्भर बनाए तथा उसे समता के क्षेत्र में अग्रगामी बनाए ।

स्त्रष्टा की समग्र संरचना

सृष्टि निर्माण का कार्य पूरा हो गया, तो ब्रह्माजी ने सभी प्राणी बुलाए और उनकी संरचना में जो कमी रह गई हो, उसे पूरा करा लेने के लिए कहा । प्राणियों ने अपनी-अपनी कमियाँ बताईं, फलतः ब्रह्मा जी ने किसी का पूरा, किसी का अधूरा सुधार कर दिया । अब मनुष्य की बारी आई, उनमें से पहले नारी को बुलाया गया । उसने कहा– "मैं रूपवान् तो बहुत हूँ, पर कभी अपने जैसी दूसरी किसी को देखती हूँ, तो जल-भुन जाती हूँ । ऐसी कृपा करें कि मेरी जैसी और कोई न हो ।" ब्रह्मा जी ने उसे सांत्वना दी और एक दर्पण हाथ में थमा दिया, कहा– "बस एक ही सहेली तुम्हारे जैसी इस सृष्टि में रहेगी । जब इच्छा हुआ करे, इस पर दृष्टि डालकर उस सहेली से भेंट कर लिया करो, अन्यथा वह भी तुमसे ओझल रहेगी ।"

नथ का प्रदर्शन

एक गरीब किसान ने अपनी बहू के बहुत आग्रह पर उसके लिए नथ बनवा दी । बहू को जल्दी पड़ी थी कि कैसे सब लोग उसकी नथ को जानें और प्रशंसा करें । वह सबसे पहले मंदिर के पुजारी के पास गई । चरण छूकर प्रणाम किया । पुजारी समझ गए कि आज दोपहर को प्रणाम करने का क्या राज ? पुजारी जी ने कहा– "बेटी, नथ देने वाले को धन्यवाद दे । पर कभी-कभी उसे भी याद कर लिया कर, जिसने नाक दी ।"

महिला को समझ में आ गया कि बड़प्पन प्रदर्शन में नहीं है ।

समझाने का तरीका

राहगीर को काशी जाना था, सो रास्ता चलते समय, उसकी दृष्टि मील के पत्थर पर पड़ी । काशी की दूरी और दिशा का संकेत उस पत्थर पर खुदा था । राहगीर रुककर वहीं बैठ गया, कहने लगा– "अंकन गलत नहीं हो सकता । प्रामाणिक लोगों ने लिखा है । काशी आई । अब आगे जाने की क्या जरूरत रही ?" कोई समझदार उधर से निकला और पत्थर के पास आसन जमाकर बैठने का कारण जाना, तो कहा– "पत्थर पर संकेत भरहै । काशी पहुँचना है, तो पैरों से चलकर दूरी पार करनी होगी ।" भोले व्यक्ति ने अपनी भूल मानी और बिस्तर समेट कर चल पड़ा, पर बात समझदारों को समझाया जाना अत्यंत कठिन है । वे शास्त्र

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पढ़ते और सुनते रहते हैं और सोचते रहते हैं, इतने भर से धर्म धारणा का, आत्म कल्याण का उद्देश्य पूरा हो जाएगा किन्तु नारी को संकेत भर चाहिए । एक बार शिक्षण की दिशा मिलने पर वह अपना मार्ग बना लेती है ।

गलती समझी एवं सुधारी

दार्शनिक हिक्री उन दिनों तुंबा में रहते थे । कई लोग उनसे उलझी गुत्थियाँ सुलझाने संबंधी परामर्श करने आते । एक दिन एक व्यक्ति अपनी पत्नी समेत उनके पास पहुँचा और उसके आलस्य तथा कंजूसी की बुराई करने लगा । सचमुच यह दोनों बुराइयाँ उसमें थीं भी । हिक्री ने उस औरत को अपने पास बुलाया । एक हाथ की मुट्ठी बाँधकर उसके सामने की और पूछा– ''यदि यह ऐसे ही सदा रहा करे, तो क्या परिणाम होगा, बताओ तो लड़की ।'' औरत सिटपिटायी तो, पर हिम्मत समेट कर बोली– ''यदि सदा यह मुट्ठी ऐसी ही बँधी रही, तो हाथ अकड़कर निकम्मा हो जाएगा ।''

हिक्री इस उत्तर को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और दूसरे हाथ की हथेली बिल्कुल खुली रखकर फिर पूछा– ''यदि यह हाथ ऐसे ही खुला रहे, तो फिर इस हाथ का क्या हस्र होगा, जरा बताओ तो ।'' औरत ने कहा– ''ऐसी हालत में यह भी अकड़ कर बेकार हो जाएगा ।'' हिक्री ने उस औरत की भरपूर प्रशंसा की और कहा– ''यह तो बुद्धिमान भी है और दूरदर्शी भी । मुट्ठी बँधी रहने और हाथ सीधा रहने के नुकसान को यह अच्छी तरह जानती है । पति-पत्नी नमस्कार करके चले गए । औरत रास्ते भर संत के प्रश्नों पर बराबर गौर करती रही और घर जाकर पति की सहायता करके अधिक कमाना और बचत को खुले हाथ से दान करना आरंभ कर दिया ।

व्यस्तता के गुण

नारी को उपेक्षित छोड़ देने के कारण ही अनेक दुर्गुण पनपते हैं । यदि उस पर सचमुच ध्यान न दिया जा सके एवं उसे भी कुछ दायित्व सौंपकर स्वावलंबन की शिक्षा दी जा सके, तो ऐसी कोई वृत्ति पनपने का प्रश्न ही नहीं उठता ।

एक सेठ का पुत्र व्यापार में बहुत व्यस्त रहता था । घर-गृहस्थी की ओर ध्यान नहीं देता था । उसकी पत्नी सुंदर बहुत थी । काम-धंधा कुछ था नहीं । बैठे बैठे श्रृंगार किया करती । एक दिन उसने दासी के कान में कहा– ''कोई सुंदर सा युवक ढूँढ़ना, मन मचलता है ।'' दासी ने यह बात उसके ससुर से कह दी । उनने ठाली बैठने की यह परिणति समझी । दूसरे दिन से बहू को घर-व्यापार का ढेरों काम सौंप दिया । वह सबेरे जल्दी उठकर गई, रात तक निरंतर काम में लगी रही । दासी ने ससुर के संकेत पर बहू से किसी युवक को ढूँढ़ने की बात फिर पूछी, तो उसने कहा– ''अब काम में मन लग गया है, सो और कुछ सोचने की फुर्सत ही नहीं मिलती ।'' व्यस्तता में बुद्धि, स्वास्थ्य, धन, कौशल, प्रतिभा आदि बढ़ाने के अतिरिक्त एक गुण चरित्र रक्षा का भी है ।

अहंता मिटी

अहंकार को मिटाने एवं विनम्रता की शिक्षा देने हेतु कोई भी घटनाक्रम लिया जा सकता है । शाल्मली का एक वृक्ष था-बहुत बड़ा, ऊँचा भी और चौड़ा भी । पास में छोटे-छोटे झाड़-झंखाड़ भी उगे हुए थे । एक साधु उधर से निकले । दोनों के कुशल समाचार पूछे, वृक्ष से भी और झाड़-झंखाड़ से भी । दोनों के बीच परस्पर संबंध कैसे हैं ? इस बात को भी उनने लगे हाथों पूछ ही लिया । विशाल वृक्ष ने अपने बड़प्पन की विस्तारपूर्वक प्रशंसा की और सौभाग्य सराहा । साथ ही पड़ोसी झाड़ियों का उपहास उड़ाया । झाड़ियाँ क्या कहतीं । उन्होंने अपनी स्थिति पर संतोष किया और कहा, जिस स्थिति में भी वे हैं, प्रसन्न हैं । बड़े प्राणियों को न सहीं, छोटों को ही छाया और आश्रम प्रदान करती हैं ।

बहुत दिन बाद साधु इसी रास्ते फिर वापस लौटे । वृक्ष का पता न था और झाड़ियों का विस्तार हो चला था ।

पूछ तो पता चला कि एक बार भयंकर तूफान आया था । उसकी चपेट में अनेक वृक्ष आए और वह शाल्मली भी उसी चक्रवात में धराशायी हो गया । साधु ने दुख मनाया, साथ ही झाड़ियों से पूछा– ''आप लोग उस कुचक्र से कैसे बच गए ?''

झाड़ियों ने कहा– ''देव ! हमें अपनी तुच्छता का भान था, सो तूफान आते ही सिर झुका लिया, तूफान ऊपर से उतर गया । वृक्ष अकड़ा रहा और अंधड़ से टकरा कर धराशायी हो गया ।''

अहंता और नम्रता के अंतर पर विचार करते हुए साधु अपने रास्ते आगे बढ़ गए ।

विद्वत्ता का मद

कभी-कभी यह सिखावन इसलिए अनिवार्य हो जाता है कि व्यक्ति अपने व्यर्थ के अहंकार में, विद्वत्ता के मद में चूर भूल जाता है कि वह अभी अपूर्ण है । उज्जयिनी के महाकवि माघ को

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अपने पांडित्य का बड़ा अभिमान था । कभी-कभी उनके आचरण से उसकी झलक भी मिलती रहती थी, पर उनको छेड़ने का किसी को साहस न होता ।

एक बार माघ राजा भोज के साथ वन विहार से लौट रहे थे । मार्ग में एक झोंपड़ी पड़ती थी । एक वृद्धा उसके पास बैठी चरखा कात रही थी । माघ ने वही अभिमान प्रदर्शित करते हुए पूछा- "यह रास्ता कहाँ जाता है ?" वृद्धा ने माघ को पहचान लिया, हँसकर बोली- "वत्स ! रास्ता कहीं नहीं आता-जाता । उस पर आदमी आया-जाया करते है, आप लोग कौन हैं ?" "हम यात्री हैं" -माघ ने संक्षिप्त उत्तर दिया । वृद्धा ने फिर मुस्कराते हुए कहा- "तात् ! यात्री तो सूर्य और चंद्रमा दो ही हैं ?" सच-सच बताओ आप लोग कौन हैं ?" माघ थोड़ा चिंतित होकर बोले- "माँ ! हम क्षणभंगुर मनुष्य हैं ।" वृद्धा भी थोड़ा गंभीर होकर बोली- "बेटा ! यौवन और धन - क्षणभंगुर तो यही दो हैं, पुराण कहते हैं, इन पर कभी विश्वास नहीं करना चाहिए ।" माघ को चिंता थोड़ी और बढ़ी पर तो भी उन्होंने उत्तर दे ही डाला- "हम राजा हैं ।" उन्होंने सोचा संभवतः वृद्धा इससे डरेगी, पर उसने तत्काल उत्तर दिया- "नहीं भाई, आप राजा कैसे हो सकते हैं, शास्त्र ने तो यम और इंद्र दो को ही राजा माना है ।" अपनी हेकड़ी छुपाते हुए माघ ने फिर उत्तर दिया- "नहीं माई, हम तो सबको क्षमा करने वाली आत्मा हैं ।" वृद्धा ने बिना रुके उत्तर दिया- ' 'पृथ्वी और नारी की क्षमाशीलता की तुलना आप कहाँ कर सकते हैं, आप तो कोई और ही हैं ।"

निरुत्तर माघ ने कहा- "माँ ! हम हार गए, अब रास्ता बताओ ?" पर वृद्धा उन्हें इतने शीघ्र मुक्त करने वाली नहीं थी, फिर बोली- "महानुभाव ! संसार में हारता कोई नहीं, जो किसी से कर्ज लेता है या अपना चरित्र बल खो देता है, बस हारने वाले इन्हीं दो कोटि के लोग होते हैं ।" इस बार माघ कुछ न बोले, चुप होकर अपराधी से खड़े रहे । वृद्धा ने कहा- "महापंडित, मैं जानती हूँ कि आप माघ हैं, आप महाविद्वान हैं, पर विद्वत्ता की शोभा अहंकार नहीं विनम्रता है ।" यह कहकर बुढ़िया चरखा कातने लगी और लज्जित माघ आगे चल पड़े । नारी के लिए भी कभी ऐसी ही सिखावन की आवश्यकता पड़ सकती है । उसका सहज रूप वैसे विनम्रता का है, पर आवश्यकता कड़ी शिक्षा की भी पड़ सकती है ।

पतिव्रत का अभिमान ठीक नहीं

अहंकार तो सत्कर्म का भी हानिकारक है, ऐसे में सही समय पर शिक्षा मिलनी जरूरी है । यह व्यावहारिक स्तर पर ही हो सकता है ।

एक बार एक स्त्री पहाड़ पर धान काट रही थी । इतने में एक दुष्ट मनुष्य उधर आया और उसके साथ दुष्टता करने पर उतारू हो गया । पहले तो स्त्री ने आत्म रक्षा के लिए लड़ाई-झगड़ा किया, पर शरीर से दुर्बल होने के कारण जब उसे विपत्ति आती दीखी, तो ईश्वर का नाम लेकर पहाड़ से नीचे कूद पड़ी । ईश्वर ने उसकी रक्षा की । उसे जरा भी चोट न लगी और प्रसन्नतापूर्वक घर चली गई ।

अब उसे अपने पतिव्रत का अभिमान हो गया । हर किसी से शेखी मारती कि मैं ऐसी सतवंती हूँ कि पहाड़ से गिरने पर भी मुझे चोट नहीं लगती । पड़ोसी इस बात पर अविश्वास करने लगे और कहा ऐसा ही है, तो चल हमें आंखों के सामने पहाड़ पर से कूद कर दिखा । दूसरे दिन उस स्त्री ने सारे नगर में मुनादी करा दी कि आज मैं पहाड़ पर से कूदकर सतवंती होने का परिचय दूँगी । सभी गाँव इकट्ठा हो गया और उसके साथ चल पड़ा । वह पहाड़ पर से कूदी तो उसकी एक टाँग टूट गई । मरते-मरते मुश्किल से बची । उस असफलता पर उसे बड़ा दुख हुआ और दिन-रात खिन्न रहने लगी । उधर से एक ज्ञानी पुरुष निकले, तो स्त्री ने अपनी इस असफलता का कारण पूछा । उन्होंने बताया कि "पहली बार तू धर्म की रक्षा के लिए कूदी थी, इसलिए धर्म ने तेरी रक्षा की । दूसरी बार तू अपनी प्रशंसा दिखाने और अभिमान प्रकट करने के उद्देश्य से कूदी, तो यश, कामना और अभिमान ने तेरा पैर तोड़ दिया ।"

स्त्री को अपनी भूल मालूम हुई और उसने अपना व्यर्थ का घमंड छोड़ दिया ।

लज्जा- सर्वोत्तम सौंदर्य प्रसाधन

नारी का सहज रूप शील प्रधान है । वही उसका सबसे बड़ा आभूषण भी है ।

अरस्तू की एक कन्या थी । नाम था पीथिया । अरस्तू के शिष्य सिकंदर की रानियाँ एक दिन गुरुगृह गईं और आतिथ्य के उपरांत उनने पीथिया से पूछा- "चेहरे को अधिकाधिक सुंदर बनाने के लिए क्या उबटन लगायें ?" पीथिया ने कहा- "उनका सबसे बड़ा सौंदर्य है-लज्जा ।" उसे वे बनाए रखें, तो अधिक उन्हें कुछ करने की आवश्यकता नहीं । सौंदर्यवान वही है, जो शीलवान भी है ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जैसी हूँ, वैसी ही रहूँगी

अपने सहज स्वाभाविक रूप में ही नारी की शोभा है, सम्मान है । जब भी कृत्रिमता का समावेश होता है, तो वह कुरुचिपूर्ण लगता है ।

प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री की पत्नी श्रीमती ललिता शास्त्री ने अपने जीवन के रोचक प्रसंग सुनाते हुए बताया –

''जब मैं पहली बार अपने पति के साथ रूस यात्रा के लिए तैयार हुई, तो मुझे बड़ा डर लग रहा था । मैं सोच रही थी कि मैं सीधी-साधी भारतीय गृहिणी हूँ । राजनीति का मुझे ज्ञान नहीं, विदेशी तौर-तरीकों का पता नहीं । कहीं मुझसे कोई ऐसे प्रश्न न किए जायें, जिसका उत्तर मैं ठीक से न दे पाऊँ और तब मेरे पति अथवा देश का गौरव कुछ घटे अथवा उनकी हँसी हो । किन्तु फिर मैंने यह निश्चय करके अपना डर दूर कर लिया कि में एक महान देश के प्रधानमंत्री की पत्नी के रूप में अपने को प्रस्तुत नहीं करूँगी । मैं तो सबके सामने अपने को एक साधारण भारतीय गृहिणी के रूप में रखूँगी । मैंने वहाँ जाकर अपने को एक गृहिणी के रूप में ही पेश किया । वहाँ के अच्छे लोगों ने मुझसे घर-गृहस्थी के विषय में ही बातचीत की, जिसका उत्तर देकर मैंने सबको संतुष्ट कर दिया । इस प्रकार मैंने एक बहुमूल्य अनुभव यह पाया कि मनुष्य वास्तव में जो कुछ है, यदि उसी रूप में दूसरों के सामने पेश करे, तो उसे कोई असुविधा नहीं होती और उसकी सच्ची सरलता उपहास का विषय न बनकर स्नेह एवं श्रद्धा का विषय बनती है ।''

वनस्थली एवं हीरालाल शास्त्री

राजस्थान के हीरालाल शास्त्री साधारण अध्यापक थे । उनने नौकरी से पेट पालते रहने की अपेक्षा नारी शिक्षा को जीवन का लक्ष्य बनाया और एक छोटे देहात में अपने बलबूते छोटा कन्या विद्यालय चलाने लगे । लगन और उपेक्षा के आधार पर किए गए कामों में जमीन-आसमान जितना अंतर होता है । लगनपूर्वक चलाए गए कन्या विद्यालय की सार्थकता और लोकप्रियता आकाश चूमने लगी । समर्थन की कमी न रही । छप्पर के नीचे आरंभ किया गया वनस्थली बालिका विद्यालय देश की मानी हुई शिक्षण संस्थाओं में से एक है । शास्त्री जी के प्रति जनता की अपार श्रद्धा थी । लोकसेवा ने उन्हें राजस्थान के मुख्यमंत्री पद पर प्रतिष्ठित किया । उनकी स्मृति में डाकखाने की टिकटें तक छिपीं । इस महान् लोक सेवी के पीछे नारी (बालिका) की प्रेरणा ही छिपी हुई थी ।

साधन हीन होने पर भी विकास किया

दादी मेरी अमेरिका की एक घोर परिश्रमी महिला का नाम है । वह १८ वर्ष की आयु में विधवा हो गई । पढ़ी-लिखी न होने पर भी उसके उत्साह ने चित्रकला सीखने की ठानी । साधन न होने पर भी प्रकृति के पेड़-पौधे देखकर वह चित्र बनाने लगी । पहले चित्र तो कुछ पैसे में ही बिके, पर उसने उत्साह ठंडा न होने दिया । अच्छे चित्र बनाने लगी और उनके पैसे भी अच्छे मिलने लगे । उत्साह बढ़ा तो चित्रों का स्तर भी बढ़ते लगा और वे संसार भर में प्रसिद्ध हो गए । चित्रों की बिक्री के धन से उसने महिला कल्याण का एक ट्रस्ट बना दिया । वह १०० वर्ष तक जीती रही । तब तक निरंतर चित्र बनाती रही । कोई १५०० चित्र उसने बनाए, जो कई लाख रुपये के बिके । उसकी जन्म शताब्दी पर अमेरिका के चार जीवित राष्ट्रपतियों ने शुभकामना भेजी । दादी मेरी के चित्र विश्वविख्यात हैं । बिना अध्यापक के इस प्रकार कलाकारिता का यह एक अनोखा उदाहरण है ।

बुरका निकाल फेंका

सन् १९३० की बात है । मिस्र की एक विचारशील महिला विदेश का दौरा करने आई और अपने देश में भी नव जागरण की हवा भरने लगी । नाम था उसका शानबी । जब जलयान पर भारी भीड़ उनके स्वागत के लिए आई, तो उनने सबके सामने अपना बुरका समुद्र में फेंक दिया । इसकी नकल उपस्थित सैकड़ों महिलाओं ने की । बुरका विरोधी आंदोलन वहीं से तेजी के साथ चल पड़ा ।

वस्तुतः नारी दासी नहीं है, गृहलक्ष्मी है । उसे अवसर तो मिले, दिशाधारा तो मिले, वह क्या नहीं कर सकती ?

श्रमशील रानी

धनी होने से क्या होता है । परिश्रमी जीवन में जो आनंद है, वह ठाली बैठे वैभवशाली जीवन में कहाँ ?

इंग्लैंड के बादशाह एडवर्ड सप्तम की पत्नी अलेक्जेण्ड्रा आरंभ से ही बड़ी परिश्रमशील थीं । निठल्ले बैठना उन्हें तनिक भी न सुहाता था, पर घर के सब कामों के लिए नौकर थे । वे करें तो क्या करें ? उनने गरीबों के

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लिए अपने हाथ से कपड़े सीकर बाँटने का काम आरंभ किया और उसे जीवन भर चलाया । ठाली रहने के कारण उत्पन्न होने वाले दुर्गुणों से भी बचीं, पुण्य-परमार्थ की भागीदार भी बनी ।

स्वावलंबन में गौरव

गाँधी जी की बहिन गोकी बाई विधवा हो गई । उनके लिए डॉ० प्राण जीवन दास ने दस रुपया मासिक भेजना आरंभ कर दिया । दुर्भाग्य से गोकी बाई की एक लड़की थी, वह भी विधवा होकर माँ के पास आ गई । दोनों ने मिलकर आटा पीसने का काम प्रारंभ किया और यह समाचार गाँधी जी के पास भेजा । बापू ने उन्हें प्रोत्साहित ही किया । दूसरों की सहायता लेने की अपेक्षा अपने पुरुषार्थ से कमाने और कम में खर्च चलाने में मनुष्य का अपयश नहीं, गौरव होने की बात लिखी ।

परिवारस्य कार्येषु नरः कुर्यात् सदैव च ।
सहयोगं गृहिण्याः सा समयं येन चाप्नुयात् ॥ ५१॥
व्यवस्था स्वच्छता हेतोः सज्जा हेतोश्च सद्मनः ।
वार्तालापे कलानां च कौशलेऽथापि सा स्वयम् ॥ ५२॥
समस्यानां समाधाने भूमिका निर्वहेत् स्वकाम् ।
अतिव्यस्तस्थितौ स्यान्न किमप्याचरितुं क्षमा ॥ ५३॥
कुटुम्बदिनचर्याऽथ व्यवस्थाया विधिश्च सः ।
परंपरा तथैवं स्याद् येन पाकविधावुत ॥ ५४॥
स्वच्छतायां न नष्टः स्यात् सर्वोऽस्याः समयो महान् ।
ईदृशी सुविधा यत्र तत्रत्या गृहिणी नहि ॥ ५५॥
अनुभवत्यथ काठिन्यं विकासं योग्यतामपि ।
सुसंस्कारानवाप्तुं यत् कुटुम्बाय महत्वगम् ॥ ५६॥
नार्याः श्रमस्य कर्तव्य उपयोगो विशेषतः ।
युगं नवं ततो नारीप्रधानं भविता शुभम् ॥ ५७॥
सृजनस्य नवस्याऽस्यां क्षमता भावनात्मिका ।
बाहुल्येनास्ति चागामिदिवसेषु भविष्यति ॥ ५८॥
समाजो भावना मुख्यः स्तरस्याऽस्य विनिर्मितेः ।
क्षमता मुख्यतो दत्ता स्त्रष्ट्रा नार्यां न संशयः ॥ ५९॥
निर्माणाय युगस्यापि नेतृत्वाय स्त्रियस्ततः ।
नः प्रमादो विलम्बो वा कार्यो वर्चः परिष्कृतौ ॥ ६०॥

भावार्थ–घर परिवार के कार्यों में पुरुष नारी का हाथ बँटाए । उन्हें इतना अवकाश दे कि परिवार की व्यवस्था, स्वच्छता, सज्जा ठीक प्रकार रख सके । वार्तालाप कला–कौशल एवं समस्याओं के समाधान में अपनी भूमिका निभा सके । घोर व्यस्तता की स्थिति में तो वे कुछ भी कर सकेंगी । पारिवारिक दिनचर्या, विधि–व्यवस्था और परंपरा ऐसी रहे, जिसमें उसे पाकशाला–स्वच्छता में ही सारा समय न खपाना पड़े । ऐसी सुविधा जहाँ भी होती है, वहाँ नारी को सुविकसित, सुसंस्कृत एवं सुयोग्य बनने में विशेष कठिनाई नहीं रह जाती । यह पारिवारिक हित में बहुत महत्वपूर्ण है । नारी–श्रम का अधिक महत्वपूर्ण उपयोग करने की आवश्यकता है । हे सज्जनो ! नवयुग नारी प्रधान होगा । नव सृजन की भावनात्मक क्षमता की उसी में बहुलता है । अगले दिनों भावना प्रधान समाज बनेगा । उस स्तर के निर्माण की क्षमता नारी में ही स्त्रष्टा ने प्रमुखतापूर्वक प्रदान की है, इसमें संदेह नहीं । युग का निर्माण और नेतृत्व करने के लिए उसका वर्चस्व निखारने में न विलंब किया जाय, न प्रमाद बरता जाय ॥ ५१–६०॥

व्याख्या–आज समाज में चलन यही है कि पत्नी को चहारदीवारी में बंद रहकर घर की सुव्यवस्था

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बनानी चाहिए एवं जहाँ तक संभव हो पुरुष, बालकों व अन्य पारिवारिक सदस्यों के विकास हेतु खपना चाहिए । सदियों से वह यही करती आई है । पर्दाप्रथा जैसी कुरीतियों ने ऐसी त्रासदी और बढ़ाई है ।

यह मानव समुदाय के हित में ही है कि पुरुष व स्त्री दोनों मिल-जुलकर परिवार रूपी रथ की गाड़ी खीचें । नारी को इतना समय मिलना चाहिए कि वह परिवार की सुसंस्कारिता, सुव्यवस्था बनाए रखने के अतिरिक्त स्वयं की सर्वांगपूर्ण प्रगति के लिए समय निकाल सके । यह कदम पुरुष समुदाय की ओर से ही उठना चाहिए, क्योंकि इसमें नारी के साथ-साथ उनका हित-साधन भी होता है । विश्व संतुलन नारी के पक्ष में जा रहा है । अब कहीं-कहीं नारी जागृति के स्वर मुखरित होने लगे हैं । जहाँ अवसर मिला है, नारी स्वयं आगे आई है व परावलंबन की जंजीरें तोड़कर उसने प्रगतिशील भूमिका निभाई है ।

यहाँ ऋषि कहते हैं कि आने वाला समय मूलतः भाव प्रधान होगा एवं इसका सुसंचालन नारी शक्ति करेगी । ऐसी स्थिति में यह न केवल स्रष्टा की इच्छा के विपरीत है, अपितु एक तरह से मनुष्य की तुच्छता ही है कि वह नारी को विकास हेतु आगे बढ़ने देने का अवसर न दे । नया समाज लाने, नव निर्माण करने एवं मानव में देवत्व, धरती पर स्वर्ग जैसी परिस्थितियों को उतारने के लिए नारी की शक्ति को निखारना, उसे प्रखर बनाना समय की एक महती आवश्यकता है । अगले दिनों नारी द्वारा विश्व का नेतृत्व किए जाने की संभावना इसलिए अधिक है कि पददलित वर्ग को अगले दिनों अनीति मूलक प्रतिबंधों से छुटकारा पाने का अवसर मिलने ही वाला है । ऐसी दशा में वे अपने को सुविकसित एवं सुयोग्य बनाने का प्रयत्न करेंगें, फलस्वरूप प्रकृति का पूर्ण सहयोग भी उन्हें मिलेगा और विश्व के नव निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका संपादित करेंगें ।

सरिता का समर्पण

सरिता भाग रही थी, सागर से मिलने के लिए । मार्ग में रेगिस्तान का बीहड़ पड़ता था । मरुस्थल की रेत सरिता को सोखे डाल रही थी । थोड़ी दूर जाकर वह मात्र गीली रेत हो गई । सपना टूट कर चकनाचूर हो गया । उद्गम स्रोत से वह जल लेकर पुनः तीव्र वेग से चल पड़ी । पर फिर उसकी वैसी ही दुर्गति हुई । ऐसा अनेक बार हुआ । झुंझलाकर निराश होकर उसने रेत से पूछा– "क्या सागर से मिलने का मेरा सपना कभी पूरा होगा ?" रेत ने कहा– "मरुस्थल को पार करके जाना तो संभव नहीं है, पर तू अपनी संपदा को बादलों को सौंप दे । वे तुझे सागर तक पहुँचा देंगे ।" अपने अस्तित्व को मिटाकर अद्भुत समर्पण का उससे साहस बन नहीं पा रहा था । पर रेत का परामर्श उसे सारगर्भित जान पड़ा । श्रद्धा ने समर्पण को प्रेरणा दी । बादलों पर बूँदों के रूप में सवार होकर वह अपने प्रियतम सागर में जा मिली ।

सच्चा समर्पण हो तो भक्त का भगवान से मिलन कठिन नहीं होता, नदी की तरह सुगम बन जाता है । पुरुष-नारी दोनों यदि सच्चे दिल से एक दूसरे की प्रगति चाहते हों, तो एक होकर चलना पड़ेगा । किसी एक के आगे बढ़ते रहने मात्र से तो यह संभव नहीं ।

जब घुले हैं, तो घृणा क्यों ?

आकाश ने पृथ्वी के ऊपर एक उपेक्षावृत्ति डाली और व्यंग्यपूर्वक कहा– "देखता हूँ आजकल तुम ऐश्वर्य से फूली नहीं समातीं, पर यह न भूलना यह सब मेरी कृपा का फल है, मेरे ही प्रकाश, मेरे ही पवन और मेरे ही दिए पदार्थों के कारण तुम लहलहा रही हो ।" पृथ्वी बोली–"स्वामी जब आप ही मुझमें घुले हुए हैं, तो फिर नाहक घृणा क्यों करते हैं ।" पृथ्वी की नम्रता के आगे आकाश की आँखें झुक गईं, कुछ बोलते न बना । पुरुष व स्त्री के संबंध आज समाज में आकाश एवं पृथ्वी के समान ही हैं । यदि दोनों मिलकर एक रहे, पुरुष नारी को आगे बढ़ने का अवसर दे, तो कहीं वैमनस्य न रहे, प्रगति सतत होती रहे ।

किसी को भी छोटा न बताएँ

अपने बड़प्पन को सिद्ध करने के लिए लोग दूसरों को गिराने का प्रयत्न करते हैं, पर वे इसमें प्रायः सफल नहीं होते, उलटे अपने को ही बदनाम कर लेते हैं । उपाय दूसरा है, जिसकी सिखावन देते हुए एक अध्यापक ने छात्रों को समझाया । श्यामपट पर अध्यापक ने एक लकीर खींच दी और छात्रों से पूछा– "इसे बिना मिटाए छोटी करके दिखाओ ।" वैसा कोई भी न कर सका । सभी चुप बैठे थे । अध्यापक ने उस लकीर के समीप ही एक बड़ी लकीर खींच दी और कहा– "अब यह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

छोटी हो गई न ?'' लड़कों ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया ।

अध्यापक ने कहा– ''अपना बड़प्पन सिद्ध करने के लिए किसी को गिराने या नीचा दिखाने की आवश्यकता नहीं । अन्यों की तुलना में अधिक ऊँचा पुरुषार्थ किया जाय, तो सहज ही बड़प्पन हाथ लगेगा और किसी को छोटा सिद्ध करने की आवश्यकता न पड़ेगी ।'' पुरुष स्त्री का सहचर बनकर रहे, उसे प्रगति के अवसर देता रहे, इसी में उसका बड़प्पन है ।

नारी को सहज मिले अनुदान

विधाता ने एक बार मनुष्यों की सहायता करने के लिए देवदूत भेजा और कहा– ''जिसकी जो कामना हो, उसे पूरी कर दिया करें ।'' देवदूत अपने काम में तत्परतापूर्वक लगे रहे । अनुदान असंख्यों ने पाए, पर रोना-कलपना किसी का बंद न हुआ । संकटों से किसी को मुक्ति न मिली । इस असफलता से मनुष्य देवदूत और विधाता तीनों ही खिन्न थे । नारद को कारण का पता लगाने भेजा गया । पता चला कि मनुष्य दुर्गुणग्रसित है । जो पाते हैं, उन्हें अनाचार में लगा देते हैं, फलतः दरिद्रता मिटती नहीं, संकट कटता नहीं ।

विधाता ने देवदूत को वापस बुला लिया और निर्देश में नया परिवर्तन किया कि वे मात्र सद्गुणी-सदाचारियों की ही सेवा किया करें । अनाचारियों को वरदान न दिया करें । तब से अब तक वही क्रम चल रहा है । देवताओं की सहायता मात्र सज्जनों के रूप में नारियों को ही मिलती है । दुर्जन मनुष्यों की मनुहार अनसुनी होती और निरर्थक चली जाती है । मनुष्यों में सज्जनता का अंश नारी में सर्वाधिक है । इसलिए अनुदान उसे सहज ही मिले हुए हैं । यदि उनका लाभ सभी को मिलना है, तो उसका सम्मान भी होना चाहिए, नारी को आगे बढ़ाने के प्रयास भी सतत होने चाहिए ।

भावी प्रगति में नारी की भूमिका

स्टालिन कहते थे कि स्त्रियों को चिरकाल के उपरांत मानवोचित अधिकार मिले हैं । उस उत्साह में उनका पुरुषों की समता करने या श्रेष्ठता जताने की आकांक्षा उभरे, तो उसे उचित ही समझा जाना चाहिए । उन्हें अपनी प्रसुप्त क्षमताओं को उभारने का अवलंबन और प्रतियोगिता में विजयी होने का अवसर मिलना चाहिए । किन्तु इतना ही पर्याप्त न होगा । उन्हें दो कदम आगे बढ़कर यह कार्य विशेष रूप से अपने कंधों पर लेना चाहिए कि वे नई पीढ़ियों को प्रतिभावान बनाए । नई पीढ़ी ही राष्ट्र की सच्ची संपदा है । उसी की प्रगति पर सब की प्रगति निर्भर है । इस कार्य में स्त्रियां सदा पुरुषों से आगे रही हैं । इन दिनों तो उनकी भूमिका इस दिशा में और भी अधिक अग्रगामी होनी चाहिए ।

विद्वत्ता में और भी आगे भारती

मिथिला देश के महापंडित मंडन मिश्र का जगद्गुरु शंकराचार्य से शास्त्रार्थ हुआ । मंडन मिश्र हारने लगे, तो उनकी पत्नी भारती जो उन्हीं के समान विद्वान थीं, कहा कि अभी मिश्र जी के आधे अंग के रूप में मैं मौजूद हूँ । शास्त्रार्थ का उत्तरार्द्ध मैं पूरा करूँगी । शास्त्रार्थ लंबे समय तक चला । भारती की विद्वता देखकर सारा विद्वत समुदाय दंग रह गया । अंततः पति-पत्नी दोनों हार गए । तब दोनों ने शंकराचार्य से दीक्षा ली और वेद धर्म के प्रचार में जुट गए ।

नारी जागरण की सूत्र संचालिका रामा देवी

दुर्भाग्य ने जन्म से लेकर ढलती आयु तक रामा बाई का पीछा न छोड़ा । पिता-माता मरे, भाई-बहन उठ गए । ३० वर्ष में विधवा हो गईं । एक पुत्री गोद में थी । सहायकों में कोई अपना न दीखता था । ऐसी परिस्थितियों में रामादेवी किसी का आश्रय तकने की अपेक्षा अपने पैरों खड़ी हुईं । पिता जी कथा-पुराण कहते थे । संस्कृत के विद्वान थे । बचपन में वही पैतृक अनुदान उन्हें मिला था । वे कथा-पुराण कह कर अपनी आजीविका चलाने लगीं । साथ ही अपनी शिक्षा भी जहाँ-तहाँ भ्रमण करती हुई बढ़ा ली । अंग्रेजी ज्ञान बढ़ाने के बाद उन्हें इंग्लैंड जाने का अवसर भी मिला ।

वहाँ से लौटते ही वे नारी उत्कर्ष के काम में लग गईं । उनने महिलाओं के लिए कई विद्यालय और छात्रालय खुलवाए । जिन कुरीतियों के नीचे भारतीय नारी को निरंतर दबकर रहना पड़ता था, उन्हें उखाड़ने के लिए उनने कुछ उठा न रखा । उन्हीं का प्रयत्न था कि नारी जागरण के लिए अनेक संगठन बने और अपने प्रयत्नों में विरोधियों की चिंता न करते हुए बहादुरी के साथ जुट पड़े ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रूढ़िवादी समाज से टक्कर लेने वाली पार्वती देवी

माता पार्वती देवी अमृतसर में जन्मीं । क्वेटा में ब्याही गईं । दो वर्ष में ही विधवा हो गईं । वैधव्य की व्यथा को उनने अपने देश की सेवा में निछाबर करके हलका किया । उन दिनों गाँधी जी की आँधी चल पड़ी । स्वतंत्रता संग्राम जोरों पर था, अध्यापिका पद पर भी वे थोड़े ही दिन रहीं । इसके बाद उनने राष्ट्रीय महिला सभा और कुमारी सभा का गठन किया । रूढ़िवादी समाज से टक्कर लेते हुए यह स्थापनाएँ कर सकना उन दिनों जादू जैसा आश्चर्यजनक कार्य माना गया ।

माता पार्वती देवी सन् १९२२ से लेकर १९४२ तक छः बार जेल गईं और सात वर्ष तक कठोर यातनाएँ सहती रहीं । पंजाब में नारी जागरण का सूत्रपात उन्हीं ने किया । हजारों महिलाएँ उस क्षेत्र से स्वतंत्रता संग्राम में जेल गईं । कुरीतियों को तोड़ने में उनने पूरी साहसिकता का परिचय दिया । ८२ वर्ष की आयु में भी उनका पराक्रम युवकों जैसा बना रहा ।

महिला सुधार के लिए प्रयत्नशील-ज्योतिबा फुले

ज्योतिबा फुले का जन्म पूना के एक माली परिवार में हुआ था । अभिभावकों ने उन्हें इसलिए ऊँची शिक्षा दिलाई कि अच्छी कमाई करेगा । पर उनने तत्कालीन समाज पर दृष्टि डाली, तो उसे सुधारने के लिए प्रयत्न करना आवश्यक समझा । माली होने के कारण उन्हें अछूत समझा जाता था । ऐसी दशा में निजी कमाई करने की अपेक्षा समाज सुधार को उनने अधिक आवश्यक समझा । उनने अपने जैसे जैसे विचार वालों को लेकर एक समाज सुधार समिति गठित की और स्त्रियों तथा शूद्रों के साथ बरते जाने वाले अनाचार का विरोध प्रारंभ कर दिया । वे उस क्षेत्र में दूर-दूर तक जाते थे और भाषणों से तथा छोटे साहित्य से लोगों के विचार बदलने का प्रयत्न करते थे । उनकी धर्मपत्नी ने पति का पूरा-पूरा सहयोग किया । उसके प्रयास से 'महिला समिति', 'कन्या विद्यालय', विधवा विवाह आंदोलन' जैसे कई प्रगतिशील कार्य हाथ में लिए ।

अपने कार्यों के कारण वे महात्मा फुले के नाम से प्रख्यात हुए । उनके आंदोलनों का समूचे महाराष्ट्र पर भारी प्रभाव पड़ा ।

जिनने विधवाओं की शिक्षा में अपने को खपाया

सुब्बलक्ष्मी का विवाह आठ वर्ष की आयु में हुआ और वे दस वर्ष की होते-होते विधवा हो गईं । दक्षिण भारत के ब्राह्मण परिवारों में उन दिनों नारी शिक्षा का प्रचलन न था । तो भी सुब्ब के पिता ने साहस करके उन्हें पढ़ाया । मैट्रिक कराई । इसके बाद कान्वेंट कॉलेज में उन्होंने बी०ए० किया । कई जगहों से नौकरियों के आफर आए, पर उसने अपनी जैसी स्थिति की हिंदू विधवाओं के लिए शिक्षा व्यवस्था करने में जीवन लगाया । उनका स्थापित ट्रावनकोर का विधवा सदन अब तक भारी प्रगति कर चुका है । सुब्ब का जीवन उसी में खप गया ।

मन विषयों में लगा नहीं

नंदा संपन्न घर में विवाही थी । पर उसका मन विषय-भोगों में लगा ही नहीं । उसने अपनी माता प्रजापति गौतमी से प्रार्थना की, कि उसे इस पराधीनता से मुक्त कर परमार्थ जीवन का द्वार खोलने की आज्ञा दें, तथागत की शिक्षा से उसका परिवार भी बौद्ध धर्म में दीक्षित हुआ और नंदा को भिक्षुणी रूप में जन-कल्याण में संलग्न होने की आज्ञा मिल गई ।

खेमा से महा-प्रज्ञावती

महाराजा बिंबसार की बौद्धधर्म में निष्ठा थी । उनकी पत्नी खेमा आरंभ में विलास प्रिय थी, पर जब भगवान उनके घर भिक्षा के लिए आए, तो रानी ने अपना सिर उनके कमंडलु पर रख दिया और भिक्षुओं की तरह सत्प्रयोजनों में लगा देने का आग्रह किया । बिंबसार ने आपत्ति भी की । खेमा श्रावस्ती पहुँची और अपनी व्यवस्था बुद्धि से आश्रम को स्वर्गोपम बना दिया । तथागत उन्हें महाप्रज्ञावती कहकर संबोधित करते थे ।

मर्दानी रानी लक्ष्मीबाई

लक्ष्मी बाई रानी ने बचपन से ही घुड़सवारी तथा शस्त्र संचालन में प्रवीणता प्राप्त कर ली थी । वे कहा करती थीं कि यदि अवसर मिले तो स्त्रियाँ मर्दों से किसी प्रकार पीछे सिद्ध नहीं हो सकतीं । उनका विवाह झाँसी के राजा गंगाधर राव से हुआ । राजा के मर जाने पर उनने शासन अपने हाथ में सँभाला और एक फौज स्त्रियों की अलग से गठित की । अंग्रेज इस प्रकार का ताना-बाना बुन रहे थे कि रानी को पाँच हजार रुपया वार्षिक पेंशन देकर छुट्टी कर दी जाय । पर वे इसके लिए तैयार न हुईं । फौज ने उस क्षेत्र के अंग्रेजों

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

का सफाया कर दिया । इस पर अंग्रेजी फौज की बड़ी चढ़ाई झाँसी पर हुई । वे लड़ीं और कालपी तथा ग्वालियर से सहायता प्राप्त करने गईं । वह न मिली तो उनने स्वयं ही मोर्चा सँभाला और अंग्रेजों के दांत खट्टे कर दिए ।

गोलियों से उनका शरीर और घोड़ा बुरी तरह छलनी हो गया था । एक घास के ढेर में घुस कर उनने आग लगा ली, ताकि उनका शरीर अंग्रेजों के हाथ न पड़े । अंग्रेज सेनापति ने यह समाचार सुनकर कहा था– "इस देश में सच्ची मर्द एक ही थी लक्ष्मी रानी ।"

लड़की ने वंश चलाया

कर्नाटक के छोटे से गाँव उडुपी में नैष्ठिक ब्राह्मण के यहाँ एक मात्र संतान कन्या हुई । सभी उन ब्राह्मण श्री निर्मल पर दबाव डालने लगे कि दूसरा विवाह कर लें, शायद उससे पुत्र प्राप्त हो जाय, वंश चले । श्री निर्मल ने दृढ़ता से इसे अस्वीकार कर दिया । कन्या का नाम था–अक्का महादेवी । उन दिनों कन्याओं को शास्त्रज्ञान के अयोग्य माना जाने लगा था । श्री निर्मल ने अक्का को सभी शास्त्रों का अध्ययन कराया, ज्ञान दिया एवं आध्यात्मिक दिशा दी । रूढ़िवादी लोग निर्मल का उपहास करते, कहते– "क्या लड़की से वंश चलेगा ?" शिक्षा और वातावरण के प्रभाव से अक्का महादेवी का व्यक्तित्व विकसित होता गया । वे एक महान तपस्विनी, आदर्शवादी विदुषी के रूप में प्रसिद्ध हुईं और पिता का नाम रोशन कर दिया । आज भी लोग श्री निर्मल का नाम अक्का महादेवी के पिता के रूप में जानते हैं, उपहासकर्ताओं में से एक का भी नाम किसी को ज्ञात नहीं ।

भारत के राष्ट्र निर्माता जवाहरलाल नेहरू ने इंदिरा का लालन-पालन, उनकी शिक्षा-दीक्षा की व्यवस्था ऐसे सुव्यवस्थित ढंग से की थी कि बाद में उन्होंने न केवल नेहरू वंश का नाम रोशन किया, वरन समूचे राष्ट्र और विश्व में अपने व्यक्तित्व और कर्तृत्व की अमिट छाप छोड़ गईं ।

योग्यदायित्वनिर्वहि स्वस्थस्य वपुशस्तथा ।
तुलिताया मनोभूमेरनुभूतेस्तथैव च ॥ ६१ ॥
अपेक्षा कौशलस्यास्ते तेन चावसरस्त्वयम् ।
नार्या लभ्यते यत्नोऽत्र नूनं कर्तव्य इष्यते ॥ ६२ ॥
सुविधाश्च समा एता संयुक्ताः स्युस्तदैव तु ।
नारीं पुराणकालस्य स्तरं प्रापयितुं भवेत् ॥ ६३ ॥
वातावृतिं समानेतुं कृतस्येव युगस्य तु ।
उचितां भूमिकां वोढुं गृहिणी तून्नतस्तरा ॥ ६४ ॥
विधेया यत्नतो नारी नरेणैव गतेषु तु ।
दिनेष्वनीतियुक्तैश्च प्रतिबन्धैः सुपीडिता ॥ ६५ ॥
नीता दुर्गतिमद्याऽपि न सा तस्मादुदेत्यहो ।
अर्धांगिनीदशाहेतोः संकटैर्नर आवृतः ॥ ६६ ॥
प्रायश्चित्तमिदं तस्योत्साहेन द्विगुणेन हि ।
तस्या उत्थानकर्मैतद् विधेयं यत्नतो नरैः ॥ ६७ ॥

भावार्थ–महत्वपूर्ण उत्तरदायित्वों के निर्वाह में स्वस्थ शरीर, संतुलित मनोबल, अनुभव एवं कौशल अपेक्षित है । नारी को इस योग्य बनाने का अवसर मिलना आवश्यक है । ये सभी सुविधाएँ जुटाने से ही नारी को प्राचीनकाल की तरह समुन्नत स्तर तक पहुँचाया जा सकेगा । सतयुग का वातावरण वापस लाने के लिए नारी को उपयुक्त भूमिका निभा सकने योग्य स्तर का बनाया जाना चाहिए । पिछले दिनों नारी को अनीति भरे प्रतिबंधों में जकड़कर नर ने ही उसे दुर्गतिग्रस्त किया है । इसी से आज भी वह उठ नहीं पा रही है तथा अर्धांगिनी की दुर्दशा से नर भी संकटों से घिरा है । उसका प्रायश्चित यही है कि दूने उत्साह से उसके उत्थान की व्यवस्था बनाई जाय ॥ ६१–६७॥

व्याख्या–नारी में समुचित आत्मबल है । फिर भी समाज रूपी रणक्षेत्र में ऊँचा उठने के लिए उसे कौशल अर्जन, स्वास्थ्य संवर्द्धन एवं पुरुष के सहयोग की आवश्यकता है । अभी तक तो उसे पराधीनता के

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पाश में ही जकड़ा जाता रहा है । फलश्रुतियाँ सामने हैं । मध्यकाल के अनीति व दमन से भरे समय में पुरुष समुदाय ने नारी-शक्ति का दोहन भी किया व उसे पददलित भी । उसे दंड स्वरूप अवगति के गर्त में जाना पड़ा है । नारी की दुर्दशा का अर्थ है, नर का संकटों से घिरना । अब यदि सत्प्रवृत्तियों से भरा नया समाज बनता है, सतयुग लाना है तो नारी के प्रसुप्त मनोबल को उभारना एवं उसे परिपूर्ण सहयोग देना ही पुरुषों का प्रायश्चित हो सकता है । नारी में शक्ति का अजस्र स्रोत छिपा है । उसे उजागर करने भर की आवश्यकता है । जब जब भी अवसर आए हैं, उसने आगे बढ़कर मोर्चा अपने हाथ में लेकर, अपनी साहसिकता का परिचय दिया है ।

लड़के के वेश में वीर योद्धा नारी

भोपाल के पास एक गाँव में योद्धा क्षत्रिय परिवार था । लड़का था जोरावर, लड़की पद्मा, पिता ने दोनों को समान रूप से शस्त्र विद्या सिखाई । पिता के न रहने पर भाई कर्जदार हो गया । रियासत ने उसे जेल में बंद कर दिया । 'कर्जा कैसे चुके-भाई कैसे छूटे ?''-इसका उपाय सोचते हुए, लड़की ग्वालियर राजा की फौज में मर्दाना वेश बनाकर भर्ती हो गई । उसकी प्रतिभा असाधारण थी, सो जल्दी ही हवलदार बन गई । उम्र बढ़ने पर भी मूंछें न आईं, तो संदेह किया गया और उसे लड़की पाया गया । बात ग्वालियर महाराज तक पहुँची । उनने सारी परिस्थिति जानी । खजाने से रुपया भेजकर भोपाल का कर्जा चुका दिया । भाई जेल से छूटा । लड़की का विवाह प्रधान सेनापति से हुआ ।

वीर नारी का सम्मान करो

अमेरिका के यूनियन और कनफिडरेट पक्षों में उन दिनों गृह युद्ध चल रहा था । प्रेसीडेंट अब्राहम लिंकन यूनियन पार्टी में थे । गृह युद्ध में विरोधी पक्ष के कितने ही लोग बंदी बनाए जा चुके थे । सत्ता लिंकन के हाथ में थी । जीत भी उन्हीं का पक्ष रहा था । विरोधी पक्ष की एक युवती अपने बंदी भाई से मिलने का प्रयत्न कर रही थी । पर अधिकारी उसे इसके लिए इजाजत नहीं दे रहे थे । आखिर वह प्रेसीडेंट के पास ही जा पहुँची और अपना अभिप्राय बताया ।

लिंकन ने उससे पूछा- ''मेरा विश्वास है, तुम देश भक्त हो ।'' युवती ने निर्भीकतापूर्वक उत्तर दिया- ''मैं अपने देश वरजीनिया के प्रति देशभक्त हूँ ।'' वरजीनिया विरोधी पक्ष था । विरोधियों को ऐसी सुविधा क्यों दी जाय, जिसमें पीछे कोई संकट उत्पन्न होने की आशंका हो, यह एक प्रश्न था । लिंकन कुछ देर सोचते रहे और उन्होंने एक पर्चा लिखकर युवती के हाथ में थमा दिया और जेल में भाई से मिलने की स्वीकृति लिख दी ।

अफसरों ने प्रेसीडेंट से इस उदारता का कारण पूछा तो उनने यही कहा- ''ईमानदार व्यक्ति यदि विरोधी भी हो, तो भी उससे किसी अवांछनीय अनिष्ट की आशंका नहीं करनी चाहिए । इस नारी में सौजन्य भी है और साहस भी । वह हर दृष्टि से अभिनंदनीय है । उसे दंड देने के स्थान पर उससे शिक्षा लेनी व उसका सम्मान करना चाहिए ।''

जोन ऑफ आर्क

फ्रांस में स्वतंत्रता की आग जलाने और उसमें अपने आप को होम देने वाली कुमारी जान ऑफ आर्क, न केवल यूरोप में वरन् समस्त संसार में आज भी अतीव सम्मान की दृष्टि से देखी जाती हैं । फ्रांस पर अंग्रेजों ने अधिकार कर लिया था । फ्रांसीसी प्रतिरोध से वे हट नहीं रहे थे । इसी बीच एक किसान कन्या जान ऑफ आर्क ने जनता को संगठित किया और आजादी का बिगुल बजाया । उसने एक सेना भी गठित की, जिसके लिए जन-धन की आवश्यकता वहाँ के देशभक्तों द्वारा पूरी होने लगी । वह पुरुष के वेष में सेनानायक का काम करती थी । इस बीच वह दो बार घायल हुई, पर किसी को भी जान से नहीं मारा । उसकी आत्मशक्ति ही ऐसी थी कि विरोधी बिना घायल हुए ही मैदान छोड़कर भागने लगे थे ।

जोन पकड़ी गई । उसे शत्रुओं ने जीवित जला दिया । फिर भी अंग्रेजों के विरुद्ध फ्रांसीसी जनता का युद्ध चलता रहा और वह स्वतंत्र होकर रही ।

नीग्रो समाज को स्वावलंबी बनाने वाली ऐजिल

अमेरिका में कानून द्वारा नीग्रो समुदाय को समानता के अधिकार मिल गए थे । पर उनका व्यावहारिक उपयोग नहीं के बराबर होता था । जिन जिन परिस्थितियों में उनके बाप-दादों को गुलामी की जिंदगी जीनी पड़ी थी, लौट-पलटकर वे उसी में रहने के लिए बाधित किए जा रहे थे । इन परिस्थितियों को बदलने के लिए आवश्यक था कि नीग्रो समुदाय स्वयं अपने पैरों खड़ा हो और अधिकारों की लड़ाई लड़े । पर इसके लिए उन्हें साहस प्रदान कौन करे ? यह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कार्य एक अमेरिकन महिला डेविस ऐंजिल ने अपने कंधों पर लिया । कैलीफोर्निया के कॉलेज में उन्हें छात्रवृत्ति मिली । पढ़ाई जारी रखने के अलावा उन्होंने नीग्रो जागरण में भाग लिया । पी०एच०डी० की और एक कॉलेज में अध्यापिका हो गईं । आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी होते हुए भी अपने काम के लिए उन्हें भारी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ीं । नौकरी से निकाली गईं । जेल गईं । फिर भी अपना काम नहीं छोड़ा । नीग्रो समुदाय को उनके नेतृत्व में जो सुविधाएँ उपलब्ध हुईं, उसके लिए वे सदा इस तेजस्वी महिला के कृतज्ञ रहेंगे ।

देव संस्कृति को समर्पित विदेशी नारी

एनीवेसेंट आयरलैंड में जन्मीं, इंग्लैंड में पलीं और सेवामय जीवन बिताने के लिए हिंदुस्तान चली आईं । वे ईसाई परिवार की थीं, पर अध्ययन और चिंतन-मनन ने उन्हें व्यवहारतः सच्चा हिंदू बना दिया । इस देश की सेवा करने के लिए उन्होंने समय-समय पर कितनी ही प्रवृत्तियाँ आरंभ कीं और बढ़ाईं । उन्होंने अडियार मद्रास में थियोसोफिकल सोसाइटी की स्थापना की । काशी में सेंट्रल हिंदू कॉलेज आरंभ किया, जो आगे चलकर हिंदू विश्वविद्यालय में परिवर्तित हो गया । वे राष्ट्रीय कांग्रेस की अध्यक्ष रहीं । अंग्रेजी का एक साप्ताहिक पत्र मुद्दतों चलाती रहीं । वे १०६ वर्ष जीवित रहीं, जिसमें से अधिकांश समय उनने भारत की सेवा में बिताया । वे अद्भुत वक्ता और लगनशील संगठनकर्त्री थीं ।

विधवा विवाह होते सत्साहस जुटाया

पुरुष समुदाय में भी ऐसे व्यक्ति हुए हैं, जिन्होंने अपनी विभूतियों का सदुपयोग नारी को स्वावलंबी बनाने, उसे ऊँचा उठाने में किया है । जब भी अवसर आया है, कुरीतियों के प्रपंच से मुक्ति दिलाकर उन्होंने साहस भरे कदम उठाए हैं ।

गुजरात के सेठ दानमल जी उस प्रांत के मूर्धन्य व्यापारी थे । उनके २२ वर्षीय पुत्र का अचानक स्वर्गवास हो गया । उसका विवाह एक वर्ष पूर्व ही हुआ था । लड़के के मरने से भी अधिक दुख उन्हें पुत्र-वधू का था कि वह अपना जीवन किस प्रकार काटेगी । पुत्र शोक में सहानुभूति प्रकट करने बिरादरी वाले, संबंधी तथा व्यापारी बड़ी संख्या में आए । सेठ दानमल जी ने पुत्रवधू के पुनर्विवाह की बात उन सब के सामने रखी, पर सवर्णों में वैसा प्रचलन न होने के कारण कोई सहमत नहीं हुआ । सेठजी ने अपने दूसरे नंबर के लड़के को इसके लिए तैयार कर लिया । वधू की भी स्वीकृति ले ली और कुछ ही दिनों बाद अपने घर में यह विवाह संपन्न कर लिया । चर्चा सारे समाज में फैली । किसी ने भला कहा, किसी ने बुरा । किन्तु प्रतिक्रिया तब सामने आई, जब सवर्ण जातियों में उसी वर्ष कई विधवा विवाह हुए ।

जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं

कभी-कभी पुरुषों को अनगढ़ नारी के विकास हेतु स्वयं सहनशीलता की साधना करनी पड़ती है । यह भी जरूरी है । सुकरात की पत्नी कर्कश स्वभाव की थीं । पति को भी परमार्थ कार्यों से रोकतीं और जो मिलने आते, उन्हें भी कोसतीं, सोचतीं इसमें लाभ नहीं होता, घाटा पड़ता है ।

एक दिन सत्संग गोष्ठी चल रही थी । पत्नी ने छत पर से उन सब के ऊपर गंदा पानी उलीच दिया और गंदी गालियाँ सुनाईं । वातावरण में आक्रोश पनपा । आगंतुकों ने इसे अपमान माना । सुकरात ने सूझबूझ से काम लिया । उनने क्रोध को विनोद में बदला । हँसते हुए कहा- "आज वह किंबदंती मिथ्या हो गई, जिसमें कहा जाता है कि 'जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं' आज तो गरजना-बरसना साथ साथ हो रहा है ।" क्रोध, हँसी में बदल गया । गीले कपड़े सुखाने के लिए डाल दिए गए और विचारगोष्ठी फिर उसी संतुलित वातावरण में चलने लगी । चलते समय सुकरात ने सिखाया 'प्रतिकूलता में भी संतुलन बना लेना दूरदर्शिता की कसौटी है ।' उनके इसी गुण के कारण उनका दांपत्य जीवन अच्छी तरह निभा । पत्नी ने क्रमशः अपने को सुधारा एवं एक आदर्श अर्द्धांगिनी बनकर रहीं ।

कुकर्मियों के निमित्त स्त्रष्टा की व्यवस्था

देवकन्या 'मृत्यु' को ब्रह्मा जी ने सृष्टि संतुलन बनाए रखने के लिए मनुष्यों को मार-मार कर परलोक भिजवाते रहने का काम सौंपा । इस क्रूर कर्म को करने के लिए दयालु देव कन्या सहमत न थी । वह दुखी होकर धेनुकाश्रम तप करने चली गई । तप पूर्ण हुआ तो विष्णु भगवान ने उसे वर माँगने के लिए कहा । देव कन्या ने प्राणियों को मारने के क्रूर कर्म वाली विधि व्यवस्था से छुटकारा दिलाने का अनुरोध किया । प्रजापति का विधान और निर्माण भी आवश्यक था तथा मृत्यु के करुणा भरे इन्कार का भी महत्व था, सो उनने मध्यवर्ती मार्ग निकाला । पाँच दूत मनुष्य लोक में भेजे- (१) असंयम, (२) आवेश, (३) आलस्य, (४) तृष्णा, (५) अविवेक । उनने कहा- "तुम लोगों के भीतर

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

घुस कर लोगों को खोखला करते रहना । धीरे-धीरे वे स्वयं मरणासन्न स्थिति में पहुँच जाया करेंगे ।'' देव कन्या 'मृत्यु' से विष्णु भगवान ने कहा- ''जब आत्मघात से दुखी लोग कहीं शरण न पा सकें, तब तुम उन्हें दयावश अपनी गोद में सुला लिया करना ।'' मृत्यु इस दया धर्म को अपनाने के लिए सहमत हो गई । तब से अब तक लोग अपने कुकर्मों से अकाल मृत्यु मरते रहते हैं । मृत्यु तो उन्हें कष्ट से छुटकारा दिलाने की दया भर दिखाती रहती है । जो भी नारी को दुर्गति के, पतन के गर्त में ले जाते हैं, उनके लिए स्रष्टा की दंड व्यवस्था भी है । मृत्यु तो जीवन का सरल अंत है, पर जिन दुर्गुणों से पुरुष समुदाय खोखला होता है, वे उसे जीवन भर के लिए अपंग, परावलंबी एवं हेय बना देते हैं ।

अबलात्वात् स्त्रियाम नात्याचारस्तु कश्चन ।
कोमलाङ्ग्या भवेदित्थमेतदर्थं च निश्चितम् ॥ ६८॥
समस्तस्य समाजस्य भाव उद्बुद्ध इष्यते ।
अनीत्याश्रयिणो नैव नराः स्युर्दण्डवञ्चिताः ॥ ६९॥
व्यवस्था चेदृशी कार्या मूर्धन्यैः पुरुषैः सदा ।
सामाजिकं च दायित्वं तैरुह्यं स्वयमेव च ॥ ७०॥

भावार्थ–नारी की सहज दुर्बलता के कारण उस पर कहीं कोई अत्याचार न होने पाए, इसके लिए समस्त समाज की जागरूकता आवश्यक है । अनीति करने वाले दंड से बचने न पाएं, ऐसी व्यवस्था मूर्धन्यों को साहसपूर्वक बनानी चाहिए, व्यवस्था संबंधी सामाजिक दायित्व स्वयं ही उन्हें अस्वीकार करने चाहिए ॥ ६८-७०॥

व्याख्या–नारी मनस्वी भी है, तेजस्वी भी, पर उसकी विशेषताएँ दबी रह जाती हैं । शरीर बल के नाते पुरुष जाति का उस पर आधिपत्य ही रहा । उसे अन्य वैभव संपत्ति की भाँति ही एक आभूषण मानकर अधिकार जताने की विडंबना भर होती रही है । समाज के हर सदस्य को जागरूक विवेकशील बनकर अनीति के प्रतिकार का साहस जुटाना चाहिए । कहीं भी ऐसे अत्याचार होते दीखें, तो उनका विरोध बलपूर्वक कर समाज की सुव्यवस्था बिठाने का दायित्व मूर्धन्य नागकिों का ही है । इसमें पुरुषों की तो प्रायश्चित कर्ता होने के नाते महत्वपूर्ण भूमिका है ही, जागृत नारी को भी अपना दायित्व निभाना चाहिए । जो अनीति करें, उन्हें किसी न किसी रूप में उसका प्रतीक रूप में दंड अवश्य मिले, ताकि आगे वे कभी ऐसा दुस्साहस न कर सकें ।

नारी-अबला नहीं, वीरा, पुरंध्रि और शक्ति

प्राचीनकाल में स्त्रियों को अबला नहीं, शक्ति स्वरूपा समझा जाता था । उन दिनों पुत्र को 'वीर' और नारी को 'वीरा' कहा जाता था तथा उनकी शिक्षा-दीक्षा का ऐसा प्रबंध किया जाता था कि वे अपना नाम सार्थक कर सकें । रानी लक्ष्मीबाई, अहिल्याबाई, दुर्गावती जैसी शूरवीर नारियाँ इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं ।

संस्कृत भाषा में स्त्रियों के लिए एक शब्द 'पुरंध्रि' भी आया है, जिसका अर्थ है पुर या नगर को धारण करने वाली, उसकी रक्षा करने वाली । प्राचीनकाल में राष्ट्र को बाहरी शत्रुओं से सुरक्षित रखने का दायित्व पुरुष सम्हालते थे तथा युद्ध के समय आंतरिक शत्रुओं से स्त्रियाँ निबटती थीं, उन दिनों नगर की सुव्यवस्था, अपराधों की रोकथाम, घुसपैठियों की धरपकड़ का कार्य स्त्रियों के जिम्मे ही रहता था । इसीलिए उन्हें पुरंध्रि कहा जाता था । काली, भवानी, अंबिका आदि देवियाँ अपनी शूरवीरता के कारण ही पूज्य हैं । वीरता और शौर्य प्रदर्शन के प्रसंगों से भरे प्राचीन भारत के इतिहास में नारी को अबला कहना और उसकी सहज दुर्बलता का नाजायज फायदा उठाना, तथ्यों की उपेक्षा करना होगा ।

प्राचीनकाल में स्त्रियाँ न केवल आत्मरक्षा में समर्थ थीं, वरन् राष्ट्र रक्षा में भी पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर और कई बार तो उनसे एक कदम आगे बढ़कर भूमिका निबाहती थीं एवं शौर्य प्रदर्शित करती थीं । अबला शब्द का सामान्य अर्थ शारीरिक दृष्टि से बलहीन ही समझा जाता है । यह स्थिति तो तब आई जब हर ओर से नारी को प्रतिबंधित तथा लांछित किया गया था । अन्यथा जिन दिनों समाज में उन्हें पुरुषों के समान ही स्थान दिया जाता था

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

और वैसे ही अधिकार प्राप्त थे, तब प्रकृति द्वारा प्रदत्त कमनीयता, कोमलता के उपरांत भी स्त्रियाँ शौर्य और वीरता के क्षेत्र में पुरुष से कदापित पीछे नहीं रहीं ।

विवरण मिलता है महादेव पुत्र गणेश ने स्त्रियों के सैन्यदल बनाए थे और उनके द्वारा राष्ट्र रक्षा का कार्य भी करवाया था । अनेक बार स्त्रियों ने स्वयं आगे बढ़कर अपने सैन्यदल गठित किए तथा राष्ट्र रक्षा में अग्रणी भूमिका निबाही । वैदिक साहित्य में राजकुमारी विशाला की कथा मिलती है । सम्राट् का नाम खेल बताया गया है, जब खेल साम्राज्य पर शत्रु राजा ने अपने पूरे दल-बल के साथ अक्रमण किया । आक्रांत राष्ट्र की सेनाओं ने वीरतापूर्वक मुकाबला किया । लेकिन शत्रु सेनाएँ भारी पड़ीं और खेल की सेनाएँ पीछे हटने लगीं, ऐसी स्थिति में सम्राट् का चिंतित होना स्वाभाविक ही था । खेल का सेनापति युद्ध में मारा जा चुका था और सेनाएँ नेतृत्वविहीन हो गई थीं । इस पर विशाला ने सैनिक नेतृत्व सम्हाला और बिखरी हुई सेनाओं को समेट कर ऐसी व्यूह रचना की कि आक्रमणकारियों को भागते ही बना ।

महिला-पंच रत्न

उन दिनों देश में स्त्रियों को घर के पिंजड़े में ही कैद रखने का प्रचलन था । बच्चा पैदा करने, आए दिन लात-घूँसे खाने और पति के साथ सती होने के लिए विवश किए जाने के अतिरिक्त और कोई चारा न था । ऐसे विषम समय में भी दक्षिण भारत की पाँच प्रख्यात नारियों ने बंधनों से ऊपर उठकर पुरुषों की ही भाँति नारी-संत की भूमिका निभाई । इन तेजस्वी महिलाओं के नाम हैं - (१) औवेयार, (२) कौरक्काल, (३) तिलक वतियार, (४) मंगैयर्करशि, (५) अडांल । इन्हें महिला पंच रत्न कहा जाता था । इनकी यश गाथा में बहुत कुछ लिखा गया है ।

गौरवशालिनी वीर बालाएँ

मध्यकालीन सामंती युग में विधवाओं की संपत्ति हरण के लिए, उनके निर्वाह वहन से बचने के लिए,परिवार वाले उन्हें सती होने के लिए उकसाते थे । न होने पर उन्हें लांछित एवं त्रस्त करते थे ।

सामंतों के लड़ाई में खेत आने पर उनकी पत्नी का ही राज्य पर प्रभाव रहता था । इस कंटक को हटाने के लिए शत्रु, मित्र सभी अपना स्वार्थ इसी में समझते थे कि विधवा को सती होने के लिए फुसलाया जाय । देखादेखी कुछ भावुक स्वेच्छा से भी शोक-संताप के आवेश में वैसा कर बैठती थीं । इसके विपरीत बहुत सी साहसी महिलाएँ ऐसी भी होती थीं, जो इस प्रकार आत्महत्या करने की अपेक्षा शत्रुओं से लड़ने में अपना गौरव समझती थीं । इन गौरवशाली वीर बालिकाओं में महारानी लक्ष्मीबाई, कर्मादेवी, दुर्गावती, अच्छन कुमारी, वीरमती, जवाहरबाई, जयवती, कमलावती, कर्णवती, ताराबाई जासमा, रानी साहब कुमारी, रानी राजबाई आदि के नाम प्रसिद्ध हैं । यद्यपि उन दिनों स्त्रियों को रण-शिक्षा देने का कोई प्रबंध नहीं था । तो भी वे अपनी आंतरिक प्रखरता के बलबूते शत्रुओं के दांत खट्टे करने और रणचंडी जैसा पराक्रम दिखाने में समर्थ हुईं । संसार भर में इन वीर बालाओं का पराक्रम एक स्वर से सराहा गया ।

साहस की धनी-अहिल्या बाई

इंदौर के महाराज मलहार राव ने एक तेजस्वी कृषक कन्या को प्रवास काल में देखा । उन्हें वह प्रतिभावान् लगी और अपने बेटे खांडेराव से उसका विवाह कर दिया । उन दिनों सामंतों में आए दिन आपसी युद्ध ठने रहते थे । एक युद्ध में बेटा दूसरे में बाप को जान से हाथ धोना पड़ा । राजकाज सँभालने की जिम्मेदारी रानी अहिल्याबाई के कंधों पर आई । कई विश्वासघाती सरदार राज्य को हड़पने के षड़यंत्र करते रहे । कई पड़ोसियों ने चढ़ाई कर दी । सभी से अहिल्याबाई ने बड़ी कुशलता से लोहा लिया । उनने अपने साहस और संतुलन को विकट से विकट परिस्थिति में भी हाथ से न जाने दिया । अहिल्याबाई ने लंबे समय तक राज-काज चलाया । विदेशी तक दाँतों तले उँगली दबाये रहे कि अवसर मिलने पर नारी की प्रतिभा नर की तुलना में राई भर भी कम सिद्ध नहीं होती ।

दक्षिण भारत की लक्ष्मीबाई-चेनम्मा

अंग्रेज तब व्यापार की अपेक्षा शासन सत्ता जमाने में अधिक दिलचस्पी ले रहे थे । बड़ी रियासतों से लड़ना और जो छोटी हों, उन्हें धमकी देकर काबू में कर लेना उनकी नीति थी । पेशवाओं पर अंग्रेजों की चढ़ाई हुई उनने कन्नूर की रानी चेनम्मा से मदद माँगी । चेनम्मा ने दो प्रमुख सेना भेजीं । उन्हें अंग्रेजों ने फोड़ लिया । वह सेना अंग्रेजों के पक्ष में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लड़ी । रानी को बहुत दुख हुआ । वह बची सेना लेकर स्वयं सेना का नेतृत्व करती हुई मोर्चे पर पहुँची । प्रजाजन उसकी सहायता के लिए उठकर खड़े हो गए । पर विश्वासघाती सारा भेद बताते रहे । फलतः इस बार भी कन्नूर को नीचा देखना पड़ा ।

रानी बड़ी जीवट वाली थी । उसने शासन और संग्राम के दोनों मोर्चे संभाले । पर शक्ति के सामने आदर्श न टिक सके । रानी को प्राणों से हाथ धोना पड़ा और वह छोटी रियासत अंग्रेजों के कब्जे में चली गई । इस हार से भी चेनम्मा की वीरता वैसी ही रही, जैसी झाँसी वाली रानी की ।

नारकीय वातावरण से पीछा छुड़ाया

जयपुर राज्य के अंतर्गत एक ठिकाना था खंडेला । ठिकानेदार की कन्या थी करवैति बाई । विवाहों के उपरांत ठिकानों में रानियों की जो दुर्दशा होती थी, उसे वह देखती और सुनती रहती थी । उसका मन अपने विवाह की बात सुनते ही काँपता था । तो भी परिवार वालों ने उसका विवाह बलपूर्वक कर ही दिया । ससुराल पहुँची तो वहाँ माँस, व्यभिचार का नरक देखने को मिला । जिसे उसकी आत्मा ने स्वीकार ही न किया ।

एक रात वह पूरी हिम्मत समेट कर उस बंदीगृह से भाग खड़ी हुई । ससुराल वालों ने घुड़सवार उसे पकड़ने दौड़ाए । आधे रास्ते में एक मरे ऊँट का कंकाल पड़ा था, वह उसमें छिप गई । सवार आगे बढ़ गए, तो वह वृंदावन की ओर बढ़ गई और रास्ते में अनेक कठिनाइयाँ उठाते हुए वहाँ पहुँची और संत वेष में रहने लगी । पता लगने पर पिता और ससुराल वाले आए तो उसने स्पष्ट कह दिया कि आप लोग सिर उतार कर ले जा सकते हैं, पर आसुरी वातावरण में लौटकर जाना मुझे किसी प्रकार स्वीकार नहीं । वह अपने प्रण पर डटी रही । एक झोंपड़ी बनाकर वहाँ आने वाली तीर्थयात्री महिलाओं को धर्मोपदेश देती रही । उनकी पूजा-उपासना भी निष्ठापूर्वक चलती थी ।

पाप से घृणा करो, पापी से नहीं

शमीन यहूदी साहूकार था । साथ ही धर्मात्मा भी । ईसा को उसने अपने यहाँ भोजन पर बुलाया और वे गए भी । उसी गाँव में एक वेश्या भी रहती थी । नाम था मेरी । मेरी भी ईसा के चरणों में पहुँची और आतिथ्य स्वीकार करने का आग्रह करने लगी । ईसा ने उसे स्वीकार कर लिया और दूसरे दिन उसके यहाँ गए भी ।

यह प्रसंग शिष्य मंडली में चर्चा का विषय बन गया । कानाफूसी होने लगी । वेश्या के यहाँ संत-भगवान् का जाना अनुचित है । बात ईसा के कान तक पहुँची, उनने शिष्यों को बुलाया और कहा- "जो प्रायश्चित करता है, सो पवित्र है । पापी तो वह है, जो दुष्टता पर अड़ा रहे । मन बदलने के बाद कोई वैसा नहीं रहता, जैसा पहले था ।" वेश्या ने व्यवहार बदला और सज्जनों की तरह रहने लगी । कुछ दिन बाद ईसा ने मंडली को बुलाया और मेरी का प्रसंग बताते हुए कहा- "यदि बुहारी गंदगी तक न पहुँचे, तो सफाई की संभावना कैसे बने ?"

अबला के शुभचिंतक

पति का सहारा चले जाने पर विधवा से सहानुभूति व्यक्त करने वाले कितने ही आए । सभी के मुख पर एक ही चर्चा थी- इस अबला का भविष्य क्या होगा ? सुनते-सुनते जब उससे न रहा गया, तो एकदम उसने कह ही दिया । आप लोग चिंता न करें, मेरा परिश्रम मेरा ईमान और मेरा भगवान् इन तीनों संरक्षकों के रहते मुझे किसी प्रकार की कमी पड़ने वाली नहीं है । इसी जीवन दर्शन को अपनाकर उसने अपने आपको स्वावलंबी बनाया एवं पूरे परिवार का पोषण किया ।

पत्नी ने कर्तव्य ज्ञान कराया

अभी विवाह हुए कुछ अधिक दिन भी नहीं हुए थे कि चूड़ावत को औरंगजेब के आक्रमण का प्रत्युत्तर देने के लिए रणक्षेत्र में जाने का मौका आया । इधर चूड़ावत का मन अजीब द्विविधा में पड़ा था । एक ओर नव परिणीता पत्नी का आकर्षण दूसरी ओर कर्तव्य । पति को असमंजस में देख रानी की चिंता बढ़ी । उसने कारण पूछा । रानी कुछ गंभीर हुई और सोचने लगी, यदि मेरा आकर्षण पति को कर्तव्य पथ से विचलित करता है, तो मेरा जीवन धिक्कार है । मुझे अपना बलिदान देकर पतिदेव की द्वंद्व स्थिति मिटानी चाहिए । दीवाल पर टँगी तलवार लेकर उसने पूरे बल से बार किया और उसका सिर कटकर चूड़ावत की गोद में जा गिरा । कर्तव्य पथ से विचलित न होने के लिए जिन वीरांगनाओं में इतना आत्मबल भरा पड़ा हो, वहाँ नर के लिए कायरता असंभव है । चूड़ावत ने तुरंत अपना घोड़ा युद्ध क्षेत्र की ओर मोड़ा, बिजली की तरह शत्रु सेना पर टूट पड़ा ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संख्यार्द्धं दलितायां तु स्थितौ सम्प्रेष्य मानवान् ।
सर्वानेव पराभूतेः पतनस्य स्थितौ स्थितान् ॥ ७१ ॥
कृत्वाऽनर्थः कृतो यस्तु तमग्रे नाचरेदिह ।
अर्धनारीश्वरा जातिर्मानवानां दलोपमा ॥ ७२ ॥
अधिकाराः समानास्ते दायित्वानि समानि च ।
उभयोः शकटस्येव चक्रयोः सहगामिता ॥ ७३ ॥
अपेक्ष्यते न कश्चिच्च बोधतान्यं कदाचन ।
कृताभिस्त्रुटिभिः शिक्षामधिगत्य झटित्यलम् ॥ ७४ ॥
अनाचारस्य नाशेन भवितव्यमिहाधुना ।
प्रतिभापरिचयं दातुं लभेताऽवसरं च सा ॥ ७५ ॥
सन्दर्भेऽस्मिन्नरस्याऽस्ति दायित्वमधिकं स्वयम् ।
हानिं प्राप नरः स्वाभ्यस्त्रु टिभ्यो विपुलामपि ॥ ७६ ॥
परिष्कारे त्रुटीनां च कुर्यात्तत्परतां ततः ।
नर एव लभेताऽपि लाभं सोऽधिकमप्यतः ॥ ७७ ॥

भावार्थ–आधी जनसंख्या को पददलित स्थिति में धकेल कर समूचे मानव समुदाय को पतन–पराभव की स्थिति में रखने का अनर्थ अब आगे और न किया जाय । नर और नारी दोनों ही बीज के दो दलों के समान मनुष्य जाति के अविच्छिन्न अंग हैं । दोनों के अधिकार और उत्तरदायित्व समान हैं । दोनों के मध्य गाड़ी के पहियों का सा सहयोग होना चाहिए । कोई किसी पर हावी होने का प्रयत्न न करें । पिछली भूलों से शिक्षा लेकर इस संदर्भ में चलते रहे अनाचार का अब अंत होना चाहिए । उसे अपनी प्रतिभा का परिचय देने के लिए कार्यक्षेत्र में उतरने का अवसर मिलना चाहिए । इस संदर्भ में नर का उत्तरदायित्व विशेष है । की हुई भूलों से हानि भी उसी को उठानी पड़ी है । सुधारने में पुरुष को ही अधिक तत्परता बरतनी चाहिए । लाभ भी अपेक्षाकृत उसी को अधिक मिलेगा ॥ ७१–७७॥

व्याख्या–संसार के सभी क्षेत्रों में नारी पीड़ित और पददलित रही है । इसका प्रमुख कारण नारी संबंधी अतिवाद का एक सिरा यह है कि कामिनी, रमणी, वेश्या आदि बनाकर उसे आकर्षण का केन्द्र बनाया गया । अतिवाद का दूसरा सिरा है, उसे पर्दे-घूँघट की कठोर जंजीरों में जकड़कर अपंग सदृश बना दिया गया । उस पर इतने प्रतिबंध लगाए गए, जितने बंदी और पशु भी सहन नहीं कर सकते । जेल के कैदियों को थोड़ा घूमने-फिरने की, हँसने-बोलने की आजादी रहती है । पर घर की छोटी-सी कोठरी में कैद नववधू के लिए परिवार के छोटी आयु वालों के समाने ही बोलने की छूट है । बड़ी आयु वालों से तो उसे पर्दा ही करना होता है । न उनके सामने मुँह खोला जा सकता है और न उनसे बात की जा सकती है । पर्दा सो पर्दा, प्रथा सो प्रथा, प्रतिबंध सो प्रतिबंध इसमें न्याय, औचित्य और विवेक के लिए क्यों गुंजायश छोड़ी जाय ? पशु को मुँह पर नकाब लगाकर नहीं रहना पड़ता । वे दूसरों के चेहरे देख सकते हैं और अपने दिखा सकते हैं । जब मर्जी हो, चाहे जिसके सामने अपनी टूटी-फूटी वाणी बोल सकते हैं । पर नारी को इतने अधिकार से भी वंचित कर दिया गया । इस अमानवीय प्रतिबंध की प्रतिक्रिया बुरी हुई । नारी शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत पिछड़ गई । भारत में नर की अपेक्षा नारी की मृत्यु दर बहुत अधिक है । मानसिक दृष्टि से वह आत्महीनता की ग्रंथियों में जकड़ी पड़ी है । सहमी, झिझकी, डरी, घबराई, दीन-हीन अपराधिन की तरह वह यहाँ-वहाँ लुकती-छिपती देखी जा सकती है । अन्याय-अत्याचार और अपमान पग-पग पर सहते-सहते क्रमशः अपनी सभी मौलिक विशेषताएँ खोती चली गई । आज औसत नारी उस नीबू की तरह है, जिसका रस निचोड़ कर उसे कूड़े में फेंक दिया जाता है ।

पुरुष-स्त्री वस्तुतः समान हैं, एक ही रथ के दो पहिए हैं । न कोई बड़ा है, न छोटा । जब तक यह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मान्यता गृहस्थाश्रम एवं समाज व्यवस्था में विकसित-परिपक्व नहीं होगी, नारी पददलित ही बनी रहेगी ।

सर्वसाधारण को इस तथ्य से परिचित कराया जाना ही चाहिए कि नर-नारी का सघन सहयोग यदि पवित्र पृष्ठभूमि पर विकसित किया जाय, तो उससे किसी को कुछ भी हानि नहीं है, वरन सबका सब प्रकार लाभ ही होगा । नारी कोई बिजली या आग नहीं है, जिसे छूते ही या देखते ही कोई अनर्थ हो जाय । उसे अलग-अलग रखने की कुछ भी आवश्यकता नहीं है ।

इसी प्रकार तथाकथित संत-महात्माओं को कहा जाना चाहिए कि वे अपने मन की संकीर्णता, क्षुद्रता और कलुषता से डरें । उसे ही भववंधन मानें । नरक की खान वही है । नारी को उस लांछना से लांछित कर उस मानव जाति की भर्त्सना न करें, जिसके पेट से वे स्वयं पैदा हुए हैं और जिसका दूध पीकर इतने बड़े हुए हैं । अच्छा हो हमारी जीभ पुत्री को न कोसे, भगिनी को लांछित न करे, नारी नरक की खान हो सकती है, यह कुकल्पना अध्यात्म के किसी आदर्श या सिद्धांत से तालमेल नहीं खाती । यदि बात वैसी ही होती, तो अपने इष्टदेव राम, कृष्ण, शिव आदि नारी को पास न आने देते । ऋषि आश्रमों में ऋषिकाएं न रहतीं । सरस्वती, काली, लक्ष्मी आदि देवियों का मुख देखने से पाप लग गया होता । निरर्थक की डींगें न हांकें, तो ही अच्छा है । अंतरात्मा, प्रज्ञा, भक्ति, साधना, मुक्ति, सिद्धि यह सभी स्त्रीलिंग हैं । यदि नारी नरक की खान है, तो इन स्त्रीलिंग शब्दों के साथ जुड़ी हुई विभूतियों को भी बहिष्कृत किया जाना चाहिए । अच्छा हो अध्यात्मवाद के नाम पर भोंडा भ्रम जंजाल अपने और दूसरों को दिग्भ्रांत करने की अपेक्षा उसे समेटकर अजायबघर की कोठरी में बंद कर दिया जाय ।

न्याय, औचित्य और स्वतंत्रता का समर्थन करने वाले, मानवी आदर्श को मान्यता देने वाले, उदात्त मनस्वी लोगों को इस बात का प्रयत्न करना चाहिए कि नारी घर के उत्तरदायित्व तो संभाले, पर उतने ही क्षेत्र में कैद न रहे । उसके ऊपर लगा पर्दा प्रतिबंध शिथिल होना चाहिए और उसे विश्वसनीय माना जाना चाहिए । शिक्षित होने, अनुभव बढ़ाने, समाज का स्वरूप समझने, लोकमंगल के प्रयोजनों में भाग लेने का पूर्ण अवसर नारी को दिया जाना चाहिए । इससे मानव जाति की आधी शक्ति, मूर्च्छित आत्मा को जगाने का पथ प्रशस्त होगा और समूची मानव जाति को इस प्रगतिशील कदम का लाभ मिलेगा ।

नारी के समग्र विकास में ही सबका हित सन्निहित

नारियों की धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय सेवाओं के लिए इतिहास साक्षी है, जिससे पता चल सकता है कि नारी पुरुष से किसी क्षेत्र में भी पीछे नहीं रही है । अनुसूया, गार्गी, मैत्रेयी, शतरूपा, अहिल्या, मदालसा आदि धार्मिक सीता, द्रौपदी, दमयंती, पौराणिक तथा पद्मावती, वीरबाला, लक्ष्मीबाई व निवेदिता, कस्तूरबा प्रभृति नारियाँ राष्ट्रीय व सामाजिक क्षेत्र की प्रकाशवती तारिकाएं हैं । वेद तथा इतिहास के ग्रंथों का अनुशीलन करने से पता चलता है कि प्रारंभिक समय में जब साधनों की कमी होने से पुरुषों को प्राय: जंगलों से आहार सामग्री प्राप्त करने तथा आत्मरक्षा के कामों में अधिक ध्यान देना पड़ता था, तब व्यवस्था, ज्ञान-विज्ञान तथा सभ्यता-संस्कृति संबंधी विषयों में अधिकांश काम नारियों ही किया करती थीं ।

नारी अपने विभिन्न रूपों में सदैव मानव जाति के लिए त्याग, बलिदान, स्नेह, श्रद्धा, धैर्य, सहिष्णुता का जीवन बिताती रही है । नारी धरा पर स्वर्गीय ज्योति की साकार प्रतिमा मानी गई है । उसकी वाणी जीवन के लिए अमृत स्रोत है । उसके नेत्रों में करुणा, सरलता और आनंद के दर्शन होते हैं । उसके हाथ में संसार की समस्त निराशा और कटुता मिटाने की क्षमता है । नारी संतप्त हृदय के लिए शीतल छाया और स्नेह-सौजन्य की साकार प्रतिमा है । नारी पुरुष की पूरक सत्ता है । वह मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है, उसके बिना पुरुष का जीवन अपूर्ण है । नारी ही उसे पूर्ण बनाती है । जब पुरुष का जीवन अंधकारयुक्त हो जाता है, तो नारी की संवेदनशील मुस्कान उसमें उजाला बिखेर देती है । पुरुष के कर्तव्य शुष्क जीवन की वह सरसता तथा उजड़ी जिंदगी की हरियाली मानी गई है । नारी के वास्तविक स्वरूप पर विचार करने से विदित होता है कि वह पुरुष के लिए पूरक सत्ता ही नहीं, वरन् उर्वरक भूमि के रूप में भी उसकी उन्नति, प्रगति तथा करुणा का साधन बनती है । स्वयं प्रकृति ही नारी के रूप में सृष्टि के निर्माण, पालन-पोषण और संवर्द्धन का कार्य कर रही है । इसीलिए नारी की गरिमा गिराने का अर्थ है-अपनी उद्गम शक्ति की गरिमा को गिराना ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

महाभारत में कहा गया है कि ''नारी पुरुष की अर्धांगिनी है, उसकी सबसे बड़ी मित्र है । धर्म, अर्थ, काम का मूल है, जो इसका अपमान करता है, काल उसे नष्ट कर देता है । जीवनसंगिनी के रूप में नारी ही पुरुष को ऊँचा उठाती है ।''

नारी के किसी भी रूप की गरिमा घटाने, उसे पददलित स्थिति में रखने पर पुरुष को घाटा ही घाटा उठाना पड़ता है । नारी के विकास में ही उसका अपना हित सन्निहित है ।

अत: समय का तकाजा है कि नारी को विश्वस्त मित्र और सम्मानास्पद स्वजन का स्थान मिलना चाहिए । उसे प्रताड़ित, पददलित रखने में नहीं, सघन-सहयोगी बनाने में लाभ समझा जाना चाहिए । उदारता के बीज बोकर नारी की सत्ता द्वारा धरती माता के प्रतिदानों की अपेक्षा, कम नहीं कुछ अधिक ही पाने की आशा की जानी चाहिए । यही नीति श्रेयस्कर है । लाखों वर्षों तक इसी नीति पर चलकर भारत ने बहुत कुछ पाया था । जहाँ नर-नारी में सहयोग विकसित होता है, वहाँ उसके उज्ज्वल परिणाम दृष्टिगोचर होते हैं । महापुरुषों के जीवन इसके साक्षी हैं ।

आदर्श पति-पत्नी

महापंडित विद्याधर जी जिन दिनों अपने तर्क शास्त्र को लिखने लगे थे, उन दिनों घर का राशन समाप्त हो गया । उनकी पत्नी, कुटिया के सामने खड़े इमली के पत्तों को कूटकर शाक देतीं । पंडित जी उसके स्वाद की बहुत प्रशंसा करते और उसी से संतुष्ट रहकर अपना काम चलाते ।

श्रद्धानंद महिलाश्रम

भारत में सवर्ण परित्यक्ताओं तथा विधवाओं की समस्या बड़ी ही विकट है । पुनर्विवाह का प्रचलन हो नहीं पाया है । कई बच्चों की माताएं होने की दशा में तो उनकी और भी दुर्दशा होती है । आत्महत्याएँ, हत्याएँ और बच्चों की दुर्गति ऐसी ही दशा में होती है ।

स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानंद ने माटुंगा बंबई में एक ऐसे ही आश्रम की स्थापना की है, जिसमें बच्चों समेत माताओं और परित्यक्ताओं के शिक्षण एवं निर्वाह की व्यवस्था है । इस समय आश्रम में ३५० के करीब बच्चे और महिलाएँ हैं । विगत ४५ वर्षों में ५००० के लगभग महिलाओं और बच्चों को स्वावलंबी बनाया जा चुका है । बच्चे गोद भी दिए जाते हैं तथा महिलाओं के विवाह भी करा दिए जाते हैं । ६०० के करीब ऐसे विवाह भी कराए जा चुके हैं । श्री जमशेद जी टाटा के एक अत्यंत ही प्रामाणिक व्यक्ति इसका संचालन करते हैं । म्यूनिसिपल सहायता तथा दानियों के सहयोग से खर्च चलता है । आजकल भारत में ऐसे अनेक आश्रमों की स्थापना आवश्यक है ।

युद्ध विद्या प्रवीण कैकेयी

स्वर्गलोक में जब देवताओं पर दैत्यों का दबाव पड़ा, तो उन्होंने राजा दशरथ की सहायता माँगी । राजा दशरथ अपनी पत्नी कैकेयी समेत लड़ने लगे । उनकी पत्नी भी युद्ध कला में उन्हीं के समान प्रवीण थीं । रथ की धुरी रास्ते में टूट गई । पहिया बाहर निकलने से वह गिर सकता था । कैकेयी ने अपनी एक उंगली धुरी के छेद में लगा दी और रथ यथावत् चलता रहा । राजा उसके शौर्य-पराक्रम पर बहुत प्रसन्न हुए और आवश्यकतानुसार वर माँग लेने का आश्वासन दिया ।

हरिश्चंद्र व शैव्या

हरिश्चंद्र पुत्र रोहिताश्व को सर्प ने काट खाया । मृत शरीर को रानी शैव्या श्मशान घाट ले गईं । पति से बिना कर चुकाए ही अंत्येष्टि कर लेने की प्रार्थना की । हरिश्चंद्र मरघट में नौकरी करते थे । वे रानी की बात पर सहमत न हुए और साड़ी फाड़कर टैक्स देने की सलाह देने लगे । राजा की सत्यवादिता पर चकित होकर ऋषि विश्वामित्र ने बालक रोहिताश्व के सूक्ष्म शरीर की तलाश करके उसके स्थूल शरीर में प्रवेश करा दिया । इस प्रकार वह जीवित हो गया ।

छत्रसाल का नारी सम्मान

अर्जुन-उर्वशी की तरह बुंदेलखंड में छत्रसाल का भी इतिहास है । एक रूपसी ने राजा से उन्हीं जैसा पुत्र पाने के लिए प्रणय निवेदन किया । छत्रसाल ने उसके चरण छुए और कहा- ''मैं आज से ही आपका पुत्र हूँ ।'' अर्जुन के उत्तर को उनने भी यथावत् दुहरा दिया ।

नारी के प्रति उनके सम्मान रूपी चरित्र निष्ठा के कारण ही वे श्रेय के भागी बने एवं इतिहास में एक महामानव के रूप में अपना नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित करा सके ।

देव संस्कृति की पुण्य परंपरा

वेद मंत्रों की द्रष्टा ऋषिकाओं में ब्रह्मवादिनी ममता-उशिज-शश्वती आदि का उल्लेख मिलता है । उनकी गणना और प्रतिष्ठा पुरुष ऋषियों के समतुल्य ही थी । उनने महत्वपूर्ण कार्यों में संलग्न व्यक्तियों के लिए विवाह को एक बाधा माना और आजीवन

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्मचारिणी रहकर तत्त्वज्ञान का अवगाहन करती रहीं ।

यदि वैदिक साहित्य तथा प्राचीन वाङ्मय का अध्ययन-अवलोकन किया जाय, तो मध्ययुगीन प्रतिपादनों के विपरीत ही व्यवस्था दृष्टिगत होगी । वहाँ पग-पग पर ज्ञानदीप्ति, तेजस्विनी, सहकर्मिणी नारी के प्रमाण प्राप्त होंगे, जो सामाजिक जीवन में उसकी श्रेष्ठ स्थिति तथा बौद्धिक दृष्टि से उसकी उच्चतम प्रगति के द्योतक हैं ।

कात्यायनी, मैत्रेयी, गार्गी, मदालसा, वाचक्नवी जैसी ब्रह्मवादिनी नारियों के होने के प्रमाण से यह तो स्पष्ट होता ही है कि सर्वश्रेष्ठ विद्या के क्षेत्र में भी तत्कालीन नारियाँ अग्रणी थीं और उन्हें नारियों के बीच अपवाद नहीं, आदर्श माना जाता था । शास्त्रकारों का आदेश होता था -

कात्यायनी च मैत्रेयी, गार्गी, वाचक्नवी तथा । एवमाद्य विदुर्ब्रह्म, तस्मात् स्त्री ब्रह्मविद् भवेत् ।

अर्थात् जैसे कात्यायनी, मैत्रेयी, गार्गी, वाचक्नवी आदि ब्रह्मवादिनी थीं, उसी प्रकार प्रत्येक स्त्री को ब्रह्मविद् होना चाहिए ।

ब्रह्मवादिनी सुलभा

ब्रह्मवादिनी सुलभा अपने परिभ्रमण काल में एक बार राजा जनक से मिलने पहुँची । उनने सुन रखा था कि जनक को अपने ज्ञान का अहंकार हो गया है और वे अपना परिचय देते हुए, समय-समय पर आत्मश्लाघा व्यक्त करते हैं । विनम्रता का ध्यान नहीं रखते । सुलभा से परिचय पूछे जाने पर वे मौन रहीं और राजा से ही अपना परिचय देने को कहा । जब कथन पूरा हो गया, तो सुलभा ने अपना सामान्य परिचय देते हुए कहा- "लक्ष्य की एकता और गुण संपदा से परिपूर्ण अपने योग्य वर न मिलने पर उन्होंने सदा ब्रह्मचारिणी रहने का व्रत लिया है और सदा धर्मोपदेश के लिए परिभ्रमण करती रहती हैं । किसी का साहस नहीं पड़ा कि उन्हें अकेली देखकर दुर्बुद्धि का परिचय दे ।

महाभारत शांतिपर्व में जनक-सुलभा संवाद बहुत विस्तार से दिया गया है । सुलभा ने वाणी के आठ गुणों और आठ दोषों का वर्णन करते हुए, परोक्ष रूप से जनक की अहमन्यता को निरस्त करने का प्रयत्न किया । जनक संकेत समझ गए और भविष्य में उन्होंने विनयशीलता का संभाषण में अधिकाधिक समावेश किया ।

विदुषी विश्ववारा

महर्षि अत्रि के वंश में उत्पन्न विदुषी विश्ववारा ने योगाभ्यास और विशाल अध्ययन के बल पर ब्रह्मवादिनी पद पाया । उनने ऋग्वेद के कितने ही अनुच्छेदों की गहन विवेचना की है और उन लोगों का मुँह बंद किया है जो स्त्रियों को वेद की अनधिकारिणी मानते हैं । उनने परिवार के विवाह परामर्श को भी स्पष्ट रूप से ठुकरा दिया था ।

इसी प्रकार ब्रह्मवादिनी अपाला ने भी ऋग्वेद के कई अध्यायों का रहस्योद्घाटन किया है ।

ब्रह्मचारिणी-वाक् एवं सूर्या

ब्रह्मवादिनी वाक्, अम्भृण ऋषि की कन्या थीं । उनने विवाह को न अनिवार्य माना न आवश्यक । वे नर और नारी में कोई अंतर नहीं मानती थीं । उनने अपना जीवन अध्ययन-अध्यापन में लगाया । ऋग्वेद के कितने ही अध्यायों की संरचना की । ब्रह्मवादिनी सूर्या के भगवान् सूर्य को अपना पति मानकर, विवश करने वालों से पीछा छुड़ाया था और अपने बहुमूल्य जीवन को दासी की तरह न बिता कर, दूरदर्शियों की तरह उच्चस्तरीय प्रयोजनों में लगाया था ।

उपदेशेन चाऽनेन तत्रस्थानामभूत्स्वतः ।
नारीणां स्वगरिम्णस्तु बोधो विस्मयकारकः ॥ ७८॥
संकल्पश्च नवस्तेन तासां प्रादुरभूद् हृदि ।
कर्तुं नव्यं च निर्माणं स्वस्तरस्य तथैव च ॥ ७९॥
कर्तृत्वस्योत्थितेश्चापि सोत्साहं सहसाऽद्भुतम् ।
उपेक्षकाश्च नारीणामन्वभूवंस्त्रुटीर्निजाः ॥ ८०॥
व्यवहारं निजं तेऽपि भविष्येत्समये समे ।
निरचिन्वन् विधातुं तु परिवर्तितमाशु च ॥ ८१॥

भावार्थ-इस प्रवचन से उपस्थित नारियों को अपनी गरिमा का विस्मयकारी बोध हुआ । अपने स्तर,

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उत्थान एवं कर्तृत्व का अभिनव निर्माण करने के लिए उनके मन में नया संकल्प उभरा । जो नारी के प्रति उपेक्षा बरतते थे, उन्हें अपनी भूल का अनुभव हुआ । भविष्य में उनने भी अपना व्यवहार बदलने का निश्चय किया ॥ ७८–८१॥

व्याख्या–अपनी विस्मृत गरिमा का बोध होना भी एक विलक्षण योग है । उपस्थित नर-नारी समुदाय ने अपनी अपनी कमजोरियों को भी जाना एवं अंदर छिपी महानता को भी पहचाना । कथोपदेश सुनकर ही अंदर से स्वयं को बदलने की इच्छा उमगती है । नारी समुदाय में आत्मोत्थान के प्रति सजग मानसिकता का उदय निश्चित ही एक शुभ लक्षण है ।

तुलसीदास जी को पत्नी का उपदेश

गोस्वामी तुलसीदास ब्राह्मण वृत्ति से गुजारा करते थे । तभी उनका विवाह रत्नावली से हो गया । गृहिणी में उनकी असाधारण आसक्ति थी । एक बार वे बरसात के दिनों अपने पितृगृह थीं । तुलसीदास उनसे मिलने को व्याकुल हो उठे । रात में ही तैर कर नदी पार की । पीछे की छत पर लटकती हुई एक रस्सी के सहारे ऊपर चढ़ गए । पत्नी को जगाया, तो वह लज्जा में डूब गईं । उनने भर्त्सना की और परामर्श भी दिया कि वे इतना प्रेम भगवान में करें और कर्मक्षेत्र में उतरें, तो उनका और संसार का कितना कल्याण हो । पत्नी का उपदेश उनके गले उतर गया और उनने जीवन की धारा बदल दी । रामचरितमानस लिखकर संसार की बड़ी सेवा कर सके और धन्य हो गए । इस महान् परिवर्तन का श्रेय उनकी पत्नी रत्नावली को ही है ।

सत्रमद्यतनं दिव्यं समाप्तं च यथाविधि ।
दृष्ट्वा सूर्यास्तवेलां च नित्यकर्मविधित्सया ॥ ८२॥
ययुः सर्वे निवासान् स्वान् प्रस्फुरद्दिव्यचिन्तनाः ।
अर्धनारीश्वरं रूपं विज्ञानन्तो शिवस्य तत् ॥ ८३॥
सत्यं यच्च शिवं नृणां सुन्दरं स्वर्गदं भुवि ।
प्रज्ञायुगस्य दृश्यं तत् क्षणं बुद्धौ विदिद्युते ॥ ८४॥

भावार्थ–*आज का सत्र भी यथाविधि संपन्न हुआ । सूर्यास्त की वेला देखकर सभी अपने निवास स्थलों पर नित्यकर्म के लिए चले गए । उनके चिंतन में दिव्य स्फुरण हो रहा था । शिवजी का अर्धनारीश्वर रूप मानव–विज्ञान के रूप में उन्हें दीखा, जो सत्यं–शिवं, सुंदरम् का प्रतिबिंब था । भावी प्रज्ञायुग की एक झलक सी उनके मस्तिष्क में कौंध गई ॥ ८२–८४॥*

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः, युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्री धौम्य ऋषि प्रतिपादिते ''नारी माहात्म्यमि,'' ति
प्रकरणो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

॥ अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥

卐 शिशु-निर्माण प्रकरणम् 卐

दिवसोऽद्य चतुर्थस्तु धर्मसत्रस्य तस्य च ।
अभूद् गृहस्थजस्याशु यत्र धर्मात्मसु शुभा ॥ १॥
नृषु कुम्भागतेष्वेषा चर्चा प्रचलिताऽभितः ।
ऋषिर्धौम्यः करोत्यत्र सत्संगमुपयोगिनम् ॥ २॥
श्रुतं येनैव सोत्साहः स नरोभूद् विहाय च ।
कर्माण्यन्यानि सत्संगे समयात्पूर्वमाययौ ॥ ३॥
आगन्तृणां तमुत्साहं दृष्ट्वा चैव प्रतीयते ।
विस्मृतं ते गृहस्थस्य ज्ञातुं गौरवमुत्तमम् ॥ ४॥
अभूवन् सफलता येन दायित्वानां स्वकर्मणाम् ।
नवीनमिव संज्ञानं तेषां तत्रोदगात्नृणाम् ॥ ५॥
श्रवणानन्तरं तत्र सन्दर्भे ते परिष्कृतिम् ।
परिवर्तनमानेतुमदृश्यन्त समुत्सुकाः ॥ ६॥
तेषामाकृतिगण्याश्च भावा एवं समुद्गताः ।
अभूत्प्रवचनस्याद्य विषयः शिशुनिर्मितिः ॥ ७॥

भावार्थ–आज गृहस्थ सत्र का चौथा दिन था । कुंभ पर्व में आए धर्मप्रेमियों में यह चर्चा फैली कि ऐसा उपयोगी सत्संग धौम्य ऋषि चला रहे हैं । जिसने सुना उसी का उत्साह उभरा और सब काम छोड़कर उसी पुण्य प्रयोजन में सम्मिलित होने के लिए समय से पूर्व ही जा पहुँचे । आगंतुकों के उत्साह को देखते हुए प्रतीत होता था कि वे भूली हुई गृहस्थ गरिमा को समझने में बहुत हद तक सफल हुए हैं । उन्हें अपने कर्तव्य और उत्तरदायित्व का नए सिरे से भान हुआ है । सुनने के उपरांत वे उस संदर्भ में सुधार, परिवर्तन के लिए उत्सुक दृष्टिगोचर होते थे । यह विचार–भाव उनके चेहरों से टपके पड़ रहे थे । आज के प्रवचन का विषय था–'शिशु निर्माण' ॥ १–७॥

धौम्य उवाच –

महर्षिर्धौम्य आहाग्रे प्रसंगं स्वं विवर्द्धयन् ।
तत्र सम्बोध्य तान् सर्वान् सद्गृहस्थांस्तु पूर्ववत् ॥ ८॥
बालो योऽद्यतनः सः वै भविता राष्ट्रनायकः ।
समाजग्रामणीर्वृक्षा भवन्त्येव यथा क्षुपाः ॥ ९॥
कुशला अत एवात्र मालाकारा विशेषतः ।
क्षुपाणां रक्षणे ध्यानं ददत्यावश्यके विधौ ॥ १०॥
गोमयादेर्जलस्याऽपि न्यूनता न भवेदपि ।
वन्यः पशव एतान् न नाशयेयुरितीव ते ॥ ११॥
सावधाना भवन्त्येव कस्मिन् क्षेत्रे च सम्भवा ।
क्षुपाणां कियतां वृद्धिं संकुलत्वं न तन्वते ॥ १२॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

गृहस्थैश्चेतनैर्भाव्यं मालाकारैरिव स्वयम् ।
गृहोद्यानस्य रम्यास्ते क्षुपा बोध्याश्च बालकाः ॥ १३॥

भावार्थ–महर्षि धौम्य ने अपने प्रसंग को आगे बढ़ाते हुए उपस्थित सद्गृहस्थों को संबोधित करते हुए कहा, आज का बालक कल समाज संचालक और राष्ट्र नायक बनता है । छोटे पौधे ही विशाल वृक्ष बनते हैं । अतएव कुशल माली छोटे पौधों की आवश्यकता एवं सुरक्षा पर पूरा–पूरा ध्यान देते हैं । उन्हें खाद–पानी की कमी नहीं पड़ने देते । वन्य पशु उन्हें नष्ट न कर डालें, इसका समुचित ध्यान रखते हैं । किस खेत में कितने पौधों के बढ़ने की गुंजायश है–इस बात का ध्यान रखते हुए घिच–पिच नहीं होने देते । गृहस्थों को जागरूक माली की तरह होना चाहिए तथा गृह–उद्यान के सुरम्य पौधे बालकों को समझना चाहिए ॥ ८–१३॥

व्याख्या–परिवार एक फुलवारी के समान है, जिसमें बालकों के रूप में पुष्प विकसित होते एवं अपनी सुरभि से सारे वातावरण को आह्लादयुक्त बना देते हैं । जैसा कि पूर्व प्रकरणों में चर्चा की जा चुकी है, परिवार समाज की एक छोटी इकाई है । राष्ट्र के भावी नागरिक, परिवार रूपी खदान से ही निकलते हैं एवं अपनी प्रतिभा द्वारा सारे समुदाय के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । बच्चे छोटी पौध के समान हैं एवं माता-पिता की भूमिका एक माली की होती है । पौधे को वृक्ष का रूप लेने से पूर्व काफी उपचारों से गुजरना पड़ता है । यह कार्य कुशल माली द्वारा ही संभव हो पाता है । निराई, गुड़ाई, काट-छाँट, वर्षा-पानी एवं सघनता से बचाव इत्यादि के माध्यम से ही नर्सरी की पौध एक वृक्ष का रूप लेती है । परिवार रूपी पौध में माता-पिता को ही सारा ध्यान रखना होता है कि बालकों के सर्मांचत विकास में उनका योगदान हो पा रहा है या नहीं । थोड़ी सी भी असावधानी अनेकानेक समस्याओं को जन्म दे सकती है । बालक की अपरिपक्व स्थिति से परिपक्व स्थिति में विकास होते समय यदि कोई त्रुटि रह जाती है, तो उसका सारा दोष परिवार रूपी धुरी के दो महत्वपूर्ण अंग माता-पिता पर ही जाता है । इसीलिए बालकों को जन्म देने से भी अधिक जागरूक बने रहकर उनके विकास को समुचित महत्व देने वाले अभिभावकों की महत्ता बताई जाती रही है एवं ऐसे आदर्श माता-पिता के नाम इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखे जाते रहे हैं ।

भारतीय माताएँ सुसंतानों के निर्माण में तथा देश को अमूल्य नररत्न प्रदान करने में हमेशा बेजोड़ रही हैं ।

शकुंतला का शिशु निर्माण

महर्षि कण्व के आश्रम में पली, विश्वामित्र कन्या शकुंतला अपने अध्ययन और आश्रम प्रबंध में संलग्न रहती थी । एक दिन राजा दुष्यंत उधर आ निकले और आश्रम में ठहरे । उनने कितने ही आश्वासन देकर भोली कन्या को बहका लिया और उसके साथ सहवास-संपर्क स्थापित किया । पेट में बच्चा आ जाने पर कण्व ने विद्यार्थियों के साथ लड़की को राजा दुष्यंत के पास पत्नी रूप में रखने के लिए भेजा । पर दुष्यंत ने परिस्थितिवश पीछा छुड़ाया और शकुंतला को पहचानने से इन्कार करके उसे लौटा दिया । लड़की ने अपना पुरुषार्थ जगाया । बिना पति के ही पहले की तरह ऋषि आश्रम में निर्वाह किया । बच्चे को स्वयं इतना सुयोग्य बनाया कि वह सिंह शावकों के साथ खेलता था और अंत में चक्रवर्ती भरत के नाम से प्रख्यात हुआ । भारतवर्ष का नामकरण उसी के कारण हुआ । लव-कुश का लालन-पालन और प्रशिक्षण माता सीता द्वारा ही हुआ था, जिन्होंने युद्ध में अपने पिता राम और चाचा लक्ष्मण के भी छक्के छुड़ा दिए थे । सम्राट् शांतनु की पत्नी गंगा ने अपने सभी पुत्रों को वसु, ब्रह्मचारी, तपस्वी और ज्ञानी बनाया था । भीष्म उनके अंतिम पुत्र थे । वे भी राज्याधिकार से दूर और ब्रह्मचारी ही बने रहे एवं कौरवों तथा पांडवों का मार्गदर्शन करते रहे । ऋतध्वज की पत्नी मदालसा ने अपने सभी बालकों को ब्रह्मज्ञानी बनाया । भर्तृहरि के भानजे गोपीचंद को संसार सुख छोड़कर विश्व कल्याण के लिए तप साधना में प्रवृत्त होने की प्रेरणा उनकी माता ने ही दी थी । वस्तुतः माताएँ ही बालकों में सुसंस्कार भरतीं और उन्हें सभ्य-सुसंस्कृत बनाती हैं ।

माताओं की प्रेरणा एवं प्रशिक्षण

राष्ट्रपति आइजन होवर कहा करते थे कि 'अब तक मैं जो कुछ भी बन सका हूँ, वह माँ की स्नेह अभिपूरित प्रेरणा एवं प्रशिक्षण का ही प्रतिफल है ।'

जॉन कैनेडी ने एक प्रेस इंटरव्यू में अपने आकर्षक व्यक्तित्व एवं सफलताओं का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहस्योद्घाटन करते हुए कहा था कि मेरी माँ सिद्धांतों एवं आदर्शों की दृष्टि से अधिक कठोर और संवेदनाओं की दृष्टि से मोम से भी अधिक मुलायम थी । उसके अगाध स्नेह ने ही मुझे वर्तमान स्थिति तक पहुँचाया है ।

अब्राहम लिंकन जब अमेरिका के राष्ट्रपति बने, तो अपनी सफलता के विषय में कहा– ''मैं जो कुछ बन पाया हूँ या आगे आशा करता हूँ, उसका सारा श्रेय और यश मेरी माता को है ।''

सिकंदर कहा करता– ''अपनी माँ की आँख के आँसू को मैं संपूर्ण साम्राज्य से भी बढ़कर मानता हूँ ।''

शिवाजी, राणा प्रताप से लेकर स्वतंत्रता संग्राम के क्रांतिकारियों में भगतसिंह, आजाद तक सभी ने माँ के अंचल में बैठकर ही शासन, पराक्रम एवं चरित्र निष्ठा का पाठ पढ़ा था । मातृभूमि के प्रति त्याग-बलिदान का बीजारोपण बचपन में ही हुआ था । **महात्मा गाँधी और विनोबा** को महामानव की श्रेणी में पहुँचाने में उनकी माताओं का असामान्य योगदान रहा है । जिन दिनों गाँधी जी विलायत अध्ययन के लिए जा रहे थे, उनकी माँ ने उनसे सदाचार और सत्य की प्रतिज्ञा करवा ली थी, जिसका निर्वाह वे जीवनपर्यंत करते रहे । माँ के प्रति अनन्य भक्ति उनका पथ प्रदर्शन करती रही । गाँधी जी कहा करते थे, ''सदाचार एवं सत्य निष्ठा का जो पाठ हमारी माँ ने पढ़ाया, वह मेरे जीवन का मूल मंत्र बन गया ।'' बचपन में त्याग और बलिदान के संस्कारों को अपनी ममता के साथ पिलाने वाली माँ ही होती है ।

विलक्षण मेधावी बालक

इतिहास में ऐसे अनेक उदाहरण मिलते हैं, जिनसे विदित होता है कि अभिभावकों की सजगता के कारण कई महामानव अल्पायु में ही असंभव प्रतीत होने वाली प्रगति कर सकने में सफल हुए ।

शिवाजी ने १३ वर्ष की आयु में तोरण का किला जीता था । **सिकंदर** ने १७ वर्ष की आयु में शोरोनियाँ का युद्ध जीता । **अकबर** ने १६ वर्ष की आयु में गद्दी सँभाली और विशाल साम्राज्य को बुद्धिमत्तापूर्वक चलाया । **अहिल्याबाई** ने १८ वर्ष की आयु में राज-काज अपने हाथ में ले लिया । **संत ज्ञानदेव** ने १२ वर्ष की आयु में गीता का ज्ञानेश्वरी भाष्य लिखा था । **जगद्गुरु शंकराचार्य** ने १६ वर्ष की आयु में अनेक शास्त्रार्थ जीते । **रवीन्द्रनाथ टैगोर** ने १४ वर्ष की आयु में शेक्सपियर के मैकवैथ नाटक का बँगला अनुवाद किया । बंगाली कवियत्री **तारादत्त** १८ वर्ष की आयु में विश्व विख्यात हो गईं । **हरीन्द्र चट्टोपाध्याय** का प्रथम नाटक 'अबूहसन' १४ वर्ष की आयु में लिखा गया । **सरोजनी नायडू** ने १३ वर्ष की आयु में तेरह सौ पंक्तियों की मर्मस्पर्शी कविता लिखकर साहित्य क्षेत्र में चमत्कार उपस्थित कर दिया ।

इसमें इन विलक्षण मेधा संपन्न बालकों को मिले आनुवांशिक संस्कारों का महत्व तो है ही, उस तथ्य को भी नकारा नहीं जा सकता, जिसे इनकी पुरुषार्थ-परायणता, लगन एवं प्रतिभा को समुचित पोषण देने वाले वातावरण के रूप में जाना जाता है ।

एडीसन महा-मानव कैसे बने ?

विश्व विख्यात वैज्ञानिक आविष्कारक थामस अल्वा एडीसन ने जीवन भर एकनिष्ठ भाव से आविष्कारों में रुचि ली और अपनी समूची तत्परता उसी एक काम में लगायी । ग्रामोफोन, टैपरिकार्ड, चलचित्र, कैमरा, बिजली के वल्ब जैसे छोटे-बड़े २५०० आविष्कारों का उनका अपना कीर्तिमान है । दूसरा कोई भी अभी तक इतने प्रकार के, इतने महत्वपूर्ण काम नहीं कर सका है एडीसन बचपन में ही बहरे हो गए थे, लेकिन इसका उन्होंने कभी दुख नहीं माना । माता-पिता के शिक्षण से वे स्वावलंबी बने एवं हमेशा अपनी इस प्राकृतिक कमी को ईश्वरीय वरदान कहते रहे । उनका कहना था कि दूसरे लोग बेकार की गपबाजी में अपना समय गुजारते हैं । मुझे ऐसी बर्बादी का सामना नहीं करना पड़ता, वह समय मैं सोचने और पढ़ने में लगाता रहता हूँ । यदि दूसरों की तरह मेरे भी कान खुले होते, तो इतना न कर पाता, जो कर पाया ।

एडीसन ने छोटे कामों में भी कभी हेठी अनुभव न की । वे हर काम को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उसे सही, पूरा और शानदार स्तर का बनाने का प्रयत्न करते थे । रेल के डिब्बों में सब्जी बेचना, अखबार बेचना, तार बाँटना जैसे अनेक छोटे काम उन्हें अपने आरंभिक जीवन में करने पड़े, पर इसमें कभी हीनता का अनुभव नहीं किया । हर काम को इज्जत का मानना और हर अवसर के महत्वपूर्ण सदुपयोग का शिक्षण, उन्हें उनके माता-पिता द्वारा बचपन से ही मिला था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अनुचित लगे तो छोड़ दो

दार्शनिक कांट की माता बड़ी ईश्वर भक्त थीं । वे चर्च के कामों में बहुत मन और समय लगातीं । पर उनका बालक संप्रदायवाद में रुचि नहीं रखता था । धर्म के नाम पर चल रहे अंधविश्वासों और अनाचारों का खंडन करने के लिए उसने माता की आज्ञा माँगी । माँ ने प्रसन्नतापूर्वक आज्ञा दे दी और कहा– ''जिसे तुम अनुचित समझते हो, उसके लिए आवाज अवश्य उठाओ ।'' उनने बड़े होकर अनेक ग्रंथ लिखे जिसमें ईसाई समाज में अवांछनीय प्रचलनों के विरुद्ध बहुत कुछ लिखा गया है ।

दर्प का दमन

अपने समय की प्रख्यात लेखिका नारी स्वातंत्र्य की हिमायती मेरी स्टो किशोरावस्था में बहुत सुंदर लगती थी । इसकी चर्चा और प्रशंसा भी बहुत होती थी । इस पर लड़की को गर्व होने लगा और इतरा कर चलने लगी । बात पिता को मालूम हुई, तो उन्होंने बेटी को बुलाकर प्यार से कहा– ''बच्ची, किशोरावस्था का सौंदर्य प्रकृति की देन है । इस अनुदान पर उसी की प्रशंसा होनी चाहिए ।''

''तुम्हें गर्व करना हो तो साठ वर्ष की उम्र में शीशा देखकर करना कि तुम उस प्रकृति की देन को लंबे समय तक अक्षुण्ण रखकर अपनी समझदारी का परिचय दे सकी या नहीं ।'' इस शिक्षा का ही परिणाम था कि अपने अहंकार को गलाकर मेरी स्टो एक समाज सेविका के रूप में विकसित हो सकीं ।

स्वावलंबन के संस्कार

एक फ्रांसीसी ने सड़क की पहाड़ी पर बैठे एक गरीब लड़के से जूते की मरम्मत कराई और उसकी गरीबी को देखते हुए एक रुपया दे दिया । लड़के ने बाकी पैसे लौटा दिए और कहा– ''जो मेरा उचित पारिश्रमिक है, वही मुझे लेना चाहिए । मेरी माता ने मुझे सिखाया है जितना मैं श्रम करूँ, उससे अधिक उसके बदले में न लूँ ।'' यही बालक आगे चलकर फ्रांस का राष्ट्रपति दगाल बना ।

मुझे सहायता नहीं चाहिए

ग्रीस में किलेन्थिस नामक बालक एथेंस के तत्ववेत्ता जीनो की पाठशाला में पढ़ता था । किलेन्थिस बहुत ही गरीब था । उसके बदन पर पूरा कपड़ा नहीं था । पर पाठशाला में प्रतिदिन जो फीस देनी पड़ती थी, उसे किलेन्थिस रोज नियम से दे देता था । पढ़ने में वह इतना तेज था कि दूसरे सब विद्यार्थी उससे ईर्ष्या करते । कुछ लोगों ने यह संदेह किया कि 'किलेन्थिस जो दैनिक फीस के पैसे देता है, सो कहीं से चुराकर लाता होगा, क्योंकि उसके पास तो फटे चिथड़े के सिवा और कुछ है नहीं ।' और उन्होंने आखिर उसे चोर बताकर पकड़वा दिया । मामला अदालत में गया । किलेन्थिस ने निर्भयता के साथ हाकिम से कहा कि 'मैं बिल्कुल निर्दोष हूँ । मुझ पर चोरी का दोष सर्वथा मिथ्या लगाया गया है । मैं अपने इस बयान के समर्थन में दो गवाहियाँ पेश करना चाहता हूँ ।' गवाह बुलाए । पहला गवाह था एक माली । उसने कहा, 'यह बालक प्रतिदिन मेरे बगीचे में आकर कुएँ से पानी खींचता है और इसके लिए इसे कुछ पैसे मजदूरी के दिए जाते हैं ।' दूसरी गवाही में एक बुढ़िया आई, कहा– ''मैं बूढ़ी हूँ । मेरे घर में कोई पीसने वाला नहीं है । यह बालक प्रतिदिन मेरे घर पर आटा पीस जाता है और बदले में अपनी मजदूरी के पैसे ले जाता है ।''

इस प्रकार शारीरिक परिश्रम करके किलेन्थिस कुछ आने प्रतिदिन कमाता और उसी से अपना निर्वाह करता तथा पाठशाला की फीस भी भरता । किलेन्थिस की इस नेक कमाई की बात सुनकर हाकिम बहुत प्रसन्न हुए और उन्होंने उसे इतनी सहायता देनी चाही कि जिससे उसको पढ़ने के लिए मजदूरी करनी न पड़े, परंतु उसने सहायता लेना स्वीकार नहीं किया और कहा कि 'मैं स्वयं परिश्रम करके ही पढ़ना चाहता हूँ । किन्हीं से दान लेने के स्थान पर स्वावलंबी बनकर आगे बढ़ना ही मेरे माँ-बाप ने मुझे सिखाया था ।

बाल्यकाल के जीवन में समाविष्ट ये संस्कार ही व्यक्ति को आगे चलकर महामानव बनाते एवं समुदाय को श्रेष्ठ नागरिक देते हैं ।

स्वाभिमानी माता

कवि डेनियल निर्धनों को मिलने वाली सुविधाएँ स्कूल से लेकर आया । उसकी माँ ने कहा– ''वापस जाओ और इन्कार करके आओ । मैं मेहनत-मजूरी करती हूँ और तुम्हारी फीस तथा पुस्तकें जुटा सकती हूँ । यह सुविधा उनके लिए है जो सर्वथा असमर्थ हैं । हमें असमर्थों का हक नहीं मारना चाहिए ।''

मैं झूठा नहीं हूँ

गाँधी जी को बचपन में खेलों में कोई रुचि तो नहीं थी फिर भी वे स्कूल का नियम पालन करने के लिए समय पर क्रीड़ा मैदान में जाया करते थे । एक दिन शनिवार था । उस दिन

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रात:काल कक्षाएँ लगीं और सायं समय चार बजे खेलकूद । बालक मोहन के पास घड़ी थी नहीं और बारिश के दिन थे, अत: उन्हें समय का ठीक-ठीक ज्ञान न हो सका और वे खेलों में देर से पहुँचे । प्रधानाध्यापक ने देर से आने का कारण पूछा तो गाँधी जी ने सही कारण बता दिया, किन्तु प्रधानाध्यापक ने उनकी बात का विश्वास नहीं किया और एक आना जुर्माना कर दिया । गाँधी जी रो उठे । तो प्रधानाध्यापक ने कहा– "तुम्हारे पिताजी तो बड़े आदमी हैं, उनके लिए एक आना जुर्माना भरना कोई बड़ी बात नहीं है ।" "मैं इसलिए नहीं रो रहा हूँ"–गाँधी जी ने कहा–"बल्कि मुझे रोना इस बात पर आ रहा है कि मुझे झूठा समझा गया ।" प्रधानाध्यापक ने इस भोले और सरल हृदय बालक की सत्य निष्ठा से प्रभावित होकर उनका जुर्माना माफ कर दिया ।

बचपन की ये ही छोटी-छोटी बातें व्यक्ति को कहाँ से कहाँ पहुँचा देती हैं । सत्य बोलने का शिक्षण मोहन दास को माता-पिता से मिला । इसको पोषण हरिश्चंद के नाटक से मिला एवं उन्होंने अपने सारे जीवन को ही सत्य बोलने की प्रयोगशाला बनाकर यह प्रमाणित कर दिया कि बचपन के श्रेष्ठ संस्कारों की कितनी महान परिणति होती है ।

कुशरीरभृतो ये तु मनोरोगगाभिबाधिताः ।
दुःस्वभावा दुराचारा वर्द्धयेयुर्न सन्ततिम् ॥ १४॥
भारायिताः समाजाय तेषां सन्ततिरन्ततः ।
सन्ततौ हि सुयोग्यायां पितृसद्गतिरिष्यते ॥ १५॥
हीना चेत्सन्ततिस्तस्या जन्मदातृनृणां ततः ।
इहलोके परत्राऽपि दुर्गतिर्निश्चिताऽभितः ॥ १६॥

भावार्थ–शारीरिक, मानसिक और स्वभाव–चरित्र की दृष्टि से, जो लोग पिछड़ी स्थिति में हों, वे बच्चे उत्पन्न न करें । समाज का भार न बढ़ाएँ, यही उपयुक्त है । संतान के सुयोग्य होने पर पितर सद्गति प्राप्त करते हैं, किन्तु हेय स्तर के होने पर जन्मदाताओं को इस लोक में तथा परलोक में दुर्गति का भाजन भी बनना पड़ता है ॥ १४–१६॥

व्याख्या–स्रष्टा ने विवाह की व्यवस्था इंद्रिय लिप्सा की पूर्ति और भोग विलास के लिए नहीं वरन् सृष्टि संचालन के सबसे अधिक महत्वपूर्ण प्रयोजन राष्ट्र की संपत्ति, श्रेष्ठ नागरिकों को जन्म देने के लिए, नियमित जीवन जीने के लिए की है । विवाह एक संकल्प है, जो राष्ट्र के भावी बल, सत्ता और सम्मान को जागृत रखने के लिए किया जाता है ।

शास्त्रकार का कथन है –

तावेहि विवहावहै सह रेती दधावहै । प्रजां प्रजनतावहै पुत्रान् विन्दावहै बहून् ॥

अर्थात–"विवाह का उद्देश्य परस्पर प्रीति युक्त रहकर राष्ट्र को सुसंतति देना है ।"

शारीरिक, मानसिक और स्वभाव-चरित्र की दृष्टि से स्वस्थ, समुन्नत और सुयोग्य व्यक्ति को ही विवाह करना चाहिए न कि दुष्ट, पतित, दुराचारी और पिछड़ी शारीरिक, मानसिक स्थिति के व्यक्ति को ।

ऋग्वेद का स्पष्ट आदेश है –

"तमरम्मेरा युवतयो युवानं मर्मृज्यमानाः परियन्त्यापः ।
स शुक्रेभिः शिकनमीरेवदस्मे दादायानिध्मोवृत निर्णिगप्सु ॥" (ऋग्वेद २/३५/४)

अर्थात, जिनके हृदय शुद्ध, निर्मल और पवित्र हों तथा जिनकी आयु इस हेतु पूर्ण हो चुकी हो, वे युवक और युवती परस्पर पाणिग्रहण करें । वे शक्ति संपन्न जन विवाह करके परिवार को सतेज बनाएँ ।

समाज को सुयोग्य नागरिक देने के लिए ही प्रजनन किया जाय, न कि कीड़े-मकोड़ों की तरह अयोग्य और प्रतिभाहीन बच्चों को जन्म दिया जाय । वंश वृद्धि का अर्थ है – समाज को राष्ट्र को, सुयोग्य नागरिक प्रदान करना ।

मरणोत्तर जीवन एवं पितर योनि का अस्तित्व जितना सत्य एवं महत्वपूर्ण है, उतना ही सत्य यह भी है कि योग्य संतान के श्रेष्ठ कर्मों से ही पितरों-अभिभावकों को वांछित योनि एवं सुख मिलता है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संख्या नहीं स्तर

गांधारी के सौ पुत्र जन्मे, किन्तु उनकी सुसंस्कारिता की ओर ध्यान नहीं दिया गया । कुंती के पास पांच पांडव ही थे, पर माता ने उन्हें सुयोग्य बनाने में कमी न रखी । महाभारत युद्ध में सौ कौरव मारे गए और पांच पांडव विजयी हुए ।

महाराजा सगर की दोनों रानियों ने तप किया और वरदान माँगने के अवसर पर एक ने हजार पुत्र माँगे और दूसरी ने एक । समुचित भावनात्मक पोषण के अभाव में हजारों पुत्र झगड़ालू, उपद्रवी, उद्धत और अनाचारी निकले । अंततः अपने दर्प एवं दुर्बद्धि के कारण महर्षि कपिल के साथ अन्याय कर बैठे और मारे गए । दूसरी रानी का जो एकमात्र अकेला पुत्र था, उसने समुचित भावनात्मक पोषण, मार्गदर्शन प्राप्त कर महर्षि कपिल को भी प्रसन्न कर लिया तथा राज्य का समुचित संचालन भी किया एवं कीर्ति का भागीदार बना । सगर पुत्रों की भाँति रावण के लाखों पुत्रों की यही दुर्दशा हुई । नीति शास्त्रों में इसीलिए कहा गया है –

''वरमेको गुणी पुत्रो, न च मूर्खाः शतान्यपि । एकाश्चन्द्रस्तमो हन्ति, न तु तारा सहस्त्रशः ॥''

अर्थात, सैकड़ों मूर्ख बेटों की अपेक्षा एक ही गुणी पुत्र श्रेष्ठ है । जैसे अकेला चाँद अंधकार को दूर करता है, हजारों तारे नहीं । उसी प्रकार एक गुणी पुत्र समाज में अंधकार दूर करता व प्रकाश फैलाता है ।

कर्मभिः सद्भिरेवैतत्कुलं संशोभते नृणाम् ।
सन्ततेः संस्कृताया हि हस्तदत्तैः प्रियैरलम् ॥ १७॥
पिण्डैः पितर आयान्ति सुखं सन्तोषमेव च ।
कुपात्राणां ध्रुवं यान्ति नरकं पितरः सदा ॥ १८॥
उत्पाद्या तावती मर्त्यैः सन्ततिः सम्भवेदपि ।
स्नेहरक्षा विकासादि यावत्याः सुव्यवस्थितम् ॥ १९॥
बिना विचारं दायित्वं सन्ततीनां च गृह्यते ।
यदि दुःखं तदा यान्ति सन्ततिं दुःखयन्ति च ॥ २०॥

भावार्थ–वंश सत्कर्मों से चलता है । सुसंस्कारी संतान के हाथ का दिया पिंडदान ही पितरों को सुख देता है । कुपात्रों के पितर तो नरक में गिरते हैं । संतान उतनी उत्पन्न करें, जितनों को दुलार, संरक्षण एवं विकास–पोषण का समुचित प्रबंध संभव हो । बिना विचारे संतानों का उत्तरदायित्व लाद लेने वाले दुख पाते और संतान को दुखी करते हैं ॥ १७–२०॥

व्याख्या–जन सामान्य में एक रूढ़िवादी मान्यता यह है कि वंश परंपरा का निर्वाह संतान के माध्यम से ही संभव है । जबकि यह नितांत भ्रांत चिंतन है । संतान यदि गुण, कर्म, स्वभाव की दृष्टि से निकृष्ट हुई, तो वंश को डुबाती, घर-परिवार को दुर्गति के गर्त में डालती भी है ।

शास्त्रों में यह नहीं कहा गया है कि वंशवृद्धि से ही सद्गति मिलती है, निःसंतान व्यक्ति को सद्गति मिलती है, सद्गति तो मिलती है, व्यक्ति को अपने सत्कर्मों से । मनुस्मृति का यह श्लोक द्रष्टव्य है–

अनेकानिक सहस्राणि कुमार ब्रह्मचारिणाम् । दिवंगतानि विप्राणाम् कृत्वा कुलसंततिम् ॥

(अ० २५ श्लोक १५९)

अर्थात, कइयों हजार कुमार, ब्रह्मचारी ब्राह्मणों ने बिना संतान उत्पन्न किए ही अपने उच्च विचारों, सत्कार्यों और सेवा व्रतों द्वारा स्वर्ग लोक को प्राप्त किया है ।

संतान न होते हुए भी कितने ही लोगों का यश उज्ज्वल और धवल है । कृष्ण को सभी जानते हैं, पर उनकी संतानों के नाम भो शायद ही किसी को मालूम हों । राम के बाद लव-कुश को छोड़कर उनकी अगली पीढ़ी के नाम शायद किसी को ज्ञात हों । महावीर तो वीतराग और गृहत्यागी तपस्वी थे, उनका यश आज भी बढ़ रहा है । बुद्ध को राहुल से अधिक लोग जानते हैं । ईसा, शंकराचार्य, रामानंद, तुलसीदास, सूरदास, मीरा, कबीर, ज्ञानेश्वर, रैदास, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानंद, महर्षि रमण, रामतीर्थ, अरविंद,

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

राजा महेन्द्र प्रताप आदि कितने ही महात्मा महापुरुष थे, जो या तो अविवाहित रहे अथवा गृहस्थ भी रहे, तो उनकी कीर्ति संतान से नहीं उनके अपने सत्कार्यों से ही अमर हुई । अतः व्यक्ति का नाम और यश संतान से नहीं, उसके सद्गुणों और सत्कर्मों से बढ़ता और अमर होता है । संतान यदि निकृष्ट स्तर की हो तो जन्म देने वाले माता-पिता एवं पूर्वज सभी इसका फल भोगते एवं मरणोत्तर जीवन में त्रास पाते हैं ।

महर्षि धौम्य उपस्थित जन समुदाय को समझाते हैं कि माता-पिता संतान उतनी ही उत्पन्न करें, जितनों के प्रति समुचित जिम्मेदारी का निर्वाह कर सकें, अन्यथा संतानों की संख्या ज्यादा बढ़ा लेने और उचित उत्तरदायित्व का निर्वाह न कर पाने के कारण संतान ऐसी निकलेगी, जो कुल को कलंकित करेगी और समाज पर अनावश्यक भार बनेगी ।

ऋग्वेद में स्पष्टतः कहा गया है –

"बहुप्रजा निर्ऋतिमाविवेश ॥" (ऋग्वेद १९६४/३२)

अर्थात, अधिक संतानें सदा कष्ट का कारण बनती हैं । इतना ही नहीं अवांछनीय प्रजनन कितने संकट उत्पन्न करता है, इसे गंभीरता से समझने का प्रयत्न करने पर लगता है 'मरणं बिन्दुपातेन.....' की उक्ति अक्षरशः सही है । विशेष प्रकार की बिच्छू मादा और एक खास किस्म की मकड़ी प्रजनन के साथ ही मृत्यु के मुख में चली जाती है । मनुष्य को वैसा तो नहीं करना पड़ता, पर त्रास लगभग उतना ही मिलता है ।

व्यासजी एवं शुकदेव

व्यास जी की इच्छा हुई की पुत्र उत्पन्न करें, जो पिंडदान और बुढ़ापे का सहारा बने । पत्नी के गर्भ में एक बालक आ गया । बालक बड़ा तेजस्वी था । गर्भ में ही तपश्चर्या करने लगा । सोलह वर्ष पेट में हो गए, तो व्यास जी ने गर्भस्थ आत्मा से बाहर न आने का कारण पूछा और कहा– "हमने तुम्हारी सुविधा की सब व्यवस्था कर रखी है । तुमसे वंश चलने की आशा रखी है ।" शुकदेव ने गर्भ से ही बोलना शुरू किया और पिता को डाँटते हुए कहा– "यदि संतान से वंश चला होता, तो कुत्ते और शूकरों की भी सद्गति हो गई होती । आप अपने कल्याण की बात सोचें । मुझे तो चौरासी लाख योनियों के कटु अनुभव हैं ।"

पिता के बहुत आग्रह पर शुकदेव जी जन्मे तो सही, पर इसके पश्चात ही वन प्रदेश में साधना के निमित्त चले गए । पिता का कोई सहयोग न उनने लिया न दिया ।

कुलीनता का आदि एवं अंत

महान् विचारक सिसरो से किसी बात पर एक सरदार की कहा-सुनी हो गई । सरदार ने विचारक से कहा– "तुम नीच कुल के हो । तुम्हारी मेरी क्या समता ।" सिसरो ने कहा– "मेरे कुल की कुलीनता मुझसे आरंभ होती है और आपकी कुलीनता का आपके साथ अंत ।" सभ्यता का, कुलीनता का जन्म से नहीं, वरन् चरित्र से सीधा संबंध है ।

बाँस का वंश डूबा

एक बाँस का पेड़ था, जंगल में अकेला खड़ा था । पड़ौस में रहने वाले समय-समय पर उसमें से छोटी-बड़ी लकड़ी काट ले जाते थे । एक दिन नारद जी उधर से गुजरे । बाँस गिड़गिड़ाकर बोला– "मुझे बड़ा परिवारी होने का आशीर्वाद दीजिए ।" मुनि सहज भाव से 'तथास्तु' कहकर आगे चले गए । थोड़े दिनों में बाँस के अंकुर उपजे और बड़ी सी झाड़ी बन गई । धूप न मिलने से बूढ़ा बाँस सूखने लगा । झाड़ी इतनी बड़ी और कटीली थी कि उसमें हाथ डालने तक की किसी की हिम्मत न पड़ती । जरूरत होने पर भी लोग मन मार कर बैठ जाते । घने पत्तों से खिन्न होकर चिड़ियों ने घोंसले तक वहाँ बनाने बंद कर दिए ।

एक बार तेज आँधी आई । बाँस आपस में रगड़ने लगे और उनमें आग पैदा हो गई । पूरा समूह जलगया । बाँस सोचने लगा, निरर्थक परिवार बढ़ाने की अपेक्षा तो अकेले रहना अच्छा था ।

पिता–माता के अनुरूप संतान

राजगृह की रानी चेतना को गर्भावस्था में मांस खाने की इच्छा हुई । उसने कितने ही निरीह प्राणियों का बध कराया और उनका मांस खाया । बालक नियत समय पर उत्पन्न हुआ । वह बड़े क्रूर स्वभाव का था । बड़ा हुआ तो पिता को बंदीगृह में डालकर स्वयं सिंहासनारूढ़ हो गया । पिता को पुत्र द्वारा त्रास दिए जाने पर रानी चेतना को दुख हुआ । वह कुछ कर तो सकती नहीं थी । दिन में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एक बार मिलने की आज्ञा प्राप्त कर ली, सो उन्हें बालों में छिपाकर कुछ भोजन दे आती थी । इसी प्रकार बहुत दिन बीत गए ।

पिता को इस प्रकार त्रास देने पर एक दिन पुत्र को बहुत आत्मग्लानि हुई । वह उन्हें बंदीगृह से मुक्त करने और बेड़ी काटने को स्वयं हथौड़ा लेकर चला । हथौड़े की चोट गलती से राजा को लगी और उनका वही प्राणांत हो गया ।

चेतना और उसके पति दोनों ही मांसाहार के पापकर्म का प्रतिफल प्राप्त करते हुए परलोक चले गए । पिता-माता के कुमार्गगामी होने से संतान भी वैसी ही होती है ।

क्लिन्नमृत्स्नेव बालास्तु भवन्त्येव च तान् समान् ।
परिष्कृतान् कुटुम्बस्य वृतौ कर्तुमिहेष्यते ॥ २१॥
एतेषां स्नेहिनामत्र समाह्वाच्च नरः स्वयम् ।
पूर्वमेवोपयुक्ताश्च स्थितीरुत्पादयेच्छुभाः ॥ २२॥
पित्रोः शारीरिकं स्वास्थ्यं विकासो मानसस्तथा ।
अर्थप्रबन्ध एतादृग् भवेद् येन नवागतः ॥ २३॥
उपयुक्तां स्थितिं नित्यं लभते यदि कश्चन ।
पित्रो रोगी भवेत्तहि सन्ततिः साऽपि जन्मनः ॥ २४॥
अनुन्नतोऽसंस्कृतश्च जन्मदातृस्तरो यदि ।
बालास्तथैव मूढाश्च दुश्चरित्रा भवन्त्यपि ॥ २५॥
अर्थस्थितावयोग्यायामभावग्रस्ततां समे ।
बालका यान्ति तिष्ठन्ति तेऽविकासस्थितौ समे ॥ २६॥

भावार्थ–बालक गीली मिट्टी के समान है । उन्हें परिवार के वातावरण में ढाला जाता है । इन सम्मानित अभ्यागतों को बुलाने से पूर्व उनके लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न कर लेनी चाहिए । माता-पिता का शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक विकास, अर्थ प्रबंध ऐसा होना चाहिए, जिससे नवागत को आरंभ से ही उपयुक्तता उपलब्ध हो सके । माता-पिता में से कोई भी रोगी होने पर संतान जन्मजात रूप से रोगी उत्पन्न होती है । जन्मदाताओं का बौद्धिक स्तर गया-गुजरा हो, स्वभाव अनगढ़ हो तो बच्चे भी वैसे ही मूढ़मति उत्पन्न होंगे और आगे चलकर दुश्चरित्र बनेंगे । अर्थ व्यवस्था ठीक न होने की स्थिति में बालकों को अभावग्रस्त रहना पड़ता है और वे अविकसित स्तर के रह जाते हैं ॥ २१-२६॥

व्याख्या–पारिवारिक वातावरण की शिशुओं के निर्माण में बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है । जिस प्रकार कुम्हार चाक के समीप बैठकर मिट्टी को जैसी इच्छा हो वैसा रूप दे देता है, ठीक उसी प्रकार माता एवं पिता अभ्यागत संतान को गुण, कर्म, स्वभाव रूपी संपदा के माध्यम से संस्कार देने में सक्षम हैं । यह उन पर निर्भर करता है कि वे इस कार्य में कितने सजग एवं समर्थ हैं । शास्त्रों में इसीलिए विवाह एवं प्रजनन संबंधी आयु मर्यादा के साथ-साथ पति-पत्नी की मनःस्थिति, परिवार रूपी परिस्थिति को अनुकूल बनाने के प्रसंग सुप्रजनन के संदर्भ में आते हैं ।

पहले माता-पिता का स्तर ऊँचा होना, चिंतन परिष्कृत होना एवं शरीर का स्वस्थ होना जरूरी है । ऐसा न होने पर जैसे अनगढ़, चरित्रहीन अभिभावक होंगे, वैसी ही संतति जन्मेगी । स्वावलंबन द्वारा आजीविका उपार्जन की जब तक व्यवस्था न हो, तब तक संतान को निमंत्रण न दिया जाय । निर्धनता कोई अभिशाप नहीं, पर अर्थव्यवस्था ऐसी तो हो कि आगंतुक अतिथि का भार वहन किया जा सके ।

जैसा चाहा, वैसा बनाया

जहाँ पति-पत्नी की प्रकृति मिल जाती है और दोनों में परस्पर सघन सहयोग होता है, वहाँ इच्छित संतान का होना सुनिश्चित है । कोर्ट फील्ड (इंग्लैंड) के कर्नल जान फ्रांसिवान की पत्नी लुइस

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एलिजावेथ अत्यंत धार्मिक प्रकृति की विदुषी महिला थीं । पति भी उनके ठीक उसी प्रकृति के थे । दोनों दूध-पानी की तरह एक थे । संतान के संबंध में दोनों की इच्छाएं भी एक सी थीं । पति को जब अवसर मिलता गिरजा जाते, पर पत्नी तो बहुत ही भक्ति-भाव संपन्न थीं, वे घंटों उपासना करती थीं और यही प्रार्थना करती थीं कि उनकी सभी संतानें धर्म की सेवा में ही अपने जीवन का उत्सर्ग करें । उनकी यह मनोकामना पूर्णतः सफलीभूत हुई । लुईस के लड़के और लड़कियाँ थीं । वे सभी धर्म सेवी बने, अविवाहित रहे और सारा जीवन ईसाई मिशन के लिए दान कर दिया । पादरी और ननों के रूप में पवित्र जीवन बिताने वाले पवित्र माता के इन बच्चों की चर्चा पाश्चात्य जगत में शताब्दियों तक चर्चा का विषय रही है ।

संसार में एक नहीं हजारों महापुरुषों के उदाहरण मिलते हैं, जो अपने माता-पिता अथवा अभिभावकों से प्रेरणा-प्रोत्साहन पाकर मंदबुद्धि से बुद्धूपन से पीछा छुड़ाकर संसार के जाज्वल्यमान नक्षत्र बन गए । डार्विन, न्यूटन, नेपोलियन, महात्मा गाँधी-ये सभी बचपन में फिसड्डी कहे जाने वाले बालकों में गिने जाते थे, परंतु इनके पिछड़ेपन से इनके अभिभावक निराश नहीं हुए, वे बराबर उनको उपदेश करते और होनहार होने की शिक्षा दिया करते थे और वह समय भी आया, जब यही बालक विश्व के मूर्धन्यों में गिने जाने लगे ।

रामू भेड़िया

किसी नवजात बालक को अपने परंपरागत वातावरण में भिन्न प्रकार की परिस्थितियों में रखा जाय, तो वह उस बदले हुए वातावरण से ही पला हुआ होगा । उसमें पूर्वजों की विशेषताओं का वंशानुक्रम जितना थोड़ा सा ही प्रभाव रह जाएगा । शेष सब कुछ बदला हुआ ही होगा । प्राचीनकाल में जाति परिवर्तन के अनेक उदाहरण इतिहास पुराणों में भरे पड़े हैं । इसका कारण जन्म क्षेत्र में भिन्नता हो जाना ही रहा है । परिस्थिति का प्रभाव बालपन में ही नहीं, बड़ी आयु में भी पड़ता है । लोग मानसिक कायाकल्प करते, कुछ से कुछ बनते देखे गए हैं । इस परिवर्तन में वातावरण का दबाव ही प्रधान रूप से काम करता है ।

उत्तरप्रदेश के आगरा जिले में एक तीन वर्ष का बालक शिकारियों ने भेड़िए की माँद से बरामद किया था । भेड़िए उसे कहीं से उठा लाए थे । संयोगवश मादा ने उसे अपना बच्चा मानकर दूध पिलाना आरंभ कर दिया और पाल लिया । शिकारियों ने भेड़ियों को मारकर जब इस मनुष्य बालक को पकड़ा, तो सारी आदतें भेड़ियों जैसी थीं । चार पैर से चलना, कच्चा मांस खाना, वैसा ही बोलना तथा अन्य आदतों में भेड़ियों को अनुकरण करना उसका स्वभाव बन चुका था । इस बालक को लखनऊ मेडीकल कालेज में सुधारने के लिए रखा गया । वातावरण के प्रभाव से मनुष्य कैसे भेड़ियों जैसी जीवनचर्या का आदी हो गया । यह देखने को भारी संख्या में देश-विदेश के व्यक्ति वहाँ पहुँचते रहे ।

एक भ्रांतिपूर्ण मान्यता

कई बार व्यक्तियों को यह सनक सवार रही है कि चूँकि पुरुष पक्ष बहुत स्वस्थ, सुयोग्य एवं समर्थ है, इसीलिए उसे बहुत विवाह करने चाहिए और बहुत बच्चे पैदा करने चाहिए, ताकि वे उसी के जैसे गुण वाले हों, और उनका नाम या वंश अधिक ख्याति प्राप्त करे । यह प्रयोग अनेक जगह हुए हैं, पर उससे संख्या मात्र बढ़ी । पति-पत्नी में सघन विश्वास का वातावरण न बना, प्रेम-सौहार्द्र भी पैदा न हुआ, फलस्वरूप संतान संख्या वृद्धि की बात तो सहज थी, सो पूरी हो गई, पर पिता के गुण ही सब संतान में होंगे यह प्रयोजन पूरा न हुआ । घृणा और अविश्वास के वातावरण में चलने वाले दांपत्य जीवन किसी प्रकार गाड़ी धकेलते तो रहते हैं, पर उनको जो शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं वंश परंपरागत लाभ मिलना चाहिए वह बिल्कुल ही नहीं मिलता ।

बच्चे को अनीति का प्रोत्साहन

सिंधुराज के राज्य में बकमुआर नामक एक भयंकर दस्यु हुआ है । उसने युवावस्था के २० वर्षों में हजारों का कत्ल किया और प्रचुर संपदा लूटी । पकड़े जाने पर उसे मृत्यु दंड मिला ।

उस समय उसके संबंधी मिलने आए, तो उसने अपनी माता से मिलने से इन्कार कर दिया । कारण पूछने पर कहा- "बचपन में मैं स्वर्ण मुद्रा चुराकर लाया था और वह माता को दी, तो उसने मेरी चतुरता को सराहा ही नहीं, प्यार भरा पुरस्कार भी दिया । उस दिन के बाद से बदला जीवन आज इस परिणति रूप में है । उसी माँ के प्रोत्साहन का प्रतिफल है कि मैं इतना नीच बना और मृत्युदंड का भागी हुआ ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

धर्मनिष्ठ के संस्कार फलीभूत हुए

आंध्र प्रांत बना तो उसके मुख्यमंत्री टी० प्रकाशम् बनाए गए । तब वे ८४ वर्ष के थे । इनका जीवन इतिहास ऐसा था, जिसके लिए उन दिनों उनसे अच्छा प्रामाणिक व्यक्ति दूसरा था नहीं । कुछ दिन मुख्यमंत्री पद सँभाल कर अपना प्रिय विषय रचनात्मक कार्य हाथ में ले लिया और जब तक जीवित रहे, उसी काम में लगे रहे । टी० प्रकाशम् ने गरीबी के दिन देखे थे । पिता की मृत्यु पहले ही हो गई थी । घर में अकेली माँ थी । उनकी माता एक छोटा होटल चलाकर परिवार का पालन करतीं । टी० प्रकाशम् ने अपनी माँ के स्वावलंबन प्रधान जीवन से ही शिक्षा ली, पुरुषार्थ से वकालत पास की और इंग्लैंड जाकर बैरिस्टर बनकर आए । अपनी आजीविका का एक बड़ा भाग वे पिछड़े लोगों की सहायता में लगाते रहे ।

स्वतंत्रता आंदोलन में उनने अग्रिम पंक्ति में भाग लिया । दैनिक 'स्वराज्य' सफलतापूर्वक चलाया । जेल जाते रहे और अनेक में इसके लिए प्राण फूँकते रहे । उनके महामानव बनने के मूल में थे – माँ के द्वारा बाल्यकाल में डाले गए संस्कार ।

झूठ नहीं बोला

बंगाल के भूतपूर्व मुख्यमंत्री डॉ० विधान चंद्र राय बाल्यकाल से ही मानवी सद्गुणों को अपनाने वालों में से रहे । उन्हें उनके पिता से विरासत में मिले दो गुण थे–सत्य के प्रति दृढ़ निष्ठा एवं सत्साहस । एक बार उनके अध्यापक मोटर एक्सीडेंट के संबंध में निर्दोष सिद्ध होने के लिए घटना स्थल पर उपस्थित विद्यार्थी राय से झूठी गवाही दिलवाना चाहते थे । उन्होंने झूठ बोलने से इन्कार कर दिया । जो देखा, वह कहा । इस पर अध्यापक चिढ़ गए और उन्हें अनुत्तीर्ण कर दिया । चिकित्सा विज्ञान में एक वर्ष का समय खराब होना, उन्हें झूठ बोलने की तुलना में कम बुरा लगा । अपनी इस प्रामाणिकता के कारण वे और अधिक निखर कर एक सहृदय विश्ववंद्य चिकित्सक-राजनेता के रूप में विकसित हुए ।

पहले जीवन में उतरे

पाँच पांडव, सौ कौरव द्रोणाचार्य की पाठशाला में पढ़ने गए । सभी शिष्य एक पाठ रोज याद कर लेते, पर युधिष्ठिर को कई दिन से एक ही पाठ को रटते हो गए । गुरुजी ने झल्लाकर इसका कारण पूछा । 'सत्यं वद' इस पहले पाठ को शब्दों से याद नहीं कर रहा हूँ । जीवन में उतारने का ताना-बाना बुन रहा हूँ । जब एक पाठ हृदयंगम हो जाएगा, तब दूसरा आरंभ करूँगा ।

यही कारण था कि युधिष्ठिर धर्मराज एवं पांडवों में श्रेष्ठ कहलाए ।

गृहस्थजीवनैर्मर्त्यैरुपस्थाप्या निजाः शुभाः ।
आदर्शा अथ सौजन्ये संस्कार्यं च कुटुम्बकम् ॥ २७॥
अभ्यासः सत्प्रवृत्तीनां कर्तव्यः सन्ततं तथा ।
स्नेहो देयश्च कर्त्तव्या हार्दिकी ममताऽपि च ॥ २८॥
अवाञ्छनीयतोत्पत्तेः सतर्कैः स्थेयमप्यलम् ।
भ्रष्टं चिन्तनमप्येतद्दुराचरणमप्यथ ॥ २९॥
उच्छृङ्खला व्यवहृतिः सद्गुणानां तु तस्कराः ।
विचार्येदं निरोद्धव्याः स्वक्षेत्रे प्रहरिणेव च ॥ ३०॥
प्रांगणे विषवृक्षश्चाऽनौचित्यस्य कदाचन ।
नैवोद्भवेदिदं सर्वैर्गौरवं चाऽभीमन्यताम् ॥ ३१॥
सद्गृहस्थाश्च धन्यास्ते सर्वतो गौरवान्विताः ।
परिवारं निजं ते तु सुखिनं च समुन्नतम् ॥ ३२॥
सुसंस्कृतं विनिर्मान्ति श्रेयो लाभं प्रयान्ति च ।
भविष्यदुज्ज्वलं तेषां सन्ततेरपि स्वस्य च ॥ ३३॥

भावार्थ–गृहस्थ जीवन जीने वालों को अपना आदर्श उपस्थित करके समूचे परिकर को सज्जनता के ढाँचे में ढालना चाहिए और सत्प्रवृत्तियों का सतत् अभ्यास करना चाहिए । स्नेह दिया जाय और दुलार किया जाय, किन्तु साथ ही अवांछनीयताओं से सतर्क भी रहा जाय । भ्रष्ट–चिंतन, दुष्ट–आचरण और उच्छृंखल व्यवहार को

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

चोर–तस्कर मानकर सावधान प्रहरी की तरह, उन्हें अपने क्षेत्र में प्रवेश करने से रोकना चाहिए । अनौचित्य का विष–वृक्ष अपने आँगन में न उगने देने में ही गौरव है । ऐसे गौरवशाली सद्गृहस्थ हर दृष्टि से धन्य बनते हैं । अपने परिवार को सुखी, समुन्नत और सुसंस्कृत बनाकर श्रेय लाभ प्राप्त करते हैं, उनकी संतति का भविष्य तथा अपना भविष्य भी उज्ज्वल बन जाता है ॥ २७–३३ ॥

व्याख्या–परिवार में जैसा वातावरण होता है, जैसी प्रवृत्तियाँ पनपती हैं, बच्चे सहज ही उनका अनुकरण करते हैं । यह मानवी स्वभाव की एक जन्मजात विशेषता है कि बड़े जैसा करते हैं, छोटे उनके अनुरूप ही बनते चले जाते हैं । समाज रूपी विराट् परिवार में भी जैसा प्रचलन होता है, जनमानस सहज ही उसके अनुरूप ढलता चला जाता है । जब परिवार में जो कुछ बड़े अपनाते, जीवन में उतारते हैं, तो बालकों में वे विशेषताएँ सहज ही विकसित होने लगती हैं । मनुष्य से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपनी गरिमा के अनुकूल आचरण कर अपने आदर्शों से दूसरों को शिक्षण दे । अभिभावकों की अपनी निज की बड़ी जिम्मेदारियों से भरी भूमिका गृहस्थ जीवन में होती है । यह उन्हीं का कर्तव्य है कि वे छोटे बच्चों के मानस में दुष्प्रवृत्तियों के प्रवेश को रोकने हेतु सतत् सतर्क रहें, एक पहरेदार की भूमिका निबाहें । उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे बच्चों को प्यार भरा शिक्षण देंगे, उन्हें स्नेह का अभाव अनुभव नहीं होने देंगे, किन्तु साथ ही इतना अनुशासित भी रखेंगे कि वे इस दुलार का दुरुपयोग न करने लगें अथवा इसकी आड़ में अपना भविष्य नष्ट करने वाली निकृष्ट आदतें न अपनाने लगें । स्वयं अपना जीवन सुसंस्कृत, सुव्यवस्थित बना लेना ही काफी नहीं होता । अपनी संतानों, परिवारीजनों में संस्कारों का पोषण देने हेतु कितना पुरुषार्थ किया गया, इससे ही जीवन की सार्थकता आँकी जाती है । ऐसे गृहस्थों की ही गरिमा श्लाघ्य है, इन्हीं का जीवन धन्य है ।

शुभारंभ स्वयं से

आदर्शों का शिक्षण स्वयं से आरंभ होता है । यदि अपने जीवन में, अपने परिवार में सत्प्रवृत्तियाँ पनपेंगी, तो समाज में भी स्वस्थ परंपराएँ जन्म लेंगी । सेठ जमनालाल बजाज ने गाँधी जी के सिद्धांतों और आदर्शों को बड़ी निष्ठा के साथ अपनाया था । एक सभा में गाँधी जी ने, जब स्त्रियों के गहनों का परित्याग करने को कहा, तो यह बात जमनालाल जी के दिल में बैठ गई । उन्होंने तुरंत अपनी पत्नी जानकी देवी को पत्र लिखा कि बापू का आदेश है, गहने त्याग दो । जब पति का ऐसा आग्रह हो, तो पत्नी उसे कैसे टाल सकती थी । उन्होंने एक एक कर अपने गहने, सुहाग चिह्न तक निकाल दिए । इसका प्रभाव बच्चों पर भी पड़ा । उन्होंने भी अपनी सुविधा के सभी साधन राष्ट्र हेतु समर्पित कर दिए, जबकि उपयोग की उनको पूर्ण स्वतंत्रता थी ।

गांधी जी की आदर्शनिष्ठा

एक बार आचार्य जुगलकिशोर ने गाँधी जी से पूछा– "बापू ! यह कैसे संभव हुआ कि जो व्यक्ति कभी सुविधाओं को छोड़कर कष्ट भरा जीवन जी भी नहीं सकते थे, उन्होंने आपके एक इशारे पर सब कुछ राष्ट्रहित हेतु समर्पित कर दिया । यह तो एक चमत्कार है ।" मंद मुस्कान से बापू बोले– "अरे भाई ! सीधी सी बात है । यह भी तो देखो कि किसने कहा व करवाया । जिसने कहा, उसने अपने जीवन में भी तो उन आदर्शों को समाविष्ट किया । लोग अनुकरण उन्हीं का करते हैं, जिनकी कथनी व करनी एक सी पाते हैं । फिर भी हर व्यक्ति अपूर्ण है । मैं भी अभी प्रयोग की अवधि से ही गुजर रहा हूँ ।"

सात बार और पढ़ें

काशी में अध्ययन कर देवदत्त शास्त्री लौटे, तो अपने यहाँ के नरेश के पास गए । उनसे प्रस्ताव रखा– "मैं आपको गीता का भाष्य सुनाना चाहता हूँ ।" नरेश ने नम्रतापूर्वक कहा– "आप कृपया घर जाएँ । सात बार गीता और पढ़ें, फिर आएँ । तब मैं आपका भाष्य सुनूँगा ।" शास्त्री जी पहले तो क्रुद्ध हुए । घर आकर पत्नी से परामर्श किया, तो उनने कहा– "क्या हर्ज है, राजा ने कहा है, तो पाठ कर लें, फिर जाएँ ।" अतः वे पढ़ने लगे । पढ़कर राजा के समीप पहुँचे । इस बार फिर नरेश ने सात बार पढ़कर आने को कहा । घर गए, तो पत्नी ने समझाया– "राजा भी विद्वान हैं, उनके कथन में कोई गूढ़ अभिप्राय संभव है ।" शास्त्री जी नित्य एकांत में पुनः गीता पढ़ने लगे । तीसरे दिन सहसा उनका ध्यान गीता के तत्वज्ञान की ओर गया । उसके बोध से प्रशिक्षण पाकर भीतर उमड़ने वाले आनंद–प्रवाह से वे विभोर हो उठे । पछताए कि गीता भी कोई व्याख्या की वस्तु है । यह तो समझने और जीने की प्रक्रिया है, दिशा है । भला इस कामधेनु को भी यों बेचना चाहिए दरबार में ।

महीने बीत गए । शास्त्री जी को राजा के यहाँ जाना अनावश्यक लगा । तभी नरेश एक दिन उन्हें खोजते आ

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पहुँचे । चरणों में शीश झुकाकर बोले– ''अब आप गीतामय हो गए हैं । मुझे कृतार्थ करें, गीता सुनाकर, क्योंकि अब आपके मुख से सचमुच गीता का तत्वज्ञान निकलेगा ।''

बच्चे को उड़ना सिखाया

गरुड़ ने अपने बच्चों को पीठ पर बैठाया और उसे अपने साथ दूसरे सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया । दिन भर दोनों दाना चुगते रहे, सायंकाल घर लौटे । गरुड़ अपने बच्चे को यातायात प्रयोजन में भी साथ लिया करता था । यह क्रम बहुत दिन चला । गरुड़ ने बहुतेरा कहा, पर बच्चे ने न सीखा । उसकी धारणा थी जब तक नि:शुल्क साधन उपलब्ध हों, तब तक स्वयं श्रम क्यों किया जाए ? गरुड़ बच्चे की इस दुर्बलता को बड़ी सतर्कता से देखता रहा । एक दिन जब वह आकाश में उड़ रहा था, तब धीरे से अपने पंख खींच लिए । बच्चा गिरने लगा, तब चेत आया, पंख फड़फड़ाए । गिरते-गिरते बचा । पर अब उसने उड़ना सीखने की आवश्यकता अनुभव कर ली । सायंकाल बालक गरुड़ ने माँ से कहा– ''माँ, आज पंख न फड़फड़ाए होते, तो पिताजी ने बीच में ही मार दिया होता ।'' मादा गरुड़ हँसी और बोली– ''बेटे ! जो अपने आप नहीं सीखते, स्वावलंबी नहीं बनते, उन्हें सिखाने-समझाने का यही नियम है ।''

अभिभावकों की असावधानी

अर्जुन सुभद्रा को चक्रव्यूह का वेधन समझा रहे थे । छ: चक्रों का वेधन समझा चुके, तब उन्हें नींद आ गई । फलत: एक चक्र का वेधन उदरस्थ अभिमन्यु न सीख सका । इसी कारण अभिमन्यु को उस कुचक्र में प्राण गँवाना पड़ा । माता-पिता की असावधानी का दुख संतान को भुगतना पड़ता है ।

बदतमीजों से तमीज सीखी

लुकमान से किसी ने पूछा– ''आपने ऐसी तमीज किससे सीखी ?'' उनने जवाब दिया– ''बदतमीजों से । वे जो करते और भोगते हैं, उसका मैंने ध्यान रखा और अपनी आदतों को उस कसौटी पर कस कर सही किया ।''

भिखारी कलाकार

एक मच्छर शहद की मक्खियों के छत्ते पर पहुँचा और बोला– ''वह बड़ा संगीतज्ञ है । मक्खियों के बच्चों को संगीत सिखाना चाहता है । बदले में थोड़ा सा शहद लिया करेगा ।'' रानी मक्खी तक समाचार पहुँचा, तो उनने स्पष्ट इन्कार कर दिया, कहा– ''जिस प्रकार संगीत का ज्ञाता बनकर मच्छर हमारे दरवाजे पर भीख माँगने आया है, उसी प्रकार हमारे बच्चे भी परिश्रम छोड़कर भीख माँगने लगेंगे । मैं नहीं चाहती कि संस्कारों के स्थान पर सस्ते में कुछ पाने का लालच भरा शिक्षण इन्हें मिले । इन्हें अपने आप ही सब कुछ सीखने दो, तभी ये जीवन साधना में खरे उतरेंगे ।''

लापरवाही सहन नहीं

मद्रास में एक छोटा बच्चा गाँधी जी को आग्रहपूर्वक एक छोटी पेंसिल लिखने के लिए दे गया । उनने कई दिन उसी से लिखा । एक दिन वह गुम हो गई । गाँधी जी ने सारा सामान ढूँढ़ डाला और तब चैन से बैठे, जब पेंसिल खोज ली । वे कहते थे– ''मैं बच्चे की भावना के साथ खिलवाड़ नहीं कर सकता और न लापरवाही को बढ़ने दूँगा, चाहे वह मेरी ही क्यों न हो । मेरी आज की तनिक सी लापरवाही कल विकराल रूप ले सकती है ।''

व्रत नहीं छोड़ा

राजा प्रह्लाद ने जब राज-काज सँभाला, तो अपनी ओर से प्रजा की गतिविधियों में शील के समावेश का पूरा-पूरा ध्यान रखा । याचक कोई खाली हाथ नहीं जाता था । एक दिन इंद्र ब्राह्मण के वेश में आया और प्रह्लाद से शील माँगा । उनने दे दिया, पर अपने हिस्से का व्रत नहीं छोड़ा । शील के साथ वैभव चला गया, पर उनका निजी व्रत बना रहने से वह पुन: वापस लौट आया ।

व्रत अनुशासन ही वह संस्कारों की निधि है, जो जब तक किसी के पास है, सारा वैभव उसके समक्ष तुच्छ है ।

गुण खोजी बनो, छिद्रान्वेषी नहीं

कौन क्या ग्रहण करता है, यह उसके दृष्टिकोण पर निर्भर करता है । सुकरात से किसी जिज्ञासु ने पूछा– ''दीपक तले अँधेरा और चंद्रमा के मुख पर कलंक क्यों है ?'' संत ने उलटकर जिज्ञासु से पूछा– ''तुम्हें यह प्रश्न पूछते क्यों नहीं बना कि दीपक में प्रकाश और चंद्रमा में ज्योति क्यों है ?'' उपस्थित लोगों ने उस प्रश्नोत्तर से निष्कर्ष निकाला कि हमारा दृष्टिकोण छिद्रान्वेषी नहीं, गुण खोजी होना चाहिए ।

परिवार में दृष्टिकोण के परिष्कार का समुचित अभ्यास बालकों को कराया जाना चाहिए, ताकि वे उचित-

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अनुचित में भेद कर तदनुसार उचित ही ग्रहण करें ।

कड़वे बोल न बोल

दुराग्रह यह भी नहीं होना चाहिए कि बच्चों के सामने हमारी हेठी होगी । कभी-कभी संस्कारी जीवन की प्रेरणा नन्हें शिशु भी दे जाते हैं । पति-पत्नी में अनबन हो गई । एक-दूसरे को कटु शब्द बोल गए । मनों को चोट पहुँची और बोलचाल बंद हो गई । उनका एक सात वर्षीय बालक था । वह कहीं से गीत के बोल सुन आया, "मुख से कड़वे बोल न बोल ।" बालक को स्वर रुचा । वह उसे पिता के कमरे में बैठकर गुनगुनाने लगा । पिता का उस पर ध्यान गया, तो चौंके, मन में खींझे, क्या मैं ही कड़वा बोलता हूँ ?" बच्चे से बोले- "बेटा, जा अपनी मम्मी के कमरे में जाकर गा ।" भोला बालक वही गीत माँ के कमरे में जाकर गाने लगा । माँ ने सुना, तो खीझ भी आई और हँसी भी । वह भी बोलीं-"बेटा, जा अपने पिताजी के पास बैठकर गा ।" बालक फिर पिताजी के कमरे में जाकर गाने लगा, तो डाँट पड़ गई । बेचारा क्या करता । दोनों कमरों के बीच बरामदे में बैठकर गाने लगा-मुख से कड़वे बोल न बोल । आवाज सुनकर माता-पिता दोनों अपने कमरे से निकले, बच्चे को रोकने, पर एक-दूसरे को देखकर चुप रह गए । बालक ने दोनों को देखा, भाव पढ़े और बोला- "आप दोनों को यह गाना अच्छा नहीं लगता, तो अलग बैठकर गा रहा हूँ । अब क्या शिकायत है ?" पति-पत्नी ने एक दूसरे को देखा एवं अपनी भूल समझी । दोनों बालक के पास गए, बोले, "अच्छा भाई, हमें भी अच्छा लगता है । अब हमारे सामने गा लो । तुमने वस्तुतः हमें अपनी गलती का बोध करा दिया ।" सद्विचार कहीं से भी उभरें, ग्राह्य हैं ।

समत्वेन च मान्यास्तु कन्याः पुत्राश्च मानवैः ।
तयोर्भेदो न कर्तव्यो मान्या श्रेष्ठा च कन्यका ॥ ३४॥
सा हि श्रेयस्करी नृणामुभयोर्वंशयोर्यतः ।
जानक्या जनकः ख्यातः कुपुत्रैर्नहि रावणः ॥ ३५॥
अनुभवन्ति स्वतो डिम्भा गर्भमातुरलं समैः ।
गर्भिण्या मानसं स्वास्थ्यं शारीरं शोभनस्थितौ ॥ ३६॥
यथा स्याच्च तथा कार्यं विहाराऽऽहारयोरपि ।
सात्विकत्वं भवेद् बालवृद्धिबाधा न सम्भवेत् ॥ ३७॥
वातावृत्तिः कुटुम्बस्य सदा स्यादीदृशी शुभा ।
कुसंस्कारा न बालेषु भवेयुरुदिता क्वचित् ॥ ३८॥
अभिभावकसंज्ञेभ्यो भिन्नैरपि जनैर्नहि ।
व्यवहार्यं तथा येन दूषिता स्याच्छिशुस्थितिः ॥ ३९॥
चिन्तनं ते चरित्रं च यथा पश्यन्ति सद्मनि ।
कुटुम्बे वा तथा तेषां स्वभावो भवति स्वतः ॥ ४०॥
भविष्यच्चिन्तया ताँश्च शोभनायां निवासयेत् ।
वातावृतौ शिशूं स्तेषां व्यक्तित्वस्य परिष्कृतिः ॥ ४१॥
प्रारम्भिकेषु वर्षेषु दशस्वेव मता शुभा ।
अस्मिन् काले कुटुम्बं च सतर्कं सततं भवेत् ॥ ४२॥
उपयुक्ताः निजाः सर्वैः परिवारगतैर्नरैः ।
उपस्थाप्याः शुभादर्शास्तेषामग्रे निरन्तरम् ॥ ४३॥

भावार्थ-कन्या और पुत्र को समान माना जाय । उनके बीच भेदभाव न किया जाय । पुत्र से भी अधिक कन्या को श्रेष्ठ और श्रेयस्कर माना जाना चाहिए, चूँकि वह पिता और श्वसुर दो वंशों के कल्याण से संबद्ध है । जनक ने कन्या से ही श्रेय पाया और रावण के अनेक पुत्र उसके लिए अपयश का कारण बने । बच्चे गर्भ में रहकर माता से बहुत कुछ प्राप्त कर लेते हैं । इसलिए गर्भिणी के शारीरिक-मानसिक स्वास्थ्य को सही रखा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जाय, उसके आहार–विहार में ऐसी सात्विकता रखी जाय, जो शिशु के विकास में व्यवधान उत्पन्न न करे । परिवार का वातावरण ऐसा रहे, जिसका बालकों पर कुसंस्कारी प्रभाव न पड़े । अभिभावकों के अतिरिक्त घर के अन्य सदस्य भी बालक के सम्मुख ऐसा व्यवहार प्रस्तुत करें, जिससे कोमल मन पर बुरी छाप न पड़े । चिंतन और चरित्र जैसा भी घर–परिवार में वे देखते हैं, वैसे ही ढलने लगते हैं । बच्चों के भविष्य का ध्यान रखते हुए, उन्हें सुसंस्कारी वातावरण में ही पाला जाय । व्यक्तित्व के परिष्कार की ठीक अवधि आरंभ के दस वर्षों में मानी गई है । इस अवधि में समूचे परिवार को सतर्कता बरतनी चाहिए और अपने उपयुक्त उदाहरण सदा उसके सम्मुख प्रस्तुत करने चाहिए ॥ ३४–४३॥

व्याख्या–जैसी भ्रांति जन सामान्य में संतान से वंश चलने की है, लगभग वैसी ही कन्या व पुत्र में अंतर मानने की भी है । सामान्यतया हर अभिभावक को पुत्र की ही आकांक्षा होती है, जबकि नर व नारी दोनों में कोई भेद नहीं है । इसके विपरीत नारी को तो संस्कारों की खदान बताया गया है, शक्तिरूपा माना गया है । वह सृजन की देवी है । किन्तु सामाजिक प्रचलन, मूढ़ताएं, जन्म होने के बाद से ही विवाह में धन व्यय होने की चिंता सदैव पुत्र के जन्म होने की मनौती को मनवाती रहती है । अनेक ऐसे उदाहरण हैं, जहाँ पुत्रों ने अपने दुष्कर्मों से वंश को डुबोया एवं पुत्रियाँ अपने श्रेष्ठ कार्यों से अभिभावकों एवं समुदाय के लिए श्रेयाधिकारी बनीं । पुत्र व पुत्री में कन्या की महत्ता कितनी है ? इस संबंध में एक आप्त वचन है– ' 'दसपुत्रसमा कन्या, या स्यात् शीलवती सुता ।'' जिस समाज में कन्या को सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, वह निश्चित ही ऊँचा उठता है । वह अपने पिता का ही नहीं, जिस घर में विवाहित होकर जाती है, उसका भी कल्याण करती है ।

महर्षि दयानंद ने कहा है– ''भारतवर्ष का धर्म, उसके पुत्रों से नहीं, सुपुत्रियों के प्रताप से ही स्थिर है । भारतीय देवियों ने यदि अपना धर्म छोड़ दिया होता, तो देश कब का नष्ट हो गया होता ।'' कन्या को पुत्र के तुल्य ही समझने का आदेश महाराज मनु ने भी दिया है– ''जैसे आत्मा पुत्र रूप में जन्म लेती है, वैसे ही पुत्री के रूप में भी जन्म लेती है ।'' (मनुस्मृति ९/१३०)

नारी नौ माह तक भ्रूण को अपनी काया में रख, पोषण ही नहीं देती, संस्कार भी देती है । यदि गर्भावस्था में माँ का चिंतन परिष्कृत, सात्विक है, उस पर भावनात्मक दबाव न पड़ता हो, वह सदैव महापुरुषों के आदर्श कर्तव्यों का चिंतन-मनन करती हो, तो संतान भी वैसी ही उत्कृष्ट जनमेगी । जन्म के बाद भी वैसा ही संस्कारमय वातावरण घर-परिवार में बना रहना अनिवार्य है । जीवन के प्रारंभ के दस वर्ष शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक विकास की दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण माने गए हैं । इस अवधि में उनको सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टि से अनौपचारिक शिक्षण दिया जाना चाहिए, ताकि वे श्रेष्ठ नागरिक के रूप में विकसित हो सकें ।

कन्या की श्रेष्ठता

श्रेष्ठि प्रसेनजित बुद्ध के उपदेशों में बिना नागा आया करते थे । अग्रिम पंक्ति में बैठते और बार-बार नमन करते । सभी लोग उन्हें सहायक और समर्थक समझते थे । यह किसी को विदित न था कि यह प्रदर्शन मात्र पुत्र कामना के लिए है । प्रसेनजित की पत्नी की कोख में कन्या का जन्म हुआ । वे दुखी हुए और प्रवचन सभा में आना बंद कर दिया । बहुत दिन बाद दुख कम होने पर एक दिन वे उदास मन से भेंट करने गए । बुद्ध उनका उलाहना समझ गए । उनने बताया कि कन्या पुत्र से अधिक श्रेयस्कर है । यदि सभी के घर उनकी इच्छानुसार पुत्र ही होने लगें, तो इस सृष्टि का अंत ही समझना चाहिए । गाड़ी के दो पहियों की भाँति बालक और बालिकाएं बड़े होने पर समाज चक्र चलाते हैं । स्रष्टा ने दोनों को समान सम्मान दिया है । तुम अपनी मान्यताओं को बदलो, तब ही अज्ञानजन्य मान्यताओं से छूटोगे । प्रसेनजित को बोध हो गया और वे कन्या को पुत्र से अधिक स्नेह-सम्मान देने लगे ।

पुत्रवत् कन्या

महापंडित भास्कराचार्य गणित और ग्रह विज्ञान के असाधारण ज्ञाता थे । उनकी एक ही संतान थी, लीलावती । पिता जी ने उसे पुत्रवत् पाला और अपने संचित ज्ञान की परंपरा को आगे बढ़ाने का निश्चय किया । उसे सदा अपने साथ ही रखा और अपने समतुल्य विद्वान बनाया । लीलावती को कोई कुमारी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कहते हैं, कोई विधवा । जो हो, वे रहीं सदा पिता का दाहिना हाथ बनकर ही । लीलावती के नाम से पुरातन गणित विज्ञान अभी भी उपलब्ध है ।

शूरवीर परिवार

चित्तौड़ चारों ओर से घिर गया था । मुगलों की सेना दस गुनी अधिक थी, तो भी चित्तौड़ी राजपूतों ने हिम्मत नहीं छोड़ी और बच्चा-बच्चा बलिदान के लिए तैयार हो गया । इन्हीं में एक उठती उमर का युवक फत्ता भी था । उसके पूरे परिवार में, उसकी माँ, पत्नी और बहिन थी । चारों ने मरदाना बाना पहना और तलवार हाथ में लेकर शत्रुओं के समूह को चीरते हुए, तलवार चलाते हुए, उसी समुद्र में समा गए । देश भक्ति के इस जोश को देखकर राजपूतों की ही नहीं, शत्रुओं की सेना भी दांतों तले उँगली दबाए रह गई ।

लड़की नहीं, फरिश्ता

जैसलमेर के राजा युद्ध मोर्चे पर सेना लेकर लड़ने गए थे । किले की रखवाली का भार अपनी कन्या रत्नावली को सौंप गए । वह मर्दाने कपड़े पहनकर किले के बुर्जों पर बराबर रखवाली करती ।

एक दिन शत्रु सेना के कुछ सैनिक किले की दीवार पर चढ़ने लगे, तो उसने ऊपर से पत्थरों की वर्षा की और खौलता तेल ऊपर से डाला । और भी कई घातें किले में प्रवेश करने की शत्रुओं ने लगाईं पर रत्नावली की सूझबूझ से एक में भी सफलता न मिली । अंततः शत्रुओं को वापस लौटना पड़ा । वे रत्नावली को लड़की नहीं फरिश्ता बताते रहे ।

समय गँवा दिया

बच्चों के सर्वांगपूर्ण विकास के लिए ध्यान प्रारंभ से ही दिया जाना चाहिए । समय बीत जाने पर तो सिर धुन कर पछताना पड़ता है ।

एक महिला शिकागो के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री फ्रांसिस वेलैण्ड पार्कर से यह पूछने गई कि वह अपने बच्चों की शिक्षा कब से प्रारंभ करे ? पार्कर ने पूछा- "आपका बच्चा कब जन्म लेगा ।" महिला ने कहा- "वह तो पाँच वर्ष का हो गया ।" इस पर पार्कर ने कहा- "क्षमा करें मादाम । अब पूछने से क्या फायदा । शिक्षा का सर्वोत्तम समय तो पाँच वर्ष तक ही होता है । सो आपने यों ही गँवा दिया । यदि आपने जन्म देने से पूर्व ही शिक्षा की व्यवस्था की होती, तो अब तक वह एक सुयोग्य नागरिक के लघु संस्करण के रूप में विकसित हो गया होता ।"

गर्भ से ही संस्कार

सुजाता के गर्भ में बालक था । पिता उद्दालक को उन्होंने अशुद्ध वेद पाठ करते हुए सुना । सो गर्भ से ही उनकी गलती को ठीक कराया । पिता को इसमें अपना अपमान लगा, सो उनने शाप दिया कि तू आठ जगह से टेढ़ा-मेढ़ा होकर जन्मेगा । अष्टावक्र वैसे ही कुरूप रूप में जन्मे, पर विद्वत्ता उनकी असाधारण थी । बचपन में ही उन्होंने राजा जनक के दरबार में जाकर पंडितों को शास्त्रार्थ में हराया था ।

सीता के लव-कुश

लव-कुश का लालन-पालन सीता द्वारा वाल्मीकि के आश्रम में हुआ । बच्चों को बड़ा होने पर अपनी माता को रामचंद्र जी द्वारा निर्दोष वनवास देने पर बड़ा क्रोध आया । एक दिन लक्ष्मण जी हनुमान सहित अश्वमेध का घोड़ा लेकर उस आश्रम से निकट होकर गुजरे । लव-कुश ने घोड़े समेत उन सभी को पकड़कर बाँध लिया । सीता जी ने कृपा करके उन लोगों को छुड़ाया ।

जैसा अन्न-वैसा मन

मात्र बाह्य ही नहीं, सूक्ष्म संस्कार भी चिंतन पर बड़ा प्रभाव डालते हैं । आहार पर इसीलिए बालकों की प्रारंभिक अवधि में अत्यधिक ध्यान दिया जाता है । एक सद्गृहस्थ राज्याधिकारियों का कोपभाजन बना और कोई आरोप लगाकर उसे बंदीगृह पहुँचा दिया गया । बंदी ने एक रात स्वप्न देखा उसने अपनी माता की हत्या कर दी और खून से नहाया । सबेरे उठते ही इस विचित्र स्वप्न से वह सिहर उठा । माता के प्रति अनन्य भक्ति-भाव रखने और उसकी सेवा-सहायता पर निरंतर ध्यान रखने वाले को यह दुःस्वप्न क्यों आया ? समाधान वह किस से पूछता । एक दिन एक धर्मोपदेशक बंदीगृह में पहुँचे । कैदियों ने अपनी-अपनी जिज्ञासाएँ प्रस्तुत कीं । उसी अवसर पर इस मातृहत्या का स्वप्न देखने वाले ने भी अपना असमंजस प्रकट किया । साधु ने बताया- "लगता है, भोजन बनाने या परोसने वाला कोई ऐसे ही कृत्य का अपराधी रहा होगा । उसके कुसंस्कार अन्न के साथ तुम्हारे मन को वैसी ही उत्तेजना देने लगे होंगे ।" तलाश किया तो बात सच निकली । एक मात्र हत्यारा बंदीगृह का रसोइया था । जब वह छूट गया और दूसरे कैदी भोजन बनाने लगे, तो उस प्रकार के सपने भी समाप्त हो गए । अन्न के साथ जुड़ने वाले संस्कारों की बात सभी ने अच्छी तरह समझी ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कोमल मन वाले बालकों पर तो यह बात और भी दृढ़ता से लागू होती है ।

आस्था का शिक्षण

आवश्यकता पड़ने पर माता-पिता को बच्चों को व्यावहारिक शिक्षण भी देना होता है, ताकि वे सही मार्ग पर चल सकें । बेटे नास्तिक होते जा रहे थे । अक्सर वे कहते, ईश्वर यदि है तो भी पक्षपाती है । किसी को सुख देता है, किसी को दुख । ऐसे ही अनीति बरतने वाले पर श्रद्धा जमती ही नहीं । बाप को पता चला, तो उन्होंने बेटे को बुलाया । कहा तो कुछ नहीं, पर सामने वाले एक ही खेत में कई तरह के पेड़-पौधे लगाने में उन्हें साथ ले लिया । बोया हुआ समयानुसार फलित हुआ । गन्ना मीठा, चिरायता कडुआ, गुलाब पर सुगंधित फूल पर कँटीला मरुआ से दुर्गंध जैसी भिन्नता भी । बाप ने बेटों को बुलाकर पूछा- "बच्चों हम लोगों ने एक ही दिन, एक ही भूमि पर पौधे लगाए थे, पर उनमें यह भिन्नता क्यों ?" बच्चों ने एक साथ उत्तर दिया- "इसमें न जमीन का दोष है, न बोने वालों का । बीजों की भिन्नता से ही पौधों के स्वाद में अंतर आया है ।" पिता ने हँसते हुए कहा- "बच्चो, भगवान् न अन्यायी है, न पक्षपाती । मनुष्य अपने कर्म बीज बोता है और वैसा ही भला-बुरा काटता है । भिन्न परिस्थितियों का कारण भगवान नहीं, कर्ता का अपना स्तर एवं पुरुषार्थ ही होता है ।" लड़कों का समाधान हो गया, उनकी आस्था फिर वापस लौट आई ।

बीजांकुर बड़े भाई ने रोपे

बड़ों का व्यवहार संतुलित आदर्शवादी हो, तो वैसी ही सत्परंपराएँ परिवार में फलती हैं । इसका सबसे अच्छा उदाहरण भगवान राम व उनके भाइयों के मध्यवर्ती संबंधों के रूप में मिलता है । भरत ने राम वनवास के समय उन्हीं की तरह साधु वेश बनाकर व्रतपूर्वक चौदह वर्ष काटे । इसका रहस्य बताते हुए सूत जी ने शौनक जी से कहा कि "हे शौनक, चारों बालक जब छोटे थे तब मिल-जुलकर गेंद खेलते और दूसरी प्रतिद्वंद्विताओं द्वारा विनोद करते थे । राम बड़े थे और बलिष्ठ भी, तो भी उनका यह प्रयत्न रहता था कि भाइयों को जिताने हेतु स्वयं हारने का उपक्रम करें । इसमें छोटों का साहस-उत्साह बढ़ता और उन्हें श्रेय मिलता था ।" भाइयों ने उनकी इस उदारता को ताड़ लिया और सच्चे भ्रातृ-भक्त बन गए । बड़े होने पर वही बीजांकुर लक्ष्मण और भरत के आदर्श भाई के रूप में विकसित करने के निमित्त कारण बने और लक्ष्मण ने स्वेच्छापूर्वक वनवास लेकर उनका साथ दिया ।

बालाः बोध्या विनेयाश्च प्रायः स्नेहेन साध्विदम् ।
उच्यते शिशवः स्नेहं लभन्तां शिक्षणोन्मुखम् ॥ ४४॥
स्नेहातिरेकतो बाला विकृतिं यान्ति सन्ततम् ।
नाऽयोग्यं दण्डयेद् बालान् भयभीतान्न कारयेत् ॥ ४५॥
अयोग्यचरणोत्पन्न हानिर्ज्ञाप्याऽपवार्य च ।
लोकशिक्षेतिहासेन देयाऽन्या शिक्षणादपि ॥ ४६॥
ज्ञानवृद्ध्यै पुस्तकानां ज्ञानमेव न चेष्यते ।
भ्रमणार्थं च नेयास्ते क्षेत्रे सामीप्यवर्तिनि ॥ ४७॥
मार्गप्राप्तैर्विधेया च ज्ञानवृद्धिस्तु वस्तुभिः ।
जिज्ञासायाः स्वभावांश्च तेषां निर्मातुमिष्यते ॥ ४८॥
प्रवृत्तिरेषा प्रोत्साह्या विकासस्य मनःस्थितौ ।
विधिः शोभन एवैष यस्तु प्रश्नोत्तरानुगः ॥ ४९॥
कीडेयुर्न कुसंगे च बाला इत्यभिदृश्यताम् ।
संस्कृतैः सखिभिर्योगे यत्नस्तेषां विधीयताम् ॥ ५०॥
सखिभ्योऽपि विजानन्ति शिशवो बहुसन्ततम् ।
यथा संरक्षकेभ्योऽतः सावधानैश्च भूयताम् ॥ ५१॥

भावार्थ-बालकों को स्नेह से समझाने-बदलने का प्रयास किया जाय । एक आँख दुलार की-दूसरी सुधार की रखने की उक्ति में बहुत सार है । अतिशय दुलार में कुछ भी करने देने से बालक बिगड़ते हैं । उन्हें पीटना-

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

डराना तो नहीं चाहिए, पर अवांछनीय आचरण की हानि अवश्य बतानी चाहिए और रोकना भी चाहिए । स्कूली शिक्षा के अतिरिक्त बच्चों को लोकाचार सिखाने का उपयुक्त तरीका सारगर्भित कथा कहानियाँ सुनाना है । ज्ञानवृद्धि के लिए पुस्तकीय ज्ञान ही पर्याप्त नहीं, उन्हें समीपवर्ती क्षेत्र में भ्रमण के लिए भी ले जाना चाहिए और रास्ते में मिलने वाली वस्तुओं के सहारे उनकी ज्ञानवृद्धि करनी चाहिए । जिज्ञासाएँ करने की, प्रश्न पूछने की आदत डालनी चाहिए । इस प्रवृत्ति को प्रोत्साहित भी करना चाहिए । मानसिक विकास का अच्छा तरीका प्रश्नोत्तर ही है । कुसंग में बच्चों को खेलने न दें । ऐसे साथियों का सुयोग बिठाएँ, जो अच्छे स्वभाव के हों । अभिभावकों की तरह साथियों से भी बच्चे बहुत कुछ सीखते हैं, इस ओर सावधान रहना चाहिए ॥ ४४–५१ ॥

व्याख्या–बालकों के संतुलित विकास से संबंधित तीन महत्वपूर्ण सूत्र ऋषि श्रेष्ठ धौम्य यहाँ बताते हैं–(१) दुलार एवं सुधार की समन्वित नीति अपनाते हुए उन्हें स्नेह से वंचित भी न रखना एवं आवश्यकता पड़ने पर कड़ाई बरतकर अनौचित्य से उन्हें विरत करना । (२) पाठ्यक्रम से जुड़ी शिक्षा के अलावा भी व्यावहारिक जीवन की शिक्षा उन्हें कथा-कहानियों के माध्यम से एवं प्राकृतिक जीवन के साहचर्य के माध्यम से देना, उनकी जिज्ञासु बुद्धि को प्रखर करना एवं स्वाध्यायशीलता के प्रति रुचि जगाना । (३) बालक किनकी संगति में दिन भर रहते हैं, इसका सतत ध्यान रखना । गुण, कर्म एवं स्वभाव के परिष्कार हेतु उत्कृष्टता को सम्मान देने वाले नम्र स्वभाव के साथियों को ही संगी-साथी बनाने का प्रोत्साहन देना ।

उपरोक्त तीनों ही पक्ष बालकों के किशोर रूप में विकसित होने की प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । जिस परिवार संस्था में इन पर समुचित ध्यान दिया जाता है, उसमें निश्चित ही श्रेष्ठ नागरिक विकसित होते एवं समुदाय को गौरवान्वित करते हैं ।

क्योंकि मैं माँ हूँ !

स्नेह बच्चों का अधिकार है एवं माता-पिता का कर्तव्य । यही वह पूँजी है, जो अभिभावक-शिशु संबंधों को दृढ़ बनाती है । महारानी विक्टोरिया की पुत्री ऐलिस का दस वर्षीय पुत्र किसी संक्रामक रोग से बीमार हुआ । डॉक्टरों ने घोषित किया कि बीमार की छूत से, खासकर सांस से दूर रहा जाय, अन्यथा संपर्क करने वाले की जान को खतरा है । हिदायत के मुताबिक सभी लोग दूर रहने लगे, पर बच्चे की माँ ने उसे गोदी में ही रखा । जब उसने ममता भरी आवाज से कहा– "मम्मी, तुम मुझे प्यार नहीं करती ? चुंबन लिए कितने दिन हो गए ।" माता ने प्यार भरा चुंबन लिया । देखते-देखते वह उसी बीमारी से ग्रसित हुई और कुछ समय में बच्चे के साथ मर गई । पूछने वालों से वह यही कहती रही– "क्योंकि मैं माँ हूँ ।" शाही कब्रिस्तान में ऐलिस की कब्र के नीचे अभी भी उसके अंतिम शब्द लिखे हुए हैं – "क्योंकि मैं माँ हूँ ।"

स्वयं अनुभव करो

आवश्यकता पड़ने पर सुधार की शिक्षा भी देना पड़ सकती है । राजकुमारों की शिक्षा पूरी हो गई, तो राजा उन्हें लेने आए । चलते समय आचार्य ने कहा– "एक बात सिखाने को रह गई, सो और सीखते जाओ ।" उन्होंने एक छड़ी मँगाई और दोनों राजकुमारों के हाथ पर दो-दो छड़ी कसकर जमा दी । राजकुमारों ने पूछा– "यह क्या शिक्षा हुई ?" आचार्य जी ने कहा– "तुम्हें बड़े होकर राजशासन चलाना है । किसी निर्दोष को दंड मिलने पर उसे कितना बुरा लगता है । यह सिद्धांत भी सीखकर जाओ और सदा गाँठ बाँधकर रखना ।"

बादशाह का न्याय

अभिभावकों को यह ध्यान रखना जरूरी है कि अधिकार के मद में कहीं बच्चे बिगड़ तो नहीं रहे । एक बादशाह के लड़के को किसी सेनापति के लड़के ने खेल-खेल में गाली दे दी । लड़के ने इसकी शिकायत बादशाह से की, खुशामदी दरबारियों में से किसी ने कहा– "गाली देने वाले लड़के को देश निकाला दे देना चाहिए ।" किसी ने कहा– "उसे फाँसी पर चढ़ा देना चाहिए, तो किसी ने कहा उसके पिता को नौकरी से निकाल देना चाहिए ।" अंतत: बादशाह ने अपने बेटे से कहा– "बेटा ! खेल-खेल में हुए झगड़ों को इतना तूल नहीं देना चाहिए । तू उस अपराधी बच्चे को क्षमा कर दे, तो यह अच्छी बात होगी, क्योंकि क्रोध का व दंड देने का कारण होते हुए भी जो शांत व क्षमाशील रहे, वही सच्चा वीर होता है और यदि तू क्षमा करने की शक्ति नहीं दिखाता, तो तू भी उस लड़के को गाली दे आ, पर क्या तुझे यह शोभा देगा ?"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

देश का कायाकल्प

कभी-कभी कड़ाई बड़ी अनिवार्य हो जाती है । अव्यवस्था को मिटाने हेतु उसका आश्रय लेना ही पड़ता है । लेटिन कोलंबिया में उन दिनों एक प्रकार की अराजकता सी फैली हुई थी । राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक कोई क्षेत्र ऐसा नहीं था, जिसमें गड़बड़ी फैलाने की लोगों की आदत न पड़ गई हो । फिर विद्यार्थी ही किसी से क्यों पीछे रहते । एक दो माँगों को लेकर हड़ताल करने से लेकर पथराव और बस जलाने का धंधा उनका आए दिन का काम था । राष्ट्रपति एस्टरों उसी वर्ष चुने गए थे । उनके लिए काम करना कठिन हो रहा था । नम्रता और सज्जनता के सारे तरीके जब नाकामयाब हो गए, तो उन्होंने कड़ाई से काम लेना शुरू किया । विद्यार्थियों को चेतावनी दी कि यदि वे सीधे रास्ते न आए, तो कक्षाएँ और होस्टल खाली करा लिए जाएंगे । इसके लिए उन्होंने पुलिस भी बुलाई । शुरूआत विद्यार्थियों से हुई । धमकाने और समझाने से मान गए और वह समस्या हल हो गई । यही शैली उन्होंने अन्य वर्गों के लिए अपनाई । फलतः अराजकता राष्ट्र से चली गई और देश का स्तर हर क्षेत्र में सुधरने लगा । राष्ट्रपति काल में उनने उस देश का हर दृष्टि से कायाकल्प कर दिया । अब तक के राष्ट्रपतियों में राष्ट्रपति एस्टरों ने जिस प्रकार उस देश की साख बढ़ाई, उसे लोग सदा स्मरण करते रहेंगे ।

स्वाभिमानी सुभाष

स्कूल की पढ़ाई पूरी करने के बाद सुभाष ने कॉलेज में दाखिला लिया । उस कॉलेज के अंग्रेज अध्यापकों में एक मिस्टर सी० सफ० ओटन भी थे । उनमें एक बुरी आदत थी । वह बात-बात में भारतीय जीवन का मजाक उड़ाते थे । उनके प्रति घृणा पैदा करना वह अपना परम धर्म मानते थे । सुभाष को उनका यह व्यवहार कतई पसंद न था । वह उनकी इस आदत को छुड़ाना चाहते थे । एक दिन तो सुभाष चुप बैठे रहे । सुनते-सुनते उन्हें अपने देश का अपमान सहना असह्य हो उठा । वह तिलमिला कर अपनी सीट से उठ खड़े हुए । चट से आगे बढ़े और उस गोरे अध्यापक के मुँह पर थप्पड़ जड़ते हुए बोले, "भारतीयों में अभी भी स्वाभिमान जीवित है । जो कोई इस तथ्य को भूलकर उसे चुनौती देगा, उसे इसी तरह मार खानी पड़ेगी ।"

औचित्य की हिमायत

बच्चों में अनुचित के प्रतिरोध के संस्कार डाले जाने चाहिए, तभी वे साहसी नागरिक बन सकेंगे । दीनबंधु ऐंड्रूज तब सेंट स्टीवेंसन कॉलेज में पढ़ते थे । वहाँ बाइबिल पढ़ना हर छात्र के लिए अनिवार्य था । ऐंड्रूज ने अधिकारियों को लिखा कि इच्छा न होने पर जबरदस्ती बाइबिल पढ़ाना अपने धर्म का अपमान करना है । उनके कथन का औचित्य समझा गया और विषय की अनिवार्यता हटाकर उसे ऐच्छिक कर दिया गया ।

दुलार एवं सुधार की समन्वित नीति के साथ-साथ समय-समय पर दैनंदिन जीवन के उदाहरणों के माध्यम से व्यावहारिक शिक्षा भी बालकों को दी जानी चाहिए । स्कूली पाठ्यक्रम व्यावहारिक जीवन से कोसों दूर होता है । ऐसे में बालकों के समग्र मस्तिष्कीय विकास हेतु अभिभावकों द्वारा शिक्षा कथा-कहानियों के माध्यम से देना बालकों के नव निर्माण में हितकारी होता है । बाल-विकास के लिए बच्चों को कहानियाँ सुनाना एक उपयुक्त और प्रभावशाली शिक्षा पद्धति है । कहानियाँ बाल विकास के दो प्रयोजन पूरी करती हैं । एक तो उन्हें निर्भय और उन्मुक्त मनोरंजन देकर तथा दूसरे उन्हें जीवन निर्माण की शिक्षा देकर ।

कहानियों के माध्यम से ये बालक इतिहास पुरुष बने

इतिहास में इस प्रकार के सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं । कई महामानव जिनके संबंध में बचपन के समय में सुनिश्चिततापूर्वक कुछ नहीं कहा जाता था । कहानियों के माध्यम से उनका व्यक्तित्व गढ़ा गया और वे इतिहास के स्रष्टा बने । पंचतंत्र के मंद बुद्धि और अयोग्य राजपुत्र । जिनके पिता लगभग निराश हो गए थे । सब उपाय कर देख लिया गया, परंतु राजपुत्रों को किसी भी प्रकार योग्य नहीं बनाया जा सका । अंतिम प्रयास के रूप में राज्य भर में घोषणा कर दी गई कि जो भी व्यक्ति राजपुत्रों की शिक्षा का उत्तरदायित्व ग्रहण करेगा और उन्हें सब प्रकार से योग्य बना देगा, वह मुँह माँगे पुरस्कार का अधिकारी होगा । तब विष्णु शर्मा नामक एक विद्वान तपस्वी ने राजपुत्रों को राजनीति, धर्म और शिक्षा में निष्णात बनाने का काम सम्हाला और उन्होंने कुछ ही समय में जानवरों, पक्षियों की रोचक कहानियाँ सुना-सुना कर निर्बुद्धि राजकुमारों को नीति, सदाचार, धर्म, व्यवहार कुशलता आदि में पारंगत बना दिया ।

छत्रपति शिवाजी भी बचपन में कोई प्रतिभावान नहीं दिखाई दिए थे । परिस्थितियाँ भी ऐसी नहीं थीं कि आगे चलकर कुछ करने की संभावना दिखाई दे । पति द्वारा उपेक्षित उनकी माता जीजाबाई अपने पुत्र को लेकर पूना में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहती थीं । बालक शिवा के पालन-पोषण से लेकर शिक्षा-दीक्षा का भार उन पर ही था । जीजाबाई ने इस उत्तरदायित्व को सरलता से निभा लेने का उपयुक्त माध्यम खोज निकाला और वे अपने लाड़ले को रामायण, महाभारत, हनुमान, कृष्ण और अर्जुन के जीवन की प्रेरणापूर्ण वीरता से भरी कहानियाँ सुनाने लगीं ।

बालक शिवा के मन में भी ऐसा ही बनने की धुन सवार हुई और वे बचपन में ही मावला जाति के पिछड़े और जंगली बच्चों को रीछ, वानरों की तरह संगठित करने लगे । उन्हें युद्ध विद्या सिखाने लगे । बाल्यकाल की प्रेरणा से उद्‌भूत महत्वाकांक्षा के बल पर उन्होंने नाना जी, बाजी प्रभु, देशपांडे और सूर्याजी जैसे कितने ही नर रत्न खोज निकाले, जो आगे चलकर विशाल मुगल साम्राज्य के अधिपति औरंगजेब की आँखों की नींद हराम करने लगे । वर्तमान युग के महामानव महात्मा गांधी के संबंध में भी सर्वविदित है । बचपन में उनकी माता पुतलीबाई रामायण और महाभारत के चरित्र निर्माणकारी प्रसंग और घटनाएँ सुनाया करतीं । जिनके परिणामस्वरूप ही वे आजीवन चरित्र और नैतिकता को सर्वोपरि महत्व देते रहे । सत्य के प्रति अविचल निष्ठा तो उनमें महाराजा हरिश्चंद नाटक देखकर और कहानी सुनकर ही जन्मी थी । ईसा और बुद्ध के प्रसंग पढ़-सुनकर अहिंसा और प्रेम के प्रति श्रद्धा-निष्ठा का उभार हुआ था । इस प्रकार कहानियों द्वारा इतिहास पुरुष के निर्माण की असंख्यों घटनाएँ भरी पड़ी हैं ।

बाल्यकाल के संस्कार

सुभाषचंद्र बोस बच्चे ही थे । माँ की बगल में से उठकर जमीन पर जा सोए । माँ के पूछने पर उनने बताया- "आज अध्यापक कह रहे थे कि हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि थे । जमीन पर सोते और कठोर जीवन जीते थे । मैं भी ऋषि बनूँगा, सो कठोर जीवन का अभ्यास कर रहा हूँ ।" पिताजी जग गए । उनने कहा- "जमीन पर सोना ही पर्याप्त नहीं । ज्ञान संचय और सेवा संलग्न होना भी आवश्यक है । अभी तुम माँ के पास सो जाओ, बड़े होने पर तीनों काम करना ।" सुभाष ने अध्यापक की ही नहीं पिता की बात भी गिरह बाँध ली । आई०सी०एस० पास करके जब अफसर बनने की बात सामने आई, तो उनने कहा- "मैं जीवन का लक्ष्य निश्चित कर चुका हूँ । मातृभूमि की सेवा करूँगा और महान बनूँगा ।" बचपन का निश्चय उन्होंने मरण पर्यंत निबाहा । ऐसे होते हैं महामानव ।

भेड़ का आतिथ्य क्यों ?

एक राजपूत के यहाँ गाय भी पली और भेड़ भी । एक दिन उदास होकर बछड़े ने गाय से पूछा- "हमारी ओर कोई आँख उठाकर भी नहीं देखता, पर इस काले-कलूटे मेमने को सभी बड़ी दिलचस्पी से खिलाते और स्नेह जताते हैं ।" माँ चुप रहीं, फिर बोली- "इसका जवाब अभी नहीं, तुम्हें कुछ ही दिनों में मिल जाएगा ।" देवी को बलि का दिन आया और मेमने का सिर काटकर उस पर चढ़ा दिया गया । बछड़े ने संतोष की सांस खींची और समझा कि बहुत मान मिलने के पीछे भी जोखिम छिपा रहता है ।

नकल उचित नहीं

बतख के बच्चे तालाब में तैरा करते । तालाब के किनारे ही चुहिया का बिल था । उसके बच्चे भी तैरने का हठ करते । चुहिया ने समझाया- "सबके लिए एक जैसे काम ठीक नहीं होते । तुम्हारे लिए बिल खोदना उतना ही उपयोगी है, जितना बतख के लिए तैरना ।" चुहिया के बच्चे जैसे ही अवसर मिला, तालाब में तैरने घुस पड़े और डूब गए । बिना अपनी सामर्थ्य आँके दूसरों की नकल करने वालों का यही हाल होता है ।

अल्फ्रेड को किसान पत्नी की शिक्षा

इंग्लैंड के इतिहास में 'एल्फ्रेड' का नाम बड़े सम्मान से लिया जाता है । एल्फ्रेड ने प्रजा की भलाई के लिए अनेक साहसिक कार्य किए, जिससे वह महान एल्फ्रेड (एल्फ्रेड द ग्रेट) के नाम से पुकारा जाता है । प्रारंभ में एल्फ्रेड भी एक साधारण राजा की तरह, जो बाप-दादों से होता आया है, वह चाहे अच्छा हो या बुरा, करने की अंधविश्वासी प्रवृत्ति के कारण सामान्य व्यक्तियों का सा खाओ-पीओ और वैभव-विलास में डूबे रहो, का जीवन जीने लगा । एक दिन ऐसा भी आया, जब उसकी यह सुस्ती शत्रुओं के लिए वरदान सिद्ध हुई । एल्फ्रेड का राज्य औरों ने हड़प लिया और उसे गद्दी से उतार कर मार भगाया । इधर-उधर मारे-मारे फिर रहे एल्फ्रेड को एक किसान के घर नौकरी करनी पड़ी । उसे बर्तन माँजने, पानी भरने और चौके का काम सौंपा गया । उसके काम की देखरेख किसान की स्त्री करती थी । एल्फ्रेड छिपे वेष में जिंदगी काटने लगा । एक दिन किसान की स्त्री को किसी आवश्यक काम से बाहर जाना पड़ा । बटलोई पर दाल चढ़ी थी, सो उसने एल्फ्रेड से कहा कि जब तक मैं वापस नहीं आ जाती, तुम बटलोई की दाल का ध्यान रखना । यह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कहकर स्त्री चली गई । वहाँ से काम पूरा कर लौटी, तो स्त्री ने देखा एल्फ्रेड एक ओर बैठा कुछ सोच रहा है और बटलोई की सारी दाल जल चुकी है । स्त्री ने कहा– "मूर्ख नवयुवक ! लगता है तुझ पर एल्फ्रेड की छाया पड़ गई है, जो काम सौंपा जाता है, उसे एकाग्रचित्त होकर पूरा नहीं करता । तू भी उसकी तरह मारा-मारा घूमेगा ।" स्त्री बेचारी को क्या पता था कि जिससे बात कर रही है, वह एल्फ्रेड ही है, पर एल्फ्रेड को अपनी भूल का पता चल गया । उसने बात गाँठ बाँधी ली–आज से जो भी काम करूँगा, एकाग्रचित्त से करूँगा । कल्पना के किले बनाते रहने से कोई लाभ नहीं । एल्फ्रेड एक बार फिर सहयोगियों से मिला । धन संग्रह किया, सेना एकत्रित की और दुश्मन पर चढ़ाई करके लंदन को फिर से जीत लिया ।

अनुभवों से सीखा

"आपकी सफलता का श्रेय किसको है ?" –एक पत्रकार ने प्रेसीडेंट केनेडी से प्रश्न किया । जॉन केनेडी ने उत्तर दिया– "असफल व्यक्ति" । "सो कैसे ?" –उसने पुनः प्रश्न किया । राष्ट्रपति ने बताया– "मैं जिस किसी असफल व्यक्ति को देखता, उससे बातचीत करके यह पता लगाता कि वह असफल किन कारणों से हुआ । पीछे उन अनुभवों का लाभ उठाकर ही मैंने सफलता प्राप्त की ।"

सही चुनाव

बूढ़े किसान के दो बेटे थे । मरने के दिन आए तो दोनों जवान लड़कों को बुलाकर कहा– "तुम मिलजुल कर रहते दीखते नहीं । बँटवारा कर लो और अपने पैरों खड़े होकर गुजारा करो ।" संचित कमाई का बँटवारा हुआ । एक को दस हजार के जेवर मिलने थे, दूसरों को उतने ही दाम के हल, बैल और खेत । पहले चुनाव के लिए बड़े बेटे को कहा गया, उसने जेवर ले लिए । स्त्री को सजाया और कुछ को बेचकर सैर-सपाटे का कार्यक्रम बनाया । छोटे ने हल, बैल ले लिए और छोटे से खेत को जोतने-बोने में लग गया । बड़ा ठाट-बाट का दिखता था और छोटा मैले-कुचैले मजूर जैसा । देखने वाले एक को भाग्यवान कहते, दूसरे को किस्मत का मारा । समय बीतता गया । बाप के मरे एक साल भी न हुआ कि एक की अमीरी हवा में उड़ गई । जो था फिजूलखर्ची में बह गया । मेहनत न बन पड़ने से उठाईगीरी की आदत पड़ी और पकड़े जाने पर जेल हो गई । दूसरा मेहनती और अपनी किफायतदारी से खुशहाल होता गया और इज्जतदार बन गया ।

समस्या का हल यों नहीं

कभी-कभी ऐसा भी होता कि लाख समझाने पर भी बात समझ में आती नहीं, क्योंकि अनेक पूर्वाग्रह तथा सनकें अड्डा जमाए बैठे होते हैं । एक सनकी पैर में पहने हुए जूतों की बहुत शिकैायत कर रहा था–वे तंग हैं और काटते हैं । उसका बड़बड़ाना सुनकर एक समझदार ने कहा– "यदि ऐसा ही है, तो उसे उतार क्यों नहीं देते । बिना जूते के भी तो चला जा सकता है ।" पगले ने कहा– "ऐसा नहीं कर सकता । यही तो मेरा एक मात्र सहारा है । घरवालों और पड़ौसियों से पटरी नहीं खाती, तो इस जूते को देखकर ही मन बहलाता हूँ और सोचता हूँ कि यही एक तो अपना है । इतना नजदीक इतनी देर और कौन साथ रहता है ।" समझदार चलता बना । ऐसे पत्थर से सिर फोड़ने में उसने समय की बर्बादी देखी । जिससे शिकायत है, उसे जो छोड़ नहीं सकता और चाहता है सब कुछ अपनी मर्जी का ही बने, उसकी समस्या का हल कहाँ होना है ।

संगति का प्रभाव

व्यावहारिक शिक्षण के बाद तीसरा महत्वपूर्ण सूत्र है – सही साथी का चयन । अच्छे गुण व स्वभाव वाले साथी मित्र के रूप में बच्चे के साथ हों, तो अभिभावक, शिक्षक के समकक्ष ही भूमिका निभाते हैं । यदि संगति बुरी हुई तो कोमल मन पर उसकी छाप तुरंत पड़ती है एवं व्यवहार में तदनुसार परिवर्तन लाती है ।

मिथिला के सम्राट् चमूपति अपने पुत्र राजकुमार श्रीवत्स की उद्दंडता से बड़े खिन्न थे । गुरुकुल से लौटकर आने के कुछ दिनों तक तो वे ठीक रहे । पुनः स्वभाव उग्र होता चला गया । उनके व्यवहार में कुलीनता कहीं से नहीं टपकती थी । सोचा गया कि संभवतः विवाह से समस्या का हल हो । पर स्थिति यथावत् ही रही ।

मन बदलने की इच्छा से महर्षि श्यावाश्व के वाजि मेध यज्ञ का आमंत्रण आने पर वे प्रमुख यजमान के रूप में रवाना हुए । रास्ते में प्रथम विराम उन्होंने जहाँ किया, वहाँ संयोगवश अरण्यजैत के खूंख्वार दस्यु नायक का कार्य क्षेत्र था । अर्द्ध निद्रा की स्थिति में राजा ने सुना–एक नन्हा सा तोता कह रहा था– "तात, आज बहुत अच्छा शिकार लगा है । महाराज हैं तो क्या हुआ ? तुरंत सिर धड़ से अलग करो व एक ही दांव में जीवन भर का हिसाब-किताब पूरा कर लो ।" नीति वचन याद कर महाराज ने तुरंत वह स्थान छोड़ दिया । अगले दिन प्रातः वे महर्षि के आश्रम में पहुँचे ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उनका स्वागत यहाँ भी पुनः एक शुक की मंगल ध्वनि ने किया– "आइए महाराज ! आपका इस आश्रम में स्वागत है । आप हमारे आज के मंगल मूर्ति अतिथि हैं ।" आश्चर्य से महाराज ने दृष्टि ऊपर उठाई, तो देखा कि वृक्ष पर बैठा शुक यह कह रहा था । सम्राट् बोले– "एक आप एवं एक ऐसे ही शुक का वह स्वर, जिसने मुझे रात्रि में डरा दिया था । कितना अंतर है, दोनों में ।" नन्हा शुक बोल उठा– "महाराज ! अरण्यजैत का वह शुक मेरा ही सगा भाई है । उसकी धृष्टता के लिए में क्षमा माँगता हूँ । वस्तुतः यह संगति का ही फल है । मेरा भाई दस्युओं में रहकर वैसे ही कुसंस्कार पाता रहा है । मुझे सौभाग्य मिला महर्षि के इस संस्कारभूत आश्रम में रहने का ।" स्वागत करने को आतुर खड़े महर्षि श्यावाश्व महाराज के अंतर्मन को पढ़ते हुए बोल उठे– "अब समझ में आया महाराज ! आपके राजकुमार जिन धीवर पुत्रों–उद्दंड साथियों के साथ रहते हैं, उनके ही कुसंस्कार उनके व्यवहार में परिलक्षित हो रहे हैं । आप साथी व वातावरण बदल दीजिए । राजकुमार को बदलते देर न लगेगी ।"

सड़े टमाटरों के साथ

बाप अपने बेटों को गंदे लड़कों के साथ रहने से रोकता । पर बच्चे उस शिक्षा को मानने को तैयार न हुए । एक दिन बाप छोटी टोकरी भर कर टमाटर लाया । कल उन्हें काम में लाए जाने की बात कही । टमाटरों में एक सड़ा हुआ था । उसे भी टोकरी में रहने दिया गया । दूसरे दिन टोकरी उठाई, तो देखा गया कि सभी टमाटर सड़ गए हैं । बाप ने समझाया– "बच्चे, देखा तुमने संगति का फल ।"

उथली सहानुभूति

एक भला खरगोश था । सभी पशुओं की सहायता करता और मीठा बोलता था । जंगल के सभी जानवर उसके मित्र हो गए । एक बार खरगोश बीमार पड़ा । उसने आड़े समय के लिए कुछ चारा-दाना अपनी झाड़ी में जमाकर रखा था । सहानुभूति प्रदर्शन के लिए जिसने सुना वही दौड़ा आया और आते ही संचित चारे-दाने में मुँह मारना शुरू किया । एक ही दिन में उन सबका सफाया हो गया । खरगोश अच्छा तो होने लगा, पर कमजोरी में चारा ढूँढ़ने के लिए जा न सका और भूखों मर गया । उथली मित्रता और कुपात्रों की सहानुभूति सदा हानिकारक ही सिद्ध होती है । दुर्घटना का समाचार सुनकर दौड़े आने वाले सहानुभूति प्रदर्शन कर्त्ता प्रायः यही करते हैं । सच्चे मित्र थोड़े ही हों, पर भले हों, वक्त पर काम आ सकें ।

प्रवेशिकास्तरायाश्च शिक्षायाः पूर्वमेव तु ।
निश्चेयं बालकायैष भविता केन वै पथा ॥ ५२॥
जीविकोपार्जनं केन माध्यमेन करिष्यति ।
आनुरूप्येण चास्यैव निर्णयस्याग्रिमा ततः ॥ ५३॥
निर्धार्या तस्य कक्षा च शिक्षा नैवेदृशी शिशोः ।
कर्तव्या जीवने तस्य व्यवहारं न याऽऽव्रजेत् ॥ ५४॥
बुद्धौ भार इवाऽऽयाति व्यर्थं चाऽनेन कर्मणा ।
शिक्षणेनाऽनिवार्येण वञ्चितो जायते शिशुः ॥ ५५॥
व्यर्थतामेति सर्वं च श्रमः कालो धनं तथा ।
अनिश्चयेन चाऽनेन पश्चात्तापस्ततो भवेत् ॥ ५६॥
शिक्षोद्देश्यगतिश्चिन्त्या भोजनस्येव निश्चितम् ।
क्रीडार्थं समयो देयः कलाकौशलवेदिता ॥ ५७॥
लोकाचारसदाचाराभिज्ञता तस्य संभवेत् ।
नीत्यभ्यस्तो भवेद् बालः प्रबंधश्चेदृशो भवेत् ॥ ५८॥
अस्मै प्रयोजनायैतद् भ्रमणं युज्यते ध्रुवम् ।
लाभदं ज्ञानवृद्ध्या चेद् भ्रमणं तद्व्यवस्थितम् ॥ ५९॥
नोचेत्कौतुकमात्राय भ्रमणेन भवन्त्यपि ।
हानयो वैपरीत्येन भ्रमणं हि हितैर्हितम् ॥ ६०॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भावार्थ–प्रवेशिका स्तर की सामान्य शिक्षा पूरी करने से पूर्व ही यह निश्चय कर लेना चाहिए कि बच्चों को क्या बनाना है ? उसे उपार्जन का क्या माध्यम अपनाना है । इस निर्णय के अनुरूप ही उसकी अगली शिक्षा का निर्धारण कर लिया जाय । ऐसी अनावश्यक शिक्षा न दी जाय, जो उसके व्यावहारिक जीवन में काम न आए । इससे मस्तिष्क पर अनावश्यक दबाव पड़ता है और जो सीखना आवश्यक था, उससे वंचित रहना होता है । किया गया श्रम और समय, खर्चा गया धन, इस अनिश्चय के कारण व्यर्थ ही चला जाता है । इसके लिए पीछे सदा पश्चात्ताप रहता है । भोजन की तरह शिक्षा के उद्देश्य का ध्यान रखना भी आवश्यक है । खेलने–कूदने का अवसर दिया जाय । कला–कौशल से भी उन्हें अभ्यस्त होने दिया जाय । लोक–व्यवहार और नीति–सदाचार का उपयुक्त ज्ञान लाभ होता रहे । ऐसा प्रबंध किया जाय । परिभ्रमण इस प्रयोजन के लिए आवश्यक है । परिभ्रमण के साथ ज्ञान–संवर्द्धन की व्यवस्था पूरी तरह जुड़ी रहे, तभी इसका लाभ है । अन्यथा कौतूहल भर के लिए इधर–उधर घूमने में कई बार तो उलटी हानि भी होती है । उपयुक्त समाधान करते रहने वालों के साथ घूमना ही हितकर है ॥ ५२–६०॥

व्याख्या–शिक्षा बच्चों को क्या दी जानी है । इसका निर्धारण अभिभावकों को उनकी मनःस्थिति एवं देश-काल की परिस्थितियों को देखकर ही करना चाहिए । जो विषय अप्रासंगिक है, जिनका जीवन से दूर-दूर तक ताल्लुक नहीं, शिशुओं के कंधे पर लाद देना, वस्तुतः उनके विकास को रोकने के समान है । सामान्य ज्ञान, आहार-विहार, खेल-कूद, सामान्य शिष्टाचार, नैतिक गुणों के व्यावहारिक क्रियान्वयन का शिक्षण पाठ्यक्रम में जुड़ा रहे, तो ही शिक्षा फलदायी होती है । ऐसी अनौपचारिक शिक्षण प्रक्रिया पाठ्य पुस्तकों की डिग्री दिलाने वाली शिक्षा से लाख गुना उत्तम है एवं अपनाई ही जानी चाहिए । पर्यटन-परिभ्रमण भी आसपास की परिस्थितियों, प्राकृतिक जीवन के विभिन्न पहलुओं के संबंध में दृष्टिकोण को निखारता एवं व्यक्तित्व को सर्वांगपूर्ण बनाता है । आत्मरक्षा का अभ्यास सभी शिशुओं को साथ में कराया जाना चाहिए, ताकि वे साहसी स्वावलंबी बन सकें ।

विकसित राष्ट्रों के उदाहरण

क्यूबा, इजराइल एवं यूगोस्लाविया ने अपने यहाँ स्वावलंबन प्रधान शिक्षा को ही महत्व दिया है । विश्वयुद्ध के बाद उन्हें सुयोग्य नागरिकों की आवश्यकता थी । अतः डिग्री प्रधान शिक्षण से परे रहकर उन्होंने राष्ट्र के निव निर्माण के लिए अपेक्षित प्रगतिशील शिक्षा की व्यवस्था की । हर युवा व प्रौढ़ के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया कि वह अपनी शिक्षा की समाप्ति के बाद रोजगार में लगने के पूर्व न्यूनतम एक वर्ष सौ व्यक्तियों को साक्षर बनाने एवं नागरिकता का शिक्षण देने में लगाएगा । इसके फलदायी परिणाम तुरंत सामने आए । न केवल साक्षरता बढ़ी, अपितु अनौपचारिक शिक्षा से प्रभावित बहुसंख्य जनता प्रगतिशील राष्ट्र की आवश्यकताओं को पूरा करने में जुट गई ।

चीन और जापान ने भी ऐसे छोटे-छोटे प्रयोग किशोरों-युवकों पर किए, ताकि स्वावलंबन प्रधान नागरिक ढल सकें । दोनों ही राष्ट्रों का प्रगति के शिखर पर पहुँचने का मूल कारण यही अनौपचारिक शिक्षा ही है ।

फिशर की लगन

फ्रांसीसी पादरी महिला फिशर भारत आईं तो यहाँ की निरक्षरता को देखकर उन्हें बड़ा दुख हुआ । बच्चों को पढ़ाने के लिए कहने जातीं, तो लोग मुँह फेर लेते और उनकी बात तक न सुनते । फिर भी उनने निश्चय किया कि लगे रहना चाहिए । कुछ ही वर्षों में चमत्कारी परिणाम हुआ । लड़के और लड़कियों की शिक्षा ४० प्रतिशत तक पहुँच गई । उस इलाके में १५० प्राइमरी स्कूल खुल गए और डेढ़ हजार बच्चे पढ़ने लगे । उन्होंने स्कूली शिक्षा तक ही स्वयं को सीमित न रख बच्चों को शिष्टाचार, लोक व्यवहार की शिक्षा भी दी । उनके पढ़ाए अनेक बच्चों ने आगे चलकर समाज निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई ।

स्वामी रामतीर्थ ने प्रोफेसर पद छोड़ा

बी०ए० की परीक्षा में युवक को असफलता मिली, तो वह निराश नहीं हुआ । निराश होना तो उसने सीखा ही न था । दुगुने परिश्रम से जुट गया, अपने अध्ययन में । इस बार की परीक्षा में उस युवक ने परीक्षक को चकित कर दिया । प्रश्न-पत्र में परीक्षार्थियों के लिए नोट लगा था–'तेरह में से कोई नौ प्रश्न हल कीजिए ।' उस युवक विद्यार्थी ने उत्तर पुस्तिका के मुख पृष्ठ पर सूचना लिख दी– 'तेरह में से कोई नौ उत्तर देख लीजिए' और अगले पृष्ठों पर तेरह सवाल किए हुए थे, जिनमें से न

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तो एक भी गलत था और न इतनी गुंजायश थी कि आधा नंबर भी कहीं से काटा जाए । जून माह में परीक्षा का परिणाम घोषित हुआ । वह युवक अपने प्रांत में प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ था । यह परीक्षार्थी युवक था तीर्थराम । जिसे देश-विदेश के लोग स्वामी रामतीर्थ के नाम से जानते हैं । इन्होंने कॉलेज की प्रोफेसरी छोड़कर संसार में वेदांत की शिक्षाओं का प्रचार किया था । उनका कहना था कि स्कूल की पढ़ाई छोड़कर लोगों को व्यावहारिक अध्यात्म की शिक्षा दी जानी चाहिए । अल्पायु का अपना जीवन उन्होंने इसी में नियोजित कर दिया ।

बाल शिक्षा में संलग्न महात्मा

महात्मा भगवान दीन अपने आरंभिक जीवन के २८ वर्ष की आयु तक रेलवे में उच्च कर्मचारी रहे । साथ ही व्यक्तिगत साधना, योगाभ्यास भी करते रहे । पीछे उन्हें आंतरिक प्रेरणा हुई कि मात्र अपने कल्याण की साधना भी एक प्रकार की स्वार्थपरता है । अध्यात्म का तात्पर्य लोकसेवा भी है । उनने नौकरी छोड़ दी । विवाह नहीं किया और सार्वजनिक सेवा में लग गए । उनने हस्तिनापुर में ब्रह्मचर्याश्रम नामक बालक विद्यालय की स्थापना की और नागपुर में तरुणों के लिए सेवाश्रम खोला । दोनों ही विद्यालयों के छात्रों में चरित्र निष्ठा और लोक सेवा की भावना कूट-कूट कर भरी जाती थी । अधिकांश छात्र बड़े कर्मठ बनकर निकले । स्वामी जी ने लेखनी उठाई और विशेषतया बालकों और युवकों की समस्याओं पर लिखा, यों उनसे समाज सुधार से लेकर राजनीति तक का कोई विषय न बचा, जिस पर उच्चकोटि का साहित्य न लिखा हो । स्वतंत्रता संग्राम आरंभ होने पर वे सत्याग्रह में सम्मिलित हो गए और कई बार जेल गए । स्वामी जी की सादगी और सेवा-भावना असाधारण थी । वे अपने संकल्पों की पूर्ति में इतने तन्मय हो जाते थे कि जो काम हाथ में लिया उसे सफलता के स्तर तक पहुँचा कर रहते थे ।

कवीन्द्र-रवीन्द्र की शिक्षा

रवीन्द्रनाथ टैगोर जिस स्कूल में पढ़ते थे, वह शिक्षा मात्र नौकरी के काम की देखकर उनके पिता ने बच्चों को स्कूल से उठा लिया, जो बनाना चाहते थे सो पढ़ाया, फलस्वरूप उतने ही समय और श्रम से रवीन्द्र बाबू विश्व कवि हो गए तथा नोबुल पुरस्कार के अधिकारी बने । उन्होंने प्रकृति से ही अपना सारा शिक्षण पाया था । पिता के बाद वे अपनी उपलब्धियों का श्रेय पद्मा नदी (बंगलादेश) के किनारे बिताए अपने कैशोर्यकाल को देते थे, जहाँ उन्होंने नैसर्गिक साहचर्य से बहुमूल्य शिक्षण पाया ।

आविष्कारक एडिसन

अध्यापकों ने एडिसन की माँ को सलाह दी-यह मूढ़मति वर्णमाला तक पढ़ नहीं पाया, यह पढ़ नहीं पाएगा । माता ने उसे स्कूल से उठा लिया और एक अखबार बेचने की दुकान पर लगा दिया । एडिसन का दिमाग आविष्कारों में बहुत लगता था । उसने जोड़-गाँठ कर एक प्रेस बनाया, जिस पर अपना अखबार भी लिखने-छापने लगा । एक दिन तार बाबू का लड़का रेल की पटरी पर कटने से उसने बचा लिया । बाबू ने उसे तार का काम सिखा दिया । वह अपने आविष्कारों में इतना निमग्न रहता कि ग्रामोफोन ही बना डाला । लगन इतनी जोरदार थी कि एक दिन पत्नी से ही परिचय पूछ बैठा । एडिसन ने कितने ही आविष्कार किए हैं । पढ़ तो वह थोड़ा ही सका, पर विज्ञान के क्षेत्र में उसके दिमाग ने आश्चर्यजनक सफलताएँ प्राप्त कीं ।

श्रम आजीविका का शिक्षण-संपादन

मनुष्य को कुछ ऐसी कलाएँ भी जाननी चाहिए, जिससे उच्च पद छिन जाने पर भी सामान्य स्थिति में अपना गुजारा कर सके । माता कुंती ने पांडवों के लालन-पालन में इस दिशा में आरंभ से ही ध्यान रखा था, जो अनुभव उनके वनवास काल में काम आया । भीम ने रसोइए का, अर्जुन ने नर्तक का, द्रौपदी ने दासी का, इसी प्रकार अपने-अपने कौशल के अनुरूप विराट नगर में काम प्राप्त कर लिए थे ।

नास्तिक को शिक्षा

दो मित्र थे, उनमें से एक आस्तिक था व दूसरा नास्तिक । आस्तिक के रहन-सहन का स्तर बड़ा सरल व कार्य-व्यवहार बड़ा शिष्ट था । वह था भी आत्म-संतोषी, जितना मिल जाता, उसी में संतुष्ट रहता । इसके विपरीत नास्तिक दिन भर इसी उधेड़-बुन में लगा रहता कि अधिकाधिक आर्थिक अर्जन कर किस तरह भौतिक सुख-साधन एकत्रित करे । नास्तिक मित्र ने अपने आस्तिक मित्र से एक दिन पूछा- "तुम्हारा त्याग वास्तव में बहुत बड़ा है, तुमने भगवान की भक्ति में सारी दुनियादारी ही छोड़ दी ।" आस्तिक ने उत्तर दिया- "भाई, तुम्हारा त्याग तो और भी बड़ा है, तुमने तो दुनिया के लिए ईश्वर को ही छोड़ रखा है ।" नास्तिक को उस दिन सीख मिली और उसने अपना जीवन क्रम पूरी तरह बदल दिया । अब वह अपने ज्ञान का लाभ दूसरों को

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

देकर उन्हें स्वावलंबी बनाने का शिक्षण देने लगा । साथ ही उसने अपना व्यवहार भी बदला व आचरण भी ।

अध्यवसाय के बल पर करोड़पति

पिता का स्वर्गवास हुआ, अनाथ बच्चे आजीविका की तलाश में अपने गाँव से मात्र लोटा-डोरी लेकर चल पड़े । जहाँ रुकते, वहाँ कुछ मजदूरी करके निर्वाह योग्य कमा लेते, फिर आगे बढ़ते । बंबई पहुँच कर रोजगार तलाशा । इतने बड़े शहर में उन निरक्षरों को कौन नौकरी देता । पर उनने हिम्मत न हारी । सस्ती धार्मिक किताबें उधार में खरीदीं व फेरी लगाकर बेचने लगे । साथ ही रात्रि को स्कूल भी जाना चालू कर दिया । किताबें बेचते-बेचते पूँजी बढ़ी एवं काम इतना बढ़ा कि धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित करने के लिए उन्हें प्रेस लगाना पड़ा । जैसा साहित्य प्रकाशित करते थे, वैसा ही उनका आचरण था । क्रमशः नई मशीनें आती गईं व अध्यवसाय के बलबूते वे प्रेस-प्रकाशन के शिखर पर पहुँच गए । 'निर्णय सागर प्रेस' इन्हीं का स्थापित किया हुआ है, जहाँ से कई महत्वपूर्ण प्रकाशन निकले हैं ।

इतरा के पुत्र ऐतरेय

इतरा यों तो शूद्र कुल में उत्पन्न हुई थी, पर उसे महर्षि शाल्विन की धर्मपत्नी बनने का सौभाग्य मिल गया । उसके एक पुत्र भी था । एक बार राजा ने बड़ा यज्ञ आयोजन किया । उसमें सभी ब्राह्मणों और ब्रह्मकुमारों का सत्कार हुआ । सभी को दक्षिणा मिली, किन्तु इतरा के पुत्र को शूद्र कहकर उस सम्मान से वंचित कर दिया गया । शाल्विन बहुत दुखी हुए । इतरा को भी चोट लगी, बच्चा भी उदास था । इस असमंजस ने एक नया प्रकाश दिया । तीनों ने मिलकर निश्चय किया कि वे जन्म से बढ़कर कर्म की महत्ता सिद्ध करेंगे । शिक्षण का नया दौर आरंभ हुआ । इतरा पुत्र ऐतरेय को धर्मशास्त्रों की शिक्षा में प्रवीण-पारंगत कराया गया । देखते-देखते वह अपनी प्रतिभा का अद्भुत परिचय देने लगा ।

एक बार वेद ऋचाओं के अर्थ की प्रतिस्पर्द्धा हुई । दूर देश के विद्वान और राजा एकत्रित हुए । प्रतियोगिता में सभी पांडुलिपियाँ जाँची गईं । सर्वश्रेष्ठ ऐतरेय घोषित किए गए । इतरा शूद्र थी । उनके पुत्र ने, पिता के नाम पर नहीं, माता की कुल-परंपरा प्रकट करने के लिए, अपना नाम ऐतरेय घोषित किया । 'ऐतरेय ब्राह्मण' वेद ऋचाओं को प्रकट करने वाला अद्भुत ग्रंथ है । उसका सृजेता जन्म से शूद्र होते हुए भी कर्म से ब्राह्मण बना ।

साहस ही नहीं, शील भी

महर्षि बोधायन अपनी शिष्य मंडली को लेकर तीर्थाटन के रूप में धर्म-प्रचार के लिए निकले । रास्ते में एक सरोवर के तट पर वट वृक्ष के नीचे विश्राम किया । प्रातः अन्य शिष्य उठ बैठे, कि गार्ग्य ज्यों के त्यों पड़े रहे । ऋषि ने जगाया, तो शिष्य ने धीमे स्वर से कहा- "मेरे पैरों में एक भयंकर सर्प लिपटा पड़ा है, सो गया है, थोड़ी देर में वह जागेगा और चला जाएगा, इसलिए अभी मुझे यथावत् ही पड़े रहना चाहिए ।" थोड़ी देर में सर्प जगा और झाड़ी में खिसक गया । गार्ग्य उठे और गुरु-वंदन करने गए । अन्य शिष्यों ने इसे साहस कहा और प्रशंसा की । बोधायन ने कहा- "गार्ग्य का निर्णय धैर्य और विवेकयुक्त था । इसलिए उसे साहस की अपेक्षा शील कहना उत्तम है ।" इस शील का अभ्यास ही जीवन को सही रूप में, आदर्शयुक्त ढंग से जीने के लिए जरूरी है । शिक्षा इसके बिना अपूर्ण है ।

बुद्धिमान कौन है ?

एक सेठ ने अपने बेटों से कहा- "व्यवसाय बढ़ाओ और दूर-दूर तक कोठी-केन्द्र बनाओ ।" सब बेटे इस प्रयत्न में लग गए । धन बहुत था, तो भी सीमित साधनों में ही कोठियाँ खड़ी की जा सकीं । आदमनी बढ़ी, तो स्थानीय असहयोग के कारण उतना लाभ नहीं मिला, जितना कि सोचा गया था । छोटे बेटे ने अधिक समझदारी से काम लिया । वह दौरे पर निकला । कोठी तो एक भी नहीं बनाई, पर गहरी मित्रता अनेक सुयोग्यों के साथ सँजो ली । मित्र उसके व्यवसाय में सहायक हुए और अन्य भाइयों की तुलना में कहीं अधिक लाभ मिलने लगा । समय बीतने पर सेठ ने सभी लड़कों को बुलाया और काम का लेखा-जोखा लिया । बुद्धिमानी उसकी सराही गई, जिसने अधिक मित्र बनाने का व्यवसाय किया और बिना पूँजी बढ़ाए अधिक लाभ कमाने में सफल हुआ ।

महापंडितों की मूर्खता

छात्रों ने काशी में संस्कृत विद्या पढ़ी, उनमें से चार पारंगत हो गए, तो घर वापस लौटे । मार्ग लंबा था, कुछ महत्वपूर्ण नीति-वाक्य उनने याद कर लिए, ताकि उलझनें सुलझाने में काम आए । वे वाक्य थे -

(१) महाजनो येन गतः स पन्थाः ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

(२) राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः ।
(३) धर्मस्य त्वरिता गतिः ।
(४) आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति ।
(५) सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः ।
(६) अतिविस्तारविस्तीर्णं तद् भवेन्न चिरायुषम् ।
(७) छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति ।

इन वाक्यों का यथा समय प्रयोग करते हुए मार्ग पूरा करने का निश्चय उन लोगों ने किया । आगे जाते हुए एक चौराहा पड़ा । सही रास्ता कौन सा है, यह जानना था । श्लोक याद आया– "महाजनो येन गतः स पन्थाः ।" महाजन जिस पर चलें, वही मार्ग । एक मार्ग पर मुर्दे के साथ भीड़ जा रही थी । चारों उनके पीछे चल पड़े और श्मशान पहुँच गए । यहाँ अपना, कौन पराया कौन ? स्मरण आया । यहाँ कोई अपना सगा है क्या ? नजर दौड़ाई । श्मशान में गधा चर रहा था, याद आया– "राजद्वारे श्मशाने च यस्तिष्ठति स बान्धवः", राजद्वार और श्मशान में जो खड़ा हो, वही अपना है । इस कसौटी पर गधा ही खरा उतर रहा था, सो वे उसके गले मिले और रास्ता पूछा । गधे ने दुलत्तियाँ जमा दीं । भटकते-भटकते नदी तट पर पहुँचे । पार कैसे हों ? कौन पार करे ? नाव दीखी नहीं । केले का बड़ा पत्ता बहता आया । नीति वाक्य याद आया– "आगमिष्यति यत्पत्रं तदस्मांस्तारयिष्यति", जो पत्ता बहता आएगा वही उद्धार भी करेगा सो पत्ते पर चढ़कर पार होने की बात सोचने लगे । डूबते-डूबते बचे । एक अधिक गहरे में उतरा दीखा, तो उसका सिर काट लिया । श्लोक में यही तो कहा गया था कि "सर्वनाशे समुत्पन्ने अर्धं त्यजति पण्डितः", सर्वनाश उत्पन्न होने पर पंडित लोग आधा छोड़ देते हैं । जैसे-तैसे रास्ता पार करते, जो शेष थे, वे एक गाँव में ठहरे । ग्रामीण उन्हें अपने-अपने घर ले गए और अलग-अलग प्रकार के भोजनों से सत्कार किया । एक के घर आटे के लंबे तंतु जैसी 'सेवई', दूसरे के घर 'बड़ी पूड़ी', तीसरे के घर छेद वाले 'मालपुआ' परोसे गए । तीनों ने खाने से पूर्व यह सोचा, इनमें कोई खोट तो नहीं है । सेवई वाले को स्मरण आया– "दीर्घसूत्री विनश्यति", दीर्घसूत्री का नाश होता है । उसने खाने से इन्कार कर दिया । दूसरे ने बड़ी पूड़ी खाते समय सोचा– "अतिविस्तारविस्तीर्णं तद् भवेन्न चिरायुषम्", बहुत फैली हुई वस्तु का सेवन करने वाला जल्दी मरता है । तीसरे ने भी छेद वाले मालपुए खाने से इन्कार कर दिया, उसे वाक्य स्मरण था– "छिद्रेष्वनर्था बहुली भवन्ति", छिद्र से बहुत अनर्थ होते हैं, सो खाया उसने भी नहीं । तीनों परोसी थालियाँ छोड़कर भूखे चल दिए । दुखी होकर घर पहुंचे । लोग इन अर्थ-अनर्थ करने वाले पंडितों की मूर्खता सुनकर लोट-पोट हो गए । उनने समझाया– "शब्दार्थ समझना ही पर्याप्त नहीं, आप्त वचनों का भावार्थ भी समझना चाहिए ।" शिक्षण ऐसा होना चाहिए, जो व्यवहार बुद्धि का विकास कर सके ।

कुसंगाद् बालका रक्ष्याः सेवकेषु सखिष्वपि ।
अध्यापकेषु चान्येषु परिचितेषु जनेष्वपि ॥ ६१॥
योग्याः के सन्त्ययोग्याः के ध्येयमात्राभिभावकैः ।
सतर्कत्वप्रसंगेऽस्मिन्ननिवार्यं हि मन्यताम् ॥ ६२॥
दुष्प्रभावात् कुसंगस्य बालानां प्रकृतिस्तथा ।
भविष्यच्चाऽपि संयातो विकृतिं दुःखदायिनीम् ॥ ६३॥
गृहकार्येषु बालानां रुचिं सम्पादयेन्नरः ।
सहयोगस्य भावं च तेषां संवर्द्धयेदपि ॥ ६४॥
स्नेहात्किमपि कर्तुं च स्वातन्त्र्यं नैव दीयताम् ।
मृदुताकारणात्तेषु केवलं जायते नहि ॥ ६५॥
शीतोष्णयोः प्रभावः स परं सदसतोरपि ।
प्रभावस्तेषु क्षिप्रं स प्रभवत्यञ्जसैव तु ॥ ६६॥

भावार्थ–कुसंग से बच्चों को बचाया जाय । सेवक, साथी, अध्यापक, परिचितों में कौन उपयुक्त, कौन

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अनुपयुक्त है ? इसका ध्यान रखना अभिभावकों का काम है । इस संदर्भ में बहुत सतर्कता की आवश्यकता है । कुसंग के दुष्प्रभाव से कई बार बालकों का स्वभाव एवं भविष्य ही बिगड़ जाता है, जो पीछे बड़ा दुखदायी होता है । बच्चों को घर-परिवार के कामों में रस लेने, ध्यान देने और हाथ बँटाने की आदत आरंभ से ही डालनी चाहिए । दुलार में कुछ भी करते रहने की छूट नहीं देना चाहिए । कोमलता के कारण बालकों पर सर्दी-गर्मी का ही अधिक असर नहीं होता, वरन् भले-बुरे प्रभाव से भी वे जल्दी प्रभावित होते हैं ॥ ६१-६६॥

व्याख्या—बालकों, किशोरों के कोमल मन पर सभी समीपवर्ती व्यक्तियों की मनःस्थिति का प्रभाव पड़ता है । चाहे वे घर में कार्यरत सेवक हों, उनके साथी-सहचर हों, आने वाले परिचित अतिथिगण हों अथवा शिक्षण देने वाले गुरुजन । इनमें से कौन का साथ हितकर है, यह चुनाव है तो कठिन, पर अभिभावकों को यह भी करना ही चाहिए । मौसम के थोड़े से अनुकूल-प्रतिकूल परिवर्तन स्वास्थ्य पर प्रभाव डालते हैं, उसी प्रकार संपर्क संबंधी थोड़े से भी प्रभाव का उन पर दूरगामी असर पड़ता है । अच्छा-बुरा चुनने की बुद्धि किशोरावस्था तक विकसित नहीं हो पाती, किन्तु उनका प्रभाव ढलाई की प्रक्रिया से गुजर रहे मस्तिष्क पर तुरंत पड़ता है । अच्छा हो, वातावरण ऐसा बने कि हर श्रेष्ठ कार्य में बच्चों की रुचि जागे एवं दैनंदिन घर गृहस्थी के कार्यों में भी रस लेकर स्वावलंबी बनाएं, इस प्रयोगशाला में कुछ सीखें ।

बाह्य व आंतरिक सौंदर्य

व्यावहारिक शिक्षण द्वारा बच्चों को समझाया जाना चाहिए कि अच्छे-बुरे व्यवहार की प्रतिक्रिया क्या होती है ? एक राजा की तीन बेटियाँ थीं । दो सुंदर, एक कुरूप । कुरूप को सभी प्यार करते और सुंदर होते हुए भी दो के साथ घर के लोग उपेक्षा बरतते । पिता के पास दोनों पक्षपात की शिकायत करने और कारण जानने पहुँचीं । राजा ने एक सप्ताह में उत्तर देने को कहा । तीनों लड़कियों को दूसरे दिन राजा ने बगीचे में भेजा । द्वार से प्रवेश करते ही एक भूखी बुढ़िया बैठी मिली । बड़ी राजकुमारियाँ उसे गलत जगह बैठने के लिए खरी-खोटी सुनाती हुई आगे बढ़ गईं । छोटी कुरूप ने अपना भोजन उसे दे दिया, सहानुभूति प्रकट की और भारी गठरी को सिर पर उठाकर उसे उपयुक्त स्थान पर बिठा दिया । बुढ़िया पीछे क्या कहती रही, यह राजा ने लड़कियों को सुनाया और कहा- "चेहरे की सुंदरता से बढ़कर हाथों और वाणी का सौंदर्य है और वही सब जगह सराहा जाता और प्यार पाता है ।" दोनों लड़कियों ने तन की तरह अपने मन को भी सुंदर बनाने की साधना आरंभ कर दी ।

धूर्त से सावधान

एक चालाक लोमड़ी पेड़ पर बैठे मुर्गे को पट्टी पढ़ा रही थी कि तुमने सुना नहीं पशु-पक्षियों की पंचायत हो चुकी है । कोई किसी को सताएगा नहीं । तुम निर्भयपूर्वक नीचे उतर आओ और मेरे साथ खेलो । मुर्गे उसकी धूर्तता समझ रहे थे और हाँ में हाँ मिला रहे थे । इतने में दो शिकारी कुत्ते कहीं से दौड़ते हुए आए और देखते ही लोमड़ी भागी । मुर्गे ने कहा- "भागती क्यों हो ?" अब कुत्तों से डरने की क्या जरूरत है ?" लोमड़ी ने उत्तर दिया- "हो सकता है, तुम्हारी तरह इन कुत्तों ने भी पंचायत का समाचार न सुना हो ।" धूर्तों की चाल से बचना व अन्यों को बचाना चाहिए । मीठी-मीठी बातों के प्रलोभन से बचकर जहाँ तक संभव हो, अपनी विवेक बुद्धि को जगाना चाहिए ।

स्वाभिमानी तिलक

लोकमान्य तिलक जिस कॉलेज में पढ़ते थे, उसके कितने ही छात्र फैशनपरस्त थे । तिलक अकेले ही कुर्ता-पगड़ी पहनते थे । उन फैशन वाले लड़कों का उनने मजाक बना बनाकर देशी पोशाक पहनने के लिए सहमत कर लिया ।

कुछ लड़के आए दिन बीमार रहते थे और उनकी अलमारियों में दवाएँ भरी रहती थीं । तिलक ने वे दवाएँ उठाकर नाली में फेंक दीं और कहा- "तुम मेरे साथ अखाड़े में चला करो, फिर कोई बीमारी रह जाय, तो मेरा जिम्मा ।"

जड़ बुद्धि से मेधावी

जर्मनी के जोसफ बर्नार्ड की किशोर वय इस प्रकार बीत गई, मानों वह पूरी तरह खर दिमाग हो । स्कूल में न पढ़ सका, तो अभिभावकों ने ट्यूशन की व्यवस्था की । उसका भी कोई प्रतिफल न निकला, तो बाप ने एक दिन खीजते हुए कहा- "तेरे जैसी बुद्धू औलाद से तो एक पिल्ला पालना अच्छा था ।" बात चुभ गई । बर्नार्ड ने उसी दिन से पूरी दिलचस्पी और मेहनत के साथ नए सिरे से पढ़ाई आरंभ कर

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

दी । मूढ़ मगज ने धीरे-धीरे सुधरना और बदलना आरंभ कर दिया । उसने दर्जा पर दर्जा पास करना आरंभ कर दिया, सो भी अच्छे डिवीजनों में । परिवर्तन ऐसा हुआ जिसे चमत्कार की उपमा दी जाने लगी । उसने बाइबिल कंठाग्र याद कर ली । इतना ही नहीं कुछ ही वर्षों में नौ भाषाओं का मूर्धन्य विद्वान बन गया । प्रतिभा विकसित हुई । अपने सेवा कार्यों से जनता का मन जीत लिया । पार्लियामेंट का सदस्य बना । अपने विभाग के नौ-नौ अफसरों को एक साथ बिठा लेता और सभी को ही एक समय में कितने ही नोट लिखा देता । उसे जर्मनी के इतिहास में मेधा का धनी कहा जाता है, जबकि किशोरावस्था पूरी हो चुकने तक वह पूरा गधा था ।

बुद्धू की अनुपम बुद्धिमत्ता

संसार के माने हुए वैज्ञानिक आइंस्टीन, बचपन में बड़े फिसड्डी थे । साथी लड़के उनका हमेशा मजाक उड़ाते थे । एक दिन अत्यंत गंभीरतापूर्वक उनने अध्यापक से पूछा- "क्या मैं किसी प्रकार सुयोग्य बन सकता हूँ ?" अध्यापक ने उन्हें संक्षेप में एक ही उत्तर दिया- "दिलचस्पी और एकाग्रतापूर्वक अभ्यास यही एक गुरुमंत्र है विद्वान बनने का ।" आइंस्टीन ने वह बात गिरह बाँध ली और अध्ययन के विषयों में तन्मय हो गए । परिणाम स्पष्ट है, वे संसार में अणु विज्ञान के पारंगत और सापेक्षवाद के जनक माने गए । उनकी वह पुरानी बुद्धू कहलाने वाले बुद्धि हजार गुनी होकर विकसित हुई ।

मैक्सिम गोर्की

मैक्सिम गोर्की को बचपन से ही निराश्रित रहना पड़ा । उन्हें चौकीदारी, खाना पकाना, झाड़ लगाना जैसे काम करते हुए दिन बिताने पड़े । कई बार तो वह कूड़े के ढेर में से काम की चीजें ढूँढ़कर उन्हें बेचता और अपनी बूढ़ी नानी का पेट भरता । इन परिस्थितियों में उसके लिए उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकना तो संभव न हुआ पर रद्दी पत्रिकाएँ, पुराने अखबार, वाचनालयों के सहारे अपनी ज्ञान वृद्धि करता रहा, धीरे-धीरे लिखने का अभ्यास भी । किसी बहाने साहित्यकारों से संपर्क भी साधा और अपनी गलतियाँ ठीक कराता रहा । मैक्सिम गोर्की रूस का महान साहित्यकार हुआ है । उसने अन्यायी शासन के विरुद्ध और प्रजा को अधिकारों के लिए संघर्ष करने को बहुत कुछ लिखा है । जब उसकी पुस्तकें अच्छी चलने लगीं, तो वह न्यूनतम में अपना खर्च चलाकर शेष बचत रूस की कम्युनिष्ट पार्टी को देता रहा । उसकी कृतियाँ अभी भी बड़ी प्रेरणाप्रद हैं और बड़े चाव से पढ़ी जाती हैं ।

आत्मा की कचोट

कलकत्ता के अश्विनीकुमार दत्त बचपन से ही प्रतिभावान थे । १६ वर्ष की उम्र में मैट्रिक में बैठने का नियम था । वे १४ वर्ष के होते हुए भी दो वर्ष बड़ी उम्र लिखवाकर बैठ गए और अच्छे डिवीजन से पास हो गए । पीछे उनकी आत्मा इस झूठ के लिए बहुत कोसती रही और उपाय न देखकर वे दो वर्ष स्कूल छोड़ बैठे रहे और १६ वर्ष के होने पर इंटर में बैठे । बाल्यकाल के अपने ऐसे ही सद्गुणों के कारण वे आगे चलकर देश रत्न बने ।

कनिंघम ने हिम्मत नहीं हारी

सर्दी के दिनों अँगीठी सुलगाने के प्रयास में दो छोटे बच्चों ने मिट्टी के तेल के स्थान पर पैट्रोल डाल दिया, आग भड़की । एक तो तत्काल मर गया । दूसरा महीनों अस्पताल में रहने के बाद कुरूप और अपंग हो गया । दोनों पैर लकड़ी की तरह सूख गए । पहिएदार कुर्सी के सहारे घर लौटा तो किसी को आशा न थी कि वह कभी चल-फिर भी सकेगा । पर लड़के ने हिम्मत न छोड़ी । आज की तुलना में अधिक अच्छी स्थिति प्राप्त करने के लिए वह प्रयत्न करता रहा । निराश या खिन्न होने के स्थान पर उसने प्रतिकूलता को चुनौती के रूप में लिया और उसे अनुकूलता में बदलने के लिए अपने कौशल और पौरुष को दांव पर लगाता रहा । उसने बैसाखी के सहारे न केवल चलने में, वरन् दौड़ने में सफलता पाई और पुरस्कार जीते । इस विपन्नता के बीच भी उसने पढ़ाई जारी रखी, एम०ए०, पी०एच०डी० उत्तीर्ण की और विश्वविद्यालय में निर्देशक के पद पर आसीन हुआ । द्वितीय विश्वयुद्ध में वह मोर्चे पर भी गया । जहाँ अड़ा वहीं सफल रहा । रिटायर होने पर उसने अपनी जमा पूँजी से अपंगों को स्वावलंबन देने वाला एक आश्रम खोला, जिसमें इन दिनों आठ हजार अपंगों को पढ़ने, रहने और कमाने का प्रबंध है । अमेरिका का संकल्पवान साहसी ग्रेट कनिंघम का नाम बड़ी श्रद्धापूर्वक लिया जाता है । कठिनाइयों से जूझने के लिए उसका जीवन वृत्तांत पढ़ने-सुनने का परामर्श दिया जाता है ।

खोटी कहने का साहस

अमीचंद नामक एक प्रसिद्ध व्यक्ति महर्षि दयानंद के पास गाना गाने जाया करता था । दयानंद को उस व्यक्ति से अत्यंत आत्मीयता हो चुकी थी । एक दिन समाज के सभ्य लोगों ने उसके

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आचरण के विषय में महर्षि से शिकायत की । महर्षि ने विस्तार से पता लगाया, सच पाया । दूसरे दिन जब अमीचंद गाना गाकर उठने ही वाला था कि महर्षि ने कहा– "प्यारे दोस्त ! तुम्हारा गला तो कोयल का है, परंतु आचरण कौवे के समान है । अमीचंद को इतनी सी बात हृदय को चुभने के समान लगी । उसने संकल्प लिया कि महर्षि देव अब से मिलूँगा, तो अच्छा बनकर । दूसरे दिन से ही उसने कार्यालय में रिश्वत लेना बंद कर दिया । बहुत समय से त्यागी हुई पत्नी को पुनः बुला लिया । नशा आदि का भी सेवन करना बंद कर दिया । तब ऋषि चरणों में जाकर मस्तक झुकाया । अमीचंद की पत्नी तो ऋषि के अद्‌भुत कर्तृत्व पर मुग्ध थी तथा अपना नया जन्म अनुभव कर रही थी ।

सिकंदर से ज्यादा अरस्तू का महत्व

सिकंदर और अरस्तू साथ-साथ जा रहे थे । रास्ते में एक नदी मिली । अरस्तू पहले पार जाना चाहते थे, पर सिकंदर ने कहना न माना और वही पहले उतरा, बाद में अरस्तू गए । पार जाने पर अरस्तू ने कहना न मानने का कारण पूछा तो कहा– "यदि सिकंदर डूब जाता, तो अरस्तू ऐसे दस शिष्य बना सकते थे, पर अरस्तू डूब जाते तो दस सिकंदर मिल कर भी एक अरस्तू नहीं बना सकते थे ।"

बालकों के सबसे निकटवर्ती साथी उनके अध्यापक होते हैं । उनके स्तर स्वभाव पर ही बच्चों का विकास निर्भर करता है ।

स्थितप्रज्ञ गंगाधर शास्त्री

मिथिला के पंडित गंगाधर शास्त्री एक विद्यालय में पढ़ाते थे । उनका लड़का गोविंद भी उसी में पढ़ता था । गोविंद भी पिता की तरह बड़ा शिष्ट और अनुशासनप्रिय था । सहपाठी उसे बहुत स्नेह और सम्मान देते थे । एक दिन शास्त्री जी के साथ गोविंद विद्यालय नहीं पहुँचा । स्कूल बंद करके जब वे चलने लगे, तो विद्यार्थियों ने पूछा– "गोविंद आज क्यों नहीं आया ?" शास्त्री जी ने भारी मन से कहा– "गोविंद को अचानक दौरा पड़ा और वह वहाँ चला गया, जहाँ से फिर कोई नहीं लौटता ।" विद्यार्थी स्तब्ध रह गए । साथी के निधन का भारी दुख हुआ । साथ ही इस बात का आश्चर्य भी कि ऐसी दुर्घटना होने पर भी शास्त्री जी पढ़ाने कैसे आ सके और बिना माथे पर शिकन लाए किस प्रकार रोज जैसी कक्षा चलाते रहे । अपना असमंजस लड़कों ने शास्त्री जी के सामने व्यक्त भी किया । पंडित जी ने उत्तर दिया– "बच्चो ! पिता के हृदय से गुरु का कर्तव्य बड़ा होता है ।"

ऐसे आदर्श संवेदनशील हृदय वाले गुरुजन ही श्रेष्ठ नागरिक समाज को दे सकते हैं ।

पाणिग्रहणसंस्कारस्तदैवैषां च युज्यते ।
यदेमे संस्कृता बाला सन्त्वपि स्वावलम्बिनः ॥ ६७॥
तथा योग्याश्च सन्त्वेता बालिका भारमञ्जसा ।
क्षमा वोढुं गृहस्थस्य येन स्युः समयेऽपि च ॥ ६८॥
स्वावलम्बनदृष्ट्या ता प्रतीयेरन्नपि क्षमाः ।
नो पाणिग्रहणं युक्तमविपक्वायुषां क्वचित् ॥ ६९॥
विकासेऽनेन तेषां हि बाधाऽभ्येति समन्ततः ।
सुविधा साधनानां हि ज्ञानवृद्धेरपीह च ॥ ७०॥
व्यवस्थेव सदा ध्येयं बालाः संस्कारिणो यथा ।
भवन्त्वपि सदा सर्वे गुणकर्मस्वभावतः ॥ ७१॥
चरित्रे चिन्तने तेषां व्यवहारोऽपि सन्ततम् ।
शालीनता समावेशो यथायोग्यं भवत्वपि ॥ ७२॥

भावार्थ–विवाह तब करें, जब बच्चे स्वयं सुसंस्कृत व स्वावलंबी बनने की स्थिति तक पहुँचें । लड़कियों को इस योग्य होना चाहिए कि वे नए गृहस्थ का भार उठा सकें और समय पड़ने पर आर्थिक स्वावलंबन की दृष्टि से भी समर्थ सिद्ध हो सकें । परिपक्व आयु होने से पूर्व बालकों या किशोरों का विवाह नहीं करना चाहिए । इससे उनके विकास क्रम में भारी बाधा पड़ती है । ज्ञान वृद्धि तथा सुविधा-साधनों की व्यवस्था करने की तरह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ही इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि बच्चे गुण–कर्म–स्वभाव की दृष्टि से सुसंस्कारी बनें । उनके चिंतन, चरित्र और व्यवहार में शालीनता का समुचित समावेश होता रहे ॥ ६७–७२ ॥

व्याख्या–न केवल शारीरिक संरचना की दृष्टि से स्वस्थ, अपितु, मानसिक परिपक्वता, भावनात्मक विकास की स्थिति में पहुँचने पर ही युवकों को विवाह-बंधन में बाँधा जाय । आयु का बंधन तो हो ही, गुण-कर्म-स्वभाव की दृष्टि से परिष्कार हो पाया है अथवा नहीं, इसे भी विवाह का आधार बनाया जाय । बाल्यकाल से कैशोर्यावस्था की अवधि अनुभवों के अर्जन, ज्ञान-संपदा के संचय एवं व्यावहारिक शिक्षण की है । जीवन जीने की कला से जो अनभिज्ञ हैं, उन्हें समय से पूर्व विवाह-बंधन में बाँधना उनके साथ अत्याचार करना है ।

जहाँ भी बाल-विवाह का प्रचलन हो, वहाँ इसके विरुद्ध आवाज उठाई जाय एवं स्वयं किशोरों में यह वृत्ति जगाई जाय कि स्वावलंबी होने से पूर्व, सुसंस्कारों की संपदा कमा लेने के पूर्व वे विवाह नहीं करेंगे । किशोरियों को भी यह अनुभव कराया जाना चाहिए कि वे सक्षम, स्वावलंबी होने के बाद ही गृहस्थी का दायित्व अच्छी तरह सँभाल सकती हैं ।

कच और देवयानी

देव पुत्र कच शुक्राचार्य के पास संजीवनी विद्या पढ़ने गए । लंबे समय तक उनके आश्रम में रहकर अपने विषय में प्रवीणता प्राप्त कर ली । शुक्राचार्य की कन्या देवयानी कच से विवाह करना चाहती थी । कच ने इस प्रस्ताव को मर्यादा उल्लंघन की बात कहकर इन्कार कर दिया । गुरु कन्याएँ वहाँ पढ़ने वाले छात्रों की धर्म बहिन होती थीं । यदि उस परंपरा को तोड़ा जाय, तो आश्रमों का अनुशासन ही टूट जाएगा और वहाँ धर्म बंधन की उपेक्षा चल पड़ेगी । इससे भ्रष्टाचार फैलेगा ओर आश्रमों की गरिमा पर कुठाराघात होगा । देवयानी ने अपनी इच्छा की पूर्ति न होते देखकर कच को विद्या निष्फल होने का शाप दिया । जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया पर मर्यादा उल्लंघन का दोष सिर पर नहीं लिया ।

गुण को नहीं, संपदा को महत्व दिया

एक देहाती लड़का घर से नौकरी के लिए निकला । उसे लकड़ी काटने, पशु पालने जैसा घरेलू काम मिल गया । लड़के की मेहनत और ईमानदारी पर मालिक खुश था । इसी श्रेणी का एक और नौकर साथ में काम करता था । उसकी लड़की विवाह योग्य थी । दोनों की आयु विवाह योग्य थी । वह लड़के के गुणों पर मुग्ध थी, उसके साथ विवाह करना चाहती थी । प्रस्ताव उसके पिता के सामने रखा गया, तो उसने स्पष्ट इन्कार कर दिया । गरीब लड़के के हाथ अपनी बेटी का हाथ सौंपकर वह उसे दरिद्रता में डालना नहीं चाहता था । लड़के ने उन्नति करना आरंभ कर दिया और २५ वर्ष बाद अमेरिका का राष्ट्रपति बन गया । नाम था उसका गारफील्ड । लड़की के पिता को तब बहुत पश्चात्ताप हुआ और तब पैसों की तुलना में गुणों का महत्व समझा ।

राजकुमारी से सत्याग्रही

कपूरथला के राजा साहब की इकलौती बेटी थी राजकुमारी अमृतकौर । शिक्षा तो भारत में भी कम नहीं थी, पर वे विदेशों की प्रगति में वहाँ के नागरिकों की लगन का प्रत्यक्ष स्वरूप देखना चाहती थीं । इसलिए इंग्लैंड गईं । ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी में पढ़ीं, किन्तु परीक्षा एक भी नहीं दी । वहाँ उन्हें वैसा कुछ नहीं लगा, जो सीखने योग्य हो । भारत लौटने पर वे अपने पिता के चरण चिह्नों पर चलीं । सर हरनाम सिंह, गोपाल कृष्ण गोखले उनके निजी मित्र थे और स्वतंत्रता आंदोलन को सफल बनाने के लिए अपने ढंग से प्रयत्न करते थे । उनकी पुत्री में भी पिता की विचारधारा कूट-कूट कर भरी थी ।

गांधी जी के संपर्क में आते ही उनने पूरा जीवन राष्ट्र को समर्पित कर दिया । आजीवन कुमारी रहीं और अनेक बार सत्याग्रह आंदोलन में जेल जाती रहीं । स्वराज्य मिलने पर वे दो बार केंद्रीय सरकार में स्वास्थ्य मंत्री रहीं । दस वर्ष गांधी जी की सेक्रेटरी के रूप में काम करती रहीं । नारी उत्थान परिषद् का कार्य तो पूरी तरह वही सँभालती थीं ।

साहसी जान काकरेल

जान काकरेल का पूरा परिवार राजनीतिक क्षेत्र के सुधार आंदोलन में लगा था । उनकी लड़की ग्रीजेल भी उसी रंग में रंगी हुई थी । पिता को फाँसी का हुक्म हो गया था, पर उसने उन्हें बचाने में अद्‌भुत चतुरता का काम किया । उसने पुरुष वेष बनाया । पिता को छुड़ाने की अर्जी लेकर

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भाई को इंग्लैंड भेजा । उधर फाँसी का हुक्म ले जाने वाले हरकारे के थैले में से बड़ी होशियारी से हुक्म का कागज चुरा लिया । साथ ही उसकी गोली भरी पिस्तौल के स्थान पर खाली कारतूस वाली पिस्तौल रख दी । हरकारा कुछ न कर सका । फांसी की तारीख टली और उसका भाई क्षमा पत्र ले आया । इस प्रकार अपने पिता को चतुरतापूर्वक फाँसी के तख्ते से उतार कर फिर शेष जीवन देश-सेवा में लगाया ।

वीर नारी इस तरह बढ़ती है

उन दिनों नारी शिक्षा का विरोध भी होता था और उपहास भी । रोड़े अटकाने में कोई कमी न रहने दी जाती थी । इन परिस्थितियों में त्रावनकोर की एक बहादुर नारी प्रगति के क्षेत्र में अपने साहस के बल पर आगे आई । नाम था उनिता चेड्डी । ग्रेजुएट होने के बाद उसने वकालत पास की और पुराने वकीलों को पीछे छोड़ दिया । सरकार उसकी प्रतिभा से प्रभावित हुई और डिस्ट्रिक जज से तरक्की देकर हाईकोर्ट का जज बना दिया । वे विधानसभा की विधायक भी बनीं । चेड्डी ने 'श्रीमती' नामक एक पत्रिका का भी प्रकाशन किया । उसमें देश में नारी प्रगति के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय नारी आंदोलन की भी चर्चा रहती थी । जो लोग आरंभ में उनका उपहास उड़ाते थे, वे ही प्रतिभा के सामने सिर झुकाने लगे । उनके पति पुलिस अफसर थे, पर अनुदार नहीं । उनने पत्नी की प्रगति में कुढ़न अनुभव नहीं की, वरन् प्रसन्नता व्यक्त की और सहायता पहुँचाई । चेड्डी का गृहस्थ जीवन भी निष्ठा और मधुरता से भरा-पूरा था ।

आदर्श प्रशासिका-अहिल्याबाई

एक छोटे देहात में जन्मी कृषक कन्या अहिल्याबाई अपने स्वभाव, चरित्र और साहस के कारण अपने गाँव में प्रसिद्ध थी । इंदौर के महाराज मल्हार राव उस गाँव में होकर निकले, तो उस कन्या का परिचय और साक्षात्कार करके अत्यंत प्रभावित हुए । उसे अपने पुत्र खांडेराव के साथ विवाह करने का निवेदन उसके पिता से किया । वे तुरंत सहमत हो गए और लड़की को इंदौर लाकर धूमधाम के साथ विवाह कर दिया । मल्हार राव को उस अशिक्षित लड़की से बड़ी आशाएँ थीं । उनने उसे पढ़ाने और राजकाज में सुयोग्य बनाने में भरपूर प्रयत्न किया । दुर्देव से कुछ ही समय में उनके ससुर और पति का स्वर्गवास हो गया । राजकाज उन्हें सँभालना पड़ा । शत्रुओं के आक्रमण को उनने निरस्त किया । डाकुओं के आतंक का सफाया किया । भ्रष्ट कर्मचारियों को हटाया और प्रजा की सुख-शांति एवं प्रगति के लिए जो भी संभव था, सो सब कुछ किया । अहिल्याबाई के जीवन का सबसे बड़ा काम था, भारत के प्रमुख तीर्थों का जीर्णोद्धार करना तथा नए बनवाना । भारतीय संस्कृति की दर्शनीय विशिष्टता जो देश भर में दीख पड़ती है, उसमें बड़ा योगदान रानी अहिल्याबाई का रहा ।

स्वावलंबी बालक

फ्रांसीसी गायिका मेलिथॉन के पास एक बार कोई फटे हाल व गरीब लड़का आ गया । मेलिथॉन उसे देखकर द्रवित हो गईं और बोलीं- "बेटे ! तुम्हारा क्या नाम है और क्या काम है ।" "जी, मेरा नाम पियरे है और एक निवेदन करने आया हूँ । मेरी माँ रुग्ण हैं, न तो उसका इलाज कराने के लिए मेरे पास पैसे हैं और न ही दवा तथा पथ्य खरीद सकता हूँ ।" "अच्छा, तुम्हें आर्थिक सहायता चाहिए । बताओ कितने पैसे दूँ"-मेलिथॉन ने पियरे की बात को बीच से ही काटकर कहा । "जी नहीं" -पियरे बोला- "मैं मुफ्त में ही पैसे नहीं लिया करता । मैं तो यह निवेदन करने आया था कि मैंने एक कविता लिखी है । आप उसे संगीत सभा में गाने की कृपा करें । इसके बाद जो उचित समझें दे दें ।"

मेलिथॉन बड़ी प्रभावित हुईं । अगले दिन जलसे में उसने वह कविता गाई । करुण स्वरों में गाई गई वह कविता सुनकर श्रोताओं की आँखें भीग गईं । उस कविता पर कई लोगों ने अच्छा पुरस्कार दिया । मेलिथॉन सारी एकत्रित धनराशि लेकर पियरे की रुग्ण माता के पास पहुँची और उसका हकदार पियरे को ही बताते हुए उन्होंने सब की सब राशि पियरे को ही दे दी ।

श्रेष्ठ लड़का

एक कुएँ पर चार पनिहारिनें पानी भरने गईं । बारी-बारी रस्सी में घड़ा बाँधकर कुएँ में उतारतीं और पानी खींचतीं । एक व्यस्त होती, तो तीन खाली रहतीं । इस बीच उनमें कुछ वार्ता छिड़ गई । सभी अपने-अपने लड़कों के गुणों की प्रशंसा करने लगीं । एक ने कहा- "मेरे लड़के का गला ऐसा मीठा है कि किसी राज दरबार में उसे मान मिलेगा ।" दूसरे ने कहा- "मेरे लड़के ने अपना शरीर ऐसा गठीला बना लिया है कि बड़ा होने पर दंगल में पहलवानों को पछाड़ेगा ।" तीसरे ने कहा- "मेरा बेटा ऐसा बुद्धिमान है कि सदा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण होता है ।" चौथी सिर नीचे किए खड़ी थी । उसने इतना ही कहा- "मेरा लड़का गाँव

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

के और बच्चों की तरह साधारण ही है ।'' इतने में चारों बच्चे स्कूल की छुट्टी होते ही घर चल पड़े । रास्ता कुएँ के पास होकर ही था । एक गाता आ रहा था । दूसरा उछलता । तीसरे के हाथ में खुली पुस्तक थी । सबूत भी उनकी विशेषता का हाथों-हाथ मिल गया । चौथी का लड़का आया, तो उसने चारों के चरण छूकर प्रणाम किया और अपनी माता का पानी से भरा घड़ा सिर पर लेकर घर की ओर चल पड़ा । कुएँ के पास एक वयोवृद्ध बैठा था । उसने चारों बहुओं को रोक कर कहा । यह चौथा लड़का सबसे अच्छा है । इसका शिष्टाचार देखा न । किसी का भविष्य उसका शिष्टाचार बनाता है ।

कोयल सबको प्यारी क्यों ?

एक लड़की ने पूछा- ''पिताजी ! कौवा और कोयल दोनों काले हैं, पर लोग कौवे को मारते और कोयल को प्यार करते हैं, यह क्यों ?'' बालिका पर एक सकरुण दृष्टि डालकर पिता ने उत्तर दिया- ''कोयल सबको प्यार करती है, इसलिए मीठा बोलती है । वाणी और भावनाओं की मधुरता के कारण ही वह सर्वप्रिय बन गई । कौवा तो अपने स्वार्थ और धूर्तता के कारण ही उस आदर से वंचित रह जाता है ।''

पुरुषार्थ से टामसन, लार्ड बना

सन् १८९४ में टोरेंटो (कनाडा) के नाई परिवार में एक लड़का जन्मा । नाम रखा गया टामसन । वह जैसे-तैसे कुछ पढ़ा और कोई चारा भी न था । लड़के ने गरीबी से हार नहीं मानी । योग्यता बढ़ाने, ऊँचा हौसला रखने और नया रास्ता खोजने में उसने अपनी सारी प्रतिभा लगा दी । एकाग्रता, तत्परता और जिम्मेदारी यह तीन उसके ऐसे आधार थे, जिन्हें उसने आदि से अंत तक कभी भी छोड़ा नहीं । अपनी विशेषताओं के कारण वह हर कहीं अपने लिए जगह बनाता और प्रोत्साहन पाता गया । उसे फेरी वाले, क्लर्क, मुनीम, माली जैसे कितने ही छोटे-बड़े काम करने पड़े । उसकी तत्परता और सज्जनता एक के बाद दूसरे अनदेखे काम बताती और सफल बनाती चली गई । मितव्ययिता और नियमितता के दो सद्गुणों के सहारे उसने लंबी जीवन यात्रा संपन्न की । जीवन के अंतिम चरण में पहुँचते-पहुँचते वह लार्ड टामसन के नाम से जाना जाता था । वह १२८ समाचार पत्रों का स्वामी था, १५ रेडियो और टेलीविजन स्टेशन चलाता था और वायुयान चलाने वाली कंपनी का मालिक था । अरबपतियों में उनकी गणना होती थी । अपनी आत्मकथा में उसने लिखा है कि मेरी प्रगति में न भाग्य का खेल है और न किसी के अनुग्रह का, उपलब्ध सफलताओं का सारा रहस्य एक ही बात में भरा हुआ है कि मैंने प्रतिभा-तत्परता निखारने में भरपूर प्रयास किया और किसी भी स्थिति में संतुलन नहीं खोया ।

वातावृतौ च योग्यायां वसितुं समयं च ते ।
लभन्तां तान् सुयोग्यांश्च नागरान् संस्कृतानपि ॥ ७३॥
निर्मातुं यत्नशीलैश्च भाव्यमेवाऽभिभावकैः ।
उन्नतस्तरव्यक्तित्वे भविष्यत्संश्रितं शिशोः ॥ ७४॥
सत्प्रयोजनभाजस्ते सेवाभाजो भवन्त्वपि ।
अवसरा ईदृशा देयास्तेभ्यः प्रोत्साहनं तथा ॥ ७५॥

भावार्थ-यह भी आवश्यक है कि उन्हें (बच्चों को) उपयुक्त वातावरण में रहने का अवसर मिले । सुयोग्य-सुसंस्कारी नागरिक बनाने के लिए भी अभिभावक प्रयत्नशील रहें, क्योंकि व्यक्तित्व के समुन्नत स्तर पर ही बच्चों का उज्ज्वल भविष्य निर्भर रहता है । उन्हें सेवाभावी सत्प्रयोजनों में भाग लेते रहने का अवसर भी देना चाहिए और प्रोत्साहन भी ॥ ७३-७५ ॥

व्याख्या-बालकों को सुसंस्कारी बनाना जितना अनिवार्य है, उतना ही यह भी कि उन्हें सेवा-धर्म के माध्यम से इन गुणों को व्यवहार में उतारने का अभ्यास करने का अवसर भी मिले । परिवार, विद्यालय, मित्र, परिकर एवं समस्त समाज एक कार्यशाला है, जिसमें सत्प्रवृत्तियों का अभ्यास किया जा सकता है । कोरे सिद्धांत तो चिंतन तक ही सीमित होकर रह जाते हैं । उनका व्यवहार में उतरना अत्यंत अनिवार्य है । इस दिशा में सभी अग्रजों द्वारा समुचित प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सूझ-बूझ ने जगाई दान-वृत्ति

वाणिज्य संस्थान में अर्थशास्त्र का शिक्षण चल रहा था । प्राध्यापक द्रव्य, बैंक तथा साख पत्रों की जानकारी दे रहे थे । तब तक जान डी० राकफेलर वहाँ पहुँच गए । प्राध्यापक ने एक छात्र से पूछा- "अच्छा बताइए 'प्रामिसरी नोट' कैसे लिखा जाता है ?" छात्र ने मेज पर से चाक उठाई और श्यामपट्ट पर लिखने लगा- "मैं वाणिज्य संस्थान को दस हजार डालर देने का वायदा करता हूँ । हस्ताक्षर-जान डी० राकफेलर" । छात्र के बुद्धि-कौशल से रोकफेलर इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने उस संस्थान को तत्काल अनुदान स्वरूप दस हजार डालर का एक चैक काट दिया ।

बालक की सूझबूझ ने एक धनवान की सत्प्रवृत्ति को जगाया ही नहीं क्रियान्वित भी कराया ।

मुमुक्षु का चिंतन

एक धार्मिक मुमुक्षु ने अपनी सारी धन-दौलत लोकोपयोगी कार्यों में लगाकर संयम का जीवन व्यतीत करना शुरू कर दिया । अब तो उनके सत्कार्यों की सर्वत्र चर्चा होने लगी । जनता के कुछ प्रतिनिधियों ने उस मुमुक्षु के पास उपस्थित होकर निवेदन किया- "आपका त्याग प्रशंसनीय है । आपकी सेवाओं से समाज ऋणी है, हम सब सार्वजनिक रूप से आपका अभिनंदन कर दानवीर तथा मानव-रत्न के अलंकरणों से विभूषित करना चाहते हैं । कृपया हम सबकी इस प्रार्थना को स्वीकार कीजिए ।" मुमुक्षु ने मुस्कराते हुए कहा- "मैंने कोई त्याग नहीं किया है, वरन् लाभ लिया है । बैंक में रुपए जमा करना त्याग नहीं, वरन् ब्याज का लाभ है । ग्राहक की वस्तु देकर दुकानदार किसी प्रकार के त्याग का परिचय नहीं देता, वह तो बदले में उसकी कीमत लेकर लाभ कमाता है । समुद्र के किनारे खड़े हुए व्यक्ति को जब मोती दिखाई दे, तो उन्हें समेट कर कौन झोली न भरना चाहेगा ? इस समय यदि उसकी झोली में शंख और सीपियाँ होंगी, तो उन्हें खाली कर मूल्यवान वस्तुएँ भरना क्या त्याग की वृत्ति का परिचायक है ? उसी प्रकार क्रोध, लोभ, मोह आदि को छोड़कर अपने स्वभाव में अहिंसा, परोपकार और क्षमता जैसे सद्गुणों को स्थान देना, त्याग नहीं, वरन् एक प्रकार का लाभ है । मैंने तो कोई त्याग नहीं किया है, वासनाओं से छुटकारा पाकर त्याग का लाभ ही प्राप्त किया है ।" इतना सुनकर जनता के प्रतिनिधियों को और कुछ कहने का साहस नहीं हुआ और नतमस्तक होकर चले गए ।

यही वे लक्षण हैं, जो व्यक्ति को देवमानव-ऋषि पद से सुशोभित करते हैं । ऐसों के पद चिह्नों पर चलकर ही अन्य व्यक्ति श्रेष्ठता को प्राप्त होते हैं ।

शिक्षा हृदय के कपाट खोलने के लिए

महात्मा हंसराज अपने विद्यार्थी जीवन को पूर्ण करके अच्छे नंबरों से उत्तीर्ण हुए, तो उनके सामने कई अच्छी नौकरियों के प्रस्ताव थे । उनका परिवार किसी ऊँचे पद पर अपने बुद्धिमान लड़के को प्रतिष्ठित देखना चाहता था । हंसराज ने स्पष्ट कह दिया कि उनने जो विद्या पढ़ी है, वह लोगों के हृदय कपाट खोलने के लिए पढ़ी है, धन कमाने के लिए नहीं । उसी दिन से हंसराज जी को महात्मा कहा जाने लगा और उनने पंजाब भर में दौरे करके डी०ए०वी० स्कूलों की स्थापना की । हरिद्वार के ज्वालापुर के ऋषिकुल ब्रह्मचर्याश्रम की स्थापना उन्हीं के द्वारा हुई, जो आज तक सैकड़ों धर्म प्रचारक निकाल सका है ।

सबसे बड़ा काम

स्वराज्य आंदोलन के दिनों की बात है । राजकोट में काठियावाड़ राज्य प्रजा परिषद् का अधिवेशन हो रहा था । बापू अन्य नेताओं के साथ मंच पर बैठे थे । तभी उनकी दृष्टि दूरी पर बैठे एक वृद्ध पर पड़ी । वे गांधी जी को कुछ जाने-पहचाने से लगे । स्मरण शक्ति पर जरा जोर देने पर उन्हें ज्ञात हुआ कि ये तो मेरे बचपन के अध्यापक हैं । बापू शीघ्र ही मंच से उतर कर उनके पास गए और प्रणाम करके उनके चरणों के समीप बैठ गए । गुरुजी से उनने परिवार की कुशल क्षेम पूछी । जब काफी समय हो गया, तो गुरुजी ने बापू से कहा- "अब आप मंच पर पधारिए । नेतागण आपकी प्रतीक्षा कर रहे होंगे ।" बापू बोले- "नहीं, नहीं मैं यहीं पर ठीक हूँ । अब मैं मंच पर नहीं जाना चाहता । यहीं बैठकर सारा कार्य देखूँगा । आप चिंता न कीजिए ।" सभा समाप्त होने पर वे चलने लगे, तो अध्यापक ने गद्गद् होकर आशीर्वाद दिया- "जो व्यक्ति तुम जैसा अहंकार रहित हो, महान कहलाने का अधिकारी वही हो सकता है ।"

मोहनदास करमचंद गांधी इन्हीं गुणों के कारण बापू, महात्मा, युग पुरुष कहलाए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उपवन नहीं, समाज कार्य क्षेत्र

सुभाषचंद्र बोस बचपन में घर छोड़कर हिमालय चले गए । बहुत दिन कंदराओं में और साधु-बाबाओं के पास भटकते रहे । इससे उन्हें तनिक भी संतोष न मिला । लौटकर घर वापस आए, तो उनने अपना अभिमत व्यक्त किया कि अब मैं स्वयं ही हिमालय बनूँगा । समाज को अपना कार्य क्षेत्र बनाऊँगा । उनने ऐसा जीवन जिया, जिसकी तुलना हिमालय से की जा सके ।

संख्यावृद्धौरता ये तु सन्ततेरुचितं नहि ।
दायित्वं च विकासस्य तेषां ज्ञातुं क्षमा नराः ॥ ७६ ॥
श्रुत्वा तेऽद्यतनं सारगर्भितं मङ्गलोदयम् ।
परामर्शं गता लज्जां पश्यन्तो दोषमात्मनः ॥ ७७ ॥
मर्यादितां महत्तां तेऽविदुः प्रजनस्य ते ।
बालकान् प्रोन्नतान् कर्तुं निरचिन्वंश्च यत्नतः ॥ ७८ ॥
वयस्केषु च बालेषु श्रुत्वा प्रवचनं त्विदम् ।
शुभमद्यतनं तत्र शुभाशासोदगान्न वा ॥ ७९ ॥
महिलाश्चाऽपि बालानामुज्ज्वलस्य भविष्यतः ।
सुयोगमिव चाऽऽयातमन्वभूवन् समा अपि ॥ ८० ॥
भाराधिक्याश्च जीर्णत्वविपदो रक्षणादपि ।
सन्तोषः सुमहांस्तासामभूदानन्दितात्मनाम् ॥ ८१ ॥
धौम्यप्रवचनं ताश्च वरदानमिव स्त्रियः ।
दैवमेवाऽन्वभूवंश्च दिव्यं प्रज्ञायुगोद्भवम् ॥ ८२ ॥
समापनस्य काले च विसर्जनरताः समे ।
प्रसन्ना बहुसन्तुष्टा निधिं प्राप्येव चाक्षयम् ॥ ८३ ॥

भावार्थ–बालकों की संख्या बढ़ाने में उत्साही किंतु उनके समुचित विकास का उत्तरदायित्व न समझने वाले आज के सारगर्भित–मंगलमय परामर्श को सुनकर लज्जित हो रहे थे और अपनी भूल मान रहे थे । उनने मर्यादित प्रजनन की महत्ता समझी एवं घर के बालकों को समुन्नत बनाने में अधिक ध्यान देने और प्रयास करने का निश्चय किया । आज के प्रवचन से समझदार बच्चों में आशा की किरणें जगीं । महिलाओं ने भी अपने बालकों का भविष्य उज्ज्वल बनाने के सुयोग का आगमन अनुभव किया । अधिक भार लदने से जीर्ण–शीर्ण होने की विपत्ति से बचने का भी उन्हें बड़ा सुख एवं संतोष मिल रहा था । उन्हें धौम्य का प्रवचन देव–वरदान जैसा लगा । इसे उन्होंने प्रज्ञायुग की दिव्य देन समझा । आज के समापन समय पर विसर्जन कृत्य करते हुए विदा लेते हुए सभी लोग और भी अधिक प्रसन्न–संतुष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे, मानो कोई अक्षयनिधि हाथ लग गई हो ॥ ७६–८३ ॥

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः, युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्री धौम्य ऋषि प्रतिपादिते ''शिशुनिर्माणमि'', ति
प्रकरणो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

।। अथ पञ्चमोऽध्यायः ।।

卐 वृद्धजन-माहात्म्य प्रकरणम् 卐

धर्मकृत्येषु वृद्धानां रुचिः स्वाभाविकी मता ।
कुम्भपर्वसमेष्वेते समायान्त्यधिका अपि ॥ १॥
प्रयान्त्यपि च सत्रेषु ते विचार्यातिखिन्नताम् ।
अधिगच्छन्ति किं कार्यमस्माभिरिहि संगतैः ॥ २॥
जराजीर्णतया नैव केचनाऽपि तु हस्तगाः ।
अधिकाराः कुटुम्बस्य वयस्काधिगतास्तु ते ॥ ३॥
उपेक्षितातिथेस्तत्र स्थितिं प्राप्ता इवाद्य तु ।
निर्वाहसुविधामात्रं कथञ्चित्प्राप्नुवन्त्विह ॥ ४॥
यापयन्ति च शून्यास्ते स्थिताः कालं निरन्तरम् ।
इति स्थितौ गृहस्थस्य भूमिकां कां वहन्तु ते ॥ ५॥
नेदं तेषां मतौ सम्यक् स्थिरतां श्रयति स्म तु ।
अनुभवन्ति समे यत्र निराशां ते निरन्तरम् ॥ ६॥

भावार्थ–धर्मकृत्यों में वृद्धजनों की स्वाभाविक अभिरुचि रहती है । वे कुंभ पर्व जैसे आयोजन में परलोक साधना की दृष्टि से पहुँचते भी अधिक संख्या में हैं । वे इन सत्रों में पहुँचते तो थे, पर यह सोचकर खिन्न होते थे कि वे करें क्या ? जराजीर्ण होने के कारण उनके हाथ में घर–परिवार के कुछ अधिकार भी नहीं रहे, उसे वयस्कों ने सँभाल लिए । वे तो एक उपेक्षित अतिथि के रूप में उस परिकर में रहकर किसी प्रकार निर्वाह की सुविधा भर प्राप्त करते हैं । बैठे–ठाले समय गुजारते हैं । ऐसी दशा में वे गृहस्थ धर्म पालन करने की दृष्टि से क्या भूमिका संपन्न कर सकते हैं, यह उनकी समझ में नहीं आ रहा था और निराशा जैसी अनुभव कर रहे थे ॥ १–६॥

व्याख्या–वार्धक्य, जीवन की एक ऐसी स्थिति है, जब व्यक्ति सारा जीवन परिश्रम करने के बाद, सहसा अपने आप को एकाकी, दूसरों पर अवलंबित एवं शरीर बल से क्षीण होने के कारण असमर्थ पाने लगता है । वस्तुस्थिति ऐसी है नहीं । यह तो जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पड़ाव है । इस आयु में धार्मिक अभिरुचि होना स्वाभाविक है । व्यक्ति अपना परलोक सुधारने की बात सोचता है । विभिन्न प्रकार के धार्मिक कर्मकांडों में स्वयं को व्यस्त रखने का प्रयास करता है । किन्तु प्रगतिशील दिशा न मिलने के कारण ऐसे प्रयास बाह्योपचार तक सीमित रह जाते हैं । एक सही मार्ग मिलने की आशा उनमें नए प्राण फूँक देती है । गृहस्थ जीवन संबंधी प्रस्तुत प्रकरण में इन वृद्धजनों का अपनी भूमिका तलाशना एवं उपेक्षा की स्थिति से निकल कर सम्मानास्पद कार्य कर सकने की संभावनाओं के प्रति जिज्ञासा का होना स्वाभाविक ही है ।

हृदगतज्ञः समेषां स महर्षिर्धौम्य उद्गतान् ।
वर्गस्यास्य जनानां तु मनोभावान् समध्यगात् ॥ ७॥
निश्चिचाय ततस्तेषां कर्तुं स मार्गदर्शनम् ।

धौम्य उवाच –

गृहस्थे वृद्धव्यक्तीनामपि स्थानं महत्वगम् ॥ ८॥
वर्तते सञ्चितैस्तेऽपि स्वीयैरनुभवैरलम् ।
लाभं बहुभ्यो दातुं तु शक्ता अल्पबला अपि ॥ ९॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

परिष्कृताऽथ पक्वा च स्थितिस्तेषां तु मानसी ।
अपेक्षया परेषां हि गृहस्थानां नृणामिह ॥ १०॥
लाभमस्य कुटुम्बं तत्प्राप्नुयान्नैव केवलम् ।
क्षेत्रं सम्पूर्णमेवाऽपि संसारश्चाप्नुयात्समः ॥ ११॥
वाञ्छेयुर्यदि ते तर्हि नवेन विधिना नवम् ।
जीवनं प्रासुमर्हन्ति तथा कार्यक्रमं नवम् ॥ १२॥
स्वीकृत्यान्य नवे क्षेत्रे प्रवेष्टुं शक्नुवन्त्यपि ।
इत्थं च समयस्तेषां सञ्चितोऽनुभवस्तथा ॥ १३॥
यूनामपेक्षया नूनमधिकं सेत्स्यतो ध्रुवम् ।
लोकोपयोगिनौ भद्रा अत्र नास्त्येव संशयः ॥ १४॥
आत्मलाभदृष्ट्या च समयोऽयं तु विद्यते ।
भाग्योदयस्य कर्तेव सुयोग्यो योग उच्यताम् ॥ १५॥

भावार्थ–सबके मन की बात जानने वाले महर्षि धौम्य ने इस वर्ग के लोगों के मनोभाव को जाना और उनका मार्गदर्शन करने का निश्चय किया ।

महर्षि धौम्य बोले–गृहस्थ में वयोवृद्धों का भी महत्वपूर्ण स्थान है । वे अपने संचित अनुभवों से बहुतों को लाभ दे सकते हैं । शारीरिक क्षमता घट जाने पर भी, उनकी मानसिक स्थिति अपेक्षाकृत अधिक परिष्कृत–परिपक्व होती है । इसका लाभ उस परिवार को ही नहीं, समस्त क्षेत्र एवं संसार को मिलना चाहिए । वे चाहें, तो नए सिरे से नया जीवन जी सकते हैं, नया कार्यक्रम अपना सकते हैं, नए क्षेत्र में प्रवेश कर सकते हैं । हे भद्रजनो ! इस प्रकार उनका बचने वाला समय और संचित अनुभव तरुणों की अपेक्षा और भी अधिक लोकोपयोगी सिद्ध हो सकता है । आत्मलाभ की दृष्टि से वह समय उनके लिए भाग्योदय जैसा सुयोग है–ऐसा कहा जा सकता है ॥ ७–१५॥

व्याख्या–कथा प्रसंग में उपस्थित वृद्धवर्ग की मनःस्थिति के अनुरूप ही प्रतिपादन आरंभ करते हुए, महर्षि धौम्य गृहस्थ जीवन में उनकी गरिमा एवं महत्ता को जन सामान्य को समझाने हेतु आतुर प्रतीत होते हैं । वृद्धावस्था में कृशकाय-असमर्थ होने के कारण परावलंबी एवं निरुपयोगी होने की हीन भावना को मन से निकाल बाहर फेंकने एवं क्रियाशील बने रहने, चलते रहने और आत्म कल्याण की विकास-यात्रा में आगे बढ़ते रहने के लिए ऋषिवर उन्हें प्रोत्साहित करते तथा उनकी प्रसुप्त क्षमताओं का उन्हें बोध कराते हैं । वृद्धावस्था आ घेरने का अर्थ यह नहीं होता कि मनुष्य निरुत्साहित होकर हाथ पर हाथ रखे मृत्यु का इंतजार करे । जीवन एक महान यात्रा है, जिसकी सुघड़ता सदैव चलते रहने में है । जब तक हम चलते रहते हैं, तब तक हमारी शक्तियों का उपयोग होता रहता है । जहाँ रुके, वहीं मौत है, वहीं जड़ता है । चलना, उन्नत होना और आगे बढ़ना जीवंत होने का प्रतीक है । वेद भगवान कहते हैं –

"आरोहणमाक्रमणं जीवतो जीवतोऽनम् ।"

अर्थात, जीवन के लिए सबसे आवश्यक बात यह है कि उसे रुकना नहीं चाहिए । उन्नत होना और आगे बढ़ना जीवन का स्वाभाविक धर्म है ।

चलते रहना, क्रियाशील बने रहना, सृष्टि का सनातन नियम है । समस्त प्राणिवर्ग एवं प्रकृति के घटक में यह स्पंदन मुखरित हो रहा है । नदियाँ अपने अल्प और सीमित स्वरूप से उस अनंत विराट् सागर की ओर दौड़ी जा रही हैं । ऊँचे-ऊँचे पहाड़ अपनी उतुंग चोटियों को फैलाए उस सर्वव्यापी सत्ता की ओर देख रहे हैं, मानो उन्हें अपना स्वरूप अल्प-सीमित जान पड़ रहा है । जान पड़ता है वे भी उतने ही विराट्, अनंत, महान बनने की चिर प्रतीक्षा में खड़े हैं । बीज अपने क्षुद्र और साधारण स्वरूप से संतुष्ट नहीं होता और वह अपने आवरण को तोड़, फूट निकलता है, महत् की ओर उसकी यात्रा जारी रहती है और वह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विशाल वृक्ष बन जाता है । फिर भी उसकी विपुल, महत् बनने की साध रुकती नहीं और वह सुंदर फूलों से खिल उठता है, मधुर फलों में परिणत होता हुआ, अपनी सत्ता को असंख्यों बीजों में परिणत कर देता है । उधर देखिए, उस पक्षी शावक को, उसे नीड़ या संकीर्ण आवरण तुच्छ जान पड़ता है । वह अपने पंखों से फुरफुरी भर रहा है । नीड़ के दरवाजे से अखिल विश्व भुवन की ओर देख रहा है, जिसकी अनंत गोद में वह किलोल करना चाहता है और देखो, निकल पड़ा, वह सीमित अल्प आवरण को त्यागकर अनंत महत् की ओर ।

अल्प से महत् की ओर अग्रसर होने की यह क्रिया सर्वत्र हो रही है । फिर चेतन और ईश्वर का वरिष्ठ राजकुमार कहलाने वाला मनुष्य ही बार्धक्यता को जीवन यात्रा में बाधक मानकर अपनी प्रगति यात्रा क्यों बंद कर दे ? नहीं, उसे जीवन को एक संग्राम मानकर मोर्चे पर खड़े एक कर्तव्यनिष्ठ और कर्मठ सिपाही की भाँति संघर्ष करना और बढ़ते ही जाना है । इसीलिए, ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है– **"नाऽनाश्रान्ताय श्रीरस्ति.....पापो नृषद्वरो जन इन्द्र इद्चरतः सखा । चरैवेति चरैवेति ।"**

अर्थात, जो चलता है उसकी जंघाएँ पुष्ट बनी रहती हैं । फल प्राप्ति तक उद्योग करने वाला व्यक्ति पुरुषार्थी होता है । प्रयत्नशील पुरुष के पाप-ताप, भव-बंधन मार्ग में ही नष्ट हो जाते हैं । इसलिए चलते रहो, चलते रहो ।

वृद्धावस्था में व्यक्ति के पास जीवन भर के अनुभवों की थाती जो अपने पास होती है । अनेक प्रसंगों के माध्यम से उन्होंने जीवन रूपी प्रयोगशाला में इतना कुछ सीखा-समझा होता है, कि उस मार्गदर्शन से वे सारे समुदाय को लाभ दे सकते हैं । एक बार सक्रिय उपार्जन प्रधान जीवन समाप्त होने पर आयुष्य के इस मोड़ पर वे अपने जीवन को एक नई दिशा देकर, लोक सेवी का व्रत अपनाकर सारे परिकर को, समाज को, प्रभावित कर सकने की क्षमता रखते हैं ।

वयोवृद्ध महापुरुष, जो सतत क्रिया-शील रहे

इस संदर्भ में पश्चिम एवं भारत के कुछ महापुरुष उल्लेखनीय हैं, जिनकी रचनात्मक शक्ति का ह्रास उनकी ढलती उम्र के कारण कतई नहीं हुआ था । जिन्होंने अपने बुढ़ापे में बड़े महत्वपूर्ण एवं उपयोगी काम करके मानवता की अभूतपूर्व सेवा की । इनमें कुछ के नाम हैं – **महान दार्शनिक संत सुकरात, प्लेटो, पाइथागोरस, होमर, आगस्टस, खगोल शास्त्री गेलीलियो, प्रसिद्ध कवि हेनरी वर्ड्सवर्थ, वैज्ञानिक थामस अल्वा एडीसन, लेखक निकोलस, कोपरनिकस, विख्यात वैज्ञानिक न्यूटन, सिसरो, अलबर्ट आइन्स्टीन, टेनीसन, बेंजामिन फ्रैंकलिन, महात्मा टॉलस्टाय, महात्मा गांधी तथा जवाहर लाल नेहरू** । महात्मा सुकरात सत्तर वर्ष की उम्र में अपने अत्यंत महत्वपूर्ण तत्वदर्शन की विशद व्याख्या करने में जुटे हुए थे । वे अपनी अस्सी वर्ष की आयु तक बराबर कठोर परिश्रम करते रहे । इक्यासी वर्ष की अवस्था में हाथ में कलम पकड़े हुए उन्होंने मृत्यु का आलिंगन किया ।

सिसरो ने अपनी मृत्यु के एक वर्ष पूर्व तिरेसठ वर्ष की आयु में अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक 'ट्रीटीज ऑन ओल्ड एज' की रचना की । कीरो ने अस्सी साल की उम्र में ग्रीक भाषा सीखी । कवि गोथे ने अपने जीवन की सर्वोत्तम उपलब्धि के रूप में अपनी महान रचना फास्ट के लिखने का कार्य तिरासी वर्ष की उम्र में मृत्यु के कुछ समय पहले ही पूरा किया था । अलबर्ट आइंस्टीन की तरह ही जो कि अंतिम दिन तक बराबर काम करते रहे, सेमुअल मोर्स ने टेलीग्राफ आविष्कार की अपनी प्रसिद्धि के बाद भी अपने को व्यस्त रखने के लिए अनेक महत्वपूर्ण वैज्ञानिक अनुसंधान कार्यों में लगाए रखा । बर्नार्ड शा अपनी अंतिम बीमारी तक लेखक के रूप में बहुत सक्रिय बने रहे । महात्मा टॉलस्टाय अस्सी वर्ष की अवस्था के बाद भी इतनी चुस्ती, गहराई और प्रभावशील ढंग से लिखते रहे कि उसकी बराबरी आधुनिक यूरोप के किसी लेखक द्वारा नहीं हो सकती । ह्विटर ह्यगो तिरासी वर्ष की अवस्था में अपनी मृत्यु तक बराबर लिखते रहे । वृद्धावस्था उनकी अद्भुत शक्ति तथा ताजगी में कोई फर्क नहीं कर सकी ।

टेनीसन ने अस्सी वर्ष की परिपक्व अवस्था में अपनी सुंदर रचना 'क्रासिंग दी वार' दुनियां को प्रदान की । राबर्ट ब्राउनिंग अपने जीवन के संध्याकाल में बहुत सक्रिय बने रहे । उन्होंने सत्तर साल की उम्र में मृत्यु के कुछ पहले ही दो सर्व सुंदर कविताएँ 'रेवेरी' और 'एपीलाग टु आसलेंडो' लिखीं । एच० जी० वेल्स ने सत्तर वर्ष की अपनी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वर्षगांठ के उपरांत भी पूरे चुस्त और कर्मठ रहते हुए एक दर्जन से ऊपर पुस्तकों की रचना की ।

राजनीति के क्षेत्र में विन्सटन चर्चिल, बेंजामिन फ्रेंकलिन, डिजराइली, ग्लेडस्टोन आदि ऐतिहासिक पुरुष अपनी वृद्धावस्था की चुनौतियों के बावजूद बहुत सक्रिय बने हुए अपने देश की अमूल्य सेवा में अनवरत रूप से लगे रहे । अभी हाल के इतिहास में महात्मा गांधी और जवाहर लाल नेहरू ऐसे महान पुरुष भारतवर्ष में हो गए हैं, जो अपनी वृद्धावस्था में, अंतिम समय तक देश और पीड़ित मानवता की अटूट सेवा पूरी चुस्ती एवं शक्ति के साथ बराबर करते रहे । ढलती उम्र की विशिष्ट उपलब्धियों एवं रचनात्मक कार्यों का श्रेय केवल पुरुषों तक ही सीमित नहीं है । महिलाओं का भी इसमें अपना पूरा हक है । महारानी विक्टोरिया ने अपनी बहुत बड़ी जिम्मेदारियों को बयासी वर्ष की अवस्था तक कुशलता के साथ निभाया । मेरी समरन्हिले ने बयासी साल की आयु में परमाणु विज्ञान तथा अणुवीक्षण यंत्र संबंधी अपनी उपयोगी एवं बहुमूल्य रचनाएँ प्रकाशित कीं । मिसेज लूक्रोरिया मार सत्तासी वर्ष की उम्र तक महिलाओं को ऊपर उठाने तथा विश्व शांति के लिए अथक रूप से निस्वार्थ सेवा कार्यों में जुटी रहीं ।

भारतवर्ष में श्रीमती सरोजिनी नायडू एवं मिसेज एनी बेसेंट ने अपनी वृद्धावस्था तक देश तथा मानवता की अमूल्य सेवाएँ कीं, जो कि चिरस्मरणीय रहेंगी ।

इस तरह के सैकड़ों अन्य उदाहरण दुनियां के इतिहास से दिए जा सकते हैं, जिनसे यह विचार बिल्कुल ही खोखला एवं तथ्यहीन साबित होता है कि उनसठ-साठ वर्ष की आयु तक में जीवन के काम समाप्त हो जाते हैं और उसके बाद के समय में व्यक्ति अपने तथा समाज के हित में कोई उपयोगी एवं महत्वपूर्ण काम करने के लिए सक्षम नहीं होता । पेरिस की ८० वर्षीय महिला सान्द्रेवच्की सारवोन विश्वविद्यालय की विशिष्ट छात्रा थीं । उन्होंने ६० वर्ष पूर्व छोड़ी हुई अपनी कक्षा की पढ़ाई फिर आरंभ की । इस महिला के तीन पुत्र और सात नाती, नातिनी और एक परनाती था । इस प्रकार वह परदादी बन गई थीं, तो भी उसने जर्मन और अंग्रेजी भाषा पढ़ने के लिए उत्साह प्रदर्शित किया और विश्वविद्यालय में भरती हो गईं । प्राचार्य को उसने भरती का कारण बताते हुए कहा- ''लंबे जीवन के अनुभवों के आधार पर मैं इस नतीजे पर पहुँची हूँ कि आदमी की मशीन लगातार चलते रहने पर ही काम करने लायक रह सकती है । उपयोगी काम में लगे रहने पर ही सामान्य स्वास्थ्य को स्थिर रखा जा सकता है । अध्ययन से मेरा मस्तिष्क और शरीर दोनों ही निरोग एवं उत्साह की स्थिति में रह सकेंगे । बड़ी उम्र हो जाने पर भी मनुष्य के अरमान यदि मरे न हों, तो वह बहुत कुछ कर गुजर सकता है ।'' डारलिंगटन आइजक ब्रुक ७४ साल की उम्र में फौज में भरती हुआ और कई लड़ाइयाँ लड़ने पर भी सकुशल बचा रहा । अंततः वह ११२ वर्ष की उम्र में मरा ।

हर पल सीखने को उद्यत

कलकत्ता से पूना जाते हुए रेल में महादेव गोविंद रानाडे ने बँगला अखबार खरीदा । इस पर उनकी पत्नी ने आश्चर्य प्रकट करते हुए- ''आप तो बँगला जानते ही नहीं, फिर यह अखबार क्यों खरीदा ?'' रानाडे ने कहा- ''दो दिन के सफर में उसे असानी से सीख लिया जाएगा ।'' पूरे मनोयोगपूर्वक उन्होंने बँगला लिपि और उसके शब्द गठन पर ध्यान दिया और पूना पहुँच कर उनने अपनी परीक्षा देते हुए पत्नी को पूरा अखबार पढ़कर सुना दिया । ऐसी थी इस ६० वर्षीय युवा की मनोयोग साधना । आयु से क्या होता है, मुख्य तो है सीखने-नया जानने की जिज्ञासा आयु के अंतिम क्षण तक ।

गरजने से नहीं, तड़कने से

व्यक्ति अपने अनुभवों से सीखता है व दूसरों के लिए दिशा छोड़ जाता है । वर्षा में भागते हुए एक आदमी की मृत्यु हो गई, गाँव के लोगों ने अनुमान लगाया कि वह बादल के गरजने की आवाज सुनकर मरा है । विद्वान कार्लाइल को बचपन की यह घटना बड़े होने पर भी याद रही । तब उनने जाना कि लोग गरजने की आवाज सुनकर नहीं, वरन् बिजली गिरने से मरते हैं । इस दर्शनिक ने लिखा है कि समझदारी आते ही मैंने गरजना बंद कर दिया और चमकने का रास्ता खोजने लगा, क्योंकि कारगर गरजना नहीं, तड़कना होता है ।

वृद्धों में प्रसन्नता भरने वाले- लिटिल ब्रदर्स

यूरोप के वृद्धों का जीवन भारत से भी अधिक कष्टप्रद और नीरस बीतता है । अकेले फ्रांस में इन दिनों एक लाख से अधिक लोग थे, जिनके लिए मृत्यु ही श्रेयस्कर समझी जाती थी । इस उपेक्षित समुदाय में उत्साह भरने के लिए पेरिस में एक संस्था का गठन किया गया, नाम था 'लिटिल ब्रदर्स' । एक संपन्न भूमिपति ने इसके लिए अपनी विशाल भूमि भी दे दी । 'लिटिल

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्रदर्स' में दस से अधिक आयु के बच्चे भरती किए जाते थे, जो सप्ताह में एक दिन इन बुड्ढों के साथ रहते, खेलते, उनके अनुभव सुनते, उनके नीरस जीवन में सरसता भरते, उनके काम-काज में हाथ बँटाते और उनके अनुभवों से लाभ उठाते ।

वृद्धों की निरर्थकता को सार्थकता में, नीरसता को प्रसन्नता में बदलने के लिए लिटिल ब्रदर्स ने अपने सदस्यों को भी सेवा का लाभ दिया और वृद्धों की खीज को प्रसन्नता में बदला ।

परिस्थितियों से लड़ने वाले वयोवृद्ध – सात वलेकर

दक्षिण (हैदराबाद) में जन्मे पंडित सातवलेकर ड्राइंग मास्टर से रिटायर हुए । यहाँ से नया जीवन आरंभ किया । वे संस्कृत पढ़ने और वेदभाष्य करने में जुट गए । प्रांतीय कांग्रेस के अध्यक्ष रहकर स्वतंत्रता आंदोलन भी चलाते रहे । निजाम ने जब उन्हें अपने यहाँ से वेदों का भाष्य प्रकाशित न करने दिया, तो उनने सूरत जिले के किला पारडी नामक स्थान में रहकर वह कार्य आरंभ किया । हिंदी, मराठी और गुजराती में वैदिक धर्म पत्रिकाएं चलाईं । संस्कृत का सुबोध पाठ्यक्रम तैयार किया । भारत सरकार ने उन्हें पद्मभूषण उपाधि से विभूषित किया । वे १०२ वर्षों तक जिए । यह उनके संयमी और नियमित जीवन का प्रतिफल था । मरणोपरांत उनकी स्मृति में डाक टिकट भी चले ।

जटायु का साहस

रावण द्वारा सीताहरण किए जाने की घटना देखकर वयोवृद्ध जटायु से न रहा गया । उसने रावण को रोका और युद्ध किया । यद्यपि इस संघर्ष में वह मारा गया, पर उसका यह बलिदान असंख्यों के लिए अनुकरणीय उदाहरण बना, जो विजय की तुलना में कम महत्वपूर्ण नहीं था ।

वृद्ध का परामर्श काम आया

मात्र सामर्थ्य ही सब कुछ नहीं, अनुभव सबसे महत्वपूर्ण विभूति है । व्यावहारिक जीवन में, दैनंदिन प्रसंगों में तो अनुभव ही काम आते हैं । घटा जोरों से घिर रही थी । बादल गरजते और बिजली बेतरह कड़कती । जंगल के चरवाहे अपने जानवरों को एक घने पेड़ के नीचे इकट्ठे करके खड़े थे । उनमें से एक डरपोक लड़के ने कहा– "बादलों से भरा हुआ इतना पानी यहीं बरसा, तो हम सबको डुबो देगा । बिजली कड़क के अपने क्षेत्र में गिरी, तो हममें से बचने वाला कोई नहीं है ।" वह डर से काँपने लगा और बचाव का कोई साधन न देखकर रुँआसा हो आया । बड़ा चरवाहा समझदार था । उसने कहा– "जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं । बादल की सघनता को ही मत देखो । पछोंहा हवा चल रही है, इन्हें उड़ाकर कहीं से कहीं पहुँचा देगी । हम सब पहले की तरह अपने जानवर चराएंगे और कुशलपूर्वक घर पहुँचेंगे ।"

ताकत नहीं, सूझबूझ बड़ी है

एक घना जंगल था । उसमें कई शूकर परिवार थे । आक्रमणकारी सिंह एक ही था । वह जब चाहता, हमला करता और किसी भी मोटे या दुर्बल शूकर को चट कर जाता । झुंड के अन्य सदस्य घबड़ाकर, सिर पर पैर रख कर इधर-उधर भागते । एक दिन बूढ़े शूकर ने स्वजाति के सभी परिवारों को एकत्रित किया और कहा– "मरना है, तो बहादुरी से क्यों न मरें ? रहना है, तो मिल-जुल कर क्यों न रहें ?" बात सभी को अच्छी लगी और वे उसके कहने पर चलने को तैयार हो गए । दूसरे दिन तगड़े शूकरों का एक दल गठित किया गया और योजना बनी कि आक्रमण की प्रतीक्षा न करके शेर की माँद पर चलें और वहाँ उस पर हल्ला बोल दिया जाय । नई योजना, नई हिम्मत और नई आशा से तगड़े शूकरों के हौसले बढ़ गए । सो वे बहादुरी के साथ चले और माँद में सोए शेर पर बिजली की तरह टूट पड़े ।

शेर को ऐसी मुसीबत का सामना इससे पहले कभी भी नहीं करना पड़ा था । वह घबड़ा गया और जान बचाकर इतनी तेजी से भागा कि यह देख तक न सका कि हमला करने वाले कौन और कितने हैं ? भयाक्रांत शेर ने उस जंगल में भूतों का निवास सोचा और फिर कभी उधर न लौटने का निश्चय करते हुए दूरस्थ वन में अपना डेरा डाल दिया । शूकरों के परिवार निश्चिंततापूर्वक रहने और वन विहार का आनंद लेने लगे । उस क्षेत्र में रहने वाले शृगाल ने रात को अपने बच्चों को मनोरंजन करते हुए, शूकरों द्वारा सिंह पर किए गए आक्रमण की कथा सुनाई और कहा–"बड़ी ताकत नहीं, सूझबूझ है, जिसे अपनाकर शूकरों को श्रेय मिला । जिसके अभाव में सिंह को अपना राज्य अकारण ही छोड़ना पड़ा ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

डगमगाने से खड़ा होना अच्छा

एकाएक सक्रियता से निवृत्ति मिलने पर हड़बड़ाने की आवश्यकता नहीं । आगे का मार्ग धैर्यपूर्वक निकाला जा सकता है । एक थका व्यक्ति पहाड़ी के नीचे चुपचाप खड़ा था । भेड़ चराने वाले लड़के अनुमान लगाने लगे कि वह किसी मसहलत से खड़ा होगा । एक बोला– "उसका पालतू जानवर खो गया है, सो खोजने की नजर दौड़ा रहा है ।" दूसरा बोला– "साथी पीछे छूट गया है, सो इंतजार में है ।" तीसरे ने कहा– "इधर से ले चलने योग्य कोई सौगात ले जाने के फेर में है ।" असली वजह जानने के लिए तीनों उस खड़े व्यक्ति के पास पहुँचे । उसने दार्शनिकों जैसी मुद्रा में कहा– "जब चलने की शक्ति न रहे और बैठने योग्य स्थान न दीखे, तो डगमगाने-गड़बड़ाने की अपेक्षा यही अच्छा है कि किसी जगह शांत चित्त से उपाय सूझने तक चुपचाप खड़ा रहे ।"

सतत स्वाध्यायशील राल्ड शुज

फ्रांस के एक विद्या व्यसनी हैं – राल्ड शुज । उन्होंने नौकरी करते और गृहस्थ का पालन करते हुए भी २०० भाषाओं का अच्छा अभ्यास कर लिया । विभिन्न भाषाओं में उनने कितनी ही पुस्तकों का अनुवाद किया है । उन्हें हर समय अध्ययन में ही लगा देखा जाता है । नौकरी से रिटायर होने पर उनने कहा– "अब मुझे पूरा समय पढ़ने को मिलेगा । जीवन की अंतिम घड़ी तक उनने अधिक से अधिक भाषाएं पढ़ने का अपना विद्या-व्यसन जारी रखने का संकल्प लिया । इस प्रकार की लगन और सफलता के वे सारे संसार में अकेले ही व्यक्ति हैं ।

पक्वं फलं सदा शाखां विहायान्यस्य प्राणिनः ।
उपयोगाय संयाति तथैवाऽत्रापि चायुषि ॥ १६ ॥
युक्तं परिणते एव वानप्रस्थग्रहो नृणाम् ।
विद्यते शाश्वतीयं च भारतीय परम्परा ॥ १७ ॥
पुण्यार्जनस्य कालोऽयं परस्मै जन्मने तथा ।
ऋणं सामाजिकं दातुं ग्रहीतुं श्रेय आत्मनः ॥ १८ ॥
लोकमङ्गलजं नूनं महत्वानुगतो ध्रुवम् ।
धौम्यः सम्बोधयामास नरान् परिणतायुषः ॥ १९ ॥
निष्क्रियत्वात्तथा तान् स सक्रियत्वस्य चाशये ।
बोधयामास भूयश्च कथयामास यत्समे ॥ २० ॥
निराशां परिणतां कुर्युरुत्साहे कर्म यत्कृतम् ।
नाद्यावधि प्रकुर्वन्तु सोत्साहं विश्वमङ्गलम् ॥ २१ ॥
आधारेण च तेऽनेन मुक्ता भृत्योर्भयात् समे ।
जीवन्मुक्तं मुदं यान्तु दृष्टिकोणं च दिव्यकम् ॥ २२ ॥

भावार्थ–पका हुआ फल डाली छोड़कर अन्यों के काम आने के लिए चला जाता है । इसी प्रकार ढलती आयु में वानप्रस्थ धर्म अपनाना ही उचित है । यही भारतीय शाश्वत परंपरा भी है । यह समय अगले जनम के लिए पुण्यफल संचय करने, वर्तमान में समाज का ऋण चुकाने एवं लोकमंगल का श्रेय लेने की दृष्टि से अत्यंत महत्व का है । महर्षि धौम्य ने आज अधेड़ आयु वालों को विशेष रूप से संबोधित किया । उन्हें निरर्थकता में सार्थकता उत्पन्न करने का परामर्श दिया और कहा कि वे निराशा को उमंगों में बदलें और विश्वमंगल के लिए वह काम करें, जो अब तक कर नहीं पाए । इस आधार पर वे मृत्यु भय से छूटेंगे और स्वर्गीय दृष्टिकोण तथा जीवन्मुक्त स्तर का आनंद हाथों–हाथ उपलब्ध करेंगे ॥ १६–२२ ॥

व्याख्या–देव संस्कृति की विशेषता है, जीवनावधि का चार आश्रमों–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों में विभाजन । इनमें से दो व्यक्तिगत उत्कर्ष के लिए और दो सामाजिक विकास के लिए निर्धारित हैं । सारी उम्र मनुष्य अपने लिए, परिवार के लिए मरता-खपता है, उपार्जन-उपभोग में ही उसका अधिकांश समय निकल जाता है । समाज के जिन अवयव-घटकों के सहारे उसने यह सुविधा भरा जीवन

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जिया, उनके लिए भी उसके कुछ कर्तव्य हैं । ढलती आयु में वानप्रस्थ धारण किया जाय और घर परिवार को आवश्यक मार्गदर्शन सहयोग देते हुए अधिकांश समय समाज सेवा में लगाया जाय । यही प्रेरणा सद्गृहस्थों-वृद्धजनों को महर्षि धौम्य देते हैं ।

जीवन का आधा भाग-उत्तरार्द्ध विशुद्ध रूप से लोकमंगल में नियोजित रखे जाने की शास्त्रीय मर्यादा है । इस परंपरा के निर्वाह से अनेक प्रयोजन पूरे होते हैं । मोह-बंधन का परिवार वाला घेरा टूटता है एवं व्यक्ति विराट ब्रह्म का एक अंग बनकर लोकोपयोगी कार्यों में स्वयं को नियोजित करता है । इससे शेष बचा जीवन तो धन्य होता ही है, अगले जन्मों के लिए पुण्य की संपदा एकत्र हो जाती है । लोक सेवा में लगा व्यक्ति जीते जी मुक्ति का आनंद इसी जीवन में उठा लेता है । उसके हृदय में विस्तृत विराट के प्रति प्रेम, वाणी में माधुर्य, व्यवहार में सरलता, नारी मात्र में मातृत्व की भावना, कर्म में कला और सौंदर्य की अभिव्यक्ति, सभी के प्रति उदारता और सेवा भावना, गुरुजनों का सम्मान, स्वाध्याय-सत्संग-साधना में रुचि, शुचिता-श्रमशीलता जैसे सद्गुण अभ्यास द्वारा स्वभाव के अंग बन जाते हैं ।

वानप्रस्थ की शास्त्रोक्त परंपरा

मनुष्य को जीवन के उत्तरार्द्ध में घर का उत्तरदायित्व प्रसन्नचित्त से अपने योग्य उत्तराधिकारी के कंधों पर डाल देना चाहिए और ममता के बंधनों को अनासक्त कर्तव्य में परिणत कर स्वयं स्वाध्याय, सत्संग, सेवा और आत्म चिंतन में संलग्न हो जाना चाहिए ।

जीवनस्य चतुर्थांशं परमार्थे नियोजयेत् । वैराग्यं विषया कृत्वा लोभमोहौ परित्यजेत् ।

अर्थात जीवन का चतुर्थांश परमार्थ में व्यतीत करे । विषय से वैराग्य की ओर अग्रसर होकर लोभ और मोह को त्याग दे । मन से वासना, तृष्णा, दुर्भाव, द्वेष दूर कर अपनी साधना-उपासना में संलग्न होता हुआ, इंद्रियों का नियंत्रण करे ।

सदाध्यात्मिकसम्पतिः सञ्चयेल्लोकसेवया । समयस्य विशिष्टांशं शुभकार्ये नियोजयेत् ॥
विश्वं मत्वाऽऽत्मरूपं यत् शिक्षकवद् गृहाद्बहिः । जीवनस्यास्य साफल्यं वैराग्यो परितिष्ठति ॥

सदैव आध्यात्मिक संपत्ति को लोक सेवा से संचित करे । विश्व को आत्मस्वरूप मान कर शिक्षक की भाँति घर से बाहर समय का विशिष्टांश शुभ कार्य में लगावे, क्योंकि इस जीवन की सफलता निःस्वार्थ भाव पर ही निर्भर है ।

संबंधियों के प्रति मोह अंत तक न छूटा

इसके लिए सबसे बड़ी वैतरिणी जो पार करनी पड़ती है, वह है मोह-माया की ।

देवर्षि नारद को परिभ्रमण काल में एक वयोवृद्ध धनवान मिला । पूजा बहुत करता था, भक्तजन लगता था । उसकी ढलती आयु को देखकर नारद बोले- "परिवार समर्थ हो गया, अब घर से निकल कर वानप्रस्थ लेना चाहिए और लोकसेवा में लगना चाहिए ।" बात धनवान के गले न उतरी । उसने कहा- "अभी तो परिवार को संपन्न बनाना है । फिर कभी समय होगा, तो चलेंगे ।" बहुत वर्ष बाद नारद उधर से फिर निकले । धनी भक्त की याद आ गई । उसके घर पहुँचे, तो मालूम हुआ, वे कुछ समय पूर्व मर गए । नारद ने दिव्य दृष्टि से देखा, तो प्रतीत हुआ, वह मर कर बैल बन गया है और हल में चलता है । समीप जाकर नारद ने पूर्व जन्म की बात स्मरण दिलाई और कहा- "अभी भी समय है, हमारे साथ चलो । बैल को पूर्व जन्म स्मरण हो आया । फिर भी उसने सिर हिलाया, परिवार को कमाई करके खिलाता हूँ । मेरे चल पड़ने से इन लोगों को कठिनाई पड़ेगी ।" नारद चले गए ।

कई वर्ष बाद फिर आना हुआ । बैल का समाचार पूछने गए, तो ज्ञात हुआ कि वह भी मर चुका । अब वह कुत्ता बना बैठा था । था उसी घर में । नारद बोले- "कुत्ते की स्थिति में पड़े रहने से क्या लाभ ? चलो विश्व कल्याण का कुछ काम करें ।" कुत्ता समहत न हुआ । उसने कहा- "विश्व कल्याण से क्या ? परिवार कल्याण ही बहुत है । मैं चल पड़ूँ तो चोरों की रखवाली कौन करेगा ?" नारद चले गए फिर तीसरी बार उसी प्रकार लौटना हुआ और नारद जी ने इस बार भी पहले की तरह पूछताछ की । मालूम पड़ा कुत्ता मर गया । देखा तो वह साँप बना वहीं एक बिल में सिर चमका रहा था । नारद उसके समीप पहुँचे । "ऐसी दुर्गति से क्या लाभ ? अब तो इन लोगों की कोई सहायता भी नहीं बन पड़ती होगी । चलो न ।" सर्प ने असहमति सूचक सिर हिलाया और कहा- "घर में चूहे बहुत हैं । इन्हें निगलने और डराने का काम क्या कम है ? परिवार का मोह कैसे छोड़ूँ ?" नारद इस बार भी चले गए । एक दिन साँप बिल से निकला ही था कि घर

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वालों ने उसकी डंडे से खबर ली और सिर कुचल दिया । ऐसी दुर्गति न हो, इसलिए आत्मीय जनों के प्रति अनावश्यक अतिशय मोह छोड़कर स्वयं को सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन हेतु समाज रूपी रणक्षेत्र में उतर जाना चाहिए ।

मनुष्य का आयु विभाजन

भगवान ने सर्वप्रथम बैल बनाया और उसे पचास वर्ष की आयु दी । बैल ने कहा– "जब इतना कठोर जीवन जीना पड़ेगा, तो इतने दिन जीकर क्या करूँगा ? आधी उम्र कम कर दीजिए ।" भगवान ने आधी काट कर अपनी झोली में रख ली । दूसरा कुत्ता बनाया । उसकी आयु भी इतनी ही थी । इन्कार करने पर उसकी भी आधी काट ली गई । तीसरा मनुष्य बना । उसे भी पचास वर्ष जीना था, पर वह इतने में सतुष्ट नहीं था । उसने अधिक जीना चाहा, तो भगवान ने पच्चीस वर्ष बैल और पच्चीस वर्ष कुत्ते के भी उसे दे दिए । पचास वर्ष तक मनुष्य का अपना वैभव काम देता है । यदि शेष भगवान के अनुदानको वह किसी के काम में न लगाए, तो फिर उसे बैल और कुत्ते की तरह पशु-जीवन जीना पड़ता है ।

अंतिम समय में हुआ बोध

बहुसंख्य व्यक्तियों को अंत तक बोध नहीं हो पाता कि क्यों वे इस धरती पर जन्मे व क्या उन्हें करना है ? मखौल में ही वे जिंदगी काट देते हैं । एक साधु तीर्थयात्रा पर निकले । मार्ग व्यय के लिए किसी सेठ से कुछ माँगा, तो उसने कुछ दिया तो नहीं, पर अपना एक काम भी सौंप दिया । एक बड़ा दर्पण हाथ में थमाते हुए कहा– "प्रवास काल में जो सबसे बड़ा मूर्ख आपको मिले उसे दे देना ।" संत बिना रुष्ट हुए उसका काम कर देने का वचन देकर दर्पण साथ ले गए । बहुत दिन बाद वापस लौटे, तो सेठ को बीमार पड़े पाया । संग्रहीत धन से वे न अपना इलाज करा पाए और न किसी सत्कर्म में लगा पाए । मरणासन्न स्थिति में संबंधी, कुटुंबी उनका धन-माल उठा-उठा कर ले जा रहे थे । सेठ जी को मृत्यु और लूट का दुहरा कष्ट हो रहा था । साधु ने सारी स्थिति समझी और दर्पण उन्हीं को वापस लौटा दिया । कहा– "आप ही इस बीच सबसे बड़े मूर्ख मिले, जिसने कमाया तो बहुत, पर सदुपयोग करने का विचार तक नहीं उठा ।"

काहिलों के लिए दुष्ट की उपमा

जीवन में क्रियाशील बने रहकर जीना ही सार्थक है । वानप्रस्थ ले भी लिया एवं मनःस्थिति वैसी ही रही तो क्या लाभ ?

संसार के कुशल समाचार जानने के लिए एक दिन भगवान ने नारद को पृथ्वी पर भेजा । उन्हें सबसे पहले एक दीन-दरिद्र वृद्ध पुरुष मिला, जो अन्न-वस्त्र के लिए तरस रहा था । नारद जी को उसने पहचाना तो अपनी कष्ट-कथा रो-रोकर सुनाने लगा और कहा– "जब आप भगवान से मिलें, तो मेरे गुजारे का प्रबंध उनसे करा दें ।" नारद उदास मन से आगे बढ़े, तो एक धनी से उनकी भेंट हो गई । उसने भी नारद जी को पहचाना, तो उसने खिन्न होकर कहा– "मुझे भगवान ने किस जंजाल में फँसा दिया । थोड़ा मिलता, तो मैं शांति से रहता और कुछ भजन-पूजन कर पाता, पर इतनी दौलत तो सँभाले नहीं सँभलती, ईश्वर से मेरी प्रार्थना करें कि इस जंजाल को घटा दें ।" यह विषमता देवर्षि को अखरी । वे आगे चल ही रहे थे कि साधुओं की एक जमात से भेंट हो गई । जमात वाले उन्हें चारों ओर से घेर कर खड़े हो गए और बोले– "स्वर्ग में तुम अकेले ही मौज करते रहते हो । हम सबके लिए भी वैसे ही राजसी ठाठ जुटाओ, नहीं तो नारद बाबा ! चिमटे मार-मार कर तुम्हारा भूसा बना देंगे । घबराए नारद ने उनकी माँगी वस्तुएं मँगा दीं और जान छुड़ाकर भगवान के पास वापस लौट गए । जो कुछ देखा वही उनके लिए बहुत था और देखने की उन्हें इच्छा ही न रही ।

भगवान ने नारद से उस यात्रा का वृतांत पूछा, तो देवर्षि ने तीनों घटनाएँ कह सुनाईं । नारायण हँसे और बोले– "देवर्षि, मैं कर्म के अनुसार ही किसी को कुछ दे सकने में विवश हूँ । जिसकी कर्मठता समाप्त हो चुकी, उसे मैं कहा से दूँ । तुम अगली बार जाओ, तो उस दीन-हीन वृद्ध से कहना–दरिद्रता के विरुद्ध लड़े और सुविधा के साधन जुटाने का प्रयत्न करे, तभी उसे दैवी सहायता मिल सकेगी । इसी प्रकार उस धनी से कहना–यह दौलत उसे दूसरों की सहायता के लिए दी गई है । यदि वह संग्रही बना रहा, तो जंजाल ही नहीं, आगे चलकर वह विपत्ति भी बन जाएगी ।" नारद जी ने पूछा– "और उस साधु मंडली से क्या कहूँ ?" भगवान के नेत्र चढ़ गए और बोले– "उन दुष्टों से कहना कि त्यागी और परमार्थी का वेष बनाकर आलस्य और स्वार्थपरता की प्रवंचना इतनी असह्य है कि उन्हें नरक के निकृष्टतम स्थान में अनंत काल तक सड़ना पड़ेगा ।"

लोकमंगल का कार्य वानप्रस्थ लेकर सभी को करना चाहिए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कब फलेगा, मुझे इससे क्या ?

एक न्यायप्रिय राजा साधु वेश में अपनी प्रजा की खैर-खबर लेने निकला । जब कभी वह जनता के दु:ख-दर्द को सुनने निकलता, तो किसी अंगरक्षक या मंत्री को साथ में नहीं लेता था और न राज्य के अधिकारियों को किसी प्रकार की सूचना देता । कितने ही व्यक्तियों से संपर्क करते हुए वह एक बगीचे में पहुँचा । वहाँ एक वृद्ध माली नया पौधा लगा रहा था । उसे देखकर राजा ने पूछा– ''यह तो अखरोट जैसा पौधा मालूम पड़ता है ।'' ''हाँ ! हाँ ! भैया, तुम्हारा अनुमान ठीक है ।'' माली का उत्तर था । ''अखरोट तो बीस-बाईस वर्षों में फलता है, तब तक क्या इस पौधे के फल खानेके लिए बैठे रहोगे ।'' ''बात यह है कि हमारे बाप-दादा ने इस बगीचे को लगाया था । खून-पसीना एक करके इसको सींचा, देखभाल की और फल हम लोगों ने खाए । अब हमारा भी तो यह कर्तव्य है कि कुछ वृक्ष दूसरों के लिए लगा दें । अपने खाने के लिए पेड़ लगाना तो स्वार्थ की बात होगी । मैं यह नहीं सोच रहा हूँ कि आज इस पौधे की क्या उपयोगिता है ? यह भविष्य में दूसरों को फल प्रदान करे, बस यही इच्छा है ।'' वृद्ध माली की बात सुनकर राजा मंत्री से बोला– ''यह सभी वृद्धजन यही सोचें कि हमें बोने से मतलब है, भले ही उस फसल का लाभ आने वाली पीढ़ी ले, तो सारे समाज में सत्प्रवृत्तियों का विस्तार होने लगेगा ।''

रिटायर होकर क्या करूँ ?

कुछ ऐसे भी होते हैं, जिनके लिए जीवन सतत जीवंत है । विश्राम करने या पड़ाव पर ठहरने का क्या काम ? कांग्रेस नेता और न्यायाधीश म० गो० रानाडे के चाचा विट्ठल दास तब किसी दफ्तर में छोटी नौकरी करते थे । रिटायर होने का समय आया, तो उन्हें पेंशन के कागज मिले । गैर हाजिर रहने की उनकी आदत न थी । श्रम से जी चुराते न थे । शरीर भी स्वस्थ था । मुफ्त की पेंशन लेना उन्हें बुरा लगा । दफ्तर के बड़े साहब के पास गए और बोले– ''जो पेंशन मिलेगी उसी में काम चला लूँगा, पर काम यहीं करता रहूँगा । नया काम ढूँढ़ना मेरे लिए कठिन पड़ेगा । आप जो भी काम लेना चाहें, लेते रहें, पर छुट्टी न करें ।'' अफसर चकित रह गए और उन्हें आजीवन उसी दफ्तर में काम करने की छूट दे दी ।

वयोवृद्ध योद्धा– चर्चिल

इंग्लैंड के प्रधानमंत्रियों में चर्चिल का नाम आत्मविश्वास और सूझबूझ के प्रतिनिधियों के रूप में लिया जाता है । उन दिनों जर्मनी इंग्लैंड को हर दृष्टि से बर्बाद करने पर तुला था । तत्कालीन प्रधानमंत्री चेंबर लेन हद दर्जे तक झुक जाने पर भी हिटलर की दोस्ती प्राप्त न कर सके । तब साहसी और सूझबूझ वाले व्यक्ति को सत्ता सौंपने की बात सामने आई । इस दृष्टि में चर्चिल को उपयुक्त पाया गया और उन्हें आग्रहपूर्वक सत्ता सँभालने के लिए बुलाया गया । वे शारीरिक दृष्टि से वयोवृद्ध हो चुके थे, पर मनोबल में रत्तीभर भी कमी न हुई थी । उन्हें राजनैतिक दाँव-पेंचों का अनुभव था ।

पहले युद्ध में भी उनका जौहर देखा जा चुका था । इस बार भी सत्ता हाथ में लेते ही उनने जनता का पूरी तरह साहस दिया और संभावित विपत्तियों में किसे क्या करना है, इसे योजनाबद्ध रूप से समझाया । छाई हुई घबराहट को हिम्मत और संघर्ष की मन:स्थिति में बदल दिया । चर्चिल का भारत के प्रति रुख कठोर था, तो भी वे अपने साहस और व्यक्तित्व के बल पर अपने देश की आड़े समय में भारी सेवा कर सके ।

वृद्धावस्था का एकांतवास

श्री वासुदेव शरण अग्रवाल भारत के कुछ चुने हुए विद्वानों में से थे । युवावस्था में वे सामाजिक और हँसमुख थे, पर जब उनका आयुष्य समाप्त होने को आया, तो उनने लोगों से मिलना बंद कर दिया और लेखन कार्य में जुट गए । उनका कहना था, जो कार्य करना है, वह बहुत है, उसे एकाग्रता और एकांत परायणता से ही पूरा कर सकता हूँ । उनके स्वभाव में विचित्र परिवर्तन आने का कारण उनका उच्चस्तरीय उद्देश्य ही था, सामर्थ्य की कमी नहीं ।

अंधे वृद्ध का कौशल

न्यूयार्क में एक अंधा व्यक्ति था, फ्रांसिस ए० वरडेट । किसी काम न आने और आए दिन चें-चें करने से तंग आकर घर वालों ने उसे धक्के मार कर निकाल दिया । ६३ वर्षीय बुड्ढे की आँखें खुलीं । उसने घर वालों को दोष देने की अपेक्षा अपने स्वभाव और कौशल को निखारने का निश्चय किया । इस प्रयास के लिए वह एक संबंधी के पास न्यूजीलैंड चला गया । संबंधी मकान बनाने की फिक्र में था । यह कार्य अंधे ने अपने जिम्मे ले लिया । सूझबूझ, अनुभव और पूछताछ का सहारा लेकर उसने पूरी कल्पना शक्ति और समझदारी से उस कार्य की जिम्मेदारी उठाई । स्वयं काम में जुटता और श्रमिकों को साथ लगाए रहता ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संबंधी को उसने पूरी तरह निश्चिंत कर दिया । किसी इंजीनियर आदि की सहायता भी नहीं लेनी पड़ी । ढाई वर्ष बाद वह तिमंजिली इमारत बन कर तैयार हो गई । अंधे की तत्परता सर्वत्र प्रख्यात हो गई । सरकार ने पौरुष युक्त चमत्कार का सार्वजनिक प्रदर्शन करने की दृष्टि से वह इमारत खरीद ली और उसे शानदार पुस्तकालय बना दिया । न्यूजीलैंड जाने वाले 'पोस्टनटर्न पाइके वेने' के नाम से प्रख्यात इस छोटी इमारत को देखने अवश्य पहुँचते हैं और अंधे के कौशल से प्रेरणा लेकर वापस लौटते हैं ।

स्कंदगुप्त की विजय एवं कुमारगुप्त का वानप्रस्थ

हूण, शक, यवन, पल्लव आदि जातियों के भारत पर निरंतर आक्रमण हो रहे थे और भारत छिन्न-भिन्न हुआ जाता था । भारतीय गजा संगठन और सूझबूझ के अभाव में समुचित प्रतिरोध न कर पा रहे थे । पाटिलपुत्र के सम्राट् कुमारगुप्त थे । उनकी आयु उतार पर थी । उनने दायित्व अपने बेटे पर सौंपा, ताकि उसकी परीक्षा भी ली जा सके एवं उत्तराधिकारी का समाधान होने पर वे निवृत्ति ले सकें । उनका पुत्र स्कंदगुप्त आयु में कम होते हुए भी अतिशय साहसी था । उसने सेना लेकर आक्रमणकारियों को खदेड़ने का निश्चय किया । साहस और सूझबूझ से युद्ध कर भारत के सभी विजित क्षेत्रों को मुक्त करा लिया और आक्रमणकारियों को दुबारा सिर उठाने योग्य न रहने दिया । विजयी स्कंदगुप्त का सर्वत्र बहुत स्वागत हुआ । पिता ने राजकाज उसके जिम्मे सौंप दिया और स्वयं वानप्रस्थी बनकर परमार्थ प्रयोजनों में लग गए । आजीवन वे भ्रमण करते रहे एवं वृहत्तर भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठता के विचारों को व्यापक बनाने में लगे रहे ।

गोखले की वसीयत

महात्मा गांधी ने गोखले की वसीयत के बारे में बताते हुए 'हरिजन' में लिखा था । जब वह मृत्यु शैया पर पड़े थे, तब उन्होंने अपने उद्देश्यों को साफ प्रकट कर दिया था । उन्होंने कहा था कि उनके मरने के बाद यदि किसी प्रकार उनकी जीवनी लिखने की चेष्टा की गई, यादगार में इमारत खड़ी की गई अथवा शोक सभाएँ मनाई गईं, तो उनकी आत्मा को शांति नहीं पहुँचेगी । उनकी इच्छा केवल इतनी ही थी कि जिस सच्चाई और ईमानदारी से उन्होंने अपना जीवन बिताया, देशवासी उसका ही अनुसरण करें और 'सर्वेंट ऑफ इंडिया सोसाइटी', जिसकी उन्होंने स्थापना की थी, अपने उद्देश्यों में सफलता प्राप्त करती रहे और निरंतर देश की सेवा करती रहे ।

प्रौढा अनुभवन्त्वत्र समये चिन्तयन्त्वपि ।
अनुशासनमेतस्या दिव्याया देवसंस्कृतेः ॥ २३॥
पाललिष्याम एनं च धर्म त्वाश्रमजं सदा ।
आयुषोऽप्युत्तरार्धं च निश्चिन्वन्तु परार्थकम् ॥ २४॥
सुविभाजनरेखेयमात्मकल्याणतस्तथा ।
विश्वकल्याणतोऽप्यास्ति श्रेयः सम्पादिका ध्रुवम् ॥ २५॥
विभाजनेऽस्मिन् स्वार्थस्य परार्थस्यापि विद्यते ।
समावेशो हि सम्यक् सिद्ध्यन्त्येतेन पूर्णतः ॥ २६॥
प्रयोजनानि संस्कारव्यवहारगतान्यथ ।
परात्मनः प्रसादाय चात्मनः काल आप्यते ॥ २७॥
पुरातनस्य कालस्य दिव्या वातावृतिस्तु सा ।
अस्याः परम्पराया हि उपहार इव स्मृतः ॥ २८॥
सा च प्रचलिता यावत् तावद् भूमिरियं स्मृता ।
जगन्मङ्गलमूलेव स्वर्गादपि गरीयसी ॥ २९॥
निवासिनोऽपि चात्रत्या त्रयस्त्रिंशत्तु कोटिकाः ।
अभूवन् परितः देवास्ते हि सम्मानिता अपि ॥ ३०॥

भावार्थ–प्रौढ़ों में से प्रत्येक को समय रहते यह अनुभव करना है कि वे देवसंस्कृति के अनुशासन को ध्यान में रखेंगे । आश्रम धर्म का पालन करेंगे और आयु का उत्तरार्द्ध परमार्थ प्रयोजन के लिए निर्धारित

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रखेंगे । यह विभाजन रेखा आत्मकल्याण और विश्वकल्याण दोनों ही दृष्टि से परमश्रेयस्कर है । इस विभाजन में स्वार्थ और परमार्थ का संतुलित समावेश है । इससे सांसारिक प्रयोजन भी पूरे होते हैं और आत्मा-परमात्मा को प्रसन्न करने का भी अवसर मिलता है । पुरातनकाल का सतयुगी वातावरण इसी परंपरा की देन था, जब तक वह प्रचलित रही, तब तक जगत् के कल्याण की भूमि 'स्वर्गादपि गरीयसी' बनी रही और यहाँ के निवासी सर्वत्र तैंतीस कोटि देवता माने जाते तथा सम्मानित होते रहे ॥ २३-३०॥

व्याख्या-आयुष्य के आश्रम विभाजन के मूल में गहरा तत्वदर्शन है । व्यक्ति का स्वयं का तो इसमें हित है ही, समष्टिगत कल्याण भी इससे सधता है । व्यक्ति अपनी जिम्मेदारियों से मुक्त होकर निठल्ला नहीं बनता, वरन् और भी बड़े समुदाय के लिए उत्तरदायी हो जाता है । गृहस्थ जीवन का दायित्व पूरा होते ही समाज क्षेत्र में आराधना के निमित्त निकल पड़ना, देव संस्कृति की पुनीत परंपरा रही है । सतयुग में यह प्रथा जीवित थी, अतः कहीं कोई विग्रह नजर नहीं आता था, न लोकसेवियों की कमी ही पड़ती थी । आज भी उसी परंपरा के पुनर्जागरण की आवश्यकता है ।

ऐसे पराधीन न बनें

एक सेठ की पत्नी का स्वर्गवास हो गया । चारों पुत्र समर्थ हो गए थे । उसने अपनी संपदा चारों को बाँट दी और स्वयं साधन विहीन हो गया । पुत्रों के विवाह भी हो गए । सेठ बड़े लड़के के पास रहते थे । उसका खर्च बढ़ता था स्वतंत्रता में भी बाधा पड़ती । उसकी पत्नी बोली- "ससुर जी, हमारे ही यहाँ क्यों रहते हैं ? दूसरों के यहाँ क्यों नहीं जाते ?" वे दूसरे लड़के के यहाँ रहने लगे । वहाँ भी यही प्रश्न उठा और तीसरे, चौथे के यहाँ भी । दुखी होकर उनने फल बेचने और पहले पेट भरने की व्यवस्था बनाई । पीछे अपने खरीददारों को सिखाया करते थे कि जीवनपर्यंत अपनी आवश्यकताओं के कुछ साधन अपने हाथ ही रखने चाहिए, अन्यथा मेरी तरह पछताना पड़ेगा । उनकी स्थिति की समीक्षा करते हुए एक संत ने कथा प्रसंग के दौरान श्रोताओं को बताया कि ऐसी दुर्गति को पहुँचने के पूर्व ही स्वयं को किसी लोकसेवी संगठन से जोड़ कर अपनी उपलब्धियों, संपदा एवं अनुभव का लाभ समाज को देना ही श्रेयस्कर है ।

वृद्ध पिता को घर से निकालो

एक बहुत सुंदर वधू ने पति को पूरी तरह वशवर्ती कर लिया । घर में बहुत बूढ़ा बाप था । खाँसता और असमर्थ होने के कारण तरह-तरह की माँगे करता । वधू ने पति से हठ किया कि या तो इस बूढ़े को हटाओ, नहीं तो मैं नैहर चली जाऊँगी और फिर कभी नहीं आऊँगी । पति को वधू के सामने झुकना पड़ा । वह ऊँटों पर माल ढोने का काम करता था । सो एक दिन पिता को नदी पर पर्व स्नान के लिए चलने को तैयार कर लिया । साथ ले गया और रास्ते में मार कर उसे झाड़ी के नीचे गाड़ दिया । दिन गुजरने लगे । पुत्र जन्मा, बड़ा हुआ । उसकी भी सुंदर वधू आई । बाप बूढ़ा और अशक्त हुआ । घटनाक्रम पुराना ही दुहराया गया । बूढ़े को हटा देने का निराकरण भी उसी प्रकार हुआ । ऊँट पर बैठाकर पर्व स्नान के बहाने ले जाया गया और मार कर उसी झाड़ी में गाड़ दिया गया, जिसके नीचे बाप गड़ा था । इस लड़के का भी लड़का हुआ । उसके भी सुंदर वधू आई । बुढ़ापा, अशक्तता और खाँसी का दौर चला और नववधू द्वारा उसे भी हटा देने का पुराना प्रस्ताव सामने आया । लड़के ने बाप को ऊँट पर बैठा कर पर्व स्नान के लिए सहमत कर लिया । संयोगवश उसे भी मारने और गाड़ने के लिए वही झाड़ी उपयुक्त पाई गई । बेटा छुरा निकालने ही वाला था कि बाप ने उसे रोका और कहा- "यहाँ दो गड्ढे खोद कर देखो ।" दोनों में दो अस्थिपंजर पाए गए, जो बूढ़े बाप और बाबा के थे । उनका दुखद अंत भी वधुओं के आग्रह पर किया गया था । बुड्ढे ने कहा- "मुझे मारने पर तो इसी परंपरा के अनुसार तेरी भी दुर्गति होगी । इसलिए इस प्रचलन को तोड़ना ही उपयुक्त है । मैं स्वयं कहीं चला जाता हूँ । तू बिना मारे ही लौट जा । वधू से मार दिए जाने की बात कह देना ।" बेटे की आँख खुल गई और वह पिता को वापस घर ले आया । उनकी सेवा करने लगा । वधू को कह दिया कि उसे जो भी करना हो, करे । वह पिता को पीठ न देगा । उफान शांत हो गया । पत्नी भी न गई । बूढ़ा भी बच गया और परंपरा भी टूटी । जो चलती रहती तो अनेक पीढ़ियों तक इसी प्रकार बूढ़े बापों का वध होता रहता । आज अनेक परिवार ऐसी ही दुर्गति की स्थिति में हैं । दो पीढ़ियों में पारस्परिक टकराव होता देखा जाता है । समझ-बूझ कर काम लिया जाय, तो आश्रम व्यवस्था के माध्यम से विग्रह टाले जा सकते हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वानप्रस्थ में तप

श्रुति का मत है कि "तपाने से मिट्टी के बर्तन पकते और मजबूत होते हैं । धातुएँ भट्टी में शोधी जाती हैं । पानी को आग में उबालने से शक्तिशाली भाप बनती है । रेल के इंजन तक चलाती है । बहुमूल्य रस-भस्म अग्नि संस्कार से ही बनती हैं । अंडा गर्मी से पकता है । सुपाच्य भोजन बनाने के लिए चूल्हा गरम करना पड़ता है । मनुष्य के संचित कुसंस्कारों को जलाने और प्रखरता उत्पन्न करने के लिए तपश्चर्या का आश्रय लेना पड़ता है । मनोबल बढ़ाने के लिए इस उपचार की अनिवार्य आवश्यकता पड़ती है । हर वानप्रस्थ लेने वाले के लिए तप अनिवार्य है, ताकि वह जीवन क्रम को नए सिरे से आरंभ कर सके । पूर्व के कुसंस्कार मिटा कर स्वयं को प्रखर लोक सेवी बना सके ।"

प्रशंसनीय वानप्रस्थ

मास्टर दीनदयाल जब रिटायर हुए, तब भी उनका स्वास्थ्य ठीक था । उनने अपने पूर्णिया जिले में गाँव-गाँव जाकर स्कूलों की स्थापना में अपना शेष जीवन लगाया । बच्चों से निवृत्त हो गए थे । उनने वानप्रस्थ ले लिया । एक गाँव में कई-कई दिन ठहरते । हर घर से एक मुट्ठी अनाज जमा करने के लिए घड़े रखवाते । उसी से अध्यापक का वेतन चल जाता । ऐसे १०० स्कूल खुलवाने का उनने व्रत लिया था । सो जीवन के अंत तक उनने पूरा कर लिया । उनका यह वानप्रस्थ सर्वत्र सराहा गया ।

अंधकूप का लोक सेवी

डेविड लिंकिग स्टार दक्षिण अफ्रीका के उस क्षेत्र में सेवा-साधना के लिए पहुँचे, जिसे अंध कूप कहा जाता था । चिकित्सा, सहायता और सुधार तीन उद्देश्य लेकर वे उस क्षेत्र में आजीवन रहने के लिए गए थे । उनके इन कार्यों का उस समुदाय में स्वागत नहीं हुआ । कबीलों की भाषाएँ अलग से सीखने में उन्हें बहुत कठिनाई हुई । एक कबीले वालों ने तो उनका एक हाथ ही तोड़ दिया, तो भी वे निराश नहीं हुए और पूरे तीस वर्ष उसी क्षेत्र में जमकर अपने त्रिविध कार्य करते रहे । दास बनाने के गोरों के प्रयास का भी वे डट कर विरोध करते रहे । उन्हें समझने में लोगों को बहुत देर लगी । मरने के बाद लोगों को यह कहते सुना गया कि देवता चला गया, भगवान चला गया ।

पीपासर के संत जमेश्वर

किसान खेती करता है, किन्तु उसकी उपज स्वयं ही नहीं खा जाता, गाय दूध देती है, पर उसे स्वयं ही नहीं पी जाती । तुलसीदास जी ने संतों की उपमा फलदार वृक्षों से दी है, जो दूसरों के निमित्त ही फलते हैं । जो दूसरों से निर्वाह लेकर अपने लिए स्वर्ग-मुक्ति का वैभव जुटाए, उन्हें भिक्षुक, गिरहकट आदि ही कहा जा सकता है । भारत भूमि में समय-समय पर अनेक संत होते रहे हैं, जिनने जन कल्याण के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया । अपना गृहस्थ जीवन जीकर भी, जो जन सेवा करते रहे एवं उनके लिए एक आदर्श स्थापित कर गए, न कि जो खाली बैठे, संत वेश में अन्न क्षेत्र में दाना चुगते रहते हैं, अथवा घर वालों पर भार बने खीसें निपोरते रहते हैं ।

ऐसे ही एक संत जोधपुर क्षेत्र के पीपासर क्षेत्र में हुए हैं । नाम था जमेश्वर । व्यक्तिगत जीवन में वे संयमी रहे, तपस्वी तो थे ही । लोक शिक्षण के निमित्त भी उन्होंने अनेक उपयोगी परंपराएँ चलाईं । इनके अनुयायी विश्नोई नाम से जाने जाते हैं । ये उत्तर भारत में सर्वत्र और राजस्थान, हरियाणा में विशेष रूप में पाए जाते हैं । उन्होंने मांसाहार, हरे वृक्षों का काटना, बाल विवाह, छुआछूत आदि अनेक कुप्रथाओं का उन्मूलन किया और व्यक्तिगत जीवन में अधिक पवित्र एवं सद्भाव संपन्न होने की शिक्षा दी । उनने जो लिखा स्थानीय सरल भाषा में लिखा, ताकि सर्व साधारण को उसे समझने में कठिनाई न हो । इस समुदाय को अभी भी अधिक प्रामाणिक एवं सुधारवादी माना जाता है ।

घाट का पत्थर

लोक सेवी कहीं भी रहें, सराहे जाएँगे । हस्ती भले छोटी हो, सेवा का आनंद स्वयं में निराला है । सरिता के सुरम्य तट पर सुशोभित शिव मंदिर, पास ही घाट पर धोबियों के पत्थर पड़े थे । मंदिर में प्रतिष्ठित शिवलिंग और धोबी का एक पत्थर दोनों कभी एक पर्वत उपत्यिका से साथ-साथ चले थे । काल गति ने एक को शिव प्रतिमा बना दिया, तो दूसरे को धोबी का पत्थर । धोबी का पत्थर आत्महीनता अनुभव कर दुखी होता । उससे एक दिन रहा नहीं गया, शिवलिंग को संबोधित कर कहा- "तात ! आप धन्य हैं । देव मंदिर में प्रतिष्ठित हैं । भव-बंधनों में जकड़े प्राणी आपके पास आकर कितनी शांति, कितना संतोष अनुभव करते हैं । काश, यह पुण्य सुयोग हमें भी मिलता ।" शिवलिंग आत्म-प्रशंसा सुनकर गंभीर हो उठे । बोले- "तात ! आपका दुख करना निरर्थक है, आप नहीं जानते हम तो मात्र यहाँ आने वाले लोगों को क्षणिक शांति और शीतलता प्रदान करते हैं । आप

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तो निर्विकार भाव से हर किसी का मैल धोते रहते हैं । आप की साधना धन्य है । मेरे पास आने की प्रथम कसौटी तो आप ही हैं । इसीलिए जब लोग मेरी उपासना करते हैं, तब मैं आपकी किया करता हूँ ।'' घाट का पत्थर गद्‌गद् हो उठा और दुगुने उत्साह से लोगों का मैल धोने लगा ।

गुलाब के पुष्प का चिंतन

उत्तरकाल का परमार्थ-परायण जीवन जीने वालों की मनःस्थिति सदैव उपवन के गुलाब की तरह होती है । प्रातःकाल की पवन लहरी आई और गुलाब को स्पर्श कर चली गई । पत्ते ने हँसते गुलाब को देखा, तो आग-बबूला हो गया । बोला- ''यह भी कोई जीवन है, माली आता है और असमय में ही तुम्हारी जीवन लीला समाप्त कर देता है, इतने अल्प जीवन में भी क्या आनंद ? मैं रोज देखता हूँ, कितने फूल खिलते हैं और मुरझा जाते हैं ।'' गुलाब ने बड़े शांत स्वर में उत्तर दिया- ''भाई ! जीवन का अर्थ है-सच्ची सुगंध । इस प्रकार चारों और सुगंध फैलाते हुए आमंत्रित मृत्यु ही जीवन की अमरता है ।

एतदर्थं मतं चैतत्परमावश्यकं नृणाम् ।
शिशवो ह्यल्पसंख्यायामुत्पन्नाः स्युर्गृहे गृहे ॥ ३१ ॥
विवाहस्याल्पकालाच्च पश्चात्प्रजननं स्वतः ।
अवरोधव्यमर्धे तु व्यतीते चायुषो यतः ॥ ३२ ॥
शिशुदायित्वमुक्तिः स्यात् प्रत्येकस्य शिशोर्हृदि ।
स्थापनीयमिदं देयं तेनर्णं पैतृकं महत् ॥ ३३ ॥
इदं तैरिह कर्त्तव्यमृणमुक्त्यै निरन्तरम् ।
अनुजानां सुनिर्वाहः शिक्षाऽथ स्वावलम्बनम् ॥ ३४ ॥
पितुरुत्तरदायित्वेष्वत्र जेष्ठैः सुतैः सदा ।
सहयोगो विधातव्योऽनृणैर्भाव्यमिहोत्तमैः ॥ ३५ ॥
ऋणं तिष्ठेन्न पित्रोस्तद् वयस्कानां कृते त्विदम् ।
शास्त्राणां विद्यते ह्याज्ञा धार्मिकी च परम्परा ॥ ३६ ॥
यथोत्तराधिकारस्तु पितुः पुत्रैरवाप्यते ।
तथैवोत्तरदायित्वं ते वहन्तु च पैतृकम् ॥ ३७ ॥
अनुजानां तथाऽशक्तजनानां पोषणादिकम् ।
तथा कार्यं यथा पित्रा कृतं ज्येष्ठसुतस्य तत् ॥ ३८ ॥

भावार्थ-इस तैयारी के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक घर में बच्चे कम संख्या में हों । विवाह के कुछ समय उपरांत ही प्रजनन बंद कर दिया जाय, ताकि आधी आयु होने तक बच्चों के उत्तरदायित्व से निपटा जा सके । हर बालक के मन में आरंभ से ही यह बिठाया जाय कि उन्हें महान पितृ ऋण चुकाना है । यह ऋण चुकाने का कार्य अपने छोटे भाई-बहनों के निर्वाह एवं शिक्षा-स्वावलंबन के रूप में करना होता है । पिता के उत्तरदायित्वों में हाथ बँटाना, बड़े बच्चों का कर्तव्य है । ऋणी किसी का भी नहीं रहना चाहिए, माता-पिता का भी नहीं - यह वयस्क बालकों के लिए शास्त्रों का अभिवचन है । यही धर्म परंपरा भी है । पिता का उत्तराधिकार जहाँ बच्चों को मिलता है, वहाँ उनके शेष उत्तरदायित्वों का भी परिवहन करें । छोटे भाई-बहनों, घर के वृद्ध या अशक्तजनों का भरण-पोषण उसी प्रकार करना चाहिए, जैसे कि पिता ने ज्येष्ठ पुत्र का किया है ॥ ३१-३८॥

व्याख्या-मानव जीवन किन्हीं उद्देश्य विशेषों के लिए मिला है । पशुओं की तरह स्वच्छंद जीवन बिताकर निरंतर यौनाचार में निरत रहना मानवी गरिमा के प्रतिकूल है । वानप्रस्थ आश्रम में उपयुक्त समय पर प्रवेश कर स्वयं को लोक सेवा में प्रवृत्त किया जा सके, इसके लिए अनिवार्य है कि गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते ही भावी जीवन की योजना बना ली जाय । यदि प्रजनन जल्दी बंद कर दिया जाय, तो लौकिक जीवन से निवृत्ति लेने की अवधि के पूर्व ही उन दायित्वों से मुक्त हुआ जा सकता है, जो संतानों से जुड़े होते हैं । मात्र अपनी जिम्मेदारी पूरी करना ही काफी नहीं, बच्चों के मनों में प्रारंभ से ही संस्कार डाला जाना चाहिए

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कि आगे चलकर उन्हें पिता के दायित्वों को सँभालना, अपनों से छोटों का भरण-पोषण कर उन्हें स्वावलंबी बनाना है । इतना किए बिना वे उस ऋण से मुक्त नहीं हो सकते, जो उन पर पिता के उपकारों के कारण चढ़ा रहता है । उत्तराधिकार मात्र धन-संपदा का ही नहीं होता उन जिम्मेदारियों का भी होता है, जो कभी पिता ने पूरी की व अब संतानों को पूरा करना चाहिए ।

अन्य जीव-जन्तु बनाम मानव

मनुष्य तो प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है । उसे तो अन्यों के समक्ष उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए । गाय, बैल, भैंस, घोड़े आदि सभी सशक्त प्राणियों में संततिक्रम सीमित है । कम संतान जनने वाले हाथी और ह्वेल सौ-सौ वर्ष जीते हैं । शेर चालीस वर्ष, घोड़ा तीस वर्ष, गाय पच्चीस वर्ष, कुत्ता पंद्रह, बकरे-बकरी पंद्रह वर्ष जीते हैं । जबकि छोटी मछलियाँ और छोटे पशु अल्प अवधि तक जीते हैं । जो प्राणी जितने अधिक और जितनी जल्दी बच्चे उत्पन्न करता हो, तो समझना चाहिए कि वह उतनी ही कम आयु प्राप्त कर सकेगा और उतना ही दुर्बल बनकर रहेगा । जीव विज्ञान के ये तथ्य पूरी तरह मनुष्य पर भी लागू होते हैं । मर्यादित प्रजनन की महत्ता को समझा जाना चाहिए, ताकि शीघ्र ही और भी महत्वपूर्ण दायित्व पूरे किए जा सकें ।

लालची को वरदान भी अभिशाप

संतान संबंधी कामनाएँ अच्छे-खासे जीवन को नष्ट कर डालती हैं । जीवन सोद्देश्य हो तो ही यह योनि सार्थक है । राजा संजय की कोई संतान न थी । साथ ही वह बड़ा लोभी भी था । एक दिन नारद जी से उसकी भेंट हुई, उसने अपने पुत्र तथा विपुल धनराशि प्राप्ति का वरदान माँगा । नारद जी ने 'एवमस्तु' कह दिया । बालक जन्मा, उसमें यह विशेषता थी कि जो मलमूत्र करता था, उसमें सोना ही निकलता था । राजा बहुत प्रसन्न था । चोरों को यह पता चला, तो उनने घात लगाकर लड़के को चुरा लिया, ताकि वे धनवान हो सकें । राजा की मनोकामनाएँ चूर-चूर हो गईं । वे निराश और दुखी रहने लगे । लोग कहते थे, "आप तो इससे पहले ही अच्छे थे । वरदान से आपने शोक और ओढ़ लिया ।"

धर्म मरा नहीं है

बहुधा घरों में यही देखा जाता है कि समय पूरा हो जाने पर भी अपना मोह परिजनों से छूटता नहीं, जब व्यवहार में संगति नहीं आ पाती, तो परिणाम बुरे होते हैं । एक विधवा का एक ही पुत्र था । उसने पालने-पोसने, पढ़ाने के उपरांत उसका विवाह भी कर दिया । सास-बहू में पटरी न खाई । आए दिन लड़ाई रहने लगी । निदान बूढ़ी माँ ने घर छोड़ दिया और भिक्षा माँग कर पेट भरने लगी । बुढ़िया का क्रोधी स्वभाव तब भी ठंडा न पड़ा । वह मरघट में जाकर चिता पर हवन करने लगी और मरे धर्म को भस्म करने का मनमानी विधान रचने लगी । एक विद्वान उस राह से निकले । उनसे वृद्धा ने इस कौतुक का कारण बताया और पुत्र-वधू के कलह को धर्म की मृत्यु मानकर उसकी अंत्येष्टि करने का प्रयास का विवरण बताया । विद्वान ने समझाया- "माताजी ! धर्म मरा नहीं है । आप अपने धर्म का पालन करें, पुत्र-वधू से पुत्रीवत् व्यवहार करें, धर्म फिर जीवित हो जाएगा ।" विद्वान वृद्धा को साथ लेकर उसके घर गया और सास-बहू दोनों को समझा दिया । वे प्रेमपूर्वक रहने लगीं और मरा धर्म जीवित हो गया ।

संपदा नहीं संस्कार

अपनी संतानों को संस्कार रूपी निधि ही उत्तरदायित्व में दी जानी चाहिए, क्योंकि वही मूल थाती है । महर्षि कर्वे ने मैट्रिक के बाद बच्चों को इस शर्त पर पढ़ने के लिए रुपया दिया कि वे उसे कमाने लगने पर सर्वप्रथम वापस करेंगे । बाद में विवाह, प्रजनन आदि के खर्च बढ़ाएंगे । बच्चों ने उस शर्त को ईमानदारी से निबाहा । कमाने योग्य बनते ही पहले कर्ज चुकाया, बाद में विवाह किया । महर्षि ने वह पैसा महिला सुधार आंदोलन के लिए लगाया । वे कहते थे उत्तराधिकार में संतान को सुसंस्कारिता देना ही पर्याप्त है । संपदा में समूचे समाज की हिस्सेदारी है ।

पुत्र न रहा, तो विश्व-विद्यालय बना

कैलीफोर्निया के प्रसिद्ध धनपति स्टेन फोर्ड का एक ही बच्चा था । संबंधियों ने उसका अपहरण करके मार डाला, ताकि स्टेन फोर्ड शोक में जल्दी मरें और उनकी संपदा हथियाने का उन्हें अवसर मिले । कुछ समय स्टेन फोर्ड बड़े दुखी रहे, पीछे उन्हें एक सूझ सूझी । अपनी ६००० एकड़ की सोना उगलने वाली भूमि पर एक विश्वविद्यालय बना दिया । यह भूमि अध्यापकों और निर्धन छात्रों का खर्च भली प्रकार चला देती थी । यह विश्वविद्यालय उनने अपने पुत्र लीलेंड की स्मृति में बनाया । अपना और मृत पुत्र का सच्चा हित साधन कर लिया । उस क्षेत्र में यह स्वावलंबी विद्यालय अपने ढंग का अनोखा है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बिना काम पूरा किए चैन नहीं

जिम्मेदारियाँ समाज में सभी को निभानी पड़ती हैं । विशेषकर लोक सेवा के क्षेत्र में उतरने वालों के लिए तो यह और भी अनिवार्य है । पवनार में विनोबा जी प्रतिदिन आठ घंटे कुआँ खोदने का काम करते थे । आस-पास की संस्थाओं के लोग भी इस कार्य में उनकी मदद करते थे । कई नेता या मंत्री विनोबा जी से मिलने आते, तो उन्हें यह भी काम करना पड़ता था । श्रीमती जानकी देवी बजाज भी कुछ दिन वहाँ रहीं और उन्होंने नियमित रूप से एक घंटा चक्की पीसने, एक घंटा रहट चलाने और छह घंटे खाली-भरी टोकरी कुँए पर इधर से उधर देने का काम किया । आठ घंटे काम करने वाले कार्यकर्त्ताओं को १३ आने पारिश्रमिक और भोजन मिलता था, जिसमें दाल, ज्वार की रोटी, मूँगफली का मक्खन और सब्जी होती थी । विनोबा जी कहते थे कि दूध, दही, घी, तेल तो तब मिले, जब कुआँ खुदे, उसमें से पानी निकले, पानी से खेती हो, खेती से घास-दाना हो, जिससे गाय रखी जाय । तब तक इसी से काम चलाना होगा । यही आदर्श परिवार संस्था पर भी लागू होता है एवं गृह प्रमुख को ही इसके लिए कदम उठाना होता है ।

ज्येष्ठा तु सन्ततिर्यर्हि गृहकार्यं बिभर्त्यलम् ।
व्यतीतार्धायुषा कार्यं पुरुषेण ततः स्वयम् ॥ ३९॥
स्वकर्तव्यधिया शेषसदस्यानां सुरक्षया ।
भरणेन सहैवात्र परार्थं कर्म चाधिकम् ॥ ४०॥
प्रयोजनेषु देयं च ध्यानमध्यात्मकेष्वपि ।
पत्नी कुर्याच्च कार्याणि गृहस्थस्य समान्यपि ॥ ४१॥
इच्छुका सा सुयोग्या च यदि तत्साऽपि सादरम् ।
प्रयोजनेषु नेयैव परार्थेषु सहैव तु ॥ ४२॥
परम्परेयं प्रोक्ता च वानप्रस्थाभिधानतः ।
इमं च निर्वहेद् धर्मं गृहस्थमिव सर्वदा ॥ ४३॥

भावार्थ–बड़ी संतान जब गृह कार्य सँभालने लगे, तो अधेड़ का कर्तव्य हो जाता है कि परिवार के शेष सदस्यों की देखभाल करने के साथ-साथ अपने समय का अधिकांश भाग परमार्थ प्रयोजनों के लिए निकालने लगे । अध्यात्म-प्रयोजनों की ओर अधिक ध्यान दे । यदि वह इच्छुक और सुयोग्य हो, तो उसे भी परमार्थ प्रयोजनों में साथ रखे । इसी का नाम वानप्रस्थ है । इसका निर्वाह गृहस्थ धर्म के निर्वाह की तरह ही आवश्यक है ॥ ३९-४३॥

व्याख्या–घर परिवार संबंधी अपनी जिम्मेदारियाँ संतान के सुयोग्य होते ही पूरी हो जाती हैं । गृह प्रमुख का भार पत्नी सँभाले, क्योंकि वह गृहलक्ष्मी है । वह सुचारू रूप से उन जिम्मेदारियों को निभा सकती है, जिनके लिए उनके पति ने सारा गृहस्थ जीवन लगा दिया । वृद्धजनों को अपना ध्यान अब आयुष्य के इस मोड़ पर समाज सेवा की ओर देना चाहिए । वानप्रस्थ अकेला भी निभ सकता है एवं धर्मपत्नी के स्वतः स्वीकार करने पर पत्नी के साथ भी । दोनों ही यदि परमार्थ कार्य हेतु संलग्न हो सकें, तो इससे बड़ा सौभाग्य और क्या हो सकता है ?

आयु मात्र पाँच वर्ष

वस्तुतः जीवन उतना ही सार्थक है, जितना परहितार्थ नियोजित होता है । राजा शतायुध प्रजा निरीक्षण के लिए निकले । एक झोपड़ी में जराजीर्ण वयोवृद्ध दीखा । राजा रुक गए । कौतूहलवश पूछा– "आपकी आयु कितनी है ?" देखने में शतायु की परिधि तक पहुँचे दीखते थे । वृद्ध ने झुकी गरदन उठाई और कहा– "मात्र पाँच वर्ष ।" राजा को विश्वास न हुआ । फिर से पूछा, तो वही उत्तर मिला । वृद्ध ने कहा– "पिछला जीवन तो पशु प्रयोजनों में निरर्थक ही चला गया । पाँच वर्ष पूर्व ज्ञान उपजा और तभी से मैं परमार्थ प्रयोजन में लगा । सार्थक आयु तो तभी से गिनता हूँ ।"

बा का उलाहना

साबरमती आश्रम में भोजन बंद के उपरांत कई अतिथि आए, उनमें पं० मोतीलाल नेहरू भी थे । कुछ भोजन बनाने की आवश्यकता पड़ी । बा उसी समय थक कर लेटी थीं । उनकी आँख लग गई ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आश्रम में एक ट्रावनकोर का लड़का काम करता था । एक लड़की कुसुम भी भोजन में सहायता करती थी । गांधी जी ने इन दोनों बच्चों से कहा– "कुछ भोजन बना डालो ।" वे जुट गए और प्रबंध हो गया । बा जगीं, तो उन्हें दुख हुआ । बोलीं– "मुझे क्यों नहीं जगाया ? इन बच्चों को भी तो आराम की आवश्यकता थी ।" पति-पत्नी की इसी परदुखकातरता, सेवा के प्रति निष्ठा ने उन्हें विश्ववंद्य बना दिया ।

परमार्थ हो तो सच्चा हो

सत्संग में बार बार त्याग की महिमा का वर्णन आता था । उसे ईश्वर प्राप्ति का मार्ग बताया जाता था । सुनने वालों में से एक भावुक भक्त जरायुध ने अपनी सारी संपदा दान कर दी । फिर भी उन्हें न शांति मिली और न ईश्वर प्राप्ति हुई । जरायुध महाज्ञानी शुकदेव के पास पहुँचे और बोले– "जनक तो संग्रही हैं, तो भी उन्हें ब्रह्मज्ञान हुआ है और मैं सब कुछ त्याग चुका, तो भी शांति लाभ न कर सका । इसका क्या कारण है ?" शुकदेव ने कहा– "आवश्यक वस्तुओं का परमार्थ प्रयोजन में लगा देना, तो नैतिक और सामाजिक कर्तव्य है । आध्यात्मिक स्तर के त्याग में हर वस्तु का ममत्व छोड़ना और उन्हें ईश्वर की धरोहर समझना पड़ता है । शरीर और मन भी संपदा हैं, उन्हें ईश्वर की अमानत मानकर उसी की इच्छानुसार प्रयुक्त किया जाने लगे, तो समझना चाहिए कि सच्चा त्याग हुआ और मोक्ष का मार्ग मिला ।

ऐसा आशीर्वाद नहीं चाहिए

ईश्वरचंद्र विद्यासागर अभाव और निर्धनता के बीच पढ़ते-पढ़ते ५० रुपये मासिक के नौकर हो गए । उनकी सफलता पर उनके अनेक संबंधी उन्हें आशीर्वाद देने पहुँचे, बोले– "भगवान की दया से तुम्हारे सारे कष्ट दूर हो गए । आप आराम से रहो और चैन का जीवन बिताओ ।" ईश्वरचंद्र जी के नेत्र भर आए, बोले– "आपने यह आशीर्वाद दिया या अभिशाप ? जिस अध्यवसाय के बल पर मैं उस भीषण परिस्थिति से निकल कर आया, उसे ही त्यागकर मुझे अकर्मण्य बनने की सलाह दे रहे हैं । आपको कहना तो यह चाहिए था कि जिस गरीबी और अभाव का कष्ट तुमने स्वतः अनुभव किया है, परिस्थितियाँ बदलते ही उसे भुला मत देना । अपने श्रम और सामर्थ्य से अभावग्रस्तों के अवरुद्ध मार्ग साफ करना । जिन्हें जीवन का कुछ आभास ही नहीं, वह उपेक्षा बरतें, ऐश में भूले रहें, तो भूले रहें, मैं कैसे यह अपराध कर सकता हूँ । तथ्य बतलाते हैं कि उन्होंने अपने जीवन में इस सिद्धांत का पूर्ण तत्परता से निर्वाह किया । अगणित अभावग्रस्तों के लिए प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप में देवदूत की तरह आगे आते रहे । सच्चे अर्थों में उन्होंने परमार्थी जीवन जिया ।

वास्वानी जी की देश सेवा

साधु टी० एल० वास्वानी सिंध कॉलेज के प्रिंसिपल थे । इससे पूर्व वे कितने ही कॉलेजों में प्रोफेसर रह चुके थे । माताजी का स्वर्गवास होते ही वे संन्यासी हो गए और नौकरी छोड़ दी । माताजी से उनका वायदा भी था कि तुम्हारे रहते तक नौकरी करूँगा । बाद में धर्म प्रचार के काम में लगूंगा । सिंध छोड़कर वे परिव्राजक हो गए और जहाँ-तहाँ भ्रमण करके धर्म प्रचार करते रहे । विदेशों से भी बुलावे आते रहे और वहाँ भारतीय दर्शन की गरिमा समझाने के लिए जाते रहे । रामपुर (उत्तरप्रदेश) में उनने शांति आश्रम बनाया, जहाँ धर्म प्रचारक तैयार किए जाते थे । पूना में महिलाओं के लिए उनने मीरा आश्रम बनाया । उनने कितनी ही पुस्तकें भी लिखी हैं, जो धर्म का दार्शनिक रूप समझाती हैं । उनको दिया गया साधु नाम सार्थक था । घर के दायित्व पूरा करते ही वे राष्ट्र भूमि की सेवा में लग गए । यही सच्चा धर्म है ।

गृहस्थान्निवृत्तेर्वानप्रस्थे प्रवृत्तिकस्य च ।
मध्ये कर्तुं स्वभावे तु परिवर्तनमप्यथ ॥ ४४॥
भावि जीवनजं नव्यं स्वरूपं ज्ञातुमुत्तमम् ।
आरण्यके तु कस्मिंश्चित् साधनायां रतैर्नरैः ॥ ४५॥
भाव्यं कार्यं च पापानां प्रायश्चित्तं तु कर्मणाम् ।
साधनां च प्रकुर्वन्ति स्वभावं परिवर्तितुम् ॥ ४६॥
प्रयोजनानां योग्यानां लोकमङ्गलकारिणाम् ।
प्रशिक्षणानि सर्वैश्च प्राप्तव्यानि नरैरिह ॥ ४७॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

परिवर्तितुमेनं च जीवनस्य क्रमं त्विमम् ।
आवश्यकं मतं वातावृतेश्च परिवर्तनम् ॥ ४८ ॥
आरण्यकाश्रमाणां च वातावरणमुत्तमम् ।
एतदर्थं भवत्येव लोकमङ्गलयोजितम् ॥ ४९ ॥
आरण्यकानां मध्ये च वानप्रस्थसुसाधनाम् ।
कृत्वैव लोककल्याणपुण्यकार्यं विधीयताम् ॥ ५० ॥
प्रत्येकस्मिननवीने च क्षेत्रे प्रविशता सदा ।
प्राप्तव्यमनुकूलं च प्रशिक्षणमिह स्वयम् ॥ ५१ ॥

भावार्थ–गृहस्थ से निवृत्ति और वानप्रस्थ में प्रवृत्ति के मध्यांतर में स्वभाव परिवर्तन और भावी जीवन का नया स्वरूप समझने के लिए किसी आरण्यक में जाकर साधनारत होना चाहिए । गृहस्थ में बन पड़े पाप कर्मों का प्रायश्चित करें । स्वभाव परिवर्तन के लिए साधना करें । लोकमंगल के विविध प्रयोजनों के उपयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त करें । जीवन क्रम बदलने के लिए वातावरण बदलना आवश्यक है । इसके लिए आरण्यक–आश्रमों का प्रेरणाप्रद वातावरण उपयुक्त पड़ता है । चूँकि उसका संयोजन ही लोकमंगल की दृष्टि से किया हुआ होता है । आरण्यकों की मध्यांतर, वानप्रस्थ साधना के उपरांत लोकमंगल के पुण्य प्रयोजनों में संलग्न होने की विद्या अपनाएँ । हर नए क्षेत्र में प्रवेश करने वाले को तदनुरूप प्रशिक्षण प्राप्त करना पड़ता है ॥ ४४–५१ ॥

व्याख्या–विगत में व्यतीत किया गृहस्थ जीवन अपनी लंबी अवधि के संस्कार मन-मस्तिष्क पर, स्वभाव-व्यवहार पर छोड़ देता है । अब जब नया जीवन क्रम प्रारंभ करना है, तो हर प्रौढ़ को अपने आपको नई परिस्थिति के अनुरूप ढालने हेतु तपाना, गलाना पड़ता है । जो गलत कार्य बन पड़े, उनका प्रायश्चित्त किए बिना, क्षतिपूर्ति किए बिना, नए आश्रम में प्रवेश संभव नहीं । यदि वानप्रस्थ ले भी लिया, तो लाभ नहीं । क्योंकि मस्तिष्क पर सदैव पुराना चिंतन हावी होता रहेगा । इसके लिए ऋषिगणों ने आदिकाल से आरण्यक व्यवस्था का प्रावधान किया है । इन आरण्यकों में निवृत्त गृहस्थों के लिए साधना हेतु उपयुक्त वातावरण रहना अनिवार्य है । जब परिमार्जन पूरा हो, तो नए सिरे से प्रशिक्षण द्वारा अपने को लोकसेवी के रूप में विकसित करें । इतनी प्रक्रिया पूरी होने पर ही वानप्रस्थ जीवन की सार्थकता है, तभी लोकेसेवा में दत्तचित्त होकर लगा जा सकेगा ।

नए परिवर्तन का उपहास

प्रचलन को, ढर्रे को तोड़ना अपने आप में बड़ा कठिन कार्य है । उन दिनों इंग्लैंड में छतरी लगाना गँवारपन समझा जाता था । लोग वर्षा और बर्फ में भीगते तो चलते, पर उपहास के डर से छाता न लगाते । इस मान्यता को बदलने का निश्चय उस देश के राज दरबारी हेनरी जेम्स ने किया । वे छाता सदा साथ रखते । वर्षा न होने पर भी लगाकर चलते । कुछ दिन तो मजाक बना, बाद में फैशन बन गया । यहाँ तक कि महिलाएँ और राजमहल के लोग तक उसे लगाकर चलने लगे । मित्र मंडली ने इस नए प्रचलन के लिए उन्हें बधाई दी, तो उनने इतना ही कहा– "जो उपहास और व्यंग्य-विरोध से नहीं डरता, वही बड़े परिवर्तन ला सकता है । गृहस्थ की पुरातन व्यवस्था से जीवन के नए सोपान पर चढ़ते समय प्रचलित ढर्रे को तोड़ना जरूरी हो जाता है । इतना साहस सबको जुटाना चाहिए ।"

अवसर न चूकिए

नए रंग में रँगने के लिए स्वयं को कोरा बनाना जरूरी है । पुराना धुले, अंतः मलिनता रहित हो, तो कुछ नया बन भी सकेगा । यदि स्वयं को कोरा बना भी लिया, पर परिवर्तित जीवन के लिए मन राजी न हुआ तो क्या लाभ ? कागज पर कुछ लिखने के लिए कलम पहुँची, तो उसने अकड़ के कहा– "मेरे गोरे चिट्टे शरीर पर तुझ काली-कलूटी का स्पर्श क्या शोभा देगा ? दूर हट, तेरे साथ अपना गौरव मैं भी क्यों घटाऊँ ?" स्याही बिना कुछ कहे वापस चली गई । कागज सफेद तो बना रहा, पर मिलन के सौभाग्य से उसे वंचित ही रहना पड़ा । सफेदी उसकी बनी रही, पर पत्र के रूप में परिणत होने का अवसर सदा के लिए हाथ से चला गया ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मण की कृतघ्नता

वृद्धावस्था आने पर भी कई व्यक्ति स्वभाव में परिवर्तन ला ही नहीं पाते । दुश्चिंतन मिटे तो ही आगे की व्यवस्था बन सकती है । बुढ़ापे ने काया जीर्ण-शीर्ण कर दी, तो ब्राह्मण और किसी लायक न रहा । सूखी लकड़ियाँ पास के जंगल से बीनकर गाँव में बेच आता और किसी प्रकार निर्वाह चलाता । एक दिन लकड़ी भी थोड़ी मिली और दुर्भाग्य की तरह बाघ झाड़ी से निकलकर सामने आ खड़ा हुआ । ब्राह्मण प्राण जाने के भय से थर-थर काँपने लगा । इतने में उसे एक सूझ सूझी । दोनों हाथ ऊपर उठाकर प्रसन्न मुद्रा में आशीर्वाद का मंत्र पढ़ने लगा । बाघ को इस विचित्र व्यवहार का कारण जानने की इच्छा हुई और झपटने से पूर्व बोला- "तुम कौन हो और ऐसी विचित्र भाषा में क्या कह रहे हो ?" ब्राह्मण ने कहा- "मैं तुम्हारा कुल पुरोहित हूँ । तुम्हारे सभी पूर्वज मेरे यजमान रहे हैं और समय-समय पर विपुल दक्षिणा देते रहे हैं । अब तक तुमसे भेंट नहीं हो पाई थी, सो प्रतीक्षा में बैठा था । प्रसन्न होकर आशीर्वाद के मंत्र पढ़ने लगा । तुम्हारा कल्याण हो । अपने पूर्वजों की भाँति जो दक्षिणा बने, सो देने का प्रयत्न करो ।"

बाघ इस विचित्र कथन पर सकपका गया और पुरोहित को प्रणाम करके बोला- "देखते हैं न, मेरे हाथ सर्वथा खाली हैं । शरीर से कुछ काम कराना चाहें, तो कर दूँ ।" ब्राह्मण ने कहा- "यजमान तुम्हारी श्रद्धा बहुत सराहनीय है । इतना भर कर दो कि मेरी लकड़ियाँ अपनी पीठ पर लाद कर सामने वाले गाँव तक पहुँचा दो ।" बाघ सहमत हो गया और ब्राह्मण द्वारा लादे बोझ को गाँव की सीमा तक पहुँचा दिया । बाघ ने कहा- "ऐसी सेवा तो मैं रोज कर दिया करूँगा । इसी समय तुम मेरी प्रतीक्षा किया करना ।" ब्राह्मण नित्य लकड़ी का गट्ठा जमा करता । बाघ उसे ढोकर नित्य गाँव तक पहुँचाता । इस प्रकार कितने ही दिन बीत गए । एक दिन बाघ विलंब से आया । तो ब्राह्मण ने उसे बहुत खरी-खोटी सुनाईं और शाप देने की धमकी दी । बाघ चुप रहा । गट्ठा पहुँचाने के बाद उसने ब्राह्मण से कहा- "आज मेरा एक काम कर दो । कल से मैं नहीं आऊँगा ।" ब्राह्मण ने तेवर बदले देखकर समझा कि कहना न मानने में खैर नहीं । सो उसने नम्र होकर आदेश पूछा । बाघ ने कहा- "अपनी लकड़ी काटने की कुल्हाड़ी से मेरे कंधे पर घाव कर दो ।" असमंजस के बाद उसने वैसा कर भी दिया । घाव छोटा ही था । बाघ चला गया और दूसरे दिन से फिर न आया । एक दो महीने बीतने पर बाघ फिर प्रकट हुआ । उसने ब्राह्मण को अपना घाव दिखाते हुए पूछा- "यह अच्छा हो गया है न । पर अभी भी उस दिन के कटुवचनों का घाव ज्यों का त्यों हरा है और तुम्हारे जैसे से कोई व्यवहार न रखने की नसीहत दे गया है ।"

क्रोधाग्नि अति घातक

एक संत एकांत में धूनी रमाए बैठे थे । परीक्षा हेतु एक व्यक्ति ने उनसे पूछा- "बाबाजी, धूनी में कुछ आग है ।" बाबा ने कहा- "इसमें आग नहीं ।" व्यक्ति ने कहा- "कुरेद कर देखिए, शायद कुछ अग्नि हो ?" बाबाजी ने अपनी भौंहे तरेरते हुए कहा-"मैंने तुमसे कह दिया, इसमें अग्नि नहीं ।" उसने उसे फिर झकझोरा-"बाबाजी ! कुछ चिंगारियाँ तो हैं ?" बाबाजी ने अपना सड़सा टेकते हुए कहा कि इसमें न अग्नि है, न चिंगारी । व्यक्ति कहने लगा-"बाबाजी, मुझे तो कुछ चिंगारियाँ दिखाई दे रही हैं ।" साधु ने जवाब दिया-"तो क्या मैं अंधा हूँ ?" उसने फिर कहा-"कुछ तो लपटें उठती दिखाई देती हैं ।" बाबाजी की क्रोधाग्नि और अधिक बढ़ने लगी तो उस मनुष्य की ओर अपना सड़सा लेकर मारने दौड़ा । व्यक्ति ने बड़ी तेजी के साथ दौड़ते हुए कहा-"बाबाजी, अब तो अग्नि पूरी तरह भड़क उठी ।" अग्नि का अभिप्राय बाबाजी के क्रोध से था । संत को बोध हुआ कि मात्र वेश बदलने से नहीं, स्वभाव बदलने से ही पुण्य-प्रयोजन सधता है । अपना व्यवहार बदलने हेतु उन्होंने प्रायश्चित का संकल्प लिया एवं फिर अपने बदले रूप में जन सेवा में प्रवृत्त हो गए ।

आँसुओं से बत्ती न बुझाओ

बिना भूतकाल से मुक्ति पाए, मोहान्धता से छूटे, विरक्त जीवन संभव नहीं ।

एक प्रौढ़ की इकलौती लाड़ली बिटिया बीमार पड़ी । इलाज और उपाय की सामा पार कर लेने पर भी उसे बचाया न जा सका । बाप का कलेजा टूट गया । व्यथा के आँसू रुकते न थे । तो उसने एकांत साधा । संसार से उसे बुरी तरह विरक्ति हो गई । रोते-रोते वह एक रात गहरी नींद में सो गया । सपना आया-वह देव लोक जा पहुँचा है और वहाँ श्वेत वस्त्रधारी बालकों का अत्यंत लंबा जुलूस निकल रहा है । सभी बच्चे प्रसन्न हैं और हाथ में जलती मोमबत्ती लिए आ रहे हैं । सपने को वह बहुत रुचिपूर्वक देखता रहा । उस पंक्ति में उसकी प्यारी बिटिया भी आ गई । वह उससे लिपट गया और हिलकियाँ ले-ले कर रोने लगा । जब धीरज

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बँधा, तो देखा और सब बच्चों की मोमबत्ती तो जल रही है, पर अकेली उसी बिटिया की बुझी हुई है । आदमी ने पूछा–"बेटी ! तुम्हारी मोमबत्ती क्यों बुझी हुई है ?" बच्ची ने उदास होकर कहा–"पापा, साथ वाले बच्चे उसे बार-बार जलाते हैं, पर आपके आँसू टपक-टपक कर उसे हर बार बुझा देते हैं ।"

आदमी की नींद खुल गई । उसने आँसुओं से बिटिया का हास-प्रकाश बुझने न देने का निश्चय किया और न केवल आत्म शांति हेतु, अपितु अपनी बिटिया जैसी अनेक जीवित प्रतिभाओं को ऊँचा उठाने हेतु कृत संकल्प हो परमार्थ परायण जीवन जीने लगा ।

पाप का प्रायश्चित्त गुजरात के रविशंकर महाराज ने अपराधी प्रवृत्ति के लोगों से उनकी गलती कबुलवाई और प्रायश्चित्त कराए, एक अपराधी रात भर सोया नहीं । सबेरे महाराज के पास पहुँचा और कहा–"मैंने पड़ोसी के यहाँ शराब की बोतलें रखबाकर उसे पकड़वा दिया था और अब वह जेल में है ।" महाराज ने उसे प्रायश्चित्त बताया कि जब तब वह छूटकर न आए, तब तक उसके घर का खर्च तुम उठाओ और बच्चों की देखभाल रखो । उसने ऐसा ही किया और जब वह जेल से छूटा तो वे घनिष्ठ मित्र बन गए ।

प्रायश्चित्त से कुसंस्कारों का परिमार्जन होता है व जीवन को नई दिशा मिलती है ।

जब से हाथ समेटे अकबर के दरबार में एक पेशकार थे बलीराम । बादशाह से अपमानित होने पर उन्होंने वैराग्य की ठानी और घर का सारा माल असबाब गरीबों को दे दिया । स्वयं जमुना की रेती में लंबे पैर पसार कर सोने लगे । बादशाह ने बुलाया, तो वे आए नहीं । अकबर स्वयं ही उन्हें मनाने पहुँचे । कुशल प्रश्न के बाद अकबर ने पूछा–"पैर पसारना कब से शुरू हुआ !" बलीराम ने कहा–"जिस दिन से हाथ समेटे, उसी दिन से पैरों का फैलना आरंभ हो गया ।" प्रौढ़ों की वृत्ति यही होनी चाहिए ।

प्रव्रज्यायां हि योग्यत्वं सुविधाऽपि च विद्यते ।
येषां ते तीर्थयात्रार्थं यान्तु धर्मोपदिष्टये ॥ ५२॥
प्रत्येकेन जनेनात्र साध्यः सम्पर्क उत्तमः ।
अनुन्नतेषु गन्तव्यं क्षेत्रेष्वेवं क्रमान्नरैः ॥ ५३॥
रात्रौ यत्र विरामः स्यात्तत्र कुर्यात्कथामपि ।
कीर्तनं चोपदेशं सत्संगं यत्नेन पुण्यदम् ॥ ५४॥
तीर्थयात्रा तु सैवास्ति योजनाबद्धरूपतः ।
वातावृतिर्भवेद् यत्र निर्मिता धार्मिकी तथा ॥ ५५॥
सदाशयस्य यत्र स्यात्पक्षगं लोकमानसम् ।
पोषणं सत्प्रवृत्तीनां भवेद् यत्र निरन्तरम् ॥ ५६॥
तीर्थयात्रा सुरूपे च प्रव्रज्यारतता त्वियम् ।
वर्तते वानप्रस्थस्य श्रेयोदा साधना शुभा ॥ ५७॥

भावार्थ–जिनकी योग्यता एवं सुविधा प्रव्रज्या के उपयुक्त हो, वे धर्म प्रचार की तीर्थयात्रा पर निकलें, जन-जन से संपर्क साधें । पिछड़े क्षेत्रों में परिभ्रमण करें । जहाँ रात्रि विराम हो, वहाँ कथा-कीर्तन, प्रवचन-सत्संग का आयोजन करें । धर्म धारणा का वातावरण उभारते, लोकमानस को सदाशयता का पक्षधर बनाते, सत्प्रवृत्तियों का परिपोषण करते, योजनाबद्ध यात्रा पर निकलने को तीर्थयात्रा कहते हैं । तीर्थयात्रा के रूप में प्रव्रज्यारत रहना वानप्रस्थ की परम श्रेयस्कर साधना है ॥ ५२-५७॥

व्याख्या–गृहस्थ धर्म से निवृत्ति के बाद वातावरण परिवर्तन का माहात्म्य ऋषि ने अभी-अभी समझाया है । अब वे कहते हैं कि वानप्रस्थों की धर्मधारणा का जन-जन तक विस्तार करने के लिए तीर्थयात्रा पर निकलना चाहिए । यह मात्र पर्यटन-कौतुक के लिए न हो, अपितु सोद्देश्य हो । एक बार आरण्यक में शिक्षण प्राप्त कर लेने के बाद व्यावहारिक सेवा धर्म की साधना समाज क्षेत्र में करने हेतु सभी को उद्यत रहना चाहिए । तीर्थयात्रा क्रमबद्ध हो, पहले से ही उसके गंतव्यों, कार्यक्रमों एवं उद्देश्यों का

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

योजनाबद्ध निर्धारण कर लिया गया हो । जन-जन में श्रेष्ठता की भावनाएँ भरने के समकक्ष और कोई बड़ी सेवा-साधना नहीं है । एक और बात जो विशेष रूप से यहाँ बताई जा रही है, वह यह कि जहाँ तक संभव हो ऐसी सेवा-साधना पिछड़े क्षेत्रों में संपन्न की जाय । जहाँ ज्ञान का प्रकाश नहीं पहुँचा, दुष्प्रवृत्तियाँ एवं अभाव ही जहाँ संव्याप्त है, वहाँ अपनी सेवाएँ देना सार्थक है ।

देहात अभी भी नवयुग के प्रकाश से वंचित हैं । वहाँ तक पहुँचने में सेवाभावी वानप्रस्थ तीर्थयात्रियों की धर्म प्रचार टोलियाँ ही समर्थ हो सकती हैं ।

महापुरुषों की तीर्थयात्रा प्रव्रज्या

तीर्थयात्रा के अभिनव प्रयोग समय-समय पर होते रहे हैं । कितने ही ऋषि-मुनि अपनी छात्र-मंडली समेत पदयात्रा करते रहते थे और विद्यार्थियों को पढ़ाते हुए उनके अनुभव की वृद्धि तथा लोक मानस के निर्माण का तीन गुना पुण्य प्रयोजन सिद्ध करते थे । दार्शनिक सुकरात समय-समय पर अपनी शिष्य मंडली समेत लंबी पद-यात्राओं पर निकलते थे । भगवान बुद्ध के स्थापित विहारों में तीर्थयात्रा की ही शिक्षा दी जाती थी । उसमें विश्वव्यापी धर्म प्रचार के उद्देश्य से ही भिक्षु और भिक्षुणी भर्ती किए जाते थे और जब वे चरित्र, ज्ञान की दृष्टि से प्रखर एवं जिस क्षेत्र में जाना है, वहाँ की भाषा, परिस्थिति से अवगत हो जाते थे, तो फिर सुदूर प्रदेशों में धर्म प्रचार के लिए भेज दिया जाता था । इतिहास साक्षी है कि बौद्ध प्रचारक एशिया के कोने-कोने में छा गए । उन्होंने प्राणघातक रेगिस्तानों, हिमाच्छादित पर्वतों, दलदलों, सघन वनों, उफनते नदी-नालों की, समुद्री अवरोधों की चिंता न की और अपने संकल्पों एवं पुरुषार्थ के बल पर पिछड़े क्षेत्रों में डेरे डालकर प्रगतिशीलता का आलोक वहाँ फैलाया । भगवान बुद्ध स्वयं आजीवन पर्यटक बनकर रहे, उनके विराम स्वल्पकालीन ही रहते थे । भगवान महावीर ने भी इसी परंपरा को निबाहा । मध्यकालीन संतों ने भी अपनी मंडलियों समेत धर्म प्रचार की यात्राओं में ही जीवन का अधिकांश समय बिताया था, संत का अर्थ ही पर्यटक होता था । आश्रम व्यवस्था बनाकर रहने वाले तो ब्राह्मण कहलाते थे ।

महात्मा गांधी की डांडी नमक यात्रा और नोआखाली की शांति यात्रा सर्वविदित है । संत विनोबा की भूदान यात्रा के सत्परिणामों से कौन परिचित नहीं है । इन दूरगामी परिणामों को प्राचीनकाल में भली प्रकार समझा गया था और अपने धर्मकृत्यों में धर्म प्रचार की तीर्थयात्रा को प्रमुख स्थान देने के लिए प्रत्येक धर्मप्रेमी से कहा गया था । जो असमर्थ रहते थे, वे भी उच्च आदर्श का स्मरण करने के लिए प्रतीक रूप में नदियों, पर्वतों, वृक्षों, देवालयों की परिक्रमा करके किसी प्रकार मन की साध पूरी करते थे ।

रामराज्य में जिसे हम आदर्श समाज का, भारत का प्रतीक मानते हैं, उस समय आवश्यकतानुसार अंशकालीन वानप्रस्थ की परंपरा प्रचलित थी । स्वयं भगवान श्रीराम जब बनवास के लिए गए थे, तो उन्होंने लक्ष्मण सहित विधिवत् वानप्रस्थ ग्रहण किया था । वाल्मीकीय रामायण में उल्लेख है –

ततो बैखानसं मार्गमास्थितः सहलक्ष्मणः । व्रतमादिष्टवान् रामः सहायं गुहमब्रवीत् ॥

तब, श्रीराम ने लक्ष्मण सहित वानप्रस्थ ग्रहण करके ब्रह्मचर्य व्रत लेकर अपने सहायक गुह से कहा ।

स्पष्ट है कि वनवास से लौटने के बाद श्रीराम-लक्ष्मण ने पुनः गृहस्थ आश्रम में प्रवेश कर लिया था । राज्य संचालन एवं संतान पैदा करने के कार्य उसके बाद गृहस्थ की मर्यादानुसार ही करते रहे ।

तीर्थयात्रा प्रव्रज्या में धर्म प्रचार का उदात्त दृष्टिकोण, लोकमंगल की कामना और जनमानस के परिष्कार का प्रयोजन तो पूरा होता ही है, साथ ही प्रत्येक तीर्थयात्री को (१) स्वास्थ्य सुधार, (२) ज्ञान-अभिवर्धन, (३) परिचय क्षेत्र का विस्तार, (४) अनुभव-विचार एवं (५) उदात्त दृष्टिकोण के पाँच लाभ निजी रूप से मिलते हैं ।

थाईलैंड की जीवंत प्रव्रज्या-परंपरा

थाईलैंड संसार का एकमात्र देश है, जहाँ बौद्धधर्म-राजधर्म भी है । अन्य देशों ने तो भारत की परंपरागत संस्कृति इन थोड़े ही दिनों में गँवा दी, पर यह अकेला देश ऐसा है, जिसमें वर्तमान भारत की परिधि से आगे जाकर यह देखा जा सकता है कि प्राचीनकाल में भारत की रीति-नीति का क्या स्वरूप था ? वहाँ जो देखने को इन दिनों भी मिलता है, उससे यह पता लगाया जा सकता है कि भारत किन मान्यताओं और आदर्शों के कारण उन्नति के उच्च स्तर पर पहुँचा था और शांति का संदेश सुदूर क्षेत्रों तक पहुँचाने में किन परंपराओं के कारण सफल हुआ ?

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

थाईलैंड में धर्म-आस्था अन्य देशों की तरह डगमगाई नहीं है । वहाँ के नागरिकों को अभी भी प्राचीनकाल के कर्मनिष्ठ और कर्तव्यपरायण लोगों की तरह जीवनयापन करते हुए देखा जा सकता है । जनता अपनी धर्म-श्रद्धा की अभिव्यक्ति एक बार अनिवार्य रूप से भिक्षु-दीक्षा लेकर व्यक्त करती है । वहाँ समयगत भिक्षु दीक्षा लेने की प्रथा है । थोड़े समय के लिए लोग भिक्षु बनते हैं और फिर अपने सामान्य सांसारिक जीवन में लौट जाते हैं । थाईलैंड के प्रत्येक बौद्धधर्मानुयायी का विश्वास है कि 'एक बार भिक्षु बने बिना उसकी सद्गति नहीं हो सती । उसके बिना उसकी धार्मिकता अधूरी ही रहेगी ।' इस आस्था के कारण देर-सबेर में हर सुयोग्य नागरिक एक बार कुछ समय के लिए साधु अवश्य बनता है । घर छोड़कर उतने समय विहार में निवास करता है । साधना तथा अध्ययन में निरत रहता है और संघ द्वारा निर्धारित सेवा-कार्य में सच्चे मन से पूरा परिश्रम करता है । बुद्ध संघ इन भिक्षुओं को व्यवस्थित, नियंत्रित एवं परिष्कृत कर सृजनात्मक कार्यों में नियोजित करता है । सीमित समय के लिए साधु दीक्षा लेने वाली प्रव्रज्या पद्धति उस छोटे से देश के लिए बहुत अधिक उपयोगी सिद्ध हुई है । यही कारण है कि इस देश को अपने ढंग का अत्यंत महत्वपूर्ण प्रगति करने का अवसर मिला है । इसी तरह कंबोडिया में भी किसी समय वहाँ के नागरिकों को अपने राष्ट्रीय उत्थान एवं व्यक्तिगत उत्कर्ष के लिए सामयिक या आंशिक प्रव्रज्या लेना अनिवार्य था । यह परंपरा छिटपुट रूप में वहाँ अब भी विद्यमान है ।

शाप-वरदान बना

बालक नारद जी का मन पूजा-पाठ में न लगता था । वे अपने आस-पास की समस्याओं को समझने और उन्हें हल करने में रुचि लेते थे । विष्णु जब-जब आते, तभी नारद पूजास्थली से गायब मिलते । विष्णु ने शाप दिया-"तुझे ढाई घड़ी से अधिक एक जगह ठहरने की सुविधा न मिलेगी, नारद जी ने इस शाप को वरदान माना और निरंतर परिभ्रमण से असंख्यों को सत्परामर्श देकर उनका कल्याण किया ।

पूरा परिवार परिव्राजक

मेधा और प्रतिभा का उपयोग लोक कल्याण में होना चाहिए । यह सिद्धांत जैसे-जैसे हृदय में गहरा घुसता गया, वैसे ही महापंडित कुमरायण ने मिथिला के दीवान का पद छोड़कर धर्म प्रचार के लिए परिभ्रमण करने का निश्चय किया । बालक कुमारजीव को भी उन्होंने यही दीक्षा दी । काश्मीर में कुमरायण का स्वर्गवास हो गया । उनकी पत्नी ने बौद्ध भिक्षुणी की दीक्षा ले ली और बालक कुमारजीव की शिक्षा का प्रबंध करती हुई उसी क्षेत्र में प्रचार का कार्य करती रहीं । कुमारजीव जैसे ही समर्थ हुए, वैसे ही चीन चले गए । वहाँ उनने अपने और साथी बनाए और बौद्ध धर्म ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद कर डाला । साथ ही भ्रमण करके प्रचार करने लगे । उनके प्रयत्न से स्थिति ऐसी बन गई थी, मानो बौद्ध धर्म का केन्द्र भारत न होकर चीन ही हो । राजाओं की लड़ाई में कुमारजीव नजरबंद भी हुए, पर जल्दी ही छोड़ दिए गए । बौद्ध मठों का निर्माण, धर्म शास्त्रों का अनुवाद तथा प्रचारकों की एक बड़ी सेना का गठन करने के साथ-साथ लाखों शिष्य बौद्ध धर्म में दीक्षित हुए । इस सफलता में प्रधानतया कुमारजीव की ही भूमिका थी ।

अंधों की तीर्थयात्रा

श्रवण कुमार के माता-पिता अंधे थे, पर उनकी इच्छा तीर्थयात्रा की थी । श्रवण कुमार ने आश्चर्य से पूछा-"जब आप लोगों को दीखता ही नहीं और देव दर्शन कर नहीं सकेंगे, तो ऐसी यात्रा से क्या लाभ ?" पिता ने कहा-"तात, तीर्थयात्रा का उद्देश्य देव दर्शन ही नहीं, वरन् विप्रजनों का घर-घर, गाँव-गाँव जाकर जन-संपर्क साधना और धर्मोपदेश करना है । यह कार्य हम लोग बिना नेत्रों के भी कर सकते हैं । इससे इन दिनों जो निरर्थक समय बीतता है, उसकी सार्थकता बन पड़ेगी ।" श्रवण कुमार को इस इच्छा की उपयोगिता समझ में आ गई और आवश्यक साधन-सामग्री कंधे पर रखकर तीनों ही उस धर्म प्रचार की पद यात्रा में निकल पड़े ।

सामर्थ्य को जीवित रखो-औरों के काम आओ

वयोवृद्ध कथाकार ईसप सदैव भ्रमण करते रहते थे । एक एथेन्सवासी विद्वान ने गंदी बस्तियों में बच्चों के झुंड के बीच उन्हें साथ खेलते और खिलखिलाकर हँसते हुए देखा । इस पर आश्चर्य व्यक्त करते हुए उस विद्वान ने पूछा-"ऐसा करने से तो आपका रुतबा गिरता है । आपको तो कहीं बैठकर साहित्य साधना करनी चाहिए ।" ईसप ने सीधा उत्तर तो न दिया, पर पास में पड़े एक खुले धनुष को दिखाते हुए कहा-"बताओ तो, इसकी डोरी क्यों खुली छोड़ी गई है ?"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विद्वान ने कहा–''हर समय कसा रहने से धनुष का लचीलापन चला जाएगा और वह फिर तीर फेंकने लायक न रह सकेगा ।'' समाधान समझाते हुए ईसप ने कहा–''मनुष्य हर समय तनावग्रस्त, व्यस्त और भारी रहे, तो वह निकम्मा हो जाएगा । घूमने-फिरने, हँसने-हँसाने का ढीलापन सामर्थ्य को जीवित रखने के लिए आवश्यक है । क्यों न उसके साथ ही सत्प्रवृत्ति संवर्धन को, पिछड़ों को आगे बढ़ाने के कार्य को जोड़ दिया जाय ।''

वेश्याएँ साध्वी बनीं

काहिरा की एक गंदी गली में संत सुलेमान परिव्रज्या करते हुए जा पहुँचे । उसमें वेश्याएँ भर रहा करती थीं । वेश्याओं ने समझा, संत वासनापूर्ति के लिए आए हैं, सो एक ने उन्हें इशारे से बुला लिया । संत निःसंकोच चले गए । दोनों ने एक दूसरे का परिचय जाना । संत की आँखें झरने लगीं । हाय रे, भगवान, तेरी ऐसी सुंदर कृतियाँ कितनी अभागी बन गईं । असुंदर कृत्य कैसे करने लगीं ? वेश्या पर इस पवित्रता और करुणा का असाधारण प्रभाव पड़ा । वह साध्वी बन गई । देखा-देखी दूसरी भी उसी रास्ते पर चली और वेश्या समुदाय के प्रयत्नों से उस क्षेत्र में कितनी ही सत्प्रवृत्तियाँ चल पड़ीं । एक सुंदर उद्यान, मार्ग, मठ एवं नारी-निकेतन का निर्माण उन्हीं की दानराशि से हुआ । पिछड़ों को ऊँचा उठाना ही सबसे बड़ा परमार्थ है ।

कस्मादपि च हेतोस्तु येषां वासोऽधिकं नहि ।
बहिः सम्भव एतेऽपि निवासं स्वं तु सद्मनि ॥ ५८ ॥
स्वीकुर्वन्तु कुटुम्बस्य सामान्यं हि निरीक्षणम् ।
दायित्वस्य धिया चात्र परिवारव्यवस्थितिम् ॥ ५९ ॥
कार्यं स्वयं प्रमुखं ते च लोकमङ्गलमेव तु ।
मान्यन्तां तेषु कार्येषु रुचिं गृह्णन्तु चाऽधिकाम् ॥ ६० ॥
अधिकं समयं तत्र समीपतरवर्तिषु ।
क्षेत्रेषु वाहयन्त्येवं सदैवैभिर्निमित्तकैः ॥ ६१ ॥
कार्यक्रमेषु तत्रैवंविधेष्वेव तथाऽऽयुषः ।
उत्तरार्धं जीवनस्य व्ययीकर्त्तव्यमुत्तमैः ॥ ६२ ॥

भावार्थ–जिनका कारणवश बाहर रह सकना संभव न हो, वे निवास तो घर पर ही रखें, पर उत्तरदायित्व, परिवार की देखभाल और व्यवस्था भर को सँभालें । अपना प्रमुख कार्य तो लोकमंगल को समझें । इन कार्यों में विशेष रुचि लें और समय का बड़ा अंश इस निमित्त समीपवर्ती क्षेत्रों में ही लगाते रहें । ऐसे ही कार्यक्रमों में संलग्न रहकर उत्तम पुरुषों को अपने जीवन का उत्तरार्द्ध बिताना चाहिए ॥ ५८–६२ ॥

व्याख्या–अपनी जिम्मेदारियों के पूरा होने के बाद अनिवार्य नहीं कि सभी घर छोड़कर चल दें एवं तीर्थाटन कर जन-जन तक विचारधारा का प्रसार करें । जिनसे यह संभव हो, अवश्य करें । पर जन कल्याण के कार्य घर रहकर भी संभव है । सारा जीवन उपार्जन में बिता दिया । अब शेष बचे समय को नष्ट होने से बचाना चाहिए एवं जहाँ तक संभव हो, स्वयं को उस पुण्य-परमार्थ में नियोजित कर देना चाहिए, जिससे अपने आस-पास का परिकर ही लाभान्वित होता रहे ।

पुष्प की भाव गरिमा

महर्षि जावालि ने उस पर्वत पर ब्रह्म कमल खिला देखा । शोभा और सुगंध पर मुग्ध होकर ऋषि सोचने लगे कि इसे शिवजी के चरणों का सौभाग्य प्रदान किया जाय । ऋषि को समीप आया देख, पुष्प प्रसन्न तो हुआ, पर साथ ही आश्चर्य व्यक्त करते हुए आगमन का कष्ट उठाने का कारण भी पूछा । जावालि बोले–''तुम्हें शिव-सामीप्य का श्रेय देने की इच्छा हुई, सो अनुग्रह के लिए तोड़ने आ पहुँचा ।'' पुष्प की प्रसन्नता खिन्नता में बदल गई । उदासी का कारण महर्षि ने पूछा, तो फूल ने कहा–''शिव सामीप्य का लोभ संवरण न कर सकने वाले कम नहीं । फिर देवता को पुष्प जैसी तुच्छ वस्तु की न तो कमी है और न इच्छा । ऐसी दशा में घाटे में पड़ने से, तितलियों-मधुमक्खियों जैसे छोटे कृमि-कीटकों की कुछ सहायता करता रहता, तो क्या बुरा था ? आखिर उस क्षेत्र को खाद की भी तो आवश्यकता थी, जहाँ से उगा और बढ़ा ।'' ऋषि ने पुष्प की भाव-गरिमा को समझा और वे उसे यथास्थान छोड़कर वापस लौट आए ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हमारा तो यही भजन है

महाराष्ट्र के पूना जिले में एक संन्यासी हुए हैं–स्वामी परमानंद । वे माला तो रात में जपते थे, दिन में खुरपी झोले में डालकर निकलते थे और अपने संपर्क क्षेत्र में पेड़-पौधे लगाते थे । फलस्वरूप वह सारा क्षेत्र हरा-भरा बन गया । वे कहते थे–हमारा यही भजन है, फलस्वरूप स्वर्ग जैसी हरियाली प्रत्यक्ष आँखों के सामने दीखती है ।

उदारता की प्रतिमूर्ति विद्यासागर

ईश्वरचंद्र विद्यासागर प्रतिभा के ही नहीं करुणा के भी धनी थे । उनके जीवन का कोई दिन ऐसा नहीं बीता, जिससे मानवी गरिमा के उपयुक्त संस्मरण जुड़े हुए न हों । एक दिन उनने सड़क पर पड़ी एक बुढ़िया को देखा, जो मल-मूत्र से सन रही थी । बीमारी से कराह रही थी । विद्यासागर उसे कंधे पर रखकर घर ले आए । इलाज किया । अच्छी हो गई, तो उस अनाथ का भरण-पोषण भी जीवन भर स्वयं ही करते रहे । विद्यासागर ने कोई तीर्थयात्रा न की, पर उससे भी हजारों गुना पुण्यफल प्राप्त किया । वे उदारता के प्रतिमूर्ति थे । उनने सेवा-सहानुभूति को एक क्षण के लिए भी अपने से पृथक् न होने दिया । इन्हीं उदात्त भावनाओं से प्रेरित होकर उनने राजा राममोहन राय का मार्ग अपनाया और सती प्रथा बंद कराने में, विधवा विवाह प्रचलित कराने में प्राण-पण से संघर्ष किया । उस क्षेत्र के ब्राह्मणों ने उन्हें जाति बहिष्कृत कर दिया था, तो भी वे अकेले सत्य के समर्थक होने के नाते अपने में हजार हाथियों का बल अनुभव करते रहे और रूढ़िवादियों से करारी टक्कर ली ।

दावतों का भोजन गरीबों को

नित्य सैकड़ों भूखों को भोजन देने वाले डॉ० मेहता बंबई भर में प्रसिद्ध थे । वे दावतों का पता लगाते रहते थे और जूठन बटोरने स्वयं अपनी गाड़ी लेकर जा पहुँचते थे । खराब जूठन जानवरों को खिला देते और जो साफ-सुथरी होती, उसे अपंग-भिखारियों को खिला देते । इस प्रकार हर दिन सैकड़ों का पेट भरते ।

माधव राव खत्रे

माधव राव खत्रे तिलक और आगरकर के सहपाठी थे । उन लोगों ने निश्चय किया कि अपनी प्रतिभा को पेट की खातिर सरकार के हाथों नहीं बेचेंगे और जैसे बनेगा पेट भरते हुए जन जागरण के कार्य में लगे रहेंगे । माधव राव (पेण्ड्रा) बिलासपुर के निवासी थे । उन्हें राजकुमारों का ट्यूटर नियुक्त किया गया । थोड़े ही दिन में उनने बच्चों को हर दृष्टि से सुयोग्य बना दिया । राजा साहब ने उन्हें ऊँचा सरकारी पद दिया, पर उनने लेने से स्पष्ट मना कर दिया और ज्यों-त्यों करके गुजर चलाते रहे । उनने 'छत्तीसगढ़ मित्र' निकाले । इसके बाद नागपुर जाकर 'देश-सेवक' की स्थापना की । पत्रों के अतिरिक्त वे ऐसे साहित्य सृजन में भी लगे रहे, जो जन-जीवन को ऊँचा उठा सकें । कोल्हापुर की ग्रंथमाला के लिए भी उनने कितनी ही पुस्तकें लिखीं और अनुवाद कीं । उन दिनों हिंदी में आदर्शवादी साहित्य का एक प्रकार से अभाव ही था । खत्रे जी ने उस अभाव की पूर्ति के लिए अपना समूचा जीवन ही खपा दिया । लालच और दबावों का वे सामना ही करते रहे । उनकी साहित्य साधना ने समय की आवश्यकता को बहुत कुछ हद तक पूरा किया । उच्च पद की उपेक्षा कर लोक मंगल में प्रवृत्त होकर उन्होंने बहुत कुछ पाया ।

विगतार्धायुषा पुसां वर्गेणैवं न वंशजाः ।
कुटुम्बत्वेन विज्ञेयाः केवलं परमत्र तैः ॥ ६३॥
आत्मीयताऽपि वृद्धिः सा कर्तव्या क्रमशश्च ते ।
प्रतिवेशिन एवं च सर्वान् परिचिताँस्तथा ॥ ६४॥
अज्ञातानपि मन्येरन् परिवारगतानिव ।
अल्पेभ्यो वंशजेभ्यो न जीवनं यापयन्तु ते ॥ ६५॥
समयस्य बृहद्भागं जनान् सर्वान् कुटुम्बिनः ।
विशालक्षेत्रगान् मत्वा तेषां तत्र समाहितौ ॥ ६६॥
समस्यानां तथा तेषामभ्युत्थानविधावपि ।
व्ययं कुर्युर्निषिद्धात्र पश्चिमायुषि सन्ततिः ॥ ६७॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विचारपरिवारे तु वंशवृद्धिः सुसम्भवा ।
मता वसन् कुटुम्बे च तत्र संरक्षको भवेत् ॥ ६८॥
आधिपत्यं स्थापयेन्न सन्मार्गं शिक्षयेदपि ।
खिन्नतां न व्रजेत्तत्रोपेक्षिते शासने निजे ॥ ६९॥
यथाऽन्येषु जनेष्वत्र मन्यतेऽप्यनुशासनम् ।
बहवो नाऽपि चाऽन्ये तु तत्र नो खेदसंस्थितिः ॥ ७०॥
जायते तद्वदेवात्र मान्यता हि कुटुम्बजे ।
सम्बन्धे पुरुषैः सर्वैर्ज्ञातव्या सुखदायिनी ॥ ७१॥

भावार्थ–अधेड़ व्यक्ति मात्र अपने वंशधरों को ही कुटुंबी न समझें, वरन् आत्मीयता के क्षेत्र का विस्तार करें । पड़ोसी, संबंधी एवं परिचितों, अपरिचितों को भी कुटुंबवत् मानें । थोड़े से कुटुंबियों के लिए ही न मरते–खपते रहें । समय का एक बड़ा भाग विशाल क्षेत्र में फैले हुए जन–समुदाय को अपना कुटुंब मानते हुए, उनके समाधान एवं अभ्युत्थान के लिए लगाते रहें । जीवन के उत्तरार्द्ध में संतानोत्पादन वर्जित है । विचार परिवार के रूप में वंशवृद्धि करते रहने की छूट है । परिवार में रहते हुए भी अपनी स्थिति उस परिकर के संरक्षक जैसी रखें । आधिपत्य न जमाएँ । सन्मार्ग की शिक्षा तो देते रहें, पर न मानने पर मन को खिन्न न करें । जिस प्रकार अन्य लोगों में बहुत से परामर्श मानते हैं, बहुत से नहीं मानते, तो भी खेद नहीं होता । यही सुखदायी मान्यता घर–परिवार के संबंध में भी रखें ॥ ६३–७१॥

व्याख्या–मात्र अपने परिवार के, जाति-वंश के व्यक्तियों को अपना समीपवर्ती मानना, इन्हीं के प्रति अपनी निष्ठा-सद्भावना होना, व्यक्ति का सीमित परिधि में समाया हुआ, मोहभाव भर है । वस्तुतः हम निखिल विश्व के, विराट् परिवार के एक अंग हैं । हम सभी के उत्थान आत्मिक प्रगति के लिए उत्तरदायी हैं । **"उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्"** की शास्त्र उक्ति पर चलते हुए, हमें अपने विचार परिकर का निरंतर विस्तार करते रहना चाहिए । जैसे-जैसे हृदय में उदार आत्मीयता का विस्तार होगा, आयु के ढलते जाने पर भी, अपने परिवार के सदस्यों के अपने-अपने दायित्वों के कारण सुदूर स्थानों पर होते रहने पर भी परिवार छोटा नहीं लगेगा । स्वार्थ-परमार्थ में परिणत होगा एवं सारा विश्व, सारा समुदाय अपना परिवार एवं कार्यक्षेत्र प्रतीत होने लगेगा ।

एक बात वृद्धजनों के लिए और भी ध्यान में रखने योग्य है । वह यह है कि स्वयं को परिवार के ट्रस्टी के रूप में एक संरक्षक, उत्तरदायी सदस्य मानना, न कि उसका मालिक स्वयं को समझ बैठना । सत्परामर्श देते रहना उनका पुनीत कर्तव्य है, किन्तु कोई उस पर न चले, तो इससे निराश होने की आवश्यकता नहीं । यह मान्यता विकसित होने पर ही एक लोकसेवी के रूप में विकास-अभ्युदय संभव है ।

दरिद्रनारायण

दीनबंधु एण्ड्रूज प्रारंभिक जीवन में पादरी थे । उनसे किसी भारतीय साधु ने पूछा–"आपने भगवान देखा है ।" उनने कहा–"मैंने देखा है । आप चाहें, तो आपको भी दिखा सकता हूँ ।" वे उन्हें एक हरिजन मुहल्ले में ले गए और एक वृद्ध मेहतर को दिखाया, जो क्षयग्रस्त नर कंकाल बेटे की सेवा में लगा रहता था और रोटी कमाने के लिए सफाई के काम पर भी जाता था । ऐण्ड्रूज ने कहा–"देखा ! यही भगवान है । इसका नाम दरिद्र नारायण है ।" बापू ने उनका नाम सही ही दीनबंधु रखा था ।

पुण्यात्माओं में वरिष्ठ

विधाता ने जय-विजय को धरती पर यह तलाश करने के लिए भेजा कि उस वर्ष किसे सम्मानपूर्वक प्रवेश दिया जाय । दोनों दूत सर्वत्र घूमते फिरे और सज्जनों, भक्तजनों का लेखा-जोखा नोट करते रहे । इस बीच उन्होंने एक अंधा वृद्धजन देखा, जो रास्ते के किनारे दीपक जलाए बैठा था । देवदूतों ने पूछा–"वृद्ध ! घर से दूर, आँखें न होते हुए भी, दीपक जलाना और रात भर जागना, कुछ समझ में नहीं आता ।" वृद्ध ने कहा–"जो किया जाय, वह अपने लिए हो, यह क्या जरूरी है ? संसार के सब लोग भी तो अपने ही हैं । रात्रि को निकलने वालों को ठोकर लगने से बचाकर मुझे संतोष और आनंद मिलता है । स्वार्थरत

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहने की तुलना में यह लाभ क्या कम है ?'' देवदूत पर्यवेक्षण करके वापस लौटे और सारे विवरण सुनाए, तो सर्वश्रेष्ठ वह अंधा ही निकला । देवता अपने कंधों पर पालकी से उसे स्वर्ग लाए और पुण्यात्माओं में मूर्धन्य वरिष्ठों को दिए जाने वाले स्थान पर उसे रखा गया ।

सारा समाज ही भगवान्

कबीर सिद्ध पुरुष की तरह प्रख्यात हो गए । दूर-दूर से जिज्ञासु लोग आते, तब भी वे पहले की तरह कपड़ा बुनते रहते और साथ-साथ सत्संग चलाते । शिष्यों में से एक ने पूछा–''आप जब तक साधरण थे, तब तक कपड़ा बुनना ठीक था । पर अब जबकि आप सिद्ध पुरुष हो गए, तो आप कपड़ा क्यों बुनते हो ?'' कबीर ने सरल भाव से उत्तर दिया–''पहले मैं पेट पालने के लिए बुनता था, पर अब मैं जन-समाज में समाए हुए भगवान का तन ढकने और अपना मनोयोग साधने के लिए बुनता हूँ ।'' कार्य वही रहने पर भी दृष्टिकोण की भिन्नता उत्पन्न होने वाले अंतर को समझने से शिष्य का समाधान हो गया ।

मेरा दंड दूसरों को क्यों ?

जब उदार आत्मीयता अंत:करण में विकसित होती है, तो सभी जीवधारी अपने लगने लगते हैं । गांधी जी के पास वर्धा सेवाग्राम में एक कुष्ठ रोगी रहते थे–परचुरे शास्त्री । गांधी जी उनकी मरहम-पट्टी स्वयं करते । एक दिन कोई गुणी आए । उनने कुष्ठ रोग की दवा बताई – काला साँप हाँड़ी में बंद करके आँवे पर पकाया जाय । उसकी भस्म खाते रहने से रोग अच्छा हो जाएगा । शास्त्री जी ने नुस्खे के बारे में सुना, तो उत्तर दिया–''इससे तो अधिक अच्छा यह है कि मुझे ही घड़े में बंद करके जला दिया जाय । साँप ने क्या अपराध किया है, जो उसे ऐसा दंड मिले ?''

ससीम से असीम की ओर

बड़ौदा दीवान पद पर काम करते हुए, अरविंद घोष को ७५० रुपये वेतन मिलते थे । कलकत्ता में राष्ट्रीय विद्यालय खुला और उसके लिए ७५ रुपये मासिक का प्रिंसिपल योग्यता का व्यक्ति चाहिए था । घोष बाबू ने ७५० रुपयों की सीमित परिकर वाली नौकरी छोड़ दी और ७५ रुपयों के प्रिंसिपल पद पर चले गए, क्योंकि वे एक बड़े परिवार को ज्ञान लाभ दे सकते थे । नेशनल कॉलेज ने कितने ही कर्मठ राष्ट्रीय कार्यकर्ता निकाले । यही घोषबाबू योगिराज अरविंद बनकर बाद में पांडिचेरी जाकर बस गए एवं विराट विश्व की सेवा करते रहे ।

मुझे रोको मत, बहने दो

एक छोटी नदी तालाब के किनारे से बह रही थी । तालाब बरसात भर भरा रहता, इसके बाद सूख जाता । नदी थी तो छोटी, पर उसका स्रोत हिमालय था, आगे चलकर गंगा में मिलती और विशाल सागर में विलीन हो जाती । तालाब नदी को समझाता, इतनी लंबी और कष्टसाध्य यात्रा क्यों करती हो ? मेरा घर क्यों नहीं बसा लेती ? हम दोनों मिलकर रहें, तो क्या हर्ज है ? नदी ने कहा–''तुम तक सीमित होने के बाद मैं अन्यत्र कहीं न जा सकूँगी और किसी के काम न आ सकूँगी ? इसलिए मुझे रोको मत । प्रवाहित होते रहने में मेरा और संसार का कल्याण है ।''

वंशजा अर्थदृष्ट्या चेत् स्वावलम्बं गतास्तदा ।
सदमः प्रयोजनेभ्यस्तु सम्पदा दीयतां स्वयम् ॥ ७२॥
अर्जितं यत्समं तच्च प्राप्नुवन्तु कुटुम्बगाः ।
आवश्यकं न चैतत्तु परं ये स्वाश्रिता नहि ॥ ७३॥
अधिकारिण एते हि स्वाभिभावकसम्पदः ।
विराड्ब्रह्मस्वरूपाय समाजाय यथा नृणाम् ॥ ७४॥
कृतं जीवनदानं तत् कालदानं भवेदिह ।
तथा कुटुम्बदायित्वाऽवशिष्टं लोकभूतये ॥ ७५॥
परम्परेयमेवास्ति धार्मिकानां विवेकिनाम् ।
पुण्यदा येन भूरेषा देवभूमिर्निगद्यते ॥ ७६॥

भावार्थ–वंशजीवी यदि आर्थिक दृष्टि से स्वावलंबी हो गए हैं, तो अपनी संपदा सत्प्रयोजनों में लगा दें । जो कमाया जाय, वह सब घर वालों को ही मिले, यह आवश्यक नहीं । जो स्वावलंबी नहीं, मात्र वे ही

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अभिभावकों के उपार्जन को उपलब्ध करने के अधिकारी हो सकते हैं । जिस प्रकार विराट् ब्रह्म जन समाज को समयदान–जीवनदान दिया गया है, वैसे ही पारिवारिक उत्तरदायित्व निर्वाह के उपरांत बचा हुआ धन भी लोक मंगल के लिए समर्पित होना चाहिए । यही विचारशील धर्म परायणों की पुण्य परंपरा है, जिससे यह भूमि सदा देवभूमि कही गयी है ॥ ७२–७६॥

व्याख्या–घर वालों तक ही अपने कुटुंब की सीमा मानने वाले अपना स्नेह-दुलार ही नहीं, धन-संपदा का अधिकार भी उन्हीं तक सीमित मानते हैं । अपनी संतानों को स्वावलंबन का शिक्षण दिया जाय, वे उत्तराधिकार में मिलने वाली पूँजी पर निर्भर न रहें । उन्हें यह संस्कार दिए जाँय कि जो धन समाज के एक-एक घटक के सहयोग से जुटाया गया है, उसका सुनियोजन यथा संभव समाज सेवा में ही हो । विवेक यही कहता है कि जो भी कुछ धन ढलती आयु वाले पुरुषों-स्त्रियों के पास शेष बचे, उसे वे अपने विराट् परिवार विश्ववसुधा को ऊँचा उठाने में लगा दें ।

कर्तव्य का बंधन

सबसे प्रथम एवं सर्वोपरि धर्म है–अपनी संतान को स्वावलंबी बनाना । आद्रिक मुनि ने बसंतपुर के एक विद्वान की कन्या से इस शर्त पर विवाह किया कि जब तक पुत्र उत्पन्न न होगा, तब तक वे गृहस्थ रहेंगे । बाद में संन्यास ले लेंगे । पुत्र उत्पन्न हुआ । माता ने अपने गुजारे के लिए सूत कातने का अभ्यास किया । एक दिन पुत्र ने माता के चरखे का सूत लेकर पिता की बीस परिक्रमा की और कच्चे सूत से बाँध दिया । साथ ही कहा–"मुझे स्वावलंबी बनाने का कर्तव्यपालन किए बिना कहीं नहीं जा सकते ।" आद्रिक मुनि ने सूत के कच्चे धागे को कर्तव्य का प्रतीक माना और संन्यास की अपेक्षा कर्तव्यपालन को श्रेष्ठ मानकर उनने वन जाने का विचार छोड़ दिया ।

दोनों बच्चों का दान

सम्राट् अशोक ने आधे मन से नहीं पूर्ण समर्पण भाव से बुद्ध की शरणागति ग्रहण की थी । उनने धर्म चक्र प्रवर्तन की आवश्यकता को देखते हुए अपना वैभव पहले ही समर्पित कर दिया था । स्वयं उसी कार्य में अहर्निश लगे रहते थे । अशोक की दो संतानें थीं–एक पुत्र महेन्द्र, दूसरी कन्या संघमित्रा । दोनों को ही उनने दीक्षित कर दिया । संघमित्रा सिंहल द्वीप गई । वहाँ की राजकुमारी अनुला अपनी पाँच सौ सहेलियों समेत दीक्षित हुई और उस देश में महिला बुद्ध सभा ने उस पूरे देश को बुद्ध का अनुयायी बनाया । महेन्द्र को मलाया देश में भेजा । इस प्रकार वह पूरा परिवार तन, मन, धन से उस महान प्रयोजन के लिए समर्पित हुआ । उनके कारण उस अभियान की सैकड़ों गुनी वृद्धि हुई ।

आमदनी का लाभ दूसरों को

इटली का मेवार्डो जन्मजात रूप से गरीब नहीं था, पर उसने निश्चय किया कि अपने देशवासियों की औसत आमदनी से अधिक खर्च न करेगा । इतना वह हाथों की मजूरी से कमा लेता था । इसके अतिरिक्त उसने कितने ही उद्योग चलाए । जिसमें होटल उद्योग प्रमुख था । उसके विभिन्न स्थानों में ५१ होटल थे । इसके अतिरिक्त उसने रेल के डिब्बे में सुधार के कई लाभदायक आविष्कार किए थे । इनकी आमदनी का अधिकांश लाभांश मजूरों को मिलता था । जो बचता वह उस क्षेत्र के अभावग्रस्त-दुखियारों के लिए दे दिया जाता था । मेवार्डो के चार बच्चे थे । उन सबको उसने यही परंपरा सिखाई । पैतृक धन के रूप में ५० शिलिंग उसके पास थे, वही वह अपने बच्चों के लिए छोड़ मरा ।

निस्पृह देशभक्त

सुभाषचंद्र बोस आजीवन कुँवारे रहे । अपनी सामर्थ्य को उन्होंने पारिवारिक झंझटों में से बचा कर उच्च प्रयोजनों में लगाए रहने के लिए सुरक्षित रखा । उनकी आजाद हिन्द फौज का निर्माण और विश्व मत को भारत के पक्ष में करने का प्रयास सर्वविदित है । अपनी संपत्ति का वे ट्रस्ट बना गए, ताकि उसका उपयोग विदेशों में भारतीय पक्ष को उजागर करने का प्रचार कार्य उस धन से होता रहे ।

धन का उपयोग लोकहित में

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन राज्य सभा के सदस्य थे, तब की बात है । एक बार अपने भत्ते का चेक लेने वे राज्य सभा के कार्यालय में गए । चेक लेकर वहीं बैठे एक सज्जन से पेन लेकर टंडन जी ने वह चेक लोक सेवा मंडल के नाम हस्तांतरित कर दिया । इन महोदय से न रहा गया । कहने लगे–"टंडन जी ! मुश्किल से भत्ते के चार सौ रुपये मिल पाए हैं । उन्हें भी आपने लोक सेवा मंडल को दे दिया ।" पेन सौंपते हुए टंडन जी कहने लगे–"देखो भाई, मेरे सात लड़के हैं और सब अच्छी तरह

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कमाते हैं । मैंने प्रत्येक पुत्र पर सौ रुपये प्रति माह का 'कर' लगा रखा है । इस प्रकार मुझे हर माह सात सौ रुपये मिल जाते हैं । इनमें से मुश्किल से तीन-चार सौ रुपये का व्यय होता है । शेष रकम भी लोक सेवा मंडल को भेज देता हूँ । फिर यह तो और ऊपरी आय है । इसे मैं क्यों अपने लिए रखूँ ?'' राजर्षि टंडन जी की यह निस्पृहता याद दिलाती है कि धन चाहे कितने ही रास्तों से व्यक्ति के पास आए, लोकहित में उसके विसर्जन से अच्छा कोई विवेकपूर्ण सदुपयोग नहीं होता ।

परिवर्तनशीलास्तु रीतयः सर्वदैव ताः ।
नवे युगे नवेनैव विधिना निर्वहेज्जनः ॥ ७७॥
जीवनं स्वं समैरत्र देया स्वीकृतिरञ्जसा ।
अनीतिगानां कार्याणां विरोधः कार्य एव च ॥ ७८॥
बाह्यानि तानि कार्याणि गृहस्थान्यपि वा पुनः ।
प्रेम्णैव व्यवहर्तव्यं सेव्याः सर्वे यथोचितम् ॥ ७९॥
मोहोऽनावश्यकः कार्यः परेषु स्वेषु वाऽपि न ।
आहारस्य च मात्रां तां वार्द्धक्येऽल्पां समाश्रयेत् ॥ ८०॥
सुपाच्यानि च वस्तूनि सात्विकानि सदैव हि ।
ग्राह्याणि हृदयं नित्यं प्रसन्नं तुलितं भवेत् ॥ ८१॥
क्षोभं नैव व्रजेत्तत्र येषु केषु विधिष्वपि ।
न्यूनत्वमधिकारे तु कर्तव्ये विस्तरो भवेत् ॥ ८२॥
सन्मार्गे गन्तुमेवात्र प्रेरणां सन्ततं शुभाम् ।
सर्वेभ्यस्तु जनेभ्योऽत्र निर्विशेषं प्रदीयताम् ॥ ८३॥
भेदं स्वस्य परस्यात्र न कुर्युः स्युश्च साधना ।
स्वाध्यायः संयमः सेवा वानप्रस्थेऽच्छमद्भुतम् ॥ ८४॥

भावार्थ–प्रथाएँ परिवर्तनशील हैं । नई पीढ़ी को अपने ढंग से गुजर करने की छूट देनी चाहिए । असहयोग और विरोध, अनैतिक कार्यों का करना ही चाहिए । भले ही कोई बाहर का हो या घर का । प्रेम सबसे करें । सेवा यथोचित रीति से सभी की करें, पर अनावश्यक मोह अपने-पराए किसी के प्रति भी नहीं होना चाहिए । वृद्धावस्था में आहार की मात्रा घटा दें । सुपाच्य सात्विक वस्तुएँ ही ग्रहण करें । मन को प्रसन्न एवं संतुलित रखें । जिस-तिस बात पर खीजें नहीं । कर्तव्य क्षेत्र का विस्तार करें और अधिकार को समेटें । सन्मार्ग पर चलने की प्रेरणा सभी को समान रूप से देते रहें । इसमें अपने-पराए का अंतर न करें । साधना, स्वाध्याय, संयम और सेवा का कार्य वानप्रस्थ मनःस्थिति में ही भली प्रकार बन पड़ते हैं ॥ ७७-८४॥

व्याख्या–वृद्धों की पुरानी लीक से नहीं बँधे रहना चाहिए । समय के साथ चलना सीखना चाहिए । दो पीढ़ियों में जो आयु का अंतर है, वह विचारों-मान्यताओं का अंतर न बन जाए, इसका सदा ध्यान रहे । यदि युवक अपनी राह चलना चाहते हैं, तो उन्हें सही दिशा तो देनी चाहिए, किन्तु उनके मार्ग में अपनी दुराग्रही मान्यताओं के रोड़े नहीं अटकाने चाहिए । उनकी भावनाओं का सम्मान हो । घर वालों के प्रति स्नेह स्वाभाविक है, पर यह एक सीमा तक ही उचित है । अतिशय मोह तो पुत्रेषणा-वित्तेषणा का रूप लेकर नारकीय गर्त में ले जाता है । सभी अपने हैं, यह मानकर सबको सत्परामर्श दें । मन सदैव शांत हो । किसी के कहे पर अनावश्यक मन मुटाव बढ़ाना ठीक नहीं । गरिमा इसी में है कि अपना बड़प्पन बनाए रखा जाय । श्रेष्ठ कार्य करने को तो सारा जीवन है, किन्तु वानप्रस्थाश्रम हर दृष्टि से साधना के लिए उचित समय है ।

सबसे स्नेह करो

बालकों से स्नेह तो किया जाय, पर वह मोह की पराकाष्ठा पर न पहुँचे । वह तो फिर अहितकर बन जाता है । अनिंद्य सुंदरी उब्बरी राजमहिषी बनी । उनके रूप-सौंदर्य और गुण-स्वभाव की भी ख्याति थी । कुछ समय उपरांत उब्बरी ने एक कन्या को जन्म दिया, अपनी ही जैसी चंद्रमुखी उसकी कन्या

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

की किलकारियों ने राजमहल की शोभा-सुषमा में चार चाँद लगा दिए । भाग्य विधान पलटा । कन्या का देहावसान हो गया । माता पर वज्रपात हुआ । वह विक्षिप्त जैसी हो गई । जिस श्मशान में बालिका की अंत्येष्टि हुई थी, वह उसी में जा पहुँची और विलाप से आकाश हिला देती । दर्शकों की आँखों से आँसू ढुलकने लगते । उब्बरी इस शोक-संताप में सूख-सूख कर काँटा हो गई । किसी के प्रबोधन का उस पर प्रभाव हो नहीं रहा था ।

एक दिन तथागत उस राह गुजरे । रुदन सुनकर ठिठक गए । विवरण जाना तो, क्रंदन करती युवती के पास जा पहुंचे । उब्बरी ने सिर उठाकर देखा और अनुग्रह की याचना करने लगी । बुद्ध ने कहा-"देवि ! इसी श्मशान में सहस्रों के मृत शरीर भस्मीभूत हुए हैं । उनके परिजन यदि ऐसा ही क्रंदन करते, तो इस संसार में शोक के अतिरिक्त और कुछ बचा रहता क्या ? विवेक की आँखें खोलो और इस मरणधर्मा शरीर की अंतिम गति पर विचार करो । जो चले गए, उन्हें जाने दो । अपनी आत्मा का विचार करो, जो पुत्री से भी अधिक प्रिय होनी चाहिए । ऐसा न हो कि तुम पुत्री की तरह आत्मा को भी गवाँ बैठो ।" उब्बरी तथागत का एक-एक शब्द हृदयंगम करती गई । उसने अंतरात्मा को पहचाना और मृत का दामन छोड़कर उस जीवंत का परिपालन आरंभ कर दिया । कुछ दिन उपरांत उब्बरी महिला बौद्ध विहार की अधिष्ठात्री बनीं, सीमित मोह का व्यापक प्रेम के रूप में परिवर्तन जो हुआ था ।

पुत्र को ज्ञान के लिए दान

वाजिश्रवा ने अपने पुत्र नचिकेता को उसकी इच्छानुसार यमाचार्य के लिए दान कर दिया । वह ब्रह्मविद्या प्राप्त करना चाहता था । अतः वे उसके मार्ग में बाधक नहीं बने । मोह ने उन्हें विचलित नहीं किया । यम ने बार बार समझाया पराक्रम से वैभव पाया जा सकता है । तुम साधना करो और सिद्धियाँ लेकर प्रसन्नता भरे दिन बिताओ । ब्रह्मविद्या तो छुरे की धार है, उसे पाने के लिए अपने मनोरथों से लड़ना पड़ता है और सोने की तरह अपने को तपाना पड़ता है, वह तुम कैसे कर सकोगे ? नचिकेता का आग्रह नहीं, संकल्प था । उसे हर कीमत पर उपलब्ध करने का प्रण दुहराया । यमाचार्य उसे पाँच अग्नियों में तपाते गए और एक-एक करके ब्रह्मविद्या का एक एक सोपान पार कराते गए । इन तपस्याओं में उसे इंद्रियजयी, मनोजयी, कालजयी बनना पड़ा । उसने पाँच इंद्रियों और पाँचों मनोरथों को निरस्त कर लिया था, अस्तु वह सच्चे अर्थों में ब्रह्मवेत्ता बना । कठोपनिषद् में इस पंचाग्नि विद्या का ही विवरण विस्तार से दिया गया है ।

मोह की परिणति-दुर्गति

बकरा दौड़ता हुआ आया और आढ़त की दुकान में घुसकर भीतर लगी अन्न की ढेरी चबाने लगा । आढ़त का मालिक एक स्वस्थ नवयुवक, जो अभी पानी पीने कुयें पर चला गया था, दौड़ा-दौड़ा आया और बकरे की पीठ पर डंडे का ऐसा भयंकर प्रहार किया कि बकरा औंधे मुँह जमीन पर गिर पड़ा । दम निकलते-निकलते बची । मिमियाता हुआ वहाँ से भाग गया । एक संत कुछ दूर पर बैठे यह दृश्य देख रहे थे । उन्हें ऐसा देखकर हँसी आ गई, फिर वे एकाएक गंभीर हो गए । शिष्य श्रेष्ठि पुत्र ने प्रश्न किया-"भगवन् ! बकरे पर प्रहार होते देखकर आपको एकाएक हँसी कैसे आ गई और अब आप इतने गंभीर क्यों हो गए ?" दिव्य द्रष्टा संत ने बतलाया-"वत्स ! यह बकरा जो आज डंडे की चोट खा रहा है, कभी उस आढ़त का स्वामी था । यह नवयुवक कभी इसका पुत्र था, इस बेचारे ने अपने पुत्र की सुख-सुविधाओं के लिए झूठ बोला, मिलावट की, शोषण किया, वही पुत्र आज उसे मार रहा है । जीव की इस अज्ञानता पर हँसी आ गई; पर सोचता हूँ कि मनुष्य मोह-माया के बंधनों में किस प्रकार जकड़ गया है कि कर्मफल भोगते हुए भी कुछ समझ नहीं पाता । दुकान में बार बार घुसता और बार बार दुर्गति का कष्ट सहता है ।"

धरती पर भगवान् भी रम गए

स्वर्गलोक में हलचल मच गई । स्वर्ग की शासन-व्यवस्था लड़खड़ा रही थी । विष्णु भगवान हिरण्याक्ष वध के लिए वाराह रूप बनाकर धरती पर आए । प्रयोजन भी पूरा किया, किन्तु यहीं रम गए, वापस लौटे नहीं । एक एक करके देवता आए और वापस चलने का अनुरोध करने लगे, किन्तु वाराह को कीचड़ में लोटना और परिवार के साथ रहना इतना सुहाया कि वे स्वर्ग लौटने को सहमत न हुए । बारी-बारी आए देवताओं को निराश होकर लौटना पड़ा । व्यवस्था बिगड़ते देखकर क्रुद्ध शिवजी ने वापस लाने का जिम्मा उठाया । वे आए और वाराह से लौटने और निर्धारित उत्तरदायित्व को निभाने की बात कहने लगे । इसका भी उन पर कोई प्रभाव न पड़ा । क्रुद्ध रुद्र ने त्रिशूल से वाराह का पेट फाड़ डाला और लाश को कंधे पर लाद कर स्वर्ग सिंहासन पर पटक दिया । विष्णु असली रूप में लौटे और देवताओं के सम्मुख अपनी झेंप मिटाते हुए

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बोले–''मोह बड़ा प्रबल है । वह भगवान की भी दुर्गति करा सकता है । आप लोग उसके कुचक्र में न फँसना और अन्यान्यों को कड़ुए-मीठे उपायों से इसी प्रकार उबारना जैसे कि शिव ने मुझे छुड़ाया ।''

दुर्बल को क्षमा

बोधिसत्व ने पिछले किसी जन्म में हाथी की योनि में जन्म लिया । एक बंदर उसकी पीठ पर बैठ जाता और नोच-खसोट कर हैरान करता रहता । जंगल में साथ चरने वाले घोड़े ने कहा–''इस बंदर को मजा क्यों नहीं चखा देते ।'' हाथी ने कहा कि ''इतना तो मैं आसानी से कर सकता हूँ । सूँड से पकड़ कर इसका कचूमर निकाल सकता हूँ, पर यह दुर्बल है, इसलिए इसका नटखटपन भी क्षमा करता रहता हूँ । बराबर का हाथी छेड़ता, तो उससे टक्कर लेता ।''

कभी जीतने की इच्छा ही नहीं की

चीनी दार्शनिक लाओत्से यह दावा करते थे कि संसार का कोई व्यक्ति आज तक उन्हें हरा नहीं सका और भविष्य में हरा भी न सकेगा । कारण पूछने पर वे कहते थे कि मैंने कभी जीतने की इच्छा ही नहीं की, तो हारता क्यों ? वे जापान में बहुप्रचलित कुश्ती, जूडो का उदाहरण दिया करते थे और कहते थे कि आक्रमणकारी अपने हर प्रयास में थकता जाता है और अंत में पराजित होकर हटना पड़ता है, जबकि बचाव करने वाले की क्षमता कम खर्च होती है और अंत में वही जीतता है । यही आदर्श हर व्यक्ति को अपने जीवन के उत्तरार्द्ध में अपनाना चाहिए ।

आत्मानं चाऽधिकं सेवाभाविनं संयमान्वितम् ।
उपकाररतं चैवमुदारं कुर्वतो भवेत् ॥ ८५॥
परलोकोऽपि शान्तः स सुखयुक्तश्च सर्वदा ।
हितं स्वस्य जनानां च स्वानामपि भवेद्ध्रुवम् ॥ ८६॥
व्यतीतार्धवयोभिस्तु वृद्धैरपि जनैरिह ।
अनुभूतमिवाद्याशु प्रकाशो नव्य उत्तमः ॥ ८७॥
यौवनं नवमेवैतद् भविष्यन्नवमेव च ।
नवः कार्यक्रमश्चैव यथा तैराप्यतेऽद्य तु ॥ ८८॥
वार्ता प्रचलनाऽभावे नैवासा या स्वयं तु तैः ।
हितैरपि न कैश्चित्तु बोधिताऽधिगता तु सा ॥ ८९॥
अन्वभूवन् समे पर्वस्नानस्यात्र तथैव च ।
फलं तीर्थस्य यात्रायाश्चाऽपि प्रत्यक्षमुत्तमम् ॥ ९०॥
परामर्शमिमं सर्वे कर्तुं कार्यान्वितं च ते ।
निश्चयं चक्रुरत्रैके बहवो गन्तुमुत्सुकाः ॥ ९१॥
वानप्रस्थे व्रतं दिव्यं कर्तुं संस्कारकालजम् ।
पुण्यस्थाने मुहूर्ते च चेच्छां व्यक्तां व्यधुर्नराः ॥ ९२॥
तेषां कृते द्वितीयेऽह्नि प्रातः संस्कारकं विधिम् ।
वानप्रस्थस्य कर्तुं सा व्यवस्था सूचिताऽपि च ॥ ९३॥

भावार्थ–अपने को अधिकाधिक संयमी, सेवाभावी और उदार परोपकारी बनाते चलने से परलोक सुख-शांतिमय बनता है । अपना तथा संबंधियों का भी हित होता है । अधेड़ों और वयोवृद्धों ने आज के प्रवचन में ऐसा अनुभव किया, मानों उन्हें नया प्रकाश, नया यौवन, नया भविष्य और नया कार्यक्रम मिला हो । प्रचलन के अभाव में जो बात उन्हें अपने आप नहीं सूझी, किसी हितैषी ने भी नहीं सुझाई, वह इन्हें आज के प्रवचन द्वारा उपलब्ध हुई । उनने अनुभव किया कि पर्व स्नान का, तीर्थयात्रा का, पुण्यफल उन्हें प्रत्यक्ष मिल गया । उनने इस परामर्श को तत्काल कार्यान्वित करने का निश्चय किया । कितने ही वानप्रस्थ में प्रवेश करने का व्रत संस्कार करने के लिए, इस पुण्यस्थान में इसी मुहूर्त में करने की इच्छा प्रकट करने लगे । उनके लिए दूसरे दिन प्रातःकाल वानप्रस्थ संस्कार विधिवत् कराने की व्यवस्था सुना दी गई ॥ ८४-९३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्याख्या–आत्म संयम की साधना जब लोक सेवा के साथ साथ चलती है, तो अपना हित साधन तो होता ही है, यह जीवन भी श्लाघ्य बन जाता है, आगे वाले जन्मों के लिए संस्कारों की निधि एकत्र कर ली जाती है । यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है । जो लोग यह सोचते हैं कि परमार्थ से मात्र दूसरों का ही कल्याण होता है, स्वयं को मरना-खपना अलग पड़ता है, उनके लिए यहाँ एक क्रांतिकारी विचार देते हुए ऋषि कहते हैं कि परमार्थ में ही स्वार्थ निहित है । निश्चित ही सुग्राह्य प्रतिपादनों के साथ प्रस्तुत इस मान्यता ने वृद्धों के चिंतन को गहराई से प्रभावित किया ।

ईश्वर सान्निध्य की परिणति

गुरुकुल सघन वृक्षों की छाया में चलता था । ऋतु की विषमता से बचने के लिए कुछ पर्ण-कुटीर भी बने थे । प्राचार्य पिप्पलाद छात्रों को जहाँ ज्ञान-विज्ञान के अनेक विषय पढ़ाते, वहाँ साथ-साथ यह भी कहते रहते कि "ईश्वर के सान्निध्य से ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ।" छात्रों में अधिक तार्किक थे आश्वलायन । उनने अवसर पाकर जिज्ञासा प्रस्तुत की–देव, ईश्वर की निकटता से शांति मिले, इतना तो समझ में आता है, पर ऐश्वर्य मिले, इसका क्या तुक ? आचार्य ने समयानुसार उत्तर देने की बात कहकर प्रसंग टाल दिया । शिक्षण सत्र समाप्त हुआ । पुराने छात्रों की विदाई और नयों की भरती का क्रम चल रहा था । पुराने छात्रों में राजकुमार सुतीक्ष्ण भी थे । छात्रों के मध्य कौटुम्बिकता और समता का व्यवहार चलता था । विदाई के समय आचार्य ने आश्वलायन के कान में कहा–"कभी अपने घर राजकुमार को आमंत्रित करना । वे कुछ ही दिन में राजा बनने वाले हैं, फिर भी मना न करेंगे ।"

बहुत दिन बीत गए । गुरुदेव का परामर्श याद आया । आश्वलायन ने सुतीक्ष्ण को अपने घर पधारने के लिए निमंत्रण दिया । बात तो असमंजस की थी, पर राजा ने पुराने संबंधों को ध्यान में रखते हुए निमंत्रण स्वीकार कर लिया । यथा समय साज-सज्जा के साथ पधारे । घर छोटा था । साधनों के अभाव से राज्याधिकारियों ने प्रबंध स्वयं कर लिया । आवभगत और वार्तालाप के उपरांत राजा विदा हुए, तो उन्होंने निर्धन मित्र के लिए बहुत से सुविधा-साधना जुटा दिए । देखते-देखते वे निर्धन से सुसंपन्न हो गए । समय बीता । आश्वलायन की फिर एक बार पिप्पलाद से भेंट हुई । आचार्य ने पुराना प्रसंग याद दिलाया और पूछा–"राजा का संपर्क यदि दरिद्रता दूर कर सकता है, तो ईश्वर का सान्निध्य ऐश्वर्य प्रदान क्यों नहीं कर सकता ? देर तो लगी, पर आश्वलायन का संदेह पूरी तरह दूर हो गया ।"

ब्रह्म की उपासना

कन्फ्यूशियस के शिष्य रोज रोज यह आग्रह किया करते थे कि किसी ब्रह्मज्ञानी के दर्शन कराके लाइए । रोज तो वे टाल देते, पर एक दिन तैयार हो गए । शिष्यों को लेकर वे एक गुफा में पहुँचे जहाँ एक साधु भजन कर रहे थे । उन लोगों ने ब्रह्मज्ञान की कुछ बातें बताने का आग्रह किया । साधु बहुत नाराज हुआ, क्रोध में बोला–"भाग जाओ धूर्तों ! व्यर्थ हैरान मत करो । मुझे अपना भजन करने दो ।" वे उलटे पैरों लौटे । अब मंडली एक तेली के घर पहुँची । पूछा–"आपको लोग ब्रह्मज्ञानी बताते हैं, कुछ बतलाइए ।" तेली ने कहा–"यह बैल ही मेरा ब्रह्म है । मैं इसे पूरा चारा-दाना देता हूँ और यह मेरे कुटुंब का पूरा पेट भरता है । हम दोनों ही एक दूसरे से खुश हैं ।"

उससे आगे कन्फ्यूशियस अपनी शिष्य मंडली को एक बुढ़िया के यहाँ ले गए, जो चरखा कात रही थी । साथ ही पास में खेल रहे बाल-बच्चों में से किसी को समझाती, किसी को हँसाती, किसी को धमकाती हुई मगन थी । बुढ़िया से वही प्रश्न किया, तो उसने कहा–"देखते नहीं, मेरे चारों ओर ब्रह्म ही ब्रह्म खेल रहा है । वह मुझ से लिपटा है और मैं उससे ।" इतनी यात्रा के बाद शिष्य मंडली समेत कन्फ्यूशियस वापस लौट आए और उन्होंने समझाया–"स्वयं प्रसन्न रहना, दूसरों को प्रसन्न करना और ताल-मेल बिठाकर रहना–यही है ब्रह्म और यही है उसकी उपासना ।"

जीवन का समापन

जीवन ऐसा जीना चाहिए जैसे नाटक का कलाकार जीता है अथवा संतों की भाँति अंतिम समय तक भगवान की कठपुतली की तरह । गेटे जर्मनी का एक बहुत बड़ा नाटककार हुआ है । वह अपने कार्य में इतना रम गया कि अपने आप को इस विश्व का एक पात्र ही अनुभव करने लगा था । मरते समय उसके चेहरे पर बच्चों जैसी मुस्कराहट थी । अंतिम साँस छोड़ते हुए उसने जोर से ताली बजाई और उपस्थित लोगों को उँगली के इशारे से बताया, "लो अब परदा गिरता है और एक बढ़िया नाटक का अंत होता है ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

परलोक हेतु परमार्थ

यदि लोक में रहते हुए परलोक की चिंता होती रहे, तो परमार्थ स्वतः संपादित होने लगेगा । एक देश का रिवाज था कि जो राजा चुन जाता, उसे दस वर्ष राज्य करने दिया जाता । इसके बाद ऐसे निर्जन द्वीप में उतार दिया जाता, जिसमें निर्वाह के कोई साधन न थे । बेचारा भूखा-प्यासा दम तोड़ता । अनेक राजा इसी प्रकार दुर्गतिग्रस्त होते रहे । एक बुद्धिमान राजा उस गद्दी पर बैठा । पता लगाया दस वर्ष बाद किस द्वीप में जाना है । अगले ही दिन उसने उसमें सुविधाएँ उत्पन्न करने की आज्ञा दे दी । इस अवधि में वह द्वीप सुविधा-संपन्न देश हो गया । नियत समय पर राजा को वहाँ जाने में और बसने में कोई कठिनाई नहीं पड़ी ।

इस कहानी का आशय समझाते हुए ऋषि ने कहा-"परलोक ही वह द्वीप है, जहाँ हर किसी को जाना पड़ता है । वहाँ सुविधा उत्पन्न करने वाला परमार्थ कमाया जाता रहे, तो जीवन के उपरांत भी सुख-शांति की कोई कमी न रहे ।

उपदेशेन चाऽनेन जनैर्जीवनसाधने ।
नवः प्रकाश आप्तोऽतो जीवनं तरुणायितम् ॥ ९४॥
युवानश्चाऽपि तत्रत्या उत्तरार्धस्य शोचितुम् ।
विषये सज्जिता जाता वर्तमानविनिर्मितेः ॥ ९५॥
शुभमुत्तरमायाति तेषां बुद्धिरभूत्तदा ।
आनन्दस्यातिरेकेण ह्योता प्रोता इवात्र ते ॥ ९६॥
श्रोतारः सर्व एवैते सत्रे यातेऽवसानताम् ।
विसर्जिता ययुर्वासान् गताः संयमिनामिव ।
ऋषीणां तुल्यतां सर्व ऋषिरक्तधरा यतः ॥ ९७॥

भावार्थ-प्रवचन से सभी ने जीवन साधना के संदर्भ में नया प्रकाश प्राप्त किया, जिससे उन्हें जीवन में तारुण्य का सा अनुभव हुआ । तरुण भी उत्तरार्द्ध की तैयारी की बात सोचने लगे । वर्तमान के निर्माण में, संयम में सुखद उत्तरार्द्ध उभरेगा, यह उन्होंने भली-भाँति विचार लिया । आनंद से ओत-प्रोत मनःस्थिति में सभी श्रोतागण सत्र समाप्त होने पर विसर्जित हो गए । आज वह संयमी ऋषियों के तुल्य प्रतीत हो रहे थे, ऐसा क्यों न होता, जब उनकी धमनियों में ऋषियों का ही रक्त प्रवाहमान था ॥ ९४-९७॥

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः, युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्री धौम्य ऋषि प्रतिपादिते "वृद्धजन माहात्म्यमि," ति
प्रकरणो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अथ षष्ठोऽध्यायः

卐 सुसंस्कारिता-संवर्धन प्रकरणम् 卐

भावनानां विचाराणामाकांक्षाणामथाऽपि च ।
गतिविधेरपि चौत्कृष्ट्यान्मानवोऽभ्येति प्रोन्नतिम् ॥ १॥
अग्रेचरित्वदृष्ट्या च वर्द्धते सोऽन्यथा त्विह ।
पूर्वजन्मकुसंस्कारा जीवने प्रभवन्त्यलम् ॥ २॥
उदरपूर्तितया वंशवृद्धिहेतोश्च केवलम् ।
पशुचेष्टाभिलग्नत्वाद् व्यर्थतामेति जीवनम् ॥ ३॥
हेतुनाऽनेन सर्वेषां वर्तमानमथाऽपि च ।
भविष्यज्जायते नूनमन्धकारमयं नृणाम् ॥ ४॥
ऋषेर्धौम्यस्य बुद्धौ च प्रसंगोऽद्यायमुत्थितः ।
चिन्तयामास सोऽजस्त्रं निवृत्ता ये कुटुम्बतः ॥ ५॥
तेभ्यो विचारा देयास्तु लग्नैर्भाव्यं कथं च तैः ।
चतुर्षु पुरुषार्थेषु सेवासत्संगयोरथ ॥ ६॥
स्वाध्याये साधनायां च धौम्यस्यैतत्तु चिन्तनम् ।
गतिशीलमभूद् द्वारं प्रगतेरवि सुन्दरम् ॥ ७॥

भावार्थ–भावना, विचारणा, आकांक्षा और गतिविधियों की उत्कृष्टता का समावेश करके ही मनुष्य ऊँचा उठता है और आगे बढ़ता है, अन्यथा विगत योनियों के कुसंस्कार ही मनुष्य जीवन पर छाए रहते हैं । पेट-प्रजनन की पशु प्रवृत्तियों में संलग्न रहकर मनुष्य जीवन निरर्थक जाता है । इस कारण वर्तमान और भविष्य भी अंधकारमय बनता है । धौम्य ऋषि के मस्तिष्क में आज यही प्रसंग छाया हुआ था । वे सोचते रहे कि परिवार से निवृत्त हुए अथवा परिवार की जिम्मेदारी से युक्त जनों को साधना, स्वाध्याय, सत्संग और सेवा के चार महापुरुषार्थों में किस प्रकार संलग्न होना चाहिए, इसका परामर्श दिया जाय । महर्षि का चिंतन गतिशील था, वह प्रगति के भव्य द्वार की तरह प्रतीत होता था ॥ १-७॥

आत्मिक्याः प्रगतेर्हेतोर्नितान्तं सम्मतानि तु ।
प्रयोजनानि चत्वारि गदितुं तु समागतान् ॥ ८॥
महर्षिर्निश्चिचायाथ प्रतिपाद्यमिदं जगौ ।
सम्बोध्य जनतां धौम्य आह चैवं सपूर्ववत् ॥ ९॥

भावार्थ–आत्मिक प्रगति के लिए नितांत आवश्यक इन चार प्रयोजनों को उपस्थित लोगों के गले उतारने का महर्षि ने निश्चय किया । यही आज के प्रवचन का विषय भी बनाया । जन समुदाय को संबोधित करते हुए, उन्होंने अपना वक्तव्य जारी रखा ॥ ८-९॥

व्याख्या–जीवन की भावी दिशाधारा क्या हो, कैसे गृहस्थ जीवन में रहते हुए अथवा निवृत्ति के उपरांत स्वयं को आत्मिक प्रगति की दिशा में प्रवृत्त किया जा सके ? यह ऊहापोह जनसाधारण के मन में होना स्वाभाविक है । आध्यात्मिक सिद्धांतों को सुग्राह्य बनाने एवं जीवन में उतारने की सही दिशा देने हेतु ही विद्वज्जन कथा-सत्संग का आश्रय लेते हैं । महर्षि धौम्य सुसंस्कारिता के जीवन में समावेश हेतु अनिवार्य चतुर्विध सोपानों–जीवन साधना, स्वाध्याय परायणता, सत्संग एवं सेवा-आराधना की व्याख्या प्रस्तुत प्रसंग में कर रहे हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

असंस्कृता नराश्चात्र समाजे बहवः सदा ।
भवन्त्येव सुयोग्यानां दृश्यते न्यूनता तथा ॥ १०॥
कृत्तृणानि तु सर्वत्र प्राय एवोद्भवन्त्यलम् ।
दुर्लभौषधयो गुण्याः क्वचनैव शुभे स्थले ॥ ११॥
भृशमन्वेषणादेव लभ्यन्ते कुत्रचिज्जनैः ।
बहुसंख्यकवर्गेण सह सम्पर्ककारणात् ॥ १२॥
अविकासं गतास्वासु व्यक्तिषु प्रतिकूलगः ।
प्रभावोऽवाञ्छनीयोऽयं पतत्येव निरन्तरम् ॥ १३॥
प्रवाहे वहनं नृणां सरलं भवतीत्यतः ।
कुटुम्बगेषु मर्त्येषु समीपतरवर्तिनः ॥ १४॥
वातावरणकस्यैव वाञ्छितः प्रपतत्यलम् ।
प्रभावोऽस्मात् सुरक्ष्यं च संकटाद्धि कुटुम्बकम् ॥ १५॥
अन्यथा तु निजादर्शप्रयासेषूत्तमेष्वपि ।
व्याप्ता वातावृतिः स्वेषु गृहेषु प्रभविष्यति ॥ १६॥
तत्रत्यांश्च सदस्यान् सा पतनस्य तथैव च ।
पराभूतेर्महागर्ते नेष्यत्येव न संशयः ॥ १७॥

भावार्थ–*समाज में अनगढ़ लोग बहुत रहते हैं । सुयोग्यों की कमी पाई जाती है । घास-पात सर्वत्र उगते हैं, किन्तु गुणकारी दुर्लभ औषधियाँ कहीं-कहीं ही उगती हैं और बहुत ढूँढ़ने पर कठिनाई से ही कहीं मिलती हैं । इस बहुमत के साथ प्रत्यक्ष संपर्क रहने से अविकसित व्यक्तियों पर प्रतिकूल अवांछनीय प्रभाव पड़ता है । प्रवाह में बहना सरल पड़ता है । इसलिए परिवार के लोगों में समीपवर्ती वातावरण की अवांछनीयताएँ घुस पड़ती हैं और बुरा प्रभाव डालती हैं । इस संकट से बचना आवश्यक है, अन्यथा निजी आदर्श और प्रयास उत्तम होने पर भी संव्याप्त वातावरण अपने घरों को भी प्रभावित करेगा और उन्हें पतन के गर्त में घसीट लेगा, इसमें संदेह नहीं ॥ १०-१७॥*

व्याख्या–जन समुदाय श्रेष्ठ, निकृष्ट सभी स्तर के व्यक्तियों का समुच्चय है । यहाँ बाहुल्य सामान्यतया ऐसे ही व्यक्तियों का है, जो शिश्नोदर परायण होते हैं । जिनकी चिंतन-परिधि सीमित होती है । इसके अतिरिक्त कमजोर मनःस्थिति वालों पर उनके अधोगामी चिंतन का प्रभाव भी सतत पड़ता रहता है । प्रचलन में सामान्यतया निकृष्टता संव्याप्त है । पतन का मार्ग आकर्षक होने के कारण सबको सरल दिखाई भी पड़ता है । स्वयं के विवेक का प्रयोग न कर पाने की स्थिति में प्रवाह में बहने लगना स्वाभाविक है । परिवार संस्था पर यह तथ्य विशेष रूप से लागू होता है । दुष्प्रवृत्तियों के प्रभाव से परिवार के सदस्य अपने सुसंस्कारों को भुलाकर गलत दिशा में न चल पड़ें, इसके लिए अनिवार्य है कि परिवार के प्रमुख एवं अन्य सभी वरिष्ठजन उत्कृष्टता का वातावरण बनाए रखने का प्रयास करते रहें । इस ओर उपेक्षा बरतने से स्वयं के सही होने पर भी परिवार के अन्य सदस्यों को अप्रभावित नहीं रहने दिया जा सकता । अतः स्वयं को सुधारने, ऊँचा उठाने के साथ-साथ ऐसा वातावरण बनाया जाना भी जरूरी है, जहाँ सत्प्रवृत्तियाँ स्वयं पनपें, जिनके कारण अधोगामी प्रवृत्तियाँ अपना असर किसी की मनः स्थिति पर डाल न पाएँ । परिवार में धार्मिकता-आस्तिकता का वह वातावरण बनाया जाना चाहिए, जिसमें परिवार के सदस्यों को सुसंस्कारिता का पोषण मिल सके । इसके लिए परिवार में कुछ सत्प्रवृत्तियों को विकसित और प्रचलित करने के लिए प्रयास किया जाना चाहिए । इस तरह की सत्प्रवृत्तियों में पाँच प्रमुख हैं, जिन्हें पंचशील कहा गया है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

भगवान् बुद्ध के पंचशील

भगवान बुद्ध ने मानव जाति की प्रगति, उनकी आत्मोन्नति एवं सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन के लिए अनेक कार्य किए । उनने मनुष्य जाति में अनेक वर्ग किए और इन वर्गों के लिए उनके कार्य क्षेत्र के अनुरूप पाँच-पाँच प्रमुख शील-अनुशासन बनाए, निर्धारित किए । शासन, समाज, धर्म, शिक्षा, स्वास्थ्य, उपार्जन क्षेत्रों में निर्दिष्ट मर्यादाओं का पालन ही शील है, इनकी संख्या पाँच-पाँच निर्धारित की गई है, इसलिए उन्हें पंचशील कहा गया है । यहाँ पारिवारिक पंचशीलों का प्रसंग है । (१) सुव्यवस्था, (२) नियमितता, (३) सहकारिता, (४) प्रगतिशीलता, (५) शालीनता को पाँच सत्प्रवृत्तियों के रूप में समझा जा सकता है । इन्हें अपनाने से व्यक्ति, परिवार एवं समाज को उन विकृतियों से बचे रहने का लाभ मिलता है, जो समस्त समस्याओं और विपत्तियों के लिए उत्तरदायी हैं । इन्हें अपनाने में सर्वतोमुखी प्रगति का द्वार खुलता है और उज्ज्वल भविष्य के राजमार्ग पर चल पड़ने का अवसर मिलता है ।

पारिवारिक पंचशीलों में जिन पाँच सत्प्रवृत्तियों का उल्लेख है, उनको परिजनों के स्वभाव का अंग बनाने के लिए ऐसी गतिविधियों को जन्म देना पड़ेगा, जिनके सहारे उन्हें परिजनों के स्वभाव का अंग बनाया जा सके । गृह संचालकों को समय की कमी का रोना नहीं रोना चाहिए । पैसा कमाना ही मात्र एक काम नहीं है । उतने भर से परिवार के भरण-पोषण की आवश्यकता तो पूरी हो सकती है, पर सुसंस्कारों का अभिवर्द्धन कहीं नहीं हो सकता । यदि समझ काम दे, तो तथ्य स्वीकार करने में किसी को कोई कठिनाई नहीं होगी कि गुण, कर्म, स्वभाव के समन्वय से बना हुआ व्यक्तित्व ही मनुष्य की वास्तविक पूँजी है । यह वैभव जिसके पास, जितनी मात्रा में होगा, वह उसी अनुपात से प्रभावशाली, संपत्तिशाली और सौभाग्यशाली बनेगा । अस्तु, सच्चे अर्थों में परिजनों का हित चाहने वालों को उनके लिए साधन-सुविधा जुटाने तक ही सीमित होकर न रह जाना चाहिए, वरन् संस्कारों के संवर्द्धन का वह कार्य भी हाथ में लेना चाहिए, जो दूसरों से नहीं कराया जा सकता ।

अपनी अपनी दृष्टि

यह अपने दृष्टिकोण पर निर्भर है कि कोई वस्तु अथवा परिस्थिति अच्छी है या बुरी । संत सुकरात से मिलने गए एक भक्त ने प्रश्न किया-"महात्मन् ! चंद्रमा में कलंक और दीपक तले अंधेरा क्यों रहता है ?" सुकरात ने पूछा-"अच्छा, तुम्हीं बताओ-तुम्हें दीपक का प्रकाश और चंद्रमा की ज्योति क्यों नहीं दिखाई देती ?" भक्त ने विचार किया-"सचमुच संसार में हर वस्तु में अच्छे और बुरे दो पहलू हैं, जो अच्छा पहलू देखते हैं, वे अच्छाई और जिन्हें केवल बुरा पहलू देखना आता है, वे बुराई संग्रह करते हैं ।"

विधेयात्मक सोचो व करो

यदि चिंतन करना ही है, तो श्रेष्ठ का, अच्छे का क्यों न किया जाय ? ऐसे व्यक्ति कम नहीं, जो अव्यवस्थित, बिना प्रयोजन का चिंतन कर दिमाग को खराब करते रहते हैं । एक मजूर दोपहर के विश्राम में रूखी रोटी खा रहा था । लगावन न होने से वह मिर्च की चटनी की कल्पना करने लगा और उसके प्रभाव से मुँह से सी-सी निकलने लगी ।

साथी ने कारण पूछा तो उसने बताया कि मिर्च के स्वाद की कल्पना कर रहा था । साथी ने कहा-"यदि कल्पना ही करनी है, तो मिठाई-रबड़ी की क्यों नहीं करता ?" निषेधात्मक चिंतन से विधेयात्मक चिंतन में प्रसन्नता रहती है ।

कीर्ति की आकांक्षा

अपने चिंतन को सही बनाए रखना इस कारण अनिवार्य है कि परिणाम हानिकारक होते हुए भी सर्वसाधारण में दुष्प्रवृत्तियों का ही बाहुल्य है ।

टॉलस्टाय की एक बोध कथा है-कूड़े के ढेर पर दो मुर्गे आपस में गुत्थमगुत्था हो गए । अधिक तगड़े मुर्गे ने दूसरे को पराजित कर भगा दिया, तो आसपास घूम रही मुर्गियाँ विजयी मुर्गे के चारों ओर जमा होकर उसका यशोगान करने लगीं । प्रशंसा से पुलकित मुर्गे की यश-कामना और तेज हुई । उसने कहा कि पास-पड़ोस में भी उसकी कीर्ति जानी-कही जाए । इस तीव्र आकांक्षा ने उसे प्रेरित किया और वह पास के खलिहान में चढ़ गया । अपने पंख फड़-फड़ाकर उच्च स्वर में बोला-"मैं विजयी मुर्गा हूँ । मुझे देखो । मेरे समान बलवान कोई अन्य मुर्गा नहीं है ।" उसका अंतिम वाक्य समाप्त होने के पूर्व ही मँडराती चील की, ऊँचे चढ़े उस एकाकी मुर्गे पर दृष्टि पड़ी । उसने एक झपट्टा मारा और पंजों में दबोचकर मुर्गे को अपने घोंसले में ले गई ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

शराबी होश में आया

एक शराबी नाली में पड़ा था । उधर से हाथी पर बैठकर राजा निकले । शराबी ने आवाज लगाई–"ए, ओ, इस पड्डे को बेचना है क्या ?" नौकरों ने उसे पकड़ लिया और दूसरे दिन दरबार में पेश किया । राजा ने कहा–"कल तुम्हीं हमारे पड्डे (हाथी) को खरीद रहे थे ।" शराबी होश में आ गया था । उसने कहा–"हुजूर, जो सौदागर खरीदता था, वह तो चला गया । अब तो धनुआ तेली आपके सामने है, इसे जो चाहें, सो सजा दें ।" नशेबाजों का चिंतन हवा में उड़ता रहता है ।

नशे की विडंबना

एक सेठ अफीम खाते थे । उन्होंने अपने नौकर को यह लत लगा दी । एक बार दोनों शहर चले । रास्ते में एक स्थान पर दोनों ने खाना खाया, अफीम के नशे में याद नहीं रहा । घोड़ा वहीं छोड़कर चलते बने । शहर पहुँचे, नशा कम हुआ । एक स्थान पर बैठे, तो पता चला कि घोड़ा रास्ते में ही छूट गया । फिर घोड़े की तलाश में लौटे, पर इस बार पोटली कहीं भूल गए, उसी में उनके रुपये थे । वापस जाकर घोड़ा न पाया, तब पोटली की याद आई । दोनों रोने लगे । एक ग्रामीण स्त्री बोली–"तुम्हारी ही नहीं, हर नशेबाज की यही हालत होती है ।"

अपना जीवनोद्देश्य भुलाकर स्वयं को लिप्साओं में झोंक देना एवं फिर पछताना नशेबाजी से भी बदतर है । अधिकांश व्यक्ति समुदाय में इन्हीं नशेबाजों की तरह विद्यमान हैं व अपने संसर्ग से अन्य अनेक को प्रभावित करते रहते हैं । इनसे बचना व बचाना बहुत अनिवार्य है ।

पतन की चरम परिणति

अबोध बालक को भैरव की प्रतिमा के सम्मुख बलि चढ़ाते हुए एक तांत्रिक पकड़ा गया । उसे विक्रमादित्य के दरबार में अपराधी की तरह उपस्थित किया गया । परिचय पूछने पर उसने बताया । कुछ वर्ष पूर्व वह वेद पाठी ब्राह्मण था । कुत्साओं के कुचक्र में फँसकर एक के बाद एक बड़े कुकर्म करता गया । स्थिति यहाँ तक आ पहुँची कि बाल हत्या की नृशंसता अपनाने में भी कुछ अखरा नहीं । विक्रमादित्य ने आश्चर्य से पूछा–"आपका पतन क्रम किस कारण आरंभ हुआ, किस प्रकार बढ़ा और स्थिति यहाँ तक कैसे पहुँची ? इसका विवरण बताएं ।" अपराधी ब्राह्मण ने लंबी सांस खींचते हुए कहा–"राजन् ! कभी मैं अपरिग्रही जीवन जीता था । स्वल्प साधनों में सुखपूर्वक निर्वाह करता और ब्रह्म कर्म में रत रहता था । पड़ोसी का विलास-वैभव देखकर मन ललचाया । सोचा–ऐसा ही ऐश्वर्य भोगा जाय । संतोष, अपरिग्रह और ब्रह्म कर्म में क्या धरा है । दिशा मुड़ी तो हर कदम अधिक बड़े अनाचार की ओर उठता चला गया ।

राजा ने पूछा–"उस पतन क्रम की शृंखला भी बताएँ ।" अपराधी ने एक-एक करके उन आदतों और घटनाओं का वर्णन किया, जिनके कारण दुष्टता का दुस्साहस बढ़ता और प्रचंड होता चला गया था । ब्राह्मण ने कहा–"स्वल्प श्रम में अधिक धन कमाने के लिए जुआ खेलना आरंभ किया । जुए के लिए अधिक धन की आवश्यकता पड़ी, तो चोरी करने का सिलसिला चल पड़ा । चोरी से मुफ्त का माल मिला, तो मदिरा पान और वेश्यागमन की आदत पड़ गई । उन दुराचार के अड्डों से अधिक संपर्क रहने पर बड़े अपराधों का शिक्षण मिला और अभ्यास पकता चला गया । अनाचारी तांत्रिकों की शाखा में जाते, उनसे बलि कर्म द्वारा भैरव प्रसन्न करने, अनायास ही बहुत धन पाने की कामना करने का उपाय मुझे भी बहुत रुचा । क्रूर कर्मों में निरत रहते-रहते बाल वध में भी न दया आई और न आत्म ग्लानि हुई । यही है मेरे पतन क्रम की शृंखला जो चिंगारी की तरह शुरू हुई और ईंधन का आश्रय मिलते ही दावानल की तरह बढ़ती चली गई ।"

अपराधी को दंड तो मिला, पर सभी सभासदों और विज्ञजनों ने यह भी जाना कि पतन का क्रम किस प्रकार छोटे से आरंभ होकर क्रमशः बढ़ता है और अंततः मनुष्य सर्वनाश करके छोड़ता है ।

कुसंग और सत्संग का फल

जब सत्संग का अवसर मिलता है, तो वह पारस की तरह से जंग लगे लोहे को भी स्वर्ण बना देता है । अनेक ऐसे व्यक्ति होते हैं, जिनके जीवन का पूर्व इतिहास दुष्प्रवृत्तियों का समुच्चय होता है, किन्तु कालांतर में सही अवसर व सत्संग का वातावरण मिलने पर वे अपनी दिशा बदल देते हैं । अजामिल ब्राह्मण युवक था । वह विभिन्न प्रयोजनों के लिए वन क्षेत्र में जाया करता था । वहाँ वधिकों के घर थे । उनका निर्लज्ज मदिरा पान, नृत्य और व्यभिचार चलता रहता था । उन्हें निकट से देखने की इच्छा हुई । वधिकों ने भी उस हृष्ट-पुष्ट युवक का स्वागत किया और मद्यपान, व्यभिचार का स्वाद चखा दिया । पतन के

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मार्ग पर एक बार चल पड़ने और कुसंग में फँसने पर फिर वापस लौटना कठिन पड़ता है । थोड़े दिन में अजामिल भी पूरा वधिक हो गया । कालांतर में सत्संग से ही उसका उद्धार हुआ ।

पहले विगत को भुलाइए

विगत को मिटाकर नया बनाना समय साध्य संभव है किन्तु कुसंस्कारों को हटाकर नए सस्कार स्थापित करना दूने परिश्रम के बराबर है । संगीत विद्यालय में भर्ती चल रही थी । नए छात्रों से दस रुपया मासिक शुल्क जमा कराया जा रहा था । एक जानकार छात्र ने अपने पूर्व ज्ञान की बात कहते हुए आधा लेने की बात कही । अध्यापक ने उसके अभ्यास को परखा और दूना समय लगाने तथा दूनी फीस जमा करने की शर्त लगाई । कारण पूछने पर अध्यापक ने कहा–"जो सीखा गया है, वह गलत है । उसे भुलाने में जो अतिरिक्त श्रम और समय लगेगा, उसी कारण यह अतिरिक्त शुल्क देना पड़ेगा ।

कुसंस्कारी ढर्रे से मुक्ति

अभ्यास में समायी हुई दुष्प्रवृत्तियों से मुक्ति पाना एक प्रकार का कायाकल्प है, नव जीवन है । भिक्षुओं को दीक्षा दी जा रही थी । उनके नाम, गोत्र, वंश और स्थान बदले जा रहे थे । अभ्यास के परिवर्तन पर जोर दिया जा रहा था । कारण पूछने पर तथागत ने बताया–साँप जिन दिनों केंचुली से लदा रहता है, उन दिनों न उसे दीखता है और न दौड़ते बनता है । केंचुली उतरते ही यह दोनों कठिनाईयाँ चली जाती हैं । व्यक्ति का कुसंस्कारी ढर्रा ही उसकी आत्मिक प्रगति में सबसे बड़ा व्यवधान है । इसलिए दीक्षा के रूप में मन:स्थिति परिवर्तन के साथ-साथ परिस्थिति और आदत बदलने के लिए भी कहा जा रहा है ।

फिजूलखर्ची की दुष्प्रवृत्ति

स्वयं ठीक हों तो घर के अन्य परिजन भी वैसे हों, जरूरी नहीं । वे भी प्रचलन में संव्याप्त वातावरण से प्रभावित होकर दुष्प्रवृत्तियों के गर्त में फँस सकते हैं । इससे अपयश स्वयं को ही ओढना पड़ता है ।

अब्राहम लिंकन ने गरीबी के दिन देखे थे । वे राष्ट्रपति चुने जाने पर भी एक-एक पैसा सँभालकर खर्च करते थे, पर उनकी पत्नी अमीर घर से आई थीं । इन्हें पति की इच्छा के विरुद्ध सजधज का बहुत शौक था । राष्ट्रपति चुने जाने के उपरांत लिंकन दक्षिण अमेरिका के दास प्रथा संबंधी झंझट में उलझ गए । इस बीच उन्होंने राष्ट्रपति भवन सुंदर बनाने के लिए २० हजार डालर खर्च कर डाले । उस राशि की स्वीकृति लिंकन ने नहीं दी और वह पैसा जेब से भरा । फिजूलखर्ची को लेकर आए दिन पति-पत्नी में झंझट होता । वे राष्ट्रपति और उसकी पत्नी की शान दिखाना चाहती थीं । लिंकन जनता का एक पैसा भी निजी प्रयोजनों में खर्च न करना चाहते थे । पत्नी ने छिपकर इतना कर्ज कर लिया था, जो लिंकन को दूसरी बार राष्ट्रपति चुने जाने पर वेतन से तथा निजी संपत्ति को बेचकर चुकाना पड़ा । ऐसे ही विरोधों में उनकी पत्नी क्षय-ग्रस्त हुईं और अकाल में ही काल-कवलित हो गईं । बच्चों की शिक्षा आदि पर ध्यान न दे सकीं । इस पर अब्राह्म लिंकन जीवन भर दुखी रहे । वे स्वयं तो इतिहास में अमर हो गए, पर उनका पारिवारिक जीवन दुर्भाग्यपूर्ण ही रहा ।

सही मार्ग पर चलाया

सही परामर्श, सही समय पर मिले तो उसका परिणाम भी श्रेष्ठ निकलता है ।

थानेश्वर की रानी महादेवी राज श्री का विवाह राजा गृहवर्मा के साथ हुआ था । दस्युओं ने राजा की हत्या कर दी । रानी सती होने की तैयारी करने लगीं । उनका भाई हर्ष आ पहुँचा और उसने इस निरर्थक आत्महत्या से रोककर समझाया कि शेष जीवन सत्प्रयोजनों में लगाया जाय । बहिन को समझा दिया फिर जिन लोगों ने गृहवर्मा को मारा था, उनको ढूँढ़-ढूँढ़ कर सफाया किया । बहिन-भाई मिलकर बौद्ध धर्म का विस्तार करने लगे । दोनों राज्यों का धन इसी प्रयोजन में लगने लगा । राजा हर्ष ने धर्म सेवा के लिए जो-जो काम किए वे इतिहास में प्रसिद्ध हैं । बहिन भी हर कार्य में उनके साथ रही ।

वातावृतिस्तथाऽऽस्तिक्यभावनाया भवेदपि ।
परिवारेषु सर्वेषु तथैवाऽऽराधना प्रभोः ॥ १८॥
उपासना च संयुक्ता भवेच्च नित्यकर्मणि ।
निश्चेतव्योऽपि कालश्च कथाकीर्तनयोः कृते ॥ १९॥
वाधा वक्तुंनिजाः सर्वा अन्येषां च परिस्थितीः ।
ज्ञातुं च समयः सर्वैः लभ्येतेति विचिन्त्यताम् ॥ २०॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आदानं च प्रदानं च विचाराणां हि दैनिकम् ।
यत्र स्यान्न भवेत्तत्र मनोमालिन्यमण्वपि ॥ २१ ॥
प्रायस्ते कलहा भ्रान्तेः कारणादुद्भवन्त्यतः ।
अनिष्टमेतदुत्पन्नमात्रं सर्वैर्निवार्यताम् ॥ २२ ॥
न वर्द्धन्ते ततस्ते च गोष्ठ्यस्तस्मान्तरैः समैः ।
प्रतिसप्ताहमेवात्र कर्त्तव्या हितकारिणी ॥ २३ ॥
स्वाध्यायार्थं गृहस्यैव पुस्तकालय एव तु ।
भवेद् येन सुसाहित्यं जीवनस्योपयोगि तत् ॥ २४ ॥
प्रत्येकेन सदस्येन लब्धुं शक्येत वाऽञ्जसा ।
उपासनागृहास्तत्र पुस्तकालय एव च ॥ २५ ॥
प्रत्येकस्य गृहस्थस्य कृते त्वावश्यकं मतम् ।
गृहेषु येषु नैतानि दुर्भाग्येन युतास्तु ते ॥ २६ ॥

भावार्थ–हर परिवार में आस्तिकता का वातावरण रहे । उपासना–आराधना को नित्यकर्म में सम्मिलित रखा जाय । कथा–कीर्तन, पारिवारिक गोष्ठियों के लिए कोई नियत समय रहे । सभी को अपनी अड़चनें कहने और दूसरों की परिस्थितियों को समझने का अवसर मिले । जहाँ विचार–विनिमय चलता रहता है, वहाँ मनोमालिन्य नहीं पनपता । भ्रांतियों के कारण ही अधिकांश कलह–विग्रह खड़े होते हैं । ऐसी अवांछनीयताओं को पनपते ही रोका–टोका जाय, तो वे बढ़ने नहीं पातीं । इस प्रयोजन के लिए सप्ताह में एक बार विचार गोष्ठियों का क्रम चलता रहे । स्वाध्याय के लिए घरेलू पुस्तकालय रहें, जिससे जीवनोपयोगी साहित्य हर सदस्य को पढ़ने या सुनने के लिए उपलब्ध हो सके । उपासना गृह और पुस्तक मंदिर प्रत्येक सद्गृहस्थ की महती आवश्यकताएँ हैं । जिस घर में ये न हों, उसे दुर्भाग्यग्रस्त ही कहा जाएगा ॥ १८–२६ ॥

व्याख्या–सत्प्रवृत्तियों को स्थान मिले, इसके लिए अनिवार्य है कि ऐसा वातावरण पारिवारिक परिसर में बनाया जाय कि अधोगामी प्रवृत्तियाँ अपने पैर ही न जमा सकें । देव संस्कृति की कुछ अभूतपूर्व देन अपने देश भारत वर्ष को मिली हैं, जिन्हें अमूल्य थाती समझा जा सकता है । कथा-प्रसंग, उपासना एवं जीवन साधना, स्वाध्याय शीलता एवं पारिवारिक विचार विनिमय द्वारा अपनी गुत्थियों एवं भ्रांतियों का निवारण–ये कुछ ऐसे अवलंबन हैं, जिनकी आवश्यकता किसी न किसी रूप में हर परिवार को, परिवार के हर सदस्य को है । सुसंस्कारिता उपार्जन हेतु इन्हें वरीयता दी जानी चाहिए । आज के आधुनिकता प्रधान युग में तो इनकी महत्ता और भी अधिक बढ़ गई है ।

परिवार संस्था में विभिन्न आयु एवं चिंतन के सदस्य होते हैं । उनके सोचने की शैली अलग-अलग हो सकती है, किन्तु इससे अनावश्यक वाद-विवाद अथवा विग्रह न खड़ा हो, इसके लिए पारिवारिक गोष्ठियों का, सप्ताह में किसी दिन, किसी समय, सुविधानुसार आयोजन होता रहे, ताकि सबको खुलकर कहने का अवसर मिल सके । इससे एक-दूसरे के प्रति किसी प्रकार की दुर्भावना विकसित होने जैसा विषवृक्ष पनपने नहीं पाएगा ।

स्वाध्याय में प्रमाद न बरता जाय, यह शास्त्र वचन है । नित्य प्रति के कुसंस्कार, जो प्रभाव हमारे चिंतन पर डालते हैं उन्हें श्रेष्ठ पुस्तकों, विचारों के साहचर्य से मिटाकर सोचने की शैली परिमार्जित की जा सकती है । साथ ही इसमें ज्ञानवृद्धि का सुयोग तो है ही । कषाय-कल्मषों के परिशोधन हेतु ऐसी ही उपयोगिता उपासना गृह की भी है । चाहे व्यक्ति किसी भी धर्म-संप्रदाय का हो, साकार अथवा निराकार उपासना को मानने वाला हो, वह पारिवारिक जनों में आस्तिकता के बीजांकुर रोपने हेतु उपासना स्थलों की सहायता लेता रह सकता है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सुसंस्कारों की जननी-आस्तिकता

आस्तिकता शुभ संस्कारों की जननी है । घर के हर सदस्य को आस्तिक बनाने के लिए परिवार का वातावरण धार्मिक बनाए रखा जाए । इसके लिए नित्य ही प्रात: अथवा सायंकाल सामूहिक प्रार्थना का कार्यक्रम चलाया जाये । चटसार के समय ही नित्यप्रति गीता, रामायण, भागवत अथवा किसी अन्य धर्मग्रंथ का वाचन-श्रवण होना चाहिए और पर्वोत्सवों के अतिरिक्त साप्ताहिक अथवा भजन, कीर्तन की व्यवस्था की जानी चाहिए । इस प्रकार घर का वातावरण धार्मिक बनाए रहने से सदस्यों के चरित्र में दुर्गुणों के समावेश की संभावनाएँ बड़ी सीमा तक निकल ही जाएगी ।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हमें सद्गुणों की जननी आस्तिकता को धैर्य और विवेकपूर्ण अपनाने का प्रयत्न करना चाहिए । ईश्वर का भय मनुष्य को नेक रास्ते पर चलाते रहने में सबसे बड़ा नियंत्रण है । राजकीय कानून या सामाजिक दंड की दुस्साहसी लोग उपेक्षा करते रहते हैं । अपराधों और अपराधियों का बाहुल्य पुलिस और जेल का भय भी इन्हें कम नहीं कर पाता । पर यदि किसी को ईश्वर पर पक्का विश्वास हो, अपने चारों ओर प्रत्येक प्राणी में, कण-कण में ईश्वर को समाया हुआ देखे, तो उसके लिए किसी के साथ अनुचित व्यवहार कर सकना संभव नहीं हो सकता । कर्मफल की ईश्वरीय अविचल व्यवस्था पर जिसे आस्था होगी, वह अपना भविष्य अंधकारमय बनाने के लिए कुमार्ग पर बढ़ने का साहस कैसे कर सकेगा ? दूसरों को ठगने या परेशान करने का अर्थ है, ईश्वर को ठगना या परेशान करना । ऐसी भूल उससे नहीं हो सकती, जिसके मन में ईश्वर का विश्वास, भय और कर्मफल की अनिवार्यता का निश्चय गहराई तक जमा हुआ है ।

अत: प्रत्येक विचारशील व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह अपने जीवन को सार्थक एवं भविष्य को उज्ज्वल बनाने की आधारशिला-आस्तिकता को जीवन में प्रमुख स्थान देने का प्रयत्न करें । ईश्वर को अपना साथी, सहचर मानकर हर घड़ी निर्भय रहे और सन्मार्ग से ईश्वर की कृपा एवं कुमार्ग से ईश्वर की सजा प्राप्त होने के अविचल सिद्धांत को हृदयंगम करता हुआ अपने विचारों और आचरणों को सज्जनोचित बनाने का प्रयत्न करता रहे । इसी प्रकार जिसे अपने परिवार में, स्त्री-बच्चों से सच्चा प्रेम हो, उसे भी यही प्रयत्न करना चाहिए कि घर के प्रत्येक सदस्य के जीवन में किसी न किसी प्रकार आस्तिकता का प्रवेश हो । परिवार का बच्चा-बच्चा ईश्वर विश्वासी-आत्मविश्वासी बने ।

पाप व पुण्य की व्याख्या

उपासना का अर्थ मात्र देवालय बना देना नहीं है । वैसा जीवन भी जीना होता है, तभी वह सफल है ।

चित्रगुप्त अपनी पोथी के पृष्ठों को उलट रहे थे । यमदूतों द्वारा आज दो व्यक्तियों को उनके सम्मुख पेश किया गया था । यमदूतों ने प्रथम व्यक्ति का परिचय कराते हुए कहा-"यह नगर सेठ हैं । धन की कोई कमी इनके यहाँ नहीं । खूब पैसा कमाया है और समाज हित के लिए धर्मशाला, मंदिर, कुँआ और विद्यालय जैसे अनेक निर्माण कार्यों में उसका व्यय किया है ।" अब दूसरे व्यक्ति की बारी थी । उसे यमदूत ने आगे बढ़ाते हुए कहा-"यह व्यक्ति बहुत गरीब है । दो समय का भोजन जुटाना भी इसके लिए मुश्किल है । एक दिन जब ये भोजन कर रहे थे, एक भूखा कुत्ता इनके पास आया । इन्होंने स्वयं भोजन न कर सारी रोटियाँ कुत्ते को दे दीं । स्वयं भूखे रहकर दूसरे की क्षुधा शांत की । अब आप ही बतलाइए कि इन दोनों के लिए क्या आज्ञा है ?" चित्रगुप्त काफी देर तक पोथी के पृष्ठों पर आँखें गड़ाए रहे । उन्होंने बड़ी गंभीरता के साथ कहा-"धनी व्यक्ति को नरक में और निर्धन व्यक्ति को स्वर्ग में भेजा जाय ।"

चित्रगुप्त के इस निर्णय को सुनकर यमराज और दोनों आगंतुक भी आश्चर्य में पड़ गए । चित्रगुप्त ने स्पष्टीकरण देते हुए कहा-"धनी व्यक्ति ने निर्धनों और असहायों का बुरी तरह शोषण किया है । उनकी विवशताओं का दुरुपयोग किया है और उस पैसे से ऐश और आराम का जीवन व्यतीत किया । यदि बचे हुए धन का एक अंश लोकेषणा की पूर्ति हेतु व्यय कर भी दिया, तो उसमें लोकहित का कौन सा कार्य हुआ ? निर्माण कार्यों के पीछे यह भावना कार्य कर रही थी कि लोग मेरी प्रशंसा करें, मेरा यश गाएँ । गरीब ने पसीना बहाकर जो कमाई की, उस रोटी को भी समय आने पर भूखे कुत्ते के लिए छोड़ दिया । यह साधन-संपन्न होता, तो न जाने अभावग्रस्त लोगों की कितनी सहायता करता ? पाप और पुण्य का संबंध मानवीय भावनाओं से है, क्रियाओं से नहीं । अत: मेरे द्वारा पूर्व में दिया गया निर्णय ही अंतिम है ।" सबके मन का समाधान हो चुका था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सबसे बड़ा दान

अज्ञान का निवारण ही सबसे बड़ा पुण्य-परमार्थ है । वह स्वाध्याय से, ज्ञानार्जन से ही संभव है । उत्तराखंड के एक प्राचीन नगर में सुबोध नामक राजा राज्य करते थे । महाराज का नियम था – राजकीय कार्य प्रारंभ होने से पूर्व वे आए हुए याचकों को दान दिया करते थे । इस नियम में उन्होंने कभी भूल नहीं की । एक दिन जब सब लोग दान पा चुके, तो एक विचित्र स्थिति आ खड़ी हुई । एक व्यक्ति ऐसा आया जो दान के लिए हाथ तो फैलाए था, पर मुँह से कुछ न कहता था । सब हैरान हुए इसे क्या दिया जाय ? एतदर्थ बुद्धिमान व्यक्तियों का सलाहकारी बोर्ड बैठाया गया । किसी ने कहा वस्त्र देना चाहिए, किसी ने अन्न की सिफारिश की । कोई स्वर्ण देने को कहता, तो कोई आभूषण । समस्या का यथार्थ हल न निकला । सुबोध की कन्या उपवर्गा भी वहाँ उपस्थित थी, उसने कहा–"राजन्, जो व्यक्ति न बोल सकता है, न व्यक्त कर सकता है, उसके लिए द्रव्याभूषण सब व्यर्थ हैं । ऐसे लोगों के लिए सर्वश्रेष्ठ दान तो ज्ञानदान ही है । ज्ञान से मनुष्य अपनी संपूर्ण इच्छाएँ, आकांक्षाएँ आप पूर्ण कर सकता है और दूसरों को भी सहारा दे सकता है । इसलिए इन्हें ज्ञान दान दीजिए ।" उपवर्गा की बात सबने पसंद की । व्यक्ति के लिए शिक्षा की व्यवस्था की गई । राजा ने उस दिन अपने दान की सार्थकता समझी । यही व्यक्ति आगे चलकर उसी नगरी का विद्वान मंत्री नियुक्त हुआ ।

स्वाध्याय किसलिए ?

"मृत्यु निश्चित ही है, तब आप दिन-रात स्वाध्याय में सिर क्यों खपाते हैं ?"–एक व्यक्ति ने संत इमर्सन से प्रश्न किया ।

"इसलिए कि ज्ञान में घुल जाना ही अमरत्व है ।"–संत इमर्सन ने संक्षिप्त उत्तर दिया और विचारों के सागर में लीन हो गए ।

प्रतिकूलताओं की परिस्थितियों को चीरते हुए मनुष्य अपने आत्मविश्वास और पराक्रम के बलबूते किस प्रकार समुन्नत बन सकता है, इसका जीवंत उदाहरण अमृतलाल जी का है । न केवल वे स्वयं बने, वरन् इसी आधार पर अपने परिवार को भी विकसित किया । घर में वे बहुत थोड़ा पढ़ पाए थे । कलकत्ता में कुछ व्यवसाय ढूँढ़ने की दृष्टि से गए, तो वहाँ कोई और धंधा न मिलने पर शाक-भाजी बेचने लगे । जोड़-तोड़ मिलते रहे, तो एक वकील के यहाँ घरेलू काम मिला । वहाँ पढ़ने का अवकाश मिल जाता था । इंटर पास किया । उनकी रुचि साहित्य सृजन की ओर लौट गई । लेखनी परिमार्जित हुई, तो संपादक स्तर के काम मिलने लगे ।

उनने अनेक पत्र-पत्रिकाओं में काम किया और अनेक को जमाया-चलाया । हिन्दुस्तान, भारत मित्र, हिन्दी बंगवासी, वेंकटेश्वर समाचार, कलकत्ता समाचार, निगमागम चंद्रिका, फारवर्ड, सनातन धर्म आदि पत्रों के वे प्राण बनकर रहे । हिंदी साहित्य सम्मेलन के सभापति भी रहे । जन जागरण उनका लक्ष्य था । पत्रों के माध्यम से आजीवन वे उसी प्रयास में निरत रहे । उन्होंने छोटी-छोटी पुस्तकें, परिवारों में सुरुचिपूर्ण साहित्य के प्रति अभिरुचि जगाने के लिए लिखी थीं, जो काफी लोकप्रिय हुईं ।

इब्नेसिना, जिनकी जिज्ञासा सदा प्रदीप्त रही

अब से एक हजार वर्ष पूर्व बुखारा के सुलतान अब्दुल मंजूर किसी ऐसी बीमारी से ग्रसित हो गए, जिसे चिकित्सकों ने असाध्य घोषित कर दिया था । सुयोग्य चिकित्सक के पुत्र इब्नेसिना ने उनका इलाज किया और अच्छा कर दिया । सुलतान ने मुँह माँगा इनाम माँगने के लिए कहा, तो उनने उनके पुस्तकालय में खुला प्रवेश पाने और नोट करने भर की इजाजत माँग ली । उनका ज्ञान भंडार अथाह होता चला गया । पिता के मरने पर उन्हें परिवार निर्वाह के लिए वापस लौटना पड़ा । सुलतान ने उन्हें स्कूलों का इंस्पेक्टर बना दिया । उन्होंने जुरआन के राजकुमार का भी इलाज किया और परिवार के गुजारे के लायक पेंशन पाई । वे निश्चित होकर दूर-दूर तक के पुस्तकालयों में प्रवेश पाकर अध्ययन करते रहे । इब्नेसिना ने तिब्बी चिकित्सा और दर्शन शास्त्र पर अनेक ग्रंथ लिखे हैं, जिन्हें विद्वानों में मान्यता प्राप्त है । उनकी कुछ दिन पूर्व ही हजारवीं जयंती मनाई गई ।

सदुपयोग हो, दुरुपयोग नहीं

परस्पर विचार-विनिमय भी सोद्देश्य होना चाहिए । यदि उसमें दुराग्रह आ जाए, तो समयक्षेप तो होता ही है, मनमुटाव भी होता है । एक तार्किक रामकृष्ण परमहंस से तर्कों की झड़ी लगा रहे थे । जब वे थक गए, तो परमहंस कहने लगे–"इतने समय का उपयोग कुछ उपयोगी काम करने में करो ।" झाड़ू कम जानकार होती है, पर उपयोग में लाए जाने पर दूसरों के कचरे बुहार देती है । परिवारों

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

में भी आपस में चर्चा प्रसंग गोष्ठियों के रूप में चले, पर प्रसंगों की सीमा हो, वे उद्देश्य से जुड़े हों एवं अनावश्यक तर्कों द्वारा उसे शास्त्रार्थ का रूप न दिया जाय । सभी खुलकर विचार करे ।

घर का मामला

स्व० श्री रफी अहमद किदवई के एक मित्र की पुत्री का विवाह था । उनसे श्री किदवई का राजनैतिक विरोध था । बोल-चाल तक न थी । यहाँ तक कि उन्होंने किदवई साहब को विवाह में आमंत्रित तक न किया । किन्तु वे स्वयं ही वहाँ पहुँचे और कन्या को आशीर्वाद दे दिया । उन सज्जन ने जब रफी साहब को वहाँ देखा, तो पश्चात्ताप, आत्मग्लानि तथा स्नेह का ऐसा स्रोत उमड़ा, कि वे रफी साहब के गले से लिपट गए और क्षमा याचना की । रफी साहब विनम्र स्वर में इतना ही बोले-"हमारा राजनैतिक मतभेद हो सकता है । किन्तु यह तो घर का मामला है । आपकी बेटी मेरी बेटी है ।" इस घटना से आपस का वह मनमुटाव भी समाप्त हो गया ।

प्रस्तुतीकरण की शैली

परस्पर चर्चा में क्या कहा जा रहा है, यह नहीं अपितु विषय किस तरह प्रस्तुत किया जा रहा है, इस पर उसकी सफलता निर्भर है ।

अमेरिका में वैज्ञानिकों की एक परामर्श सभा (कान्फ्रेंस) हुई । कृषि वैज्ञानिक जार्ज कार्वर भी उसमें सम्मिलित हुए । सामान्य समय निर्धारण में उन्हें १० मिनट में बात कहने का निर्देश दिया गया था । जार्ज कार्वर ने अपनी उपलब्धियों का विवरण देना शुरू किया । विषय की प्रामाणिकता तथा प्रस्तुत करने की पद्धति दोनों इतने सशक्त थे कि आयोजक समय का बंधन लगाना भूल गए और लोग अवाक् होकर सुनते रह गए । लगातार तीन घंटे अपने विषय का प्रतिपादन करने के बाद जब जार्ज कार्वर रुके, तब लोगों को समय का भान हुआ ।

जब विषय सरस हो, लोकोपयोगी हो, तो वार्ता सार्थक होती है, उसमें भाग लेने वालों को आनंद भी आता है ।

यथा शरीरवस्त्रोपकरणानामथाऽपि च ।
पात्राणां भवनादेश्च स्वच्छता दैनिकी मता ॥ २७॥
सदस्यानां कुटुम्बस्य हृदयेषु चराण्यपि ।
मालिन्यादीनि नित्यं हि विनाश्यानि शुभे क्षणे ॥ २८॥
तेषां स्थाने सुसंस्कारान् स्थापयेदीदृशांस्तु ये ।
व्यवहारेषु प्रत्यक्षं दृश्यन्ते क्वचिदेव तु ॥ २९॥
कर्हिचित्तु परं पृष्ठेष्वितिहासस्य वा पुनः ।
पुराणस्य च विद्यन्ते गाथाः स्वर्णाक्षराङ्किताः ॥ ३०॥

भावार्थ-जिस प्रकार शरीर, वस्त्र, बर्तन, उपकरण, मकान, फर्श आदि की नित्य सफाई की जाती है । उसी प्रकार परिवार के सदस्यों के मनों पर जमने वाले नित्य के छाए गुबार की दैनिक सफाई ठीक समय पर होनी चाहिए । उसके स्थान पर ऐसे सुसंस्कार बोए जाने चाहिए, जो प्रचलन में प्रत्यक्ष तो कभी-कभी, कहीं-कहीं ही दीखते हैं, किन्तु इतिहास-पुराणों के पृष्ठ उनकी कथा-गाथाओं के स्वर्णाक्षरों से भरे पड़े हैं ॥ २७-३०॥

व्याख्या-अंतःकरण की निर्मलता ही व्यक्ति को ऊँचा उठाती है । बाहर से कोई कैसा भी दीखे इससे क्या, मन साफ होना चाहिए । वातावरण के प्रभाव से कुसंस्कार अपनी प्रतिक्रिया निश्चित ही दिखाते हैं । इनकी नित्य प्रतिदिन सफाई होनी चाहिए एवं पवित्र-श्रेष्ठ संस्कारों का बीजारोपण हो, इसके लिए परोक्ष रूप से प्रेरणाप्रद उदाहरणों को सामने रख उनसे शिक्षा ली जानी चाहिए । इसके लिए स्वयं को परिष्कृत करना पड़ता है । गलने के लिए सतत तत्पर रहना होता है ।

पहले गलो, फिर ढलोगे

मिट्टी ने कुम्हार से कहा-"मुझे ऐसा पात्र बना दीजिए, जो अपने में शीतल जल भर कर प्रियतम के होठों से लग सके ।" कुम्हार ने कहा-"यह तभी संभव है, जब तुम फावड़े से खुदने, गधे पर चढ़ने, डंडे से पिटने, पैरों से रौंदी जाने, आग में तपने का साहस जुटा सको । इससे कम में किसी की महान आकांक्षाएँ पूरी हुई नहीं हैं ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बहिरंग मत देखो

किसी का मूल्यांकन बहिरंग रूप से नहीं, उसकी संस्कार निधि द्वारा किया जाना चाहिए । किसी ने पूछा–"कौए का रंग कैसा है ?" सीधा उत्तर था काला । पर विचारशील ने कहा–"नहीं, वह लाल और सफेद भी है । बाहर से न दीख पड़ने वाला उसका खून लाल और अस्थि पंजर सफेद होता है ।" बाहर से जो दीखता है वही सब कुछ नहीं है ।

प्रतिभा का सही मूल्यांकन

उद्यान में भ्रमण करते-करते सहसा राजा विक्रमादित्य महाकवि कालिदास से बोले–"आप कितने प्रतिभाशाली हैं, मेधावी हैं, पर भगवान ने आपका शरीर भी बुद्धि के अनुसार सुंदर क्यों नहीं बनाया ?" कुशल कालिदास राजा की रूप गर्वोक्ति समझ गए । उस समय तो वे कुछ भी न बोले । राजमहल में आकर उन्होंने दो पात्र मँगाए–एक मिट्टी का और एक सोने का । दोनों में जल भर दिया गया । कुछ देर बाद कालिदास ने विक्रमादित्य से पूछा–"राजन किस पात्र का जल अधिक शीतल है ?" "मिट्टी के पात्र का"–विक्रमादित्य ने उत्तर दिया । तब मुस्कराते हुए कालिदास बोले–"जिस प्रकार शीतलता पात्र के बाहरी आधार पर निर्भर नहीं है, उसी प्रकार प्रतिभा भी शरीर की आकृति पर निर्भर नहीं है । विद्वत्ता और महानता का संबंध शरीर से नहीं आत्मा से है ।"

योजनाबद्ध तैयारी

जन सामान्य की दृष्टि तो स्थूल परिकर पर ही जाती है । साज-सज्जा, बनावट, शृंगार के स्थान पर परिवार के सदस्यों को यदि सुसंस्कारों की शिक्षा दी जाए, उन्हें जीवन के आरंभ से ही ऐसे ढाँचे में ढालने हेतु वातावरण बनाया जाय, तो व्यक्ति को सही अर्थों में महामानव के रूप में किसी भी समुदाय, राष्ट्र के सभ्य नागरिक के रूप में विकसित किया जा सकता है ।

महत्वाकांक्षी जोशुआ लेवमेन की भावी रूपरेखा के संदर्भ में अनेक योजनाएँ बनाकर विद्वान युकाची के पास ले गया और उनसे पूछा–"वह उन्हें पूरा करने के लिए क्या तैयारी करे ।" युकाची ने वह सूची ध्यानपूर्वक देखी और मुस्कराते हुए उसे वापस लौटा दिया । उनने कहा–"बच्चे ! इन सब योजनाओं से पहली योजना का तो कहीं नाम भी नहीं है और उसके बिना तुम्हारा बढ़-चढ़ कर सोचना व्यर्थ है । जोशुआ ने चकित होकर पूछा–"भला, वह क्या योजना होनी चाहिए ?" उन्होंने कहा–"अपने स्वभाव और चरित्र का निर्माण, जिसके बिना कोई व्यक्ति न बड़ा बन सकता है और न बड़ा काम कर सकता है ।"

स्वयंसेवक की कर्तव्य-परायणता

जब बच्चे को बाल्यकाल से ही अच्छे संस्कार मिलते हैं, तो वह कर्तव्य निष्ठा उसमें विकसित होती है, जो उसके व्यवहार में तभी से परिलक्षित होने लगती है ।

सन् १८८५ । पूना के न्यू इंगलिश हाईस्कूल में समारोह के प्रमुख द्वार पर एक स्वयंसेवक को इसलिए नियुक्त किया गया कि वह आने वाले अतिथियों के निमंत्रण पत्र देखकर सभा-स्थल पर यथास्थान बिठाल सके । उस समारोह के मुख्य अतिथि थे चीफ जस्टिस महादेव गोविंद रानाडे । जैसे ही विद्यालय के फाटक पर पहुँचे वैसे ही स्वयंसेवक ने अंदर जाने से रोक दिया और निमंत्रण पत्र की माँग की । "बेटे ! मेरे पास तो कोई निमंत्रण पत्र है नहीं ।"–रानाड़े ने कहा । तब आप अंदर प्रवेश न कर सकेंगे । स्वयंसेवक का नम्रतापूर्ण उत्तर था । द्वार पर रानाड़े को रुका देख स्वागत समिति के कई सदस्य आ गए और उन्हें अंदर मंच की ओर ले जाने का प्रयास करने लगे । पर स्वयंसेवक ने आगे बढ़कर कहा–"श्रीमान् ! मेरे कार्य में यदि स्वागत समिति के सदस्य ही रोड़ा अटकायेंगे, तो फिर मैं अपना कर्तव्य कैसे निभा सकूँगा ? कोई भी अतिथि हो उसके पास निमंत्रण पत्र होना ही चाहिए । भेदभाव की नीति मुझ से नहीं बरती जाएगी ।" यही स्वयंसेवक आगे चलकर गोपाल कृष्ण गोखले के नाम से प्रसिद्ध हुआ और देश की बड़ी सेवा की ।

आदर्शानां प्रतिष्ठा तु गृहेष्वावश्यकी मता ।
उपायः सरलश्चात्रादर्शवादिनृणां समे ॥ ३१॥
श्रावयन्तु जनान् स्वांस्तु चरितानि महान्ति हि ।
यान्नराननुकर्तुं च नीतिरस्माभिरिष्यते ॥ ३२॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एतदर्थं च सर्वेषु पूजास्थाणं गृहेषु तु ।
भवेदेवाप्यलंकारमङ्गूषेव गृहस्य सः ॥ ३३॥
पुस्तकालय एकस्तु यमाश्रित्य च शिक्षिताः ।
आप्तवाक्यानि जानन्तु श्रावयन्त्वप्यशिक्षितान् ॥ ३४॥
वस्त्राणां खाद्यवस्तूनां दैनिकी साऽनिवार्यता ।
भवत्यपेक्षितैवं हि ज्ञानस्याऽस्मिन् हि मन्दिरे ॥ ३५॥
नित्यं सम्मिलितं तत्स्यात् साहित्यमुत्तमं मता ।
जीवनस्य विकासाय स्वाध्यायस्यानिवार्यता ॥ ३६॥
अस्याः पूर्त्यै स्थापना स्याद् गृहेष्वत्र समेष्वपि ।
ज्ञानमन्दिरसंज्ञानां पुस्तकालयरूपिणाम् ॥ ३७॥

भावार्थ–घर में आदर्शों की प्रतिष्ठापना आवश्यक समझी जानी चाहिए और इसके लिए सरल उपाय यही है कि उन आदर्शवादी महामानवों की चरित्र–गाथाएँ परिजनों के सामने प्रस्तुत की जा सकें, जिनके अनुकरण करने की बात सोची और रीति–नीति अपनाई जा सके । इस हेतु हर घर में पूजा–स्थान, आभूषण रखने की पिटारी की भाँति ही एक घरेलू पुस्तकालय होना चाहिए, जिसके सहारे घर के शिक्षितों को आप्तजनों के परामर्श पढ़ने तथा अशिक्षितों को सुनने के लिए मिलते रहें । जिस प्रकार बच्चों को, खाद्य पदार्थों की आवश्यकता आए दिन पड़ती है, इसी प्रकार के ज्ञान मंदिर कक्ष में नित्य सत्साहित्य सम्मिलित किया जाना चाहिए । स्वाध्याय जीवन विकास की महती आवश्यकता है । इसकी पूर्ति में घरेलू ज्ञान मंदिरों की स्थापना होनी चाहिए ॥ ३१–३७॥

व्याख्या–यहाँ पुरुषों की जीवन गाथाएँ आदर्शों के व्यावहारिक शिक्षण के लिए सर्वोत्तम हैं । उन्होंने जीवन में किस तरह कठिनाइयों के बीच से निकलते हुए विभिन्न परिस्थितियों का साहस से मुकाबला किया, किस तरह से प्रखरता अर्जित करते हुए वे वर्तमान स्थिति तक पहुँच पाए, इतिहास में यश-कीर्ति पा सके ? यह घटनाओं के माध्यम से भली-भाँति हृदयंगम किया जा सकता है । हमारे दैनंदिन जीवन में जिस तरह शरीर को जीवित बनाए रखने के लिए खाद्य की आवश्यकता पड़ती है, उसी प्रकार मानसिक आहार के रूप में सत्साहित्य की व्यवस्था यदि होती चले, तो समग्र विकास संभव है । श्रेष्ठ विचारों की आवश्यकता को आत्मिक प्रगति के लिए भली-भाँति समझते हुए हर घर-परिवार में ऐसे शिक्षण की व्यवस्था की जा सकती है, हर परिजन में सत्साहित्य के प्रति रुचि जगाई जा सकती है ।

उत्तम पुस्तकें जागृत देवता हैं

ज्ञान वृद्धि के लिए, ज्ञानोपासना के लिए पुस्तकों का अध्ययन एक महत्वपूर्ण आधार है । मानव जाति द्वारा संचित समस्त ज्ञान पुस्तकों में संचित है । इसलिए हर परिवार के प्रत्येक सदस्य को उत्तम पुस्तकों का अध्ययन करना आवश्यक होता है । इसीलिए तो मिल्टन ने कहा है–"अच्छी पुस्तक एक महान आत्मा का जीवन रक्त है ।" क्योंकि उसमें उसके जीवन का विचार-सार सन्निहित होता है । ग्रंथ सजीव होते हैं, उनमें आत्मा होती है । सद्ग्रंथों का कभी नाश नहीं होता । सिसरो ने कहा है–"ग्रंथ रहित कमरा आत्मा रहित देह के समान है ।" तात्पर्य यह है कि उत्तम पुस्तकें नहीं होने से मनुष्य ज्ञान से वंचित रह जाता है और ज्ञान रहित मनुष्य जीवन मुर्दे के समान व्यर्थ है । जो व्यक्ति दिन-रात अच्छी पुस्तकों का संपर्क प्राप्त करते हैं, उनमें मानवीय चेतना ज्ञान प्रकाश से दीप्त होकर जगमगा उठती है । इसीलिए तो लोकमान्य तिलक ने कहा है–"मुझे नरक में भेज दो, मैं वहाँ भी स्वर्ग बना लूँगा, यदि मेरे पास अच्छी पुस्तकें हों ।"

मानवीय प्रगति के प्रमुख आधारों में उत्तम पुस्तकों के स्वाध्याय का विशिष्ट महत्व रहा है ।

जार्ज वाशिंगटन के मन में स्वतंत्रता की अमर आग पुस्तकों ने ही लगाई थी । **रोम्याँ रोलाँ** के उपन्यास 'जां क्रिस्तोफ' ने हजारों लोगों में नई जीवन-दृष्टि जगाई । **हैरियट स्टो** की पुस्तक 'टाम काका की कुटिया' ने अमरीका एवं पाश्चात्य जगत में हलचल मचा दी थी । तो **गोर्की** की पुस्तक 'माँ' ने रूस को हिला दिया था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

हीगेल के दर्शन के अध्ययन ने मार्क्स को अपनी जीवन दृष्टि के निर्धारण के लिए प्रचुर सामग्री दी तथा एडमस्मिथ, डेविड रिकार्डो आदि अर्थशास्त्रियों की कृतियों ने अर्थशास्त्रीय दृष्टि दी । इस मेधावी सिद्धांतकार के जीवन में सदैव पुस्तकों का अत्यधिक महत्व रहा और जीवन के बहुमूल्य वर्ष उसने गंभीर अध्ययन में बिताए । लेनिन को रूसी समाजवादी क्रांति की प्रेरणा **मार्क्स एंजेल्स** की प्रभावी रचनाओं से ही मिली । इस प्रकार अमरीका और रूस दोनों के स्वतंत्रता-संग्राम में पुस्तकों की विशेष भूमिका रही । अफ्रीकी देशों में जो जागृति दिखाई पड़ रही है, उसमें भी पुस्तकों की प्रेरणाएँ अंतर्निहित हैं । **केनेथ काउंडा, जोमो, केन्याता, मकारियोस** सभी ने किसी प्रत्यक्ष सत्संग से नहीं प्रेरक पुस्तकों से ही संघर्ष की प्रेरणा पाई ।

माओत्सेतुङ्ग को मार्क्स की ही नहीं, **सनयात सेन** की भी पुस्तकों ने प्रभावित किया । **होची मिन्ह और वेम्वेवारा** मार्क्सवादी साहित्य के अध्येता भी थे, प्रणेता भी ।

भारतीय क्रांतिकारियों के जीवन में **बंकिम** के 'आनंद मठ' **शरत्** के 'पथेर दावी' और **लोकमान्य तिलक** के 'गीता रहस्य' की विशिष्ट भूमिका रही है । **विवेकानंद और अरविंद** की कृतियों ने अनेक अभिनव राष्ट्रीय, सांस्कृतिक एवं सामाजिक गतिविधियों को शक्ति दी । जबकि खुद विवेकानंद और अरविंद ने वेद-उपनिषद् एवं भारतीय शास्त्रों तथा पाश्चात्य दार्शनिक ग्रंथों का गंभीर अध्ययन किया था ।

महापुरुषों ने घरेलू ज्ञान-मंदिरों की, पुस्तकों से प्रेम की उपयोगिता की भूरि-भूरि प्रशंसा की है ।

दार्शनिक **एमर्सन** कहा करते थे कि पुस्तकों से प्रेम ईश्वर के राज्य में पहुँचाने का विमान है । **सिसरो** के अनुसार 'अच्छी पुस्तकों को घर में संचित-संग्रहीत करना घर को देव मंदिर बनाना है ।'

कैम्पिस ने एक बार अपने साथियों से कहा था-"अपने कोट बेच कर उत्तम पुस्तक खरीदो । कोट के बिना जाड़ों में शरीर को कष्ट होगा, किन्तु पुस्तकों के बिना तो आत्मा ही तड़पती रहेगी ।"

दक्षिण भारत के मुत्तस्वामी अय्यर

दक्षिण भारत के निर्धन बालक को अपनी स्वाध्याय की आकांक्षा को तृप्त करने के लिए सड़कों में जलने वाली बत्तियों के नीचे पढ़ना पड़ता था । किताबें खरीदने के लिए पैसे नहीं होते थे, इसलिए वह पुस्तकालय की शरण लेता था । इस तरह उसने ज्ञानवृद्धि की साधना सतत जारी रखी और एक दिन उसकी बौद्धिक प्रतिभा इस योग्य हुई कि ब्रिटिश सरकार ने उसे हाईकोर्ट का न्यायाधीश नियुक्त किया । वह बालक सर टी० एस० मुत्तस्वामी अय्यर पहले भारतीय थे, जिनको इस तरह का महत्वपूर्ण पद प्रदान किया गया ।

ज्ञानार्जन के इस लाभ को जिसने भी समझा, वह गई-गुजरी स्थिति से निकलकर कुछ से कुछ हो गया । ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जिनसे पुस्तकालयों की उपयोगिता का पता चलता है ।

जीवन जीने की प्रेरणा

एक दिन, दो दिन और लगातार कई दिन तक भी रात-रात भर सितारों की गिनती करते देखकर आखिर एक दिन माँ ने अपने बच्चे से पूछ ही लिया-"बेटे ! तुम रात भर आकाश की ओर मुँह किए क्या गिना करते हो ?" "आकाश के सितारे माँ ! बहुत प्रयत्न करता हूँ, किन्तु आकाश इतना विराट् और नक्षत्र इतने अधिक हैं कि वे गिनने में नहीं आते ।" माँ ने थपकी दी और बोली-"बेटा ! देर हुई सो जा, यह सितारे गिनने को नहीं वरन् इसलिए बनाए गए हैं कि लोग उन्हें देखकर स्वयं भी प्रकाशपूर्ण जीवन जीना सीखें ।"

पुस्तक ही खुराक

महापुरुषों के जीवन भी इसी तरह प्रेरणाप्रद बनते हैं । उनकी जीवनियाँ पढ़कर लोग इसी प्रकार प्रेरणा ग्रहण करते हैं ।

महापुरुषों की यही विशेषता रही है कि वे स्वयं आजीवन स्वाध्यायशील रहे हैं । आचार्य अत्रे उन दिनों बीमार पड़े थे । फिर भी चारपाई पर सिरहाने, बगल में उनने ढेरों पुस्तकें जमा कर रखी थीं । उस कष्टकर मन:स्थिति में पढ़कर मन को हलका करते थे । एक मित्र मिलने आए और उन्होंने पूर्ण विश्राम की बात कहते हुए पढ़ने से बचने का परामर्श दिया । अत्रे जी ने मुस्कराते हुए कहा-"मैं बीमारी की खुराक बना हुआ हूँ, पर मैं भूखा कैसे रहूँ ? अपनी खुराक पुस्तकों से हासिल करता हूँ ।"

इसी प्रकार सभी की अभिरुचि यदि ज्ञानार्जन-स्वाध्याय के प्रति जाग उठे, तो उनका व्यक्तित्व भी अपूर्ण न रहे । जो इसमें पिछड़ जाते हैं, वे पछताते हैं ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ज्ञान साधना के प्रतिफल

एक हृष्ट-पुष्ट और बलिष्ठ शरीर का स्वामी नवयुवक किसी काम से कचहरी में गया । पढ़ने-लिखने में वह कोरा था । इसलिए उसे मुंशी के पास जाना पड़ा । मुंशी के पास जाकर वह बोला-''भई ! मेरी अर्जी लिख दो । जरा जल्दी है ।''

अर्जी लिखाने के लिए और भी लोग खड़े थे । सो मुंशी ने कहा-''लाइन से लग जाओ, नंबर आने पर अर्जी लिख देंगे ।''

दोपहर बाद दो बजे कहीं उसका नंबर आया । इतनी देर में वह खड़ा-खड़ा थककर चूर हो गया । रह-रह कर उसे यह अनुभव हो रहा था कि शारीरिक कष्ट से समर्थ और बलवान होते हुए भी वह बौद्धिक दृष्टि से परावलंबी ही है ।

उस दिन से उसने स्वाध्याय साधना के साथ-साथ ज्ञान साधना पर भी ध्यान देना आरंभ किया । दिन-रात एक करके उसने अपनी बौद्धिक क्षमता बढ़ाई । उसी का परिणाम था कि एक दिन वह बिहार प्रांत का स्वायत्त मंत्री बना । उन्हें आज भी लोग गणेश दत्त सिंह के नाम से जानते हैं ।

प्रतिभाशाली डॉ० लोहिया

डॉ० लोहिया जी को जिस प्रकार देशभक्ति और राष्ट्र प्रेम, पिता से विरासत में मिले थे, उसी प्रकार उन्हें मस्तमौलापन भी पिता से प्राप्त हुआ था । यही कारण था कि जब वे जहाज से मद्रास बंदरगाह पर उतरे, तो उनके पास कलकत्ता पहुँचने के लिए टिकट के पैसे तक नहीं थे । किराए का प्रबंध भी उन्होंने अजीब ढंग से किया, बंदरगाह से चलकर वे प्रख्यात अखबार हिंदू कार्यालय में पहुँचे और संपादक से मिले । संपादक से उन्होंने कहा-''मुझे आपके समाचार पत्र के लिए दो लेख देने हैं ।'' ''दीजिए, कहाँ हैं लेख''-संपादक ने पूछा । कागज, कलम दें, मैं अभी लिखकर देता हूँ ।'' लोहिया के मुँह से यह सुनकर संपादक उनकी ओर ताकने लगा । तब डॉ० लोहिया ने वास्तविक कारण बता दिया और 'हिंदू' के संपादक ने उन्हें लेख लिखने के लिए आवश्यक उपकरण उपलब्ध करा दिए । कुछ घंटों में डॉ० लोहिया ने दो लेख इतने जानदार लिखे कि संपादक भी उनकी प्रतिभा का लोहा मान गया । लेख देखकर संपादक ने उपयुक्त पारिश्रमिक दिया और उसी के द्वार वे कलकत्ता पहुँचे ।

ज्ञान की महत्ता सर्वोपरि है । यदि यह जाना व समझा जा सके, तो एक भी पल व्यर्थ न गँवाया जाय एवं सतत सत्साहित्य के स्वाध्याय में स्वयं को निरत रखा जाय ।

देश की गाड़ी खींचने वाले अग्रदूत

लोकमान्य तिलक इंग्लैंड से स्वदेश लौटे । उनके सम्मान में स्वागत समारोह किया गया । समारोह की समाप्ति पर वे अपनी बग्घी में बैठकर चलने लगे । उनको पहनाई गई मालाएँ भी बग्घी में रखी गईं । लोकमान्य ने मालाएँ कोचवान को देकर हँसते हुए कहा-''अपने घोड़ों को पहना दो । जैसे ये घोड़े इस बग्घी को खींचते हैं, वैसे ही हम देश की गाड़ी खींचते हैं । दोनों में अंतर कुछ नहीं है ।''

अपनी इसी निरहंकारिता, निस्पृहता के कारण वे लोकमान्य कहलाए, जन-जन के लिए प्रेरणा के स्रोत बने ।

इसमें बुरा क्या किया

हजरत उमर जब सोने को हुए, तो एक नौकर उन पर पंखा झलने के लिए लगा दिया गया । हजरत को तो नींद नहीं आई, पर नौकर सो गया । हजरत उठ गए और नौकर पर पंखा झलते रहे । जब नींद खुली, तो वह माफी माँगने लगा । हजरत ने हँसते हुए कहा-''सोने वाले पर पंखा झला जाने वाला था, वह करके मैंने क्या बुरा किया ?''

मुझे शीशे की क्या आवश्यकता

महापुरुषों के जीवन प्रत्यक्ष प्रकाश स्तंभ होते हैं । उनके अंदर कोई भी व्यक्ति झाँक कर प्रकाश की किरण पा सकता है । उनकी सरलता जीवन जीने का सही शिक्षण देती है ।

एक बार एक पत्र प्रतिनिधि गांधी जी से मिलने गया । उसे मालूम था कि गांधी जी शीशे की मदद के बिना भी शेव बना सकते थे, गांधी जी से उसने पूछा-''बापू, आप शीशे में मुँह क्यों नहीं देखते ।'' ''मुझसे मिलने वाला हर व्यक्ति मेरा मुँह देखता ही है''-गांधी जी ने जवाब दिया-''तो फिर मुझे खुद अपना मुँह देखने की क्या आवश्यकता है ।''

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

एक दिन का डिक्टेटर

एक बार पत्रकारों की गोष्ठी में बापू राजनैतिक प्रसंगों पर उत्तर दे रहे थे । उसी समय हास्य विनोद की मुद्रा में एक पत्रकार ने पूछा कि यदि आपको एक दिन के लिए भारत का डिक्टेटर बना दिया जाय, तो क्या करेंगे ? बापू ने कहा–"मैं सभी विचारशील व्यक्तियों और सरकारी कर्मचारियों को सफाई में जुटा दूँगा । सफाई ही सुव्यवस्था है । इसका जब तक महत्व न समझा जाएगा, तब तक किसी व्यक्ति या देश की वास्तविक उन्नति होना असंभव है ।"

गंदगी की उपेक्षा नहीं

गांधी जी नोआखाली में शांति स्थापना के लिए भ्रमण कर रहे थे । पीड़ितों को सांत्वना भी देते । साथ ही छोटी पगडंडियों के इर्द-गिर्द हुए मल-मूत्र को भी पत्तों से समेट कर जमीन में गाड़ते चलते । वे कहते–"सफाई मानवी गुणों में सबसे प्रमुख है । उसके लिए कोई विशेष समय या कार्यक्रम निर्धारित नहीं किया जा सकता । वह किसी भी कार्य के साथ चलते-चलते भी होती रह सकती है । केवल उसकी महत्ता समझी जानी चाहिए ।"

फिर भी क्रोध न आया

पैठण के एक व्यक्ति को कुछ रुपयों की जरूरत थी । साहूकार ने कहा–"तुम संत एकनाथ को क्रुद्ध करके दिखा दो, तो माँगी हुई राशि उसे पुरस्कार रूप में मिल जाएगी । वह उद्दंड संत के पास जा पहुँचा । वे भोजन कर रहे थे । उनकी गोदी में जा चढ़ा । संत ने उसे बाल भगवान समझा और सिर पर हाथ फेरते हुए अपने साथ उसे भी भोजन कराने लगे । यहाँ वह बाजी हार गया, तो उसने दूसरी चाल चली । एकनाथ की पत्नी के पीठ पर उनका कंधा पकड़ कर लटक गया । धर्मपत्नी ने पीछे को हाथ करके, उसे सँभलकर पकड़ लिया और कहा–"मेरा बच्चा भी तो इसी तरह खेलता है । उससे हाथ का सहारा देकर पकड़े रहती हूँ, तो तुम्हें उसी तरह क्यों न सँभालूँगी, अपरिचित हो तो क्या ?" दोनों चालें बेकार हो जाने पर वह वापस लौटा, तो कारण मालूम होने पर संत प्रेमवार्त्ता करते हुए साहूकार के घर तक चले गए और वहाँ पहुँचकर क्रोध का अभिनय करने लगे । शर्त जीतने पर जब उसे रुपये मिल गए, तो वे हँसते हुए घर वापस लौट गए । क्रोध उनके स्वभाव में न था । यदि इस प्रकार के व्यावहारिक शिक्षण की व्यवस्था घर के हर सदस्य के लिए संभव हो सके, तो सहिष्णुता, स्वावलंबन, लगन, सेवा-निष्ठा जैसे सद्गुणों का विकास उसके जीवन में स्वयमेव होता पाया जा सकता है ।

कौटुम्बिकाय नित्यं च सत्संगाय भवेदपि ।
शुभः कथाप्रसंगस्तु शुभसंस्कारदायकः ॥ ३८॥
कथा श्रोतुं समाना वै रुचिः पुसां भवत्यलम् ।
बालानामथ वृद्धानां नारीणामथवा नृणाम् ॥ ३९॥
व्यवस्थायाञ्च जातायामस्यामत्र भवत्यलम् ।
मनोरञ्जनमस्त्येव कुटुम्बस्य प्रशिक्षणम् ॥ ४०॥
दुश्चिन्तनपरित्यागसद्विचारग्रहस्य च ।
शिक्षा प्रत्यक्षतो नैव लोके रुचिकरा नृणाम् ॥ ४१॥
अत्र तेऽनुभवन्त्येव स्वापमानमिवाथ च ।
अहंत्वात् सत्परामर्शं श्रोतुं स्वस्मिंश्च तुच्छताम् ॥ ४२॥
अनुभवन्ति न सज्जन्ते तच्छ्रोतुं बोद्धुमेव वा ।
लाभदाऽतः परोक्षेण शिक्षा साऽऽदर्शवादिनी ॥ ४३॥

भावार्थ–पारिवारिक सत्संग के लिए घर में नित्य का शुभ संस्कारदायी कथा–प्रसंग चलना चाहिए । कथा कहने–सुनने में बाल–वृद्ध, नर–नारी सभी को समान रूप से अभिरुचि होती है । इसकी व्यवस्था चल पड़ने पर उपयोगी मनोरंजन भी होता है और प्रशिक्षण का सुयोग भी बनता है । दुश्चिंता न छोड़ने और सद्विचार अपनाने की प्रत्यक्ष शिक्षा लोगों को सामान्यतया रुचती नहीं । इसमें वे अपना अपमान अनुभव करते हैं । अहंकारवश वे सत्परामर्श सुनने में अपनी हेठी मानते हैं, उन्हें सुनने–समझने तक को तैयार नहीं होते । इसलिए आदर्शवादी शिक्षा को कथा–प्रसंगों के माध्यम से परोक्ष रूप से देने में ही लाभ है ॥ ३८–४३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्याख्या–सत्संग-ज्ञान गोष्ठी का सबसे अच्छा स्वरूप है–कथानकों-दृष्टांतों के माध्यम से सुसंस्कारों का शिक्षण । इसके दो लाभ हैं । सुरुचिपूर्ण एवं सुग्राह्य होने के कारण वे नीरसता न पैदा कर स्वस्थ मनोरंजन भी करते हैं, साथ ही परोक्ष रूप से शुभ प्रेरणाएँ भी देते हैं । किसी को सुधारने के लिए सीधे कोई नैतिक शिक्षा न देकर, उसके अहं को चोट पहुँचाए बिना, उसी बात को कथा-प्रसंगों के माध्यम से कह दिया जाय । यह शैली शिष्टाचार की दृष्टि से भी उचित है एवं देव संस्कृति की परंपरा का एक अंग होने के कारण सबसे अनुकूल पड़ती है । सत्संग भी महापुरुषों का ही होना चाहिए अथवा उसकी पूर्ति सत्साहित्य के माध्यम से की जानी चाहिए, अन्यथा तथाकथित नाम वेशधारी बाबाओं, कुचालियों और वाक्-जंजाल में उलझाने वाले व्यक्तियों का सत्संग तो उलझन और भ्रम ही पैदा करते हैं । ज्ञानार्जन के लिए, सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन के लिए, कथा-प्रसंगों का स्वाध्याय, श्रवण-मन सबके लिए सर्वसुलभ पड़ता है । ज्ञान प्राप्त करने के लिए वर्ग एवं आयु का कोई निर्धारण नहीं, वह सबके लिए समान है ।

ज्ञान मार्ग सबसे लिए एक सा

सिकंदरिया का राजा टालेमी, यूक्लिड से ज्यामिति सीख रहा था, किन्तु यह कठिन विद्या उनके पल्ले ही नहीं पड़ रही थी । एक दिन टालेमी अपना धैर्य खो बैठा । उसने अपने गुरु से पूछा–"क्या ज्यामिति सीखने का कोई सरल मार्ग नहीं है ?" यूक्लिड ने गंभीरता से कहा–"राजन् ! आपके राज्य में जनसाधारण और अभिजात्य वर्ग के लिए पृथक मार्ग हो सकते हैं, किन्तु ज्ञान का मार्ग सबके लिए एक-सा ही है । इसमें अभिजात्य वर्ग के लिए कोई राजमार्ग नहीं है ।" बात टालेमी की समझ में आ गई । फिर इसके बाद टालेमी ज्यामिति सीखने के लिए कठोर परिश्रम करने लगा ।

प्रभु की प्रेरणा

कभी-कभी अनीति में प्रवृत्त होने वाले भी तर्क का आश्रय लेकर बचने का मार्ग निकालने का प्रयास करते हैं । किन्तु समझदार व्यक्ति उन तर्कों का सही जवाब परोक्ष प्रेरणा रूप में देते हुए, उन्हें सही मार्ग पर चलने हेतु प्रवृत्त कर देते हैं ।

एक न्यायाधीश था, वह बड़ा भक्त था । एक बार एक चोर उसके न्यायालय में लाया गया । पूछने पर, कहने लगा–"जज साहब, आप जैसे साधु वृत्ति के व्यक्ति के सामने उपस्थित हो मुझे बड़ा आनंद आ रहा है । मैंने चोरी कोई अपने वश होकर नहीं की । मुझे ऐसी प्रभु प्रेरणा ही हुई कि चोरी करूँ, अतः मैंने चोरी की । मेरे हाथों का दोष नहीं ।" चोर का तर्क सुन कचहरी वाले विस्मित से रह गए व सोचने लगे कि देखें, ऐसे में न्यायाधीश अब कैसा दृष्टिकोण अपनाते हैं । परंतु न्यायाधीश पक्के निकले, उन्होंने फैसला सुनाया–"चोर का कथन पूर्णतः मान्य है । जिस भगवान ने उसे चोरी करने की प्रेरणा दी, उसी भगवान की प्रेरणा से मैं इस चोर को दंड देता हूँ ।"

सत् शिक्षाओं का मूल्य

एक मूर्ख मल्लाह था । वह यात्रियों को बिठाकर पार ले जाता और उतर जाने पर किराया माँगता । इस पर आए दिन झंझट होता । कटु शब्द कहने पर उसकी पिटाई भी रोज होती । एक दिन एक संत उसकी नाव में पार उतरे । रास्ते में उनने उसे दो शिक्षाएँ दीं । एक तो यह कि यात्रियों को चढ़ाने से पहले ही किराया वसूल कर लिया कर और बात-बात में आवेश में न आया कर । वार्ता करते रास्ता कट गया । संत से किराया माँगा, तो उनने कहा–"उनके पास तो कुछ भी नहीं है । जो शिक्षाएँ दी हैं, वे कम मूल्यवान नहीं हैं ।" मल्लाह ने कहा–"मुझे शिक्षा नहीं पैसा चाहिए ।" झगड़ा बढ़ने लगा । इतने में नाविक की पत्नी भोजन लेकर आई और पति को समझाया कि यह राजगुरु हैं । इनसे झगड़ा ठीक नहीं । पत्नी की शिक्षा पर उसका क्रोध और भी दूना हो गया और थाली सहित भोजन पानी में फेंक दिया । समाचार राजा तक पहुँचा, उनने सेना भेजी और मल्लाह को जेल भिजवा दिया, उसकी नाव भी जप्त कर ली । संत ने उसे जाकर छुड़ाया और समझाया कि जो दो शिक्षाएँ उसे दी थीं, वे उसे आर्थिक लाभ भी देंगी और हानियों से भी बचाएँगी ।

मल्लाह की समझ में अब वे शिक्षाएँ आईं और उसके अनुसार आचरण करके सुखी रहने लगा ।

राजा का शंका-समाधान

एक विद्वान और जिज्ञासु राजा की सभा में हर समय विद्वानों का जमघट लगा रहता था । एक रात राजा अपने शयन-कक्ष में लेटा था । ठीक सामने दीपक जल रहा था । सहसा राजा के मन में एक प्रश्न उठा–"दीपक का प्रकाश कितना उज्ज्वल है । न तेल काला है और न बाती काली है । फिर भी यह काजल उगल रहा है, ऐसा क्यों होता है ?" प्रातः होते ही उनने यह समस्या विद्वानों के समक्ष

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रखी । विद्वानों ने अपने-अपने विचार रखे, पर राजा संतुष्ट न हुआ । अंत में राजा ने राजसभा में बैठे एक वृद्ध महात्मा से पूछा-"गुरुवर ! जग को प्रकाश देने वाले दीपक के पास सिर्फ कालिमा ही क्यों रह जाती है ?" वृद्ध महात्मा बोले-"राजन् ! पहले मेरे प्रश्न का उत्तर दें, दीपक क्यों जलाया जाता है ?" "प्रकाश के लिए"-राजा ने कहा । "अर्थात अंधकार को नष्ट करने के लिए, इसका अर्थ यह हुआ कि दीपक अंधकार को खाता है । राजन्, जो जैसा खाएगा, वह वैसा ही उगलेगा । तभी तो राजन, यह कहा जाता है कि जैसा अन्न वैसा मन । जैसा पानी वैसी बानी ।" राजा इस समाधान से पूर्णतया संतुष्ट हो गए ।

महामानवों की तुलना न कर

भगवान बुद्ध का प्रवचन सुनने के उपरांत श्रेष्ठिपुत्र ने अपनी भाव श्रद्धा व्यक्त करते हुए कहा-"आप जैसा ज्ञानी-तपस्वी न कोई है और न होगा ।" बुद्ध इस पर क्रुद्ध हुए और पूछा-"अब तक जो हुए हैं और भविष्य में जो होंगे, उनके बारे में तुमने सब कुछ जान लिया है क्या ?" बात को आगे न बढ़ाते हुए उनने कहा-"आँखें खुली रखो । जो जैसा है, उसे उतना ही महत्व दो । उनकी अगलों या पिछलों से तुलना न करो । वास्तविकता को समझाने के लिए कथोपकथन की शैली को बदलना भी पड़ता है । यह अप्रीतिकर लगते हुए भी अनिवार्य है ।"

गोलिकाऽप्यङ्गसा कट्वी निगीर्या शर्करावृता ।
भवत्येव कथास्वत्र मनोरञ्जनमप्यलम् ॥ ४४॥
प्रशिक्षणं परोक्षेण भवत्यपि सुयोजितम् ।
अनुभवाच्छिक्षितं लौकैर्व्यक्तित्वोत्कृष्टताविधेः ॥ ४५॥
कृते नैवास्ति कोऽप्यत्र सरलो विधिरुत्तमः ।
प्रभावयुक्तो वा नूनमृते योग्यकथाविधिम् ॥ ४६॥
कारणं चेदमेवास्ति सूत-शौनकयोर्मुखात् ।
अष्टादशपुराणानि ख्यातान्युपपुराणकैः ॥ ४७॥
यथा ताश्च भवन्त्येवं जनांस्ताः प्रभवन्त्यपि ।
अज्ञातायां दिशायां न वहन्त्यत्र बलादिव ॥ ४८॥

भावार्थ-कड़ुवी गोली को चीनी में लपेट कर देने से, उसे आसानी से गले उतार लिया जाता है । कथाओं में रोचक मनोरंजन भी होता है और परोक्ष प्रशिक्षण भी । इसलिए अनुभव ने यह सिखाया है कि व्यक्तित्व में उत्कृष्टता का समावेश करने के लिए उपयुक्त कथा-प्रसंगों से बढ़कर और कोई सरल एवं प्रभावी तरीका नहीं है । यही कारण है कि सूत-शौनक के मुख से अठारह पुराण और अठारह उपपुराण कहलाए गए । वे कथाएँ जैसी भी भली-बुरी होती हैं, दर्शकों पर वैसा प्रभाव भी निश्चित रूप से डालती हैं और व्यक्ति अज्ञात दिशा की ओर अनचाहे भी जबरदस्ती बहने लगता है ॥ ४४-४८॥

व्याख्या-सुसंस्कारों का उपार्जन, अभिवर्धन एक समय-साध्य कष्टकर प्रक्रिया है । ढर्रे को तोड़कर सत्प्रवृत्तियाँ अपनाना कोई सरल काम नहीं । इसी कारण आर्ष साहित्य के माध्यम से ऋषिगणों ने कथा-प्रसंगों पर अत्यधिक जोर दिया । इससे जटिल आध्यात्मिक प्रतिपादन भी जन साधारण के गले उतरते चले गए । १८ पुराण, १८ उपपुराण, पंचतंत्र की कथाएँ, ईसप की कथाएँ इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । पुरातन काल में ज्ञान संगम के रूप में विचार गोष्ठियाँ कथानकों के माध्यम से ही चलती थीं । इनका प्रभाव परोक्ष रूप से सुनने अथवा पढ़ने वालों पर अवश्य पड़ता है, इसलिए विचार परिवर्तन हेतु कथानकों का आश्रय लिया ही जाना चाहिए ।

सासनी का गुरुकुल

अलीगढ़ जिले के सासनी गाँव में लक्ष्मी देवी नामक एक बाल विधवा ने कन्या गुरुकुल की स्थापना की । गाँव से कुछ दूर जंगल में यह था । झाड़ियाँ काटकर जगह बनाई गई । संस्थापिका स्वयं देहातों में जाकर कन्याओं को पढ़ाने लगती । माध्यम रहता छोटी-छोटी दैनंदिन जीवन के प्रसंग व कथाएँ । यह माध्यम उन सभी को रुचिकर लगा । आरंभ बहुत छोटा और कठिनाइयों, अभावों से भरा था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निष्ठावान की निष्ठा ने उसे गतिशील और समुन्नत बना दिया था । आज सासनी कन्या गुरुकुल सराहनीय एवं प्रगतिशील संस्थाओं में है ।

लक्ष्मी देवी का समूचा जीवन इस संस्था के लिए खाद-पानी की तरह लगा, फलतः समुन्नत वटवृक्ष की स्थिति तक पहुँच सका ।

नेकी कर-बदले में पा

ग्रीक तत्वज्ञानी डायोवीनीज से किसी ने प्रश्न पूछा-"अपने शत्रु से बदला लेने, नीचा दिखाने और उलट देने के लिए क्या करूँ ?" उससे कहा कि उसकी बुराई की तुलना में अपनी भलाई बढ़ा दे, इससे तेरे तीनों उद्देश्य पूरे हो जाएँगे ।

एक सप्ताह का समय व्यर्थ गया

एक व्यवसायी ने सुना कि राजा परीक्षित को एक सप्ताह भागवत सुनने से ज्ञान हो गया था । सो उसने एक अच्छा कथावाचक तलाश करवाया । दोनों अपने-अपने लाभ के फेर में थे । कथावाचक सोचता था, धनी से प्रचुर दक्षिणा मिलेगी । व्यवसायी हिसाब लगाता रहता कि आत्मज्ञान हाथ लगा या नहीं । एक सप्ताह बीता, धनी ने कहा-"आपने ठीक कथा नहीं सुनाई, दक्षिणा नहीं दूँगा ।" पंडित ने कहा-"तुम्हारा ध्यान दुकान में पड़ा रहा, ज्ञान कहाँ से होता ?" पंडित का मन दक्षिणा में पड़ा रहा । सो दोनों एक दूसरे को दोष लगाते हुए झगड़ने लगे । एक विचारवान व्यक्ति उधर से निकले । उन्हें फैसले के लिए बुलाया गया । उनने दोनों के हाथ-पैर बाँध दिए और कहा-"अब एक दूसरे के बंधन खोलें ।" असमर्थ होने के कारण दोनों में से किसी से भी वह न बन पड़ा । निर्णयकर्त्ता ने कहा-"पूरा मन न लगा पाने के लिए दोनों का ही एक-एक सप्ताह का समय व्यर्थ गया । अपने-अपने घर इतना घाटा उठाकर चले जाओ ।" एकात्मता के बिना आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति नहीं हो सकती ।

बहम का उपचार

मस्तिष्क पर छाई सनक को मिटाने के लिए भी उदाहरणों की शैली अपनानी पड़ती है । एक आदमी जिद्दी स्वभाव का था । संयोगवश वह पागल भी हो गया । सनक चढ़ी कि वह मर गया है और भूत बन कर घूम रहा है । बहम मिटाने के लिए अनेक ने अनेक उपचार किए, पर कोई सफल न हुआ । एक प्रख्यात मनोरोग चिकित्सक के पास उसे ले जाया गया । उसने एक उपाय किया । उसे बहुत समय तक एक बात समझाई कि भूत के शरीर में खून नहीं होता और चोट लगने पर भी कुछ नहीं निकलता । रोगी की समझ में बात आ गई, तब एक बड़ा-सा दर्पण उसके सामने रखा गया और हाथ में तनिक-सी खरोंच लगाकर, खून निकालकर दर्पण में दिखा दिया गया । पूछा-"जब तुम्हारी देह में खून निकलता है, तो फिर भूत कैसे हुए ? पगले को समझ में आ गया कि वह मरा नहीं है । उसने नए सिरे से सोचना व जीना आरंभ कर दिया ।"

नीति शिक्षण

कई बार प्रसंगों के अनुरूप कथाओं को चुना जाता है । अनीति-अन्याय, प्रतिकूलताएँ, क्रोध-आवेश जैसी प्रवृत्तियों की प्रतिक्रिया समझाने के लिए उदाहरणों का ही प्रश्रय लिया जाता है । शिक्षक, उपदेशक, संत इस माध्यम से ही नीति-शिक्षा देते हैं । एक नीति कथा है-एक शेर ने कुछ सियारों के सहयोग से बारहसिंगा मारा । मांस के बटवारे का निपटारा सिंह को ही करना था । उसने शिकार के टुकड़े किए । कहा-"एक टुकड़ा राजवंश का कर । दूसरा टुकड़ा अधिक पुरुषार्थ करने से मेरा । तीसरा स्वयंवर जैसा है, उसे पाने के लिए जो प्रतिद्वंद्विता में आना चाहे, सो संघर्ष के लिए तैयार हो । सियार चुपचाप खिसक गया । सिंह ने पूरा बारहसिंगा खा डाला ।" शिक्षा यही है कि धूर्त के साथ सहयोग भी हितकारी नहीं होता । जहाँ तक हो, उससे बचना ही चाहिए ।

घमंडी अजगर

एक अजगर को अपने आकार और पराक्रम पर बड़ा अभिमान था । वह यह भी सोचता था कि जिसे भी अपनी पकड़ में जकड़ लेगा, उसका कचूमर निकालकर ही छोड़ेगा । मंदिर की चौखट पर जड़े हुए संगमरमर का शेर उसने देखा, तो गुस्से में आग-बबूला हो गया । मुझे देखकर बड़े-बड़े जानवर डर कर भागते हैं, एक तू है, जो जहाँ का तहाँ बैठा अकड़ रहा है । सिंह कुछ बोल नहीं सकता था, सो बोला भी नहीं । अजगर उससे लिपट गया और निगलने लगा । प्रयास निष्फल गया । जितना-जितना वह क्रुद्ध होता और आक्रमण करता, उतनी ही चोट उसे लगती और लहूलुहान होता जाता । अंत में उसे अपनी मूर्खता समझ में आई और लहूलुहान शरीर लेकर बिल में वापस लौट गया । आवेशग्रस्त की ऐसी ही दुर्गति होती है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

मौत को भुला दो, डरो मत

जीवन और मृत्यु के संबंध में प्रतिपादन करते हुए, स्वामी रामतीर्थ ने एक मार्मिक कथा लिखी–जिंदगी उगते सूर्य की दिशा में अपने ढंग से बढ़ी चली जा रही थी । एक विराम पर उसने पीछे मुड़कर देखा, तो चौंक पड़ी । चांडालिनी सी काली और कुरूप छाया पीछे-पीछे दबे पाँवों चली आ रही थी । जिंदगी चिल्लाई । अभागिन, तू कौन है ? मेरे पीछे क्यों आती है ? तेरी काली कुरूप काया को देखकर मुझे तो भारी डर लगता है, जा भाग, मुझसे दूर हट । छाया छुप रही । पर जिंदगी जब डरती, घिघियाती ही चली गई, तो छाया ने अपना मुँह खोला और बोली बहिन ! मैं तेरी सहचरी हूँ, तेरे साथ ही चल रही हूँ और अंत में हमें और तुम्हें एक ही होकर रहना है । मुझसे डरने की क्या बात ? जानती नहीं, मेरा नाम क्या है ? अच्छा तो सुनो–मुझे मौत कहते हैं । जिंदगी ने मौत को छाया बनकर पीछे लगे देखा, तो उसके डर का ठिकाना न रहा । सकपकाती, काँपती हुई वह मूर्छित होकर एक ओर गिर पड़ी । जिंदगी के सीने में दबा, उसका अंत:करण उसे आश्वस्त करने का प्रयत्न करते हुए बोला–"दीदी ! अपनी ही छाया से भला कोई डरता है ? चोर को ही अपनी छाया से डर लगता है, तुम कोई चोर थोड़े ही हो, जिसे इस तरह डरने की आवश्यकता रहे ?" तब से जिंदगी और मौत दोनों का क्रम तो यथावत् चलता आ रहा है, पर वह मौत को भुलाकर अपना काम करती रहती है, डरती नहीं ।

प्रज्ञापुराणमस्माच्च कथाग्रन्थानुरूपगः ।
कालिकीनां स्थितीनां हि मार्गदर्शक उत्तमः ॥ ४९॥
अस्य चाख्यायिकास्तस्मादैतिह्यादिकमप्यलम् ।
गृहेषु वक्तुं युज्यन्ते यथा मातामहीकथाः ॥ ५०॥
वयोवृद्धास्तु शृण्वन्ति श्रीमद्भागवतं तथा ।
रामायणादिकं यच्च युवभ्योऽपि हि रोचते ॥ ५१॥
व्यस्ता अपि च तच्छ्रोतुं पठितुं चोत्सुकाश्च ते ।
परिवारस्तरं कर्तुमुच्चगं तस्य तेषु च ॥ ५२॥
सदस्येषु विधातुं च शालीन्योदयमुत्तमम् ।
क्रमः कथाप्रसंगानामत्र स नियमो भवेत् ॥ ५३॥
प्रभवेद्दैनिकोऽभ्यासो जीवनं कर्तुमुन्नतम् ।
दैनिकक्रममस्माच्च न कदाचित् परित्यजेत् ॥ ५४॥

भावार्थ–प्रज्ञापुराण सामयिक परिस्थितियों के अनुरूप मार्गदर्शन करने के हेतु अत्यंत उपयोगी कथा–ग्रंथ हैं । इसकी कहानियाँ, इसमें दिया गया इतिहास आदि घरों में उसी प्रकार कहा जाना चाहिए, जैसा कि छोटे बच्चों को नानी की कहानियाँ सुनाई जाती हैं । वयोवृद्ध रामायण, भागवत आदि पुराण–कथायें पढ़ते–सुनते रहते हैं । युवा वर्ग को भी वे कम पसंद हों–ऐसी बात नहीं, व्यस्त रहते हुए भी वे उन्हें पढ़ने–सुनने के लिए उत्सुक रहते हैं । परिवार का स्तर ऊँचा उठाने के लिए, उसके सदस्यों में अधिक शालीनता का समावेश करने के लिए नियमित कथा–प्रसंगों का प्रवचन होना चाहिए । दैनिक अभ्यास ही जीवन को उन्नत बना सकता है, इसीलिए दैनिक कार्यक्रमों को कभी छोड़ना नहीं चाहिए ॥ ४९–५४॥

व्याख्या–परिवार संस्था में अच्छे संस्कारों का समावेश हो, नैतिक स्तर बने, इसके लिए अनिवार्य है कि कथा-प्रसंगों को, जिनमें सामान्यतया सभी रुचि लेते हैं, नियमित रूप से परिवार में कहा जाता रहे । इससे बहिरंग जीवन की समस्याओं के हल निकालने एवं मनःस्थिति के परिमार्जन करने का पथ सतत प्रशस्त होता चलेगा ।

दैवी अनुदान–आत्मावलंबी को

विधाता ने सृष्टि की रचना के दिनों मनुष्य को अधिक उपयुक्त पाया और कृपापूर्वक उसे अतिरिक्त अनुदान के रूप में प्रतिभा बाँटी । प्रतिभा के बल पर मनुष्य ने अनेक दिशाओं में उन्नति की और सुख-सुविधाओं से भरा-पूरा जीवन बिताने लगा । समय ने पलटा खाया, प्रतिभा के पीछे स्वार्थांधता जुड़ गई । फलतः प्रतिभा का उपयोग एक-दूसरे को चूसने और गिराने में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

किया जाने लगा । सृजन का जब ध्वंस में प्रयोग किया गया, तो विपत्तियों का उतरना स्वाभाविक था । सर्वत्र शोक-संताप का वातावरण बन गया । सभी लोभ, पराभव, पतन के गर्त में गिरते चले गए ।

समाचार स्रष्टा तक पहुँचे, वे दुखी हुए । स्थिति सुधारने के लिए उन्होंने देवदूत भेजे । उन्होंने विपत्तियों का कारण समझाया और फिर स्थिति को सुधारने के लिए मन:स्थिति को बदलने का मार्गदर्शन करने में कुछ उठा न रखा । लोग आदतों के इतने अभ्यस्त हो चुके थे कि बदलना तो दूर, उल्टे देवदूतों का उपहास उड़ाने और त्रास देने पर उतारू हो गए । विवश होकर वे वापस चले गए । दुर्गतिग्रस्त मनुष्य की दुर्गति दिन-दिन अधिक बढ़ती चली गई । अबकी बार मानवों ने स्वयं विधाता से प्रार्थना की और व्यथा का नया उपाय बताने का अनुरोध किया । विधाता ने इस बार और भी बलिष्ठ देवदूत भेजे, पर यह शर्त सुनाई कि जो उनका सहयोग करेंगे, उनकी सहायता की जाएगी, उन्हीं के दुख-दारिद्य दूर होंगे । वही क्रम अब तक चला आ रहा है, दैवी सहायता उन्हीं को उपलब्ध होती है, जो अपनी सहायता आप करते हैं । प्रज्ञा पुराण जैसे ग्रंथ सन्मार्ग दिखाने का, पथ-प्रदर्शक का कार्य करते हैं । अत: इसके स्वाध्याय का क्रम निरंतर चलना चाहिए, ताकि आगे बढ़ने का मार्गदर्शन मिलता रहे ।

मार्गदर्शन किनसे ? रामकृष्ण परमहंस से उनके एक शिष्य गिरीशचंद्र ने पूछा-"मुझे किस प्रकार जीवनयापन करना चाहिए ?" उत्तर में उन्हें बताया गया-"कभी इधर (संसार) और कभी उधर (भगवान) को देखते हुए चलो । यदि कोई स्थिति ऐसी आ जाए कि निर्णय करना कठिन हो तब ?" परमहंस बोले-"यदि तुम्हें कभी अपने कर्तव्य-अकर्तव्य के अथवा सदाचार के विषय में संदेह उपस्थित हो, तो जो विचारशील, तपस्वी, कर्तव्य-परायण, मृदु स्वभाव, धर्मात्मा, विद्वान, गुरुजन हों, उनकी सेवा में उपस्थित होकर अपना समाधान करो और उनके आचरण और उपदेश का अनुसरण करो । यदि वे उपलब्ध न हों, तो सद्ग्रंथों का, सत्साहित्य का पठन-पाठन, चिंतन-मनन कर मार्गदर्शन लो ।"

पैरों में खड़ाऊँ पहनो शिष्य लंबा रास्ता पार करके आया था । उसके पैरों में अनेक काँटे चुभ रहे थे । शिष्य ने कहा-"दुनियाँ बड़ी खराब है । इसमें पग-पग पर काँटे बिछे हैं ।" गुरु ने कहा-"पैरों में खड़ाऊँ पहन लो ।" दुनियाँ के काँटे बीनना कठिन है । अपना स्वभाव सज्जनता और सहिष्णुता का बना लेना ही खड़ाऊँ पहनना है । यह शिक्षण ही वास्तविक सत्संग है । यदि गुरुजनों की वाणी को, सदुपदेशों को हृदयंगम किया जाय, तो प्रतिकूलताएँ निरस्त होती चलेंगी ।

मन की गाँठ एक गृहस्थ सेठ था । बारह वर्ष तक रोज कथा सुनने का नियम बनाया । एक ब्राह्मण कथा सुनाने आते थे । ब्राह्मण सदाचारी, ईश्वरनिष्ठ थे । तन्मय होकर कथा कहते थे । बारह वर्ष पूरे होने को थे, तो सेठजी को कार्य से कहीं जाने की आवश्यकता पड़ी । उन्होंने ब्राह्मण से पूछा-"महाराज, कल मुझे बाहर जाना है, कथा के नियम का क्या होगा ?" ब्राह्मण ने बतलाया कि पिता की जगह पुत्र कथा सुन ले, तो काम चल जाता है । सेठ ने कुछ सोचा फिर बोले-"महाराज, इसमें खतरा है, लड़का कथा सुनकर वीतराग हो गया तो ?" ब्राह्मण बोले-"आपको लगभग बारह वर्ष पूरे होने को आए कथा सुनते-सुनते । आप वीतराग नहीं हुए, तो एक दिन में पुत्र कैसे वीतराग हो जाएगा ।" सेठ बोले-"मैं तो मन में गाँठ रखकर कथा सुनता हूँ, ताकि धार्मिकता का पुण्य यश मिले, पर प्रभाव से वीतराग न हो जाऊँ ।" अधिकांश लोग धार्मिक प्रक्रिया ऐसे ही अपनाते हैं । अच्छे प्रभाव से बचकर मनमाने लाभ लूटना चाहते हैं ।

भद्रं कर्णेभि: कथा प्रारंभ होने लगी तो सूतजी ने श्रोताओं को सावधान किया । कहा-"ध्यान रखो, मन में जो होता है, वही आँख-कान को सुहाता है । पर आँख-कान के संसर्ग में बार-बार आने वाले विषय मन में स्थान बना देते हैं । कथा भगवद्भाव से सुनी जाय, तो उसी रास्ते भगवद्भाव मन में स्थान बना लेता है । अन्यथा इसी आँख-कान के रास्ते पाप मन में प्रवेश कर जाते हैं । इसीलिए प्रभु से प्रार्थना की जाती है-**भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।**"

कथा, प्रसंग में आँख-कान को भगवद्भाव युक्त बनाना ही श्रोताओं का पुरुषार्थ है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बालकेभ्योऽभिरोचन्ते पशुपक्षिकथास्तथा ।
परलोकाप्सरश्चर्चा उत्सुकास्ते कुतूहलम् ॥ ५५॥
श्रोतुं मनोविकासाय युवभ्यः प्राय एव च ।
ससाहसाः समाधात्र्यः कथारोचन्त उन्नताः ॥ ५६॥
वृद्धेभ्य ऋषिसम्बद्धा देवताचरितानुगाः ।
धर्मप्रयोजना नूनं रोचन्ते च प्रसंगकाः ॥ ५७॥
कथाश्चेमा परोक्षेण रोचन्ते त्रिभ्य एव च ।
श्रवणेऽस्मिंश्च पुण्यं तन्मनोरञ्जनमप्यलम् ॥ ५८॥
चिन्तनस्य चरित्रस्य व्यवहारस्याऽपि तत् ।
प्रशिक्षणं परिष्कारकारकं यदवाप्यते ॥ ५९॥
अस्मिन्ननुभवेन्नैव कोऽपि स्वस्मिन् कदाचन ।
कटाक्षादिकमेतस्या बाधा नास्त्यपमानजा ॥ ६०॥
बोधोऽप्ययं भवत्येव परिस्थितिषु च कासु च ।
किं कार्यं पुरुषैरत्र विपद्भ्यो रक्षितुं स्वयम् ॥ ६१॥
कथं भाव्यं सतर्कैश्चाऽवाञ्छितेभ्यः कथं तथा ।
दूरैर्भाव्यं तथात्मा च रक्षणीयः सदा नरैः ॥ ६२॥

भावार्थ–बच्चों को पशु–पक्षियों की, परलोक की कथाएँ अधिक रुचिकर होती हैं । उनका मानसिक विकास कौतूहल सुनने के लिए उत्सुक रहता है । युवकों और प्रौढ़ों को अनुभव–साहस प्रदान करने वाली, समस्याएँ सुलझाने और ऊँचा उठाने वाली कथाएँ अधिक सुहाती हैं । वृद्धों को ऋषियों, देवताओं, धर्म प्रयोजनों से संबंधित प्रसंग रुचते हैं । ये कथा–प्रसंग परोक्ष रूप से उपरोक्त तीनों ही वर्गों को सुहाते हैं । इस श्रवण में पुण्य भी माना जाता है, मनोरंजन भी होता है और सबसे बड़ा लाभ परोक्ष रूप से चिंतन, चरित्र और व्यवहार को परिष्कृत करने वाला प्रशिक्षण मिलते रहने के रूप में हस्तगत होता रहता है । इसमें किसी को अपने ऊपर कटाक्ष–व्यंग्य होने तथा अपमान होने जैसी अड़चन भी नहीं पड़ती और यह भी बोध होता रहता है कि किन परिस्थितियों में क्या करना चाहिए, विपत्तियों से बचने के लिए किस प्रकार सतर्क रहना चाहिए, किन अवांछनीयताओं से किस प्रकार दूर रहना और कैसे पीछा छुड़ाना चाहिए ? ॥ ५५–६२॥

व्याख्या–कथा साहित्य किस वय के लिए कैसा हो, यह बहुत कुछ मानवी मनोविज्ञान पर निर्भर है । लक्ष्य सभी वर्गों की दृष्टि से एक ही रहता है, अप्रत्यक्ष रूप से उनके गुण, कर्म, स्वभाव को बदलने योग्य मनःस्थिति बनाना । व्यक्ति के अचेतन को स्पर्श कर, वे उसे उद्वेलित कर हर परिस्थिति के लिए समाधान निकालने की समझ विकसित करते हैं । यह संसार विभिन्न प्रकार के प्रपंचों-प्रतिकूलताओं से भरा है । जीवन जीने की सही दिशा मिल सके, कथानकों में यही मूल उद्देश्य सन्निहित होता है । बालकों को उनकी जिज्ञासा का समाधान करने वाली, अंतर्बुद्धि को विकसित करने वाली, मध्य वर्ग की वय वालों को जोश दिलाने वाली, सत्साहस की प्रेरणा देने वाली, व्यावहारिक जीवन की दैनंदिन समस्याओं का समाधान बताने वाली तथा ढलती आयु वाले वृद्धजनों को धर्म-दर्शन, जीवन के मूल उद्देश्य, समाज, आराधना जैसे विषयों पर प्रकाश डालने वाली कथाएँ सुनाई जानी चाहिए । यह चयन न केवल आयु विभाजन की दृष्टि से, अपितु उनके मानसिक विकास एवं अभिरुचि को देखते हुए उपयुक्त है ।

बच्चों के लिए वे ही कथानक चुने जाँय, जो उनका मनोरंजन तो करें ही, उन्हें सद्गुण अपनाने हेतु प्रेरणा भी दें । यह घटनाक्रमों के माध्यम से भी समझाया जा सकता है एवं जीव-जंतुओं, प्रकृति के अन्यान्य घटकों को माध्यम बनाकर भी ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलता के अनुदान

"चाचा नेहरू ! आपका सबसे अधिक वजन कब और कितना था ?"–फूल सी कोमल बालिका ने प्रधानमंत्री नेहरू के सम्मुख प्रश्न रखा । नेहरू उस अजीब प्रश्न को सुनकर आश्चर्य में पड़ गए । वह अपनी स्मृतियों पर जोर देते हुए प्रेमिल वाणी में बोले–"प्यारी मुन्नी ! जब मैं अहमदनगर जेल में था, उस समय मेरा वजन १६२ पौंड था ।" चाचा ने अपनी फूल सी वाणी बिखेरते हुए कहा–"जेल के जीवन की कठोरताओं ने ही मेरे वजन को बढ़ाया है और स्वस्थ रखा है । मैं अपने को अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा सौभाग्यशाली मानता था कि अपने देश को स्वतंत्रता दिलाने के लिए जेल में कठिनाइयाँ सहन कर रहा हूँ और इस प्रसन्नता तथा निश्चिंतता के जीवन ने ही मेरे वजन को बढ़ाया है ।"

पहले स्वयं को सुधारिए

कौआ अपना घोंसला छोड़कर पूरब की ओर जाने की तैयारी करने लगा । कारण पूछने पर बुलबुल से उसने कहा–"यहाँ के लोगों को आवाज की परख करने की तमीज नहीं है ।" बुलबुल ने कहा–"ताऊजी ! आपको आवाज सुधारनी पड़ेगी । नहीं तो पूरब वालों से भी आपको यही शिकायत करनी पड़ेगी ।"

श्रम की उपलब्धियाँ

"क्यों माँ ! बबूल का पौधा लगा देने के बाद ज्यादा देखरेख नहीं करनी पड़ती, वह अपने आप ही इतना बड़ा हो जाता है ?"–बच्चे के इस प्रश्न का माँ ने –"हाँ बेटा !"–कहकर संक्षिप्त उत्तर दे दिया ।"और क्यों माँ, गुलाब छोटे-छोटे होते हैं, एक वर्ष में ही तैयार हो जाते हैं, तो भी उनके लिए पिताजी को दिन-रात परिश्रम करना पड़ता है । वह क्यों ?"–बच्चे ने फिर प्रश्न किया । इस बार माँ ने बच्चे की जिज्ञासा का भरपूर समाधान करते हुए कहा–"बेटे ! श्रेष्ठ वस्तुएँ सदैव परिश्रम से मिला करती हैं । ऐसा न होता तो अच्छे व बुरे में अंतर ही क्या रह जाता ?"

स्वावलंबन एवं धर्मनिष्ठा के संस्कार बच्चों में ऐसे दृष्टांतों के माध्यम से सरलता से दिए जा सकते हैं ।

चाँद समझदार या सूरज

दादी से छोटे पोते ने पूछा–"सूरज बड़ा है या चाँद ?" दादी ने कहा–"दिन में रोशनी रहती है फिर भी सूरज, भले ही बड़ा हो, बेकार चमकता है । उससे छोटे चंदामामा कहीं अधिक समझदार है, जो अंधेरी रात में लोगों को राहत देने के लिए उगता और भलमनसाहत दिखता है ।" यह समझने का एक तरीका है । तथ्य भले ही सही न हों, किन्तु इससे बच्चों में सद्गुण संवर्द्धन होता है, जो कि सामान्य जानकारी से अधिक जरूरी है ।

पेड़ों की अकड़ और बेतों की नम्रता

नदियाँ समुद्र में पहुँचती और अपने साथ बड़े-बड़े पेड़ लिए जातीं । समुद्र एक दिन पूछ बैठा–"तुम सबके किनारों पर बेंत और सरकंडे उपजे रहते हैं, पर उन्हें कभी नहीं लातीं ?" नदियों ने कहा–"पेड़ अकड़े रहते हैं और जोर अजमाया करते हैं, सो बहाव का सामना न कर सकने के कारण उखड़ जाते हैं । बेंत हैं, तो सदा नम्र रहते हैं । बाढ़ आने पर सिर नीचा कर लेते हैं और पानी कम होते ही अपना सिर उठा लेते हैं । उन्हें उखाड़ा कैसे जाय ?"

बालकों को नम्रता का अभ्यास बचपन से ही कराया जाय, तभी वे सभ्य नागरिक बन सकते हैं ।

अहिंसक के पास लाठी

कभी-कभी बड़ों को भी बालकों के ढंग से समझाया जा सकता है ।

एक दिन गाँधी जी की कुटिया में पंडित जवाहरलाल नेहरू घुसे कि अंधेरे में वे गांधी जी की लकुटी से टकरा गए । पंडित जी को बड़ी खीज हुई । बोले–"बापू ! आप तो अहिंसा के पुजारी हैं, फिर यह लाठी यहाँ क्यों रख छोड़ी है ?" गांधी जी बोले–"तुम्हारे जैसे शरारती लड़कों को सीधा करने के लिए !" थोड़ा गंभीर होकर बापू पुनः बोले–"अहिंसा का मतलब यह नहीं कि हर किसी से पिटने के लिए तैयार हो । अनीति के विरुद्ध आत्मरक्षा के साधन जुटाना भी नीति के अंतर्गत ही आते हैं ।"

स्वाभिमानी देशभक्त

युवकों, मध्य आयु के व्यक्तियों के लिए कथानकों के प्रसंग साहस की सत् शिक्षा देने वाले, व्यावहारिक अध्यात्म की प्रेरणा देने वाले होने चाहिए ।

कोर्ट मार्शल के सम्मुख तात्या टोपे को उपस्थित करने के बाद अंग्रेज न्यायाधीशों ने पूछा–"यदि तुम चाहो तो अपने बचाव में कुछ कह सकते हो ।" तात्या टोपे का स्वाभिमान जाग उठा । उसने कहा–"मैंने ब्रिटिश शासन से टक्कर ली है । मैं जानता हूँ कि इसके बदले में मुझे मृत्यु दंड प्राप्त होगा । मैं केवल ईश्वरीय न्याय और

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

न्यायालय में ही विश्वास रखता हूँ, इसलिए अपने बचाव के लिए मैं कुछ नहीं कहना चाहता ।'' तात्या को जब फाँसी स्थल पर ले जाया गया, तो उसने कहा–''तुम लोग मेरे हाथ पैर बाँधने का कष्ट क्यों करते हो ? लाओ फाँसी का फंदा, मैं स्वयं ही अपने गले में डाल लूँ ।'' इन अंतिम शब्दों के साथ सन् सत्तावन के स्वतंत्रता संग्राम का वह सेनानी अमर हो गया ।

अनीति से समझौता नहीं

जर्मनी के महान वैज्ञानिक नील्स बोर अणु विज्ञान की शोध में आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त कर रहे थे । हिटलर उनसे बहुत प्रसन्न था । नील्स के कान में हिटलर के इरादों की भनक पड़ी । दुरुपयोग से यह विज्ञान कितना विघातक हो सकता है, इस कल्पना से वे काँप उठे । कई रात तक उन्हें नींद नहीं आई । एक रात वे चुपके से उठे और गैलीलियो की समाधि पर मस्तक रख कर प्रतिज्ञा की कि वे ऐसा काम न करेंगे, जिससे मानवता का हनन होता हो । दूसरे दिन से उनने काम करना बंद कर दिया । नाजियों ने इस पर उन्हें त्रास और प्रलोभन देने में कोई कसर न रखी, पर वे टस-से-मस न हुए । अंतिम दिन उनके बड़े कष्ट में बीते । मछुओं की सहायता से वे किसी प्रकार छिपकर कोपेन-हेगेन से स्वीडन पहुँचे । इतना मान और वेतन छोड़कर आदर्श पर दृढ़ रहने वाले नील्स की गणना सदा शहीदों में होती रहेगी ।

दिवालिया होना स्वीकार

''मैं खुदा की कसम खा कर कहता हूँ कि मैं कत्ल होना पसंद करूँगा, पर इस कानून के सामने सिर न झुकाऊँगा ।'' प्रिटोरिया की भरी सभा में हिंदुस्तानियों के बीच यह स्वाभिमान पूर्ण शपथ लेने वाले थे, सूरत के व्यापारी सेठ अहमद मुहम्मद काछलिया । दक्षिण अफ्रीका के गोरों ने जनरल स्मट्स के उत्पीड़क तंत्र में भारतीयों का स्वत्व हरण करने वाला एक खूनी विधेयक सदन में रखा था । सेठ काछलिया इस सभा में उसी विधेयक का विरोध कर रहे थे । वे दक्षिण अफ्रीका के प्रमुख भारतीय व्यापारियों में से थे । गोरे लोग जब सेठ काछलिया को झुकाने के सब उपाय आजमा कर थक गए, तो उन्होंने अंतिम शस्त्र चलाया । सेठ काछलिया व्यापारियों की कोठी पर अवलंबित था । उन्होंने धमकी दी–''आप या तो सत्याग्रह की लड़ाई से हट जाइए या हमारा पावना चुका दीजिए, क्योंकि आप जेल चले गए, तो हमारी रकम डूब जाएगी ।'' सेठ काछलिया ने उत्तर दिया–''मेरा व्यापार मेरी खुद की जिंदगी है । पर मैं अपने फायदे के लिए कौम को धोखा नहीं दूँगा । चाहे मुझे दिवालिया ही क्यों न बनना पड़े ।'' और सेठ काछलिया को सचमुच लेनदारों के दबाव के कारण दिवाला निकालना पड़ा । वे चाहते तो लड़ाई से अलग होकर अपना व्यापार बचा सकते थे, पर हमवतनों और वतन को छोड़ देने के बजाय उन्होंने व्यापार छोड़ देने को ज्यादा अच्छा समझा ।

ऐसे आदर्शवादी महामानव ही जीवन के प्रेरणा स्रोत बन जाते हैं ।

एकाकी एवं दुर्दांत प्रतिशोध

सहिष्णुता का शिक्षण देना हो, तो प्रतीकात्मक दृष्टांतों का अवलंबन लिया जा सकता है । प्रतिशोध ने डाँटते हुए धैर्य से कहा–''बंधु ! आप जैसे कायर व्यक्ति के साथ रहने में मेरी शान घटती है, आप मेरे साथ न रहें तो ही अच्छा ।'' धैर्य ने साथ छोड़ दिया, तभी से एकाकी प्रतिशोध भयंकर कांड कराता हुआ संसार में विचरण कर रहा है ।

लोकसेवी को भय किसका ?

ढलती आयु वाले, समाज सेवा हेतु तत्पर व्यक्तियों को कथानक सुनाने की शैली भिन्न होगी । उन्हें ढर्रे को बदलने के लिए साहस तो जुटाना ही है, अध्यात्म के व्यावहारिक रूप को भी समझना होता है । अपनी गिरफ्तारी से कुछ दिन पूर्व ईसा येरुशलम में ही प्रचार कर रहे थे, जहाँ कि उनकी जान के ग्राहक सबसे ज्यादा थे, साथ ही जहाँ प्रचार की सबसे अधिक आवश्यकता थी । उनके शिष्यों ने उनसे येरुशलम छोड़ देने के लिए अनुरोध करते हुए कहा–''यहाँ के लोग आपको मार डालने की घात में हैं ।'' किन्तु ईसा ने वहाँ जाना अस्वीकार करते हुए कहा–''जीवन को उत्सर्ग किए बिना न तो सत्य की प्रतिष्ठा होगी और न उसका महत्त्व बढ़ेगा ।''

रानाड़े की न्यायनिष्ठा

एक न्यायाधीश सरकारी काम पर पैदल ही सतारा जिले का दौरा कर रहे थे । उन्होंने अपनी पत्नी को संदेश दिया था कि पीछे घोड़ा गाड़ी से आ जाना । मार्ग में एक अमराई में बढ़िया आम दिखाई दिए । न्यायाधीश की पत्नी की इच्छानुसार गाड़ीवान ने कुछ आम पेड़ से तोड़े । संयोगवश एक बड़ा आम उनके हाथ पर आ गिरा और उनका सोने का कंगन टूट गया । टूटे हुए कंगन का एक टुकड़ा भी नहीं मिल

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

पाया । जिनके कारण उन्हें बड़ा पछतावा रहा । पड़ाव पर आकर न्यायाधीश की पत्नी ने सारी कहानी पतिदेव को सुनाई । न्यायाधीश कहने लगे–"ठीक ही हुआ । बिना अधिकार के पराया माल प्राप्त करने का यही परिणाम होना चाहिए । भविष्य में इस प्रकार की मनोवृत्ति से दूर रखने के लिए प्रभु ने यह दंड दिया है । तुम्हारे अपराध की थोड़ी सी सजा मुझे भी मिल गई है । मेरा भी चाकू कहीं खो गया है । पाप की कौड़ी पुण्य का सोना भी खींच लेती है ।" ये न्यायाधीश थे श्री महादेव गोविंद रानाडे, जो केवल दूसरों के मुकदमों के फैसले ही नहीं करते थे, वरन् अपने और अपने स्वजनों के क्रिया-कलापों का भी विवेकपूर्ण तरीके से निरीक्षण करते हुए उस न्यायाधीश को नहीं बिसारते थे, जो इस संसार का स्वामी है । वह सब पर दया भी करता है और उन्हें उनके कर्मों के अनुसार दंड भी देता है ।

सच्चा अधिकारी

"महात्मन् ! स्वर्ग का अधिकार किसे मिलता है ।" एक वृद्ध ग्रामीण ने महाप्रभु ईसा से प्रश्न किया । पास ही एक बालक खेल रहा था, ईसा मसीह ने उसे उठाकर संकेत किया–"इसे ।" "आपका आशय नहीं समझा महात्मन्", ग्रामीण ने फिर कहा । ईसा हँसे और बोले–"जो बच्चे की तरह भोला और निरहंकारी है, वही स्वर्ग का अधिकारी है ।"

संत बनें, तब सत्संग हो

चौबीस अवतारों में से एक कपिल जी कर्दम ऋषि तथा देवहूति के पुत्र थे । कपिल जी तो ज्ञानावतार थे, सहज संत । पुत्रियों का विवाह करते ही ऋषि कदर्म तथा माता देवहूति ने संन्यास ले लिया । देवहूति ने ज्ञानी कपिल जी से पूछा–"इंद्रियाँ चोरों की तरह आचरण करती हैं, मैं ऊब गई हूँ । स्थिर आनंद की प्राप्ति के लिए क्या करूँ ?" कपिल जी बोले–"माताजी, इंद्रियाँ और मन असत् का संग करने के आदी हो गए हैं । असत् के संयोग से दुख की उत्पत्ति होती है । संग अर्थात आसक्ति छूटती नहीं, इसे असत् से सत् की ओर मोड़ दिया जाता है । इसी मोड़ से सत्संग मिलता है । सत्संग से आनंद उपजता है ।" देवहूति बोलीं–"संत तो सागर में दिखते नहीं सत्संग कैसे करूँ, किससे करूँ ?" कपिल जी ने कहा–"यदि ऐसा लगता है तो समझो अभी अपनी पाप दृष्टि का क्षय नहीं हुआ, जब तक पाप दृष्टि है, संत मिल भी जाएँ, तो उनके प्रति सद्भावना नहीं उपजती । उसके बिना उनके संग का लाभ उठाया ही नहीं जा सकता । जो स्वयं संत बनते हैं, उन्हें संत मिल जाते हैं । जब तक स्वयं सत् से जुड़ने की उमंग नहीं उठती, सत् दृष्टि पैदा नहीं होती और यह संसार दुष्टों से ही भरा दिखता है । स्वयं संत बने बिना न संत मिलते हैं, न सत् संग होता है ।"

कहानीकार गुलेरी एवं एच०जी० वेल्स

ऐसे भी व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने अपने समय में मात्र कथा साहित्य द्वारा विभिन्न वर्गों के लिए साहित्य सृजन कर समय के प्रवाह को बदला, लोगों में जिज्ञासा वृत्ति को बढ़ाया एवं व्यावहारिक समाधान प्रस्तुत किया ।

पारिवारिक सुविधाओं की दृष्टि से चंद्रधर शर्मा कोई बहुत अच्छी स्थिति में नहीं थे । फिर भी पिता ने अपने बालकों को सुयोग्य बनाने में सामर्थ्य भर प्रयत्न किया । हिमाचल प्रदेश से चलकर उनके पूर्वज जयपुर आ गए थे । यहीं पढ़े । उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर उन्हें खेतड़ी स्टेट के बालकों को पढ़ाने के लिए नियुक्त किया गया । पीछे वे मेयो कालेज अजमेर चले गए । वहीं से वे हिंदू विश्वविद्यालय में लंबे समय तक अध्यापन कार्य करते रहे । वैदिक संस्कृत, पाली, प्राकृत अपभ्रंश, बंगाली, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी, हिंदी, लैटिन, जर्मन, फ्रैंच भाषाओं पर उनका अच्छा अधिकार था । यह सब उन्होंने अपनी निजी प्रयास एवं पुरुषार्थ से अर्जित किया । उन्होंने विभिन्न वर्गों के लिए कथा साहित्य लिखा, जो अपनी सरल भाषा के कारण बड़ा लोकप्रिय हुआ । वर्षों तक उन्होंने नागरी प्रचारणी सभा का सभापतित्व किया । अपनी प्रतिभा का कारण वे अनवरत स्वाध्याय को बताते थे । इसी को वे देवता का वरदान समझते थे ।

इंग्लैंड के प्रख्यात वैज्ञानिक कथा लेखक एच० जी० वेल्स अपने समय में विश्वविख्यात हो चुके थे और उनकी पुस्तकों का अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका था । आर्थिक दृष्टि से भी वे घाटे में न रहे । यह सुयोग उन्हें एक दुर्भाग्य की आड़ से ही हस्तगत हो सका । किशोरावस्था में लड़कों के साथ खेलते हुए उनकी एक टाँग टूट गई । इस सिलसिले में उन्हें लंबे समय तक अस्पताल रहना पड़ा । समय काटने के लिए उन्होंने पुस्तकें पढ़ना आरंभ किया । पीछे उन्हें इसमें रस आने लगा । अस्पताल से छुट्टी मिलने के बाद उनने पुस्तकालयों की शरण ली और उनका प्रतिफल यह हुआ कि वे अपने प्रिय विषय लेखन में असाधारण प्रतिभा अर्जित कर सके ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

कथानकेषु चैतेषु नरोन्नतिकराणि च ।
श्रेष्ठानामिह नृणां च तान्युदाहरणानि तु ॥ ६३॥
इत्थं बुद्धौ तु चेष्टन्ते प्रत्यक्षं सम्मुखे समे ।
तिष्ठन्त इव कृत्यं स्वमुपदेशं दिशन्ति नः ॥ ६४॥
परिवाराय चाऽस्माभिर्यथा स क्रियते व्ययः ।
दीयते समयोऽथापि क्रियते स्म उत्तमः ॥ ६५॥
तथैवेयं व्यवस्थाऽपि भवेदेव मिलेदयम् ।
सत्संगावसरो नूनं परिजनस्य कृते सदा ॥ ६६॥
ज्ञानमन्दिररूपाच्च स्वाध्यायः पुस्तकालयात् ।
कथाप्रसंगात् सत्संगो लाभरूपेण सम्मतौ ॥ ६७॥
याववाप्य कुटुम्बस्य स्तर उन्नतिमाव्रजेत् ।
आशास्यते समैर्योग्यकर्मैतत्कार्यमेव तु ॥ ६८॥

भावार्थ–इन कथानकों में ऊँचा उठने वाले, आगे बढ़ने वाले श्रेष्ठ व्यक्तियों के उदाहरण इस प्रकार मस्तिष्क में घूमने लगते हैं, मानो वे सामने ही बैठे और अपना क्रिया–कृत्य अनुभव एवं उपदेश हमें प्रस्तुत कर रहे हों । परिवार के लिए जिस प्रकार बहुत खर्च किया जाता है, समय दिया और श्रम किया जाता है, उसी प्रकार यह व्यवस्था भी होनी चाहिए कि परिजनों को स्वाध्याय एवं सत्संग का अवसर मिलता रहे । ज्ञान–मंदिर पुस्तकालय से स्वाध्याय का और कथा–प्रसंग से सत्संग का लाभ मिलते रहने पर परिवार का स्तर हर दृष्टि से समुन्नत होने की आशा बँधती है । इसलिए यह कदम उठाए ही जाने योग्य हैं ॥ ६३–६८॥

व्याख्या–कथानकों का, जीवन चरित्र प्रसंगों का, सबसे बड़ा लाभ यह है कि जिन महापुरुषों के हमें अब दर्शन नहीं हो सकते, जिनके सत्संग का लाभ हम नहीं उठा सकते, उनसे स्वाध्याय के माध्यम से प्रत्यक्ष भेंट का प्रयोजन सध जाता है । यह एक प्रकार से परोक्ष सत्संग है । उनके विचार सत्साहित्य के पढ़ने सुनने से ही हमें मिलते हैं, जो प्रगति की दिशा में बढ़ने की दिशाधारा देते हैं । परिवार के सदस्यों का जीवन स्तर ऊँचा उठाने प्रगति पथ पर द्रुतगति से आगे बढ़ाने के लिए महापुरुषों का प्रत्यक्ष या परोक्ष मागदर्शन आवश्यक है । परोक्ष मार्गदर्शन घरेलू ज्ञान मंदिर पुस्तकालय से सहज सुलभ हो सकता है । इसके लिए परिवार के प्रत्येक सदस्य को स्वाध्याय के प्रति रुचि जागृत करनी चाहिए ।

सत्साहित्य का स्वाध्याय मात्र बौद्धिक विकास के लिए ही नहीं, आत्मिक विकास के लिए भी आवश्यक है । योग साधना में भी स्वाध्याय साधना को एक अभिन्न अंग माना गया है । वह शौच, संतोष, तप एवं ईश्वराधना इन चार के समान महत्वपूर्ण पाँचवाँ नियम है । आस्थाओं के अभिवर्धन एवं दृढ़ीकरण तथा चरित्र निर्माण के लिए स्वाध्याय अनिवार्य है ।

सृष्टि में सर्वोत्तम वस्तु कौन है ?

एक बार एक मित्र ने सर जान हर्शल नामक प्रख्यात पाश्चात्य विद्वान से प्रश्न किया–"आपको सृष्टि में सर्वोत्तम वस्तु कौन सी लगी ।" तो उन्होंने मुस्कराते हुए उत्तर दिया–"भाँति–भाँति के संयोग–वियोग आए, पर वह दृढ़तापूर्वक मेरे साथ जीवन के सुख और आनंद का झरना बना रहे । मेरे खिलाफ हवा चले, लोग मुझे बुरा कहें, धिक्कारें, रास्ता रोकें, उस समय मुझे बेपरवाह बना दें । जीवन में दुखों से मेरी ढाल बन जाए । ईश्वर से प्रार्थना करने का अवसर मुझे मिले, तो मैं निवेदन करूँगा–'हे प्रभु ! मुझे विद्या पढ़ते रहने की रुचि दें । ज्ञान के धार्मिक महत्व को घटाए बिना यहाँ मैंने केवल उसके सांसारिक लाभ बताए हैं ।' विद्या की अभिरुचि कैसी आनंददायिनी है, संतोष का कैसा उन्मुक्त साधन है, इतना ही मैंने यहाँ स्पष्ट किया है ।"

गरीबी स्वाध्याय में बाधक नहीं

प्राचीन काल में स्वाध्याय लोगों की एक स्वाभाविक वृत्ति हुआ करती थी । "काव्यशास्त्रविनोदेन कालो गच्छति धीमताम्" का सिद्धांत सभी मानते हैं । भारतीय संस्कृति की प्रतीक 'देवी सरस्वती' की लोग आजीवन उपासना किया करते थे और इस

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

प्रकार बिना श्रम, संसार-सागर से पार उतर जाया करते थे । अब स्थिति भिन्न है । लोग अभाव और आर्थिक परिस्थितियों को कारण बताया करते हैं । कुछ लोगों को समय न होने की भी शिकायत होती है । मूल बात यह है कि ऐसे व्यक्तियों को विद्याध्ययन का न तो महत्व ही मालूम होता है और न उसकी रुचि ही होती है । अनेक दृष्टांतों से यह सिद्ध हो चुका है कि गरीबी विद्याभ्यास में बाधक नहीं है ।

पब्लियस, साइरस, इसप, किलेन्थिस, बुकर टी वाशिंगटन और **टेरन्स** आदि प्रतिभाशाली विद्वानों का प्रारंभिक जीवन बड़ी ही कठिनाइयों में बीता है, तो भी उन्होंने ज्ञानार्जन की महत्ता प्रतिपादित कर दिखाई है । **एपिक टेटस** १० वर्ष गुलाम रहा था । उसके मालिक ने उसका पैर ही तोड़ दिया था, किन्तु बाद में उसने अपनी झोपड़ी में बैठकर शास्त्रों का स्वाध्याय किया और विद्वत्ता उपलब्ध की । रोम के तत्कालीन सम्राट् आडियान भी उसके पांडित्य का लोहा मानते थे ।

पाइथागोरस ज्यामिति शास्त्र का प्रकांड विद्वान हुआ है । वह जीवन शास्त्र और नैतिक दर्शन का भी पंडित था । बहुत कम लोग जानते होंगे कि वह जंगल से लकड़ियाँ काटकर लाता था और उन्हें बेचकर अपनी आजीविका चलाता था ।

टस्कनी की टुयोरण्टाइन एकेडमी कौन्सिल के उच्च और महान प्रतिष्ठा के पद पर नियुक्त होने वाला प्रसिद्ध इटालियन लेखक **जेली** जाति का दर्जी था । उसने इतने ऊँचे पद पर पहुँच जाने पर भी अपना धंधा दर्जीगिरी नहीं बंद किया । वह कहा करते थे-"मैंने इसी व्यवसाय के सहारे विद्या पाई है, मुझे ज्ञान से इतना प्रेम हो गया है कि अपनी इस अजीविका के सहारे मृत्यु पर्यंत ज्ञानार्जन करते रहने की हार्दिक अभिलाषा है ।

इटली का **मेटास्टासिओ** जब बालक था, तो शहर की सड़कों में गाने गाया करता था । उससे जो पैसे मिलते थे, उनकी किताबें और पत्र-पत्रिकाएँ खरीदकर अधिकांश समय पढ़ने में लगाया करता था । अंत में उसकी भावना सिद्ध हुई और वह एक दिन इटली का मशहूर कवि हुआ । **डॉ० जान प्रीडा** जो बुर्स्टर के पोप नियुक्त हुए थे, उन्हें पढ़ने की अभिलाषा इतनी तीव्र हुई कि वह आक्सफोर्ड तक पैदल चलकर गए । फीस और खाने के लिए कोई सहारा नहीं था, इसलिए वह कॉलेज के होटल में काम करने वाले रसोइए की मदद करते थे । उसी से उन्हें इतने पैसे मिल जाते थे, जिससे किसी तरह फीस और रोटी का साधन बन जाता था । वनस्पति शास्त्र के जन्मदाता **मानियस** भी इसी तरह एक मोची के पास काम करते हुए पढ़े थे ।

यह उदाहरण इसलिए दिए जा रहे हैं कि आर्थिक स्थिति विपरीत हो, तो भी ज्ञान की आराधना की जा सकती है । ज्ञान ही धन और ज्ञान ही जीवन है । उसके लिए किया गया कोई भी बलिदान व्यर्थ नहीं जाता । इसीलिए तो शास्त्रकार ने संदेश दिया है-

गतोऽसि वयसि ग्राह्या विद्या सर्वात्मना बुधैः । यद्यपि स्यान्न फलदा सुलभा सान्यजन्मनि ॥

'हे मनुष्यो ! उम्र बीत जाने पर भी यदि विद्या प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हो, तो तुम निश्चय ही बुद्धिमान हो । विद्या इस जीवन में फलवती न हुई, तो भी दूसरे जन्मों में वह आपके लिए सुलभ बन जाएगी ।'

महापुरुषों के जीवन तथा उनसे संबंधित घटनाक्रमों के अध्ययन से प्रत्यक्ष या परोक्ष प्रेरणाएँ ग्रहण की जा सकती हैं ।

स्वावलंबन ही पारिश्रमिक

बंगाल के एक छोटे से स्टेशन पर रेल रुकी । एक युवक ने जरा जोर से आवाज लगाई-"कुली ! कुली !!" भला उस छोटे स्टेशन पर कुली कहाँ से आता ? तभी एक अधेड़ आदमी ने देखा कि युवक के पास एक छोटी सी पेटी है, सो वह उसके पास चला गया । तब युवक ने उसे ही कुली समझ कर झिड़कते हुए कहा-"तुम लोग बड़े सुस्त हो जी, मैं कब से पुकार रहा हूँ । ले चलो इस बक्से को उठाकर ।" उस आदमी ने बिना कुछ कहे-सुने पेटी उठा ली और युवक के पीछे-पीछे चल दिया । घर पहुँचने पर युवक ने मजदूरी के पैसे जो निकाले, तो वह आदमी बोला-"धन्यवाद ! मुझे इसकी जरा भी जरूरत नहीं है ।" तभी घर के अंदर से युवक का बड़ा भाई आया और बोला-"नमस्कार विद्यासागर जी !" सुनते ही युवक के पैरों तले की जमीन खिसक गई । वह विद्यासागर जी के चरणों पर लोट गया । उसे उठाकर गले लगाते हुए वे बोले-"भाई, मेरे देशवासी व्यर्थ का अभिमान त्याग कर अपने हाथों से अपना काम स्वयं करने लग जायें, यही मेरी इच्छा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

है । तुम आगे से स्वावलंबी बनो, यही मेरा मेहनताना है ।''

ऐसे दृष्टांत व्यक्ति को आत्मावलंबन हेतु प्रेरणा तो देते ही हैं, बड़ों की उस विनम्रता-निरहंकारिता की भी झाँकी देते हैं, जिसे अपनाने के कारण ही वे महान बने ।

असफलता में सफलता

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन उन दिनों बीमार थे । उन्हें देखने के लिए उनके एक पुराने सहपाठी मित्र प्रयाग गए । तब राजर्षि ने बातों ही बातों में अपना एक संस्मरण सुनाया-किसी समय मैं देशी रियासतों में राजाओं का सुधार करने के लिए एक आदर्श योजना बना रहा था । ताकि यह दिखाने का अवसर मिले कि भारतीय अंग्रेजों से अच्छा शासन कर सकता है । इसी उद्देश्य के लिए बनाई गई योजना को क्रियान्वित करने हेतु मैंने नामा रियासत में नौकरी की, परंतु मैं असफल रहा । उनके मित्र ने कहा-''यह तो बड़ा अच्छा रहा ।'' ''यही तो मैं भी कहना चाहता था । अंग्रेजों के कारण मैं असफल हुआ, तो मैंने अपना ध्यान अंग्रेजों को यहाँ से हटाने में लगाया । ईश्वर के प्रति मैं धन्यवाद से भर गया हूँ । नामा में सफल होने पर संभव था कि मैं कूपमंडूक बना रह जाता । इस असफलता ने मेरे लिए सफलता और साधना का नया द्वार खोल दिया''-टंडन जी बोले ।

अपने कार्यों में मिली सफलता-असफलता के प्रति यह सृजनात्मक दृष्टि भर अपनाने से ही वे राजर्षि उपाधि के अधिकारी सिद्ध होते रहे । यह प्रसंग हर उस व्यक्ति के लिए जीवनमूरि के समान है, जो प्रगतिपथ पर असफलताओं से जूझते हुए आगे बढ़ना चाहता है ।

गीता का सार

एक युवक स्वामी विवेकानंद के पास गया और संक्षेप में गीता का सार समझा देने का आग्रह करने लगा । स्वामी जी ने कहा-''खेल के मैदान में जाओ और देखो कि खिलाड़ी कितनी दिलचस्पी से खेलते हैं, पर हार-जीत की चेहरे पर तनिक भी झलक नहीं आने देते-यही गीता का सार है ।''

स्वयं का आदर्श

सामान्यजन प्रेरणा तभी लेते हैं, जब आदर्शों की चर्चा करने वाले, नीतिवेत्ता, नियम बनाने वाले स्वयं भी उनका पालन करें । उस साल लू अधिक चली । प्रजा के झोंपड़े फूँस के बने थे । मजबूत सामग्री उपलब्ध न थी । न जाने क्यों लोग लापरवाह भी रहने लगे थे, सो आए दिन अग्निकांड की घटनाओं के समाचार दरबार में पहुँचते । बिंबसार जैसे दयालु राजा के लिए स्वाभाविक था कि वह पीड़ितों की सहायता करें । बहुत अग्निकांड हुए, तो सहायता राशि का खर्च भी पहले की तुलना में बहुत बढ़ गया । लोगों की लापरवाही रोकने के लिए राजाज्ञा प्रसारित हुई, कि जिसका घर जलेगा, उसको एक वर्ष श्मशान में रहने का दंड भुगतना पड़ेगा । लोग चौकन्ने हो गए । एक दिन राजा के भूसे के कोठे में आग लगी और देखते-देखते जल गया । समाचार मिलने पर दरबार से राजा को श्मशान में रहने की आज्ञा हुई । दरबारियों ने समझाया-''नियम तो प्रजाजनों के लिए होता है, राजा तो उन्हें बनाता है, इसलिए उस पर वे लागू नहीं होते ।'' बिंबसार ने किसी की न मानी । वे फूँस की झोंपड़ी बनाकर श्मशान में रहने लगे । समाचार फैला, तो सतर्कता सभी ने अपनाई और अग्निकांड की दुर्घटनाओं का सिलसिला समाप्त हो गया ।

धौम्य उवाच-

सुसंस्कृतं कुटुम्बं यद् भवितुं वाञ्छति स्वयम् ।
स्वाध्यायस्य प्रकर्तव्या सत्संगस्य व्यवस्थितिः ॥ ६९ ॥
तेन तस्मिन् कुटुम्बे च भोजनस्येव सम्मतम् ।
नित्यकर्मेव चेदं तु नृणामवश्यकं परम् ॥ ७० ॥
अस्मान्न्यूने कुसंस्कारनिवृत्तिर्नैव सम्भवा ।
साधनाऽऽत्मन आहारस्तां विना महता नहि ॥ ७१ ॥

भावार्थ-धौम्य पुनः बोले-सुसंस्कृत बनने के इच्छुक प्रत्येक परिवार में स्वाध्याय और सत्संग की नियमित व्यवस्था होनी चाहिए । उन्हें भोजन-शयन की तरह आवश्यक नित्यकर्म माना जाना चाहिए । इससे कम में कुसंस्कारों से निवृत्ति किसी को भी नहीं मिल सकती । साधना आत्मा का आहार है । उसके बिना क्षुद्र को महान के साथ जुड़ने का सुयोग ही नहीं बनता ॥ ६९-७१ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्याख्या–महर्षि धौम्य यहाँ सुसंस्कारिता उपार्जन का महत्व समझाते हुए पुनः ज्ञानार्जन की, सत्साहित्य के पठन-मनन एवं सत्पुरुषों–श्रेष्ठ वातावरण के सत्संग पर जोर देते हैं । ये दोनों ही ऐसे नहीं हैं कि इन्हें ऐच्छिक मानकर जीवन में जब अवकाश मिले, तब के लिए छोड़ दिया जाय । यह तो नित्यप्रति के जीवन में समावेश की जाने वाली गुण-संपदाएँ हैं, जो व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाती, पारस के स्पर्श से लोहे को स्वर्ण बनाने के समान उसे श्रेष्ठता की पराकाष्ठा पर ले जाती हैं । वास्तविक ज्ञान पाकर ही अंधकार से प्रकाश की ओर, असत्य से सत्य की ओर, अशांति से शांति की ओर और स्वार्थ से परमार्थ की ओर उन्मुख होता है ।

इसी प्रकार अज्ञान के निवारण–आत्म सत्ता को समष्टि में संव्याप्त परमात्मसत्ता से एकाकार करने हेतु साधना को भी जीवन में अति महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए । अनगढ़ को सुगढ़ बनाने हेतु साधना का अवलंबन अत्यंत अनिवार्य है । वह अज्ञान मिटाए बिना संभव नहीं । स्वाध्याय, सत्संग एवं चिंतन-मनन की त्रिपदा साधना ही उस ज्ञान की सिद्धि का सहज उपाय है ।

स्वाध्याय युक्त साधना से ही परमात्मा का साक्षात्कार

गीता में कहा गया है–**''नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते''** अर्थात, इस संसार में ज्ञान से बढ़कर और कोई श्रेष्ठ पदार्थ नहीं है । आत्म निर्माण की, चरित्र गठन की, सुसंस्कार की, सत्प्रवृत्तियों की भावनाएँ जागृत करने वाले सद्विचारों को ही सच्चा ज्ञान कहा जा सकता है । यही जीवन को सफल बनाने वाला सर्वश्रेष्ठ पदार्थ है । ज्ञान लाभ का उद्देश्य पूर्ण करने वाला सर्वसुलभ साधन स्वाध्याय ही है ।

संसार में सर्वश्रेष्ठ तत्व 'ज्ञान' को प्राप्त करके जीवन सफल बनाने–उसे श्रेष्ठ दिशा में विकसित करने के लिए स्वाध्याय ही प्रधान माध्यम है, इसलिए स्वाध्याय को एक आवश्यक धर्म-कर्तव्य माना गया है । शास्त्र कहता है–**'स्वाध्यायान्मा प्रमदः'** अर्थात, स्वाध्याय में प्रमाद न करो और **'अहरहः स्वाध्यायोऽध्येतव्यः'** अर्थात, दिन-रात स्वाध्याय में लगे रहो । शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि–**'यावन्तः वा इमां पृथिवी वित्तेन पूर्णाद्ददल्लोक जयति त्रिस्तावन्तः जयति भूयांसम्वाक्षयम्य एवम् विज्ञान अहरहःस्वाध्यायामधीते ।'** अर्थात जितना पुण्य धन-धान्य से पूर्ण इस समस्त पृथ्वी को दान देने से मिलता है, उसका तीन गुना पुण्य तथा उसे भी अधिक पुण्य स्वाध्याय करने वाले को मिलता है । इस कथन पर आश्चर्य करने की कोई बात नहीं है । भावनाओं को प्रेरणा देने का प्रमुख आधार स्वाध्याय ही वह तथ्य माना गया है, जिससे प्रेरित होकर मनुष्य के विचार और कार्य सन्मार्ग की दिशा में विकसित होते हैं और यही विकास क्रम अंततः अक्षय पुण्य फल प्राप्त होने का हेतु बनाता है ।

शरीर, वस्त्र, मकान आदि की सफाई नित्य करनी पड़ती है, क्योंकि नित्य ही उन पर मैल जमता रहता है । इसी प्रकार मन पर भी संसार के बुरे वातावरण का मैल और कुप्रभाव निरंतर पड़ता रहता है । उसकी सफाई के लिए सत्संग और स्वाध्याय की बुहारी लगाने की नित्य ही आवश्यकता होती है । इसीलिए शास्त्रकारों ने भोजन, स्नान, शयन आदि की भाँति ही स्वाध्याय को भी नित्य कर्म माना है । पानी को फैलाते ही वह तेजी से नीचे की ओर अपने आप बहने लगता है । उसी प्रकार मन का स्वभाव भी नीच कर्मों की ओर आकर्षित होना है । यदि उसे न रोका जाय, तो पशु प्रवृत्तियों की ओर ही बढ़ेगा । पानी को ऊपर ले जाना होता है, तो रस्सी-बाल्टी, पंप आदि का प्रयोग करना पड़ता है, तब कहीं वह ऊपर को चढ़ाया जा सकता है । स्वाध्याय को वह व्यवधान कहा जा सकता है, जो मन रूपी पानी को कुमार्ग की ओर बहने से रोकता है । आत्मशोधन और आत्मनिर्माण का सबसे प्रधान विधान 'स्वाध्याय' ही माना गया है । इसी से परमात्मा की प्राप्ति भी होती है । महर्षि व्यास का कथन है–**'स्वाध्याययोगसाधनाया परमात्मा प्रकाशते'** अर्थात स्वाध्याय युक्त साधना से ही परमात्मा का साक्षात्कार होता है ।

ज्ञान की सत्ता

सुकरात कहते थे, ''मेरी बाल्यावस्था से ही एक सदात्मा मेरे साथ घूमती थी । उसका काम यह नहीं था कि मुझे यह बताए कि किस समय क्या करना है । वह केवल यह बताती थी कि कौन-सा काम उचित है और कौन-सा अनुचित ।'' वह सदात्मा कौन थी ? अनेक का विश्वास है कि वह सुकरात की प्रज्ञाशक्ति थी, वही उन्हें सतर्क करती रहती थी ।

ज्ञान-साधना

मुशाकी (जापान) में अब से ढाई सौ वर्ष पूर्व हवाना होकीची नामक एक बालक गरीब परिवार

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

में जन्मा । उसे सात वर्ष की आयु में चेचक निकली और उसी में दोनों आँखों से अंधा हो गया । अब उसके लिए कुछ भी देख सकना संभव न था । इस दुर्भाग्य भरे जीवन में अब अंधकार के अतिरिक्त और कुछ रह नहीं गया था । ऐसी स्थिति में लोग पराश्रित होकर जीते हैं । दूसरों की सहायता पर ही उनकी जीवन यात्रा चलती है । पर होकीची हिम्मत नहीं हारा । एक-एक इंच की दोनों आँखें ही तो गई थीं । इतने बड़े शरीर के अन्य कलपुर्जे तो ज्यों के त्यों थे, फिर वह क्यों यह माने कि उसका सब कुछ चला गया । ६३ इंच लंबे शरीर में से दो इंच घट जाने पर भी ६१ इंच की काया तो यथावत थी ही ।

होकीची १०१ वर्ष तक जिया । सात वर्ष बचपन के छोड़कर शेष ९४ वर्ष उसने अनवरत रूप से ज्ञान की साधना की । किशोर अवस्था तक वह केवल पढ़ता रहा, इसके बाद उसने पढ़ाने का धंधा अपना लिया । वह छात्रों को पढ़ाता और बदले में उनसे अपने काम की पुस्तकें पढ़वा कर ज्ञान की वृद्धि करता । यह पढ़ने और पढ़ाने का क्रम उसने आजीवन जारी रखा और जापान ही नहीं, सारे संसार के विद्वानों की अग्रिम पंक्ति में गिना गया । उसके मस्तिष्क में संग्रहीत अति उपयोगी ज्ञान को एक राष्ट्रीय शिक्षा संस्था ने नोट कराया और उसके आधार पर एक विश्व ज्ञान कोष प्रकाशित किया गया, २८२० खंडों में प्रकाशित हुआ है । संसार के इतिहास में इससे बड़ी और इससे अधिक तथ्यपूर्ण पुस्तक अभी तक कोई भी नहीं छपी ।

विद्या का लाभ सबको दें

विद्या विभूति सबके लिए है । उसे छिपाकर रखना, दूसरों को लाभ न उठाने देना, एक दंडनीय अपराध है ।

कांची नरेश की राजकुमारी प्रेत बाधा से पीड़ित हुई । भूत सामान्य नहीं ब्रह्म राक्षस था । तब श्रीरामानुजाचार्य बुलाए गए । उन्होंने वहाँ जाकर पूछा-"आपको यह योनि क्यों कर मिली ?" रोकर ब्रह्म राक्षस बोला-"मैं विद्वान था, किन्तु मैंने अपनी विद्या छिपा रखी थी । किसी को भी मैंने विद्या दान नहीं किया, इससे ब्रह्म राक्षस हुआ । आप समर्थ हैं, मुझे इस प्रेतत्व से मुक्ति दिलाइए ।" श्रीरामानुज ने राजकुमारी के मस्तक पर हाथ रखकर जैसे ही भगवान का स्मरण किया, वैसे ही ब्रह्मराक्षस ने उसे छोड़ दिया, क्योंकि वह स्वयं प्रेतयोनि से मुक्त हो गया । उस दिन से श्रीरामानुज ने प्रतिज्ञा की कि वह स्वाध्याय का लाभ अपने समाज को भी देते रहेंगे ।

ज्ञान के सागर में डुबकी लगाएं

ज्ञानार्जन हेतु मंथन करना पड़ता है, साधना करनी पड़ती है । बिना थके, किया गया अध्यवसाय ही फलदायी परिणाम देता है ।

समुद्री यात्रा से लौटे हुए एक यात्री ने एक गोताखोर से पूछा-"बंधु ! मैं तो हजार मील यात्रा कर आया, पर मुझे तो कहीं एक भी मोती न मिला, तुम तो एक दिन में ढेरों मोती ढूँढ़ लेते हो ?" गोताखोर ने डुबकी लगाने से पूर्व कहा-"भाई ! मैं अपने जीवन को संकट में, गहरे में उतारता हूँ, तुम्हारी तरह चलता ही नहीं रहता ।"

ज्ञान एवं वैराग्य की मूर्छना

नारद जी कलियुग का क्रम देखते हुए, एक बार वृंदावन पहुँचे । देखा, एक युवती के पास दो पुरुष मूर्छित पड़े हैं । दुखी युवती ने नारद जी को बुलाया । पूछने पर बतलाया-"मैं भक्ति हूँ । मेरे ये दो पुत्र ज्ञान और वैराग्य असमय में वृद्ध हो गए और मूर्छित पड़े हैं । इनकी मूर्छा दूर करें, तो मेरा दुख दूर हो ।" नारद जी ने उनकी मूर्छा दूर करने का प्रयास किया । वेदादि के पाठ से सामान्य हलचल शरीरों में हुई, पर मूर्छा नहीं टूटी । नारद जी दुखी होकर प्रार्थना करने लगे । आकाशवाणी हुई-"हे नारद ! आपका प्रयास उत्तम है, किन्तु मात्र वेदपाठ से इनकी मूर्छा दूर नहीं होगी, संतों से परामर्श करके कुछ सत्कर्म करो, तो ज्ञान-वैराग्य भी प्रतिष्ठापित हों ।"

नारद जी ने तमाम संतों से पूछा-"क्या सत्कर्म करें । जिससे इनकी मूर्छा टूटे ।" कहीं समाधान न मिला । अंत में बदरी विशाल क्षेत्र में सनकादि मुनियों से भेंट हुई । उन्होंने सारी बात सुनी, तो कहा-"नारद जी, आपकी भावना दिव्य है । कलि के प्रभाव से मूर्छित ज्ञान-वैराग्य की मूर्छा दूर करने के लिए ज्ञान यज्ञ ही एक मात्र ऐसा सत्कर्म है, जिसका प्रभाव निश्चित रूप से होगा । ज्ञान यज्ञ के लिए वेदादि का उपयोग भी ठीक है, पर वह कलि में बोधगम्य नहीं होने से उसका प्रभाव कम होता है । अतः आप कथा माध्यम से ज्ञान यज्ञ करें, वह निश्चित रूप में सफल होगा ।"

नारद जी सनत्कुमारों के साथ गंगा के किनारे आनंदवन में गए । वहाँ पवित्र वातावरण में उन्होंने ज्ञान यज्ञ

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

का, कथा-दृष्टांतों के माध्यम से धर्म धारणा के विस्तार हेतु शिक्षण का शुभारंभ किया । उनकी इस सक्रियता से और ऋषियों को भी प्रेरणा मिली एवं उन्होंने भी सद्ज्ञान विस्तार का पुण्य-परमार्थ करने का निश्चय किया ।

संगति का प्रतिफल

सत्संग की महिमा अपरंपार है । इसके लिए जो भी अवसर मिले, खोना नहीं चाहिए । एक मिट्टी के ढेले से सुगंध आ रही थी, दूसरे में दुर्गंध । दोनों जब मिले तो आपस में विचार करने लगे कि हम दोनों एक ही मिट्टी के बने हैं, फिर इतना अंतर क्यों ? सुगंधित ढेले ने कहा-"यह संगति का प्रतिफल है । मुझे गुलाब के नीचे पड़े रहने का अवसर मिला और तुम गोबर के नीचे दबे रहे ।"

रामायण से बदले

किसी ने एक महात्मा जी से पूछा-"महात्माजी, इस रामायण को सही माना जाय या गलत ?" महात्मा जी ने उत्तर दिया-"जब रामायण की रचना की गई थी, तब मैं नहीं था । जब राम विचरण कर रहे थे, तब भी मेरा अता-पता नहीं था । तो मैं कैसे कहूँ कि वह सही है या गलत । मैं तो केवल इतना ही बता सकता हूँ कि चाहे वह सही हो या गलत परंतु उसके पठन से मैं सही हो गया हूँ । चाहो तो यह क्रम तुम भी आजमा सकते हो ।"

जीव ब्रह्म की दूरी

आत्म ज्ञान की प्राप्ति से बढ़कर वरदान कोई और नहीं है । फकीर जुनैद आँखों में आँसू भर कर परमात्मा से प्रार्थना कर रहे थे-"मैंने सब कुछ छोड़ दिया । अब एक तेरे ही ऊपर नजर टिकी है । पर प्यारे यह तो बता कि तेरी नजर भी मेरी तरफ है या नहीं ?" भीतर का परमात्मा बोला-"जब तक दूसरे की नजर अपनी ओर होने, न होने में संदेह है, तब तक दूरी बनी ही रहेगी । अपनी नजर जमाए रहने में ही संतोष कर । समर्पण में ही सच्चा सुख है ।"

साधानाभिः कुटुम्बे च भवेद् वातावृतिः शुभा ।
आस्तिक्यभावसम्पन्ना धर्मश्रद्धास्थितेः समा ॥ ७२॥
भावना मान्यता नृणामाकांक्षा गतयश्च ताः ।
अधोगा नैव जायन्ते तस्मादत्र गृहे गृहे ॥ ७३॥
युगशक्तेराद्यशक्ते प्रतिमा स्थापिता भवेत् ।
महाप्रज्ञाभिधायास्तु गायत्र्याश्छविरेव वा ॥ ७४॥
भोजनात् पर्वूमेवात्र सदस्याश्च समेऽपि चेत् ।
नमनं वन्दनं कुर्युर्जपं ध्यानमथाऽपि च ॥ ७५॥
स्वल्पेऽपि समये सा वै साधनाऽप्यल्परूपिणी ।
भावनात्मकशुद्ध्यर्थं सिद्धत्येव सहायिका ॥ ७६॥

भावार्थ-साधना द्वारा परिवार में आस्तिकता का वातावरण बनना चाहिए । धर्म श्रद्धा बनी रहने से व्यक्ति की भावनाएँ, मान्यताएँ, आकांक्षाएँ एवं गतिविधियाँ अधोगामी नहीं बनने पातीं । इस हेतु हर घर में आद्यशक्ति युगशक्ति महाप्रज्ञा गायत्री की प्रतिमा अथवा छबि की स्थापना रहनी चाहिए । भोजन से पूर्व सभी उसका नमन-वंदन तथा जप-ध्यान थोड़े समय भी कर लिया करें, तो वह स्वल्प साधना भी भावनात्मक पवित्रता बनाए रहने में बहुत सहायक सिद्ध होती है ॥ ७२-७६ ॥

व्याख्या-संस्कारयुक्त वातावरण हर परिवार में बना रहे, इसके लिए उनकी आस्तिकता को जीवंत बनाए रखने के लिए उपयुक्त पोषण और मार्गदर्शन मिलता रहना चाहिए ।

आस्तिकता ईश्वर विश्वास मनुष्य पर एक ऐसा अंकुश है, जिसमें उसे दुष्कर्मों का प्रतिफल देर-सबेर से मिलने का भय बना रहता है । साथ ही यह भी निश्चय रहता है कि नियामक सत्ता आज नहीं तो कल-परसों सत्कर्मों का परिणाम प्रदान करेगी । भले-बुरे कर्मों का तत्काल फल न मिलते देखकर लोगों का मन कर्मफल के बारे में अनिश्चित हो जाता है, फलतः न तो दुष्कर्मों से डरते हैं और न सत्कर्मों के संबंध में उत्साहित होते हैं । ईश्वर के अस्तित्व और उसके कर्मफल विधान की निश्चितता पर विश्वास दिलाना आस्तिकता का प्रथम उद्देश्य है । सच्चे आस्तिक की चरित्रनिष्ठा डगमगाने नहीं पाती ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

उपासना का लक्ष्य है–ईश्वर की महानता के समीप पहुँचना, घनिष्ठ बनाना । अर्थात अपने चिंतन और चरित्र में ईश्वरीय विशेषताओं को भरते-बढ़ाते चले जाना । ईश्वर विराट् है । उसकी उपस्थिति प्राणिमात्र में, कण-कण में अनुभव करते हुए चेतना के प्रति सद्भावना रखना, सद्व्यवहार करना साथ ही पदार्थ संपदा को ईश्वर की अमानत मानकर उसका श्रेष्ठतम सदुपयोग करना–यही हैं वे प्रतिक्रियाएँ, जो उपासक के अंतःक्षेत्र में स्वाभाविक रूप से उभरनी चाहिए । आस्तिकता के दो प्रतिफल हैं, चरित्र निष्ठा और समाज निष्ठा । सच्चे ईश्वरविश्वासी को उदात्त और सदय बनना ही चाहिए । आत्मा के स्तर को परमात्मा जैसा ऊँचा उठा, क्षुद्रता को महानता में परिवर्तित करना, उपासना की भाव-भरी प्रेरणा है । जिसे यह लाभ मिलेगा, वह पुरुष से पुरुषोत्तम बनकर रहेगा । सच्ची आस्तिकता के अभाव में लोग पूजा के फलस्वरूप मनोकामना पूरी कराने की आस लगाए रहते हैं और छुटपुट क्रिया-कृत्यों के बदले पाप दंड से बच निकलने एवं सस्ते मोल में ईश्वर की अनुकंपा के चमत्कारी लाभ पाने की कल्पना करते रहते हैं ।

भावनात्मक पवित्रता बनाए रहने के लिए आत्मोत्कर्ष की दिशा में अग्रसर होने के लिए, उपासना का क्रिया-कृत्य करने के लिए परिवार के हर सदस्य को प्रेरित किया जाना चाहिए । भले ही वह न्यूनतम ही क्यों न हो ? इस संदर्भ में 'नमन-वंदन' सबसे छोटा और सरल कार्यक्रम है । गायत्री युग शक्ति है, उसी का प्रज्ञावतरण सामयिक समस्याओं का समाधान और उज्ज्वल भविष्य का सूत्र-संचालन करेगा । गायत्री की ऋतंभरा प्रज्ञा सार्वभौम और सार्वजनीन है । सद्विचारणा और सद्भावना की अधिष्ठात्री गायत्री माता की अभ्यर्थना ही युग साधना है । इसके लिए समस्त परिवारों को अपने घर के सभी परिजनों को अभ्यस्त करना चाहिए । जो अधिक समय गायत्री उपासना कर सकें, वे वैसा करें, अन्यथा इतना तो किया ही जाना चाहिए कि नित्यकर्म के उपरांत घर का हर सदस्य प्रतिष्ठापित गायत्री माता के चित्र के सम्मुख हाथ जोड़कर आँख बंद करके मानसिक जप और आत्म संस्थान में प्रकाश के अवतरण का ध्यान करे । इसके बाद ही भोजन एवं अन्य कर्म किए जाँय ।

प्रतिमा स्थापित की जाय, पर उससे व्यर्थ की अपेक्षा न की जाय । नहीं तो वह एक अंधविश्वास बन जाता है, जो व्यक्ति को श्रम से विमुख कर भाग्यवादी बना देता है ।

भक्त की उलाहना

हे प्रभु ! हे जगत् पिता, जगन्नियन्ता कैसे आप मौन, मंदिर में बैठे हुए हैं । क्या आप देख नहीं रहे हैं कि बाहर संसार में अन्याय और अनीति फैली हुई है । अत्याचारियों के आतंक और त्रास से संसार त्राहि-त्राहि कर रहा है । आप उठिए और बाहर आकर अत्याचारियों का विनाश करिए, संसार को त्रास और उत्पीड़न से बचाइए । देखिए, मैं कब से आपको पुकार रहा हूँ, विनय और प्रार्थना कर रहा हूँ । किन्तु आप अनसुनी करते जा रहे हैं । हे प्रभु, हे जगन्नियन्ता न जाने आप जल्दी क्यों नहीं सुनते । पुकारते-पुकारते मेरी वाणी शिथिल हो रही है, किन्तु अभी तक आपने मेरी पुकार नहीं सुनी–कहते-कहते, प्रार्थी करुणा से रो पड़ा । तभी मूर्ति ने गंभीरता के साथ कहा–"मैं मनुष्यों से बहुत डरता हूँ ।" प्रार्थी ने विस्मयपूर्वक पूछा–"भगवन् ! आप मनुष्य से डरते हैं–यह क्यों ?"

मूर्ति पुनः बोली–"इसलिए कि यदि मैं संसार में सशरीर ईश्वर के रूप में आ जाऊँ, तो मनुष्य मेरी दुर्गति बना डालें । क्योंकि हर मनुष्य को मुझ से कुछ न कुछ शिकायत है, हर मनुष्य मुझ से कुछ न कुछ सेवा चाहता है । अपनी शिकायतों को ढूँढ़ने और उन्हें दूर करने की अपेक्षा वह दोष मुझे देता है । पुरुष अपनी समस्याएँ आप हल करने की अपेक्षा मुझी से सारे काम कराना चाहता है और मूल्य चुकाए बिना वैभव पाने की याचना करता है । अब तुम्हीं बताओ ऐसी स्थिति से मैं सशरीर ईश्वर के रूप में कैसे आ सकता हूँ ?" मूर्ति इतना कह कर मौन हो गई ।

एक की जड़ता, एक की श्रद्धा

उपासना तभी सार्थक है, जब उसके साथ श्रेष्ठ कर्म भी जुड़ें । मात्र पूजा उपचार तो बहिरंग का कर्मकांड भर है ।

दो आदमी थे । उनके सामने दो पत्थर रखे थे । एक ने सामने के पत्थर को देखा । हाथ जोड़े । मन रोका और ध्यान के लिए आँखें मूँद लीं । पत्थर भी उसी मुद्रा में निस्तब्ध पड़ गया । दूसरे ने आँख खोली । मन को उछाला और छैनी-हथौड़े हाथ में लेकर पत्थर की देव प्रतिमा गढ़ने लगा । वह लगातार लगा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहा । मूर्ति बनकर तैयार हो गई । सुंदर अति सुंदर । दर्शकों का तांता लग गया, कलाकार की कला को मुक्त कंठ से सराहा गया । अंततः किसी श्रद्धालु ने उसे खरीदा और विशाल देवालय बनाकर उस प्रतिमा की प्रतिष्ठापना कर दी । पहले आदमी का पहला पत्थर अभी भी जहाँ का तहाँ उसी ऊसर जमीन में पड़ा था । भक्त का हाथ जोड़ना, आँखें मूँदना और मन को रोकना अभी भी उसी क्रम से चल रहा था ।

एक दिन वे दोनों व्यक्ति मिले । अपने-अपने आराध्य की चर्चा करने लगे । एक ने जड़ता की शिकायत की और दूसरे ने प्रगति का हर्ष संवाद सुनाया । उसी रात्रि उन पत्थरों की आत्माएँ भी भेंट का अवसर पा गईं । एक ने भक्त की जड़ता पर दुख प्रकट किया और दूसरी ने क्रियाशील श्रद्धा को मुक्त कंठ से सराहा ।

देश भक्तों का अंतर

एक तपस्वी ने इंद्र देव की आराधना की । वे प्रसन्न हुए और वरदान देने पहुँचे । तपस्वी ने उनका वज्र माँगा, ताकि संसार को आतंकित करके चक्रवर्ती शासन कर सके । इंद्रदेव रुष्ट होकर वापस चले गए । वरदान न पाने के दुख से तपस्वी निराशाग्रस्त मनःस्थिति में शरीर त्याग गया । इंद्र को यह समाचार मिला, तो वे बहुत दुखी हुए और सोचने लगे । तपस्वी को कष्ट देने की अपेक्षा उनकी मनोकामना पूर्ण करना उचित है । कुछ समय बाद किसी तपस्वी ने फिर इंद्र की वैसी ही आराधना की । निदान उन्हें वरदान देने के लिए जाना पड़ा ।

अब की बार वे वज्र साथ ही लेकर गए और पहुँचते ही बिना माँगे वज्र तपस्वी के आगे रख दिया । तपस्वी ने आश्चर्यचकित होकर उस निरर्थक वस्तु को देने का कारण पूछा-तो इंद्र ने पूर्व तपस्वी का सारा वृत्तांत कह सुनाया । वज्र को लौटाते हुए उसने निवेदन किया, देव ऐसे वरदान से क्या लाभ, जिसे पाकर अहंकार भरी तृष्णा जगे और न मिलने पर निराशाग्रस्त मरण का वरण करना पड़े । मुझे तो ऐसा वर दीजिए कि उपलब्ध तप शक्ति को सत्प्रयोजनों के लिए नियोजित कर सकूँ ।

उपासना इस स्तर के श्रेष्ठ उद्देश्य को लेकर की जाय, वही सार्थक है । यही विभिन्न उपासकों को मिलने वाले प्रतिफलों में अंतर का कारण बनती है ।

देह में समाए देवता

ईश्वर-परब्रह्म तो रोम-रोम में समाया है । किसी के अहित की कामना करना ही अपने लिए संकट बुलाना है । दधीचि पुत्र पिप्पलाद ने जब माता से अपने पिता को देवताओं द्वारा अस्थियाँ माँगे जाने और उनसे बने वज्र से अपने प्राण बचाने का विवरण सुना, तो उन्हें देवताओं के प्रति बड़ी घृणा उपजी । अपना स्वार्थ साधने के लिए दूसरों का प्राण हरण करने का छद्म करने वाले यह लोग कितने नीच हैं । इनसे पिता को सताने का बदला लूँगा । पिप्पलाद तप करने लगे । लंबी अवधि तक कठोर तपश्चर्या में प्रसन्न होकर भगवान् शिव प्रकट हुए और बोले-"वर माँग !" पिप्पलाद ने नमन किया और बोले-"देव प्रसन्न हैं, तो अपना रूद्र रूप प्रकट कीजिए और इन देवताओं को जलाकर भस्म कर दीजिए ।"

शिव स्तब्ध रह गए । पर वचन तो पूरा करना था । देवताओं को जलाने के लिए तीसरा नेत्र खोलने का उपक्रम करने लगे । इस आरंभ की प्रथम परिणति यह हुई कि पिप्पलाद का रोम-रोम जलने लगा । वे चिल्लाए, बोले-"भगवान, यह क्या हो रहा है ? देवता नहीं, उलटा मैं जला जा रहा हूं ।" शिव ने कहा-"देवता तुम्हारी देह में ही तो समाए हुए हैं । अवयवों की शक्ति उन्हीं की सामर्थ्य है । देव जलें और तुम अछूते बचे रहो । यह नहीं हो सकेगा, आग लगाने वाला स्वयं ही जल मरता है ।

पिप्पलाद ने अपनी याचना लौटा ली । शिव ने कहा-"देवताओं ने त्याग का अवसर देकर तुम्हारे पिता को कृत-कृत्य और तुम्हें गौरवान्वित किया है । मरना तो होता ही है, न तुम्हारे पिता बचते न काल के ग्रास से वृत्तासुर बचा रहता । यश-गौरव प्राप्त करने का लाभ प्रदान करने के लिए देवताओं के प्रति कृतज्ञ होना ही उचित है । पिप्पलाद का भ्रम दूर हो गया । उनकी तपस्या आत्मकल्याण की दिशा में मुड़ गई ।

देव प्रतिमा एवं भक्त की भावना

प्रतिमा की स्थापना की जाती है, धन की कामना से विक्रय नहीं किया जाता । एक व्यक्ति अपने गणेश जी और उनके चूहे की स्वर्ण प्रतिमाओं को बाजार में बचेने गया । दोनों का वजन बराबर था । सो मूल्य भी समान ही बताया । बेचने वाले ने कहा-"कहाँ चूहा क्षुद्र प्राणी और कहाँ देवाधिदेव गणेश । दोनों का मूल्य समान कैसे ?" खरीदने वाले ने कहा-

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

''देव प्रसन्न तभी तक रहते हैं, जब तक उनके साथ सघन भक्ति-भावना जुड़ी रहे । तुम बेचने लाए, तो वह भावना चली गई । अब यह धातु मात्र है, उसी हिसाब से दाम मिलेगा ।''

गाड़ी वाले रैक्य मुनि

रैक्य मुनि गाँव-गाँव गाड़ी ले जाते और उसमें विराजमान भगवान के सबको दर्शन कराते । राजा जनश्रुति ने कहा-''आपके लिए सुविधाजनक रथ का प्रबंध किए देते हैं । इतना कष्ट न उठाएँ । रैक्य ने कहा-''गाड़ी खींचने से रास्ता चलते लोगों को भी दर्शन कराता चलता हूँ और श्रमदान से शरीर भी स्वस्थ रहता है । अपनी उदारता का कहीं अन्यत्र उपयोग कीजिए । जनश्रुति निरुत्तर थे । ज्ञान मंदिर के रूप में प्रतिमा स्थापित कर गाँव-गाँव घूमना, अन्यों को दर्शन के साथ ज्ञान का लाभ भी देना सबसे बड़ा पुण्य है ।

परिवर्तनवेलायां युगस्यात्र नवाय च ।
सृजनाय गृहस्थस्य योगदानं समस्य तु ॥ ७७॥
अंशदानमपीहस्यान्नियमितं सुनियोजितम् ।
नरैर्ज्ञानघटः स्थाप्यः स्त्रीभिर्धर्मघटः पृथक् ॥ ७८॥
सत्प्रयोजनहेतोश्च कर्तव्यस्य धिया तु यत् ।
नित्यं नियमरूपेण विहितं महदेव तु ॥ ७९॥
अल्पमप्युच्यते पुण्यदायकं महदेव तु ।
सुखशान्तिप्रदा चास्य परिणतिः सोभयत्र तु ॥ ८०॥

भावार्थ-युग परिवर्तन की इस पुनीत वेला में नव सृजन के लिए हर सद्गृहस्थ का योगदान, अंशदान नियमित रूप से नियोजित होते रहना चाहिए । इसके लिए पुरुष ज्ञान घट की और नारियाँ धर्मघट की स्थापना करें । कर्तव्य भाव से सत्प्रयोजनों के लिए नित्य-नियमपूर्वक दिया गया थोड़ा सा अनुदान भी महान पुण्यफलदायक होता है और उसके परिणाम इस लोक और परलोक में सुख-शांति प्रदान करने वाले होते हैं ॥ ७७-८०॥

व्याख्या-साधना, स्वाध्याय और सत्संग हेतु प्रेरणा उभारने के बाद महर्षि हर सद्गृहस्थ को निर्देश देते हैं कि उन्हें अपनी उदार परमार्थ-परायणता को विकसित कर योगदान-श्रम, समय, प्रभाव, ज्ञान एवं उपार्जन का एक अंश समाज के उत्थान के लिए सेवा रूप में नियोजित करना चाहिए, क्योंकि समाज के अनुदानों से ही मनुष्य आगे बढ़ पाता है, सुख-सुविधाएँ पाता है । यदि लोग समाज के कोष से लेते ही रहे, कुछ दें नहीं, ऋण चुकाएं नहीं, तो भंडार खाली हो जायगा । सभ्य-सुसंस्कृत लोग पिछड़ों को सुशिक्षित करने, सभ्य बनाने, ऊँचा उठाने, आगे बढ़ाने का प्रयत्न न करें, तो वह परिवार समाज और राष्ट्र रसातल की ओर खिसकने लगेगा । अतः आत्म कल्याण एवं लोक मंगल के लिए सेवा साधना का क्रम अपनाना नितांत आवश्यक है ।

पुण्य-परमार्थ, लोक मंगल, जन कल्याण, समाजहित आदि सेवा-साधना के ही पर्यायवाची नाम हैं और इसी में मनुष्य जीवन की सार्थकता है । जिन व्यक्तियों ने भी इस पद्धति से जीवन सार्थकता की साधना की, मनुष्य और समाज का स्तर ऊँचा उठाने के लिए योगदान दिया, सामाजिक सुख-शांति में बाधक तत्वों का उन्मूलन करने के लिए प्रयत्न किए, समाज ने उन्हें सर-आँखों पर उठा लिया । महापुरुषों के रूप में आज हम उन्हीं नर-रत्नों का स्मरण और वंदन करते हैं ।

महर्षि व्यास ने महाभारत में कहा है-''**जीवनः सफलं तस्य यः परोद्यतः सदा**'' अर्थात उसी का जीवन सफल है, जो सेवा में, परोपकार में सदैव प्रवृत्त रहता है । ''**परोपकारः पुयाय्य**''-परोपकार ही पुण्य का जनक है ।

इतना ही नहीं गोस्वामी तुलसीदास जी ने तो यहाँ तक कह दिया है-

''परहित सरिस धर्म नहिं भाई ।''

*** *** *** *** *** ***

परहित बस जिनके मन माँही । तिन कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

सेवा के अनेकों मार्ग हैं । इनमें श्रमदान, अंशदान, समयदान और ज्ञानदान प्रमुख हैं । श्रेष्ठ सत्कर्मों के लिए सामान्यजनों का श्रमदान, नवनिर्माण के प्रयोजनों-पीड़ा निवारण के सत्प्रयोजनों के लिए वरिष्ठों और समर्थों का अंशदान-साधनदान और समयदान तथा मनुष्यों की पतनोन्मुखी-अधोगामी प्रवृत्तियों को परिष्कृत करके उन्हें उत्कृष्टतावादी बनाने के लिए विभूतिवानों, प्रतिभावानों का ज्ञानदान, जिनके पास जो विभूति हो, वह उसे ही उसके लिए नियोजित करते रहने का नियमित क्रम बना लें, भले ही वह न्यूनतम एवं आंशिक ही क्यों न हो, तो इतना बड़ा कार्य हो सकता है कि इतिहास में उसे स्वर्णाक्षरों में लिखा जा सके ।

सार्थक श्रमदान

जो जिस स्थिति में है, अपने लिए ऐसा क्षेत्र चुन सकता है कि कुछ करने का अवसर मिले । गौड़ देश में एक भावनाशील श्रमिक रहता था । जितना कमाता, उतना गुजारे में ही खर्च हो जाता । दान-पुण्य के लिए कुछ न बचता । इससे वह दुखी रहने लगा । बिना परमार्थ किए परलोक में कैसे सद्गति मिलेगी ? अपनी व्यथा उसने उस क्षेत्र के निवासी मद्रक संत को सुनाई । उनने कहा-"इस क्षेत्र में बहुत से तालाब हैं, पर वे अब समतल हो गए हैं । उनमें गहराई न रहने से पानी भी नहीं टिकता और प्यासे पशु-पक्षी अपनी प्यास बुझाने के लिए दूर-दूर तक जाते हैं । मनुष्यों को भी कम कष्ट नहीं होता । तुम इन तालाबों को जहाँ भी पाओ वहीं अपना परिवार लेकर रहो और श्रमदान कर तालाबों का जीर्णोद्धार करते रहो । जिस प्रकार नए मंदिर बनवाने की अपेक्षा पुरानों का जीर्णोद्धार श्रेष्ठ माना जाता है, बच्चे उत्पन्न करने की अपेक्षा रोगियों की सेवा प्रदान करना श्रेयस्कर है, उसी प्रकार तुम श्रमदान के आधार पर तालाबों का जीर्णोद्धार करो और उन्हीं के समीप वृक्ष भी लगाओ । किसान श्रमिक के पास अपनी श्रम संपदा प्रचुर थी, उसी से वह निर्वाह के अतिरिक्त परमार्थ भी अर्जित करने लग गया और संत के परामर्शानुसार परम श्रेय का अधिकारी बना ।

महापुरुषों के अंशदान-योगदान

प्राचीनकाल में लोकसेवी परंपरा के अंतर्गत जितने भी संत, ऋषि, विचारक, मनीषी और महापुरुष हुए हैं, उन्होंने अपने लिए कम से कम आवश्यकताएँ रखने, ब्राह्मणोचित औसत नागरिक स्तर का जीवन जीने तथा शेष बचे हुए श्रम, समय, मनोयोग एवं संपदा को लोकमंगल के लिए नियोजित करते रहने का दृष्टिकोण अपनाया था । ऋषियों के रहन-सहन की सादगी और उनके योगदान इतने सुविख्यात हैं कि उस संबंध में कुछ भी कहना पुनरुक्ति ही कहलाएगा ।

चाणक्य ने भारत को एक राष्ट्र के रूप में संगठित करने के लिए चंद्रगुप्त का मार्गदर्शन किया, हमेशा एक कुटिया में रहे । यदि वे चाहते, तो अपने लिए प्रचुर साधन-सुविधाएँ जुटा सकते थे और सुविधा-संपन्न जीवन व्यतीत कर सकते थे, लेकिन उन्होंने न्यूनतम आवश्यकता की मर्यादा का ही पालन किया और शेष लोकमंगल के लिए समर्पित कर दिया ।

इस युग में भी न्यूनतम आवश्यकताओं को रखते हुए जीवन व्यतीत करने वाले अनेक महापुरुष हुए हैं और उन्हें भरपूर जन श्रद्धा भी मिली है । गोपाल कृष्ण गोखले, महर्षि अरविंद, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, गांधी आदि मनीषी-महामानवों का जीवन तो तीस-चालीस वर्ष पूर्व की ही बात है । उन्होंने अच्छी संपन्न स्थिति में रहते हुए भी न्यूनतम साधनों का उपयोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया । शेष संपदा को लोकमंगल के कार्यों में लगा दिया ।

गोपाल कृष्ण गोखले अच्छी संपन्न स्थिति के थे और आमदनी भी उन्हें पर्याप्त होती थी, पर उन्होंने अपने लिए यह मर्यादा बना ली थी कि परिवार के लिए तीस रुपये से अधिक खर्च नहीं करेंगे । उन्होंने आजीवन इस मर्यादा का पालन किया ।

महर्षि अरविंद जब इंग्लैंड से शिक्षा प्राप्त कर लौटे, तो उनकी नियुक्ति बड़ौदा के एक कॉलेज में ५०० रुपये माहवार पर हुई । चाहते तो अच्छा ठाट-बाट का जीवन व्यतीत कर सकते थे, लेकिन उन्होंने निश्चय किया कि पचहत्तर रुपये में ही अपना गुजारा चलाएंगे और वास्तव में उन्होंने अपने निश्चय के अनुसार ही जीवन स्तर रखा । ईश्वरचंद्र विद्यासागर को पाँच सौ रुपये प्रतिमास मिलते थे, लेकिन उन्होंने अपने लिए पचास रुपये की ही व्यय सीमा रखी और आजीवन उसी स्तर को कायम रखते हुए सेवा धर्म का पालन करते रहे ।

महात्मा गाँधी एक सस्ता सा कपड़ा-धोती ही पहनते थे और सादे से सादा भोजन करते थे । इसी में उन्हें

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

संतोष की अनुभूति होती थी और जन साधारण से निकट की आत्मीयता की अनुभूति भी प्राप्त होती रहती थी । अपने बीच का, अपनी स्थिति का व्यक्ति मानकर लोगों ने उन्हें जो सम्मान दिया, वह बीसवीं शताब्दी में शायद ही किसी व्यक्ति को मिला हो ।

सुकरात के संबंध में कहते हैं कि जब वे कोई वस्तु खरीदते या कोई नया साधन जुटाते, तो उसके पहले अपने आप से यह प्रश्न करते थे कि क्या इस वस्तु के बिना मेरा काम नहीं चल सकता है ? यदि उत्तर हाँ में मिलता, तो वे खरीदते अन्यथा उस विचार को छोड़ देते थे ।

सही परामर्श वैशाली की एक संपन्न महिला थी–मंडप दारिका । सूना घर, पास में पैसा । सभी हित-संबंधी उसे किसी न किसी रूप में नोंचते, घात लगाते रहते । गौतमी से उसने अपनी व्यथा कही । उनके परामर्श से धन को एक बुद्ध विहार बनवा देने में लगा दिया और स्वयं गौतमी के साथ देश-देशांतरों में धर्मोपदेश देती हुई भ्रमण करने लगी ।

बासी-बुसी खाते हैं एक भिक्षुक किसी सद्गृहस्थ के दरवाजे पर भिक्षा की याचना कर रहा था । पुत्रवधू ने उसे यत्किंचित् देते हुए कहा–"हमारे पास कुछ कमाई नहीं है, दें कहाँ से ?" भिक्षुक ने कहा–"फिर आप लोग खाते क्या हैं ?" "बासी-बुसा जो पुराना पड़ा है । उसी को खा-पीकर काम चलाते हैं ।" भिक्षुक ने कहा–"जब वह बासी-बुसा समाप्त हो जाएगा, तो क्या करोगे ?" पुत्रवधू बोली–"तब हम लोग आप ही की तरह माँगेंगे-खाँएँगे ।" भीतर बैठा ससुर यह सब सुन रहा था । वधू पर बहुत क्रोध किया और कहा–"भिक्षुकों के सम्मुख हमारी बदनामी कराती है ।"

पुत्रवधू बड़ी शीलवान थी । उसने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया–"घर में जो-जो संपदा है, वह आपके पूर्व संचित पुण्यों के फलस्वरूप है । उसी को पूरा परिवार खा रहा है । यह बासी-बुसा नहीं है तो क्या है ? नया पुण्य न करने से बाद में हमें भिक्षुक की तरह माँगना-खाना पड़ेगा ।" ससुर की आँखें खुल गईं । उसने दान-पुण्य करके भविष्य उज्ज्वल बनाने की नीति अपनाई । उदारता अपनाने की शिक्षा छोटों से भी मिले, तो खुले हृदय से स्वीकार करना चाहिए ।"

सोने के पात्र समाज के लिए लोकसेवियों का स्वार्थ भी परमार्थ के लिए होता है । वे जहाँ धन संचय देखते हैं, वहाँ प्रेरणा फूँकते हैं, ताकि वह धन सत्प्रवृत्ति में नियोजित हो ।

इंदौर में हिंदी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन महात्मा गांधी के सभापतित्व में हुआ । नगर सेठ हुकुमचंद ने महात्मा गांधी और उनके सहयोगियों को भोजन के लिए आमंत्रित किया । आगंतुकों के लिए शानदार आसन, चाँदी के बर्तन बहुत ही सुंदर साज-सज्जा की गई । महात्मा गांधी के लिए सोने के बर्तन थे । बापू मुस्कराए । वे अपने बर्तन उन दिनों एलम्यूनियम के रखते थे । कस्तूरबा से बर्तनों का थैला माँगकर उन्हीं को रख लिया और सोने के बर्तन वापस कर दिए । सेठ जी ने सोने के बर्तनों में खाने की जिद की तो गाँधी जी ने यही कहा–"जो वस्तु गरीबों को मिल सकती है, उसी का मैं उपयोग करता हूँ ।" सेठ हुकुमचंद ने सोने के बर्तन देश के काम में प्रयुक्त करने के लिए गांधी जी को दे दिए, तभी उनने उनमें भोजन करना स्वीकार किया ।

अपरिग्रह एवं साधुता कितना स्वयं के लिए हो, कितना समाज के लिए, इसका उदाहरण अग्रदूत स्वयं प्रस्तुत करते हैं । भावावेश में कितने ही परिव्राजकों ने भिक्षु दीक्षा ली थी और उन्होंने अपरिग्रह का व्रत लिया था, पर समय गुजरते, पुराने प्रलोभन फिर लौट आए । उनने चीवर संग्रह करने आरंभ कर दिए । सभी के पास परिधानों के गट्ठर थे । तथागत इस शील शैथिल्य पर बहुत दुखी हुए । इतनी जल्दी व्रत भूल जाने पर ये लक्ष्य तक कैसे पहुँचेंगे ? उस दिन तथागत खुले में सोये । ठंड के दिन थे, सो एक चादर ओढ़ ली, अर्द्धरात्रि को ठंड पड़ी, तो दूसरी चादर ओढ़ी अंतिम प्रहर में शीत का प्रकोप अधिक हुआ, तो उनने तीसरी चीवर ओढ़ कर नींद का आनंद लिया । समाचार सारे संघाराम में फैल गया । भिक्षुओं ने तीन चीवर गुजारे के लिए पर्याप्त समझा और शेष सभी आश्रम के भंडार में जमा कर दिए । उनने अनुभव किया कि साधुता का अपरिहार्य अंग अपरिग्रह भी है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जो सामाजिक दायित्वों के प्रति जागरूक होते हैं, उन्हें चिंता रहती है कि एक-एक घटक को उसके हिस्से का मिले ।

चंद्रमा ने डाँटकर कहा-''सिंधुराज ! तुम्हें सारा जल अपने उदर में समेटते लाज नहीं आई । सारी नदियों का जल पीकर भी तुम्हें संतोष नहीं ।'' समुद्र ने गंभीर होकर कहा-''ऐसा न कहें देव ! यदि अनावश्यकों से लेकर संसार में जल वृष्टि का उत्तरदायित्व पूरा न करें, तो सृष्टि कैसे चले । शशि को अपने कथन पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ । उसने सिर झुका लिया ।

उपदेशं तु धौम्यस्य श्रुत्वाऽद्यतनमद्भुतम् ।
अन्वभूवन् समे तत्र महत्तां पुरुषाः स्वयम् ॥ ८१॥
क्रीणन्तीह श्रमेणाऽथ लग्नभावतयाऽपि च ।
निर्मूल्यं नैव चायाति सोपहार इव स्वयम् ॥ ८२॥
सुसंस्कृतं विधातुं च कुटुम्बं क्रियते यदि ।
धनांशकालयोर्दानं मनोयोगस्य संस्थितिः ॥ ८३॥
पण्यताहानि दानेयं चिन्त्यमेतन्मुहुर्मुहुः ।
स्वीकर्तव्यमिदं सर्वं स्वर्गमानेतुमत्र हि ॥ ८४॥
स्वाध्यायस्यांशदानस्य साधनाया अथापि च ।
सत्संगस्यानुदानं च सन्ततं कर्तुमेव तैः ॥ ८५॥
निश्चितं परिवारस्य कर्तुं चाऽपि परम्पराम् ।
संकल्पपूर्वकं श्रद्धापूर्वकं भावनामयैः ॥ ८६॥
समापनं च कुर्वन्तः सर्वे कार्यक्रमं ततः ।
प्रसन्नाः प्रययुर्वासानभिनन्दनपूर्वकम् ॥ ८७॥

भावार्थ-आज का उपदेश सुनकर सभी ने अनुभव किया कि महानता श्रम व लगन से खरीदी जाती है । किसी को भी बिना मूल्य उपहार की तरह नहीं मिलती । परिवार को सुसंस्कृत बनाने के लिए यदि थोड़ा समयदान, मनोयोग और अंशदान लगाना पड़ता है, तो यह किसी भी प्रकार घाटे का सौदा नहीं है । यह बार-बार सोचना चाहिए, तभी स्वर्ग पृथ्वी पर लाया जा सकता है । साधना, स्वाध्याय, सत्संग और अंशदान के नियमित अनुदान प्रस्तुत करने और उसे परिवार की परंपरा बनाने के लिए सभी ने संकल्पपूर्वक, श्रद्धापूर्वक, भावनामय होकर निश्चय किया । समापन कार्यक्रम पूरा करते हुए अभिनंदन पूर्वक सभी लोग प्रसन्नचित्त से बिदा हो गए ॥ ८१-८७॥

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः, युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्री धौम्य ऋषि प्रतिपादिते ''सुसंस्कारिता सम्वर्धनमि,'' ति
प्रकरणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

॥ अथ सप्तमोऽध्यायः ॥

卐 विश्व-परिवार प्रकरणम् 卐

धौम्यश्चिन्तनलग्नोऽभूत्कुटुम्बस्य मयाऽत्र तु ।
बोधितायां महत्तायामियत्यां कर्हिचित्समे ॥ १॥
श्रोतारो मागमन् भ्रान्तिं गृहप्राचीरगानि नः ।
कर्तव्यानि तथैतानि दायित्वानि तु सन्ति वै ॥ २॥
सीम्नि तस्यां जनैरल्पैः सहादानप्रदानयोः ।
व्यवस्थायां च लिप्तेऽस्मिन् मनुष्ये भवबन्धनम् ॥ ३॥
सीमाबन्धनमेतत् स्यान्मानवस्य स्थितिस्तु तम् ।
कूपमण्डूकतामेषा नेष्यतीह न संशयः ॥ ४॥
तदा देशस्य धर्मस्य समानायाश्च संस्कृतेः ।
विषये नहि कोऽप्यत्र चिन्तयिष्यति मानवः ॥ ५॥
भ्रमोऽयं च समुत्पन्नो यदि चित्ते तु कस्यचित् ।
तं भ्रमं च निराकर्तुं समायाताऽनिवार्यता ॥ ६॥

भावार्थ—महर्षि धौम्य सोचने लगे, परिवार की इतनी महत्ता बताने के कारण कहीं श्रवणकर्त्ताओं को यह मतिभ्रम न होने लगे कि घर की चहारदीवारी तक ही उनके कर्तव्य-उत्तरदायित्व सीमित हैं । उतनी ही परिधि में थोड़े से लोगों के साथ आदान-प्रदान करते रहने भर से यह मनुष्य लिप्त हो गया, तो फिर वह सीमा बंधन का काम करेगा, मनुष्य की स्थिति कूपमंडूक जैसी बना देगा, इसमें जरा भी संदेह नहीं । तब कोई देश, धर्म, समाज, संस्कृति की बात सोचेगा ही नहीं । यह भ्रम यदि मेरे प्रतिपादनों से किसी को हुआ हो, तो उसका निराकरण समय रहते करने की आवश्यकता है ॥ १-६॥

गृहान् स्वान् परिवारं च मन्येतात्र नरः सदा ।
विद्यालयमिवाऽथापि व्यायामभवनं पुनः ॥ ७॥
क्षेत्रेऽस्मिंश्च लघावात्मा उपलब्धीर्नियोजयेत् ।
हिते लोकस्य चात्मैव विद्यते नरजन्मनः ॥ ८॥
सार्थक्यं परमेशस्य निहिताऽत्र प्रसन्नता ।
प्रसन्ने परमेशे च न किमप्यस्ति दुर्लभम् ॥ ९॥
संसार एव ब्रह्मास्ति विराट्क्षेत्रेऽत्र मानवाः ।
स्वशक्तेः पुण्यबीजानि मुक्तहस्तं वपन्तु ते ॥ १०॥
विश्वसेदपि चैतत् स्यात् सहस्रं परिवर्द्धितम् ।
श्रेयसां परिणामे च यत्नैरिष्यते सदा ॥ ११॥
धौम्योऽथ निश्चिचायैतद्दातुं प्रोत्साहनं तथा ।
परामर्शं तु तान् सर्वान् सदस्यान् भवितुं स्वतः ॥ १२॥
विश्वस्य परिवारस्य व्यवस्था विषयेऽस्य च ।
योगदानं विधातुं स्यादपूर्णं यद्विना त्विदम् ॥ १३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तेन चाऽपूर्णभावेन भ्रान्त्युत्पत्तेरथाऽपि च ।
प्रगतेरवरोधस्य भयं तत्रोदितं महत् ॥ १४॥
उपस्थितांश्च जिज्ञासून् प्रतिगम्भीरमुद्रया ।
धौम्यः स्वकथनञ्चैवं प्रारंब्धं स व्यधाच्छुभम् ॥ १५॥

भावार्थ–घर–परिवार को व्यायामशाला–पाठशाला के समान माना जाना चाहिए । उस छोटे क्षेत्र में उपार्जित उपलब्धियों को लोकहित में नियोजित करना चाहिए । इसी में मनुष्य जन्म की सार्थकता और ईश्वर की प्रसन्नता सन्निहित है । परमेश्वर के प्रसन्न होने पर कुछ भी दुर्लभ नहीं है । यह संसार ही विराट् ब्रह्म–साकार परमेश्वर है । इसके खेत में अपनी क्षमताओं को जी खोलकर बोना चाहिए और बदले में हजार गुने श्रेय–सत्परिणामों का विश्वास रखना चाहिए और मानव–मात्र का अभीष्ट भी यही है । आज धौम्य ने विश्व–परिवार का नागरिक रहने–विश्व–व्यवस्था को सँभालने में भाव भरे योगदान देने के लिए परामर्श–प्रोत्साहन देने का निश्चय किया । इसके बिना सत्र का शिक्षण अधूरा ही रह जाता । उस अधूरेपन के कारण भ्रांति उत्पन्न होने, प्रगति उत्पन्न होने और रुक जाने का भी भय था । धौम्य ने उपस्थित जिज्ञासुओं की ओर उन्मुख होकर गंभीर मुद्रा में अपना मंगलमय कथन आरंभ किया ॥ ७–१५॥

व्याख्या–चिंतन की परिधि यदि अपने पारिवारिक परिजनों तक ही सीमित रहे, तो व्यक्ति-समुदाय का एक अंग होते हुए भी अपने दायित्वों का अहसास न होने के कारण उपार्जन-उपभोग में ही जीवन किसी तरह काटकर अपने कर्तव्यों की इतिश्री समझ लेता है । वस्तुस्थिति यह है कि समाज के एक-एक घटक ने परिवार संस्था के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । एकाकी कोई नहीं जी सकता, न ही पनप सकता है । ऐसे में इक्कड़, स्वार्थप्रधान जीवन जीने वाले व्यक्ति संस्कृति, समुदाय, विश्वसुधा के लिए कलंक ही सिद्ध होते हैं ।

गृहस्थ जीवन, नारी, शिशु एवं वृद्धजन प्रकरणों को अपने तर्क सम्मत विवेचन द्वारा प्रस्तुत करने वाले महर्षि धौम्य का यह अनुमान सत्य ही है कि जानकारी के अभाव में कहीं भ्रांतियाँ न पनपने लगें । इसी कारण वे विचारते हैं कि परिवार के सदस्यों को बताया जाना चाहिए कि उनका कार्यक्षेत्र कितना विशाल है । जिन गुणों का अभ्यास गृहस्थाश्रम में करने हेतु उन्हें प्रेरित किया गया, उन्हें समष्टि में संव्याप्त विराट् ब्रह्म रूपी विश्व परिवार में भी लागू किया जाना चाहिए, यह समझे बिना सारा प्रतिपादन अधूरा है । किसान अपने खेत में थोड़े से गेहूँ के दाने बोकर पूरे खेत में लहलहाती फसल काटता है । यही बोने व काटने की प्रक्रिया हर व्यक्ति को सत्प्रवृत्ति विस्तार के माध्यम से समग्र समाज पर लागू करनी चाहिए । आराधना की यह प्रक्रिया प्रकारांतर से उसकी विश्व-ब्रह्मांड के सभी घटकों के प्रति उऋण होने के रूप में संपन्न होनी चाहिए । इसी में उसका गौरव और बड़प्पन है ।

मानव जीवन व्यक्तिगत संपत्ति नहीं, विश्व विराट् की धरोहर

हमारा जीवन समाज का दिया हुआ है । वह हमारी व्यक्तिगत संपत्ति नहीं है, समाज की, विश्व विराट् की एक धरोहर है । इसका उपयोग समाज के, राष्ट्र के कल्याण और उसके हित के लिए ही होना चाहिए । इस तथ्य को तभी चरितार्थ किया जा सकता है, जब हम यह आधार लेकर चलें कि हमारा जीवन अपने व्यक्तिगत रूप में भले ही कुछ कष्टपूर्ण क्यों न हो, पर दूसरों का सुख और दूसरों की सुविधा तथा दूसरों का क्लेश, हमारा सुख-क्लेश है–यह परमार्थ भाव मनुष्य में जिस व्यक्तित्व का विकास करता है, वह बड़ा आकर्षक होता है । इतना आकर्षक होता है कि समाज की शक्ति और विकास मूलक सद्भावनाएँ आपसे आप खिंचती चली आती हैं । पूरा समाज उसका अपना परिवार बन जाता है । ऐसी बड़ी उपलब्धि मनुष्य को किस ऊँचाई पर नहीं पहुँचा सकती ।

भारतीय संस्कृति की अमरता का मुख्य कारण उसकी सहयोग तथा पारस्परिकता की भावना ही है । भारतीय संस्कृति ने कभी व्यक्तिवाद को प्रोत्साहन नहीं दिया । समस्त विश्व का हित ही उसका मूलमंत्र रहा है । अपनी व्यक्तिगत आवश्यकताएँ घटाते रहना और समझ, शक्ति तथा योग्यता का अधिकांश भाग विश्व हित में लगाते रहना हमारा आदर्श रहा है । कम से कम भोजन, वस्त्र और सुविधाएँ अधिक से अधिक दूसरों की सेवा करना ही हमारी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

परिपाटी रही है । भारतीय संस्कृति का निर्देश है–"हे मनुष्यो ! अपने हृदय में विश्व प्रेम की ज्योति जला दो । सबसे सहयोग करो । भुजाएँ पसारकर प्राणी मात्र को अपने हृदय से लगा लो । विश्व के कण-कण को प्रेम की सरिता से सींच दो । विश्व प्रेम वह रहस्यमय दिव्य रस है, जो एक से दूसरे हृदय को चाहता है । हम सबका जीवन आदर्श एवं उद्देश्य के लिए ही होना चाहिए । जब तक जियो विश्वहित की समस्त वस्तुओं को अपने प्रेम की छाया में रखो । सबको आत्मभाव और आत्मदृष्टि से देखो । सब अपने हैं, इस विश्व में कोई पराया नहीं है ।"

मानव मात्र की, प्राणिमात्र की एकता के इस सिद्धांत को भारतीय मनीषी तो हजारों वर्ष पूर्व **"वसुधैव कुटुम्बकम्" "आत्मवत् सर्वभूतेषु"** जैसे सूत्रों द्वारा प्रकट कर चुके थे और भारत के तथा संसार के अनेक भक्तों, संतों और विश्व-मानवता के त्राता महापुरुषों ने उनके अनुसार आचरण करके भी दिखा दिया था ।

व्यक्तिगत जीवन-जीवन यात्रा का प्रारंभ स्थान है और समष्टिगत जीवन-मनुष्य का ध्येय बिंदु गंतव्य । व्यक्तिगत जीवन अपूर्ण है, वह सामाजिक जीवन में आत्मसात् होकर ही पूर्ण बनता है । ठीक उसी तरह जैसे बूँद समुद्र में मिलकर पूर्णता प्राप्त करती है ।

आवश्यकता इस बात की है कि हमारा जीवन, हमारे प्रत्येक कार्यकलापों का आधार व्यक्तिगत न होकर समष्टिगत हो-सार्वभौमिक हो । रचनात्मक और दूसरों के लिए हितकारी हो । मनुष्य अपने लिए न जिए, वरन् समाज के लिए, संसार के लिए जिए । इसी सत्य पर व्यक्ति का उत्थान संभव है और साथ ही समाज में परस्पर सहयोग आत्मीयता, सौजन्य के संबंध कायम होते हैं । विश्व यज्ञ में मनुष्य का प्रत्येक प्रयास आहुति डालने के सदृश हो, तो धरती पर स्वर्ग की कल्पना साकार हो उठे ।

जन हितैषी-सर टॉमस रो

सर टॉमस रो डॉक्टर ने बादशाह शाहजहाँ की लड़की का इलाज किया और इसके प्रत्युपकार में शाहजहाँ ने मन चाहा इनाम माँगने के लिए कहा । सर टॉमस रो ने अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए कुछ न माँगकर इंग्लैंड से आने वाले माल पर से चुंगी हटाने की माँग की, जो स्वीकार कर ली गई । इससे इन माँगने वालों का व्यक्तिगत लाभ तो कुछ न हुआ, पर उनके देश से बिना चुंगी चुकाए जो माल भारत में सस्ता बिकने लगा, उससे उनके देश का व्यापार बढ़ा और वे इस देश पर अपना राजनैतिक वर्चस्व जमा सकने योग्य सामर्थ्यवान हो गए । इंग्लैंड मालामाल और शक्तिवान हो गया । सर टॉमस रो अपने देश का सच्चा और अच्छा नागरिक था । उसने अपने लाभ को पीछे रखकर पूरे समाज का हित चाहा और किया । अवश्य ही उसने सोचा होगा कि कोई जमीन-जायदाद अथवा धन संपदा माँग लेने पर केवल एक उसका ही जीवन सुखी हो सकता है, जिसको कुछ दिन भोगने के बाद उसे छोड़ना ही पड़ेगा और यदि वह किसी सार्वजनिक हित की माँग करता है, तो उससे उसके संपूर्ण समाज को लाभ होगा । मेरे एक अकेले के बजाय लाखों-हजारों का जीवन सुखी हो जाएगा और फिर सबके हित में उसका हित भी तो निहित है, अपने पूरे समाज के साथ वह भी तो सुखी होगा । कितना दिव्य और कितना दूरदर्शी विचार था उसका । उसके व्यक्तिगत सुख के उस त्याग ने उसके सारे देश को सुखी एवं संपन्न बना दिया । किसी अच्छे और सच्चे नागरिक का यही तो लक्षण होता है कि वह अपने संकीर्ण लाभ का त्याग कर जनहित की दृष्टि से सोचता और आचरण करता है । धन्य हैं ऐसे जन हितैषी मनुष्य ।

अनुदान दूसरों को बाँटा

कनाडा के एक अमीर श्री पियरे थॉमसन ने मरते समय अपने एक विश्वासपात्र नौकर के नाम वसीयत में हजार डालर छोड़े । जोसेफ नामक उस व्यक्ति को जब वह राशि मिली, तो उसने वह राशि अपने गाँव में बन रहे एकाकी स्कूल निर्माण हेतु दान कर दी और कहा कि–"मुझे जो कुछ भी मजूरी में मिलता है, उसी में प्रसन्न हूँ । किसी कारणवश मैं तो नहीं पढ़ पाया, पर मेरे अन्य बंधु क्यों उससे वंचित रहें । अच्छा हो मेरे मालिक का यह अनुदान उसी श्रेष्ठ काम में लगे, ताकि कोई निरक्षर न रहे ।

मानवता का फर्ज

जिनका अंत:करण सदाशयता से लबालब भरा होता है, उनको विश्व के समस्त नागरिक अपने ही परिजन से प्रतीत होते हैं । जो सेवा-उपकार भाव वे अपने सगे-संबंधियों के प्रति रखते हैं, वही उनका विश्व रूपी इस विराट् कुटुम्ब के प्रति भी होता है । इसे वे अपना कर्तव्य मानते हैं, अहसान नहीं ।

एक अधेड़ दंपत्ति रात को आँधी-तूफान और मूसलाधार वर्षा के बीच फिलाडेल्फिया के एक होटल में पहुँचे और ठहरने के लिए स्थान माँगा । होटल पूरा भरा हुआ था । कहीं तिल रखने को जगह नहीं थी । मालिक ने अपनी

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

असमर्थता प्रकट करके छुट्टी ले ली । घोर शीत और वर्षा की इस भयानक रात में दंपत्ति एक कोने में सिकुड़े हुए खड़े थे । रात कहाँ कटे, कुछ सूझ नहीं पड़ रहा था । होटल के एक कर्मचारी ने बिस्तर में पड़े-पड़े यह दृश्य देखा । वह बाहर निकला और उस दंपत्ति को अपनी छोटी सी कोठरी में टिका दिया । स्वयं किसी प्रकार इधर-उधर खड़ा टहलता रात काटता रहा । सबेरा हुआ । दंपत्ति उस कर्मचारी की उदार सज्जनता के लिए धन्यवाद देते हुए चले गए । इस कृपा का पुरस्कार देने का उनने प्रयत्न किया, पर उस कर्मचारी ने इसे मनुष्यता का फर्ज बताया और उसका मूल्य लेने से इन्कार कर दिया । कुछ ही दिन बाद उस कर्मचारी को न्यूयार्क से बुलावा आया । चिट्ठी के साथ हवाई जहाज का टिकट भी था । कर्मचारी पहुँचा, हवाई अड्डे पर स्वागत के लिए वही दंपत्ति खड़े थे, जिन्हें उसने अपनी कोठरी में टिकाया था । वे थे न्यूयार्क के करोड़पति विलियम वालडोर्फ ।

उन्होंने अपने उस रात के मेजबान का स्वागत करते हुए कहा कि-"हमने एक नया होटल बनाया है, उसके मैनेजर के पद हेतु आपको सम्मानित करना चाहते हैं ।" उस व्यक्ति के संकोच को देखते हुए वे बोले-"इसे अन्यथा न लें । यह उस रात की मेजबानी का पुरस्कार नहीं । उसे तो हम राशि में कभी चुका ही नहीं सकते । यह कर्तव्यनिष्ठा एवं उदार आत्मीयता का एक सम्मान भर है । आप जैसे सज्जन, जिनके लिए दूसरों का कष्ट भी अपना ही है, अतिथि-सेवा जैसे कार्य को सँभालने के हकदार हैं, हमने तो अपने कर्तव्य की पूर्ति भर की है ।"

समर्थ की जिम्मेदारी

अदालत में रोते हुए व्यक्ति को देखकर एक सहृदय ने कारण जानना चाहा, तो पता चला कि उसने बहुत पहले अपनी पुत्री के विवाह के लिए कर्ज लिया था । कर्ज समय पर चुका नहीं पाया, तो ब्याज पर ब्याज बढ़ता गया और अब तीन सौ रुपए हो गए । ऐसे धनी जो दिया हुआ कर्ज माफ कर दें, बहुत कम होते हैं । वह तो दुगुने का कागज लिखवाकर हर ढंग से वसूल करने का प्रयास करते हैं । वह कर्जदार तो अवधि बढ़ाने की फरियाद करने आया था । पर अदालत में भी कोई सुनवाई न हुई, क्योंकि मामला बहुत पुराना था । वह रोते हुए घर चला गया । उसकी पत्नी ने बताया कि डिग्री करने वाले कई व्यक्ति आए थे और दरवाजा घेरे काफी देर खड़े रहे । अंत में किसी दयालु व्यक्ति ने कर्ज चुकाकर उन्हें विदा किया । अब समझते देर न लगी कि जो व्यक्ति अदालत में मुझसे बात कर रहा था, शायद यहाँ आकर उसने मेरा दुख हलका करने के लिए रुपए चुका दिए हों ।

वह व्यक्ति उनका पता लगाते हुए घर पहुँचा और बड़े ही विनम्र शब्दों में कृतज्ञता व्यक्त करने लगा । उन्होंने कहा-"भाई ! रुपए चुकाए तो मैंने ही हैं, पर कहना किसी से मत । क्योंकि थोड़ा पैसा जेब में होने के कारण यह तो मेरा कर्तव्य ही था, जिसे मैंने पूरा किया ।" यह व्यक्ति थे ईश्वरचंद्र विद्यासागर, जो स्वयं गरीबी में पले थे, किन्तु अंत तक उसे भूले नहीं । माँ की सिखावन उन्हें हमेशा याद रही-"समर्थ होने के नाते अन्य गरीबों-पिछड़ों के दुख-कष्ट मिटाने की जिम्मेदारी पूरी लगन से निभाना ।" उन्होंने कोई भी ऐसा अवसर हाथ से जाने न दिया ।

व्यर्थ का अहंकार

हम अपने एकाकी छोटे से संसार में कूपमंडूक की तरह मदमस्त बने फिरते हैं । पर यह भूल जाते हैं कि हमारा निज का कोई अधिकार किसी पर नहीं । यह सारा ब्रह्मांड एक विशाल परिवार है, जिसको ऊँचा उठाना हमारा दायित्व है । अहंता, काम, मद कभी उभरे तो उसे मिटा देना ही ठीक है ।

एक राजा किसी संत के सामने अपनी शेखी बघार रहा था और कह रहा था, राज्य भर का पालन-पोषण करने की मैंने सुंदर व्यवस्था बना रखी है । संत ने उलट कर पूछा-"अपने राज्य के पशु-पक्षी, मनुष्यों में सुखी-दुखी, स्वस्थ-रुग्णों की गणना करके बताओ ।" राजा सकपका गया । संत ने कहा-"जब तुम्हें राज्य क्षेत्र में रहने वाले वर्गों की गणना तक नहीं मालूम, तब उनके उपयुक्त प्रबंध कैसे करते होगे ।" राजा का गर्व गल गया और वह भगवान द्वारा विश्व व्यवस्था चलने की बात कहने लगा ।

विनम्रता बनाम अहंता

एक जंगल में पास ही बाँसों का झुरमुट था एवं पास ही आम का पेड़ । बाँस ऊँचा था, आम छोटा । एक दिन बाँस ने कहा-"देखते नहीं, मैं कितना बड़ा हो चला, कितनी तेजी से बढ़ा । एक तुम हो, जो इतनी आयु होने पर भी अभी छोटे ही बने हुए हो ।" आम ने बाँस के सौभाग्य को सराहा, पर अपनी स्थिति पर भी असंतोष व्यक्त नहीं किया । समय बीतता गया । बाँस पककर सूख चला, किन्तु आम की डालियाँ फलों से लदीं और वह अधिक झुक गईं । बाँस फिर इठलाया-"देखते नहीं, मैं सुनहरा हो चला और बिना पत्तियों के भी दूर-दूर से कितना सुंदर दीखता हूं । एक तुम हो, जिसे फलों से लदने पर भी नीचा देखना पड़

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

रहा है ।'' आम ने फिर भी अपने संबंध में कुछ नहीं कहा । बाँस की सराहना भर कर दी । एक आया यात्रियों का झुंड । ठहरने के लिए आश्रम की तलाश की, सो फलों से लदा छायादार आम्रवृक्ष सबको सुहाया । डेरा डालकर वे वहाँ रात्रि विराम करने लगे ।

जरूरत आग की पड़ी, भोजन पकाने के लिए । नजर दौड़ाई, तो पास में ही सूखा बाँस पड़ा पाया, काटा जलाना आरंभ कर दिया । बाँस बड़बड़ाने लगा, पर आम के नीचे ठहरे यात्रियों को सुख पाते देखकर संतोष की सांस लेता रहा ।

धौम्य उवाच–

पारिवारिकभावं तु जानीयात् संगमं शुभम् ।
समन्वयकृतं यत्र धार्मिकत्वमथाऽपि च ॥ १६॥
आध्यात्मिकत्वमास्तिक्यं तत्त्वत्रयमपि स्थितम् ।
साधनोपासनाऽऽराधनानां सिद्धिर्यतो भवेत् ॥ १७॥
एनमाश्रित्य व्यक्तेश्च चरित्रं चिन्तनं तथा ।
व्यवहारस्तरोऽभ्येति नित्यमेवोन्नतिं स्थिराम् ॥ १८॥
परिवारस्तु प्रत्यक्षं शोधशालेव वर्तते ।
तत्र सम्मिलितैः सर्वैः सदस्यैराप्यतेऽनिशम् ॥ १९॥
कालः कौटुम्बिकान् सर्वानादर्शाञ्ज्ञातुमप्यथ ।
व्यवहर्तुं यदाश्रित्य पद्मायन्ते कुटुम्बगाः ॥ २०॥
सञ्चालयन्ति ते तस्य सूत्रं तेषां गुणेऽथ च ।
स्वभावे कर्मणीहास्ति विशेषा हि परिष्कृतिः ॥ २१॥
उन्नतस्तरमेतच्च परिवर्तनमद्भुतम् ।
प्रवृत्तिमेनां स्वीकृत्य मानवो बुद्धिमत्तमः ॥ २२॥
समर्थः प्रोन्नतश्चात्राऽपेक्षया ह्यन्यप्राणिनाम् ।
जातः कारणमस्याऽस्ति पारिवारिक पद्धतिः ॥ २३॥
नाऽभविष्यदिदं तस्मिन् वैशिष्ट्यं तर्हि सोऽपि तु ।
जीर्णप्राणिस्थितौ प्राणा न करिष्यद्धि यापितान् ॥ २४॥

भावार्थ–*धौम्य ने कहा–पारिवारिकता को एक ऐसा समन्वय–संगम समझना चाहिए, जिसमें आस्तिकता, आध्यात्मिकता और धार्मिकता के तीनों ही तत्वों का समावेश है । इसे सही रूप से अपनाने पर उपासना, साधना और आराधना के तीनों ही प्रयोजन पूर्ण होते हैं । इसके सहारे व्यक्ति का चिंतन, चरित्र और व्यवहार का स्तर ऊँचा उठता है । परिवार एक प्रत्यक्ष प्रयोगशाला है, उसमें सम्मिलित रहने वाले सदस्यों को पारिवारिकता के आदर्शों को व्यवहार रूप में समझने–अपनाने का अवसर मिलता है । यही वह आदर्श है, जिसे अपनाने पर परिवार के सदस्य कमल पुष्प बन, विकसित होते हैं । जो उसका सूत्र संचालन करते हैं, उनके गुण–कर्म–स्वभाव में उच्चस्तरीय परिवर्तन–परिष्कार संभव होता है । इस प्रवृत्ति को अपनाकर ही मनुष्य अन्य प्राणियों की तुलना में अधिक समर्थ, बुद्धिमान एवं प्रगतिशील बन सका, इसका प्रमुख कारण उसकी पारिवारिकता अपनाने वाली प्रवृत्ति ही है । यदि यह विशेषता न रही होती, तो उसे भी अन्य दुर्बलकाय प्राणियों की तरह गई–गुजरी स्थिति में जीवन व्यतीत करना पड़ता ॥ १६–२४॥*

व्याख्या–परिवार संस्था एक ऐसा संगठन है, जिसमें मनुष्य अध्यात्म दर्शन एवं व्यावहारिक जीवन-साधना के महत्वपूर्ण सोपानों को सीखता, जीवन में उतारता एवं उन्हें समाज परिवार में क्रियान्वित कर अपना मनुष्य जीवन सार्थक करता है । आस्तिकता अर्थात निराकार परमसत्ता को विश्व ब्रह्मांड रूप में समाए होने की मान्यता को स्वीकार करना, आध्यात्मिकता अर्थात 'स्व' के संबंध में अपनी परमात्मा के वरिष्ठ पुत्र

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

होने की स्थापना को परिपक्व बनाना एवं धार्मिकता अर्थात विश्व उद्यान को श्रेष्ठ-समुन्नत बनाने हेतु अपने सत्कर्मों को नियोजित कर देना । ये तीनों ही उपादान परिवार में रहकर भली-भाँति संपन्न होते रह सकते हैं । प्रकारांतर से ये ही उपासना, साधना, आराधना के क्रमशः पर्यायवाची हैं । इन्हीं से व्यक्ति महान अथवा दुर्बल बनता है । पारिवारिकता एक दर्शन है, जिसे अपनाकर व्यक्ति स्वयं अपने चिंतन, चरित्र एवं व्यवहार को परिष्कृत करता एवं अपने माध्यम से अन्य-अनेक को ऊँचा उठाता, प्रगति पथ पर बढ़ाता है ।

कर्तव्यपालन को वरीयता

सर्वसाधारण के प्रति अपना कर्तव्य निभाए बिना कितनी ही साधना, कर्मकांड आदि क्यों न कर लिए जाँए, निरर्थक हैं ।

एक-एक भिक्षु का तथागत को ध्यान था और यह भी कि कौन-कैसा है ? एक बार उन्हें किसी भिक्षु का समाचार नहीं मिला और न ही वह दिखाई दिया । अपने समीप खड़े भिक्षु भदंत आनंद से उन्होंने पूछा कि अमुक भिक्षु कहाँ है, तो भदंत आनंद ने उत्तर दिया-"वह अतिसार से पीड़ित है ।" सुनते ही तथागत बोले-"चलो उसे देख आएँ ।"

भदंत आनंद और कुछ अन्य भिक्षु भी बुद्ध के साथ हो लिए । बुद्ध ने देखा रुग्ण भिक्षु अपनी कुटिया में अकेला बेसुध पड़ा है । किसी के द्वारा परिचर्या न किए जाने के कारण वह कुटिया में ही मल-मूत्र से लिपटा, सना पड़ा था । भगवान ने उसे देख कर कहा-"भाई, तुम्हें क्या कष्ट है ?" "मुझे अतिसार है भगवन्"-भिक्षु ने कहा । "क्या ? कोई भी तुम्हारी परिचर्या को नहीं आया ?" "नहीं आया भगवन् ।" "तो भिक्षु, ऐसा क्यों हुआ कि भिक्खुभाल तुम्हारी देखभाल नहीं करते ?" "भगवन्, वे सब योग साधनाओं में निरत रहते हैं, मैंने यही सुना है । इसीलिए उन्हें मेरी चिंता नहीं है, यह भी वे लोग कहते हैं ।"

अपने पास खड़े भिक्षुओं से कुछ न कहते हुए तथागत ने भदंत आनंद से कहा-"जाओ आनंद जल ले आओ । हम इस भाई की सेवा करेंगे ।" "हाँ भगवन् !" आनंद ने कहा और जल लेने को चल दिया । जब जल कलश आ पहुँचा, तो भगवान् ने स्वयं जल डाला और अपने ही हाथों से भिक्षु का सारा शरीर धोया । तथागत को स्वयं परिचर्या करते देख, वहाँ खड़े भिक्षुगण भी परिचर्या में हाथ बँटाने लगे । तथागत ने किसी से कुछ कहा नहीं । संध्या होने को थी । संध्याकालीन प्रार्थना के लिए सभी भिक्षुकगण एकत्र हो गए । परिचर्या के उपरांत तथागत बैठक में पहुँचे और उन्होंने बिना किसी भूमिका के भिक्षुओं को संबोधित करते हुए कहा-"ज्ञान, योग और तप की कितनी ही महत्ता क्यों न हो, पर वे करुणासिक्त सेवा के बिना किसी भी प्रकार की उपलब्धि नहीं करा सकते । तुम सब सेवा-साधना को प्राथमिकता दो, बाद में योगाभ्यास करो । उसी में तुम्हारी संघ में आने, भिक्षु बनने की सार्थकता है ।"

बोली मनुष्यों की बोलो

एवरम गारफील्ड जिस ग्राम में रहते थे, उसमें एक दिन भयंकर आग लगी । सारा गाँव स्वाहा होने जा रहा था, पर कोई बुझाने के कारगर प्रयत्न न कर रहा था । एवरम गारफील्ड गीला कंबल लपेट कर कुदाली-फावड़ा आदि लेकर आग बुझाने चले, जो मनुष्य अथवा सामान निकाल सकते थे, उसे निकालने में जुट गए । उनकी पत्नी व बच्चों ने कहा-"आप क्यों जोखिम उठाते हैं ?" एवरम ने डपटते हुए कहा-"मनुष्यों की बोली बोलो । पशुओं की नहीं । मनुष्य को दूसरों की कठिनाई से निकालने का प्रयत्न करना चाहिए ।" इस ललकार को सुनकर स्त्री-बच्चे भी जुट गए और तब तक लगे रहे, जब तक आग बुझ न गई । इसमें उस परिवार को कई जगह झुलसना भी पड़ा । उनके बेटे जेम्स ने अपने पिता की सदाशयता और गाँव वालों की कृतज्ञता को देखा, तो उनका जी भर आया । सोचा अपने पिता जैसा उदार ही मुझे होना चाहिए । उनने बड़े होकर निरंतर देश की प्रगति में लगे रहने का निश्चय किया और उस व्रत को निभाया । जनता ने भी अपनी कृतज्ञता का परिचय दिया । एवरम गारफील्ड के पुत्र जेम्स गारफील्ड अमेरिका के राष्ट्रपति बने ।

परिवार में रहकर की गई उनके पिता की सुसंस्कारिता उपार्जन रूपी साधना ही ऐसे फलदायी परिणाम उत्पन्न कर सकी ।

संत शबरी

भक्त का मूल्यांकन उनके कर्मों से किया जाता है न कि ध्यानमग्न होकर की गई तप साधना से ।

अत्रि ऋषि के आश्रम में ज्ञान चर्चा चल रही थी । एक जिज्ञासु ने कहा-"भक्त जन भगवान् का दर्शन पाने उनके निकट पहुँचने का प्रयत्न करते हैं ।" फिर शबरी में ऐसी क्या विशेषता है, जिसके कारण भगवान् न

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

केवल उसके घर पहुँचे, वरन् मान बढ़ाने के लिए उसके जूठे बेर भी माँग-माँग कर खा लिए । अत्रि ने कहा-"शबरी भक्त नहीं संत है । वह रात्रि में भजन और दिन में परमार्थ कर्मों में निरत रहती है ।" मातंग ऋषि के आश्रमवासियों के वेत्रवती नदी तक पहुँचने का कंटीला मार्ग उसी ने झाड़ियों से रहित किया और नित्य ही उस मार्ग की सफाई भी की । भगवान् ऐसे भक्तों को सम्मान देने स्वयं उनके घर जाते हैं ।

पहले कर्तव्य फिर पूजा

संत विनोबा भगवान् कृष्ण के बड़े भक्त थे । उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान् दर्शन देने उनके घर आए । संत अपने वृद्ध माता-पिता की सेवा में संलग्न थे । भगवान् को घर आया देख कर वे पुलकित हो गए । पर विवेक नहीं खोया । भगवान् के लिए उनने पास में पड़ी ईंट उठाकर बैठने के लिए रख दी और कहा-"अपने कर्तव्य धर्म को पूरा कर लूँ, तब आपकी पूजा-अर्चा करूँगा ।" भगवान् ईंट पर प्रतीक्षा में बैठे रहे । नियत उत्तरदायित्व से निवृत्त होने पर उनकी पूजा हुई । ईंटवाला विनोबा मंदिर अभी भी प्रख्यात है ।

नया प्रकाश-नयी प्रेरणा

तुकनेव का एक गद्य काव्य है ।

मैं जा रहा था सुनसान सड़क पर । देखा एक बुभुक्षित भिखारी को । बहुत ही दुर्बल था वह । याचना थी उसकी आँखों में । देना चाहा पर मेरी जेब में कुछ भी नहीं था, एक पैसा भी नहीं । क्या करूँ ? अंत में मैंने उसका हाथ पकड़ लिया । उठाया और सिर पर हाथ फिराया । आशा दिलाई । मैं न सही कोई दूसरा मदद करेगा । आप हताश न हों । भिक्षुक के होठ हिले । बोला-"मेरे ठंडे हाथों को अपने गर्म हाथों से पकड़कर जो गर्मी दी, उससे भी बहुत राहत मिली । आपका असहान भूलने वाला नहीं हूँ । मैं धीमे पैरों आगे बढ़ा । सोचता था उस भिक्षुक ने मुझे नया प्रकाश दिया । नया द्वार खोला और नई राह दिखाई । ये छोटे-छोटे से प्रसंग मनुष्य को श्रेष्ठ बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं । ऐसे अवसर कभी चूक न जाए, हर परिजन को इसके प्रति सतर्क रहना चाहिए ।

बोनीफेस झरना

संत बोनीफेस ने आजीवन औरों की सेवा की, पर कभी किसी से कुछ माँगा नहीं, भले ही उन्हें कई दिन उपवास ही क्यों न करना पड़ा हो ।

एक बार उन्हें कई दिन तक कुछ खाने को न मिला । एक स्त्री दूध निकाल रही थी । उन्हें ऐसा लगा कि अपने भीतर न माँगने का अहंकार उठ रहा है, सो उन्होंने तुरंत ही उस स्त्री से थोड़ा दूध माँगा । उसके पति ने बीच में ही रोककर दूध देने से इन्कार कर दिया । संत बिना किसी दुर्भाव से आगे बढ़े, पर भूख सहन न करने के कारण जमीन पर गिर पड़े । वहीं एक निर्झर फूट पड़ा । जो आज भी बोनीफेस निर्झर के नाम से प्रख्यात है ।

संतों जैसी उदारता यदि हर किसी परिवार संस्था के सदस्यों के मन में जीवित हो, तो वे अभावों में रहते हुए भी संतोष भरा यशस्वी जीवन जी सकते हैं ।

कम में भी निर्वाह तो संभव है ?

एक साधु ने अपने सो सकने जितने आकार की एक झोंपड़ी बनाई । अकेला रहता था । वर्षा की रात में एक और साधु कहीं से आया । उसने जगह माँगी । झोपड़ी वाले ने कहा-"इसमें सोने की जगह एक के लिए है, पर बैठे तो दो भी रह सकते हैं ।" आधी रात काटी । इतने में एक तीसरा साधु और कहीं से भीगता हुआ आ गया । वह भी आश्रय चाहता था । झोपड़ी वाले साधु ने फिर कहा-"जगह तो कम है, पर खड़े होकर हम तीनों रात काट सकते हैं ।" तीनों खड़े रहकर वर्षा से बचाव करते रहे । यदि अंदर उदारता हो, वसुधैव कुटुम्बकम् का भाव हो, तो कम साधनों में भी अधिक व्यक्तियों का निर्वाह होता रह सकता है ।

सबसे प्रेम करो

कुछ व्यक्ति एक वट वृक्ष के नीचे बैठे वार्तालाप कर रहे थे । सभी दुनियाँ के झंझटों से परेशान होकर भाग आए थे और साधु होने जा रहे थे । तब एक ने कहा-"अपने सब मिलकर जंगल में रहेंगे और तपस्या करेंगे । लेकिन यह तो सोचो कि जब ईश्वर वरदान माँगने को कहेगा, तो माँगेंगे क्या ?" दूसरे ने कहा-"अन्न माँगेंगे । उसके बिना जीवित रहना संभव नहीं ।" तीसरे ने कहा-"बल माँगेंगे । बल के बिना सभी कुछ निरर्थक है ।" चौथे ने कहा-"बुद्धि माँगना ज्यादा उचित है । बुद्धि की आवश्यकता प्रत्येक कार्य को करने से पूर्व होती है ।" तब पाँचवाँ बोला-"ये सब वस्तुएँ तो सांसारिक हैं । आत्म शांति माँगेंगे, जो अंतिम लक्ष्य है मनुष्य का ।"

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तब पहले व्यक्ति ने कहा–"तुम सब मूर्ख हो, क्यों न हम स्वर्ग ही माँग लें । वहाँ समस्त उपलब्धियाँ एक साथ ही हो जाएँगी ।" तब विशाल वट वृक्ष ठहाका लगाता हुआ बोला–"मेरी बात मानो, तुम लोगों से न तपस्या होगी, न उपलब्धियाँ प्राप्त होंगी, क्योंकि यदि इतना ही मनोबल होता, तो संसार से घबरा कर न भागते । बिना माँगे ही मैं एक वरदान देता हूँ तुम्हें । उसका नाम है प्रेम – प्राणिमात्र से प्रेम करो । प्रेम का अर्थ आत्म संयम और दूसरों की सेवा-सहायता समझो । फिर देखो, जो वस्तु चाहोगे, वही प्राप्त करने की क्षमता आ जाएगी ।" यह सुकर वे उठकर अपने-अपने घर चले गए और विश्व-मानवता की सेवा में जुट गए ।

पूरे राष्ट्र का दर्द

जिन्हें सारा विश्व अपना परिवार प्रतीत होता है, वे व्यक्तिगत जीवन में स्वयं के प्रति कठोर एवं दूसरों के प्रति उदार दृष्टिकोण अपनाते हैं । वे अपने पर अंकुश लगाते हैं, ताकि औरों को अभाव न हो । लोकसेवियों की यही जीवन साधना वास्तविक ईश्वर उपासना है ।

बापू गोलमेज सम्मेलन में भोग लेने के लिए लंदन गए । उन्हें ब्रिटिश राजा से भेंट करनी थी । राजा के सचिव ने बताया कि वह इस ढंग से भेंट नहीं कर सकते । राजा से मिलने के लिए यहाँ की परंपरानुसार एक विशेष प्रकार की पोशाक होती है, जिसे धारण करना होता है । गांधी जी ने कहा–"मैं भारतवर्ष से आया हूँ । वहाँ के रहने वाले व्यक्ति को घुटनों तक की एक धोती और ऊपर डालने के लिए अँगोछे से अधिक कुछ भी उपलब्ध नहीं है । आप तो इतनी दूर बैठे हैं । आपको वहाँ की स्थिति का कुछ भी ज्ञान नहीं है । लोग कड़ी मेहनत करते हैं, फिर भी एक समय का भोजन कठिनाई से जुटा पाते हैं । टूटे-फूटे मकान में निवास करते हैं । निर्धन भारतवासियों का प्रतिनिधित्व करने के कारण मैं भी उसी स्थिति में रहना चाहता हूँ । यदि आपके राजा मुझसे भेंट करना नहीं चाहते, तो मैं अपने देश लौट सकता हूँ ।" सचिव राजा के पास गया । उसने गांधी जी की सारी बात कह सुनाई । राजा ने आदेश दिया कि "गांधी जी जिस प्रकार वस्त्र धारण किए हैं, उन्हीं वस्त्रों से मिलने दिया जाए, उनके लिए पूर्व निर्धारित विशेष प्रकार की पोशाक पहनने की आवश्यकता नहीं है ।" गांधी जी धोती पहने और चादर ओढ़े ही अपनी वार्ता के लिए उनके सम्मुख जा पहुँचे । ये ही विशेषताएँ थीं, जिस कारण उन्हें महात्मा, राष्ट्रपिता जैसे संबोधन दिए गए ।

कुटुम्बं स्वं गृहस्थस्य सीमितं परिधौ सदा ।
तिष्ठतीह तदाधारं कुलं तच्च कुटुम्बकम् ॥ २५॥
विद्यन्ते तस्य नूनं च महत्ताऽथोपयोगिता ।
आवश्यकत्वमत्रैवं दायित्वं मौलिकं शुभम् ॥ २६॥
परं ज्ञातव्यमेतन्न पारिवारिक एष च ।
आदर्शः सीमितः क्षेत्रे लघावियति केवलम् ॥ २७॥
व्यापकः स च धर्मस्य दर्शनस्येव विद्यते ।
परिधौ मीयते तस्य जगदेतच्चराचरम् ॥ २८॥
समाजरचनाऽप्येषा जाता सिद्धान्ततो भुवि ।
परिवारस्थितिं वीक्ष्य राष्ट्राणां घटनं तथा ॥ २९॥
सिद्धान्तोऽयं धरायां च सम्यग्रूपेण संस्थितः ।
यावत्तावद् भुवि स्वर्गतुल्या वातावृत्तिः स्थिता ॥ ३०॥
ये मनुष्याः सदादर्शमिमं जानन्त एव च ।
व्यवहारे यथाऽगृह्णन् महत्वं ते तथाऽऽप्नुवन् ॥ ३१॥
विभूतीरधिजग्मुस्त उत्तमोत्तमतां गताः ।
साधु विप्रस्तरा वानप्रस्थस्तरगताः समे ॥ ३२॥
ओतप्रोता नरा आविर्भावनाभिर्निरन्तरम् ।
सर्वान् स्वान् मन्वते ते च पश्यन्तीह स्व यादृशा ॥ ३३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

निरीक्षन्ते च यत्राऽपि दृश्यन्ते स्वे समेऽपि च ।
आत्मभावोऽयमेवात्र कुटुम्बत्वस्य लक्षणम् ॥ ३४॥

भावार्थ–निजी परिवार घर–गृहस्थी की परिधि में सीमित रहता है । उसका आधार वंश–कुटुंब है । उसकी भी अपनी महत्ता, उपयोगिता, आवश्यकता एवं जिम्मेदारी है, पर यह न समझना चाहिए कि पारिवारिकता का आदर्श इतने छोटे क्षेत्र में ही सीमित होकर रह जाता है । वह धर्म और दर्शन की तरह अत्यंत व्यापक है । उसकी परिधि में यह सारा चराचर संसार समा जाता है । समाज की संरचना परिवार सिद्धांत पर हुई है । राष्ट्रों का गठन भी इसी आधार पर हुआ है । यह सिद्धांत जब तक सही रूप में अपनाया जाता रहा, तब तक इस धरातल पर स्वर्गोपम सतयुगी वातावरण बना रहा । जिन मनुष्यों ने इस आदर्श को जितना समझा और व्यवहार में उतारा, वे उसी अनुपात में महान् बनते चले गए । उन्हें एक से एक बढ़कर महान् विभूतियाँ उपलब्ध होती रहीं । साधु–ब्राह्मण–वानप्रस्थ स्तर के परमार्थ परायण व्यक्ति इसी भावना से ओत–प्रोत होते हैं । वे सबको अपना मानते हैं । आत्मीयता की दृष्टि से देखते हैं । जिधर भी आँख पसारते हैं, सभी अपने दीखते हैं । यह आत्मभाव ही पारिवारिकता का प्रधान लक्षण है ॥ २५–३४॥

व्याख्या–जो पारिवारिकता के दर्शन को अपने दैनंदिन जीवन व्यवहार में उतारते हैं, वे बदले में उतना ही प्रेम, श्रेय, सम्मान पाते हैं । "सब अपने हैं, हम सबके हैं । दूसरों का दुख कष्ट ही हमारा दुख है ।" यदि ये भावनाएँ जीवंत रहें, तो सारी वसुधा ही अपना परिवार लगती है । अपना कार्यक्षेत्र सारा समाज, राष्ट्र एवं विश्व वसुधा हो जाता है । परिवार के परिजनों, विशेषकर वानप्रस्थों के लिए तो यह आदर्श जीवन साधना का एक अनिवार्य अंग है ।

व्यक्ति जिस वंश-परिवार में जन्म लेता है, उसी तक उसके दायित्व हैं, यह मान्यता त्रुटिपूर्ण है । इस संबंध में संव्याप्त भ्रांतियों को मिटाया जाना चाहिए, ताकि लोगों की उदार परमार्थ-परायणता विकसित हो एवं वे अपनी कार्य परिधि का विस्तार करें ।

रत्न राशि पीड़ितों के लिए

स्वीड़न की राजकुमारी यूजीन को उत्तराधिकार में जो धन मिला, उसमें रत्न राशि की एक पिटारी भी थी, जिसकी कीमत करोड़ों रुपये आँकी गई । अन्य बहन-भाइयों की तरह वह दौलत राजकुमारी ने विलास और ठाट-बाट में खर्च नहीं की, वरन् उससे निर्धनों के लिए एक अस्पताल बनवा दिया । राजकुमारी रोज अस्पताल जाती और रोतों को हँसते देखकर अपनी दौलत की सार्थकता का बखान करती । स्वयं उसने नर्स जैसा जीवन जिया ।

सबको स्वर्ग मिले

वैष्णव संप्रदाय के आचार्य संत रामानुज को गुरु मंत्र देते हुए उनके गुरु ने सावधान किया–"**गोप्यं, गोप्यं परं गोप्यं गोपनीयं प्रयत्नतः**"–मंत्र को गोपनीय रखना । संत रामानुज मंत्र जप के साथ ही विचार करने लगे–यह अमोघ मंत्र मृत्युलोक की संजीवनी है । यह जन-जन की मुक्ति का साधन बन सकता है, तो गुप्त क्यों रहे ? उन्होंने गुरु की अवज्ञा करके मंत्र सभी को बता दिया । एक स्थान पर अपने शिष्य को सामूहिक पाठ करते हुए सुना, तो वे क्रुद्ध हो गए, "रामानुज, तूने गोपनीय मंत्र को प्रकट कर पाप अर्जित किया है । तू नरकगामी होगा ।" रामानुज ने गुरु के चरण पकड़ लिए–"देव, जिन्हें मैंने मंत्र बताया है, क्या वे भी नरकगामी होंगे ?" गुरु ने कहा–"नहीं वे तो मृत्युलोक के आवागमन से मुक्त हो जाएंगे । उन्हें तो पुण्य लाभ ही होगा ।" रामानुज के मुखमंडल पर संतोष की आभा चमक उठी, "यदि इतने लोग मंत्र के प्रभाव से मोक्ष प्राप्त करेंगे, तो मैं स्वयं के लिए शतयोनि में नरक-गमन स्वीकार कर लूँगा ।" अपने शिष्य के यह वचन सुनकर गुरु मुग्ध हो उठे । उन्होंने कहा–"ऐसी भावना रखने वाला तो स्वर्ग का सर्वोच्च अधिकारी ही होता है ।"

सबसे बड़ा पुण्य

एक वृद्धा ने चार धाम यात्रा के लिए कुछ धन एकत्रित करना आरंभ किया । जब आवश्यक राशि हो पाई, उन्हीं दिनों घोर दुर्भिक्ष पड़ा । असंख्य लोग भूख से मरने लगे । वृद्धा ने अपना तीर्थ वाला धन राहत कार्यों में लगा दिया । परलोक में तीर्थयात्रा के पुण्य लाभों का लेखा-जोखा लिया गया, तो उनमें वृद्धा को सबसे ऊँचा गिना गया । देवदूतों ने संदेह व्यक्त किया कि उसने एक कदम भी तीर्थयात्रा के लिए नहीं रखा, फिर सर्वोच्च पद कैसे ? धर्मराज ने कहा–"जिस भावना की अभिव्यक्ति के लिए तीर्थयात्रा की जाती है, उसे वृद्धा ने

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पूरी तरह अपनाया । भले ही उसके पैरों ने दौड़-धूप या इन आँखों ने दर्शन-झाँकी न की हो ।

सब कुछ सौंप दिया

उन दिनों श्रद्धांजलि यज्ञ चल रहा था । धर्मचक्र प्रवर्तन की बढ़ी हुई आवश्यकता को अनुभव करते हुए, बुद्ध के सभी शिष्य अपने-अपने अनुदान प्रस्तुत कर रहे थे । जमा राशि का लेखा-जोखा लिया गया । किसका धन सबसे अधिक है, इसकी प्रशंसा सुनने के लिए सभी उत्सुक थे । बिंबसार की राशि सर्वाधिक थी । चर्चा-गोष्ठी में बुद्ध ने एक वृद्धा का सौंपा हुआ जल-पात्र हाथ में उठाया और कहा-यह इस वर्ष का सबसे बड़ा अनुदान है । वृद्धा के पास जो कुछ था, वह उसने सभी सौंप दिया और अब उसके पास तन के कपड़े और मिट्टी के पात्र ही शेष हैं, जबकि औरों ने अपनी संपदा के थोड़े-थोड़े अंश ही प्रस्तुत किए हैं ।

विराट् विश्व मेरा घर

राजा ज्ञानी गुरु की तलाश में थे । कोई उपयुक्त न मिला, तो खोज के लिए एक घोषणा की गई । राजा जमीन मुफ्त देंगे ही, सबसे जल्दी और सबसे बड़ा महल बनाकर दिखाने वाले को राजगुरु माना जाएगा । इस प्रलोभन में अनेक संत आए । जमीन ली । चंदा किया और महल बनाने में जुट गए । राजा रोज प्रगति देखने जाया करते । निर्माण कार्य तेजी से चल रहे थे । एक संत को उसने दी गई, जमीन पर यथास्थान प्रतिदिन बैठे रहते पाया । पूछा-"आप क्यों नहीं आश्रम बनाते ?" उनने उत्तर दिया-"यह विराट् विश्व मेरा ही घर है । इससे बड़ा और क्या बनाऊँ ? बनाने का उद्देश्य सँभालना-सजाना होता है, सो इस विश्व-वसुधा को ही सँभालने,-सजाने में लगा रहता हूँ । नया बनाकर क्या करूँ ?" राजा को तत्वज्ञान का मर्म समझ में आया । राजा ने उन्हीं को सच्चा पाया और राजगुरु का पद प्रदान किया ।

गरीबी से निर्वाह स्वीकार

जन-हितार्थाय स्वयं को नियोजित करने वाले जानते हैं, कि स्वयं कष्ट सहकर ही दूसरों के लिए कुछ किया जा सकना संभव है । लोकसेवियों के उदाहरण इस संदर्भ में लिए जा सकते हैं ।

लोकमान्य तिलक को अंग्रेज सरकार द्वारा १९०८ में गिरफ्तार किया गया था और उन्हें सजा सुनाकर एक स्पेशल डिब्बे से अहमदाबाद लाया जा रहा था । रास्ते में एक स्टेशन पर साथ आए हुए एक यूरोपीय पुलिस अफसर ने उन्हें पाव रोटी और पानी का गिलास लाकर दिया । लोकमान्य ने वे ले लिए और सहज भाव से रोटी खाने लगे । यह देखकर उस अफसर ने कहा-"मि० तिलक, आप जैसे विद्वान व्यक्ति को भी इस स्थिति में रहकर मात्र रोटी और पानी पर गुजारा करना पड़ रहा है । आखिर इसमें मजा क्या है ?" लोकमान्य ने शांतिपूर्वक उत्तर दिया-"मेरे करोड़ो देशबंधु ऐसे हैं, जिन्हें दो जून पेट भर खाने के लिए रोटी भी नसीब नहीं होती । इस हिसाब से मेरे लिए यह रोटी का टुकड़ा भी बहुत है । मैं उन्हीं के उपयुक्त आहार स्वयं लेकर ही तो उनके लिए कुछ कर सकने योग्य बना हूँ ।"

लोकसेवियों का स्वयं पर अंकुश

लोकसेवी जनता की अमानत को सार्वजनिक मानते हैं । इस संबंध में वे अपनों के लिए भी कड़े होते हैं । गांधी जी जब अफ्रीका से विदा होकर स्वदेश लौटने लगे, तो उन्हें वहाँ के निवासियों ने बहुमूल्य उपहार दिए । बा का मन उन्हें रख लेने का था । पर गांधी जी ने कड़क कर कहा-"यह देशसेवा का उपहार है । हमारे निजी परिश्रम मात्र का नहीं ।" वह सारा उपहार उन्होंने स्थानीय सेवा-संस्था को लौटा दिया ।

विंस्टन चर्चिल

इंग्लैंड के प्रधानमंत्री विंस्टन चर्चिल के प्राइवेट सेक्रेटरी डब्ल्यू टामसन ने अपने अनुभवों के संकलन में लिखा है-चर्चिल कभी सरकारी संपत्ति का उपयोग अपने निजी कामों के लिए नहीं करते थे । यहाँ तक कि सरकारी गाड़ी में अपने किसी रिश्तेदार को भी नहीं बैठने देते थे, ताकि अन्यों के लिए गलत उदाहरण न बने ।

लाला लाजपत राय

लाला जी अपने समय के माने हुए वकील और कांग्रेस के नेता थे । संध्या काल ताँगे में जरूरी काम से जाना था । कोचवान ताँगे की बत्ती जलाने लगा । असावधानी में जलाने के कारण माचिस की तीन तीलियाँ बुझ गईं । लालाजी ने कोचवान को डाँटा और कहा-"इतनी फिजूलखर्ची करते हो । पैसे की कीमत नहीं समझते । लाहौर में अनाथालय बन रहा था । कमेटी के सदस्य लालाजी से चंदा माँगने आए थे । दो कारणों से झिझक रहे थे । एक तो वे जाने की तैयारी में थे । दूसरे इतने किफायतसार कि तीन तीलियों को खर्चने भर का ध्यान रख रहे थे । पास खड़े लोगों से आने का कारण पूछा, तो उनने अनाथालय खुलने

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

और उसके लिए चंदा एकत्रित करने की बातें कह दीं । लालाजी ने दस हजार रुपयों का चेक काट दिया । माँगने वालों में से एक ने आश्चर्य व्यक्त किया–"आपकी तीन तीली जलने पर डाँटने की कंजूसी से हमें अचंभा हो रहा था कि आप कुछ दे पाएँगे या नहीं । पर आपने तो इतनी बड़ी राशि दे दी ।" लालाजी ने कहा–"ऐसी किफायतशारी स्वभाव में लाने पर ही इतना बचा पाया कि आपकी कुछ सेवा हो सकी ।"

दंड से कोई विमुख नहीं

जिस समाज में कुछ व्यक्ति सुख-साधनों में लिप्त हों व शेष को अभावग्रस्त जीवन जीना पड़े, उस समाज में परोक्षतः वे सभी दंड भोगने योग्य हैं, जिन्होंने औरों की उपेक्षा की व अपनी स्वार्थपूर्ति में लिप्त रहे ।

न्यूयार्क के प्रसिद्ध मेयर ला गार्डिया उन दिनों न्यायाधीश भी थे । उनकी कचहरी में एक ऐसा अपराधी पेश किया गया, जो रोटियाँ चुराने के अपराध में पकड़ा गया था । पूछने पर मुजरिम ने बताया कि परिवार के गुजारे का और कोई साधन न दीखने पर मैंने रोटी चुराने का उपाय अपनाया । कानून के अनुरूप न्यायाधीश ने मुजरिम पर दस डालर का जुर्माना किया, पर उस राशि के वसूल होने की कोई आशा न थी । इसलिए कचहरी में उपस्थित सभी लोगों पर पचास-पचास सेंट इस कारण जुर्माना किया कि वे अपने देश में फैली इतनी गरीबी के रहते हुए भी शौक की जिंदगी बसर करते हैं । इस प्रकार कुल ८ डालर इकट्ठे हुए, उनमें दो डालर अपनी ओर से मिलाते हुए ला गार्डिया ने फैसले में लिखा–"इस हद तक गरीबी बेकारी रहने से इस नगर का मेयर भी दंडित होना चाहिए ।

विवशता का एक आँसू

मुल्ला अब्बास बगदादी ने अपने शिष्यों को संबोधित कर पूछा–"आज तुम सब मुझे प्रलय के बारे में बताओ ।" एक ने कहा–"मेरी नजर में खुदा के प्रति इंसान का अक्षम्य अपराध ही प्रलय का कारण है ।" दूसरे ने कहा–"जब इंसान के जुल्म धरती नहीं झेल पाती, तो खुदा प्रलय से सब धोता है ।" तीसरे ने कहा–"नहीं मेरे मौला ! ये सब गलत है । मेरी नजर में तो कमजोर आदमी की लाचारी का एक आँसू ही सबसे बड़ी प्रलय है ।"

ईश्वर भी प्यारमग्न

ईश्वर की दृष्टि में सभी प्राणी-जीवधारी एक हैं । किन्तु जो गरीबों के आँसू पोंछते हैं, उस हेतु स्वयं को खपा देते हैं, वे सबसे अधिक प्यारे हैं ।

भीम भगवान से मिलने गए, तो मालूम पड़ा कि वे इस समय खाली नहीं, ध्यान मग्न हैं । भीम प्रतीक्षा में बैठे रहे । जब उठे तो आश्चर्य से पूछा–"संसार आपका ध्यान करता है । आप किसका ध्यान करते हैं ?" भगवान ने कहा–"जो मेरे निर्देशों का ध्यान रखते हैं, सारी विश्व-वसुधा को अपना समझते हैं, उनके योगक्षेम का ध्यान मुझे रखना पड़ता है ।"

गतिशीलसमाजानां रचना घटनं तथा ।
परिवारे विशाले च भवतोऽत्रानुशासनम् ॥ ३५॥
नियमाश्च विधीयन्ते तदाश्रित्य नरैः सदा ।
वितरणस्य रक्षायाः क्रमोऽनेन चलत्यलम् ॥ ३६॥
सिद्धान्तमिमाश्रित्य तथा राष्ट्रमपीदृशः ।
व्यवस्था प्रमुखो नूनं समाजो विद्यते स्वतः ॥ ३७॥
दत्त्वा विश्वकुटुम्बस्य मान्यतामग्रिमेषु च ।
दिनेषु नियमाः सर्वे तथा निर्धारणानि च ॥ ३८॥
निर्मेयानि समानश्च सोऽधिकारो नृणामिह ।
वसुमत्यां तथाऽस्याश्च खनिजेषु समेष्वपि ॥ ३९॥
क्षेत्रजासु च सीमासु संकोचमधिगत्य यः ।
क्रमो विश्वविभूतेस्तु केषांचिद्धि नृणां कृते ॥ ४०॥
बाहुल्येत्वेन केषांचित् स्वल्पत्वेन च साम्प्रतम् ।
चलत्येष भवेन्नायमागामिदिवसेषु तु ॥ ४१॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

संयुक्ता सम्पदाऽत्राऽस्ति कुटुम्ब उपयुञ्जते ।
यां समेऽप्यनिवार्याणां व्ययानां च प्रसंगतः ॥ ४२॥
नहि कश्चिद् विशेषं स्वमधिकारं वदत्यथ ।
वञ्चितो नहि कश्चिच्च जायते चाऽधिकारतः ॥ ४३॥

भावार्थ–प्रगतिशील समाजों की संरचना और संगठन विशाल परिवार के रूप में होता है । उसी आधार पर नियम–अनुशासन बनते हैं । वितरण और संरक्षण का क्रम भी इसी सिद्धांत को ध्यान में रखते हुए चलता है । राष्ट्र भी व्यवस्था प्रधान समाज ही है । विश्व परिवार की मान्यता अपना कर ही अगले दिनों नवयुग के समस्त नियम–निर्धारण बनेंगे । धरातल और उसकी खनिज संपदा पर मानव समाज के समस्त सदस्यों का समान अधिकार होगा । क्षेत्रीय सीमाओं में बँधकर विश्व संपदा को किन्हीं के लिए बहुत और किन्हीं के लिए नगण्य होने का जो क्रम इन दिनों चल रहा है वह अगले दिनों न रहेगा । परिवार में संयुक्त संपदा होती है और उसका उपयोग सभी अपनी आवश्यकताओं के अनुरूप कर सकते हैं । न कोई विशेष अधिकार जताता है और न किसी को वंचित रहना पड़ता है ॥ ३५–४३॥

व्याख्या–यहाँ आध्यात्मिक साम्यवाद की रूपरेखा स्पष्ट करते हुए ऋषि कहते हैं कि सभी का हित इसमें है कि सब मिल-जुलकर एक विशाल कुटुम्ब के परिजन के रूप में विकसित हों । परिवार राष्ट्र की एक छोटी इकाई है । ऋषि सत्ता का यह संकल्प है कि पारस्परिक मतभेद विग्रह मिटें एवं सारे विश्व में एक कौटुंबिक भावना का विकास हो । जो भी कुछ उपार्जन है, सबका मिलकर है, वह किसी एक की संपदा नहीं, यह स्पष्ट जान लेना चाहिए । विश्व परिवार में उपभोग हेतु सभी स्वतंत्र हैं । जैसे कि किसी परिवार में सभी सदस्य अपनी-अपनी सीमा-मर्यादा में रहकर जिम्मेदारी भी निभाते हैं एवं उपार्जन का आनंद भी लेते हैं, उसी प्रकार वृहत्तर परिवार के रूप में, कम्यून के रूप में संस्थाएँ विकसित होनी चाहिए । इसी में विश्व मानवता का कल्याण है । इसके लिए अंतः की सदाशयता तो विकसित करनी ही होगी परस्पर एक दूसरे के चिंतन में संगति बिठाते हुए अपने व्यवहार को भी लचीला बनाना होगा । सारे पूर्वाग्रह, दुराग्रह मिटाकर अपने चिंतन के दायरे को विस्तृत करना होगा, ताकि विश्व परिवार की परिकल्पना साकार रूप ले सके ।

इस समन्वयवाद का मूल वेदों में स्पष्ट रूप से मिलता है । ईशोपनिषद् के प्रथम मंत्र में ही मानव जीवन की सफलता, सार्थकता का जो मार्ग बतलाया गया है इसमें समन्वय का सार आ गया है । ऋषि कहते हैं–

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत् । तेन त्यक्तेन भुञीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम् ॥

अर्थात्–"इस विश्व में जो कुछ भी दिखाई पड़ता है, वह सब ईश्वर से व्याप्त है, इसलिए उसका उपयोग त्यागपूर्वक करो, धन किसी एक का नहीं हो सकता ।"

शास्त्रों में स्पष्ट कहा गया है कि यह समस्त संसार भगवान का है, किसी एक व्यक्ति का नहीं, अतः इसकी वस्तुओं पर अनुचित रीति से अधिकार न जमाकर उसे समाज हित में सदुपयोग किया जाय । समाज के हित में ही अपना हित समझा जाना चाहिए । सामूहिकता की भावना को विकसित करके ही समष्टि में, विश्व विराट् में विस्तार पाना सुनिश्चित है ।

सफल बृहत्तर कुटुंब पद्धति

इजराइल, चीन, क्यूबा एवं यूगोस्लाविया में कम्यून जीवित हैं । ये कम्यून विभिन्न वर्गों के व्यक्तियों के समूह का नाम है, जो एक उद्देश्य के लिए समर्पित होकर, एक जुट होकर कार्य करते हैं । जो जैसा श्रम करता है, उसी अनुपात में उसे मिलता है । खेती, उद्योग आदि के क्षेत्र में ये कम्यून बड़े सफल सिद्ध हुए हैं । एक प्रकार से ये एक प्रकार के वृहद् कुटुम्ब के समान हैं, जिसमें सबको विचार स्वातंत्र्य की तो छूट होती है, किन्तु करते सब वही हैं, जो पूरे समूह को स्वीकार होता है । एक प्रकार से इन्हें विश्व परिवार का एक लघु संस्करण वृहत् परिवार–लार्जर फैमिली कहा जा सकता है ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

विश्व वसुधा के नागरिक कवीन्द्र रवीन्द्र

कलकत्ता में जन्में रवीन्द्र नाथ टैगोर को लोग मात्र कवि समझते हैं । वे वैसे कवि न थे, जो तुकबंदी करके कवि सम्मेलनों में जाते, फीस वसूलते और विदूषक की भूमिका निभाते हैं । उनका कवि हृदय ऐसी करुणा से भरा-पूरा था, जो ढेर सारी धरती की, मानव जाति के दुख-दर्द को अपना बना लेता है । जिस विद्यालय में वे पढ़ने भेजे गए, वहाँ का वातावरण तथा अध्यापकों का व्यवहार अच्छा न था । अतएव उनने स्कूल छोड़ दिया और घर पर ही पढ़े । छात्रों के लिए उन्होंने किशोरावस्था में ही एक 'भारती' नामक पत्रिका निकाली । 'चिर किशोर' सभा का गठन किया जिसमें उनके सदस्यों को आजीवन तरुण बना रहना सिखाया जाता था । उनकी कविताओं में मनुष्य की उच्चस्तरीय गरिमा का दिग्दर्शन होता था । गीतांजलि काव्य पुस्तक पर उन्हें नोबुल पुरस्कार मिला । इंग्लैंड सरकार ने उन्हें 'सर' की उपाधि दी । उनने यूनान, मिस्र, आस्ट्रेलिया, रूमानिया, इटली, जापान, स्वीडन, कनाडा, रूस, अमेरिका आदि देशों में भारत की स्थिति एवं सांस्कृति गौरव से अवगत कराने के लिए भ्रमण किया । संसार के कितने ही विश्वविद्यालयों ने उन्हें डाक्टरेट की उपाधि देकर सम्मानित किया । उनके उपन्यास तथा लेख संग्रह ऐसे हैं, जिनकी प्रत्येक पंक्ति में मानवी गरिमा बोलती है । उनने एक अशिक्षित और ग्रामीण लड़की से विवाह किया और अपने सद्व्यवहार से उसे सच्चे अर्थों में विदुषी एवं सहधर्मिणी बनाकर दिखाया । अपनी सारी संपत्ति बेचकर बोलपुर में शांतिनिकेतन की स्थापना की । उसकी शिक्षा प्रणाली गुरुकुल स्तर की थी । जिसमें सारे विश्व के नागरिक विद्यार्थी थे । जवाहर लाल नेहरू कहते थे-"जिनने शांति निकेतन नहीं देखा-समझना चाहिए कि उनने हिंदुस्तान ही नहीं देखा ।"

अपना कोई कुटुंब नहीं

ईसा के परिवार वाले उनसे मिलने गए । वे सत्संग-परामर्श में तल्लीन थे । लोगों ने कहा-"घर वालों की ओर ध्यान देंगे क्या ?" ईसा ने कहा-"संसार में मेरा अपना-पराया कोई कुटुंब नहीं है । समस्त संसार को ही मैं अपना परिवार मानता हूँ और अपना हर काम उस विश्व कुटुंब को ध्यान में रखकर करता हूँ । यही आदर्श तुम सब भी अपनाओ ।"

स्टालिन भी रो पड़ा

पिता पौरोहित्य कृत्य से आजीविका चलाते थे, पर राधाकृष्णन अपनी ज्ञान-पिपासा के बल पर विद्या का असीम भंडार अपने में भरते रहे । भारत में वे कई विश्वविद्यालयों के प्राध्यापक रहे । अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने उन्हें अपने यहाँ ससम्मान बुलाया । भारत के द्वितीय राष्ट्रपति बनने के पूर्व वे रूस में भारत के राजदूत रहे । विदाई के समय उन्होंने स्टालिन की पीठ पर हाथ फेरा, तो उसके जैसा कठोर हृदय का व्यक्ति भी रो पड़ा । उन्होंने जीवन भर प्यार ही प्यार बाँटा । यही कारण था कि सबको वे अपने लगते थे । दर्शन तथा ज्ञान का भंडार होने के साथ-साथ जैसा सहृदय राधाकृष्णन को देखा गया, उसकी उपमा अन्यत्र मिलनी कठिन है ।

काम न रुके

जहाँ हृदय विशाल हो, वहाँ अपना स्वार्थ क्षुद्र दिखाई पड़ता है । सारा परिवार, सारा समुदाय अपना ही परिवार प्रतीत होता है ।

मिलान के आर्क विशाप पोप पाल उन दिनों कार्डिनल में आर्थिक तंगी का जीवन जी रहे थे । उन्हीं दिनों अकाल की भी स्थिति थी । एक दिन एक समाज सेवी व्यक्ति उनके पास पहुँचे और बोले-"अभी भी बहुत लोगों तक खाद्य सामग्री पहुँच नहीं पाई, जबकि कोष में एक भी पैसा नहीं बचा ।" पोप पाल ने कहा-"कोष रिक्त हो गया-ऐसा मत कहो, अभी मेरे पास बहुत-सा फर्नीचर, सामान पड़ा है, इसे बेचकर काम चलाओ । कल की कल देखेंगे ।" आज का काम भी रुका नहीं, कल आने तक उनकी यह परदुखकातरता दूसरे श्रीमंतों को खींच लाई और सहायता कार्य फिर द्रुतगति से चल पड़ा ।

जा, तू भी ऐसा ही कर

विशाल परिवार-विश्व परिवार का अर्थ है-वसुधा के हर घटक, हर व्यक्ति को अपना ही मानना । एक आदमी येरुशलम से जेरीको को जा रहा था । डाकूओं ने उसे घेर कर उसके कपड़े उतार लिए । उसे मार-पीटकर अधमरा करके छोड़ गए । एक पादरी वहाँ से निकला । वह उसे देखकर कतराकर चला गया । एक समाज सेवी भी उधर से निकला । वह भी उसे देखकर कतराकर चला गया । तब आया एक घुड़सवार । उसने उस घायल को देखा, तो उसे उस पर तरस आया । उसने उसके घावों पर तेल लगाया । दाख का रस डालकर पट्टी बाँधी । उसे अपनी सवारी पर चढ़ाकर सराय में ले गया और उसने उसकी सेवा टहल की । दूसरे दिन उसने दो चाँदी के सिक्के निकाल कर भटियारे को दिए और कहा-"इसकी ठीक ढंग से सेवा-टहल करना ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जो तेरा और लगेगा, वह मैं लौटने पर तुझे भर दूँगा ।'' ''बता इन तीनों में से उस घायल का पड़ोसी कौन ठहरा ?'' ईसा ने पूछा । वह बोला–''वही, जिसने उस पर दया दिखाई ।'' ईसा ने कहा–''जा, तू भी ऐसा ही कर ।''

बापू का विशाल पेट

आदर्श लोकसेवी अपनी उदरपूर्ति की नहीं, सारी मानव जाति के हित की सोचते हैं । गांधी जी प्रवास पर थे । बिहार के सोनपुर में विश्राम किया । एक संपन्न सेठ की पत्नी थोड़ से रुपये थाली में रखकर भेंट के लिए लाई । गांधी जी ने कहा–''बस, इतने ही ।'' सेठ जी ने व्यंग्य करते हुए कहा–''आपको तो इतनी जगहों से इतना-इतना मिलता है, तो भी पेट नहीं भरता ?'' बापू ने हँसते हुए कहा–''मेरे पेट में समूचे देश का पेट समाया हुआ है । वह इतना छोटा थोड़े ही है, जो थोड़े से रुपये से ही भर जाय ।''

कम में तृप्ति कैसे ?

यदि एक दूसरे का विचार करने लगें, तो अभाव कहीं भी न रहे । उस दिन ईसा शिष्य मंडली समेत किसी प्रचार यात्रा पर जा रहे थे । रात्रि हो गई । भोजन का सुयोग न बना । ईसा ने कहा–''तुम सबके पास जो है, इकट्ठा कर लो और उसी से मिल-बाँट कर काम चलाओ ।'' पाँच रोटी इकट्ठी हुईं । मिल-बाँटकर खाई गईं । हिस्से में आधी-आधी भी न आई, तो भी सबका पेट भर गया । सोलोमन ने पूछा–''महाप्रभु, यह कैसा आश्चर्य ? इतने कम से इतनी तृप्ति कैसे ?'' ईसा ने कहा–''यह मिल-बाँटकर खाने का चमत्कार है ।'' यही ईश्वर का निर्देश भी है कि सारी विश्व वसुधा के नागरिकों में विश्व के सारे साधन समान रूप में बांटे जाँय ।

सभी अपने

कुछ अमेरिकन यात्री जापानियों के तीर्थ फ्यूजी यामा देखने जा रहे थे । देखा तो पीछे से स्कूली बच्चों की एक बस भी आ गई । और भी कई यात्री उस रास्ते चल रहे थे । बस में सामान खुला छोड़कर यात्री आगे बढ़े, तो अमेरिकनों ने पूछा–''रखा हुआ सामान कोई उठा ले जाय तो ?'' सुनने वाले हँस पड़े । जापान में अभी चोरी का रिवाज चला नहीं है । सब अपने ही तो हैं । अपनों का सामान भी भला कोई चुराता है । जापानियों की विश्व परिवार की भावना-चरित्रनिष्ठा एवं पारस्परिक सद्भाव देखकर अमेरिकन यात्री दंग रह गए ।

सहजीवन व सहानुभूति

एक खेत में कुछ मजदूर निराई-गुड़ाई का काम कर रहे थे । एक घंटा काम करने के बाद वे सब बैठकर सुस्ताने और गप हाँकने लगे । खेत के मालिक ने उनसे कहा कुछ नहीं, खुद खुरपी लेकर काम करने लगा । मजदूरों ने स्वामी को काम करते देखा, तो शरमा गए और दौड़कर काम में जुट गए । दोपहर हुआ । स्वामी मजदूरों के पास गया और बोला–''भाइयो, काम बंद कर दो और खाना खा लो-आराम कर लो ।'' मजदूर खाना खाने चले गए और शीघ्र ही थोड़ा आराम करने के बाद फिर काम पर आकर डट गए । शाम को छुट्टी के समय पड़ोसी खेत वाले ने देखा कि उसका काम उससे दो गुना हुआ है । वह बोला–''भाई ! तुम मजदूरों को छुट्टी भी देते हो और डाटते-फटकारते भी नहीं, तब भी तुम्हारा काम मुझ से ज्यादा होता है, जबकि मैं मजदूरों को छुट्टी नहीं देता और हर समय डाटता-फटकारता रहता हूँ ।'' साधु स्वामी बोला–''भाइयो ! काम लेने की नीति में, मैं सभी से अधिक स्नेह एवं सहानुभूति को पहला स्थान देता हूँ । दूसरे मैं स्वयं उनके काम-काजों में जुटता हूँ । इसीलिए मजदूर पूरा जी लगाकर काम करते हैं, इससे काम ज्यादा भी होता है और अच्छा भी । यह अनुशासन थोपने की नहीं, सहजीवन-सहकार की ही चमत्कारी परिणति है ।''

गरीबों के नाम वसीयत

आस्ट्रेलिया का फ्रैंक बूटे आरंभ में बहुत गरीब था, पर व्यवसाय से धीरे-धीरे अमीर तो हो गया किन्तु बीमारी ने उसका पीछा न छोड़ा । लगता था कभी भी उसकी मृत्यु हो सकती है । एक दिन दिल का दौरा पड़ने से ५३ वर्ष की आयु में सचमुच ही उनकी मृत्यु हो गई । मरते समय उनने अपनी सारी संपत्ति की वसीयत मजदूरों के बच्चों के नाम कर दी । जो अपने बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाने योग्य वेतन न पाते थे, उन्हें इस पूँजी से वह लाभ मिले-ऐसी वसीयत लिखी गई । अपने बच्चों के लिए भी उनने इतना ही छोड़ा, जिससे वे उच्च शिक्षा प्राप्त करने के उपरांत हाथ-पैर की मजदूरी करके गुजारा कर सकें । कानून से बाप की कमाई बेटे को मिलती है, पर उनने अपनी करोड़ों की कमाई मजदूरों के सभी बच्चों को अपना मानकर उनके नाम वसीयत कर दी ।

मुक्ति सेना

लोक सेवा के लिए संगठित रूप से नवयुवकों को लगाया जाय । यह विचार जनरल बूच के मन में आया । चर्च से संबंधित अनेक लोगों को उनने ईश्वर भक्ति का सच्चा तरीका लोक सेवा मानने के

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

लिए धर्म परायण लोगों को तैयार किया । इस संगठन का नाम उन्होंने 'मुक्ति सेना' रखा । जब उसके उद्देश्य और कार्यक्रम लोगों ने देखे, तो असंख्य लोग प्रभावित हुए और उस संगठन की पत्रिका का प्रकाशन ५९ भाषाओं में होने लगा । घर-घर जाने और समझाने का कार्यक्रम और भी अधिक लोकप्रिय हुआ । एक व्यक्ति द्वारा आरंभ हुआ यह कार्य आज संसार के अधिकांश देशों में फैल गया है ।

अनाथों का अभिभावक

आस्ट्रिया का एक छात्र डाक्टरी पढ़ रहा था । नाम था उसका-पैस्टोला । उसे रास्ते चलते एक बच्चा मिला । उसके अभिभावक को ढूँढ़ने, पुलिस में सूचना देने के उपरांत उसे अनाथालय भेज दिया था । पैस्टोला को एक दिन के साथ से ही उस बच्चे से मुहब्बत हो गई । वह जब-तब उसे देखने जाया करता । कुछ उपहार भी ले जाता । पैस्टोला ने गंभीर दृष्टि से देखा कि अनाथालय में निर्वाह और शिक्षा व्यवस्था तो है, पर कर्मचारियों के पास प्यार नाम की कोई वस्तु नहीं, जिसे पाकर बच्चों का अंत:करण खिलता हो । पैस्टोला ने पढ़ाई समाप्त करते ही यह आंदोलन चलाया कि जिनकी छोटी गृहस्थी है, वे अनाथ बच्चों को अपने परिवार में सम्मिलित कर लें और उसी लाड़-चाव से पालें । खोजने पर ऐसे उदार व्यक्ति भी मिल गए और असहाय बच्चे भी । आत्मीयता के वातावरण में बच्चों का मन विकसित होने लगा ।

पैस्टोला ने विवाह नहीं किया । अनाथ बच्चों को अपना बेटा माना । परित्यक्ताएँ, वृद्धाएँ उनकी बहन और माँ की तरह उसी घर में रहने लगीं । अपनी निज की आमदनी वह इसी कार्य में लगा देता । उसकी देखा-देखी अनेक उदार मन वाले लोगों ने अपने परिवारों में निराश्रितों को सम्मिलित किया । पैस्टोला का आंदोलन दूर-दूर तक फैला । उन्हें नोबुल पुरस्कार मिला । यह राशि भी उनने इसी प्रयोजन में लगा दी ।

परिवारे समर्थाश्चाऽसमर्थाः सर्व एव हि ।
यथाशक्ति श्रमं कृत्वा लाभं यान्ति यथेप्सितम् ॥ ४४॥
भवत्येष कुटुम्बस्य स्तरश्च समतां गतः ।
भेदः सम्पन्नतायाः स दारिद्र्यस्याऽपि नास्ति च ॥ ४५॥
संयुक्ताऽस्ति समेषां च सम्पत्तिः समये तथा ।
विशेषे पूर्यते वाञ्छाऽनिवार्या तत एव च ॥ ४६॥
निर्वाहः स च सामान्यः सर्वेषां भवतीह च ।
आगामिषु दिनेष्वेतत् भवेत् प्रचलनं सदा ॥ ४७॥
सम्पदा स्यात् समाजस्य समैर्नागरिकैः स्तरः ।
समान एव स्वीकार्यो निर्वाहस्य भविष्यति ॥ ४८॥
न कश्चिद् धनवान्नैव निर्धनो वा भविष्यति ।
धरित्र्याश्च सुताः सर्वे महतो मनुजन्मनाम् ॥ ४९॥
कुटुम्बस्य सदस्यत्वगताः प्राप्स्यन्ति निश्चतम् ।
साधनानि समानानि सम्मानं सममेव च ॥ ५०॥

भावार्थ-परिवार में सभी समर्थ-असमर्थ अपनी क्षमता के अनुरूप श्रम करते और आवश्यकता के अनुरूप लाभ लेते हैं । पूरे परिवार का स्तर एक जैसा होता है । इनमें किसी में भी दरिद्र या संपन्न होने जैसा भेदभाव नहीं देखा जाता । संपत्ति सबकी संयुक्त होती है । विशेष अवसरों पर उसी संचय में से सबकी विशेष आवश्यकताएँ भी पूरी होती रहती हैं । सामान्य निर्वाह तो सबका एक जैसा होता है । अगले दिनों यही प्रयत्न चलेगा । संपदा समाज की होगी । सभी को औसत नागरिक स्तर का निर्वाह अपनाना पड़ेगा । न कोई धनी बन सकेगा और न निर्धन रहेगा । धरती माता के सभी पुत्र एक विशाल मानव परिवार के सदस्य बनकर एक समान सम्मान, एक समान साधन उपलब्ध करेंगे ॥ ४४-५० ॥

व्याख्या-वृहत् परिवार में असमानता नहीं होनी चाहिए । किसी को अधिक सुविधा मिले, किसी को कम, यह नीति हर दृष्टि से असंतोष-विग्रह पैदा करती है । इसीलिए परिवार संस्था में सभी को

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकतानुसार समान रूप से साधन उपलब्ध रहते हैं । विशेष रूप से यह तैयारी मानसिक धरातल पर एवं अंतःकरण के स्तर पर अभी से ही हो जाना चाहिए । हर व्यक्ति एक दूसरे के प्रति अधिक से अधिक उदार हो, अपने प्रति कठोर हो एवं सादगी अपनाता हो, तो वह परिवार संस्था आदर्श रूप में विकसित होती है । आने वाले समय को दृष्टि में रखते हुए यह प्रचलन अभ्यास रूप में अभी से लाया जाना अनिवार्य हो गया है । इसी में सबकी भलाई है ।

उदार हृदय की कामना

महाराज रंतिदेव की प्रचंड तपश्चर्या से जब इंद्रासन डोल उठा, तो प्रजापति को उनके सामने प्रकट हो वरदान देने के लिए बाध्य होना पड़ा । उन्होंने कहा–"तुम्हारी तपश्चर्या से मैं अत्यधिक प्रसन्न हूँ । चाहो जो वरदान माँग लो ।" महाराज बोले–"देवराज ! मैं चाहता हूँ, मेरे राज्य में ही नहीं, समस्त पृथ्वी पर कोई भूखा न रहे, कोई पीड़ित-शोषित, धनहीन न रहे । पृथ्वी हिरण्यगर्भा हो । जन-जन के मन में बैर, द्वेष, कलह व दुर्भावनाओं का नाम निशान न रहे । पारस्परिक आत्मीयता व सौहार्द्र बढ़े । कोई रोगी न हो, दुखी न हो यह मेरा कर्तव्य है और मुझे इस कर्तव्य के पालन की शक्ति दीजिए ।"

यही आदर्श न केवल राष्ट्र प्रमुख का अपितु हर नागरिक का होना चाहिए । सभी एक ही माँ के पुत्र जो हैं ।

सहायता का ऋणी न बनें

बेंजामिन फ्रेंकलिन ने एक अखबार निकाला और उसके कारण आर्थिक कठिनाई में पड़कर उसने अपने एक मित्र से बीस डालर लिए । जब उसकी स्थिति ठीक हो गई, तो वह मित्र को वह रकम लौटाने गया । मित्र ने कहा–"वह रकम तो मैंने आपको सहायता में दी थी ।" फ्रेंकलिन ने कहा–"सो ठीक है, पर जब मैं लौटाने की स्थिति में हूँ, तो आपकी सहायता का ऋणी क्यों बनूँ ?" झगड़े का अंत इस प्रकार हुआ । मित्र ने वह रुपये फ्रेंकलिन के पास इस उद्देश्य से जमा किए कि कोई जरूरतमंद उधार माँगे, तब इसे उसी शर्त पर दे दें कि वह भी स्थिति ठीक होने पर उन रुपयों को अपने पास जमा रखेगा और फिर किसी जरूरतमंद को इसी प्रकार, इसी शर्त पर दे देगा । कहते हैं कि अमेरिका में वे २० डालर आज भी किसी न किसी जरूरतमंद के पास इसी उद्देश्य से घूम रहे हैं । आवश्यकता के समय दूसरों से सहायता ली जा सकती है, पर यह ध्यान रखना चाहिए कि समय होते ही वह सहायता किसी अन्य जरूरतमंद को लौटा दी जाय । सहायता के साथ जो दान वृत्ति जुड़ी हुई है, वह दुहरा कर्ज है । उसका चुकाना एक विशिष्ट नैतिक कर्तव्य है ।

लोकसेवी का कर्तव्य

साधन-संपदा सभी के लिए एक समान है, न कोई छोटा है, न बड़ा ।

समय के पाबंद और घड़ी की सुई के साथ चलने वाले स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री तब रेल मंत्री थे । वे सरदार नगर में हो रहे एक सम्मेलन में जा रहे थे । मार्ग में एक गाँव पड़ता था । उस गाँव से जब वे गुजर रहे थे, तो कुछ ग्रामीणों ने उनकी कार रोक ली । पूछा गया कि 'क्या बात है ?' तो ग्रामीणों ने कहा कि एक गरीब किसान की औरत की प्रसूति का समय निकट है । कोई वाहन मिल नहीं रहा है और उसे पास के शहर भिजवाना है । यदि आप इस गाड़ी में उसे ले जाने दें तो अच्छा है । "नहीं यह गाड़ी एक सरकारी काम से सरदार नगर जा रही है"–शास्त्री जी के ही किसी सहयात्री ने तत्काल उत्तर दिया । तो ग्रामीण ने अनुनय करते हुए कहा–"जी उसे भी सरदान नगर ही ले जाना है ।"

बात को अनसुनी करते हुए सहयात्री अधिकारियों ने गाड़ी चलाने को कहा, लेकिन शास्त्री जी तुरंत ही गाड़ी से नीचे उतर पड़े और बोले–"ले आओ उस बहन को । अपनी गाड़ी से बहन को समीपस्थ शहर पहुँचा दूँगा । इस पर उनके साथी ने कहा–"श्रीमान् देर होती जा रही है और आप अभी यहीं खड़े हैं । वे लोग घंटे भर से पहले नहीं आएँगे ।" "न आने दो । पर सम्मेलन से ज्यादा महत्वपूर्ण है यह बहन । हम एक जनसेवक कहलाते हुए भी ऐसे नाजुक मौकों पर मुकर जाएँ तो इससे बड़ी आत्म प्रवंचना और क्या होगी"–शास्त्री जी ने कहा और उस स्त्री को सरदार नगर पहुँचा कर ही माने ।

नवाब साहब का स्नान

उस समय संयुक्त प्रांत के राज्यपाल सर हारकोर्ट बटलर थे । जो आराम-पसंदी के कारण नवाब साहब के नाम से जाने जाते थे । वह आवश्यकता पड़ने पर राजधानी लखनऊ से प्रयाग भी आते और राजभवन में ठहरते । उनके स्नान के लिए एक बड़े कुंड की व्यवस्था थी, जिसमें पानी भरा रहता था । उन दिनों प्रयाग में पानी की बहुत कमी थी । नलों में बहुत थोड़े समय के लिए पानी आता था ।

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

जब पीने के लिए पानी मिलना कठिन हो रहा था उस समय राजभवन के कुंड के लिए पानी कहाँ से मिलता राज्यपाल के अंगरक्षक दौड़े-दौड़े नगरपालिका अध्यक्ष के घर गए ।

उस समय अध्यक्ष पद पर टंडन जी कार्यरत थे । वह जान्सटनगंज के एक छोटे से मकान में रहते थे । अंगरक्षकों ने टंडनजी के घर जाकर देखा कि वे जमीन पर टाट बिछाए काम कर रहे हैं, चारों ओर कागज फैले हुए हैं । अस्त्र-शस्त्रों से सज्जित उन अंगरक्षकों को भी वहीं जमीन पर बैठकर अपनी बात कहनी पड़ी । फर्नीचर की व्यवस्था उनके उस छोटे मकान में थी नहीं । अध्यक्ष महोदय ने उनकी बात बड़ी गंभीरता से सुनी और यह जानते हुए भी जिस व्यक्ति के संबंध में निर्णय दिया जा रहा है उसकी नाराजी कुछ से कुछ कर सकती है, बिना डरे उन्होंने उत्तर दिया, जब मैं नगरवासियों के पीने के लिए पर्याप्त जल की व्यवस्था नहीं कर पा रहा हूँ तब फिर नवाब साहब के नहाने के लिए व्यवस्था कहाँ से करूँ ? व्यवस्था होगी तो सबके लिए समान रूप से होगी । मेरे लिए सभी नागरिक समान हैं ।

श्रमिक स्त्रियों के प्रति उदारता

राष्ट्र प्रमुख को कैसा होना चाहिए, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह घटना है-लाल बहादुर शास्त्री तब केन्द्रीय गृहमंत्री थे । उनके निवास स्थान का एक दरवाजा जनपथ की ओर था । दूसरा अकबर मार्ग की ओर था । एक बार दो श्रमिक स्त्रियाँ सिर पर घास का गट्ठर रखकर उस मार्ग से निकलीं, तो चौकीदार ने उन्हें धमकाना शुरू किया । उस समय शास्त्री जी अपने बरामदे में बैठे कुछ शासकीय कार्य कर रहे थे । उन्होंने सुना, तो बाहर आ गए और पूछने लगे, क्या बात है ? चौकीदार ने सारी बातें बता दीं । शास्त्री जी ने कहा-"क्या तुम देख नहीं रहे हो कि उनके सिर पर कितना बोझ है । यदि यह निकट के मार्ग से जाना चाहती है, तो तुम्हें क्या आपत्ति ? जाने क्यों नहीं देते ?" जहाँ सहृदयता हो, दूसरों के प्रति सम्मान भाव हों, वहाँ सारी औपचारिकताएँ एक तरफ रखकर वही करना चाहिए, जो कर्तव्य की परिधि में आता है ।

सारी राशि धर्म प्रचार हेतु

श्रीलंका-कोलम्बो के एक धर्म प्रचारक का नाम है-धर्मपाल । एनीवेसेंट के प्रभाव से वे थियोसोफिस्ट बने । पीछे वे बौद्ध समाज में चरित्र निष्ठा और जन कल्याण के कितने ही काम करने लगे । इसके लिए उन्होंने कितनी ही समितियाँ बनाईं, जिनने अपने समय में बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया । धर्मपाल की व्यक्तिगत पूँजी तीन लाख की थी । वह सारा पैसा धर्म प्रचार के निमित्त देकर स्वयं पूरी तरह अपरिग्रही संत हो गए । उन दिनों श्रीलंका में भयंकर अकाल पड़ा था । धर्मपाल जी अमेरिका गए । उनकी प्रतिभा से प्रभावित होकर वहाँ के निवासियों ने उन्हें आठ लाख रुपये दिए । जो उन्होंने तत्काल आकल पीड़ितों के लिए हस्तांतरित कर दिया । धर्मपाल जी ने अपने नाम के साथ कोई संस्था नहीं जोड़ी, न अपने किसी काम के लिए उनने देश-विदेश में कोई धन संग्रह किया ।

लघूनां परिवाराणां भाषा संस्कृतिरेव च ।
भवत्येकैव विश्वे च भाषाऽऽगामि दिनेषु तु ॥ ५१ ॥
प्रयुक्तास्यादि हैकस्या मानव्याः संस्कृतेरथ ।
अनुरूपं चिन्तनं स्याद् भवेच्च चरितं तथा ॥ ५२ ॥
एक एव च धर्मः स्याद् विश्वे च सकलेऽपि ते ।
नियमास्तु समानाः स्युर्मानवेषु समेष्वपि ॥ ५३ ॥
निर्विशेषं च ये तत्र प्रभविष्यन्ति पूर्णतः ।
अनुशासनमप्येवं निर्विशेषं भविष्यति ॥ ५४ ॥
अवसरस्तत्र भेदानां कृते नैव भविष्यति ।
यमाश्रित्य समर्थानां हस्तगाः सुविधाः समाः ॥ ५५ ॥
भवेयुस्तेऽसमर्थाश्च दुर्भाग्याय तथाऽऽत्मनः ।
दुह्यन्तु रोगशोकार्ति पीड़िताः सन्तु जीवने ॥ ५६ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

क्षेत्राणां च निजानां वा वर्गाणां च कृतेऽधुना ।
सन्ति प्रचलनान्यत्र निर्मीयन्तेऽपि यानि च ॥ ५७॥
संसारपरिवारे च निर्मिते स्युर्न ते क्वचित् ।
व्यवस्था वाऽथ मर्यादा स्यातामत्र विनिर्मितिः ॥ ५८॥
उभे भुवः क्वचित्कोणे वसत्सु नृषु पूर्णतः ।
वंशजात्यादि भेदाच्च रहिते प्रभविष्यति ॥ ५९॥
तत्र वर्गविशेषस्य हितानां न भविष्यति ।
ध्यानं विश्वव्यवस्थायाः सौविध्यस्यैव केवलम् ॥ ६०॥

भावार्थ–छोटे परिवार की भाषा एवं संस्कृति एक होती है । अगले दिनों विश्व भर में एक भाषा बोली जाएगी । एक मानव संस्कृति के अनुरूप सभी का चिंतन और चरित्र ढलेगा । एक धर्म पलेगा । समस्त संसार पर, मनुष्य मात्र पर लागू होने वाले एक जैसे नियम–अनुशासन बनेंगे । ऐसे भेद–भावों की कोई गुंजायश न रहेगी, जिनकी आड़ में समर्थों के हाथ में विपुल सुविधा रहे और असमर्थ दुर्भाग्य को कोसते रहें तथा जीवन भर रोग–शोक दुख से पीड़ित रहें । अपने–अपने क्षेत्रों और वर्गों की सुविधा के लिए इन दिनों जो प्रचलन बनते और चलते हैं, वे विश्व परिवार बनने पर कहीं भी दृष्टिगोचर न होंगे । जो भी व्यवस्था या मर्यादा बनेगी वह धरती के किसी भी कोने में रहने वाले किसी भी जाति–वंश एवं लिंग के व्यक्ति के ऊपर समान रूप से लागू होगी । उसमें विशेष वर्गों के विशेष हितों का नहीं, विश्व–व्यवस्था और सर्वजनीन सुविधा का ध्यान रहेगा ॥ ५१–६०॥

व्याख्या–'हम अमुक समाज के, राष्ट्र के निवासी हैं । हमारे दायित्व देश की सीमा तक ही सीमित हैं । नीति-अनीति जैसी भी बने देश के हित के लिए किया जाना चाहिए ।' राष्ट्रों की इस संकीर्ण-स्वार्थपरता युक्त नीति के कारण ही परस्पर विग्रह खड़े होते हैं और तनाव बढ़ते हैं । स्वस्थ राष्ट्रीय भावना देश के विकास के लिए उपयोगी भी है और आवश्यक भी । किन्तु यह भावना जब इसी परिधि तक सीमित हो जाती है तो विश्व शांति को आघात पहुँचता है, एवं ''वसुधैव कुटुम्बकम्'' की स्थिति नहीं आने पाती ।

प्रज्ञा युग में, जो आने वाले समय की एक सुनिश्चित संभावना है, सभी लोग विश्व को अपने एक विशाल घर के रूप में देखते हुए विश्व-व्यवस्था में अपना भावभरा योगदान देंगे । प्रचलनों के प्रति दुराग्रह मिटेंगे एवं सब ओर सभी में एकता, समानता और बंधुत्व की भावना जागृत होकर विश्वव्यापी बनेगी और समाज शिल्पी ऋषियों की वह अमृतमय वाणी स्थान-स्थान पर जन-जन के मन में गुंजित, मुखरित, प्रतिध्वनित और कार्यान्वित होती देखी जाएगी, जिसमें उन्होंने हमें आदेश देते हुए कहा है –

''**सङ्गच्छध्वम् सम्बध्वम्**'' तुम्हारी गति और वाणी में एकता हो । ''**समानो प्रजा सहवोऽन्नभागः**'' तुम्हारे खाने-पीने के स्थान व भाग एक जैसे हों । ''**समानो मन्त्रः समितिः समानी**'' तुम्हारी सभी गतिविधियाँ एक समान हों और तुम्हारे विचारों के सामंजस्य में एक रूपता हो । ''**समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः** ।'' तुम्हारे हृदय के संकल्प व भावनाएं एक सी हों ।

''**अज्येष्ठासोऽकनिष्ठासः सं भ्रातरो वावृधु सौभगाय**'', हम सब प्रभु की संतान एक दूसरे के भाई-भाई हैं । हममें न कोई छोटा न कोई बड़ा । हम सब एक हैं, यह उत्कृष्ट भावना ही मनुष्य को विश्व विराट् में समाहित करने वाली और अविजेय बनाने वाली है । भेदभावों का मिटना इस दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है ।

धर्म पालने वाले अविजेय हैं

मगध सम्राट अजातशत्रु की गिद्ध दृष्टि लिच्छवि गणतंत्र पर केन्द्रित थी । वज्जियों की वैशाली अजातशत्रु के विजय रथ के लिए दुर्धर्ष शिला खंड बनी गौरव से मस्तक ऊँचा किए हुए थी । भगवान बुद्ध अंतिम बार राजगृह के बहिर्वती दुध्रकूट में पधारे तो अजातशत्रु ने मगध महामात्य वसस्कार को उनकी सेवा में भेजकर निवेदन किया, ''भगवन्, हम वैशाली को पराभूत करना

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

चाहते हैं । कोई उपाय बताएँ ।'' भगवान् ने यह सुना तो निकट बैठे आनंद से पूछा, ''भन्ते, क्या वज्जियों के सन्निपात (संसद-अधिवेशन) बार-बार होते हैं ?'' ''हाँ भगवन् !'' ''क्यों आनंद क्या वजिज संघबद्ध हो उद्यम करते हैं, वज्जीकरणीयों (राष्ट्रीय कर्तव्यों) को करते, सभा द्वारा नियम पूर्वक स्वीकृत हुए बिना कोई आदेश तो नहीं प्रचारित करते, स्वीकृत विधि संहिता का उल्लंघन तो नहीं करते हैं, उनके मान्य वचनों को मानते हैं, अपनी कुल वधुओं एवं कुमारियों का आदर करते हैं, चैत्यों का सम्मान करते हैं, अर्हतों की सेवा और रक्षा करते हैं ?''

''हाँ भगवन्, लिच्छवि इन सभी धर्मों का तत्परता से पालन करते हैं''-आनंद ने उत्तर दिया ।

भगवान् की मुख मुद्रा गंभीर हो गई । उन्होंने अमात्य वसस्कार की ओर देखते हुए शिष्य से कहा-''तो आनंद, ये धर्म गणतंत्र के प्राण तत्व हैं । जब तक लिच्छवि इनका पालन करते हैं, वे अविजेय हैं । यही स्वरूप एक आदर्श संस्था, समाज एवं संस्कृति का होना चाहिए । तुम भी उस आदर्श संस्कृति का अंग बनकर रहो, पराभूत करने की न सोचो ।

विश्व-वाद के प्रतिपादक

जनवादी मैसरिक जब चैकोस्लोवाकिया के राष्ट्रपति बने तब उनने राष्ट्रवाद की निंदा और विश्ववाद की आवश्यकता पर बल दिया । उनके इस कथन पर सभी को आश्चर्य हुआ । पर उनने अपनी बात की सफाई देते हुए कहा, जब तक अन्याय से मुक्ति न पाई जाय तभी तक राष्ट्रवाद की जरूरत है । अन्यथा विश्व की समस्याएँ न जातिवाद से सुलझेंगी, न कर्मवाद से, न राष्ट्रवाद से । मैसरिक का जीवन भारी कठिनाइयों से होकर गुजरा था । उनके पिता गोरे होते हुए भी एक जमींदार के यहाँ बँधुआ मजदूर थे । उन्हें पढ़ने की इजाजत बड़ी अनुनय-विनय के पश्चात ही मिली थी । उन दिनों जागीरदार चाहे जिस गाँव पर चढ़ दौड़ते थे और प्रजाजनों को लूटकर, खदेड़ कर खाली कर देते थे । मैसरिक ने गाँव की दीवारों पर लिख दिया इस गाँव में हैजा फैला है । आक्रमणकारी इसे सच मानकर दूसरी ओर चले गए । इस बुद्धिमानी से उस गाँव वाले बहुत प्रभावित हुए व उन्हें प्यार करने लगे और पढ़ने में सहायता करने लगे । समय आने पर वे संसद सदस्य चुने गए और राष्ट्रपति बने । वर्नाड शा से किसी ने पूछा कि सारे यूरोप का कोई राष्ट्रपति चुना जाय तो आप किसे पसंद करेंगे । योग्यता, प्रतिभा और ईमानदारी को देखते हुए इनने मैसरिक का नाम लिया ।

विश्वधर्म का स्वरूप

टालवी उस अंग्रेज दार्शनिक का नाम है जिसके लेखन और अध्ययन की उत्कृष्टता को सारे संसार में सराहा जाता है । यों विश्व इतिहास के विभिन्न पक्षों पर उनने प्रकाश डाला है पर जोर इस बात पर दिया है कि संसार की समस्याएँ धर्म के आधार पर ही हल होंगी । विश्व धर्म क्या हो सकता है इस संबंध में वे भारतीय धर्म की संभावनाओं को अग्रणी बताते हैं ।

बिना भेदभाव की संस्था

रिचार्ड एलन अमेरिका के एक प्रगतिशील धर्म संस्था के संचालक हैं । उनसे पहले उस देश में गोरे काले का भेदभाव धर्म संस्थाओं में भी था वे संस्थाएँ बहुत दुर्बल थीं । रिचार्ड ऐलन के व्यक्तित्व का ही प्रतिफल है कि उनने बिना भेदभाव की संस्था ही खड़ी नहीं की वरन् उसे उन्नति की उस सीमा तक पहुँचाया जिसे हर दृष्टि से सफल कहा जा सकता है । इस चर्च की अमेरिका भर में शाखाएँ हैं ।

उदारता का सुनियोजन

उन दिनों दान का बड़ा अनुपयुक्त तरीका था । वंश और वेष की आड़ में यात्रियों को उदारता से हड़प लिया जाता था । देव पूजन तथा कर्मकांडों से प्रसिद्धि पाने का प्रचलन था । भगवान बुद्ध के प्रभाव से जितने भी उदार चेता आए उन सबको मात्र सद्ज्ञान संवर्द्धन के लिए धन लगाने की प्रेरणा दी । तक्षशिला और नालंदा के भाषा एवं संस्कृति विश्वविद्यालय उन्हीं के प्रयासों से पुनर्जीवित हुए । अनेक क्षेत्रीय बिहार भी ऐसे विनिर्मित हुए जिनमें धर्म प्रचारकों के प्रशिक्षण तथा निर्वाह की व्यवस्था होती थी । इसी आधार पर बुद्ध का विचार क्रांति धर्म चक्र प्रवर्तन विश्वव्यापी बना ।

पड़ोसी को दे दो

केरल के एक हिंदू सज्जन पड़ोसी के बच्चे बचाते समय जल गए । उनकी सहायता के लिए हिंदू समुदाय ने २० हजार इकट्ठा किया । देने पहुँचे तो उनकी धर्मपत्नी ने यह कहकर लेने से इन्कार कर दिया कि ''मैं मेहनत-मजदूरी करके पेट पाल लूँगी । पड़ोसी मुसलमान का छप्पर तक जल गया है । यह पैसा उसका घर, कपड़े और बर्तन बनाने के लिए दे दिया जाय ।''

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

समय के कुप्रभाव को उलटो

उन दिनों शिक्षार्थी विद्याशुल्क जमा नहीं करते थे, पर साथ ही इतने कृतघ्न भी नहीं थे कि जिस आश्रम में लंबी अवधि तक रहकर ज्ञान और निर्वाह प्राप्त किया वे उसका ऋण न चुकाते। लौटने पर छात्र गुरुकुल का स्मरण रखते और अपनी कमाई का एक अंश नियमित रूप से भेजते । शिक्षा सत्र पूर्ण होने पर शिष्य गुरु से उनकी आवश्यकताएँ पूछते और उनकी पूर्ति का संकल्प लेकर वापस लौटते । उस दिन विरजानंद के गुरुकुल से विद्याध्ययन के उपरांत दयानंद चलने लगे तो चर्चा उस संबंध में हुई कि गुरु आकांक्षी की एक आवश्यकता की पूर्ति के लिए उन्हें क्या करना है । ब्रह्मचारी दयानंद की प्रतिभा से विरजानंद प्रभावित थे । उनने कहा कि सामान्य लोगों की तरह न जीकर तुम समय के कुप्रभाव को उलटने में लग सको तो कितना अच्छा हो । शिष्य ने गुरु इच्छा पर अपनी इच्छा निछावर कर दी और उसी दिन सन्यास लेकर समाज सुधार के कार्यों में विश्व संस्कृति के उत्थान में निरत हो गए ।

सेनया विश्वराष्ट्रस्य कार्यं सेत्स्यति चैकया ।
मतभेदा निरस्ताः स्युः पञ्चायतननिर्णयात् ॥ ६१ ॥
युद्धानि विश्वसेना च रोत्स्यति सर्वतः स्वयम् ।
तत्तत्स्थानव्यवस्था तु कृता स्याद्राजपूरुषैः ॥ ६२ ॥
ईदृश्यां च स्थितावत्र सैन्यसाधनसम्भवः ।
व्ययोऽनपेक्षितः स्यात् सहितमेतन्महन्नृणाम् ॥ ६३ ॥
प्रयोजनेषु चैतेषु राशिर्यो विपुलोऽधुना ।
व्ययमेत्यवशिष्टं तं शिक्षायां स्वच्छताविधौ ॥ ६४ ॥
स्वास्थ्य उद्योग एवं च कृषिसिञ्चनकेऽथवा ।
उत्पादनेष्वनेकेषु चोपयोक्ष्यन्ति पूर्णतः ॥ ६५ ॥
ईदृश्यां च दशायां हि संकटाभावविग्रहाः ।
दृग्गोचरा भविष्यन्ति नैव कुत्राऽपि कर्हिचित् ॥ ६६ ॥
दरिद्राः पतिता रुग्णा उद्विग्ना मानवा नहि ।
द्रष्टुं शक्याधरायां तु कुत्रचित् केनचिद्ध्रुवम् ॥ ६७ ॥
पारिवारिकभावे च याते व्यापकतां तथा ।
सर्वत्र स्वीकृते सत्ययुगः स आगमिष्यति ॥ ६८ ॥
प्रत्येकस्मिन् मनुष्ये च द्रक्ष्यते दैवमुत्तमम् ।
औत्कृष्ट्य विपदो जाता समस्याभीतयस्तथा ॥ ६९ ॥
व्यग्रभावादतश्चात्र कुटुम्बादर्शस्वीकृतौ ।
अवाञ्छितेभ्य एतेभ्यः रिक्तं स्थानं न सम्भवेत् ॥ ७० ॥

भावार्थ–विश्वराष्ट्र की एक सेना रहने से काम चल जाएगा । मतभेदों को पंचायतों के माध्यम से सुलझाया जाएगा । युद्धों को विश्व–सेना रोकेगी । स्थानीय व्यवस्था भर के लिए क्षेत्रीय पुलिस से काम चल जाया करेगा । ऐसी दशा में सैन्य साधनों पर होने वाले खर्च की तनिक भी आवश्यकता न रहेगी और यह मनुष्यों का बहुत बड़ा हित होगा । उस प्रयोजन के लिए इन दिनों जो विपुल राशि खर्च होती है, उसे बचाकर शिक्षा, स्वास्थ्य, स्वच्छता, सिंचाई, उद्योग, विविध उत्पादन आदि में लगाया जा सकेगा । ऐसी दशा में न कहीं अभाव, संकट और विग्रह दृष्टिगोचर होंगे और न मनुष्यों को दरिद्र, पतित, रुग्ण स्थिति में देखा जा सकेगा । पारिवारिकता की विधा व्यापक बनने और सर्वत्र अपनाई जाने पर फिर सतयुग की वापसी संभव हो सकेगी । हर मनुष्य में देवताओं जैसी उत्कृष्टता के दर्शन होंगे । विपत्तियाँ, समस्याएँ और विभीषिकाएँ तो आपा–धापी के कारण उत्पन्न हुई हैं । पारिवारिकता का आदर्श अपनाने पर इस अवांछनीयता के लिए कहीं कोई स्थान रह नहीं जाएगा ॥ ६१–७० ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

व्याख्या–ऋषि श्रेष्ठ यहाँ सतयुग की, प्रज्ञायुग की एक झाँकी दिखाते हुए व्यक्त करते हैं कि वर्तमान विपत्तियों से भरी परिस्थितियाँ तभी मिटेंगी, जब विश्व में एकत्व एवं ममत्व के आधार पर, पारिवारिकता की पृष्ठभूमि बनने लगेगी । जब हर व्यक्ति एक दूसरे में स्वयं को ही प्रतिबिंबित देखेगा, दूसरों का दुख-दर्द अपना लगेगा, तो विग्रह एवं अभावजन्य विभीषिकाओं के घटाटोप स्वयं ही दूर हो जाएँगे, मनुष्य का देवत्व जगेगा एवं धरती पर स्वर्गोपम परिस्थितियाँ विनिर्मित होंगी ।

सहृदयता की अंतःस्थिति व्यापक बनने पर उद्धत महत्वाकांक्षाओं के कारण होने वाले, क्षेत्रीय परिधि के विस्तार को लेकर लड़े जाने वाले युद्ध स्वतः रुक जाते हैं एवं करुणाशक्ति प्रज्ञा उसका स्थान ले लेती है ।

मानवता सर्वोपरि

फ्रांस के महावीर शासक नेपोलियन ने आस्ट्रिया पर आक्रमण किया और जगह-जगह उसकी सेनाओं को हराता हुआ राजधानी वियना नगर पर जा पहुँचा । उसने संधि का झंडा देकर राजदूत को नगर में भेजा, पर नागरिकों ने रोष में आकर उसे मार डाला । इससे नेपोलियन बड़ा क्रुद्ध हुआ और उसने अपनी तोपों को नगर पर गोलाबारी करने की आज्ञा दे दी । वहाँ के अनगिनती विशाल भवन तोपों से टूट-फूट गए । एकाएक नगर का द्वार खुला और उसमें से दूत संधि का झंडा लिए बाहर निकला । नेपोलियन ने दूत का सम्मान करके संदेश पूछा । दूत ने कहा कि नगर में आपकी तोपों के गोले जहाँ गिर रहे हैं, वहाँ से समीप ही सम्राट् की प्यारी पुत्री बीमार पड़ी है । अगर तोपें इसी प्रकार चलती रहीं, तो विवश होकर सम्राट् को अपनी पुत्री को अकेली छोड़कर चला जाना पड़ेगा ।

नेपोलियन के सेनापतियों के मत से तोपों से गोलाबारी करना आवश्यक था, पर नेपोलियन ने कहा कि युद्ध नीति की निगाह से तो आपकी बात ठीक है, पर मानवता की दृष्टि से एक रोगी राजकुमारी पर दया करना उससे भी अधिक महत्व की बात है, तोप वहाँ से हटा ली गई । युद्ध समाप्त हो गया एवं संधि कर ली गई । जो काम आपसी विचार-विमर्श एवं इतने मनुष्यों के हताहत होने पर न हो पाया था, वह अंतः की करुणा के जागते ही अनायास हो गया ।

मनीषी का भविष्य कथन

आज विश्व में युद्धोन्माद की जो परिस्थितियाँ संव्याप्त हैं, उसने मनीषी वैज्ञानिक अलबर्ट आइंस्टाइन की उस भविष्यवाणी को सत्य प्रमाणित होने का अवसर दिया है, जिसमें उन्होंने कहा था–"तीसरा युद्ध यदि आणविक अस्त्रों से हुआ एवं मनुष्य की मनःस्थिति यही बनी रही, तो चौथा युद्ध आदिम मनुष्यों द्वारा पत्थरों से लड़ा जाएगा, क्योंकि विकसित सभ्यता एवं संस्कृति के नष्ट होने पर वही स्थिति उत्पन्न हो जाएगी, जहाँ से मानव ने उठना, अपनी गुजर-बसर करना सीखा था ।"

निःशस्त्रीकरण का मजाक

रोज संधि समझौते होते हैं, परस्पर वार्ताएँ होती हैं, किन्तु परिणाम कहीं भी नजर नहीं आता । आतंकवाद सारे विश्व में तेजी से बढ़ रहा है । शस्त्रों का जखीरा सभी अपने पास जमा करते जा रहे हैं । स्थिति यह है कि कहीं से भी एक चिन्गारी फूटने भर की देर है और विश्वयुद्ध धरित्री में कहीं भी छिड़ सकता है ।

निःशस्त्रीकरण की सभी उच्चस्तरीय वार्ताएँ तब तक मजाक ही हैं, जब तक कि शासन-व्यवस्था चलाने वाले अपनी मनःस्थिति नहीं बदलते, मर्यादा पालन का वचन ही नहीं उसे व्यवहार में लाने का आश्वासन नहीं देते ।

मनुष्य का यह व्यवहार तो पशुओं से भी गया बीता है । एक चिड़ियाघर के जानवरों ने इकट्ठे होकर विचार किया कि निःशस्त्रीकरण की नीति पर चलना चाहिए । गेंडे ने कहा–दांत और पंजे सबसे अधिक खतरनाक होते हैं, उन पर प्रतिबंध लगाया जाय, सींग तो केवल रक्षा का साधन मात्र हैं । भैंसा और हिरन से लेकर काँटों वाली सेई तक ने गेंडे का समर्थन किया । शेर ने दाँत और पंजों को खाने और चलने का साधारण साधन बताते हुए कहा–सींग ही निरर्थक वस्तु हैं, सर्वसम्मति से उसी का प्रयोग निषिद्ध कहा जाय । बाघ, चीता और सियार से लेकर वनविलाब तक ने इस तर्क की प्रशंसा की । रीछ की बारी आई, तो उसने कहा–सींग और दांत-पंजे यह सभी हानिकारक हैं । जरूरत पड़ने पर आलिंगन करने के मित्रतापूर्ण ढंग पर छूट रखी जानी चाहिए । जो लोग रीछ की आदत जानते थे, वे उसकी चालाकी को ताड़ गए और मन ही मन बहुत कुढ़े । अपने पक्ष का समर्थन और प्रतिपक्षी का विरोध करने के जोश में

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

बहुत शोर मचने लगा, एक दूसरे पर गुर्राने लगे, यहाँ तक कि टूट पड़ने की बात सोचने लगे । चिड़ियाघर के मालिक ने यह शोर सुना, तो उसने उन सबको अपने-अपने बाड़े में खदेड़ दिया और कहा-"मूर्खो ! तुम भलमनसाहत से अपनी-अपनी मर्यादाओं का पालन करो, तो बिना निःशस्त्रीकरण के भी काम चल सकता है ।"

आशा करनी चाहिए कि मनुष्य में सद्बुद्धि आएगी एवं विनाश का यह वातावरण पारिवारिकता की मनः स्थिति के विकसित होते ही बदलेगा । सन्मति ही प्रज्ञा है । चिंतन की भ्रष्टता एवं आचरण की दुष्टता चारों ओर समझदारी का वातावरण बनने पर ही मिटेगी । मनीषियों की इस दिशा में भूमिका को नकारा नहीं जा सकता । ऋषि सत्ता का यह आश्वासन है कि महाकाल मूर्धन्य प्रतिभाओं के माध्यम से सारे विश्व को एक सूत्र में अगले दिनों आबद्ध करके ही रहेगा ।

विनाशसंकटाश्चात्र महाप्रलयसदृशाः ।
दृश्यन्ते वर्द्धमानास्तु गर्जन्तः सर्वतो भुवि ॥ ७१ ॥
पारिवारिकतावायौ चलतीह न कुत्रचित् ।
सत्ताज्ञानं भवेदेषा प्रातर्जातेऽरुणोदये ॥ ७२ ॥
तिरोहितं तयो नृणां पश्यतां जायते यथा ।
तथा विश्वकुटुम्बस्य भावनायाः शुभोदये ॥ ७३ ॥
जातेऽथापि व्यवस्थायां निर्मितायां भवेन्नहि ।
त्रासउद्विग्नको येन दैन्यगाः स्युर्नरा बलात् ॥ ७४ ॥

भावार्थ-महाप्रलय जैसे विनाश संकट इन दिनों पृथ्वी में सर्वत्र घुमड़ते-गरजते दीखते हैं । उनमें से एक का भी पारिवारिकता का पवन चलते ही कहीं पता न चलेगा । प्रातःकाल का अरुणोदय होते ही अंधकार देखते-देखते तिरोहित हो जाता है । उसी प्रकार विश्व परिवार की भावना जगने और व्यवस्था बनने पर वैसा कोई त्रास रहेगा नहीं, जो मनुष्य को खिन्न-उद्विग्न करे और उसे गई-गुजरी स्थिति में रहने के लिए विवश करे ॥ ७१-७४॥

व्याख्या-यहाँ ऋषि प्रवर जन सामान्य को आश्वासन देते हैं कि इन दिनों विश्व पर सर्वत्र संव्याप्त विभीषिका-महाप्रलय जैसे विनाश संकट जो प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहे हैं, वह मानवीय सद्बुद्धि-विवेक के जागृत होते ही तिरोहित हो जाएँगे । 'विश्व परिवार', 'विश्व बंधुत्व' की भावना जागृत होने और तदनुरूप व्यवस्था बनाने पर सभी एक दूसरे की प्रगति-उत्थान के लिए ही कार्य करते देखे जाएँगे । गायत्री मंत्र के अंतिम चरण में अपनी निज की ही नहीं, समस्त समाज की, प्राणिमात्र की यथार्थ प्रगति की कामना की गई है और परम सत्ता से प्रार्थना की गई है कि सर्वतोमुखी प्रगति की आधारशिला सद्बुद्धि विवेक को हम सबके अंतःकरण में प्रतिष्ठापित करें । ऋतंभरा प्रज्ञा की शरण में हमारी अंतःचेतना को नियोजित कर दें । सन्निकट एवं सुनिश्चित-सम्भावी प्रज्ञायुग में उसी को प्राप्त करने के लिए जन-जन के मन में उत्कट-उत्कृष्ट आकांक्षा आतुरता एवं तत्परता की भावना दिखाई देगी और लोग 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से ओत-प्रोत होकर कार्य करेंगे, तब समस्त समाज में अमन-चैन एवं सुख-शांति का वातावरण बनेगा ।

केवलं न मनुष्या हि विश्वस्य परिवारगाः ।
पशवः पक्षिणश्चात्र संगताः सन्ति पूर्णतः ॥ ७५ ॥
निर्दयत्वस्य चाऽनीतेरन्तः स्याच्च तदैव तु ।
तेषामपि ययोरत्र व्यवहारस्तु तैः सह ॥ ७६ ॥
क्रियते मनुजैः क्रूरैर्यदास्युर्भावनाः शुभाः ।
कौटुम्बिकस्य सर्वत्र विस्तृतास्तु गृहे गृहे ॥ ७७ ॥
विश्वकल्याणमेतच्च सम्बद्धं ज्ञायतां ध्रुवम् ।
अविच्छिन्नतयामर्त्यकल्याणस्यातिशायिनः ॥ ७८ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

पारिवारिकता भावैः प्रक्रियां व्यापिकां ततः ।
विधातुं यतनीयं च मर्त्यविश्वकुटुम्बजाम् ॥ ७९॥
भविष्यदुज्ज्वलं चैतत्सम्बद्धं च यया सह ।
अजस्रसुख शान्त्योश्च यत्रावतरणं तथा ॥ ८०॥

भावार्थ–विश्व परिवार में मात्र मनुष्य ही नहीं, पशु–पक्षी भी सम्मिलित होते हैं । उनके साथ बरती जाने वाली अनीति निर्दयता का अंत भी पारिवारिकता की भावनाओं का विस्तार होने पर ही बन पड़ेगा । विश्व कल्याण अति व्यापक मानव कल्याण की पारिवारिकता की भावना के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ समझा जाना चाहिए । विश्व परिवार को, मानव परिवार को, उस प्रक्रिया को व्यापक बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए, जिसके साथ उज्ज्वल भविष्य और अजस्र सुख–शांति का अवतरण अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है ॥ ७५–८०॥

व्याख्या–विश्व परिवार की परिधि बहुत विशाल एवं व्यापक है । उसमें समस्त प्राणिजगत आ जाता है । मनुष्यों, जीव-जंतुओं, पशु-पक्षियों, वृक्ष-वनस्पतियों आदि का समुच्चय मिलकर एक विशाल परिवार का स्वरूप बनता है । अब नियंता की व्यवस्थानुसार चराचर में कौटुम्बिक भावना का विस्तार होगा, तब न कहीं कलह रहेगी, न विग्रह । सब एक दूसरे को प्यार करेंगे, सम्मान देंगे एवं परस्पर प्रतिद्वंद्विता छोड़कर एक दूसरे को ऊँचा उठाने, आगे बढ़ाने का प्रयास करेंगे । बदली हुई मनःस्थिति से वर्तमान में संव्याप्त विभीषिकाओं का घटाटोप निरस्त होता चला जायगा और पारिवारिकता की, विश्व वसुधा के हर जीवधारी को अपना मानने की भावना विकसित-विस्तृत होगी, तब सतयुग की, प्रज्ञा युग की संभावनाएँ निश्चित ही साकार होने लगेंगी । चारों ओर सुख-समृद्धि के साथ शांतिमय वातावरण दृष्टिगोचर होगा और समस्त दिशाओं में शास्त्रोक्त वाणी– **सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः । सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात् ॥** – की शुभकामना जन-जन के अंतःकरण से प्रस्फुटित, प्रतिध्वनित और कार्यान्वित होती सुस्पष्ट देखी जा सकेगी । अतः आवश्यकता इस बात की है कि लोग तदनुरूप मनःस्थिति बनाकर नियंता के-सृष्टि संचालन के विश्व वसुधा को समुन्नत बनाने में अपना भावभरा योगदान प्रस्तुत करें ।

महाप्रभु एवं भक्त महिला

आरती का पुनीत समय था । शंख और घंटे की आवाज से भगवान् जगन्नाथ का मंदिर गूँज रहा था । महाप्रभु चैतन्य गरुण स्तंभ के पास खड़े भगवान की आरती को बड़ी तन्मयता से गा रहे थे । मंदिर में भक्तों की भीड़ बढ़ती जा रही थी । बाद में आने वालों को मूर्ति के दर्शन नहीं हो पा रहे थे । एक उड़िया स्त्री जब दर्शन करने में असमर्थ रही, तो झट गरुड़ स्तंभ पर चढ़ गई और एक पैर महाप्रभु के कंधे पर रखकर आरती देखने लगी । महाप्रभु ने तो इस बात को सहन कर भी लिया, परंतु उनका शिष्य गोविंद भला क्यों सहन करता ? वह उस स्त्री को डाँटने लगा पर महाप्रभु ने ऐसा करने से मना किया । 'क्यों बाधक बनते हो भगवान के दर्शन कर लेने दो । इस माता को दर्शन की जो प्यास भगवान ने दी है यदि मुझे भी प्राप्त होती तो मैं धन्य हो जाता । इसकी तन्मयता तो देखो कि इसे यह भी ध्यान नहीं रहा कि पैर किसके कंधे पर है ?' महाप्रभु का इतना कहना था कि वह धम्म से नीचे आ गिरी और उनके चरणों में गिर कर क्षमा माँगने लगी । महाप्रभु ने अपने चरण हटाते हुए कहा– "अरे ! तुम यह क्या कर रही हो, मुझे तुम्हारे चरणों की वंदना करनी चाहिए ताकि तुम जैसा भक्ति भाव मैं भी प्राप्त कर सकूँ ।"

महापुरुषों में यही विशेषता होती है कि उनका उदार करुणासिक्त हृदय सबमें प्रभु के दर्शन करता है । प्रभु के भक्त की उनके प्रति तादाम्यता-तन्मयता उन्हें अत्यंत प्रिय लगती है । पारिवारिकता का यही तो एकमात्र सूत्र है ।

प्राणी मात्र से प्रेम

हर प्राणी-जीवधारी में वही परमसत्ता समाई है, यह चिंतन करने वाले के लिए हर प्राणी अपना ही विश्व-बांधव प्रतीत होता है । उनके प्रति उनकी वही आत्मीयता होती है ।

एक दिन मालवीय जी स्टेशन के पुल के पास से गुजर रहे थे कि उन्हें एक कुत्ते के चिल्लाने का स्वर सुनाई दिया । वह उस कुत्ते के पास गए । उसे ध्यान से देखने पर मालूम हुआ कि उसके कान के पीछे एक बहुत बड़ा घाव है । मालवीय जी उसी समय काम छोड़कर वैद्य के पास गए और उन्होंने उससे कुत्ते के लिए दवा माँगी । वैद्य जी ने कहा–"दवा बहुत लगने वाली है । आप उस पर कैसे लगाएँगे ?" मालवीय जी ने उत्तर दिया–"आप दवा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

तो दीजिए ।'' दवा लेकर मालवीय जी अपनी गली में आए और उन्होंने चार-पांच लड़कों को इकट्ठा किया । पहले जब वे उस कुत्ते के पास गए तब वह गुर्राने लगा और काटने को दौड़ा, परंतु मालवीय जी ने इसकी चिंता नहीं की । उन्होंने उसे पकड़ कर लेटा दिया और लड़कों को उसे दबाए रखने को कहा । इसके बाद उन्होंने दवा को एक कपड़ा बँधी लकड़ी से कुत्ते के घाव पर लगा दिया । पहले तो कुत्ता दर्द से चिल्लाया परंतु जब दर्द कुछ कम हुआ तब वह शांति से सो गया । इस प्रकार मालवीय जी की दयालुता से उस कुत्ते की जान बच गई ।

प्राणियों को गुरु बनाया

जब सभी प्राणी अपने हैं तो उनसे शिक्षा लेने में अपनी हेठी क्यों ? महापुरुष तो क्षुद्र प्राणियों से भी शिष्यत्वभाव से प्रेरणा ग्रहण करते हैं ।

दत्तात्रेय को कोई ज्ञानी गुरु न मिला, सो वे प्रजापति के पास पहुँचे और बोले-''ऐसे गुरु का पता बताएँ जो मेरी जिज्ञासा का संतोषजनक समाधान कर सके ।'' प्रजापति ने उन्हें आश्वासन दिया और कहा-''लौटते समय जो भी सामने आए उसी की गतिविधियों को ध्यानपूर्वक देखें और उनमें जो विशेषता मिले उसे शिष्य भाव से ग्रहण करें । दत्तात्रेय सहमत हो गए और वापस लौट चले । सर्वप्रथम एक पेड़ पर मकड़ी को जाल बुनते देखा । वह स्वयं ही बुनती, स्वयं ही फँसती और स्वयं ही दुखी होती थी । थोड़ी देर में मकड़ी ने विचार बदला । वह जाले तानने के स्थान पर समेटने और निगलने लगी । देखते-देखते जाल जंजाल बना हुआ वितान उसके पेट में चला गया और स्वच्छंद होकर मकड़ी बंधन मुक्ति का आनंद लेने लगी । दत्तात्रेय ने यह साधारण घटना असाधारण दृष्टिकोण और गंभीर मनोयोग के साथ देखी, फलतः वह उन्हें बंधन और मुक्ति का रहस्य बता गई कि आदमी किस कारण बँधता और किस नीति को अपनाकर छूटता है । आगे चलने पर उन्हें अनेक छोटे बड़े प्राणी मिलते गए । चींटी से उनने श्रमशीलता, सहकारिता सीखी । कुत्ते से स्वामिभक्ति । बैल से धैर्य और कर्म । इस प्रकार एक-एक करके उनने चौबीस गुरु बनाए । वे सभी मनुष्येत्तर जीव-जंतु थे जो बोलने में असमर्थ होते हुए भी उच्चस्तरीय रीति-नीति का आदर्श प्रस्तुत करते थे । उन्हें समझने और अपनाने पर दत्तात्रेय की जिज्ञासाएँ समाप्त होती गईं और वे ज्ञान के भंडार बनकर सिद्ध पुरुष एवं भगवान कहलाए ।

बंद द्वार खुल गए

परम पिता और उसके उत्तराधिकारी के मध्य एक ही संबंध है और उस संबंध का नाम है-अगाध प्रेम । तब दोनों मिलकर एक हो जाते हैं ।

एक सूफी कथा है-किसी प्रेमी ने अपनी प्रेयसी के द्वार को खटखटाया । भीतर से पूछा गया-''कौन है ?'' प्रेमी ने उत्तर दिया-''मैं हूँ तुम्हारा प्रेमी ।'' प्रत्युत्तर मिला-''इस घर में दो को स्थान नहीं है ।'' कुछ दिनों बाद प्रेमी पुनः उसी द्वार पर लौटा । इस बार ''कौन है ?'' के उत्तर में उसका जवाब था-''तू ही है'' और वे बंद द्वार उसके लिए खुल गए । ईश्वर और जीव के संबंध ऐसे ही होते हैं ।

देने में आनंद

''बेटा ले ये दो टुकड़े मिठाई के हैं । इनमें से यह बड़ा टुकड़ा तू स्वयं खा लेना और छोटा टुकड़ा अपने साथी को दे देना ।'' ''अच्छा माँ'' और वह बालक दोनों टुकड़े लेकर बाहर आ गया अपने साथी के पास । साथी को मिठाई का बड़ा टुकड़ा देकर छोटा स्वयं खाने लगा । माँ यह सब जंगले में से देख रही थी । उसने आवाज देकर बालक को बुलाया । ''क्यों रे ! मैंने तुमसे बड़ा टुकड़ा खुद खाने और छोटा उस बच्चे को देने के लिए कहा था, किन्तु तूने छोटा स्वयं खाकर बड़ा उसे क्यों दिया ?'' वह बालक सहज बोली में बोला-''माताजी ! दूसरों को अधिक देने और अपने लिए कम से कम लेने में मुझे अधिक आनंद आता है ।'' यह बालक था बाल गंगाधर तिलक । माताजी गंभीर हो गईं । वह बहुत देर विचार करती रहीं बालक की इन उदार भावनाओं के संबंध में ।

सचमुच यही मानवीय आदर्श है और इसी में विश्व शांति की, एकता की सारी संभावनाएँ निर्भर हैं । मनुष्य अपने लिए कम चाहे और दूसरों को अधिक देने का प्रयत्न करे तो समस्त संघर्षों की समाप्ति और स्नेह, सौजन्य की स्वर्गीय परिस्थितियाँ सहज ही उत्पन्न हो सकती हैं ।

मानवता के लिए समर्पित अंग्रेज वर्न

विलियम वेडर वर्न हिंदुस्तान में अपने पिता के साथ कोई ऊँचा सरकारी पद पाने आए थे । वह उन्हें मिला भी । अपनी प्रतिभा के कारण उन्हें 'सर' की उपाधि भी मिली पर भारतीयों की दरिद्रता और शोषण देखकर उनका मन पिघल गया । नौकरी छोड़ दी और जन-जागरण के काम में लग गए । पहला काम उनने राष्ट्रीय कांग्रेस को जन्म देने और समर्थ बनाने का किया । वे मि०

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

ह्यूम के दाहिने हाथ बन गए । जो काम उनने किया उसके अनुसार वे देश के मूर्धन्य नेता बने । उनने सच्चे अर्थों में भारतीय नागरिकता स्वीकार की । इंग्लैंड की पार्लियामेंट में वे भारत के प्रतिनिधित्व की हैसियत से सदस्य चुने गए । कांग्रेस के दो बार अध्यक्ष रहे । अंग्रेज अपने शासन की नींव कमजोर करने वाला कहकर उन पर तरह-तरह के लांछन तो लगाते थे पर वे अपनी प्रतिभा पर आजीवन अडिग रहे । उनने न्याय का पक्ष लिया, बिरादरी का नहीं । वे स्वयं को किसी देश विशेष का नहीं, समस्त विश्व का नागरिक कहते थे ।

सत्रं साप्ताहिकं यस्मिन् परिवारप्रशिक्षणम् ।
कृतं धौम्येन तत्त्वद्य समाप्तं विधिपूर्वकम् ॥ ८१॥
कुम्भस्नानार्थिनां नृणां कार्यकालोऽपि निश्चितः ।
पूर्णमारण्यकं गन्तुं महर्षेरपि चेप्सितम् ॥ ८२॥
विसर्जनं ततश्चास्य ज्ञानयज्ञस्य निश्चितम् ।
कर्तुं विवशता जाता महर्षेः करुणात्मनः ॥ ८३॥
श्रोतारः स्वेषु चेतःसु सत्रसंयोजकस्य ते ।
भावपूर्णं व्यधुः सर्वेऽप्यभिनन्दमद्य तु ॥ ८४॥
आत्मानं कृतकृत्यं चाप्यनयाऽमृतवर्षया ।
मेनिरे चित्तमेषां च श्रद्धा भावभृतं ह्यभूत् ॥ ८५॥
श्रुतं ज्ञातं च यत्तत्तु करिष्यामः क्रियान्वितम् ।
प्रयोजनस्य सिद्धिः सा क्रियाधीनैव वर्तते ॥ ८६॥
उपदेशः परामर्शः केवलं मार्गदर्शनम् ।
उत्साहस्याथ सञ्चारे समर्थास्तु भवस्ततः ॥ ८७॥
कथनाच्छ्रवणान्नैव कार्यं सिद्ध्यति कस्यचित् ।
संकल्पानन्तरं कार्यं कुर्यादेव क्रियान्वितम् ॥ ८८॥

भावार्थ–महर्षि धौम्य का एक सप्ताह का परिवार शिक्षण सत्र आज विधिपूर्वक समाप्त हुआ । कुंभ स्नान के लिए आए हुए लोगों का निर्धारित कार्यकाल भी पूरा हो गया । महर्षि को भी अपने आरण्यक आश्रम में जाना था । अस्तु, परम कारुणिक ऋषि को उस ज्ञान यज्ञ को समापन करने की विवशता थी । श्रोताओं ने मन ही मन सत्र संयोजक ऋषि का भाव–भरा अभिवंदन किया और अपने को इस अमृत वर्षा से कृतकृत्य हुआ माना । सभी का मन इस भाव श्रद्धा से भरा हुआ था कि जो सुना–समझा है, उसे कार्यान्वित भी करेंगे । प्रयोजन की सिद्धि तो करने से होती है । उपदेश परामर्श तो मात्र मार्गदर्शन करने और उत्साह भरने तक के काम आते हैं । कथन–श्रवण भर से कुछ काम नहीं चलता । कार्य को, संकल्प के बाद क्रियान्वित करना अनिवार्य है ॥ ८१–८८॥

भविष्यति च कुत्रस्यात् सत्रमेवं विधं कदा ।
पुलकिता गमनोत्कास्ते पप्रच्छुः सादरं ततः ॥ ८९॥
उदतारीदृषिः सर्वे भवन्तः पर्वजेषु हि ।
आयोजनेषु सर्वत्र संगताः स्युः सदैव तु ॥ ९०॥
ईदृशी लोकशिक्षाया व्यवस्था तत्र प्रायशः ।
भवतीति समैस्तत्र लाभः प्राप्तव्य उत्तमः ॥ ९१॥
समापनसमारोहे सर्वैरेव विशेषतः ।
उत्साहो दर्शितस्तत्र महर्षेर्दिव्य चक्षुषः ॥ ९२॥
प्रयोजनाय दिव्याय चानुदानानि तैर्नरैः ।
प्रस्तुतानि निजान्यत्र भावपूर्णानि विह्वलैः ॥ ९३॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अभिवादनकार्यस्य क्रमस्तत्राशिषामपि ।
चचालाभूत्समाप्तश्च जयघोषपुरस्सरम् ॥ ९४॥
ज्ञानयज्ञः समेषां च विश्वमेतच्चराचरम् ।
परिवारगतं साक्षाद् बुद्धावुद्बुद्धतां गतम् ॥ ९५॥
प्रस्थितानां गृहास्तेषां जाता वृक्षा क्षुपा अपि ।
परिवारिकतां याता गोप्तारो जीवनस्य च ॥ ९६॥

भावार्थ–भविष्य में ऐसा सत्र कब और कहाँ होगा ? यह प्रश्न पुलकित मन से विदा लेने वाले आदर सहित पूछने लगे । ऋषि ने कहा–आप लोग पर्व आयोजनों में सम्मिलित हुआ करें । वहाँ प्रायः ऐसे ही लोक शिक्षण की व्यवस्था रहती है । अतः सभी को वहाँ उत्तम लाभ प्राप्त करना चाहिए । सभी ने समापन समारोह में विशेष उत्साह दिखाया । ऋषि प्रयोजन के लिए अपने भाव भरे अनुदान भी विह्वल होकर प्रस्तुत किए । अभिवादन और आशीर्वाद का क्रम चला । जयघोष के साथ उस ज्ञानयज्ञ का समापन हो गया । सभी को समस्त चराचर विश्व अपनी बुद्धि में एक परिवार के रूप में उद्बुद्ध सा होने लगा । घर लौटते हुए सभी को पेड़–पौधे तक अपने जीवन रक्षक पारिवारिक सदस्यों के समान दृष्टिगोचर होने लगे ॥ ८९–९६॥

इति श्रीमत्प्रज्ञापुराणे ब्रह्मविद्याऽऽत्मविद्ययोः, युगदर्शनयुगसाधनाप्रकटीकरणयोः,
श्रीधौम्य ऋषि प्रतिपादिते ''विश्वपरिवार'', इति
प्रकरणो नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७॥



Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

वन्दना परिशिष्ट

कथावाचक का आदर्श यह रहा है कि वह अपने आपको शाश्वत ज्ञान का विनम्र सन्देशवाहक मात्र मानकर चले । इसीलिए स्वयं को वक्ता न मानकर आदि वक्ताओं का प्रतिनिधि माने । कथा प्रारम्भ करने से पूर्व अपना यह भाव उद्दीप्त करने के लिए वन्दना एक बड़ा उपयोगी माध्यम रहा है । भावभरी वन्दना से न केवल अपने अनुशासन का निर्वाह होता है, बल्कि अपनी शालीनता का उभार होने से दिव्य अनुदान के रूप में सूक्ष्म प्रवाह का भी सहज ही लाभ मिलने लगता है । अस्तु, हर कथा के पहले भावभरी वन्दना अवश्य की जाय ।

वन्दना में पहले ईश-वन्दना तथा फिर गुरु-वन्दना के श्लोक बोले जायें । समय एवं परिस्थितियों के अनुरूप २-३ मंत्र दोनों ही प्रसंगों के बोले जा सकते हैं । यहाँ ईश-वन्दना और गुरु-वन्दना के पर्याप्त श्लोक दिए जा रहे हैं । ईश-वन्दना के श्लोक इस तरह के हैं कि उसमें किसी विशेष नाम रूप का वर्णन न होकर प्रभु की सामर्थ्य, सार्वभौम सत्ता, उनकी विशेषता एवं गुणों, आदर्शों का ही उल्लेख है । गुरु-वन्दना के श्लोक भी सार्वभौम हैं ।

ईश वन्दना

यं शैवाः समुपासते शिव इति ब्रह्मेति वेदान्तिनो,
बौद्धा बुद्ध इति प्रमाणपटवः कर्तेति नैयायिकाः ।
अर्हन्नित्यथ जैनशासनरताः कर्मेति मीमांसकाः सोऽयं
नो विदधातु वाञ्छितफलं त्रैलोक्यनाथो हरिः ॥ १ ॥
त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणः, त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम, त्वया ततं विश्वमनन्तरूप ! ॥ २ ॥
भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।
याभ्यां विना न पश्यन्ति सिद्धा स्वान्तः स्थमीश्वरम् ॥ ३ ॥
प्रातः स्मरामि हृदि संस्फुरदात्मतत्त्वं सच्चित्सुखं परमहंसगतिं तुरीयम् ।
यत्स्वप्नजागरसुषुप्तमवैति नित्यं तद् ब्रह्म निष्कलमहं न च भूतसंघः ॥ ४ ॥
प्रातर्नमामि तमसः परमर्कवर्णं पूर्णं सनातनपदं पुरुषोत्तमाख्यम् ।
यस्मिन्निदं जगदशेषमशेषमूर्तौ रज्ज्वां भुजङ्गम इव प्रतिभासितं वै ॥ ५ ॥
नमस्ते सते ते जगत्कारणाय नमस्ते चिते सर्वलोकाश्रयाय ।
नमोऽद्वैततत्त्वाय मुक्तिप्रदाय नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥ ६ ॥
यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः स्तुन्वन्ति दिव्यैः स्तवै
र्वेदैः साङ्गपदक्रमोपनिषदैर्गायन्ति यं सामगाः ।
ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणा देवाय तस्मै नमः ॥ ७ ॥
पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान् ।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः कुतोऽन्यो लोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव ॥ ८ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यं, त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम् ।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥ ९॥
प्रातर्नमामि मनसा वचसा समूर्ध्ना पादारविन्दयुगलं परमस्य पुंसः ।
नारायणस्य नरकार्णवतारणस्य पारायणप्रवणविप्रपरायणस्य ॥ १०॥
प्रातर्भजामि मनसो वचसामगम्यं वाचो विभान्ति निखिला यदनुग्रहेण ।
यन्नेतिनेतिवचनैर्निगमा अवोचस्तं देवदेवमजमच्युतमाहुरग्र्यम् ॥ ११॥
भयानां भयं भीषणं भीषणानां गतिः प्राणिनां पावनं पावनानाम् ।
महोच्चैः पदानां नियन्तृत्वमेकं परेषां परं रक्षणं रक्षणानाम् ॥ १२॥
नमः पुरस्तादथ पृष्ठस्तते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व ।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वं सर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः ॥ १३॥
वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च ।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्त्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते ॥ १४॥
एको देवः सर्वभूतेषु गूढः सर्वव्यापी सर्वभूतान्तरात्मा ।
कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवलो निर्गुणश्च ॥ १५॥
त्वं वायुरग्निरवनिर्वियदम्बुमात्राः प्राणेन्द्रियाणि हृदयं चिदनुग्रहश्च ।
सर्वं त्वमेव सगुणो विगुणश्च भूमन् नान्यत् त्वदस्त्यपि मनो वचसा निरुक्तम् ॥ १६॥
अणोरणीयान् महतो महीयान् आत्मा गुहायां निहितोऽस्य जन्तोः ।
तमक्रतुं पश्यन्ति वीतशोको धातुः प्रसादान्महिमानमीशम् ॥ १७॥
नमस्ते नमस्ते विभो ! विश्वमूर्ते ! नमस्ते नमस्ते चिदानन्दमूर्ते ! ।
नमस्ते नमस्ते तपोयोगगम्य नमस्ते नमस्ते श्रुतिज्ञानगम्य ॥ १८॥
अजं शाश्वतं कारणं कारणानां शिवं केवलं भासकं भासकानाम् ।
तुरीयं तमः पारमाद्यन्तहीनं प्रपद्ये परं पावनं द्वैतहीनम् ॥ १९॥
सत्यव्रतं सत्यपरं त्रिसत्यं सत्यस्य योनिं निहितं च सत्ये ।
सत्यस्य सत्यमृतसत्यनेत्रं सत्यात्मकं त्वां शरणं प्रपन्नाः ॥ २०॥
वयं त्वां स्मरामो वयं त्वां भजामो वयं त्वां जगत् साक्षिरूपं नमामः ।
सदेकं निधानं निरालम्बमीशं भवाम्भोधिपोतं शरण्यं व्रजामः ॥ २१॥

गुरु वन्दना

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुरेव महेश्वरः । गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ १॥
अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम् । तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ २॥
अज्ञानतिमिरान्धस्य ज्ञानाञ्जनशलाकया । चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ ३॥
वन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शङ्कररूपिणम् । यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्रः सर्वत्र वन्द्यते ॥ ४॥
अखण्डानन्दबोधाय शिष्यसन्तापहारिणे । सच्चिदानन्दरूपाय तस्मै श्री गुरवे नमः ॥ ५॥
ब्रह्मानन्दं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिं द्वन्द्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यम् ।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वसाक्षिभूतं भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरुं तन्नमामि ॥ ६॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

युगदेव-स्तवन

अहो तां गायत्रीमखिलजगदानन्द निलयामुपास्य ब्रह्मासावसृजदमलां सृष्टिमधिकाम् ।
मता या वेदानामपि निखिलविश्वस्य जननी सुशान्त्यै शान्तां तां जपत मनुजा ! देवजननीम् ॥ १ ॥

समस्त जगत् के आनन्द की आधारभूत जिस गायत्री की उपासना करके ब्रह्माजी ने सृष्टि रची । जिसे वेदमाता, देवमाता व विश्व माता कहा जाता है । हे मनुष्यो ! अपार शांति के लिए शांत-स्वरूप उस गायत्री को भजो, उसका जप करो ॥ १ ॥

त्रयोलोका यस्याश्चरण वरणास्तेऽपि च समे, त्रयो देवास्तिस्त्रः प्राथेतविभवा देव्य इति सा ।
त्रिवेणी व्याख्याताऽक्षररगण इहाख्यातिमभजच्चतुर्विंशत्याहु ऋषित्रिदशदिव्यावतरणाः ॥ २ ॥

जिसके तीन चरणों को तीन लोक, तीन देव, तीन वैभव शाली देवी-त्रिवेणी कहते हैं । जिसके चौबीस अक्षर अवतारों, देवताओं, ऋषियों के रूप में प्रख्यात हुए ॥ २ ॥

सुदैव्याः संस्कृत्या इहनिगदिता मूलमखिलं, बुधाः प्राहुः यांचा मृतममरवृक्षं परमणिम् ।
शिखासूत्रे यास्या दधुरमृतचिह्नं जपत तां, युगप्रज्ञोन्मेषप्रबलकरुणां सिद्धिजननीम् ॥ ३ ॥

जो देव संस्कृति की मूल है । जिसे पारस, कल्पवृक्ष और अमृत कहा जाता है, जिसे शिखा-सूत्र के रूप में धारण किया जाता है । जो अमृत तत्वदायी चिह्न है-ऐसी युग परिवर्तन का उन्मेष करने में अत्यन्त करुणामयी सिद्धि-दात्री गायत्री को जपो ॥ ३ ॥

अहो आद्यां शक्तिं कलियुगकलाविस्मृततनुमुपेक्षाक्षीणां तामृतनिधिकां बुद्धिविभवाम् ।
महाप्राज्ञो ह्येनां पुनरुदधरद् देवसदृश ऋतां प्रज्ञां तुभ्यं युगपुरुष ! नः सन्तु नतयः ॥ ४ ॥

उस आद्यशक्ति को काल-प्रवंचना से विस्मृत रूप वाली, उपेक्षित हुई ऋतम्भरा-प्रज्ञा का जिसने पुनरुद्धार किया, उस महाप्राज्ञ युग पुरुष को देव संस्कृति का, उसके कोटि-कोटि अनुचरों का कोटि-कोटि नमन वन्दन ॥ ४ ॥

सदा भास्वान् भूत्वा तपति गगने यज्ञ इह यो, भृशं पर्जन्योऽयं यमनुसततं वर्षति रसम् ।
य ओतः प्रोतश्च प्रबलतमतत्प्राणमरुता तदेतद् देवत्वं श्वसिति कृपया यस्य हि चितेः ॥ ५ ॥

जो यज्ञ सूर्य के रूप में तपता है । जिसके प्रताप से पर्जन्य बरसते हैं । जो प्राण-ऊर्जा से ओत-प्रोत है । जिसकी चेतना से देवत्व जीवित है ॥ ५ ॥

यदङ्के देवानां गण उदयमासाद्य लुठति, भृशं पोषं प्राप्य प्रखरतरतां यानि सततम् ।
निधिर्ऋद्धेः सिद्धेरपि च कथिता यत्र वपुषि, तदोजस्तेजस्त्वे वसत इह वर्चोऽभिलषति ॥ ६ ॥

देवगण जिससे, जिसकी गोद में जन्मते, पलते, प्रखर होते और समर्पण करते हैं । जो ऋद्धि-सिद्धियों का भण्डार है । जिसमें ओजस्, तेजस् और वर्चस् के सभी तत्व विद्यमान हैं ॥ ६ ॥

तिरस्कारं यातो विकृतिमभजद् यः कलिबलादुपेक्षां संप्राप्तोऽप्यहह निखिलारोग्यसदनम् ।
अहो विष्णुं यागं पुनरुदधरद् यो बुधवर ! प्रणामास्तुभ्यं हे युगपुरुष ! नः कोटिश इमे ॥ ७ ॥

ऐसे कलि-विडम्बना से उपेक्षित, तिरस्कृत, विकृत हुए, आरोग्य के उत्पत्ति स्थल विष्णु रूप यज्ञ का जिसने पुनरुद्धार किया, उस महाप्राज्ञ युग पुरुष को, देव संस्कृति का, उसके अनुचरों का कोटि-कोटि नमन-वन्दन ॥ ७ ॥

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

www.awgp.org | www.vicharkrantibooks.org

अहो विश्वस्तानामिव हि हृदयं यस्य सरसं, तदास्ते भक्तानामिव, गहनमाचिन्तनमपि ।
सदा ब्रह्मज्ञानामिव च चरितं तदृषिसम, प्रमाणास्तुभ्यं हे युग-पुरुष ! न कोटिश इमे ॥ ८॥

जिसका हृदय विश्वासी भक्त जैसा-सरस, जिसका गहन चिन्तन ब्रह्मवेत्ताओं जैसा, जिसका चरित्र ऋषियों जैसा, जो महाप्राज्ञ है, ऐसे युग-पुरुष को हम करोड़ों भक्तों का प्रणाम ॥ ८॥

उपास्ते य ईशं ह्यविरतमहो जीवनविधौ सदासक्ते लोकाधिक सुखसमाराधनविधौ ।
सदादर्शादर्शो भुवि विदित सत्सौख्य विभवः, प्रणामास्तुभ्यं हे युग-पुरुष ! नः कोटिश इमे ॥ ९॥

जो ईश्वर उपासना-जीवन साधना और लोक को सुखी करने की आराधना में संलग्र-आदर्शों के लिए समर्पित स्वयं आदर्श (दर्पण) के समान हैं, उस महाप्राज्ञ युग-पुरुष का-देव संस्कृति और उसके अनुचरों द्वारा कोटि-कोटि नमन-वन्दन ॥ ९॥

य उत्सेहे पातोन्मुखमनुजसत्संस्कृतिमहो, निरोद्धुं नाशस्य प्रबलतमगर्तादनलसः ।
दधीचेर्व्यासस्य परशुधर शृङ्गिप्रथितयोर्दधौरूपं यस्त्वां युगनर ! नताः कोटिश इमे ॥ १०॥

जिसने पतनोन्मुख मानवी-संस्कृति को महाविनाश के गर्त से बचाने का आलस्य त्यागकर एकाकी साहस किया । जिसने दधीचि, व्यास, परशुराम, शृंगी, पिप्पलाद की भूमिका निभाई-हे युग पुरुष आपको कोटि-कोटि हम अनुचरों का प्रणाम ॥ १०॥

सुरर्षिं यो वाजिश्रवसमपि कार्यादनुगत,
ऋषिं विश्वामित्रं मुनिवर वशिष्ठं सगरजम् ।
ज्वलन् दीपान् स्नेहोद्भरितहृदयो ज्वालयदसौ,
महावर्चः ! सन्तु युगपुरुष ! तुभ्यं प्रणतयः ॥ ११॥

जिसने नारद, वाजिश्रवा, ऋषि-विश्वामित्र, मुनिवर वशिष्ठ व सगरवंशज भगीरथ की भूमिका एकाकी निभाई । जिसने स्वयं ज्वलन्त होकर-स्नेहयुक्त होकर-अगणित दीप जलाये-उस साहस के धनी, ब्रह्मवर्चस् से ओत-प्रोत महाप्राज्ञ युगपुरुष को देव संस्कृति का-उसके कोटि-कोटि अनुचरों का कोटि-कोटि नमन-वन्दन ॥ ११॥

-पं० चन्द्रभूषणमिश्रेण विरचितम्

मुद्रक युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा

Free Read/ Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi and other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

: युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य- संक्षिप्त परिचय :



ज्यादा जानकारी यहाँ से प्राप्त करें :
http://hindi.awgp.org/about_us

- **विचारक्रान्ति अभियान के प्रणेता** : विचारों को परिस्कृत और ऊँचा उथाने मे समर्थ 3000 से भी अधिक पुस्तकों के लेखन के माध्यम से विश्वव्यापी विचार क्रान्ति अभियान की शरुआत की ।
- **वेद, पुराण, उपनिषद के प्रसिद्ध भाष्यकार** : जिन्हों ने चारों वेद, 108 उपनिषद, षड दर्शन, 20 स्मृतियाँ एवं 18 पुराणों का युगानुकूल भाष्य किया, साथ ही 19 वाँ प्रज्ञा पुराण की रचना भी की ।
- **3000 से अधिक पुस्तकों के लेखक** : मनुष्य को देवता समान, घर-परिवार को स्वर्ग, समाज को सभ्य और समग्र विश्वराष्ट्र को श्रेष्ठ बनाने मे समर्थ हजारों पुस्तकें लिखकर समयानुकूल समर्थ मार्गदर्शन प्रदान किया ।

- **युग-निर्माण योजना के सूत्रधार** : जिन्होंने शतसूत्री युग निर्माण योजना बनाकर नये युग की आधार शिला रखी ।
- **वैज्ञानिक-अध्यात्मवाद के प्रणेता** : जिन्हों ने धर्म और विज्ञान के समन्वय की प्रथम प्रयोगशाला 'ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान' स्थापित कर सिद्ध किया कि "धर्म और विज्ञान विरोधी नहीं, पुरक है "।
- **'२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' के उद्दघोषक** : जिन्हों ने '२१ वीं सदी : उज्जवल भविष्य' का नारा दिया तथा युग विभीषिकाओं से भयग्रस्त मनुष्यता को नये युग के आगमन का संदेश दिया ।
- **स्वतंत्रता संग्राम के कर्मठ सैनानी** : जिन्हों ने महात्मा गाँधी, मदन मोहन मालवीय, गुरुवर रविन्द्रनाथ टैगोर के साथ राष्ट्र की स्वाधीनता के लिए संघर्ष किया एवं स्वतन्त्रता संग्राम सेनानी "श्रीराम मत्त" के रुप में प्रख्यात हुए ।
- **गायत्री के सिद्ध साधक** : जिन्हों ने गायत्री और यज्ञ को रुढियों और पाखण्ड से मुक्त कर जन-जन की उपासना का आधार तथा सद्बुद्धि एवं सतकर्म जागरण का माध्यम बनाया ।
- **तपस्वी** : जिन्होंने गायत्री की कठोरतम साधना कर २४-२४ लाख के २४ महापुरश्चरण २४ वर्षो में सम्पन्न किया । प्रकृति प्रकोप को शांत कर अनिष्टों को टाला, सृजन सम्भावनाओं को साकार किया ।
- **अखिल विश्व गायत्री परिवार के जनक** : जिन्हों ने अपने जीवनकाल में ही अपने साथ करोडों लोगों को आत्मियता के सूत्र में बाँधकर विश्व व्यापी 'युग निर्माण परिवार' - 'गायत्री परिवार' का गठन किया ।
- **समाज सुधारक** : जिन्हों ने नारी जागरण, व्यसन मुक्ति, आदर्श विवाह, जाति-पाँति प्रथा तथा परंपरागत रुढियों की समाप्ति हेतु अद्भूत प्रयास किए एवं एक आदर्श स्वरुप समाज में प्रस्तुत किया ।
- **ऋषि परम्परा के उद्धारक** : जिन्हों ने इस युग में महान ऋषियों की महान परंपराओं की पुनर्स्थापना की । लुप्तप्राय संस्कार परंपरा को पुनर्जीवित कर जन-जन को अवगत कराया ।
- **अवतारी चेतना** : जिन्होंने "धरती पर स्वर्ग के अवतरण और मनुष्य में देवत्व के जागरण" की अवतारी घोषणा को अपना जीवन लक्ष्य बनाया और चेतना का ऐसा प्रवाह चलाया कि करोंडों व्यक्ति उस ओर चल पड़े ।

गायत्री परिवार जीवन जीने कि कला के, संस्कृति के आदर्श सिद्धांतों के आधार पर परिवार,समाज,राष्ट्र युग निर्माण करने वाले व्यक्तियों का संघ है। **वसुधैवकुटुम्बकम्** की मान्यता के आदर्श का अनुकरण करते हुये हमारी प्राचीन ऋषि परम्परा का विस्तार करने वाला समूह है गायत्री परिवार। एक संत, सुधारक, लेखक, दार्शनिक, आध्यात्मिक मार्गदर्शक और दूरदर्शी युगऋषि पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी द्वारा स्थापित यह मिशन युग के परिवर्तन के लिए एक जन आंदोलन के रूप में उभरा है।

Free Download Complete Work Of Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya, Founder of All World Gayatri Pariwar
Books, Magazines, Articles, Stories, Poems, Great Personalities and many more at
www.vicharkrantibooks.org | www.awgp.org